श्री

धवला-टीका-समन्वितः

षट्खण्डागमः

वेदनाभावविधान आदि अनुयोगद्वार

खण्ड ४ भाग ७—१६

पुस्तक १२

सम्पादक

हीरालाल जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीभगवत्-पुष्पदन्त-भूतबलिप्रणीतः

षट्खंडागमः

श्रीवीरसेनाचार्य-विरचित-धवला-टीका-समन्वितः ।

तस्य

चतुर्थखंडे वेदनानामधेये

हिन्दीभाषानुवाद-तुलनात्मकटिप्पण-प्रस्तावनानेकपरिशिष्टैः सम्पादितानि

वेदनानुयोगद्वारगर्भितानि

वेदनाभावविधानाद्यनुयोगद्वाराणि

★

सम्पादकः

नागपुरविश्वविद्यालय-संस्कृत-पाली-प्राकृतविभागप्रमुखः

एम्. ए., एल् एल्. बी., डी. लिट् इत्युपाधिधारी

हीरालालो जैनः

सहसम्पादकौ

पं. फूलचन्द्रः सिद्धान्तशास्त्री ※ पं. बालचन्द्रः सिद्धान्तशास्त्री

संशोधने सहायकः

डा. नेमिनाथ-तनय-आदिनाथः

उपाध्यायः एम्. एम्., डी. लिट्.

प्रकाशकः

श्रीमन्त सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्द्र

जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालयः

अमरावती (बरार)

[वि. सं. २०११] वीर-निर्वाण-संवत् २४८१ [ई० स० १९५५]

मूल्यं द्वादशरूप्यकम्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकः
श्रीमन्त सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्द्र
जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालय
अमरावती (बरार)

मुद्रक—
मेवालाल गुप्त
बम्बई प्रिंटिंग काटेज
बाँस-फाटक
काशी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

THE
ṢAṬKHAṆḌĀGAMA

OF

PUṢPADANTA AND BHŪTABALI

WITH

THE COMMENTARY DHAVALĀ OF VĪRASENA

VOL. XII

VEDANĀ-BHĀVA-VIDHĀNA

and other Anuyogadwaras.

Edited

with translation, notes and indexes

BY

Dr. HIRALAL JAIN, M. A., LL. B., D. Litt.
Head of Sanskrit, Pali and Prakrit Department, Nagpur University.

Assisted by

Pandit Phoolchandra,
Siddhanta Shastri.

★

Pandit Balchandra,
Siddhanta Shastri

With the cooperation of

Dr. A. N. Upadhye,
M. A., D. Litt.

Published by

Shrimant Seth Shitabrai Laxmichandra,
Jaina Sahitya Uddharak Fund Karyalaya.
AMRAVATI (Berar)

1955

Price rupees twelve only.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Published by
Shrimant Seth Shitabrai Laxmichsndra,
Jaina Sahitya Uddharak Fund Karyalays,
AMRAVATI (BERAR)

Printed by
Mewalal Gupta
Bombay Printing Cottage
BANS-PHATAK, BANARAS

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राक्कथन

षट्खंडागम के प्रस्तुत बारहवें भाग में वेदनाखंड समाप्त हो जाता है। अब श्रीधवल के प्रकाशन में वर्गणा खंड और चूलिका ही शेष रह जाते हैं जिन्हें आगामी चार भागों में पूरा करने की आशा है।

इस भाग की तैयारी भी पूर्व पद्धति अनुसार अमरावती में ही हुई। किन्तु समय की बचत की दृष्टि से इसके मुद्रण का प्रबन्ध बनारस में किया गया, और वहाँ इसके प्रूफ संशोधनादि का कार्य पं० फूलचन्द्रजी शास्त्री द्वारा हुआ है जिसके लिये मैं उनका विशेष कृतज्ञ हूं। जिन प्रतियों का पाठ संशोधन के लिये उपयोग किया गया है उनके अधिकारियों का मैं आभार मानता हूँ।

सहारनपुर निवासी श्रीरतनचंदजी मुख्तार का मैं विशेष रूप से अनुग्रह मानता हूँ। वे बड़ी लगन और तन्मयता के साथ इन ग्रन्थों का स्वाध्याय करते हैं और शुद्धिपत्र बनाकर भेजते हैं। इस भाग के लिये भी उन्होंने अपना शुद्धिपत्र भेजने की कृपा की, जिसका यहां समुचित उपयोग किया गया है।

नागपुर
१७-१-५५

हीरालाल जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय परिचय

वेदना अनुयोगद्वारके मुख्य अधिकार सोलह हैं। उनमेंसे जिन अन्तिम दस अधिकारोंकी इस पुस्तकमें प्ररूपणा की है। उनके नाम ये हैं—वेदनाभावविधान, वेदनाप्रत्ययविधान, वेदनास्वामित्वविधान, वेदनावेदनाविधान, वेदनागतिविधान, वेदनाअनन्तरविधान, वेदनासन्निकर्षविधान, वेदनापरिमाणविधान, वेदनाभागाभागविधान और वेदनाअल्पबहुत्वविधान।

७ वेदनाभावविधान

भावके चार भेद हैं—नामभाव, स्थापनाभाव, द्रव्यभाव और भावभाव। उनमें से भाव शब्द नामभाव है तथा सद्भाव या असद्भावरूपसे 'वह यह है' इस प्रकार अभेदरूपसे सङ्कलित पदार्थ स्थापनाभाव है। द्रव्यभावके दो भेद हैं—आगमद्रव्यभाव और नोआगमद्रव्यभाव। भावविषयक शास्त्रका जानकार किन्तु वर्तमानमें उसके उपयोगसे रहित जीव आगमद्रव्यभाव है। नोआगमद्रव्यभाव तीन प्रकारका है—ज्ञायकशरीर, भावी और तद्व्यतिरिक्त। जो भावविषयक शास्त्रके जानकारका त्रिकालविषयक शरीर है वह ज्ञायकशरीर नोआगमद्रव्यभाव है और जो भविष्यमें भावविषयक शास्त्रका जानकार होगा वह भाविनोआगमद्रव्यभाव है। तद्व्यतिरिक्तनोआगमद्रव्यभावके दो भेद हैं—कर्म और नोकर्म। ज्ञानावरणादि कर्मोंकी अज्ञानादिको उत्पन्न करानेवाली जो शक्ति है उसे कर्मतद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यभाव कहते हैं और इसके सिवा अन्य जितनी सचित्त और अचित्तद्रव्य सम्बन्धी शक्तियाँ हैं उन्हें नोकर्मतद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यभाव कहते हैं। भावभावके दो भेद हैं—आगमभावभाव और नोआगमभावभाव। भावविषयक शास्त्रका जानकार और उपयोगयुक्त जीव आगमभावभाव कहलाता है तथा नोआगमभावभावके दो भेद हैं—तीव्रमन्दभाव और निर्जराभाव।

इन सब भावोंमेंसे वेदनाभावविधानमें कर्मतद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यभावकी पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व इन तीन अधिकारों द्वारा प्ररूपणा की गई है।

पदमीमांसामें ज्ञानावरणादि आठ मूल कर्मोंकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य भाववेदनाओंका विचार किया गया है। यहाँ वीरसेन स्वामीने धवला टीकामें उत्कृष्ट आदि पूर्वोक्त चार पदोंके साथ सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, ओज, युग्म, ओम, विशिष्ट और नोमनोविशिष्ट इन अन्य नौ पदोंको देशामर्षकभावसे सूचित कर इन तेरह पदोंके परस्पर सन्निकर्षकी भी प्ररूपणा की है। मात्र ऐसा करते हुए वे कहाँ किस अपेक्षासे उत्कृष्ट आदि पद स्वीकार किये गये हैं इस दृष्टिकोणका पृथक् पृथक् रूपसे उल्लेख करते गये हैं। इसके लिए प्रस्तुत पुस्तकका पृष्ठ ग्यारहका कोष्टक द्रष्टव्य है।

स्वामित्व अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि आठ मूल प्रकृतियोंके आश्रयसे इन उत्कृष्ट आदि चार पदोंकी अपेक्षा स्वामी बतलाये गये हैं।

अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारके जघन्य, उत्कृष्ट और जघन्योत्कृष्ट ऐसे तीन भेद करके इनके द्वारा अलग अलग आठ मूल प्रकृतियोंके आश्रयसे अल्पबहुत्वका विचार तो किया ही है, साथ ही उत्तर प्रकृतियोंके आश्रयसे चौसठ पदवाले उत्कृष्ट और जघन्य अल्पबहुत्वका भी विचार किया गया है। यहाँ दो बातें उल्लेखनीय हैं। प्रथम तो यह कि इन दोनों प्रकारके चौंसठ पदवाले अल्पबहुत्वका निर्देश पहले क्रमसे सूत्र गाथाओंमें किया गया है और फिर उन्हींको गद्यसूत्रों में दिखलाया गया है। द्वितीय यह कि वीरसेन स्वामीने इन दोनों प्रकारके अल्पबहुत्वोंसे सूचित होनेवाले स्वस्थान अल्पबहुत्वका निर्देश अपनी धवला टीकामें अलगसे किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसके आगे इसी वेदनाभाव विधानकी क्रमसे प्रथम, द्वितीय और तृतीय ये तीन चूलिकाएँ चालू होती हैं। जिस प्रकरणमें विवक्षित अनुयोगद्वारमें कहे गये विषयका अवलम्बन लेकर विशेष व्याख्यान किया जाता है उसे चूलिका कहते हैं। इसलिए चूलिका सर्वथा स्वतन्त्र प्रकरण न होकर विवक्षित अनुयोगद्वारका ही एक अङ्ग माना जाता है। ऐसी यहाँ क्रमसे तीन चूलिकाएँ निर्दिष्ट हैं।

प्रथम चूलिकामें गुणश्रेणिनिर्जरा किसके कितनी गुणी होती है और उसमें लगनेवाले कालका क्या प्रमाण है, इसका विचार किया गया है। यहाँ गुणश्रेणिनिर्जराके कुल स्थान ग्यारह बतलाये हैं। यथा—सम्यक्त्वकी उत्पत्ति, श्रावक, विरत, अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाला, दर्शनमोहका क्षपक, चारित्रमोहका उपशामक, उपशान्तकषाय, क्षपक, क्षीणमोह, स्वस्थान जिन और योगनिरोधमें प्रवृत्त हुए जिन। इन ग्यारह स्थानों में गुणश्रेणि निर्जरा उत्तरोत्तर असंख्यात-गुणी होती है। किन्तु इसमें लगनेवाला काल उत्तरोत्तर संख्यातगुणा हीन जानना चाहिए। अर्थात् प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके समय गुणश्रेणि निर्जरामें जो अन्तर्मुहूर्त काल लगता है उससे श्रावक के होनेवाली गुणश्रेणि निर्जरामें संख्यातगुणा हीन अन्तर्मुहूर्त काल लगता है। इस प्रकार आगे-आगे हीन-हीन काल जानना चाहिए। तत्त्वार्थसूत्र के 'सम्यग्दृष्टिश्रावक' इत्यादि सूत्रकी व्याख्या करते हुए सर्वार्थसिद्धिमें ये गुणश्रेणिके स्थान कुल दस गिनाये हैं। वहाँ जिनके दो भेदोंका आश्रय कर प्रतिपादन नहीं करना इसका कारण है। यहाँ पहले दो सूत्र गाथाओंमें इन ग्यारह गुणश्रेणि निर्जरा और उनके कालका विचार कर अनन्तर गद्यसूत्रों द्वारा इनका स्वतन्त्र विचार किया गया है।

द्वितीय चूलिका आगे अनुभागबन्धाध्यवसान स्थानका कथन करने के लिए प्रारम्भ होती है। इस प्रकरणके ये बारह अनुयोगद्वार हैं—अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा, स्थानप्ररूपणा, अन्तर-प्ररूपणा, काण्डकप्ररूपणा, ओजयुग्मप्ररूपणा, षट्स्थानप्ररूपणा, अधस्तनस्थानप्ररूपणा, समय-प्ररूपणा, वृद्धिप्ररूपणा, यवमध्यप्ररूपणा, पर्यवसानप्ररूपणा और अल्पबहुत्वप्ररूपणा।

(१) अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा—कर्मोंके जितने भेद-प्रभेद उपलब्ध होते हैं उनमें हीनाधिक अनुभाग शक्ति पाई जाती है। यह शक्ति कहाँ कितनी होती है इसका विचार अनुभाग-शक्तिमें उपलब्ध होनेवाले अविभागप्रतिच्छेदोंके आधारसे किया जाता है। अविभागप्रतिच्छेद उन शक्त्यंशोंकी संज्ञा है जो विभागके अयोग्य होते हैं। शक्तिका यह विभाग बुद्धिद्वारा किया जाता है। उदाहरणार्थ, एक ऐसी शक्ति लो जो सर्वाधिक हीन दर्जेकी है। पुनः इससे दूसरे दर्जेकी शक्ति लो और देखो कि इन दोनों शक्तियोंमें कितना अन्तर है और उस अन्तरका कारण क्या है। अनुभवसे प्रतीत होगा कि पहली शक्तिसे दूसरी शक्तिमें जो एक शक्त्यंशकी वृद्धि दिखाई देती है उसीका नाम अविभागप्रतिच्छेद है। अनुभागसम्बन्धी ऐसे अविभाग-प्रतिच्छेद एक अनुभागस्थानमें अनन्तानन्त उपलब्ध होते हैं। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि जितने कर्मपरमाणुओंमें ये अविभागप्रतिच्छेद समान उपलब्ध होते हैं उनमेंसे प्रत्येक कर्मपरमाणुके अविभागप्रतिच्छेदोंकी वर्ग संज्ञा है और वे सब कर्मपरमाणु मिलकर वर्गणा कहलाते हैं। यह प्रथम वर्गणा है। पुनः इनसे एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदको लिए हुए जितने कर्मपरमाणु होते हैं उनकी दूसरी वर्गणा बनती है। इस प्रकार निरन्तर क्रमसे एक एक अविभागप्रतिच्छेदकी वृद्धिके साथ तीसरी आदि वर्गणाएँ जहाँ तक उत्पन्न होती हैं उन सबकी स्पर्धक संज्ञा है। एक स्पर्धकमें ये वर्गणाएँ अभव्योंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग उपलब्ध होती हैं। यह प्रथम स्पर्धक है। इसके आगे सब जीवोंसे अनन्तगुण अविभागप्रतिच्छेदोंका अन्तर देकर द्वितीय स्पर्धक प्रारम्भ होता है और जहाँ जाकर द्वितीय स्पर्धककी समाप्ति होती है उससे आगे भी उत्तरोत्तर इसी प्रकार अन्तर देकर तृतीयादि स्पर्धक प्रारम्भ होते हैं जो प्रत्येक अभव्योंसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग प्रमाण वर्गणाओंसे बनते हैं। इसप्रकार अविभागप्रतिच्छेद प्ररूपणामें कहाँ कितने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं इसका विचार किया जाता है।

(२) **स्थानप्ररूपणा**—इसप्रकार पूर्वोक्त अन्तरको लिए हुए जो अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण स्पर्धक उत्पन्न होते हैं उन सबका एक स्थान होता है। यहाँ पर एक जीवमें एक साथ जो कर्मोंका अनुभाग दिखाई देता है उसकी स्थान संज्ञा है। उसके दो भेद हैं—अनुभागबन्धस्थान और अनुभागसत्त्वस्थान। उनमेंसे जो अनुभाग बन्ध द्वारा निष्पन्न होता है उसकी तो अनुभागबन्धस्थान संज्ञा है ही। साथ ही पूर्वबद्ध अनुभागका घात होनेपर तत्काल बन्धको प्राप्त हुए अनुभागके समान जो अनुभाग प्राप्त होता है उसकी भी अनुभागबन्धस्थान संज्ञा है। किन्तु जो अनुभागस्थान घातको प्राप्त होकर तत्काल बन्धको प्राप्त हुए अनुभागके समान न होकर बन्धको प्राप्त हुए अष्टांक और ऊर्वंकके मध्यमें अधस्तन ऊर्वंकसे अनन्तगुणा और उपरिम अष्टांकसे अनन्तगुणा हीन होता है उसे अनुभागसत्कर्मस्थान कहते हैं। यदि इन प्राप्त हुए स्थानोंको मिलाकर देखा जाय तो ये सब असंख्यात लोकप्रमाण होते हैं। इसप्रकार स्थानप्ररूपणामें इन सब स्थानोंका विचार किया जाता है।

(३) **अन्तरप्ररूपणा**—स्थानप्ररूपणामें कुल स्थान कितने होते हैं यह तो बतलाया है, किन्तु वहाँ उनमें परस्पर कितना अन्तर होता है इसका विचार नहीं किया गया है। इसलिए इस प्ररूपणाका अवतार हुआ है। इसमें बतलाया गया है कि एक स्थानसे तदनन्तरवर्ती स्थानमें अविभागप्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा सब जीवोंसे अनन्तगुणा अन्तर होता है। जो जघन्य स्थानान्तर है वह भी सब जीवोंसे अनन्तगुणा है, क्योंकि एक अनन्तभागरूप वृद्धिप्रक्षेपमें सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेद उपलब्ध होते हैं। इसप्रकार इस प्ररूपणामें विस्तारके साथ अन्तरका विचार किया गया है।

(४) **काण्डकप्ररूपणा**—कुल वृद्धियाँ छह हैं—अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि। इनमेंसे अनन्तभागवृद्धि काण्डकप्रमाण होनेपर एकबार असंख्यातभागवृद्धि होती है। पुनः काण्डकप्रमाण अनन्तभागवृद्धि होनेपर दूसरीबार असंख्यातभागवृद्धि होती है। इसप्रकार पुनः पुनः पूर्वोक्त क्रमसे जब असंख्यातभागवृद्धि काण्डकप्रमाण हो लेती है तब एकबार संख्यातभागवृद्धि होती है। इसप्रकार अनन्तगुणवृद्धिके प्राप्त होनेतक यही क्रम जानना चाहिए। यहाँ काण्डकसे अङ्गुलका असंख्यातवाँ भाग लिया गया है। यहाँ एक स्थानमें इन वृद्धियोंका विचार करनेपर वे किसप्रकार उपलब्ध होती हैं इसकी चरचा प्रस्तुत पुस्तकके पृष्ठ १३२ में की ही है। उसके आधारसे काण्डकप्ररूपणाको विस्तारसे समझ लेना चाहिए।

(५) **ओज-युग्मप्ररूपणा**—जहाँ विवक्षित राशिमें चारका भाग देनेपर १ या ३ शेष रहते हैं उसकी ओज संज्ञा है और जहाँ २ शेष रहते हैं या कुछ भी शेष नहीं रहता है उसकी युग्म संज्ञा है। इस आधारसे इस प्ररूपणामें यह बतलाया गया है कि सब अनुभागस्थानोंके अविभागप्रतिच्छेद तथा सब स्थानोंकी अन्तिम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्मरूप हैं और द्विचरम आदि वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्मरूप ही हैं यह नियम नहीं है, क्योंकि उनमेंसे कोई कृत युग्मरूप, कोई बादर युग्मरूप, कोई कलि ओजरूप और कोई तेज ओजरूप उपलब्ध होते हैं।

(६) **षट्स्थानप्ररूपणा**—पहले हम अनन्तभागवृद्धि आदि छह स्थानोंका निर्देश कर आये हैं। उनमें अनन्त, असंख्यात और संख्यात पदोंसे कौनसी राशि ली गई है इन सब बातोंका विचार इस प्ररूपणामें किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(७) अधस्तनस्थानप्ररूपणा——इसमें अनन्तभागवृद्धिसे लेकर प्रत्येक वृद्धि जब काण्डक प्रमाण हो लेती है तब अगली वृद्धि होती है। अनन्तगुणवृद्धिके प्राप्त होनेतक यही क्रम चालू रहता है। यह बतलाकर एक षट्स्थानवृद्धिमें अनन्तभागवृद्धि कितनी होती हैं, संख्यातभागवृद्धि कितनी होती हैं आदिका निरूपण किया गया है।

(८) समयप्ररूपणा——जघन्य अनुभागबन्धस्थानसे लेकर उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान तक जितने अनुभागबन्धस्थान होते हैं उनमेंसे एक समयसे लेकर चार समयतक बन्धको प्राप्त होनेवाले अनुभागबन्धस्थान असंख्यातलोक प्रमाण हैं। पाँच समय बँधनेवाले अनुभागबन्धस्थान भी असंख्यात लोकप्रमाण हैं। इसप्रकार चार समयसे लेकर आठ समयतक बँधनेवाले अनुभाग-बन्धस्थान और पुनः सात समयसे लेकर दो समयतक बँधनेवाले अनुभागबन्धस्थान प्रत्येक असंख्यात लोकप्रमाण हैं। यह बतलाना समयप्ररूपणाका कार्य है। साथ ही यद्यपि ये सब स्थान असंख्यातलोकप्रमाण हैं फिर भी इनमें सबसे थोड़े कौन अनुभागबन्धस्थान हैं और उनसे आगे उत्तरोत्तर वे कितने गुणे हैं यह बतलाना भी इस प्ररूपणाका कार्य है।

(९) वृद्धिप्ररूपणा——इस प्ररूपणामें पहले अनन्तभागवृद्धि आदि छह वृद्धियोंका व अनन्तभागहानि आदि छह हानियोंका अस्तित्व स्वीकार करके उनके कालका निर्देश किया गया है।

(१०) यवमध्यप्ररूपणा——समय प्ररूपणामें छह वृद्धियों और छह हानियोंका किसका कितना काल है यह बतला आये हैं। तथा वहाँ उनके अल्पबहुत्वका भी ज्ञान करा आये हैं। फिर भी किस वृद्धि और हानिसे यवमध्यका प्रारम्भ और अन्त होता है यह बतलानेके लिए यवमध्यप्ररूपणा की गई है। यद्यपि यवमध्य कालयवमध्य और जीवयवमध्यके भेदसे दो प्रकारका होता है पर यहाँ पर कालयवमध्यका ही ग्रहण किया है, क्योंकि इसमें वृद्धियों और हानियोंके कालकी मुख्यतासे ही इसकी रचना की गई है।

(११) पर्यवसानप्ररूपणा——अनन्तगुणवृद्धिरूप काण्डकके ऊपर पाँच वृद्धिरूप सब स्थान जाकर पुनः अनन्तगुणवृद्धि रूप स्थान नहीं प्राप्त होता, यह बतलाना इस प्ररूपणाका कार्य है।

(११) अल्पबहुत्वप्ररूपणा——इसके दो भेद हैं—अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा। अनन्तरोपनिधा अल्पबहुत्वमें अनन्तगुणवृद्धिस्थान सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार आगे संख्यातगुणवृद्धिस्थान, संख्यातभागवृद्धिस्थान, असंख्यात-भागवृद्धिस्थान और अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे हैं, यह बतलाया गया है। तथा परम्परोपनिधा अल्पबहुत्वमें अनन्तभागवृद्धिस्थान सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि स्थान असंख्यातगुणे हैं। तथा इनसे संख्यातभागवृद्धिस्थान संख्यातगुणे हैं आदि बतलाया गया है।

इस प्रकार अनुभागबन्धस्थानके आश्रयसे यह प्ररूपणा समाप्त कर अन्तमें वीरसेन स्वामीने अनुभागसत्कर्मके आश्रयसे यह सब विचार कर दूसरी चूलिका समाप्त की है।

तीसरी चूलिकामें जीवसमुदाहारका विचार किया गया है। इसके ये आठ अनुयोगद्वार हैं—एकस्थानजीवप्रमाणानुगम, निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम, सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम, नानाजीवकालप्रमाणानुगम, वृद्धिप्ररूपणा, यवमध्यप्ररूपणा, स्पर्शनप्ररूपणा और अल्पबहुत्व।

(१) एकस्थानजीवप्रमाणानुगम——एक स्थानमें जघन्यरूपसे जीव एक, दो या तीन होते हैं और उत्कृष्टरूपसे आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं, यह बतलाना इस प्ररूपणाका कार्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) **निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम**—इस प्ररूपणामें जीवोंसे सहित निरन्तर स्थान एक, दो या तीन से लेकर अधिकसे अधिक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं, यह बतलाया गया है।

(३) **सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम**—इस प्ररूपणामें जीवोंसे रहित स्थान कमसे कम एक, दो और तीनसे लेकर अधिकसे अधिक असंख्यातलोकप्रमाण होते हैं यह बतलाया गया है।

(४) **नानाजीवकालप्रमाणानुगम**—इस प्ररूपणामें एक-एक स्थानमें नाना जीव जघन्यसे एक समय तक और उत्कृष्टसे आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण कालतक होते हैं, यह बतलाया गया है।

(५) **वृद्धिप्ररूपणा**—इसके दो भेद हैं—अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा। अनन्तरोपनिधामें जघन्य स्थानसे लेकर द्वितीयादि स्थानोंमें कितने जीव होते हैं, यह बतलाया गया है तथा परम्परोपनिधामें जघन्य अनुभागस्थानमें जितने जीव हैं उनसे असंख्यातलोक जाकर वे दूने हो जाते हैं, इत्यादि बतलाया गया है।

(६) **यवमध्यप्ररूपणा**—इस प्ररूपणामें सब स्थानोंका असंख्यातवां भाग यवमध्य होता है यह बतलाकर यवमध्यके नीचेके स्थान सबसे थोड़े हैं और उपरिम स्थान असंख्यातगुणे हैं यह बतलाया गया है।

(७) **स्पर्शनप्ररूपणा**—इस प्ररूपणामें उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान, जघन्य अनुभाग बन्धस्थान, काण्डक और यवमध्य आदिका एक जीवके द्वारा स्पर्शन काल कितना है, इसका विचार किया गया है।

(८) **अल्पबहुत्व**—उत्कृष्ट अनुभागस्थान, जघन्य अनुभागस्थान, काण्डक और यवमध्यमें कहाँ कितने जीव हैं इसके अल्पबहुत्वका विचार इस प्ररूपणामें किया गया है।

८—वेदनाप्रत्ययविधान

इस अनुयोगद्वारमें नैगमादिनयोंके आश्रयसे ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंकी वेदनाके बन्ध-कारणोंका विचार किया गया है। यथा—नैगम, व्यवहार और संग्रह नयकी अपेक्षा सब कर्मोंकी वेदनाका बन्ध प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, रात्रिभोजन, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, प्रेम, निदान, अभ्याख्यान, कलह, पैशुन्य, रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, माया, मोष, मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन और प्रयोगसे होता है। ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा प्रकृति-बन्ध और प्रदेशबन्ध योगसे तथा स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध कषायसे होता है। तथा शब्द नयकी अपेक्षा किससे किसका बन्ध होता है यह कहना सम्भव नहीं है, क्योंकि इस नयमें कार्य-कारणसम्बन्ध नहीं बनता।

९ वेदनास्वामित्वविधान

इस अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंके स्वामीका विचार किया गया है। ऐसा करते हुए नयभेदसे ये भंग आये हैं—नैगम और व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंकी वेदनाका कथंचित् एक जीव स्वामी है, कथंचित् नोजीव स्वामी है, कथंचित् नाना जीव स्वामी हैं, कथंचित् नाना नोजीव स्वामी हैं, कथंचित् एक जीव और एक नोजीव स्वामी है, कथंचित् एक जीव और नाना नोजीव स्वामी हैं, कथंचित् नाना जीव और एक नोजीव स्वामी हैं तथा कथंचित् नाना जीव और नाना नोजीव स्वामी हैं। यहाँ पर जीव और नोजीव पदकी व्याख्या करते हुए वीरसेन स्वामीने बतलाया है कि जो अनन्तानन्त विस्रसोपचयसहित कर्मपुद्गल स्कन्ध उपलब्ध होते हैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वे जीवसे पृथक् न पाये जानेके कारण जीवपदसे लिए गये हैं। तथा वे ही अनन्तानन्त विस्रसोपचयसहित कर्मपुद्गल स्कन्ध ही प्राणधारण शक्तिसे रहित होनेके कारण अथवा ज्ञान-दर्शन-शक्तिसे रहित होनेके कारण नोजीव कहलाते हैं। अथवा उनसे सम्बन्ध रखनेके कारण जीवको भी नोजीव कहते हैं। संग्रह नयकी अपेक्षा इन ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंकी वेदनाका कथंचित् एक जीव स्वामी है और कथंचित् नाना जीव स्वामी हैं; तथा शब्द और ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा इन ज्ञानावरणादि वेदनाका एक जीव स्वामी है। यहाँ इन नयोंकी अपेक्षा एक जीवको स्वामी कहनेका कारण यह है कि ये नय बहुवचनको स्वीकार नहीं करते।

१० वेदनावेदनाविधान

इस अनुयोगद्वारमें सवप्रथम नैगमनयकी अपेक्षा जीव, प्रकृति और समय, इनके एकत्व और अनेकत्वका आश्रय करके ज्ञानावरण वेदनाके एकसंयोगी, द्विसंयोगी और त्रिसंयोगी भंगोंका प्ररूपण किया गया है। यथा—ज्ञानावरणीय वेदना कथंचित् बध्यमान वेदना है, कथंचित् उदीर्ण वेदना है, कथंचित् उपशान्त वेदना है, कथंचित् बध्यमान वेदनाएँ हैं, कथंचित् उदीर्ण वेदनाएं हैं, कथंचित् उपशान्त वेदनाएं हैं, इत्यादि। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि इन भंगोंका विवेचन करते हुए वीरसेन स्वामीने विवक्षाभेदसे इन भंगोंके अन्य अनेक अवान्तर भंगोंका भी निर्देश किया है। नैगमनयकी अपेक्षा शेष सात कर्मोंके भंग ज्ञानावरणके ही समान हैं। आगे व्यवहारनय और संग्रहनयकी अपेक्षा यथासम्भव इन भंगोंका क्रमसे विवेचन करके ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंके फलप्राप्त विपाकको ही वेदना बतलाया है। शब्दनयका विषय इन सब दृष्टियोंसे अवक्तव्य है, यह स्पष्ट ही है।

११ वेदनागतिविधान

इस अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि कर्मोंकी वेदना अपेक्षाभेदसे क्या स्थित है, क्या अस्थित है या क्या स्थितास्थित है, इस बातका विचार किया गया है। पहले नैगम, संग्रह और व्यवहार-नयकी अपेक्षा बतलाया है कि ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकर्मकी वेदना कथंचित् स्थित है और कथंचित् स्थितास्थित है। तथा वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकर्मकी वेदना कथंचित् स्थित है, कथंचित् अस्थित है और कथंचित् स्थित-अस्थित है। ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा विवेचन करते हुए बतलाया है कि आठों कर्मोंकी वेदना कथंचित् स्थित है और कथंचित् अस्थित है। तथा शब्दनयकी अपेक्षा सब कर्मोंकी वेदना अवक्तव्य है, यह बतलाया गया है।

१२ वेदनाअनन्तरविधान

ज्ञानावरणादि कर्मोंका बन्ध होनेपर वे उसी समय फल देते हैं या कालान्तरमें फल देते हैं, इस विषयका विवेचन करनेके लिए वेदनाअनन्तरविधान अनुयोगद्वार आया है। इसमें बतलाया है कि नैगम और व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंकी वेदना अनन्तरबन्ध है, परम्पराबन्ध है और तदुभयबन्ध है। संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंकी वेदना अनन्तरबन्ध है और परम्पराबन्ध है। ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंकी वेदना परम्पराबन्ध है और शब्दनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंकी वेदना अवक्तव्यबन्ध है।

१३ वेदनासन्निकर्षविधान

ज्ञानावरणादि कर्मोंकी वेदना द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट भी होती है और जघन्य भी। फिर भी इनमेंसे प्रत्येक कर्मके उत्कृष्ट या जघन्य द्रव्यादि वेदनाके रहनेपर उसीकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षेत्रादि वेदना किस प्रकारकी होती है। तथा विवक्षित एक कर्मकी द्रव्यादि वेदना उत्कृष्ट या जघन्य रहनेपर अन्य कर्मकी द्रव्यादि वेदना उत्कृष्ट या जघन्य किस प्रकारकी होती है, इस बातका विचार करनेके लिए यह वेदनासन्निकर्षविधान अनुयोगद्वार आया है। इस हिसाबसे वेदनासन्निकर्षके स्वस्थानसन्निकर्ष और परस्थानसन्निकर्ष ये दो भेद होकर उनमेंसे प्रत्येकके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा चार-चार भेद करके स्वस्थानवेदनासन्निकर्ष और परस्थानवेदनासन्निकर्षका इस अनुयोगद्वारमें विस्तारके साथ विचार किया गया है।

१४ वेदनापरिमाणविधान

ज्ञानावरणादि आठ कर्मोंकी प्रकृतियाँ कितनी हैं इस बातका विवेचन करनेके लिए यह अनुयोगद्वार आया है। इसमें प्रकृतियोंका विचार प्रकृत्यर्थता, समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यास इन तीन प्रकारोंसे किया गया है। **प्रकृत्यर्थता** अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि कर्मोंकी उत्तर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे उनकी संख्या बतलाई है। मात्र ज्ञानावरण, दर्शनावरण और नामकर्मकी उत्तर प्रकृतियाँ क्रमसे ५, ९ और ९३ न बतलाकर असंख्यात लोकप्रमाण बतलाई हैं। ज्ञानावरण और दर्शनावरणकी असंख्यात लोकप्रमाण प्रकृतियाँ क्यों हैं इसका कारण बतलाते हुए वीरसेन स्वामी कहते हैं कि चूंकि ज्ञान और दर्शनके अवान्तर भेद असंख्यातलोक प्रमाण हैं, इसलिए इनको आवरण करनेवाले कर्म भी उतने ही हैं। तथा नामकर्मकी असंख्यातलोकप्रमाण प्रकृतियाँ क्यों हैं इसका कारण बतलाते हुए वीरसेन स्वामी कहते हैं कि चूँकि आनुपूर्वीके भेदोंका तथा गति, जाति और शरीरादिके भेदोंका ज्ञान कराना आवश्यक था, अतः इस कर्मकी असंख्यातलोकप्रमाण प्रकृतियाँ कही हैं। **समयप्रबद्धार्थता** अनुयोगद्वारमें प्रत्येक कर्मके अवान्तर भेदोंकी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण समयप्रबद्धोंसे उस उस कर्मकी अवान्तर प्रकृतियोंको गुणितकर परिमाण लाया गया है। मात्र ऐसा करते हुए आयुकर्मका समयप्रबद्धार्थताकी अपेक्षा परिमाण लाते समय आयुकर्मकी अवान्तर प्रकृतियोंको अन्तर्मुहूर्तसे गुणा कराया गया है। इसका कारण बतलाते हुए वीरसेन स्वामीका कहना है कि आयुकर्मका बन्धकाल यतः अन्तर्मुहूर्त है अतः यहाँ अन्तर्मुहूर्तकालसे गुणा कराया गया है। **क्षेत्रप्रत्यास** अनुयोगद्वारमें प्रत्येक कर्मकी समयप्रबद्धार्थतारूप जितनी प्रकृतियाँ उपलब्ध हुई उनको उस उस प्रकृतिके उत्कृष्ट क्षेत्रसे गुणित करके परिमाण लाया गया है।

१५ वेदनाभागाभागविधान

इस अनुयोगद्वारमें पूर्वोक्त प्रकृत्यर्थता, समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यासकी अपेक्षा अलग अलग ज्ञानावरणादि कर्मोंकी प्रकृतियोंके भागाभागका विचार किया गया है। यथा—प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरणकी प्रकृतियाँ अलग-अलग सब प्रकृतियोंके कुछ कम दो भागप्रमाण बतलाई हैं और शेष छह कर्मोंकी प्रकृतियाँ अलग-अलग असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाई हैं। इसीप्रकार समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यासकी अपेक्षा भी किस कर्मकी प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भागप्रमाण हैं इसका विचार किया गया है।

१६ वेदनाअल्पबहुत्वविधान

इस अनुयोगद्वारमें भी प्रकृत्यर्थता, समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यासका आश्रयकर अलग-अलग ज्ञानावरणादि कर्मोंके अल्पबहुत्वका विचार किया गया है।

इसप्रकार इन सोलह अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा समाप्त होनेपर वेदनाखण्ड समाप्त होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषयसूची

विषय	पृष्ठ
७ वेदनाभावविधान	**१–२७४**
वेदनाभावविधानमें तीन अनुयोगद्वारोंकी सूचना	१
भावका चार निक्षेपोंमें अवतार और उनका खुलासा	१
यहाँ भाववेदनासे भावकर्म विवक्षित है	२
वेदनाभावविधानके कथनका प्रयोजन	३
तीन अनुयोगोंके नाम	३
पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व पदका स्पष्टीकरण	३
भावकी अपेक्षा पदमीमांसा।	४
ज्ञानावरणीयवेदनाकी भावकी अपेक्षा पदमीमांसा	४
शेष सात कर्मोंकी भावकी अपेक्षा पदमीमांसा	१२
भावकी अपेक्षा स्वामित्व	१२
स्वामित्वके दो भेद व उनका समर्थन	१२
उत्कृष्ट ज्ञानावरणीय वेदनाका स्वामी	१३
अनुत्कृष्ट ज्ञानावरणीय वेदनाका स्वामी	१५
इसीप्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय के जाननेकी सूचना	१६
उत्कृष्ट वेदनीय वेदनाका स्वामी	१६
अनुत्कृष्ट वेदनीय वेदनाका स्वामी	१८
इसीप्रकार नाम और गोत्रके जाननेकी सूचना	१८
उत्कृष्ट आयुवेदनाका स्वामी	१९
अनुत्कृष्ट आयुवेदनाका स्वामी	२१
जघन्य ज्ञानावरणीयवेदनाका स्वामी	२२
अजघन्य ज्ञानावरणीयवेदनाका स्वामी	२३
इसीप्रकार दर्शनावरण और अन्तरायके जाननेकी सूचना	२३
जघन्य वेदनीयवेदनाका स्वामी	२३
अजघन्य वेदनीयवेदनाका स्वामी	२६
जघन्य मोहनीयवेदनाका स्वामी	२६
अजघन्य मोहनीयवेदनाका स्वामी	२६
जघन्य आयुवेदनाका स्वामी	२६
अजघन्य आयुवेदनाका स्वामी	३१
जघन्य नामवेदनाका स्वामी	२८
अजघन्य नामवेदनाका स्वामी	२९
जघन्य गोत्रवेदनाका स्वामी	२९
अजघन्य गोत्रवेदनाका स्वामी	३०
अल्पबहुत्वके तीन भेद	३१
जघन्य पद	३१
जघन्य मोहनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३१
जघन्य अन्तरायवेदनाका अल्पबहुत्व	३२
जघन्य ज्ञानावरण और दर्शनावरण वेदनाका अल्पबहुत्व	३३
जघन्य आयुवेदनाका अल्पबहुत्व	३४
जघन्य गोत्रवेदनाका अल्पबहुत्व	३४
जघन्य नामवेदनाका अल्पबहुत्व	३५
जघन्य वेदनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३५
उत्कृष्ट पद	३६
उत्कृष्ट आयुवेदनाका अल्पबहुत्व	३६
दो आवरण और अन्तरायवेदनाका अल्पबहुत्व	३७
उत्कृष्ट मोहनीनवेदनाका अल्पबहुत्व	३७
उत्कृष्ट नाम और गोत्रवेदनाका अल्पबहुत्व	३७
उत्कृष्ट वेदनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३८
जघन्य और उत्कृष्ट दोनोंका एकसाथ अल्पबहुत्व	३८
जघन्य मोहनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३८
जघन्य अन्तरायवेदनाका अल्पबहुत्व	३८
जघन्य दो आवरणवेदनाका अल्पबहुत्व	३८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
जघन्य आयुवेदनाका अल्पबहुत्व	३८
जघन्य नामवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
जघन्य गोत्रवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
जघन्य वेदनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट आयुवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट दो आवरण और अन्तरायवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट मोहनीयवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट नाम और गोत्रवेदनाका अल्पबहुत्व	३९
उत्कृष्ट वेदनीय वेदनाका अल्पबहुत्व	४०
उत्तर प्रकृतियों की अपेक्षा अल्पबहुत्व	४०
सातावेदनीय आदि प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व	४०
आठ कषाय आदि प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व	४२
अयशःकीर्ति आदि प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व	४४
चौंसठ पदवाला उत्कृष्ट महादण्डक	४४
उत्तर प्रकृतियोंका स्वस्थान उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	६०
तीन गाथाओं द्वारा संज्वलन चतुष्क आदि प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व	६५
चौंसठ पदवाला जघन्य महादण्डक	६५
उत्तरप्रकृतियोंका स्वस्थान जघन्य अल्पबहुत्व	७५
प्रथम चूलिका	**७८-८७**
दो सूत्र गाथाओंद्वारा गुणश्रेणि निर्जराके ग्यारह स्थान और काल	७८
अलग अलग सूत्रों द्वारा गुणश्रेणि निर्जराका विचार	८०
अलग अलग सूत्रों द्वारा गुणश्रेणि निर्जराके कालका विचार	८५
द्वितीय चूलिका	**८७-२४०**
अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें १२ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	८७
बारह अनुयोगद्वारोंके नाम व उनकी सार्थकता	८८
एक एक स्थानमें कितने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं	९१
अनुभागका विशेष खुलासा	९१
अविभागप्रतिच्छेदका स्पष्टीकरण	९२
द्रव्यार्थिकनयकी अपेक्षा जघन्य स्थानमें अविभाग प्रतिच्छेदोंका विचार	९२
वर्गका संदृष्टिपूर्वक विचार	९३
वर्गणाविचार	९५
स्पर्धकविचार	९६
अविभागप्रतिच्छेदकी त्रिविध प्ररूपणाकी प्रतिज्ञा	९६
वर्गणाप्ररूपणाके तीन प्रकार व उनका विवेचन	९६
स्पर्धक प्ररूपणाके तीन प्रकार व उनका विवेचन	१००
अन्तरप्ररूपणाके तीन प्रकार व उनका विवेचन	१०१
परमाणुओंमें अविभागप्रतिच्छेदोंका आरोपकर जघन्य स्थानमें प्रदेशप्ररूपणा	१०१
प्रदेशप्ररूपणामें छह अनुयोगद्वारोंके नाम व संदृष्टिपूर्वक उनका विवेचन करनेकी प्रतिज्ञा	१०१
प्ररूपणा	१०१
प्रमाण	१०२
श्रेणिप्ररूपणाके दो भेद व उनका विचार	१०२
अवहारविचार	१०४
भागाभागको अवहारके समान जाननेकी सूचना	११०
अल्पबहुत्वविचार	११०
स्थानप्ररूपणा	१११
स्थानपदकी व्याख्या	१११
स्थानके दो भेद व उनका लक्षणपूर्वक विशेष विचार	१११
अन्तरप्ररूपणा	११४
अन्तरप्ररूपणाकी सार्थकता	११४
स्थानान्तरका स्वरूप	११४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
अनुभागबन्धस्थानान्तर योगस्थानान्तरोंके समान नहीं हैं इसका विचार	११५
जघन्य स्थानसे द्वितीय स्थानके प्रमाणका विचार व उनमें स्पर्धक प्ररूपणा	११६
आगे भी तृतीयादि स्थानोंके प्रमाणका विचार	१२०
जघन्यादि स्थानोंमें षट्स्थान प्ररूपणा व स्थानोंका अल्पबहुत्व	१२०
काण्डकप्ररूपणा	१२८
काण्डकप्ररूपणाके प्रसंगसे अनुभागबन्ध और अनुभागसत्कर्मका अल्पबहुत्व	१२८
काण्डकशलाकाओंका प्रमाण	१३२
अनन्तभागवृद्धि आदिका प्रमाण	१३३
अनन्तभागवृद्धि आदिका अल्पबहुत्व	१३३
ओजयुग्मप्ररूपणा	१३४
षट्स्थानप्ररूपणा	१३५
अनन्तभागवृद्धिविचार	१३५
असंख्यातभागवृद्धिविचार	१५१
संख्यातभागवृद्धिविचार	१५४
संख्यातगुणवृद्धिविचार	१५५
असंख्यातगुणवृद्धिविचार	१५६
अनन्तगुणवृद्धिविचार	१५७
जघन्यादि स्थानोंमें अनन्तभागवृद्धि आदिका विचार	१५८
जघन्य स्थानमें अनन्तभागवृद्धि आदिकी प्रमाणप्ररूपणा	१८६
प्रथम अष्टांकसे लेकर ऊर्वकतक प्राप्त होनेवाली अनन्तगुणवृद्धिके विषयमें तीन अनुयोगद्वारोंकीप्ररूपणा	१६१
अधस्तनस्थानप्ररूपणा	१६३
समयप्ररूपणा	२०२
चारसमयवाले आदि अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंका प्रमाण	२०२
चार समयवाले आदि सब अनुभागबन्धाध्यवसान स्थानोंका अल्पबहुत्व	२०५
प्रसंगसे अग्निकायिक, कायस्थिति व अनुभागस्थानोंका अल्पबहुत्व	२०८
वृद्धिप्ररूपणा	२०६
छह वृद्धि और छह हानियोंके अवस्थानकी प्रतिज्ञा	२०६
पाँच वृद्धि और पाँच हानियोंका काल	२०६
अनन्तगुणवृद्धि और अनन्तगुणहानिका काल	२१०
कालविषयक अल्पबहुत्व	२११
यवमध्यप्ररूपणा	२१२
पर्यवसानप्ररूपणा	२१३
अल्पबहुत्वप्ररूपणा	२१४
अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अल्पबहुत्व-विचार	२१४
परम्परोपनिधाकी अपेक्षा अल्पबहुत्व विचार	२१७
अनुभागसत्कर्मस्थानविचार	२१६
अनुभागबन्धस्थानसे अनुभागसत्कर्ममें क्या अन्तर है इसका विचार	२१६
घातस्थानोंकी प्ररूपणा	२२०
दो प्रकारके घातपरिणामोंका विचार	२२०
सत्त्वस्थान कहाँ होते हैं इसका विचार	२२१
प्रथमादि परिपाटी क्रमसे हतसमुत्पत्ति-स्थानोंका विचार	२२६
हतहतसमुत्पत्तिस्थानविचार	२३२
स्थितिस्थानोंमें अपुनरुक्त स्थानोंका विचार	२३४
बन्धसमुत्पत्ति आदि स्थानोंका अल्पबहुत्व	२४०
तीसरी चूलिका	**२४१-२७४**
जीव समुदाहारमें आठ अनुयोगद्वार	२४१
जीवसमुदाहार और आठ अनुयोगद्वारोंकी सार्थकता	२४१
एकस्थान जीवप्रमाणानुगमविचार	२४२
निरन्तरस्थान जीवप्रमाणानुगमविचार	२४४
सान्तरस्थान जीवप्रमाणानुगम	२४५
नानाजीवकालप्रमाणानुगम	२४५
वृद्धिप्ररूपणा और उसके दो अनुयोगद्वार	२४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
अनन्तरोपनिधाविचार	२४७
परम्परोपनिधाविचार	२६३
यवमध्यप्ररूपणा	२६६
स्पर्शनविचार	२६७
अल्पबहुत्वविचार	२७२
८ वेदनाप्रत्ययविधान	**२७५–२९३**
वेदनाप्रत्ययविधान कहनेकी प्रतिज्ञा व उसकी सार्थकता	२७५
नैगम, संग्रह और व्यवहारनयसे ज्ञानावरणके प्राणातिपातप्रत्ययका विचार	२७५
मृषावादप्रत्ययका विचार	२७६
अदत्तादानप्रत्ययका विचार	२८१
मैथुनप्रत्ययका विचार	२८२
परिग्रहप्रत्ययका विचार	२८२
रात्रिभोजनप्रत्ययका विचार	२८२
क्रोध, मान आदि प्रत्ययोंका विचार	२८३
निदानप्रत्ययका विचार	२८४
अभ्याख्यान, कलह आदि प्रत्ययोंका विचार	२८५
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंको जाननेकी सूचना	२८७
ऋजुसूत्रनयसे ज्ञानावरणीयके प्रत्यय	२८८
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंको जाननेकी सूचना	२९०
शब्दनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणके प्रत्ययोंका विचार	२९०
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंको जाननेकी सूचना	२९३
९ वेदनास्वामित्वविधान	**२९४–३०१**
वेदनास्वामित्वविधानकी प्रतिज्ञा व उसकी सार्थकता	२९४
नैगम और संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणका स्वामी	२९५
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंका स्वामी	२९९
संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणका स्वामी	२९९
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंका स्वामी	३००
शब्द और ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणका स्वामी	३००
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंका स्वामी	३०१
१० वेदनावेदनविधान	**३०२-३६३**
वेदनवेदनविधानकी प्रतिज्ञा और सार्थकता	३०२
नैगमनयकी अपेक्षा सभी कर्मप्रकृति हैं ऐसी प्रतिज्ञा	३०२-३०४
ज्ञानावरण कर्म बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त एक और नाना प्रत्येक व संयोगी भंग रूप कैसे हैं इसका अलग अलग विचार	३०४
इसी प्रकार सात कर्मोंको जाननेकी सूचना	३४२
व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरण कर्मके भंगोंका अलग अलग विचार	३४३
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३५६
संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरण कर्मके भंगोंका अलग अलग विचार	३५६
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३६२
ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय वेदना एकमात्र उदीर्ण है इसका विचार	३६२
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३६३
शब्दनयकी अपेक्षा अवक्तव्य है इसका विचार	३६३
११ वेदनागतिविधान	**३६४–३६९**
वेदनागतिविधानकी प्रतिज्ञा व सार्थकता	३६४
नैगम, संग्रह और व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अवस्थित और स्थितास्थितरूप है इसका विचार	३६५
इसी प्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायके जाननेकी सूचना	३६७
वेदनीयवेदना स्थित, अस्थित और स्थितास्थित है इसकी सिद्धि	३६७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्रके जाननेकी सूचना	३६८
ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणवेदना स्थित और अस्थित है इसका विचार	३६८
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३६९
शब्दनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंकी वेदना अवक्तव्य है इसका विचार	३६९
१२ वेदनाअनन्तरविधान	**३७०–३७४**
वेदना अनन्तरविधानके कहनेकी प्रतिज्ञा और सार्थकता	३७०
नैगम और व्यवहारनयकी अपेक्षा ज्ञानावरण वेदना अनन्तरबन्ध, परम्पराबन्ध और तदुभयबन्धरूप है इसका विचार	३७१
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३७२
संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणवेदना अनन्तरबन्ध और परम्पराबन्ध रूप है इसका विचार	३७२
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३७३
ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणवेदना परम्परा बन्धरूप है इसका विचार	३७३
इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके जाननेकी सूचना	३७४
शब्दनयकी अपेक्षा आठों कर्मोंकी वेदना अवक्तव्य है इसका विचार	३७४
१३ वेदनासन्निकर्षविधान	**३७५-४७६**
वेदनासन्निकर्षके दो भेद व उनकी सार्थकता	३७५
स्वस्थान सन्निकर्षके दो भेद	३७६
जघन्य स्वस्थान सन्निकर्षके स्थगित करनेका कारण	३७६
उत्कृष्ट स्वस्थान सन्निकर्षके चार भेद	३७६
जिसके ज्ञानावरण वेदना द्रव्यसे उत्कृष्ट होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३७७
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना क्षेत्रसे उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३८१
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यादिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३८७
जिसके ज्ञानावरणवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यादिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३९१
इसी प्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायके जाननेकी सूचना	३९५
जिसके वेदनीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३९६
जिसके वेदनीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	३९७
जिसकी वेदनीयवेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०१
जिसकी वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०२
इसीप्रकार नाम और गोत्रकर्मके जाननेकी सूचना	४०४
जिसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०५
जिसके आयुवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०७
जिसके आयुवेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४०८
जिसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
जघन्य स्वस्थानवेदनासन्निकर्ष चार प्रकार-का है	४१३
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४१४
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४१५
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४१८
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२०
इसीप्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायके जाननेकी सूचना	४२१
जिसके वेदनीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२१
जिसके वेदनीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२३
जिसके वेदनीयवेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२४
जिसके वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२६
जिसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२७
जिसके आयुवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४२९
जिसके आयुवेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३०

विषय	पृष्ठ
जिसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३१
जिसके नामवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३३
जिसके नामवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३४
जिसके नामवेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३६
जिसके नामवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३७
जिसके गोत्रवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्र आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४३९
जिसके गोत्रवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४०
जिसके गोत्रवेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४१
जिसके गोत्रवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्य आदिकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४३
परस्थानवेदनासन्निकर्षके दो भेद	४४४
जघन्य परस्थानवेदनासन्निकर्षको स्थगित करनेकी सूचना	४४४
उत्कृष्ट परस्थानवेदनासन्निकर्षके चार भेद	४४५
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके छह कर्मोंकी द्रव्य-वेदना कैसी होती है इसका विचार	४४५
उसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
ज्ञानावरणीयके समान आयुके सिवा शेष छह कर्मोंके जाननेकी सूचना	४४७
जिसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कैसी होती है इसका विचार	४४८
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकर्मकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४९
उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र कर्मकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४४९
इसीप्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकी अपेक्षा जाननेकी सूचना	४५०
जिसके वेदनीयवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकीवेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५०
उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५०
इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्रकी अपेक्षा सन्निकर्षका विचार	४५१
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके आयुके सिवा छह कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५१
उसके आयुवेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५२
इसी प्रकार आयुके सिवा छह कर्मोंकी मुख्यतासे सन्निकर्षके जाननेकी सूचना	४५३
जिसके आयुवेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५३
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५५
उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५५
इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी मुख्यतासे जाननेकी सूचना	४५६
जिसके वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५६
उसके मोहनीय वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५७
उसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५८
उसके नाम और गोत्रवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५९
इसी प्रकार नाम और गोत्रकी मुख्यतासे जाननेकी सूचना	४५९
जिसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४५९
परस्थान वेदना सन्निकर्षके कथन करनेकी सूचना	४६०
जिसके ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्य की अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरण और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६०
उसके वेदनीय, नाम और गोत्रवेदना द्रव्य की अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	
उसके मोहनीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६२
उसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
ज्ञानावरणके समान दर्शनावरण और अन्तरायकी मुख्यतासे सन्निकर्षके जाननेकी सूचना	४६३
जिसके वेदनीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६३
उसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६३
उसके नाम और गोत्र वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६४
वेदनीयके समान नाम और गोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्षके जाननेकी सूचना	४६५
जिसके मोहनीय वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुके सिवा शेष छह कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६५
उसके आयुवेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६५
जिसके आयुवेदना द्रव्यकी अपक्षा जघन्य होती है उसके शेष सात कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६६
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके शेष सात कर्मोंकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६८
ज्ञानावरणके समान शेष सात कर्मोंकी मुख्यतासे क्षेत्रकी अपेक्षा सन्निकर्षके जाननेकी सूचना	४६९
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरण और अन्तरायवेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६६
उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रवेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४६६
उसके मोहनीय वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७०
ज्ञानावरणके समान दर्शनावरण और अन्तरायकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जाननेकी सूचना	४७०
जिसके वेदनीय वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७०
उसके आयु, नाम और गोत्र वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७०
वेदनीयके समान आयु, नाम और गोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जाननेकी सूचना	४७१
जिसके मोहनीय वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७१
जिसके ज्ञानावरणीय वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरण और अन्तराय वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७१
उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७२
उसके मोहनीयवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७३
ज्ञानावरणके समान दर्शनावरण और अन्तरायकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जाननेकी सूचना	४७३
जिसके वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय मोहनीय और अन्तरायवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७३
उसके आयु, नाम और गोत्रवेदना भावकी अपक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
जिसके मोहनीय वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७४
जिसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७४
उसके नामवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७५
जिसके नामवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुके सिवा शेष छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती ह इसका विचार	४७५
उसके आयुवेदना भावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७५
जिसके गोत्रवेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदनाभावकी अपेक्षा कैसी होती है इसका विचार	४७६
१४ वेदनापरिमाणविधान	**४७७-५००**
वेदनापरिमाणविधान कहनेकी सूचना व स्पष्टीकरण	४७७
उसके तीन अनुयोगद्वार और स्पष्टीकरण	४७८
प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा दो आवरण कर्मोंकी प्रकृतियाँ	४७८
वेदनीयकर्मकी प्रकृतियाँ	४७९
मोहनीयकर्मकी प्रकृतियाँ	४८१
आयुकर्मकी प्रकृतियाँ	४८२
नामकर्मकी प्रकृतियाँ	४८३
गोत्रकर्मकी प्रकृतियाँ	४८४
अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ	४८५
समयप्रबद्धार्थताकी अपेक्षा दो आवरण कर्म और अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ	४८५
वेदनीय कर्मकी प्रकृतियाँ	४८७
मोहनीय कर्मकी प्रकृतियाँ	४९०
आयुकर्मकी प्रकृतियाँ	४९१
नामकर्मकी प्रकृतियाँ	४९२
गोत्र कर्मकी प्रकृतियाँ	४९६
क्षेत्रप्रत्यासकी अपेक्षा ज्ञानावरणकी प्रकृतियाँ	४९७
इसी प्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायकी प्रकृतियाँ जाननेकी सूचना	४९८
वेदनीय कर्मकी प्रकृतियाँ	४९९
इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्रकर्मकी प्रकृतियाँ जाननेकी सूचना	५००
१५ वेदनाभागाभागविधान	**५०१-**
वेदनाभागाभाग विधानकी सूचना व तीन अनुयोगद्वार	५०१
प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरण प्रकृतियोंका भागाभाग	५०१
शेष छह कर्मोंका भागाभाग	५०४-५०८
समयप्रबद्धार्थताकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरण प्रकृतियोंका भागाभाग	५०४
शेष छह कर्मोंका भागाभाग	५०५
क्षेत्र प्रत्यासकी अपेक्षा ज्ञानावरणका भागाभा	५०६
इसी प्रकार दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय कर्म के भागाभागकी सूचना	५०७
वेदनीय कर्मका भागाभाग	५०७
इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्र कर्मका भागाभाग	५०८
१६ वेदना अल्पबहुत्व	**५०९-५१२**
वेदना अल्पबहुत्वकी सूचना व तीन अनुयोग द्वार	५०९
प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा आठों कर्मोंका अल्प बहुत्व	५०९
समय प्रबद्धार्थताकी अपेक्षा आठों कर्मोंका अल्पबहुत्व	५१०
क्षेत्र प्रत्यासकी अपेक्षा आठों कर्मोंका अल्पबहुत्व	५११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुद्धि-पत्र

[पु० १२]

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३	६	**पज्ञत्तगदेण**	**पज्जत्तयदेण**
१३ से १६		सूत्रसंख्या ६, ७, ८, ६, १०, ११, १२	७, ८, ६, १०, ११, १२, १३
२७	१२	**आप्पाओग्गं**	**अप्पाओग्गं**
३०	६	**सुहत्तेणेण**	**सुहत्तणेण**
३३	५	**सरिसत्ताणु-**	**सरिसाणु-**
,,	१२	**ण च एवं तदो**	**ण च एवं, वीरियंतराइयस्स सव्वत्थ खओवसमदंसणादो । तदो**
,,	३०	परन्तु ऐसा है नहीं । अतएव	परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वीर्यान्तरायका सर्वत्र क्षयोपशम पाया जाता है । अतएव
३६	१	**णामवेयणा ··· ॥५७॥**	**गोदवेयणा ······· ॥५७॥**
,,	२	×××	**सुगमं ।**
,,	,,	**गोदवेयणा ··· ॥५८॥**	**णामवेयणा ······· ॥५८॥**[1]
,,	१६	**उससे...नामकर्मकी...॥५७॥**	**उससे...गोत्रकर्मकी...॥५७॥**
,,	,,	× × ×	यह सूत्र सुगम है ।
,,	१७	**उससे ··· गोत्रकर्मकी ·· ।५८।**	**उससे ··· नामकर्मकी ··· ॥ ५८ ॥**
,,	३१	× × ×	१ अ-आ-काप्रतिषु ५७-५८ संख्याकमिदं सूत्रद्वयं विपरीतक्रमेणोपलभ्यते, किन्तु ताप्रतौ यथाक्रमेणैवास्ति तत् ।
४१	११	**णोवरिमेसु । तेसु वि लोभादो**	**णोवरिमेसु तिसु[4] वि, लोभादो**
,,	१२	**[4]'संजलणा'**	**'संजलणा'**
,,	२६	आगेकी कषायोंमें ··· होती । उनमें भी लोभसे	आगेकी तीनों ही कषायों में ······ होती, क्योंकि, लोभसे
,,	३१	३ प्रतिषु णोवरिमसुत्तेसु इति पाठः	३ ताप्रतौ 'एत्थ लोभाणुभागो अणंतगुणहीणो त्ति अणुवट्टदे' इति पाठः ।
४१	३२	४ अप्रतौ-त्तादो ··· त्ति उत्ते इति पाठः । मप्रतौ-त्तादो ······	४ अप्रतौ 'णोवरिमसुत्तेसु', आप्रतौ णोवरिमेसुत्तेसु' इति पाठः ।
४४	७	**सुत्ततदियगाहाए**	**तदियसुत्तगाहाए**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४५	१८	महादण्ड	महादण्डक
४६	४	त्रिसीहीदो	विसोहीदो
४८	१	ऊणदा। वेउव्विय-	ऊणदा। आहारसरीरादो वेउव्विय-
,,	१२	असद्दहम्मि	असद्दहणम्मि
,,	१३	शंका—वैक्रियिक	शंका—आहारकशरीरकी अपेक्षा वैक्रियिक
५०	४	विसंजोयणाणुवलंभादो चदुण्णं तदुवलंभादो।	विसंजोयणुवलंभादो, चदुण्णं तदणुवलंभादो।
,,	२०	उनका विसंयोजन नहीं उपलब्ध होता,	उसका विसंयोजन उपलब्ध होता है,
,,	२१	उपलब्ध होता है	उपलब्ध नहीं होता
५६	२९	२ अप्रतौ 'सव्वत्थो'	२ अ-आ-काप्रतिषु 'सव्वत्थो'
६६	११	देव-मणुवगई	मणुव-देवगई[२]
,,	२७	देवगति और मनुष्यगति	मनुष्यगति और देवगति
,,	३१	१ अप्रतौ	१ अ-आ-काप्रतिषु
६३	३२	× × ×	२ अ-काप्रत्योः 'देव-मणुवगई' इति पाठः।
६४	१	वुत्ते ए	वुत्ते णिद्दाए
७७	३०	वर्णचतुष्क	वर्णादिचतुष्क
७८	१०	संखेज्जगुणा य सेडीओ	संखेज्जगुणाए सेडीए
,,	२९	१ त. सू.	१ अ-आ-काप्रतिषु 'संखेज्जगुणा य सेडीओ', ताप्रतौ 'संखेज्ज-गुणा य सेडीए' इति पाठः। त० सू०
७९	१२	रोहे वा वावदजणाणं	रोहे वावदजिणाणं
,,	१३	एदेण[१] गाहासुत्तकलावेण एक्कारस[१]	एदेण सुत्तकलावेण एक्कारसहा[१]
,,	३०	१ग्यारह प्रदेश-	१ग्यारह प्रकार की प्रदेश—
८१	३	संखेज्जगुणो [य] सेडीए	संखेज्जगुणाए सेडीए[१]
,,	३४	× × ×	१ अ-आ-काप्रतिषु 'संखेज्जगुणो २८ सेडीए', ताप्रतौ 'संखेज्ज-गुणा य 'सेडीए' इति पाठः।
९२	,,	पयडिअणुभागो	पयडी अणुभागो
,,	३०	'वग्गो'	'वग्गोगंधरसे'
९४	१३	कत्थ सिद्धं	कत्थ पसिद्धं[३]
,,	३२	× × ×	३ ताप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ-काप्रतिषु 'कथं सिद्धं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९५	१	१एगवियप्पो	एगवियप्पो
,,	६	–वग्गणओ	–वग्गणाओ
९७	१९	होगा, क्योंकि	होगा, सो भी नहीं है; क्योंकि
९८	४	–अविभागवड्डिच्छेदेहि१	अविभागपडिच्छेदेहि२
९८	१३	जिसे	जिसके
,,	२७	२ प्रतिषु	२ अ-आप्रत्योः
१०२	३१	सेग॰	सेस॰
१०४	१२	संदिट्ठ	संदिट्ठीए
१०६	२९	=१२४	=२२४
१०८	१०	१तदित्थ	तदित्थ
,,	१३	३७२	३०७२
१११	२	–बंधट्ठाणादो१	–बंधट्ठाणादो
,,	३	तदिय	तदिय१
,,	७	विसरिणाणि	विसरिसाणि
,,	८	विभागपडिच्छेदपरूएवमवणा	एवमविभागपडिच्छेदपरूवणा
,,	१०	–लोगट्ठाणाणि ?	–लोगट्ठाणाणि ।
११२	२८	णवबंट्ठाणाणि त्ति	णवबंधट्ठाणाणि (?) त्ति
,,	३०	–वड्ढि······। जपध॰	–वड्ढि······। जयध॰
११३	११	–भावदो वत्तीए१ ।	–भावावत्तीए च१ ।
११७	७	एगोलीयबहुत्तं	एगोलीबहुत्तं
,,	८	तुल्लाणि'१	तुल्लाणि'
,,	२८	भमिव	भमिय
,,	२९	पारभिव	पारभिय
११८	२९	एक स्पर्द्धकवृद्धि	एक अंकसे कम स्पर्द्धकवृद्धि
१२०	८	वड्ढिमुवगत्तादो ।	वड्ढिमुवगदत्तादो ।
१२६	६	फद्दयंतराणि१	फद्दयंतराणि१
,,	११	ट्ठाणंतराणि१	ट्ठाणंतराणि२
१२७	११	पि परूवणा	पि अंतरपरूवणा
,,	२८	भी प्ररूपणा	भी अन्तरप्ररूपणा
१३०	६	सुद्ध	सुद्धु
१३१	५	परिसेसयादो	परिसेसियादो
,,	१५	असंख्यातभागवृद्धि	संख्यातभागवृद्धि
१३४	७	अविभागपडिच्छेद णं	अविभागपडिच्छेदाणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३४	३१	तथा एक प्रक्षेपस्पर्द्धककी	तथा एक एक प्रक्षेपस्पर्द्धककी
१३५	२०	'सब जीव' ग्रहण	'सब जीव' से ग्रहण
१३८	३२	'चेट्ठदि त्ति, ण ओकड्डिज्जमाण'	'ओकड्डिज्जमाण'
१३९	६	**केवलणाणाणुक्कस्साणु-**	**केवलणाणा- [वर-] णुक्कस्साणु-**
,,	२६	उपकर्षण	उत्कर्षण
१४३	२९	जधम्य	जघन्य
१४५	२६	एक अविभाग-	एक एक अविभाग-
,,	२७	लेकर उत्तरोत्तर एक...वर्गणामें	लेकर निरन्तर एक...वर्गणायें
१४७	२४	सौ संख्या एक आदि संख्याओं- में गर्भित है	सौसंख्यामें एक आदि संख्याऐं गर्भित हैं
१५१	६	॥२०४॥	॥२०५॥
,,	२१	॥२०५॥	॥२०६॥
,,	१४	**अणंतगुणवड्ढिहीणाणि**	**अणंतगुणहीणाणि**
,,	३१	अनन्तगुणवृद्धिसे हीन	अनन्तगुणे हीन
१५२	७	**असंखेज्जसमया**	**असंखेज्जा समया**
१५३	१	**ट्ठाणंतरफद्दयाणि**	**ट्ठाणंतरफद्दयंतराणि**
१५५	१	**एदम्हादो एगाविाग**	**एदम्हादो पक्खेवादो एगाविभाग-**
१५६	१७	अष्टांक और अधस्तन	अष्टांकके अधस्तन
,,	१८	उपरिम सप्तांकसे व अधस्तन	उपरिम प्रथम सप्तांकसे अधस्तन
,,	१९	संख्यातगुणवृद्धि	असंख्यातगुणवृद्धि
१५९	२२	क्रम ?	क्रम है ?
१६२	६	॥	॥ २ ॥
१६२	३३	अ. आ. प्र० ५	ष. खं. पु. ५
६५	६	**पुच्छिदे-**	**पुच्छिदे उच्चदे-**
१६६	४	**उव्वंकस्सुरिम-**	**उव्वंकस्सुवरिम-**
,,	८	**'असंखेज्ज-**	**दो'असंखेज्ज-**
,,	२२	करनेपर असंख्यात-	करनेपर दो असंख्यात-
१६८	४	**एदं सुद्धं घेत्तूण' जहण्णट्ठाणेसु**	**एदं सव्वं घेत्तूण' जहण्णट्ठाणस्सु-**
१७०	१८	मिलानेपर असंख्यात-	मिलानेपर प्रथम संख्यात-
१७१	१०	॥१०॥	॥ ३ ॥
,,	१२	॥११॥	॥ ४ ॥
,,	२७	॥ १० ॥	॥ ३ ॥
,,	३०	॥ ११ ॥	॥ ४ ॥
१७२	१२	**उक्कस्ससंखेज्जेण पुध पुध**	**उक्कस्ससंखेज्जेण पुव्वं पुध**
,,	१७	द्वितीय असंख्यात-	द्वितीय संख्यात-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७२	१८	प्रथम असंख्यात-	प्रथम संख्यात-
,,	२८	फिर पृथक् पृथक्	फिर पूर्वमें पृथक्
१७४	३	थूला परूवणा	थूलपरूवणं
		पृष्ठ १७६ के आगे १६६ से १७६ तक के स्थानमें	१७७ से १८४ पृष्ठ तक पढ़िये
१७०/२	५	"संदिट्ठीए	संदिट्ठीए
१७६/२	६	णवखंडयाम-	णवखंडायाम-
१८६	४	²एदस्स	एदस्स
,,	११	खेत्तं पादेदूण	खेत्तं [पादेदूण
,,	,,	-खंडायामं³ तच्छेदूण	-खंडायामं खेत्तं⁴] तच्छेदूण
१९३	१६	अनन्तवें भागसे अधिक	अनन्तभागवृद्धि
,,	,,	असंख्यातवें भागसे अधिक	असंख्यातभागवृद्धिका
१९४	२७	असंख्यातवें भागसे अधिक	असंख्यातभागवृद्धि
,,	,,	संख्यातवें भागसे अधिक	संख्यातभागवृद्धि का
१९५	२१	संख्यातवें भागसे अधिक	संख्यातभागवृद्धि
,,	,,	संख्यातगुणा अधिक	संख्यातगुणवृद्धिका
,,	२७	संख्यातगुणा अधिक	संख्यातगुणवृद्धि
,,	,,	असंख्यातगुणा अधिक	असंख्यातगुणवृद्धिका
,,	३१	असंख्यातगुणा अधिक	असंख्यातगुणवृद्धि
,,	,,	अनन्तगुणा अधिक	अनन्तगुणवृद्धिका
१९७	२२	जाकर संख्यात-	जाकर (१६ + ४) संख्यात-
२०२	१	रूवेण कंदएण¹	रूवेण एगकंदएण¹
,,	१६	और काण्डक	और एक काण्डक
२०७	१	अणुवहिभावेण¹	अणुवड्डिभावेण¹
,,	७	-परूवणासंबद्धा चि ?	-परूवणा णासंबद्धा वि ।
२१०	२६	अनन्तभागवृद्धि	अनन्तगुणवृद्धि
२१३	२८	प्रकार न होकर	प्रकार होकर
२१६	१५	संख्यातवृद्धिस्थान	संख्यातभागवृद्धिस्थान
२१९	५	कणि	काणि
२२२	३३	भावविधान ११३-१४ इति पाठः ।	भावविधान २०४.
२२६	२७	चरम	त्रिचरम
२२८	१८	अधस्तन अष्टांकके	अधस्तन ऊर्वंकके
२३१	२	एगं चेव	तमेगं चेव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३२	३	**अणुभागसंकमे**	**अणुभागसंकमो**[1]
२३२	७	**विसीहिट्ठाणे**	**विसोहिट्ठाणे**
,,	१६	अनुग्रहार्थ चूर्णिसूत्रमें	अनुग्रहार्थ अनुभागसंक्रमको चूर्णिसूत्रमें
२३२	३३	१ आप्रतौ 'हदसमुप्पत्तिय' इति पाठः ।	१ ताम्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-काप्रतिषु 'अणुभागसंकमे' इति पाठः ।
२३३	२१	हतसमुत्पत्तिकस्थान	हतहतसमुत्पत्तिकस्थान
२३५	२२	चतुरंकस्थानान्तर	चतुरंकस्थान
२३८	३	**पहिण्णएहि**	**पइण्णएहि**
२३६	१	**उप्पादिय**[2]	**उप्पादिय**[1]
२४१	११	**किमट्ठागदो**	**किमट्ठमागदो**
२४२	१७	परम्परोनिधा	परम्परोपनिधा
,,	२१	वृद्धिप्ररूपणा	यवमध्यप्ररूपणा
२४४	२६	सुत्ताह	सुत्तमाह
,,	३१	–सुत्तामोइएण	–सुत्तमोइएणं
२४५	१४	**होदिं**	**होंति**
२४६	६	**जीवेहि**[1]	**जीवेहि**[2]
२४७	१	**–णुववत्तीदा**	**-णुववत्तीदो**
,,	१४	**एणेगट्ठाणम्मि**	**एगेगट्ठाणम्मि**
२४८	२	**चोदंचणे**[1]	**चोदंचणे**[1]
,,	७	**विसयय–**	**विसमय–**
,,	१५	भी (ऊंचे उठे हुए समुद्रमें भी) फेकनेपर	भी फेकनेपर
,,	१६	कारण	[कारण
,,	१८	उदञ्चनमें·······है ।	(उदञ्चनमें)·······है ।]
२५६	३०	ही होकर	ही जीव होकर
,,	३२	२ अप्रत्यो	अ-आ-काप्रतिषु
२५८	१३	**-परिहीणट्ठाणादो**	**-परिहीणद्धाणादो**[1]
२६६	४	**जवमज्झहेट्ठिम–**	**जवमज्झं हेट्ठिम–**
२७७	१	**यखंधेहि**	**खंधेहि**
,,	२५	क्योंकि, इन्धन	क्योंकि, प्राप्त इन्धन
२७६	१	**परिणामावेदि**	**परिणमावेदि**
२८१	१	**णिदो ···· वियोयो**	**जणिदो वियोगो**
२८१	६	उपयुक्त अवस्थाकी	उपर्युक्त अव्यवस्थाकी
,,	१२	अवस्था	अव्यवस्था

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८५	८	निकृतिवचना	निकृतिर्वञ्चना
,,	१६	माया	मेय
२८६	२३	माया	मेय
२९८	२९	'जीवड्डि	'जीववड्डि
३०१	२	भणिदेण[2]	भणिदे ण,[2]
,,	२८	'अणोगंतस्त'	'अणेगंतस्स'
,,	,,	'भीणदे,	'भीणदे, ण'
३०६	१५	स्थापित कर······पश्चात्	स्थापित कर १ १ १ / २ २ २
३०६	१६	सबद्ध	सम्बद्ध
,,	२७	कंचित्	कथंचित्
३१०	३१	वपअरूयव	अवयवरूप
३११	९	अनेक । एक । एक	अनेक । एक । अनेक
३१३	१७	व्यभिचारका	व्यधिकरणताका
,,	२८	व्यभिचारकी	व्यधिकरणताकी
३१४	१६	जीवाणमणेयपयडीओ	जीवाणमणेयाओ पयडीओ
३१७	१२	[एयसमयपबद्धाओ च]	एयसमयपबद्धाओ च
३१९	१	उदिण्ण-	[उदिण्ण]
३२८२९	४	उवसंताओ	उवसंता[1]
३३३	१०	उवसंता[2]	उवसंताओ[1]
३३८	३	अणेयसमयपबद्धाओ	अणेयसमयपबद्धा
३४३	१८	एक । एक । अनेक	एक । एक । एक
३४४	११	तहा[1]	तहा[3]
,,	१२	वेयणाए चेव	वेयणाए वे चेव
,,	२७	वेदनाके ही	वेदनाके दो ही
३५३	१	बज्झमाणया	बज्झमाणिया

,, १२ यहाँ संदृष्टिमें उदीर्णके आगे उपशान्त सम्बन्धी यह अंश छूट गया है—

उपशान्त			
एक	एक	अनेक	अनेक
एक	एक	एक	एक
एक	अनेक	एक	अनेक

३५४	४	उवसंताओ	उवसंता
३५५	३०	अणेयसमयपबद्धो	अणेयसमयपबद्धाओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५५	३१	भंगा २ इति	भंगा २ । (१) इति
३५६	१६	| अनेक | एक | एक |	| अनेक | ० | ० |
३६२	६	**उदिण्णा' फलपत्त-**	**उदिण्ण 'फलपत्त-**
३६३	१४	अपुग्भूत	अपुथग्भूत
३६४	१	**वयणगदि-**	**वेयणगदि-**
३६५	३३	'अद्दहिद'	'जीवपदेसेसु अद्दहिदजलं'
३६७	१६	योग और	योग है और
३७१	१२	**वेयणावयणविहाणे**	**वेयणावेयणविहाणे**
३७३	१०	**-वेयणा परंपरबंधा चेव**	**-वेयणा' परंपरबंधा चेव,**
३७४	७	**-परूवयाणं' ण सद्दो**	**-परूवयाणं सद्दो**
,,	१८	'अत्थपरूवाणं'	अत्थपरूवाणं ण सद्दा'
,,	,,	'परूवणं ण (याणं),	'परूवणं (याणं) सद्दो'
३७८	११	**चरिमसमए**	**चरिमसमए**
,,	३५	× × ×	३ अ-का-ताप्रतिषु 'पढमसमए' इति पाठः ।
३८१	३२	'पत्तेयासंखेज्ज'	'पत्तेयसंखेज्ज'
३८७	३३	१ अ-आ-का-ताप्रतिषु 'सामिओ'	१ ताप्रतौ 'सामिणा'
३८६	१	**उक्कस्सा' । दव्ववेयणा**	**उक्कस्सा । दव्ववेयणा'**
,,	३१	-काप्रतिषु उक्कस्स'-ताप्रतौ उक्कस्स'	-काप्रतिषु 'कालवेयणा उक्कस्सदव्ववेयणा', ताप्रतौ 'काल-वेयणा । उक्कस्सदव्ववेयणा'
,,	,,	२ अ-आ-का-ताप्रतिषु	२ अ-आ-काप्रतिषु
३६०	७	**-सत्थाणोगाहणो'**	**-सत्थाणोगाहणा'**
३६६	३०	**||४७स**	**|| ४७ ||**
३६६	३४	बारसमुहुत्तमेत्ता	ता० प्रतौ 'बारसमुहुत्तमेत्ता
३६६	३५	५ उद्धत (१, पृ० १७१०)	५ उद्धृत (१, पृ० १७१.)
४००	१	**णिरवज्ज-'**	**णिरवज्जा'**
,,	३३	'गिरवज्ज'	'णिरवज्ज-'
४०५	३१	उत्कृष्ट द्रव्यका	उत्कृष्ट स्थितिका
४०८	२८	अनन्तगुणा हीन पाया	अनन्तगुणा पाया
४०६	३२	काप्रतिषु पबंधा-	काप्रतिषु 'बंधगद्धा-
४१८	६	**-अवस्थानिसेसे**	**-अवत्थाविसेसे**
,,	७	**घादिज्जमाण-'अणुभागस्स ......अणुभागं**	**घादिज्जमाणअणुभागस्स ......अणुभागं'**
,,	३२	**असंख्यातण**	**असंख्यातगुण**
,,	३३	१ अ-आ-काप्रतिषु-जमाग अणुभागं	१ अ-आ-काप्रतिषु 'विसोहीहि घादिजमागअणुभागं'
४१६	१८	इस अजघन्य	इस जघन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२५	१४	॰भाहया	॰भहिया
,,	१८	चपितगुणित-घोलमान	चपितघोलमान, गुणितघोलमान
४२६	६	जादो तेण	जादो । तेण
४३६	१-२	अजहण्णा सा	अजहण्णा । सा
,,	३२	'भावचेयणा जहण्णा	'भावचेयणाजहण्णा'
४५२	१	पक्कस्सेण	उक्कस्सेण
,,	१०	बक्कम्मियाए	उक्कस्सियाए
४५४	११	[वंधदि]	बंधंति[१] ।
,,	२८	उनमें एक	उसमेंसे व एक
,,	३२	'एगखंडे'	'एगखंडे परिहाइदूण बद्धंति'
४५६	३	सेस-	सेस[१]-
४५७	२३	भावके माननेपर	भावके न माननेपर
४८६	२	तासं	तोसं
४८८	३४	'ण ण'	'णाण-'
४९३	३२	ष. खं. १, भा. ९, पु. ६,	षं. खं. पु. ६
५०२	७	तदवगमत्थ-	तदवगयत्थ-
,,	९	पडिसेहविणासादो ।	पडिसेहविहाणादो ।
,,	२४	क्योंकि, उन ज्ञानों रूप अर्थका	क्योंकि, उसके द्वारा अवगत अर्थका
,,	२६	प्रतिषेधका वहांपर अभाव है ।	प्रतिषेधका वहाँ विधान किया गया है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिरि-भगवंत-पुप्फदंत-भूदबलि-पणीदो

छक्खंडागमो

सिरि-वीरसेणाइरिय-विरइय-धवला-टीका-समण्णिदो

तस्स चउत्थे वेयणाए

वेदणाभावविहाणाणियोगद्दारं

वेयणभावविहाणे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति ॥ १ ॥

तत्थ भावो चउव्विहो—णामभावो ठवणभावो दव्वभावो भावभावो चेदि । तत्थ भावसद्दो णामभावो णाम । सब्भावासब्भावसरूवेण सो एसो त्ति अभेदेण संकप्पिदत्थो ट्ठवणभावो णाम । दव्वभावो दुविहो—आगमदव्वभावो णोआगमदव्वभावो चेदि । तत्थ

अब वेदनाभावविधान प्रारम्भ होता है । उसमें ये तीन अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं ॥ १ ॥

भाव चार प्रकारका है—नामभाव, स्थापनाभाव, द्रव्यभाव और भावभाव । उनमें भाव यह शब्द नामभाव है । सद्भाव या असद्भाव स्वरूपसे 'वह यह है' इस प्रकार अभेदसे सङ्कल्पित पदार्थ स्थापनाभाव कहा जाता है । द्रव्यभाव दो प्रकारका है— आगमद्रव्यभाव और नोआगम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावपाहुडजाणओ अणुवजुत्तो आगमदव्वभावो णाम। णोआगमदव्वभावो तिविहो-जाणुगसरीर-भविय-तव्वदिरित्तणोआगमदव्वभावभेएण[1]। जाणुगसरीर-भवियं गदं। तव्व-दिरित्तदव्वभावो दुविहो—कम्मदव्वभावो णोकम्मदव्वभावो चेदि। तत्थ कम्मदव्वभावो णाणावरणादिदव्वकम्माणं अण्णाणादिसमुप्पायणसत्ती। णोकम्मदव्वभावो दुविहो—सचित्तदव्वभावो अचित्तदव्वभावो चेदि। तत्थ केवलणाण-दंसणादियो सचित्तदव्वभावो। अचित्तदव्वभावो दुविहो—मुत्तदव्वभावो अमुत्तदव्वभावो चेदि। तत्थ वण्ण-गंध-रस-फासादियो मुत्तदव्वभावो। अवगाहणादियो अमुत्तदव्वभावो। भावभावो दुविहो-आगम-णोआगमभावभावभेदेण[2]। तत्थ भावपाहुडजाणगो उवजुत्तो आगमभावभावो। [णोआ-गमभावभावो] दुविहो—तिव्व-मंदभावो णिज्जराभावो चेदि। तिव्व-मंददाए भावसरूवाए[3] कधं भावभाववववएसो ? ण, तिव्व-तिव्वयर-तिव्वतम-मंद-मंदयर-मंदतमादिगुणेहि भावस्स वि भावुवलंभादो। ण णिज्जराए भावभावत्तमसिद्धं, सम्मत्तुप्पत्तियादिभावभावेहि जणिद-णिज्जराए उवयारेण तदविरोहादो। एत्थ कम्मभावेण पयदं, अण्णेसिं वेयणाए संबंधाभा-वादो। वेयणाए भावो वेयणभावो, वेयणभावस्स विहाणं परूवणं वेयणभावविहाणं।

द्रव्यभाव। उनमें भावप्राभृतका जानकार उपयोग रहित जीव आगमद्रव्यभाव कहलाता है। नोआगमद्रव्यभाव ज्ञायकशरीर, भावी और तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यभावके भेदसे तीन प्रकारका है। इनमें ज्ञायकशरीर और भावी नोआगमद्रव्यभाव ज्ञात हैं। तद्व्यतिरिक्त नोआगम-द्रव्यभाव दो प्रकारका है—कर्मद्रव्यभाव और नोकर्मद्रव्यभाव। उनमें ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्मोंकी जो अज्ञानादिको उत्पन्न करने रूप शक्ति है वह कर्मद्रव्यभाव कही जाती है। नोकर्मद्रव्यभाव दो प्रकारका है—सचित्तद्रव्यभाव और अचित्तद्रव्यभाव। उनमें केवलज्ञान व केवलदर्शन आदि सचित्तद्रव्यभाव हैं। अचित्तद्रव्यभाव दो प्रकारका है—मूर्तद्रव्यभाव और अमूर्तद्रव्यभाव। उनमें वर्ण, गन्ध, रस व स्पर्श आदिक मूर्तद्रव्यभाव हैं। अवगाहनादिक अमूर्तद्रव्यभाव हैं।

भावभाव दो प्रकारका है—आगमभावभाव और नोआगमभावभाव। इनमें भावप्राभृतका जानकार उपयोग युक्त जीव आगमभावभाव कहा जाता है। [नोआगमभावभाव] दो प्रकारका है—तीव्र-मन्दभाव और निर्जराभाव।

शङ्का—जब कि तीव्रता व मन्दता भावस्वरूप हैं तब उन्हें भावभाव नामसे कहना कैसे उचित कहा जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम, मन्द, मन्दतर और मन्दतम आदि गुणोंके द्वारा भावका भी भाव पाया जाता है।

निर्जराको भी भावभावरूपता असिद्ध नहीं है, क्योंकि, सम्यक्त्वोत्पत्ति आदिक भाव-भावोंसे उत्पन्न होनेवाली निर्जराके उपचारसे भावभाव स्वरूप होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

यहाँ कर्मभाव प्रकृत है क्योंकि, कर्मभावको छोड़कर और दूसरोंकी वेदनाका यहाँ सम्बन्ध नहीं है। वेदनाका भाव वेदनाभाव, वेदनाभावका विधान अर्थात् प्ररूपणा वेदनाभावविधान

१. ताप्रतौ 'णोआगमदव्वभेएण' इति पाठः। २. आ-ताप्रत्योः 'णोआगमभावभेएण' इति पाठः। ३. अ-आप्रत्योः 'भावपरूवाए', ताप्रतौ 'भावपरूपणाए' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तम्हि वेयणभावविहाणे इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति । अट्ठ अणियोगद्दाराणि किण्ण परूविदाणि ? ण, सेसपंचण्णमणियोगद्दाराणमेत्थेव पवेसादो ।

संपहि वेयणभावविहाणं किमट्ठमागयं ? वेयणदव्वविहाणे जहण्णुक्कस्सादिभेदेण अवगददव्वपमाणाणं, खेत्तविहाणे वि जहण्णुक्कस्सादिभेदेण अवगदओगाहणपमाणाणं, कालविहाणे जहण्णुक्कस्सादिभेदेण अवगयकालपमाणाणमट्ठण्णं कम्माणमण्णाणादिकज्जुप्पायणसत्तिवियप्पपदुप्पायणट्ठमागयं ।

तिण्णमणियोगद्दाराणं णामणिद्देसट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

पदमीमांसा सामित्तमप्पाबहुए त्ति ॥ २ ॥

पदमिदि वुत्ते जहण्णुक्कस्सादिपदाणं गहणं । कुदो ? अण्णेहि एत्थ पओजणाभावादो । तेण अत्थ-ववत्थापदाणं गहणं ण होदि, भेदपदस्सेव गहणं कीरदे । पदाणं मीमांसा परिक्खा गवेसणा पदमीमांसा । एसो पढमो अहियारो । हय-हत्थिसामित्तादिभेदेण जदि वि सामित्तं बहुप्पयारं तो वि एत्थ कम्मभावसामित्तं चेव घेत्तव्वं, अण्णेहि

है । इस वेदनाभावविधानमें ये तीन अनुयोगद्वार जानने योग्य हैं ।

शङ्का—यहाँ आठ अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, शेष पाँच अनुयोगद्वार इन्हींमें प्रविष्ट हैं ।

शङ्का—अभी वेदनाभावविधानका अवतार किसलिये हुआ है ?

समाधान—वेदनाद्रव्यविधानमें जघन्य व उत्कृष्ट आदिके भेदसे जिन आठ कर्मोंके द्रव्यप्रमाणको जान लिया है, क्षेत्रविधानमें भी जघन्य व उत्कृष्ट आदिके भेदोंसे जिनका अवगाहनाप्रमाण जाना जा चुका है, तथा कालविधानमें जिनका जघन्य व उत्कृष्ट आदिके भेदोंसे कालप्रमाण ज्ञात हो चुका है, उन आठ कर्मोंकी अज्ञानादि कार्योंकी उत्पादक शक्तिके विकल्पोंकी प्ररूपणा करनेके लिये वेदनाभावविधानका अवतार हुआ है ।

अब उक्त तीन अनुयोगद्वारोंका नाम निर्देश करनेके लिये आगेका सूत्र कहा जाता है—

पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व ॥ २ ॥

सूत्रमें निर्दिष्ट पदसे जघन्य व उत्कृष्ट आदि पदोंका ग्रहण किया गया है, क्योंकि, अन्य पदोंका यहाँ कोई प्रयोजन नहीं है । इसलिये यहाँ अर्थपद व व्यवस्थापद आदिक पदोंका ग्रहण नहीं होता है, किन्तु भेदपदका ही ग्रहण किया जाता है । पदोंकी मीमांसा अर्थात् परीक्षा या गवेषणाका नाम पदमीमांसा है । यह प्रथम अधिकार है । घोड़ा व हाथी आदि सम्बन्धी स्वामित्वके भेदसे यद्यपि स्वामित्व बहुत प्रकारका है, तो भी यहाँ कर्मभावके स्वामित्वका ही ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि और दूसरोंका यहाँ अधिकार नहीं है । यह दूसरा अनुयोगद्वार है । अल्प-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहियाराभावादो । एदं[1] बिदियमणियोगद्दारं । अप्पाबहुगं पि जदि वि दव्वादिमेदेण अणेयविहं[2] तो वि एत्थ कम्मभावअप्पाबहुगस्सेव गहणं कायव्वं, अण्णेहि एत्थ पओजणाभावादो । एदं तदियमणियोगद्दारं । एवमेदेहि तीहि अणियोगद्दारेहि भावपरूवणं कस्सामो ।

पदमीमांसाए णाणावरणीयवेयणा भावदो किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा किं जहण्णा किमजहण्णा ॥ ३ ॥

एदं देसामासियसुत्तं, तेण अण्णेसिं णवण्णं पदाणं सूचयं होदि । तेण सव्वपदसमासो तेरस होदि । तं जहा—किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा किं जहण्णा किमजहण्णा किं सादिया किमणादिया किं धुवा किमद्धुवा किमोजा किं जुम्मा किमोमा किं विसिट्ठा किं णोमणोविसिट्ठा णाणावरणीयवेयणा त्ति । पुणो एत्थ एक्केक्कं पदमस्सिदूण बारहभंगप्पयाणि अण्णाणि तेरस पुच्छासुत्ताणि णिलीणाणि । ताणि वि एदेणेव सुत्तेण सूचिदाणि होंति । तदो चोद्दसण्णं पुच्छासुत्ताणं सव्वभंगसमासो एगूणसत्तरिसदमेत्तो त्ति बोद्धव्वो १६९ । एत्थ पढमसुत्तस्स अट्ठपरूवणट्ठं देसामासियभावेण उत्तरसुत्तं भणदि—

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा जहण्णा वा अजहण्णा वा ॥ ४ ॥

बहुत्व भी यद्यपि द्रव्यादिके भेदसे अनेक प्रकारका है तो भी यहाँ कर्मभावके अल्पबहुत्वका ही ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, दूसरे अल्पबहुत्वोंका यहाँ प्रयोजन नहीं है । यह तृतीय अनुयोगद्वार है । इस प्रकार इन तीन अनुयोगद्वारोंके द्वारा भावप्ररूपणा करते हैं ।

पदमीमांसामें ज्ञानावरणीयवेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट है, क्या अनुत्कृष्ट है, क्या जघन्य है और क्या अजघन्य है ॥ ३ ॥

यह देशामर्शक सूत्र है, अतएव वह अन्य नौ पदोंका सूचक है । इसलिये सब पदोंका योग (४ + ९) तेरह होता है । वह इस प्रकार है—उक्त ज्ञानावरणीयवेदना क्या उत्कृष्ट है, क्या अनुत्कृष्ट है, क्या जघन्य है, क्या अजघन्य है, क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या ध्रुव है, क्या अध्रुव है, क्या ओज है, क्या युग्म है, क्या ओम है, क्या विशिष्ट है और क्या नोमनोविशिष्ट है । फिर इस सूत्रमें एक-एक पदका आश्रय करके बारह भङ्ग स्वरूप अन्य तेरह पृच्छासूत्र गर्भित हैं । वे भी इसी सूत्रसे सूचित हैं । इस कारण चौदह पृच्छासूत्रोंके सब भङ्गोंका जोड़ एक सौ उनहत्तर [१३ + (१२ × १३) = १६९] समझना चाहिये । यहाँ प्रथम सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करनेके लिये देशामर्शक रूपसे आगेका सूत्र कहते हैं—

उक्त ज्ञानावरणीयवेदना उत्कृष्ट भी होती है, अनुत्कृष्ट भी होती है, जघन्य भी होती है और अजघन्य भी होती है ॥ ४ ॥

१. प्रतिषु 'एवं' इति पाठः । २. अप्रतौ 'अणेयविदं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एत्थ णाणावरणीयसामण्णे णिरुद्धे ओजपदं णत्थि । कुदो ? फद्दएसु वग्गणासु अविभागपलिच्छेदेसु च कदजुम्मभावस्सेव उवलंभादो । कधमणादियपदस्स संभवो ? ण, णाणावरणीयभावसामण्णे णिरुद्धे अणादियत्ताविरोहादो । ण च सादियपदस्स अभावो, विसेसे अप्पिदे तस्स वि उवलंभादो । ण च धुवत्ताभावो, सामण्णप्पणाए तदुवलंभादो । ण च अद्धुवत्तस्स अभावो, अणुभागविसेसप्पणाए विसिट्ठेगजीवप्पणाए च अद्धुवत्तदंसणादो । तदो पढमसुत्तं बारहभंगप्पयं त्ति दट्ठव्वं १२ ।

पुणो बिदियपुच्छासुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—उक्कस्सअणुभागवेयणा सिया अजहण्णा, जहण्णादो उवरिमसव्ववियप्पाणमजहण्णम्हि दंसणादो । सिया सादिया, अणुक्कस्साणुभागे ट्ठिदस्स उक्कस्साणुभागुप्पत्तीदो । उक्कस्सपदस्स अणादित्तं णत्थि, णाणाजीवप्पणाए वि उक्कस्सपदस्स अंतरदंसणादो । सिया अद्धुवा, उप्पण्णुक्कस्सपदस्स णियमेण विणासदंसणादो । उक्कस्सपदस्स धुवत्तं णत्थि, णाणाजीवप्पणाए वि उक्कस्सपदविणासदंसणादो । सिया जुम्मा, उक्कस्साणुभागफद्दयवग्गणाविभागपडिच्छेदेसु कदजुम्म-

यहाँ ज्ञानावरणीय सामान्यकी विवक्षा करनेपर ओज पद नहीं है, क्योंकि स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंमें कृतयुग्मता ही पायी जाती है ।

शङ्का—यहाँ अनादि पदकी सम्भावना कैसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि ज्ञानावरणीय भावसामान्यकी विवक्षा होनेपर उसके अनादि होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

सादि पदका भी यहाँ अभाव नहीं है, क्योंकि, विशेषकी विवक्षा करनेपर वह भी पाया जाता है । ध्रुव पदका भी अभाव नहीं है, क्योंकि, सामान्यकी मुख्यता होनेपर वह भी पाया जाता है । अध्रुव पदका भी अभाव नहीं है, क्योंकि, अनुभागविशेषकी अथवा विशिष्ट एक जीवकी विवक्षा करनेपर अध्रुवपना देखा जाता है । इस कारण प्रथम सूत्र बारह (१२) भङ्ग स्वरूप है, ऐसा समझना चाहिये ।

अब द्वितीय पृच्छासूत्रका अर्थ कहा जाता है । वह इस प्रकार है—उत्कृष्ट अनुभागवेदना कथञ्चित् अजघन्य है, क्योंकि, अजघन्य पदमें जघन्यसे आगेके सभी विकल्प देखे जाते हैं । कथञ्चित् सादि है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट अनुभागमें स्थित जीवके उत्कृष्ट अनुभाग उत्पन्न होता है । उत्कृष्ट पदके अनादिता नहीं है, क्योंकि, नाना जीवोंकी विवक्षा होनेपर भी उत्कृष्ट पदका अन्तर देखा जाता है । कथञ्चित् अध्रुव है, क्योंकि, उत्पन्न हुए उत्कृष्ट पदका नियमसे विनाश देखा जाता है । उत्कृष्ट पदके ध्रुवपना नहीं है, क्योंकि, नाना जीवोंकी विवक्षा होनेपर भी उत्कृष्ट पदका विनाश देखा जाता है । कथञ्चित् युग्म है, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभाग स्वरूप स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंमें कृतयुग्म संख्या ही पायी जाती है । कथञ्चित्

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

संखाए चेव उवलंभादो । सिया णोम-णोविसिट्ठा, एगवियप्पम्मि उक्कस्साणुभागे वड्ढि-हाणीणमभावादो । एवमुक्कस्सपदं पंचवियप्पं ५ ।

संपहि तदियपुच्छासुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—णाणावरणीयअणुक्कस्सवेयणा[1] सिया जहण्णा, उक्कस्सादो हेट्ठिमसव्ववियप्पेसु अणुक्कस्ससण्णिदेसु जहण्णस्स वि पवेस-दंसणादो । सिया अजहण्णा, जहण्णादो उवरिमवियप्पेसु अजहण्णसण्णिदेसु अणुक्कस्स-पदस्स वि पवेसदंसणादो । सिया सादिया, अणुक्कस्सपदविसेसं पडुच्च आदिभावदंस-णादो । सिया अणादिया, अणुक्कस्ससामण्णप्पणाए आदिभावाणुवलंभादो । सिया धुवा, अणुक्कस्ससामण्णे अप्पिदे विणासाणुवलंभादो । सिया अद्धुवा, अणुक्कस्सपदविसेसे अप्पिदे [2]सव्वअणुक्कस्सपदविसेसाणं विणासदंसणादो । सिया जुम्मा, सव्वअणुक्कस्स-विसेसगयअणुभागफद्दय-वग्गण-अविभागपडिच्छेदेसु कदजुम्मसंखाए उवलंभादो । सिया ओमा, कंदयघादेण अणुक्कस्सपदविसेसस्स हाणिदंसणादो । सिया विसिट्ठा, बंधेण अणु-भागवड्ढिदंसणादो । सिया णोम-णोविसिट्ठा, कत्थ वि अणुक्कस्सपदविसेसस्स वड्ढि-हाणीणमणुवलंभादो । एवमणुक्कस्सपदं दसवियप्पं होदि १० ।

संपहि चउत्थपुच्छासुत्तस्स परूवणा वुच्चदे । तं जहा—जहण्णणाणावरणीय-वेयणा सिया अणुक्कस्सा, उक्कस्सदो हेट्ठिमवियप्पम्मि अणुक्कस्ससण्णिदम्मि जहण्णस्स वि

नोम-नोविशिष्ट है, क्योंकि, एक विकल्प स्वरूप उत्कृष्ट अनुभागमें वृद्धि व हानिका अभाव है। इस प्रकार उत्कृष्टपद पाँच (५) विकल्प स्वरूप है।

अब तृतीय पृच्छासूत्रका अर्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—ज्ञानावरणीयकी अनुत्कृष्ट वेदना कथञ्चित् जघन्य है, क्योंकि, उत्कृष्टसे नीचेके अनुत्कृष्ट संज्ञावाले सब विकल्पोंमें जघन्य पदका भी प्रवेश देखा जाता है। कथञ्चित् अजघन्य है, क्योंकि, जघन्यसे ऊपरके अजघन्य संज्ञावाले समस्त विकल्पोंमें अनुत्कृष्ट पदका भी प्रवेश देखा जाता है। कथञ्चित् सादि है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट पदविशेषकी अपेक्षा उसके सादिता देखी जाती है। कथञ्चित् अनादि है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट सामान्यकी विवक्षा होनेपर सादिता नहीं पायी जाती है। कथञ्चित् ध्रुव है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट सामान्यकी विवक्षा होनेपर विनाश नहीं देखा जाता है। कथञ्चित् अध्रुव है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट पदविशेषकी विवक्षा होनेपर सब अनुत्कृष्ट पदविशेषोंका विनाश देखा जाता है। कथञ्चित् युग्म है, क्योंकि, सब अनुत्कृष्ट विशेषोंमें रहनेवाले अनुभागस्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंमें कृतयुग्म संख्या पायी जाती है। कथञ्चित् ओम है, क्योंकि, काण्डकघातसे अनुत्कृष्ट पदविशेषकी हानि देखी जाती है। कथञ्चित् विशिष्ट है, क्योंकि, बन्धसे अनुभागकी वृद्धि देखी जाती है। कथञ्चित् नोम-नोविशिष्ट है, क्योंकि, कहींपर अनुत्कृष्ट पदविशेषकी वृद्धि व हानि नहीं पायी जाती है। इस प्रकार अनुत्कृष्ट पद दस (१०) भेद रूप है।

अब चतुर्थ पृच्छासूत्रकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—जघन्य ज्ञानावरणीयवेदना कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है, क्योंकि, उत्कृष्टसे नीचेके अनुत्कृष्ट संज्ञावाले विकल्पमें जघन्य पदकी भी

१ अप्रतौ 'वीयणा' इति पाठः। २. ताप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः 'सव्वमणुक्कस्स' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संभवादो। सिया सादिया, अणुक्कस्सपदादो जहण्णपदस्स उप्पत्तिदंसणादो। अणादियभावो णत्थि, सव्वकालं जहण्णपदेणेव अवट्ठिदजीवाणुवलंभादो। सिया अद्धुवा, अजहण्णपदादो जहण्णपदुप्पत्तीदो। जहण्णस्स धुवभावो णत्थि, जहण्णपदे चेव सव्वकालमवट्ठिदजीवाणुवलंभादो। सिया जुम्मा, जहण्णाणुभागफद्दयवग्गणाविभागपडिच्छेदाणं कदजुम्मसंखाणमुवलंभादो। ओजपदं णत्थि। सिया णोम णोविसिट्ठा, वड्ढिदे हाइदे च जहण्णत्ताभावादो। एवं जहण्णपदं पंचवियप्पं ५।

संपहि पंचमसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा--णाणावरणीयस्स अजहण्णवेयणा सिया उक्कस्सा, सिया अणुक्कस्सा; एदेसिं दोण्हं पदाणं तत्थुवलंभादो। सिया सादिया, अजहण्णपदविसेसं पडुच्च सादियत्तदंसणादो। सिया अणादिया, अजहण्णपदसामण्णं पडुच्च आदीए अभावादो। सिया धुवा, अजहण्णपदसामण्णस्स तिसु वि कालेसु विणासाभावादो। सिया अद्धुवा, अजहण्णपदविसेसं पडुच्च विणासदंसणादो। सिया जुम्मा, अजहण्णाणुभागफद्दयवग्गणाविभागपडिच्छेदेसु कदजुम्मसंखाए चेव उवलंभादो। सिया

सम्भावना है। कथञ्चित् सादि है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट पदसे जघन्य पदकी उत्पत्ति देखी जाती है। अनादिता नहीं है, क्योंकि, सदा केवल जघन्य पदके साथ रहनेवाले जीव नहीं पाये जाते। कथञ्चित् अध्रुव है, क्योंकि, अजघन्य पदसे जघन्य पद उत्पन्न होता है। जघन्य पदके ध्रुवता नहीं है, क्योंकि, जघन्य पदमें ही सदा जीवोंका अवस्थान नहीं पाया जाता। कथञ्चित् युग्म है, क्योंकि, जघन्य अनुभाग सम्बन्धी स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंकी कृतयुग्म संख्याएं पायी जाती हैं। ओजपद नहीं है। कथञ्चित् नोमनोविशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धि व हानिके होनेपर जघन्यपना नहीं रह सकता। इस प्रकार जघन्य पद पाँच (५) भेद स्वरूप है।

अब पाँचवें सूत्रका अर्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—ज्ञानावरणीयकी अजघन्य वेदना कथञ्चित् उत्कृष्ट है और कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है, क्योंकि, उसमें ये दोनों पद पाये जाते हैं। कथञ्चित् सादि है, क्योंकि, अजघन्य पदविशेषकी अपेक्षा सादिता देखी जाती है। कथञ्चित् अनादि है, क्योंकि, अजघन्य पद सामान्यकी अपेक्षा आदिका अभाव है। कथञ्चित् ध्रुव है, क्योंकि, अजघन्य पद सामान्यका तीनों ही कालोंमें विनाश नहीं होता। कथञ्चित् अध्रुव है, क्योंकि, अजघन्य पदविशेषकी अपेक्षा उसका विनाश देखा जाता है। कथञ्चित् युग्म है, क्योंकि, अजघन्य अनुभागके स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंकी कृतयुग्म संख्या ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओमा, हाइदे वि अजहण्णत्तदंसणादो। सिया विसिट्ठा, वड्ढिदे वि तदुवलंभादो। सिया णोम-णोविसिट्ठा, वड्ढि-हाणीहि विणा अवट्ठिदअजहण्णाणुभागदंसणादो। एवमजहण्णपदं दसवियप्पं होदि १०।

संपहि छट्ठमपुच्छासुत्तं[1] पडुच्च अत्थपरूवणा कीरदे। तं जहा--णाणावरणीयस्स सादियवेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा। सिया अणादिया, णाणाजीवावेक्खाए सादित्तणेण वि आदिभावाणुवलंभादो। सिया धुवा, णाणाजीवे पडुच्च सव्वकालेसु सादित्तदंसणादो। सिया अद्धुवा, सादिभावमावण्णाणुभागस्स विणासदंसणादो। सिया जुम्मा, अणुभागम्मि फद्दय-वग्गणाविभागपडिच्छेदेसु तिसु वि कालेसु कदजुम्मभावस्सेव दंसणादो। सिया ओमा, हाइदे वि सादित्तदंसणादो। सिया विसिट्ठा, वड्ढिदे वि तदुवलंभादो। सिया णोमणोविसिट्ठा, वड्ढि-हाणीहि विणा वि तदवट्ठाणदंसणादो। एवं सादियपदमेक्कारसवियप्पं होदि ११।

संपहि सत्तमपुच्छासुत्तं पडुच्च परूवणा कीरदे। तं जहा—अणादियणाणावरणीयवेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा। सिया सादिया, णाणावरणीयअणुभागविसेसं पडुच्च सादित्तदंसणादो। सिया धुवा, अणुभाग-

पायी जाती है। कथञ्चित् ओम है, क्योंकि, हानिके होनेपर भी अजघन्यता देखी जाती है। कथञ्चित् विशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धिके होनेपर भी अजघन्यता देखी जाती है। कथञ्चित् नोम-नोविशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धि व हानिके विना अजघन्य अनुभागका अवस्थान देखा जाता है। इस प्रकार अजघन्य पद दस (१०) भेद स्वरूप है।

अब छठे पृच्छासूत्रका आश्रय करके अर्थप्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है— ज्ञानावरणीयकी सादि वेदना कथञ्चित् उत्कृष्ट है, कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है, कथञ्चित् जघन्य है व कथञ्चित् अजघन्य है। कथञ्चित् अनादि है, क्योंकि; नाना जीवोंकी अपेक्षा सादि स्वरूपसे भी आदिभाव नहीं पाया जाता। कथञ्चित् ध्रुव है, क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा करके सब कालमें उसकी सादिता देखी जाती है। कथञ्चित् अध्रुव है, क्योंकि, सादिताको प्राप्त अनुभागका विनाश देखा जाता है। कथञ्चित् युग्म है, क्योंकि, तीनों ही कालोंमें अनुभागके स्पर्धकों, वर्गणाओं और अविभागप्रतिच्छेदोंमें कृतयुग्मता ही देखी जाती है। कथञ्चित् ओम है, क्योंकि, हानिके होनेपर भी सादिता पायी जाती है। कथञ्चित् विशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धिके होनेपर भी सादिता पायी जाती है। कथञ्चित् वह नोम-नोविशिष्ट है, क्योंकि, वृद्धि व हानिके विना भी उसका अवस्थान देखा जाता है। इस प्रकार सादिपद ग्यारह (११) भेद रूप है।

अब सातवें पृच्छासूत्रकी अपेक्षा करके प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है— अनादि ज्ञानावरणवेदना कथञ्चित् उत्कृष्ट है, कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है, कथञ्चित् जघन्य है व कथंचित् अजघन्य है। कथञ्चित् सादि है, क्योंकि, ज्ञानावरणीयके अनुभागविशेषका आश्रय करके सादिता देखी

१. अप्रतौ 'छट्ठसुपुच्छासुत्त', ताप्रतौ 'छट्ठ [सु] पुच्छासुत्तं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामण्णस्स विणासाभावादो । सिया अद्धुवा, तव्विसेसं पडुच्च विणासदंसणादो । सिया जुम्मा सिया ओमा सिया विसिट्ठा सिया णोम-णोविसिट्ठा । एवमणादियपदमेक्कारस-वियप्पं होदि ११ ।

संपहि अट्ठमपुच्छासुत्तं पडुच्च अत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा—धुवणाणावरणीय-भाववेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया सिया अद्धुवा सिया जुम्मा सिया ओमा सिया विसिट्ठा सिया णोम-णोविसिट्ठा । एवं धुवपदमेक्कारसविहं होदि ११ ।

संपहि णवमपुच्छासुत्तं पडुच्च अत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा—अद्धुवणाणावर-णीयवेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया, णाणाजीवेसु अणादियसरूवेण अद्धुवत्तादंसणादो । सिया धुवा, विसेसाभावेण अद्धुवस्स अणुभागस्स सामण्णभावेण धुवत्तादंसणादो । सिया जुम्मा सिया ओमा सिया विसिट्ठा सिया णोम-णोविसिट्ठा । एवमद्धुवपदमेक्कारसवि-यप्पं होदि ११ ।

दसमपुच्छासुत्तं पडुच्च अत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा—जुम्मणाणावरणीयभाव-वेयणा सिया उक्कस्सा [सिया अणुक्कस्सा] सिया जहण्णा सिया अजहण्णा सिया

जाती है । कथञ्चित् ध्रुव है, क्योंकि, अनुभागसामान्यका कभी विनाश नहीं होता। कथञ्चित् अध्रुव है, क्योंकि, अनुभागविशेषकी अपेक्षा उसका विनाश देखा जाता है। कथञ्चित् युग्म है, कथञ्चित् ओम है, कथञ्चित् विशिष्ट है व कथञ्चित् नोम-नोविशिष्ट है। इस प्रकार अनादि पद ग्यारह (११) भेद रूप है ।

अब आठवें पृच्छासूत्रका आश्रय करके अर्थप्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है– ध्रुव-ज्ञानावरणीयभाववेदना कथञ्चित् उत्कृष्ट है, कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है, कथञ्चित् जघन्य है, कथञ्चित् अजघन्य है कथञ्चित् सादि है, कथञ्चित् अनादि है, कथञ्चित् अध्रुव है, कथञ्चित् युग्म है, कथञ्चित् ओम है, कथञ्चित् विशिष्ट है व कथञ्चित् नोम-नोविशिष्ट है। इस प्रकार ध्रुव पद ग्यारह (११) प्रकारका है ।

अब नौवें पृच्छासूत्रका आश्रय कर अर्थप्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—अध्रुव ज्ञानावरणीयवेदना कथञ्चित् उत्कृष्ट है, कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है, कथञ्चित् जघन्य है, कथञ्चित् अज-घन्य है व कथञ्चित् सादि है । कथञ्चित् अनादि है, क्योंकि, नाना जीवोंमें अनादि स्वरूपसे अध्रुवता पायी जाती है। कथञ्चित् ध्रुव है, क्योंकि, विशेषकी विवक्षा न होनेसे अध्रुव अनुभागकी सामान्य रूपसे ध्रुवता देखी जाती है । कथञ्चित् युग्म है, कथञ्चित् ओम है, कथञ्चित् विशिष्ट है और कथञ्चित् नोम-नोविशिष्ट है । इस प्रकार अध्रुव पद ग्यारह (११) विकल्प रूप है ।

दसवें पृच्छासूत्रका आश्रय कर अर्थप्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—युग्म ज्ञानाव-रणीयभाववेदना कथञ्चित् उत्कृष्ट है, [कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है,] कथञ्चित् जघन्य है, कथञ्चित्

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सादिया सिया अणादिया सिया धुवा सिया अद्धुवा सिया ओमा सिया विसिट्ठा सिया णोम-णोविसिट्ठा । एवं जुम्मपदं एक्कारसवियप्पं होदि ११ ।

संपहि एक्कारसमपुच्छासुत्तस्स अत्थो णत्थि, अणुभागे ओजसंखाभावादो ।

संपहि बारसमसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—ओमणाणावरणीयभाववेयणा सिया अणुक्कस्सा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया सिया धुवा सिया अद्धुवा सिया जुम्मा । एवमोमपदं सत्तवियप्पं होदि ७ ।

संपहि तेरसमपुच्छासुत्तत्थं भणिस्सामो । तं जहा—विसिट्ठणाणावरणीयभाववेयणा सिया अणुक्कस्सा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया सिया धुवा सिया अद्धुवा सिया जुम्मा । एवं विसिट्ठपदं सत्तवियप्पं होदि ७ ।

संपहि चोद्दसमपुच्छासुत्तत्थं भणिस्सामो । तं जहा—णोम-णोविसिट्ठा णाणावरणीयभाववेयणा सिया उक्कस्सा सिया अणुक्कस्सा सिया जहण्णा सिया अजहण्णा सिया सादिया सिया अणादिया सिया धुवा सिया अद्धुवा सिया जुम्मा । एवं णोम-णोविसिट्ठपदं णववियप्पं होदि ९ । सव्वसुत्तभंगंकसंदिट्ठी—१२।५।१०।५।१०।११।११। ११।११।११।[०।]७।७।९।

अजघन्य है, कथञ्चित् सादि है, कथञ्चित् अनादि है, कथञ्चित् ध्रुव है, कथञ्चित् अध्रुव है, कथञ्चित् ओम है, कथञ्चित् विशिष्ट है और कथञ्चित् नोम-नोविशिष्ट है। इस प्रकार युग्म पद ग्यारह (११) विकल्प रूप है।

ग्यारहवें पृच्छासूत्रका अर्थ नहीं है, क्योंकि, अनुभागमें ओज संख्या सम्भव नहीं है।

बारहवें पृच्छासूत्रका अर्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—ओम ज्ञानावरणीय भाववेदना कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है, कथञ्चित् अजघन्य है, कथञ्चित् सादि है, कथञ्चित् अनादि है, कथंचित् ध्रुव है, कथञ्चित् अध्रुव है और कथञ्चित् युग्म है। इस प्रकार ओम पद सात (७) विकल्प रूप है।

अब तेरहवें पृच्छासूत्रका अर्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—विशिष्ट ज्ञानावरणीय भाव-वेदना कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है, कथञ्चित् अजघन्य है, कथंचित् सादि है, कथञ्चित् अनादि है, कथञ्चित् ध्रुव है, 'कथञ्चित् अध्रुव है और कथञ्चित् युग्म है। इस प्रकार विशिष्ट पद सात (७) विकल्प रूप है।

अब चौदहवें पृच्छासूत्रका अर्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—नोम-नोविशिष्ट ज्ञानावरणीय भाववेदना कथञ्चित् उत्कृष्ट है, कथञ्चित् अनुत्कृष्ट है, कथञ्चित् जघन्य है, कथञ्चित् अजघन्य है, कथञ्चित् सादि है, कथञ्चित् अनादि है, कथञ्चित् ध्रुव है, कथञ्चित् अध्रुव है और कथञ्चित् युग्म है। इस प्रकार नोम-नोविशिष्ट पद नौ (९) विकल्प रूप है। सब सूत्रोंके भङ्गोंके अंकोंकी संदृष्टि—१२ + ५ + १० ५ + १० + ११ + ११ + ११ + ११ + ११ [+ ०] + ७ + ७ + ९ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बारस पण दस पण दस पंचेक्कारस य सत्त सत्त णवं ।
दुविहणयगहणलीणा पुच्छासुत्तंकसंदिट्ठी ॥ १ ॥

बारह, पाँच, दस, पाँच, दस, पाँच स्थानोंमें ग्यारह, सात, सात और नौ, इस प्रकार दोनों नयोंकी अपेक्षा यह पृच्छासूत्रोंके अंकोंकी संदृष्टि है ॥ १ ॥

विशेषार्थ—वेदना भावविधानका यहाँ मुख्यतया तीन अधिकारोंके द्वारा कथन किया गया है। वे तीन अनुयोगद्वार ये हैं—पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। उत्कृष्ट आदि पदोंके द्वारा वेदनाभाव विधानके विचारका नाम पदमीमांसा है। यहाँ सूत्रमें उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य इन चार पदोंका ही निर्देश किया है किन्तु वीरसेन स्वामीने इनसे सूचित होनेवाले नौ पद और गिनाए हैं। ये कुल तेरह पद हैं। उसमें भी इनमेंसे एक-एक पदके आश्रयसे शेष पदोंका विचार करने पर कुल १६९ पद होते हैं। यहाँ ज्ञानावरणीय भाववेदनाका विचार प्रस्तुत है। इस अपेक्षासे कुल संयोगी पद कितने होते हैं इसका कोष्ठक आगे देते हैं—

	उत्कृ.	अनु.	जघ.	अज.	सादि.	अना.	ध्रुव	अध्रु.	ओज.	युग्म.	ओम	विशि.	नोम.
उत्कृ.		×	×	,,	,,	×	×	,,	×	,,	×	×	,,
अनु.	×		,,	,,	,,	,,	,,	,,	×	,,	,,	,,	,,
जघ.	×	,,		×	,,	×	×	,,	×	,,	×	×	,,
अज.	,,	,,	×		,,	,,	,,	,,	×	,,	,,	,,	,,
सादि.	,,	,,	,,	,,		,,	,,	,,	×	,,	,,	,,	,,
अना.	,,	,,	,,	,,	,,		,,	,,	×	,,	,,	,,	,,
ध्रुव	,,	,,	,,	,,	,,	,,		,,	×	,,	,,	,,	,,
अध्रु.	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,		×	,,	,,	,,	,,
ओज.	×	×	×	×	×	×	×	×	×	×	×	×	×
युग्म,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	×		,,	,,	,,
ओम	×	,,	×	,,	,,	,,	,,	,,	×	,,		×	×
विशि.	×	,,	×	,,	,,	,,	,,	,,	×	,,	×		×
नोम.	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	×	,,	×	×	

यहाँ ओज पद क्यों सम्भव नहीं है इस बातका विचार टीकामें किया ही है तथा शेष पद प्रत्येक और संयोगी कैसे घटित होते हैं यह बात भी टीकामें विस्तारसे बतलाई है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ५ ॥

जहा णाणावरणीयस्स परूविदं तहा सत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं । एवं पदमीमांसा त्ति अणियोगद्दारं सगंतोक्खित्तओजाहियारं समत्तं ।

सामित्तं दुविहं जहण्णपदे उक्कस्सपदे ॥ ६ ॥

एत्थ 'पद'सद्दो ट्ठाणट्ठे दट्ठव्वो । जहण्णपदे एगं सामित्तं विदियं उक्कस्सपदे एवं सामित्तं दुविहं । अजहण्ण-अणुक्कस्सपदसामित्तेहि सह चउव्विहं किण्ण भण्णदे ? ण, एत्थेव तेसिमंतब्भावादो । तं जहा—उक्कस्सं दुविहं, ओघुक्कस्समादेसुक्कस्सं चेदि । तत्थ संगहिदासेसवियप्पमोघुक्कस्सं । अप्पिदवियप्पादो अहियमादेसुक्कस्सं । [अणुक्कस्सं] आदेसुक्कस्समिदि एयट्ठो । तेण 'उक्कस्सं' इदि उत्ते एदेसिं दोण्णमुक्कस्साणं गहणं । जहण्णं पि दुविहं, ओघजहण्णमादेसजहण्णमिदि । जत्तो हेट्ठा अण्णो वियप्पो णत्थि तमोघजहण्णं । अप्पिदादो एगवियप्पादिणा परिहीणमादेसजहण्णं । तत्थ 'जहण्णपदं' इदि वुत्ते एदेसिं दोण्णं पि जहण्णाणं गहणं कायव्वं । तेण सामित्तं दुविहं चेव ण चउव्विहं । जत्थ जत्थ दुविहं सामित्तमिदि भणिदं भणिहिदि तत्थ तत्थ एवं चेव दुविहभावसमत्थणा कायव्वा ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें पदप्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ५ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके पदोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके पदोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये । इस प्रकार ओज अधिकारगर्भित पदमीमांसा नामक अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य पद विषयक और उत्कृष्ट पद विषयक ॥ ६ ॥

यहाँ पर पद शब्दका अर्थ स्थान समझना चाहिये । एक स्वामित्व जघन्य पदमें होता है और दूसरा स्वामित्व उत्कृष्ट पदमें होता है इस तरह स्वामित्व दो प्रकारका होता है ।

शंका—अजघन्य और अनुत्कृष्ट पद विषयक स्वामित्वके साथ स्वामित्व चार प्रकारका क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, इन्हीं दोनोंमें उनका अन्तर्भाव हो जाता है । यथा—उत्कृष्ट स्वामित्व दो प्रकारका है—ओघ उत्कृष्ट और आदेश उत्कृष्ट । उनमेंसे समस्त विकल्पोंका संग्रह करनेवाला ओघ उत्कृष्ट स्वामित्व है और विवक्षित विकल्पसे अधिक आदेश उत्कृष्ट स्वामित्व है । अनुत्कृष्ट और आदेश उत्कृष्ट इन दोनोंका एक ही अर्थ है, इसी कारण 'उत्कृष्ट' ऐसा कहनेपर इन दोनों उत्कृष्टोंका ग्रहण हो जाता है । जघन्य भी दो प्रकारका है—ओघ 'जघन्य और आदेश' जघन्य । जिसके नीचे और कोई दूसरा विकल्प नहीं रहता वह ओघ जघन्य स्वामित्व है तथा विवक्षित विकल्पसे एक विकल्प आदिसे हीन आदेश जघन्य स्वामित्व है । उनमेंसे 'जघन्यपद' ऐसा कहनेपर इन दोनों ही जघन्योंका ग्रहण करना चाहिये । इसलिए स्वामित्व दो प्रकारका ही है, चार प्रकारका नहीं इसलिए जहाँ-जहाँ स्वामित्व दो प्रकारका कहा गया है या कहा जावेगा वहाँ-वहाँ इसी प्रकार दो भेदोंका समर्थन करना चाहिये ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामित्तेण उक्कस्सपदे णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स ? ॥ ६ ॥

'सामित्तेण' इत्ति कधमेत्थ तइया ? ण एस दोसो; लक्खणे वि तइयाविहत्तिविहाणादो। 'उक्कस्सपद'णिद्देसेण जहण्णपदपडिसेहो कदो। सेसकम्मपडिसेहट्ठं 'णाणावरणीय'णिद्देसो कदो। दव्वादिपडिसेहफलो 'भाव'णिद्देसो। 'कस्स' इत्ति वुत्ते किं णेरइयस्स तिरिक्खस्स मणुस्सस्स देवस्स एइंदियस्स बीइंदियस्स तीइंदियस्स चउरिंदियस्स वा त्ति पुच्छा कदा होदि आसंका वा।

अण्णदरेण पंचिंदिएण सण्णिमिच्छाइट्ठिणा सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तगदेण सागारुवजोगेण जागारेण णियमा[1] उक्कस्ससंकिलिट्ठेण बंधल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि ॥ ७ ॥

एदं सुत्तमुक्कस्साणुभागं बंधंतयस्स लक्खणं परूवेदि। विगलिंदिया उक्कस्साणुभागं ण बंधंति पंचिंदिया चेव बंधंति त्ति जाणावणट्ठं 'पंचिंदिएण' इत्ति भणिदं। वेदोगाहणा-गदिविसेसाभावपदुप्पायणट्ठं[2] 'अण्णदरेण' इत्ति भणिदं। असण्णिपडिसेहट्ठं

स्वामित्वकी अपेक्षा उत्कृष्ट पदमें भावसे ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट वेदना किसके होती है ? ॥ ६ ॥

शंका—'सामित्तेण' इस प्रकार यहाँ तृतीया विभक्ति कैसे सम्भव है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, लक्षणमें भी तृतीया विभक्तिका विधान किया जाता है।

सूत्रमें उत्कृष्ट पदके निर्देश द्वारा जघन्य पदका प्रतिषेध किया है। शेष कर्मोंका प्रतिषेध करनेके लिये ज्ञानावरणीय पदका निर्देश किया है। भाव पदके निर्देशका फल द्रव्यादिका प्रतिषेध करना है। 'किसके होती है' ऐसा कहनेपर 'क्या नारकीके, तिर्यंचके, मनुष्यके, देवके, एकेन्द्रियके, द्वीन्द्रियके, त्रीन्द्रियके अथवा चतुरिन्द्रियके होती है' ऐसी पृच्छा अथवा आशंका प्रगट की गई है।

अन्यतर पंचेन्द्रिय, संज्ञी, मिथ्यादृष्टि, सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त अवस्थाको प्राप्त, साकार उपयोग युक्त, जागृत और नियमसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त जिस जीवके द्वारा बन्ध होता है और जिस जीवके इसका सत्त्व होता है ॥ ७ ॥

यह सूत्र उत्कृष्ट अनुभागको बांधनेवाले जीवका लक्षण बतलाता है। विकलेन्द्रिय उत्कृष्ट अनुभागको नहीं बांधते हैं, किन्तु पचेन्द्रिय ही बांधते हैं; इस बातके ज्ञापनार्थ सूत्रमें पंचेन्द्रिय पदका निर्देश किया है। वेद, अवगाहना एवं गति आदिकी विशेषताका अभाव बतलानेके लिये

---

१ अप्रतौ 'सागार आगार णियमा' इति पाठः। २ अप्रतौ 'विसेसाभव' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'सण्णि' णिद्देसो कदो। सासणादिपडिसेहफलं मिच्छाइट्ठि' णिद्देसो। अपज्जत्तद्धाए उक्कस्साणुभागबंधो णत्थि, पज्जत्तद्धाए चेव बज्झदि त्ति जाणावणट्ठं 'सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण' इत्ति भणिदं। दंसणोवजोगकाले उक्कस्साणुभागबंधो णत्थि णाणोवजोगकाले चेव होदि त्ति जाणावणट्ठं 'सागार' णिद्देसो कदो। सुत्तावत्थाए उक्कस्साणुभागबंधो णत्थि जाग्गंतस्सेव अत्थि त्ति जाणावणट्ठं 'जागार' णिद्देसो कदो। मंद-मंदतर-मंदतम-तिव्व-तिव्वतर-तिव्वतमभेदेण छसु संकिलेसट्ठाणेसु छट्ठसंकिलेसट्ठाणे सो उक्कस्साणुभागो बज्झदि त्ति जाणावणट्ठं 'उक्कस्ससंकिलिट्ठेण' इत्ति भणिदं। ण च सो एयवियप्पो, आदेसुक्कस्स-ओघुक्कस्साणं दोण्णं पि गहणादो। 'णियमा' सद्दो जेण मज्झदीवओ तेण णियमा पंचिंदियेण णियमा सण्णिमिच्छाइट्ठिणा णियमा सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण णियमा सागारुवजोगेण णियमा जागारेण णियमा उक्कस्ससंकिलिट्ठेण इत्ति वत्तव्वं। एवंविहेण जीवेण बद्धल्लयमुक्कस्साणुभागं जस्स तं संतकम्ममत्थि तस्से त्ति वुत्तं होदि।

तं संतकम्ममेदस्स होदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमागदं—

तं एइंदियस्स वा बीइंदियस्स वा तीइंदियस्स वा चउरिंदियस्स वा पंचिंदियस्स वा सण्णिस्स वा असण्णिस्स वा बादरस्स वा सुहुमस्स

'अन्यतर' पद दिया है। असंज्ञीका प्रतिषेध करनेके लिये 'संज्ञी' पदका निर्देश किया है। सासादन आदिका प्रतिषेध करनेके लिए 'मिथ्यादृष्टि' पदका ग्रहण किया है। अपर्याप्त कालमें उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, किन्तु पर्याप्त कालमें ही उसका बन्ध होता है; इस बातके ज्ञापनार्थ 'सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त अवस्थाको प्राप्त' ऐसा कहा है। दर्शनोपयोगके कालमें उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, किन्तु ज्ञानोपयोगके कालमें ही होता है; यह बतलानेके लिये 'साकार' पदका निर्देश किया है। सुप्त अवस्थामें उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, किन्तु जागृत अवस्थामें ही होता है; यह बतलानेके लिये 'जागार' पदका निर्देश किया है। मन्द, मन्दतर, मन्दतम, तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतमके भेदसे छह संक्लेशस्थानोंमेंसे छठे संक्लेशस्थानमें वह उत्कृष्ट अनुभाग बँधता है; यह बतलानेके लिये 'उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त' ऐसा कहा गया है। वह एक प्रकारका नहीं है, क्योंकि यहाँ आदेश उत्कृष्ट और ओघ उत्कृष्ट इन दोनोंका ही ग्रहण है। सूत्रमें आया हुआ 'णियमा' पद चूंकि मध्य दीपक है अतः "नियमसे पंचेन्द्रिय, नियमसे संज्ञी एवं मिथ्यादृष्टि, नियमसे सब पर्याप्तियोंद्वारा पर्याप्त अवस्थाको प्राप्त, नियमसे साकार उपयोगसे संयुक्त, नियमसे जागृत, तथा नियमसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त" ऐसा कहना चाहिये। उपर्युक्त विशेषणोंसे संयुक्त जीवके द्वारा बाँधे गये उत्कृष्ट अनुभागका सत्त्व जिस जीवके होता है उसके ज्ञानावरणीयवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है यह उक्त कथनका अभिप्राय है।

उसका सत्त्व इसके होता है, यह बतलानेके लिये आगेका सूत्र आया है—

उसका सत्त्व एकेन्द्रिय, अथवा द्वीन्द्रिय, अथवा त्रीन्द्रिय, अथवा चतुरिन्द्रिय, अथवा पञ्चेन्द्रिय, अथवा संज्ञी, अथवा असंज्ञी, अथवा बादर, अथवा सूक्ष्म, अथवा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा पज्जत्तस्स वा अपज्जत्तस्स वा अण्णदरस्स जीवस्स अण्णदवियाए गदीए वट्टमाणयस्स तस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा ॥ ८ ॥

तं संतकम्मं होदूण एइंदियादिएसु अपज्जत्तवसाणेसु लब्भदि। कधमण्णत्थ बद्धस्स उक्कस्साणुभागस्स अण्णत्थ संभवो? ण एस दोसो; उक्कस्साणुभागं बंधिदूण तस्स कंडयघादमकाऊण अंतोमुहुत्तेण कालेण एइंदियादिसु उप्पण्णाणं जीवाणं उक्कस्साणुभाग-संतोवलंभादो। एवमेदेसु अवत्थाविसेसेसु वट्टमाणस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा होदि त्ति घेत्तव्वं। एत्थ उवसंहारो किमिदि ण वुच्चदे? ण एस दोसो; ठाण-फद्दय-वग्गणाविभागपडिच्छेदेसु अणिवुणस्स अंतेवासिस्स उवसंधारे[1] भण्णमाणे वामोहो मा होहिदि[2] त्ति कट्टु तप्परूवणाए अकरणादो।

तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा ॥ ९ ॥

तत्तो उक्कस्साणुभागादो[3] वदिरित्तं तव्वदिरित्तं, सा अणुक्कस्सा भाववेयणा। एत्थ अणुक्कस्सट्ठाणाणं पुध पुध परूवणा किण्ण कीरदे? ण, उवरिमअणुभागचूलियाए अणु-

---

पर्याप्त, अथवा अपर्याप्त अन्यतर जीवके अन्यतम गतिमें विद्यमान होनेपर होता है; अतएव उक्त जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है ॥ ८ ॥

वह सत्कर्म सूत्रमें कही गई एकेन्द्रियसे लेकर अपर्याप्त अवस्थातक सब अवस्थाविशेषोंमें पाया जाता है।

शङ्का—अन्यत्र बांधे गये उत्कृष्ट अनुभागकी दूसरी जगह सम्भावना कैसे हो सकती है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभागको बाँधकर उसका काण्डक-घात किये बिना अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर एकेन्द्रियादिकोंमें उत्पन्न हुए जीवोंके उत्कृष्ट अनुभागका सत्त्व पाया जाता है। इसप्रकार इन अवस्थाविशेषोंमें वर्तमान जीवके ज्ञानावरणीयवेदना भावसे उत्कृष्ट होती है, ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

शङ्का—यहाँ उपसंहारका कथन क्यों नहीं करते?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जो शिष्य स्थान, स्पर्धक, वर्गणा और अविभागप्रतिच्छेदके विषयमें निपुण नहीं है उसे उपसंहारका कथन करनेपर व्यामोह न हो; इस कारण यहाँ उपसंहारका कथन नहीं किया है।

उससे भिन्न अनुत्कृष्ट भाव वेदना होती है ॥ ९ ॥

उससे अर्थात् उत्कृष्ट अनुभागसे भिन्न जो वेदना है वह तद्व्यतिरिक्त कहलाती है और वह अनुत्कृष्ट भाववेदना है।

शङ्का—यहाँ अनुत्कृष्ट स्थानोंकी पृथक् पृथक् प्ररूपणा क्यों नहीं करते?

समाधान—नहीं, क्योंकि, आगे अनुभागचूलिकामें अनुभागस्थानोंका कथन करेंगे ही फिर

---

१ अप्रतौ 'उवसंवादे' इति पाठः। २ प्रतिषु 'होहदि' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'भागोदो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भागट्ठाणपरूवणं भणिहिदि एत्थ वि तप्परूवणे कीरमाणे पुणरुत्तदोसो होदि त्ति तद-करणादो।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ १० ॥

जहा णाणावरणीयअणुभागस्स उक्कस्साणुक्कस्सपरूवणा कदा तहा सेसाणं तिण्णं घादिकम्माणमुक्कस्साणुक्कस्सअणुभागपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो।

सामित्तेण उक्कस्सपदे वेयणीयवेयणा [1]भावदो उक्कस्सिया कस्स ? ॥ ११ ॥

सुगममेदं।

अण्णदरेण खवगेण सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेण चरिमसमयबद्ध-ल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि ॥ १२ ॥

वेदोगाहणादिविसेसाभावपदुप्पायणट्ठं 'अण्णदरेण' इत्ति भणिदं। अक्खवगपडिसेहट्ठं 'खवगेण' इत्ति णिद्दिट्ठं। 'सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेण' इत्ति णिद्देसो सेसखवगपडिसेह-फलो। दुचरिमादिसमएसु बद्धाणुभागपडिसेहट्ठं 'चरिमसमयबद्धल्लयं' ति भणिदं। एदेण सुत्तेण चरिमसमयसुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदो उक्कस्साणुभागसामी होदि त्ति जाणाविदं।

भी यहाँ उनका कथन करनेपर चूँकि पुनरुक्त दोष होता है, अतः उनका कथन नहीं किया है।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायके विषयमें प्ररूपण करनी चाहिये ॥ १० ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्मके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागके स्वामीकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष तीन घातियाँ कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि इससे उसमें कोई विशेषता नहीं है।

स्वामित्वसे उत्कृष्ट पदमें वेदनीयवेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट किसके होती है ? ॥ ११ ॥

यह सूत्र सुगम है।

अन्यतर क्षपक सूक्ष्मसाम्परायिक शुद्धिसंयत जिस जीवके द्वारा अन्तिम समयमें बन्ध होता है और जिस जीवके इसका सत्त्व होता है ॥ १२ ॥

वेद व अवगाहना आदिकी कोई विशेषता विवक्षित नहीं है यह बतलानेके लिये सूत्रमें 'अन्यतर' पद कहा है। अक्षपकका प्रतिषेध करनेके लिये 'क्षपक' पदका निर्देश किया है। 'सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयत' के निर्देशका प्रयोजन शेष क्षपकोंका प्रतिषेध करना है। द्विचरम आदिक समयोंमें बांधे गये अनुभागका प्रतिषेध करनेके लिये 'चरिम समयमें बाँधा गया' ऐसा कहा है। इस सूत्रके द्वारा अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयत उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी होता है, यह

१ प्रतिषु 'भावादो' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

ण केवलमेसो चेव उक्कस्साणुभागसामी होदि, किंतु जस्स तं संतकम्ममत्थि सो वि सामी होदि ।

तं संतकम्मं कस्स होदि त्ति वुत्ते एदेसु होदि त्ति जाणावणट्ठं उत्तरसुत्तं भणदि–

तं खीणकसायवीदरागछदुमत्थस्स वा सजोगिकेवलिस्स वा तस्स वेयणा भावदो उक्कस्सा ॥ १४ ॥

सादावेदणीयउक्कस्साणुभागं बंधिय खीणकसाय-सजोगि-अजोगिगुणट्ठाणाणि उवगयस्स वेयणीयउक्कस्साणुभागो एदेसु गुणट्ठाणेसु लब्भदि । सुत्तम्हि अजोगिणिद्देसेण विणा कधमजोगिम्हि उक्कस्साणुभागो होदि त्ति लब्भदे ? ण विदिय'वा'सद्देण तदुवलद्धी, 'पंचिंदियस्स वा' इच्चेवमाईसु ट्ठिद 'वा'सद्दो व्व वुत्तसमुच्चए तस्स पवुत्तीदो त्ति ?' होदु[1] तत्थतण'वा'सद्दाणं समुच्चए पवुत्ती, तत्थ अण्णत्थाभावादो । एत्थतणो पुण विदिय'वा' सद्दो अवुत्तसमुच्चए वट्टदे, पढम'वा'सद्देणेव वुत्तसमुच्चयत्थसिद्धीदो । तदो विदिय'वा'सद्दो अजोगिग्गहणणिमित्तो त्ति घेत्तव्वो । अथवा, होदु णाम बिदिय'वा'सद्दो वि वुत्तसमुच्चयट्ठो । अजोगिस्स कधं पुण गहणं होदि? अत्थावत्तीदो । तं जहा—खीणकसाय-सजोगि-

प्रगट किया गया है । केवल यही जीव उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी होता है, यह बात नहीं है; किन्तु जिस जीवके उसका सत्त्व रहता है वह भी उसका स्वामी होता है ।

उसका सत्त्व किसके होता है, ऐसा पूछनेपर इन जीवोंके उसका सत्त्व होता है; यह बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

उसका सत्त्व क्षीणकषायवीतराग छद्मस्थके होता है अथवा सयोगिकेवलीके होता है, अतएव उनके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है ॥ १४ ॥

सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागको बाँधकर क्षीणकषाय, सयोगी और अयोगी गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके इन गुणस्थानोंमें वेदनीयका उत्कृष्ट अनुभाग पाया जाता है ।

शङ्का—सूत्रमें अयोगी पदका निर्देश किये बिना अयोगिकेवली गुणस्थानमें उत्कृष्ट अनुभाग होता है, यह कैसे जाना जाता है ? द्वितीय वा शब्दसे उसका परिज्ञान होता है, यह भी यहाँ नहीं कहा जा सकता है, कारण कि 'पंचिंदियस्स वा' इत्यादिकोंमें स्थित वा शब्दके समान द्वितीय वा शब्द उक्त अर्थके समुच्चयमें प्रवृत्त है ?

समाधान - पंचिंदियस्स वा' इत्यादिकोंमें स्थित वा शब्दोंकी प्रवृत्ति उक्त अर्थके समुच्चयमें भले ही हो, क्योंकि, वहाँ उनका दूसरा अर्थ नहीं है । किन्तु यहाँ स्थित द्वितीय 'वा' शब्द अनुक्त अर्थके समुच्चयमें प्रवृत्त है, क्योंकि, उक्त समुच्चयरूप अर्थकी सिद्धि प्रथम वा शब्दसे ही हो जाती है । अतएव द्वितीय वा शब्दको अयोगिकेवलीका ग्रहण करनेके निमित्त समझना चाहिये ।

अथवा, द्वितीय वा शब्द भी उक्त अर्थका समुच्चय करनेके लिये है । तो फिर अयोगिकेवलीका ग्रहण कैसे होता है ऐसा पूँछनेपर कहते हैं कि उसका ग्रहण अर्थापत्तिसे होता है ।

१. प्रतिषु 'होदि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गहणं सुहाणं पयडीणं विसोहीदो केवलिसमुग्घादेण जोगणिरोहेण वा अणुभागघादो णत्थि त्ति जाणावेदि । खीणकसाय-सजोगीसु ट्ठिदि-अणुभागघादेसु संतेसु[1] वि सुहाणं पयडीणं अणुभागघादो णत्थि त्ति सिद्धे अजोगिम्हि ट्ठिदि-अणुभागवज्जिदे सुहाणं पयडीणमुक्कस्साणुभागो होदि त्ति अत्थावत्तिसिद्धं । सुहुमखवगउक्कस्साणुभाग-ट्ठिदिबंधो बारसमुहुत्तमेत्तो, सो कधं सजोगि-अजोगीसु लब्भदे ? ण च बारसमुहुत्तब्भंतरे तदुभय-गुणट्ठाणमुवगदाणमुवलब्भदे परदो णोवलब्भदि त्ति वोत्तुं जुत्तं, वेयणीयखेत्तवेयणाए उक्कस्सियाए संतीए तस्सेव भावो णियमेण उक्कस्सो त्ति एदेण सुत्तेण सह विरोहादो ? ण, पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीसु ट्ठिदपदेसाणं बंधाणुभागसरूवेण परिणदाणं थोवाणमुवलंभादो । कुदो णव्वदे ? 'बंधे उक्कड्डदि' त्ति वयणादो ।

तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा ॥ १५ ॥

सुगमं ।

एवं णामा-गोदाणं ॥ १६ ॥

यथा—सूत्रमें क्षीणकषाय और सयोगिकेवलीका ग्रहण यह प्रकट करता है कि शुभ प्रकृतियोंके अनुभागका घात विशुद्धि, केवलिसमुद्घात अथवा योगनिरोधसे नहीं होता । क्षीणकषाय और सयोगी गुणस्थानोंमें स्थितिघात व अनुभागघातके होनेपर भी शुभ प्रकृतियोंके अनुभागका घात वहा नहीं होता, यह सिद्ध होनेपर स्थिति व अनुभागसे रहित अयोगी गुणस्थानमें शुभ प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अनुभाग होता है, यह अर्थापत्तिसे सिद्ध है ।

शङ्का—सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके उत्कृष्ट अनुभाग व स्थितिका बन्ध बारह मुहूर्त प्रमाण होता है, वह सयोगी और अयोगीके भला कैसे पाया जा सकता है । यदि कहा जाय कि बारह मुहूर्तोंके भीतर ही उन दोनों गुणस्थानोंको प्राप्त हुए जीवोंके वह पाया जाता है, आगे नहीं पाया जाता; सो यह कहना भी उचित नहीं है, क्योंकि, "वेदनीयक्षेत्रवेदनाके उत्कृष्ट होनेपर उसीके उसका भाव भी नियमसे उत्कृष्ट होता है" इस सूत्रके साथ विरोध होगा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि बांधे गये अनुभाग स्वरूपसे परिणत पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितियोंमें स्थित प्रदेश थोड़े पाये जाते हैं ।

शङ्का—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह 'बंधे उक्कड्डदि' इस वचनसे जाना जाता है ।

उससे भिन्न अनुत्कृष्ट वेदना है ॥ १५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार नाम व गोत्र कर्मके विषयमें भी कहना चाहिये ॥ १६ ॥

१. प्रतिषु 'संतेसु विहाणं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जसकित्ति-उच्चागोदाणं सुहुमसांपराइयखवगचरिमसमए उक्कस्सबंधुवलंभादो । जहा घादिकम्माणं मिच्छाइट्ठिम्हि उक्कट्ठसंकिलिट्ठम्मि उक्कस्साणुभागसामित्तं दिण्णं तहा एदासिं किण्ण दिज्जदे ? ण, तत्थतण उक्कस्ससंकिलेसेण सुहपयडीणं बंधाभावादो तत्थतणअसुहपयडिअणुभागसंतकम्मादो वि चरिमसमयसुहुमसांपराइयेण बद्धसुहपयडीणमुक्कस्साणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

सामित्तेण उक्कस्सपदे आउववेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स ? ॥ १७ ॥

सुगमं ।

अण्णदरेण अप्पमत्तसंजदेण सागारजागारतप्पाओग्गविसुद्धेण बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि ॥ १८ ॥

ओगाहणादीहि भेदाभावपदुप्पायणट्ठं'अण्णदरेण'इत्ति भणिदं । अप्पमत्तम्मि चेव उक्कस्साणुभागबंधो पमत्तम्मि ण होदि त्ति जाणावणट्ठं 'अप्पमत्तसंजदेण'इत्ति भणिदं । दंसणोवजोगसुत्तावत्थासु उक्कस्साणुभागबंधो णत्थि त्ति जाणावणट्ठं 'सागार-जागार'णि-

कारण कि यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट बन्ध उपलब्ध होता है ।

शङ्का—जिस प्रकार उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त मिथ्यादृष्टि जीवके घातिया कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागका स्वामित्व दिया गया है उसी प्रकार इनका क्यों नहीं दिया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि एक तो मिथ्यादृष्टिके उत्कृष्ट संक्लेशके द्वारा शुभ प्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता । दूसरे वहाँके अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागसत्त्वकी अपेक्षा भी अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके द्वारा बांधा गया शुभ प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है, इसलिए उन उत्कृष्ट अनुभागका स्वामित्व मिथ्यात्व गुणस्थानमें नहीं दिया गया है।

स्वामित्वसे उत्कृष्ट पदमें आयु कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट किसके होती है ? ॥ १७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

साकार उपयोग युक्त, जागृत और उसके योग्य विशुद्धियुक्त अन्यतर जिस अप्रमत्तसंयतके द्वारा आयुकर्मका बन्ध होता है और जिसके इसका सत्त्व होता है ॥१८॥

अवगाहना आदिसे होनेवाली विशेषताका अभाव बतलानेके लिये सूत्रमें 'अन्यतर' पद कहा है । अप्रमत्त गुणस्थानमें ही उत्कृष्ट अनुभागबन्ध होता है, प्रमत्त गुणस्थानमें वह नहीं होता; यह जतलानेके लिये 'अप्रमत्त संयतके द्वारा' ऐसा कहा है । दर्शनोपयोग व सुप्त अवस्थाओंमें उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, यह बतलानेके लिये 'साकार उपयोग सहित व

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

द्देसो कदो। अइविसोहीए अइसंकिलेसेण च आउअस्स बंधो[1] णत्थि त्ति जाणावणट्ठं 'तप्पाओग्गविसुद्धेण'इत्ति भणिदं। जेण बद्धो[1] आउअस्स उक्कस्साणुभागो सो उक्कस्साणुभागस्स सामी होदि त्ति जाणावणट्ठं 'बद्धल्लयं'इदि भणिदं। विदियादिसमएसु बंधविरहिदेसु उक्कस्साणुभागो किं होदि ण होदि त्ति पुच्छिदे जस्स तं संतकम्ममत्थि सो वि उक्कस्साणुभागसामी होदि त्ति भणिदं।

तं संतकम्मं कस्स अत्थि त्ति पुच्छिदे इमस्सत्थि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

तं संजदस्स वा अणुत्तरविमाणवासियदेवस्स वा। तस्स आउववेयणा भावदो उक्कस्सा ॥ १६ ॥

'तं संजदस्स वा' इदि वुत्ते अपुव्व-अणियट्टि-सुहुमउवसामगाणं उवसंतकसायाणं पमत्तसंजदाणं च गहणं। कधं पमत्तसंजदेसु उक्कस्साणुभागसत्तुवलद्धी ? ण एस दोसो, आउअस्स उक्कस्साणुभागं बंधिदूण पमत्तगुणं पडिवण्णस्स तदुवलंभादो। संजदासंजदादिहेट्ठिमगुणट्ठाणजीवा उक्कस्साणुभागसामिणो किण्ण होंति ? ण, उक्कस्साणुभागेण सह

जागृत' ऐसा निर्देश किया है। अत्यन्त विशुद्धि एवं अत्यन्त संक्लेशसे आयुका बन्ध नहीं होता, यह जतलानेके लिये 'उसके योग्य विशुद्धिसे संयुक्त' यह कहा है। जिसने आयुके उत्कृष्ट अनुभागको बांधा है वह उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी होता है, यह बतलानेके लिये 'बद्धल्लयं' ऐसा सूत्रमें निर्देश किया है। बन्धसे रहित द्वितीयादिक समयोंमें क्या उत्कृष्ट अनुभाग होता है या नहीं होता ऐसा पूछनेपर जिसके उसका सत्त्व है वह भी उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी होता है यह कहा है।

उसका सत्त्व किसके होता है, ऐसा पूछनेपर अमुक जीवके उसका सत्त्व होता है, यह बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

उसका सत्त्व संयतके होता है अनुत्तरविमानवासी देवके होता है अतएव उसके आयु कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है ॥ १९ ॥

'वह संयतके होता है' ऐसा कहनेपर अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामकोंका तथा उपसान्तकषाय व प्रमत्तसंयतोंका ग्रहण किया गया है।

शंका—प्रमत्तसंयतोंमें उत्कृष्ट अनुभागका सत्त्व कैसे पाया जाता है ?

सामाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, आयुके उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर प्रमत्तसंयत गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके उसका सत्त्व पाया जाता है।

शंका—संयतासंयतादिक नीचेके गुणस्थानोंमें स्थित जीव उत्कृष्ट अनुभागके स्वामी क्यों नहीं होते ?

१ अप्रतौ 'बंधो'इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आउवबंधे संजदासंजदादिहेट्ठिमगुणट्ठाणाणं गमणाभावादो। उक्कस्साणुभागं बंधिय ओवट्टणाघादेण घादिय पुणो हेट्ठिमगुणट्ठाणाणि पडिवण्णे संते उक्कस्साणुभागे सामित्तं किण्ण होदि त्ति वुत्ते ण, घादिदस्स अणुभागउक्कस्सत्तविरोहादो। उक्कस्साणुभागे बंधे ओवट्टणाघादो णत्थि त्ति के वि भणंति। तण्ण घडदे, उक्कस्साउअं बंधिय पुणो तं घादिय मिच्छत्तं गंतूण अग्गिदेवेसु उप्पण्णदीवायणेण वियहिचारादो महाबंधे आउअउक्कस्साणुभागंतरस्स उवड्ढपोग्गलमेत्तकालपरूवणण्णहाणुववत्तीदो वा।

अणुद्दिसादिहेट्ठिमदेवेसु पडिबद्धाउए बज्झमाणे उक्कस्साणुभागबंधो ण होदि त्ति जाणावणट्ठं 'अणुत्तरविमाणवासियदेवस्स' इत्ति भणिदं। उक्कस्साणुभागेण सह तेत्तीसाउअं बंधिय अणुभागं मोत्तूण ट्ठिदीए चेव ओवट्टणाघादं कादूण सोधम्मादिसु उप्पण्णाणं उक्कस्सभावसामित्तं किण्ण लब्भदे? ण, विणा आउअस्स उक्कस्सट्ठिदिघादाभावादो।

तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा ॥ २० ॥

सुगममेदं।

समाधान—नहीं, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभागके साथ आयुको बांधनेपर संयतासंयतादि अधस्तन गुणस्थानोंमें गमन नहीं होता।

शंका—उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर उसे अपवर्तनाघातके द्वारा घातकर पश्चात् अधस्तन गुणस्थानोंको प्राप्त होनेपर उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी क्यों नहीं होता?

समाधान—नहीं, क्योंकि घातित अनुभागके उत्कृष्ट होनेका विरोध है।

उत्कृष्ट अनुभागको बांधनेपर उसका अपवर्तनाघात नहीं होता, ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं। किन्तु वह घटित नहीं होता, क्योंकि, ऐसा माननेपर एक तो उत्कृष्ट आयुको बांधकर पश्चात् उसका घात करके मिथ्यात्वको प्राप्त हो अग्निकुमार देवोंमें उत्पन्न हुए द्वीपायन मुनिके साथ व्यभिचार आता है, दूसरे इसका घात माने विना महाबन्धमें प्ररूपित उत्कृष्ट अनुभागका उपार्ध पुद्गल प्रमाण अन्तर भी नहीं बन सकता।

अनुदिश आदि नीचेके देवों से सम्बन्ध रखनेवाली आयुको बांधते हुए उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता, यह बतलानेके लिये 'अनुत्तरविमानवासी देवके' यह कहा गया है।

शंका—उत्कृष्ट अनुभागके साथ तेतीस सागरोपम प्रमाण आयुको बांधकर अनुभागको छोड़ केवल स्थितिके अपवर्तनाघातको करके सौधर्मादि देवोंमें उत्पन्न हुए जीवोंके उत्कृष्ट अनुभागका स्वामित्व क्यों नहीं पाया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, [अनुभागघातके] विना आयुकी उत्कृष्ट स्थितिका घात सम्भव नहीं है।

उससे भिन्न उसकी अनुत्कृष्ट वेदना है ॥ २० ॥

यह सूत्र सुगम है।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सामित्तेण जहण्णपदे णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ? ॥ २१ ॥

सुगममेदं ।

अण्णदरस्स खवगस्स चरिमसमयछदुमत्थस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा ॥ २२ ॥

ओगाहणादिविसेसेहि[1] भेदाभावपदुप्पायणट्ठं 'अण्णदरस्स' इत्ति भणिदं । अक्खवग-पडिसेहफलो 'खवग' णिद्देसो । खीणकसायदुचरिमसमयप्पहुडिहेट्ठिमखवगपडिसेहफलो 'चरिमसमयछदुमत्थस्स' इत्ति णिद्देसो । चरिमसमयसुहुमसांपराइयजहण्णाणुभागबंधं घेत्तूण जहण्णसामित्तं तत्थ किण्ण परूविदं ? ण, जहण्णाणुभागबंधादो तत्थतणसंताणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो । खीणकसायचरिमसमए वि चिराणाणुभागसंतकम्मं चेव घेत्तूण जेण जहण्णं दिण्णं तेण खीणकसायपढमसमए जहण्णसामित्तं दिज्जदु, चिराणाणुभाग-संतकम्मत्तं पडि भेदाभावादो त्ति ? ण एस दोसो, अणुसमओवट्टणाघादेण

स्वामित्वसे जघन्य पदमें ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ? ॥ २१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अन्यतर क्षपक अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ २२ ॥

अवगाहनादिक विशेषोंसे उत्पन्न विशेषताकी अविवक्षा बतलाने के लिये 'अन्यतर' पदका निर्देश किया है । क्षपक पदके निर्देशका प्रयोजन अक्षपकोंका प्रतिषेध करना है । क्षीणकषाय गुणस्थानके द्विचरम समयवर्ती आदि अधस्तन क्षपकोंका निषेध करनेके लिये 'अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थके' ऐसा निर्देश किया है ।

शङ्का—अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके जघन्य अनुभागबन्धको ग्रहणकर वहाँ जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं बतलाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, जघन्य अनुभाग बन्धकी अपेक्षा वहाँ अनुभागका सत्त्व अनन्त-गुणा पाया जाता है ।

शङ्का—क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें भी चूँकि चिरन्तन अनुभागके सत्त्वको लेकर ही जघन्य स्वामित्व दिया गया है अतएव क्षीणकषायके प्रथम समयमें भी जघन्य स्वामित्व दिया जाना चाहिये था, क्योंकि, चिरन्तन अनुभागके सत्त्वकी अपेक्षा दोनोंमें कोई भेद नहीं है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, प्रत्येक समयमें होनेवाले अपवर्तनाघातके द्वारा प्रति-

१ अप्रतौ 'ओगाहणणादिविसेसोहि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुसमयमणंतगुणहीणं होदूण खीणकसायचरिमसमयपत्ताणुभागादो तस्सेव पढमसमय-अणुभागस्स अणंतगुणदंसणादो ।

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ २३ ॥

सुगममेदं ।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ॥ २४ ॥

घादिकम्मत्तणेण अणुसमओवट्टणाए घादं पाविदूण खीणकसायचरिमसमए विणट्ठत्तणेण भेदाभावादो ।

सामित्तेण जहण्णपदे वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ? ॥ २५ ॥

सुगमं ।

अण्णदरखवगस्स चरिमसमयभवसिद्धियस्स असादावेदणीयस्स वेदयमाणस्स तस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा ॥ २६ ॥

ओगाहणादीहि विसेसाभावपदुप्पायणफलो 'अण्णदरस्स' इत्ति णिद्देसो । अक्खवगपडिसेहफलो 'खवग' णिद्देसो । दुचरिमभवसिद्धियादिपडिसेहफलो 'चरिमसमयभवसिद्धियस्स'

समय अनन्त गुणाहीन होकर क्षीणकषायके अन्तिम समयको प्राप्त हुए अनुभागकी अपेक्षा उसी गुणस्थानके प्रथम समयका अनुभाग अनन्तगुणा देखा जाता है ।

उससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ॥ २३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय और अन्तरायकी जघन्य और अजघन्य वेदना का कथन करना चाहिये ॥ २४ ॥

कारण कि एक तो ये दोनों घातिकर्म होनेसे ज्ञानावरण की अपेक्षा इनमें कोई विशेषता नहीं है दूसरे प्रत्येक समयमें होनेवाले अपवर्तनाघात के द्वारा घात होकर क्षीणकषायके अन्तिम समयमें विनष्ट हुए अनुभागकी अपेक्षा ज्ञानावरणसे इनमें कोई विशेषता नहीं है ।

स्वामित्वसे जघन्य पदमें वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ? ॥ २५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

असातावेदनीयका वेदन करनेवाले अन्तिम समयवर्ती भवसिद्धिक अन्यतर क्षपकके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ २६ ॥

अवगाहना आदिसे होनेवाली विशेषता यहाँ विवक्षित नहीं यह बतलानेके लिये सूत्रमें 'अन्यतर' पदका निर्देश किया है । क्षपकके निर्देशका फल अक्षपकका प्रतिषेध करना है । अन्तिम समयवर्ती भवसिद्धिक कहनेका प्रयोजन द्विचरम समयवर्ती आदि भवसिद्धिकोंका प्रतिषेध करना है ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

इति णिद्देसो। भवसिद्धियदुचरिमसमए जहण्णसामित्तं किण्ण दिज्जदे ? ण, तत्थ चरमसमयसुहुमसांपराइएण बद्धसादावेयणीयउक्कस्साणुभागसंतकम्मस्स अत्थित्तदंसणादो। 'असादवेदगस्स' इत्ति विसेसणं किमट्ठं कीरदे ? सादं वेदयमाणस्स दुचरिमसमए उदयाभावेण विणासिदअसादस्स सादुक्कस्सं धरेमाणचरिमसमयभवसिद्धियस्स वेदणीयजहण्णसामित्तविरोहादो। असादं वेदयमाणस्स पुण वेयणीयाणुभागो जहण्णो होदि, उदयाभावेण भवसिद्धियदुचरिसमए विणट्ठसादाणुभागसंतत्तादो खवगसेडीए बहुसो घादं पत्तअणुभागसहिदअसादावेदणीयस्स चेव भवसिद्धियचरिमसमयदंसणादो। असादं वेदयमाणस्स सजोगिभगवंतस्स भुक्खा-तिसादीहि एक्कारसपरीसहेहि बाहिज्जमाणस्स कधं ण भुत्ती होज्ज ? ण एस दोसो, पाणोयणेसु जादतण्हाए समोहस्स मरणभएण भुजंतस्स परीसहेहि पराजियस्स केवलित्तविरोहादो। संकिलेसाविणाभाविणीए भुक्खाए दज्झमाणस्स वि केवलित्तं जुज्जदि त्ति समाणो दोसो त्ति ण पच्चवट्ठेयं, सगसहायघादिकम्माभावेण णिस्सत्तित्तमावण्णअसादावेदणीयउदयादो भुक्खा-तिसाणमणुप्पत्तीए। णिप्फलस्स पर-

शंका—द्विचरम समयवर्ती भव्यसिद्धिकके जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं दिया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उसके अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक द्वारा बांधे गये सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका सत्त्व देखा जाता है।

शंका—'असातावेदनीयका वेदन करनेवालेके' यह विशेषण किसलिये किया जारहा है ?

समाधान—[नहीं, क्योंकि] जो सातावेदनीयका वेदन कर रहा है और जिसने द्विचरम समयमें उदयाभाव होनेसे असातावेदनीयका नाश कर दिया है उस सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागको धारण करनेवाले अन्तिम समयवर्ती भवसिद्धिकके वेदनीयका जघन्य स्वामित्व माननेमें विरोध आता है। परन्तु असाताका वेदन करनेवालेके वेदनीयका अनुभाग जघन्य होता है, क्योंकि एक तो उदयाभाव होनेके कारण भवसिद्धिकके द्विचरम समयमें सातावेदनीयके अनुभाग सत्त्वका विनाश हो जाता है और दूसरे क्षपकश्रेणिमें बहुत बार घातको प्राप्त हुए अनुभाग सहित असातावेदनीयका ही भवसिद्धिकके अन्तिम समयमें सत्त्व देखा जाता है।

शंका—असातावेदनीयका वेदन करनेवाले तथा क्षुधा तृषा आदि ग्यारह परीषहों द्वारा बाधाको प्राप्त हुए ऐसे सयोगिकेवली भगवानके भोजनका ग्रहण कैसे नहीं होगा ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जो भोजन-पानमें उत्पन्न हुई इच्छासे मोहयुक्त है तथा मरणके भयसे जो भोजन करता है, अतएव परीषहोंसे जो पराजित हुआ है ऐसे जीवके केवली होनेका विरोध है। संक्लेशके साथ अविनाभाव रखनेवाली क्षुधासे जलनेवालेके भी केवलीपना बन जाता है, इस प्रकार यह दोष समान ही है; ऐसा भी समाधान नहीं करना चाहिये, क्योंकि, अपने सहायक घातिया कर्मोंका अभाव हो जानेसे अशक्तताको प्राप्त हुए असातावेदनीयके उदयसे क्षुधा व तृषाकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माणुपुंजस्स समयं पडि परिसदंतस्स कधं उदयववएसो ? ण, जीव-कम्मविवेगमेत्तफलं दट्ठूण उदयस्स फलत्तब्भुवगमादो। जदि एवं तो असादवेदणीयोदयकाले सादावेदणीयस्स उदओ णत्थि, असादावेदणीयस्सेव उदओ अत्थि त्ति ण वत्तव्वं, सगफलाणुप्पायणेण दोण्णं पि सरिसत्तुवलंभादो ? ण, असादपरमाणूणं व सादपरमाणूणं सगसरूवेण णिज्जराभावादो। सादपरमाणओ असादसरूवेण विणस्संतावत्थाए परिणमिदूण विणस्संते दट्ठूण सादावेदणीयस्स उदओ णत्थि त्ति वुच्चदे। ण च असादावेदणीयस्स एसो कमो अत्थि, [असाद]-परमाणूणं सगसरूवेणेव णिज्जरुवलंभादो। तम्हा दुक्खरूवफलाभावे वि असादावेदणीयस्स उदयभावो जुज्जदि त्ति सिद्धं।

शंका—बिना फल दिये ही प्रतिसमय निर्जीर्ण होनेवाले परमाणुसमूहकी उदय संज्ञा कैसे बन सकती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, जीव व कर्मके विवेकमात्र फलको देखकर उदयको फलरूपसे स्वीकार किया गया है।

शंका—यदि ऐसा है तो असातावेदनीयके उदयकालमें सातावेदनीयका उदय नहीं होता, केवल असातावेदनीयका ही उदय रहता है ऐसा नहीं कहना चाहिये, क्योंकि अपने फलको नहीं उत्पन्न करनेकी अपेक्षा दोनोंमें ही समानता पायी जाती है।

समाधान—नहीं, क्योंकि, तब असातावेदनीयके परमाणुओंके समान सातावेदनीयके परमाणुओंकी अपने रूपसे निर्जरा नहीं होती। किन्तु विनाश होनेकी अवस्थामें असातारूपसे परिणम कर उनका विनाश होता है यह देखकर सातावेदनीयका उदय नहीं है, ऐसा कहा जाता है। परन्तु असातावेदनीयका यह क्रम नहीं है, क्योंकि, तब असाताके परमाणुओंकी अपने रूपसे ही निर्जरा पायी जाती है। इस कारण दुखरूप फलके अभावमें भी असातावेदनीयका उदय मानना युक्तियुक्त है, यह सिद्ध होता है।

विशेषार्थ—साधारणतः सांसारिक सुख और दुःखकी उत्पत्तिमें सातावेदनीय और असातावेदनीयका उदय निमित्त माना जाता है। सुखके साथ सातावेदनीयके उदयकी और दुखके साथ असातावेदनीयके उदयकी व्याप्ति है। यह व्याप्ति उभयतः मानी जाती है। इसलिए यह प्रश्न उठता है कि केवली जिनके असातावेदनीयका उदय माननेपर उनके क्षुधा, तृषा और व्याधि आदि जन्य बाधा अवश्य होती होगी, अन्यथा उनके असातावेदनीयका उदय मानना निष्फल है। समाधान यह है कि कोई भी कार्य बाह्य और अन्तरङ्ग दो प्रकारके कारणोंसे होता है। यहाँ मुख्य कार्य क्षुधा जन्य बाधा है। यदि शरीरके लिये भोजनकी आवश्यकता हो और ऐसी अवस्थामें भोजनकी इच्छा हो तो क्षुधाजन्य बाधा होती है और इसमें असातावेदनीयका उदय कारण माना जाता है। किन्तु केवली जिनका औदारिकशरीर त्रस और निगोदिया जीवोंसे रहित परमशुद्ध होता है अतएव उनके शरीरको भोजन पानीकी आवश्यकता नहीं रहती और मोहनीयका अभाव हो जानेसे उनके भोजन और पानी ग्रहण करनेकी इच्छा भी नहीं होती, इसलिए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ २७ ॥

सुगमं ।

सामित्तेण जहण्णपदे मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ? ॥ २८ ॥

सुगमं ।

अण्णदरस्स खवगस्स चरिमसमयसकसाइस्स तस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णा ॥ २९ ॥

अंतोमुहुत्तमणुसमयओवट्टणाघादेण घादिदसेसअणुभागगहणट्ठं 'चरिमसमयकसाइस्स' इत्ति णिद्दिट्ठं । सेसं सुगमं ।

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ ३० ॥

सुगमं ।

सामित्तेण जहण्णपदे आउअवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ? ॥ ३१ ॥

उनके कदाचित् असातावेदनीयका उदय रहनेपर भी क्षुधा-तृषाजन्य बाधा नहीं होती । यही कारण है कि केवली जिनके क्षुधादिजन्य बाधाका अभाव कहा गया है । शेष स्पष्टीकरण मूलमें किया ही है ।

इससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ॥ २७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

स्वामित्वसे जघन्य पदमें मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ॥ २८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अन्तिम समयवर्ती सकषाय अन्यतर क्षपकके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ २९ ॥

अन्तर्मुहूर्त कालतक प्रति समय अपवर्तनाघातके द्वारा घात करनेसे शेष रहे अनुभागका ग्रहण करनेके लिये 'अन्तिम समयवर्ती सकषायके' इस पदका निर्देश किया है । शेष कथन सुगम है ।

इससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ॥ ३० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

स्वामित्वसे जघन्य पदमें आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ? ॥ ३१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं ।

अण्णदरेण मणुस्सेण पंचिंदियतिरिक्खजोणिएण वा परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण अपज्जत्ततिरिक्खाउअं बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्मं अत्थि तस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा ॥ ३२ ॥

अपज्जत्ततिरिक्खाउअं देव-णेरइया ण बंधंति त्ति जाणावणट्ठं मणुस्सेण 'पंचिंदियतिरिक्खजोणिएण वा' त्ति वुत्तं । एइंदिय-विगलिंदिया वि अपज्जत्ततिरिक्खाउअं बंधंता अत्थि, तत्थ जहण्णसामित्तं किण्ण दिज्जदे ? ण, आउअजहण्णाणुभागबंधकारणपरिणामाणं तत्थाभावादो । तत्थ णत्थि त्ति कधं णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो । अणुसमयं वड्ढमाणा हायमाणा च जे संकिलेस-विसोहियपरिणामा ते अपरियत्तमाणा णाम । जत्थ पुण ट्ठाइदूण परिणामंतरं गंतूण एग-दोआदिसमएहि आगमणं संभवदि ते परिणामा परियत्तमाणा णाम । तेहि आउअं बज्झदि। तत्थ उक्कस्सा मज्झिमा जहण्णा त्ति तिविहा परिणामा । तत्थ अइजहण्णा आउअबंधस्स अप्पाओग्गं । अइमहल्ला पि अप्पाओग्गं चेव, साभावियादो। तत्थ दोण्णं विचाले ट्ठिया परियत्तमाणमज्झिमपरिणामा

यह सूत्र सुगम है ।

जो अन्यतर मनुष्य अथवा पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाला जीव परिवर्तमान मध्यम परिणामोंसे अपर्याप्त तिर्यंच सम्बन्धी आयुका बन्ध करता है उसके और जिसके इसका सत्त्व होता है उसके आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ ३२ ॥

अपर्याप्त तिर्यंच सम्बन्धी आयुको देव और नारकी जीव नहीं बाँधते यह जतलानेके लिये 'मनुष्य अथवा पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाले' ऐसा कहा है ।

शंका—एकेन्द्रिय व विकलेन्द्रिय जीव भी अपर्याप्त तिर्यंचकी आयुको बाँधते हैं, इसलिए उनमें जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं दिया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उनमें आयुके जघन्य अनुभागके बन्धमें कारणभूत परिणामोंका अभाव है ।

शंका—उनमें वे परिणाम नहीं है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है ।

प्रति समय बढ़नेवाले या हीन होनेवाले जो संक्लेश या विशुद्धिरूप परिणाम होते हैं वे अपरिवर्तमान परिणाम कहे जाते हैं । किन्तु जिन परिणामों में स्थित होकर तथा परिणामान्तरको प्राप्त हो पुनः एक दो आदि समयों द्वारा उन्हीं परिणामोंमें आगमन सम्भव होता है उन्हें परिवर्तमान परिणाम कहते हैं । उनसे आयुका बन्ध होता है । उनमें उत्कृष्ट, मध्यम व जघन्यके भेदसे वे परिणाम तीन प्रकारके हैं । इनमें अति जघन्य परिणाम आयुबन्धके अयोग्य हैं । अत्यन्त महान् परिणाम भी आयुबन्धके अयोग्य ही हैं, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है । किन्तु उन दोनोंके मध्यमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वुच्चंति । तत्थतणजहण्णपरिणामेहि तप्पाओग्गविसेसपच्चएहि जमपज्जत्ततिरिक्खाउअं बद्धल्लयं तस्स जहण्णाणुभागो होदि । जस्स तं संतकम्मं तस्स वि ।

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ ३३ ॥

सुगमं ।

सामित्तेण जहण्णपदे णामवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ? ॥ ३४ ॥

सुगमं ।

अण्णदरेण सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएण हदसमुप्पत्तियकम्मेण परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि तस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा ॥ ३५ ॥

ओगाहणादिविसेसाभावपदुप्पायणट्ठं 'अण्णदरेण' इत्ति वुत्तं। बादरेइंदियअपज्जत्तादिउवरिमजीवसमासपडिसेहट्ठं 'सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएण' इत्ति भणिदं। उवरिमजीवसमासपडिसेहो किमट्ठं कीरदे ? तत्थ जहण्णाणुभागासंभवादो । तं जहा—ण ताव तत्थ

अवस्थित परिणाम परिवर्तमान मध्यम परिणाम कहलाते हैं। उनमें जघन्य परिणामोंसे तत्प्रायोग्य विशेष कारणों द्वारा जिसने अपर्याप्त सम्बन्धी तिर्यंच आयुको बाँधा है उसके आयुका जघन्य अनुभाग होता है, तथा जिसके उक्त अनुभागका सत्त्व होता है उसके भी आयुका जघन्य अनुभाग होता है।

इससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ॥ ३३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

स्वामित्वसे जघन्य पदमें नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है ? ॥ ३४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

हतसमुत्पत्तिक कर्मवाला अन्यतर जो सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीव परिवर्तमान मध्यम परिणामोंके द्वारा नाम कर्मका बन्ध करता है उसके और जिसके इसका सत्त्व होता है उसके नाम कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ ३५ ॥

अवगाहना आदिसे होनेवाली विशेषता यहाँ विवक्षित नहीं है यह बतलानेके लिये 'अन्यतर' पद कहा है। बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त आदि आगेके जीवसमासोंका प्रतिषेध करनेके लिये 'सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके द्वारा' ऐसा कहा है।

शंका—आगेके जीवसमासोंका प्रतिषेध किसलिये करते हैं।

समाधान—चूँकि उनमें जघन्य अनुभागकी सम्भावना नहीं है, अतः उनका प्रतिषेध करते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वविसुद्धेसु जहण्णसामित्तं, अप्पसत्थपयडिअणुभागादो अणंतगुणपसत्थअणंतगुणवड्ढि-प्पसंगादो। ण सव्वसंकिलिट्ठेसु वि, अइतिव्वसंकिलेसेण असुहाणं पयडीणमणुभागवड्ढि-प्पसंगादो। ण परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेसु वि जहण्णसामित्तं संभवदि, सुहुमणिगो-दजीवअपज्जत्तपरियत्तमाणमज्झिमपरिणमेहिंतो अणंतगुणेहि जहण्णभावाणुववत्तीदो। 'हदसमुप्पत्तियकम्मेण' इत्ति वुत्ते पुव्विल्लमणुभागसंतकम्मं सव्वं घादिय अणंतगुणहीणं कादूण 'ट्ठिदेण' इत्ति वुत्तं होदि। तत्थ जहण्णुक्कस्सपरिणामणिराकरणट्ठं 'परियत्तमाणम-ज्झिमपरिणामेण' इत्ति वुत्तं। जेण तं बद्धं जस्स तं संतकम्ममत्थि तस्स णामवेदणा भावदो जहण्णा।

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ ३६ ॥

सुगमं।

सामित्तेण जहण्णपदे गोदवेदणा भावदो जहण्णिया कस्स? ॥ ३७ ॥

सुगमं।

हैं। यथा—उक्त जीवसमासोंमेंसे सर्वविशुद्ध जीवोंमें तो जघन्य स्वामित्व बन नहीं सकता, क्योंकि, ऐसा होनेपर अप्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागसे अनन्तगुणे प्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागमें अनन्तगुणी वृद्धिका प्रसंग आता है। सर्वसंक्लिष्ट जीवोंमें भी वह नहीं बन सकता, क्योंकि, अति तीव्र संक्लेशके द्वारा अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागमें वृद्धिका प्रसंग आता है। परिवर्तमान मध्यम परिणाम युक्त जीवोंमें भी जघन्य स्वामित्व सम्भव नहीं है, क्योंकि, सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके परिवर्तमान मध्यम परिणामोंकी अपेक्षा उन जीवोंके परिणाम अनन्तगुणे होते हैं, इसलिये वे जघन्य नहीं हो सकते।

'हतसमुत्पत्तिककर्मवाले' ऐसा कहनेपर पूर्वके समस्त अनुभागसत्त्वका घात करके और उसे अनन्तगुणा हीन करके स्थित हुए जीवके द्वारा, यह अभिप्राय समझना चाहिये। सूत्रमें जघन्य और उत्कृष्ट परिणामोंका निराकरण करनेके लिये 'परिवर्तमान मध्यम परिणामोंके द्वारा' ऐसा निर्देश किया है। जिसने उक्त अनुभागको बाँधा है व जिसके उसका सत्त्व है उसके नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है।

इससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ॥ ३६ ॥

यह सूत्र सुगम है।

स्वामित्वसे जघन्य पदमें गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य किसके होती है? ॥ ३७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अण्णदरेण बादरतेउ-वाउजीवेण सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण सागारजागारसव्वविसुद्धेण हदसमुप्पत्तियकम्मेण उच्चागोदमुव्वेल्लिदूण णीचागोदं बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि तस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा ॥ ३८ ॥

'बादरतेउ-वाउजीव' णिद्देसो किमट्ठं कीरदे ? तत्थ बंधविवज्जियमुच्चागोदं णीचागोदादो सुहत्तणेण महल्लाणुभागमुव्वेल्लिय गालणट्ठं । 'सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण' इत्ति णिद्देसो अपज्जत्तकाले सव्वुक्कस्सविसोही णत्थि त्ति पज्जत्तकालसव्वुक्कस्सविसोहीणं गहणणिमित्तो । सागार-जागारद्धासु चेव सव्वुक्कस्सविसोहीयो सव्वुक्कस्ससंकिलेसा च होंति त्ति जाणावणट्ठं 'सागार-जागार' णिद्देसो कदो । सव्वुक्कट्ठविसोहीए एत्थ किं पओजणं ? बहुदरणीचागोदाणुभागघादो पओजणं । एवंविहस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा ।

तव्वदिरित्तमजहण्णा ॥ ३९ ॥

सुगमं ।

एवं सामित्तं सगंतोक्खित्तट्ठाणसंखाजीवसमुदाहाराणिओगद्दारं समत्तं ।

सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुए, साकार उपयोगसे संयुक्त, जागृत, सर्वविशुद्ध एवं हतसमुत्पत्तिककर्मवाले जिस अन्यतर बादर तेजकायिक या वायुकायिक जीवके उच्च गोत्रकी उद्वेलना होकर नीच गोत्रका बन्ध होता है व जिसके उसका सत्त्व होता है उसके गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है ॥ ३८ ॥

शंका—बादर तेजकायिक व वायुकायिक जीवोंका निर्देश किसलिये किया है ?

समाधान—उनमें बन्धको प्राप्त न होनेवाले एवं नीच गोत्रकी अपेक्षा शुभ रूप होनेसे विशाल अनुभाग युक्त उच्च गोत्रकी उद्वेलना करके गलानेके लिये उक्त जीवोंका निर्देश किया है।

चूँकि अपर्याप्तकालमें सर्वोत्कृष्ट विशुद्धि नहीं होती है अतः पर्याप्तकालमें होनेवाली विशुद्धियोंका ग्रहण करनेके लिये 'सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुए' इस पदका निर्देश किया है। साकार उपयोग व जागृत समयमें ही सर्वोत्कृष्ट विशुद्धियाँ व सर्वोत्कृष्ट संक्लेश होते हैं, यह बतलानेके लिये 'साकार उपयोग युक्त व जागृत' इस पदका निर्देश किया है।

शंका—यहाँ सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिका क्या प्रयोजन है ?

समाधान—नीच गोत्रके बहुतर अनुभागका घात करना ही उसका प्रयोजन है।

उक्त लक्षणोंसे संयुक्त जीवके गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है।

इससे भिन्न उसकी अजघन्य वेदना होती है ॥ ३९ ॥

यह सूत्र सुगम है ?

इस प्रकार अपने भीतर स्थान, संख्या व जीवसमुदाहार अनुयोगद्वारोंको रखनेवाला स्वामित्त अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

अप्पाबहुए त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि—जह-ण्णपदे उक्कस्सपदे जहण्णुक्कस्सपदे ॥ ४० ॥

एत्थ तिण्णि चेव अणियोगद्दाराणि होंति, एग-दोसंजोगे मोत्तूण तिसंजोगादीण-मभावादो।

सव्वत्थोवा मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया ॥ ४१ ॥

कुदो ? अपुव्व-अणियट्टिखवगगुणट्ठाणेसु संखेज्जसहस्सवारं खंडयघादेण अणंतगु-णहीणं कादूण पुणो फद्दयाणुभागादो अणंतगुणहीणबादरकिट्टिसरूवेण कादूण पुणो तं मोहाणुभागं बादरकिट्टिगदं जहण्णबादरकिट्टीदो अणंतगुणहीणसुहुमकिट्टिसरूवेण कादूण पुणो सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणम्मि अंतोमुहुत्तकालमणंतगुणहीणकमेणमणुसमय-मोवट्टिय सुहुमसांपराइयचरिमसमए उदयगदट्ठिदीए अणुभागस्स गहणादो।

अणुसमओवट्टणा त्ति केरिसी ? चरिमसमयअणियट्टिअणुभागादो सुहुमसांपरा इयपढमसमए अणुभागो अणंतगुणहीणो होदि। बिदियसमए सो चेव अणुभागखंडयघा-देण विणा अणंतगुणहीणो होदि। पुणो सो घादिदसेसो तदियसमए अणंतगुणहीणो होदि। एवं जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमओ त्ति णेदव्वं। एसो अणुसमओवट्टणघादो

अल्पबहुत्वका प्रकरण है। इसमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—जघन्य पदविषयक अल्पबहुत्व, उत्कृष्ट पदविषयक अल्पबहुत्व और जघन्य उत्कृष्ट पदविषयक अल्पबहुत्व ॥४०॥

यहाँ तीन ही अनुयोगद्वार होते हैं, क्योंकि, एक और दो संयोगी भङ्गोंको छोड़कर यहाँ त्रिसंयोगी आदि भङ्गोंका अभाव है।

भावकी अपेक्षा मोहनीयकी जघन्य वेदना सबसे स्तोक है ॥ ४१ ॥

क्योंकि अपूर्वकरण व अनिवृत्तिकरण क्षपक गुणस्थानोंमें संख्यात हजार बार काण्डकघातके द्वारा अनुभागको अनन्तगुणा हीन करके, पश्चात् स्पर्धकगत अनुभागकी अपेक्षा उसे अनन्तगुणा-हीन बादर कृष्टि रूपसे करके, तत्पश्चात् बादर कृष्टिगत उक्त मोहनीयके अनुभागको जघन्य बादर कृष्टिकी अपेक्षा अनन्तगुणा हीन सूक्ष्म कृष्टिरूपसे करके, पुनः सूक्ष्मसाम्परायिक गुण-स्थानमें अन्तर्मुहूर्त कालतक प्रतिसमय अनन्तगुणहीन क्रमसे अपवर्तित करके सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें उदयप्राप्त स्थितिके अनुभागका यहाँ ग्रहण किया गया है।

शंका—प्रति समय अपवर्तना किस प्रकारकी होती है ?

समाधान—अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय सम्बन्धी अनुभागकी अपेक्षा सूक्ष्मसाम्परा-यिकका प्रथम समय सम्बन्धी अनुभाग अनन्तगुणा हीन होता है। उसके द्वितीय समयमें वही अनुभाग काण्डकघातके बिना अनन्तगुणा हीन होता है। पुनः घात करनेके बाद शेष रहा वही अनुभाग तीसरे समयमें अनन्तगुणाहीन होता है इसप्रकार सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयतक जानना चाहिये। इसीका नाम अनुसमयापवर्तनाघात है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाम। एसो अणुभागखंडयघादो त्ति किण्ण वुच्चदे ? ण, पारद्धपढमसमयादो अंतोमुहुत्तेण कालेण जो घादो णिप्पज्जदि सो अणुभागखंडयघादो णाम, जो पुण उक्कीरणकालेण विणा एगसमएणेव पददि सा अणुसमओवट्टणा। अण्णं च, अणुसमओवट्टणाए णियमेण अणंता भागा हम्मंति, अणुभागखंडयघादे पुण णत्थि एसो णियमो, छव्विहहाणीए खंडयघादुवलंभादो।

अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४२ ॥

खीणकसायकालब्भंतरे जदि वि अंतराइयअणुभागो अणुसमयओवट्टणाए घादं पत्तो तो वि एसो अणंतगुणो, सुहुम-बादरकिट्टीहिंतो अणंतगुणफद्दयसरूवत्तादो। अणुभागखंडयघादेहि अणुसमओवट्टणाघादेहि च दोण्णं कम्माणं सरिसत्ते संते किमट्ठं घादिदसेसाणुभागाणं विसरिसत्तं ? ण एस दोसो, संसारावत्थाए सव्वत्थ लोभसंजलणाणुभागादो वीरियंतराइयाणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो। थोवाणुभागपयडीए घादिदसेसाणुभागो थोवो होदि, महल्लाणुभागपयडीए घादिदसेसाणुभागो बहुओ चेव होदि।

शंका—इसे अनुभागकाण्डकघात क्यों नहीं कहते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रारम्भ किये गये प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा जो घात निष्पन्न होता है वह अनुभागकाण्डकघात है, परन्तु उत्कीरणकालके बिना एक समय द्वारा ही जो घात होता है वह अनुसमयापवर्तना है। दूसरे, अनुसमयापवर्तनामें नियमसे अनन्त बहुभाग नष्ट होता है, परन्तु अनुभागकाण्डकघातमें यह नियम नहीं है, क्योंकि, छह प्रकारकी हानि द्वारा काण्डकघातकी उपलब्धि होती है।

विशेषार्थ—यहाँ अनुभाग काण्डकघात और अनुसमयापवर्तना इन दोनोंमें क्या अन्तर है इसपर प्रकाश डाला गया है। काण्डक पोरको कहते हैं। कुल अनुभागके हिस्से करके एक एक हिस्सेका फालिक्रमसे अन्तर्मुहूर्तकाल द्वारा अभाव करना अनुभाग काण्डकघात कहलाता है और प्रति समय कुल अनुभागके अनन्त बहुभागका अभाव करना अनुसमयापवर्तना कहलाती है। मुख्यरूपसे यही इन दोनोंमें अन्तर है।

उससे भावकी अपेक्षा अन्तरायकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ४२ ॥

क्षीणकषायके कालके भीतर यद्यपि अन्तराय कर्मका अनुभाग अनुसमयापवर्तनाके द्वारा घातको प्राप्त हुआ है तो भी यह मोहनीयके जघन्य अनुभागसे अनन्तगुणा है, क्योंकि वह मोहनीयकी सूक्ष्म और बादर कृष्टियोंकी अपेक्षा अनन्तगुणे स्पर्धकरूप है।

शंका—अनुभागकाण्डकघात और अनुसमयापवर्तनाघातके द्वारा दोनों कर्मोंमें समानताके होनेपर घात करनेके बाद शेष रहे अनुभागोंमें विसदृशता क्यों पाई जाती है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, संसार अवस्थामें सर्वत्र संज्वलन लोभके अनुभागकी अपेक्षा वीर्यान्तरायका अनुभाग अनन्तगुणा उपलब्ध होता है। स्तोक अनुभागवाली प्रकृतिका घात करनेके बाद शेष रहा अनुभाग स्तोक होता है और महान् अनुभागवाली प्रकृतिका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेण विसरिसत्तं जुज्जदे ।

णाणावरणीय-दंसणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ४३ ॥

कधं दोण्णं पयडीणमणुभागस्स घादिदसेसस्स सरिसत्तं ? ण एस दोसो, संसारावत्थाए समाणाणुभागाणमसुहत्तणेण समाणाणं सरिसत्ताणुभागघादाणं[1] घादिदसेसाणुभागाणं सरिसत्तं पडि विरोहाभावादो । संसारावत्थाए दोण्णं पयडीणमणुभागो सरिसो त्ति कधं णव्वदे ? केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं आसादावेदणीयं वीरियंतराइयं च चत्तारि वि तुल्लाणि त्ति चदुसट्ठिपदियमहादंडयसुत्तादो। सव्वमेदं जुज्जदे किं तु अंतराइयजहण्णाणुभागादो णाण-दंसणावरणाणुभागाणं जहण्णाणमणंतगुणत्तं ण घडदे, संसारावत्थाए अणुभागेण समाणाणं अणुभागखंडय-अणुसमयओवट्टणाघादेण सरिसाणं विसरिसत्तविरोहादो[2] त्ति ? होदि सरिसत्तं जदि सव्वघादित्तणेण वीरियंतराइयं केवलणाण-दंसणावरणीएहिं समाणं, ण च एवं तदो जेण वीरियंतराइयं देसघादिलक्खणं तेण

घात करनेके बाद शेष रहा अनुभाग बहुत ही होता है । इस कारण दोनोंमें विसदृशता बन जाती है ।

उससे भावकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय व दर्शनावरणीयकी जघन्य वेदनायें दोनों ही परस्पर तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ ४३ ॥

शंका--घात करनेके बाद शेष रहे इन दोनों प्रकृतियोंके अनुभागमें समानता किस कारणसे है ?

समाधान--यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, संसार अवस्थामें ये दोनों प्रकृतियाँ समान अनुभागवाली हैं, अशुभ स्वरूपसे समान हैं एवं समान अनुभागघातसे संयुक्त हैं अतः उक्त दोनों प्रकृतियोंके घात करनेके बाद शेष रहे अनुभागोंके समान होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

शंका--संसार अवस्थामें इन दोनों प्रकृतियोंका अनुभाग समान होता है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ।

समाधान--"केवलज्ञानावरणीय, केवलदर्शनावरणीय, असातावेदनीय और वीर्यान्तराय ये चारों ही प्रकृतियाँ तुल्य हैं" इस चौंसठ पदवाले महादण्डकसूत्रसे जाना जाता है ।

शंका--यह सब तो बन जाता है, किन्तु अन्तरायके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरणका जघन्य अनुभाग अनन्तगुणा होता है यह नहीं बनता, क्योंकि, ये तीनों कर्म संसार अवस्थामें अनुभागकी अपेक्षा समान हैं तथा अनुभागकाण्डकघात व अनुसमयापवर्तनाघातकी अपेक्षा भी समान हैं अतएव उनके विसदृश होनेमें विरोध आता है ?

समाधान--यदि वीर्यान्तराय कर्म सर्वघातिरूपसे केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरणके समान होता तो इन तीनोंमें समानता अनिवार्य थी । परन्तु ऐसा है नहीं । अतएव चूँकि वीर्या-

१ अप्रतौ 'त्तरिसणुभागघादाणं' पप्रतौ सरिसत्ताणुभागघादाणं इति पाठः ।

२ अप्रतौ 'विरोहोदि त्ति' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एरंडदंडओ[1] व्व असारत्तादो बहुगं घादिज्जदि, केवलणाण-दंसणावरणीयाणि पुण सव्व-घादीणि वज्जसेलो व्व णिकाचिदत्तादो बहुगं ण घादिज्जंति । तेण अंतराइयजहण्णाणु-भागादो णाणदंसणावरणीयजहण्णाणुभागाणमणंतगुणत्तं जुज्जदे ।

आउववेदणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४४ ॥

मणुसेण वा पंचिंदियतिरिक्खजोणिएण वा परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्ध-मपज्जत्ततिरिक्खाउअमणुभागेण जहण्णं । एदं तेहिंतो अणंतगुणं । कुदो ? णाण-दंसणा-वरणीयअणुभागो व्व खंडयघादेहि अणुसमओवट्टणाघादेहि च खवगसेडीए अपत्ताणु-भागघादत्तादो ।

गोदवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४५ ॥

बादरतेउ-वाउपज्जत्तएसु सव्वविसुद्धेसु हदसमुप्पत्तियकम्मेसु ओव्वट्टिदउच्चागोदेसु गोदाणुभागो जहण्णो जादो[2] । एत्थ जदि वि संखेज्जसहस्साणुभागखंडयाणि पदिदाणि तो वि घादिदसेसाणुभागो आउअजहण्णाणुभागादो अणंतगुणो होदि । 'सव्वुक्कस्सतिरि क्खाउअअणुभागादो सव्वुक्कस्सणीचागोदाणुभागो अणंतगुणो'त्ति चउसट्ठिपदियदंडए

न्तराय कर्म देशघाती लक्षणवाला है इसकारण वह एरण्डदण्डके समान निःसार होनेसे बहुत घाता जाता है, किन्तु केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण सर्वघाती हैं अतः वे वज्रशैलके समान निविडरूपसे बन्धको प्राप्त होनेके कारण बहुत नहीं घाते जाते हैं इसलिये अन्तरायकर्मके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा ज्ञानावरण और दर्शनावरणके जघन्य अनुभागका अनन्तगुणा होना उचित ही है ।

उनसे भावकी अपेक्षा आयुकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ४४ ॥

मनुष्य अथवा पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाले जीवके द्वारा परिवर्तमान मध्यम परिणामोंसे बाँधी गई अपर्याप्त तिर्यंच सम्बन्धी आयु अनुभागकी अपेक्षा जघन्य होती है । यह उपर्युक्त दोनों कर्मोंके जघन्य अनुभागसे अनन्तगुणी है, क्योंकि, जिस प्रकार क्षपकश्रेणिमें ज्ञानावरण और दर्शनावरणका अनुभाग काण्डकघात व अनुसमयापवर्तनाघातके द्वारा घातको प्राप्त होता है उसप्रकार उनके द्वारा आयुकर्मका अनुभाग घातको नहीं प्राप्त होता ।

उससे भावकी अपेक्षा गोत्रकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ४५ ॥

जो सर्वविशुद्ध हैं, हतसमुत्पत्तिककर्मा हैं और जिन्होंने उच्च गोत्रका अपवर्तनाघात किया है ऐसे बादर तेजकायिक व वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें गोत्र कर्मका अनुभाग जघन्य होता है । यहाँ यद्यपि संख्यात हजार अनुभागकाण्डकघात हुए हैं तो भी गोत्रकर्मका घात करनेके बाद शेष रहा अनुभाग आयुके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा है । यतः चतुःषष्ठिपदिक दण्डकमें "सर्वोत्कृष्ट तिर्यगायुके अनुभागसे सर्वोत्कृष्ट नीच गोत्रका अनुभाग अनन्तगुणा है" ऐसा कहा

१ अप्रतौ 'एदंडदंडओ' इति पाठः । २ अप्रतौ 'गोदाणभागो जहण्णेज्जादो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भणिदं। तेण आउसस्स जहण्णाणुभागबंधादो णीचागोदस्स जहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो त्ति णव्वदे। तत्तो णीचागोदजहण्णाणुभागो अणंतगुणो, विट्ठाणसंतकम्मत्तादो।

णामवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४६ ॥

सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तयम्मि हदसमुप्पत्तियकम्मम्मि परियत्तमाणमज्झिमपरिणामम्मि णामकम्माणुभागस्स जहण्णं जादं। एसो अणुभागो णीचागोदजहण्णाणुभागादो अणंतगुणो। कुदो? जसकित्तियादीणं सुहपयडीणमणुभागस्स सव्वत्थ णीचागोदाणुभागादो[1] अणंतगुणस्स विसोहीए घादिदाभावादो। अइसंकिलेसं णेदूण सुहपयडीणमणुभागे घादिदे वि ण लाभो अत्थि, संकिलेसेण अजसकित्तियादिअसुहपयडीणमणुभागस्स वुड्ढिदंसणादो। परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेहि सुहासुहपयडीणमणुभागमहल्लवड्ढि-हाणीणमणिमित्तेहि परिणदस्स तेण सामित्तं दिण्णं। तदो बहुवड्ढि-हाणीणमभावादो णामवेयणाभावो अणंतगुणो त्ति सिद्धं।

वेदणीयवेदणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ४७ ॥

वेदणीयाणुभागो खवगसेडीए संखेज्जसहस्सअणुभागखंडयघादेहि घादं पत्तो त्ति

गया है, अतः इससे जाना जाता है कि आयुके जघन्य अनुभागबन्धकी अपेक्षा नीचगोत्रका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है। उससे नीचगोत्रका जघन्य अनुभाग अनन्तगुणा है, क्योंकि, वह द्विःस्थान सत्कर्मरूप है।

उससे भावकी अपेक्षा नाम कर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ४६ ॥

हतसमुत्पत्तिकर्मा और परिवर्तमान मध्यम परिणामोंसे संयुक्त जो सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्त जीव है उसके नाम कर्मका अनुभाग जघन्य होता है। यह अनुभाग नीचगोत्रके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा होता है, क्योंकि, सर्वत्र नीचगोत्रके अनुभागसे अनन्तगुणा जो यशःकीर्ति आदि शुभ प्रकृतियोंका अनुभाग होता है उसका विशुद्धिके द्वारा घात नहीं होता। अति संक्लेशको प्राप्त कराकर शुभ प्रकृतियोंके अनुभागका घात करानेपर भी कोई लाभ नहीं है, क्योंकि, संक्लेशसे अयशःकीर्ति आदि अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागमें वृद्धि देखी जाती है। इसीलिये जो परिवर्तमान मध्यम परिणाम शुभाशुभ प्रकृतियोंके अनुभागकी महान् वृद्धि व हानिमें निमित्त नहीं पड़ते उनसे परिणत हुए जीवको उसका स्वामी बतलाया है। अतएव बहुत वृद्धि व हानिका अभाव होनेसे नाम कर्मकी वेदना भावतः गोत्रकर्मकी अपेक्षा अनन्तगुणी होती है, यह सिद्ध होता है।

उससे भावकी अपेक्षा वेदनीय कर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ४७ ॥

शंका—यतः वेदनीय कर्मका अनुभाग क्षपकश्रेणिमें संख्यात हजार अनुभागकाण्डकघातोंके

१ अप्रतौ 'णीचागोदाणुवलंभादो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चिराणाणुभागादो अणंतगुणहीणो अजोगि[1]चरिमसमए एगणिसेयमवलंबिय ट्ठिदो कधं णामाणुभागादो अप[2]त्तखवगसेडिघादादो संसारिजीवखंडयघादेहि सगुकस्सं पेक्खिदूण अणंतगुणहीणत्तमावण्णादो अणंतगुणो होज्ज? अण्णं च, वेदणीयउक्कस्साणुभागादो असादसण्णिदादो संसारावत्थाए जसकित्तिउक्कस्साणुभागो अणंतगुणो, सो कधं संसारिखंडयघादेहि खवगसेडिम्मि घादं पत्तअसादावेदणीयाणुभागादो अणंतगुणहीणो कीरदे? ण एस दोसो, ण केवलमकसायपरिणामो चेव अणुभागघादस्स कारणं, किं तु पयडिगयसत्तिसव्वपेक्खो परिणामो अणुभागघादस्स कारणं। तत्थ वि पहाणमंतरंगकारणं, तम्हि उक्कस्से संते बहिरंगकारणे थोवे वि बहुअणुभागघाददंसणादो, अंतरंगकारणे थोवे संते बहिरंगकारणे बहुए संते वि बहुअणुभागघादाणुवलंभादो। तदो णामाणुभागघादअंतरंगकारणादो वेदणीयाणुभागघादअंतरंगकारणमणंतगुणहीणमिदि णामजहण्णाणुभागादो वेदणीयजहण्णाणुभागस्स अणंतगुणत्तं जुज्जदे। एवं जहण्णअप्पाबहुअं समत्तं।

उक्कस्सपदेण सव्वत्थोवा आउववेयणा भावदो उक्कस्सिया ॥ ४८ ॥

कुदो? भवधारणमेत्तकज्जकारित्तादो।

द्वारा घातको प्राप्त हो चुका है इसलिए जो चिरन्तन अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणाहीन होता हुआ अयोगिकेवलीके अन्तिम समयमें एक निषेकका अवलम्बन लेकर स्थित है वह भला जो क्षपकश्रेणिमें घातको नहीं प्राप्त हुआ है और जो संसारी जीवोंके काण्डकघातोंके द्वारा अपने उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणाहीन है, ऐसे नामकर्मके जघन्य अनुभागसे अनन्तगुणा कैसे हो सकता है? दूसरे, संसार अवस्थामें यशःकीर्तिका उत्कृष्ट अनुभाग असात संज्ञावाले वेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागसे अनन्तगुणा होता है ऐसी अवस्थामें वह क्षपकश्रेणिमें संसारी जीवोंके काण्डकघातोंके द्वारा घातको प्राप्त हुए असातावेदनीयके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणाहीन कैसे किया जा सकता है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, केवल अकषाय परिणाम ही अनुभागघातका कारण नहीं है, किन्तु प्रकृतिगत शक्तिकी अपेक्षा रखनेवाला परिणाम अनुभागघातका कारण है। उसमें भी अन्तरंग कारण प्रधान है, उसके उत्कृष्ट होनेपर बहिरंग कारणके स्तोक रहनेपर भी अनुभाग घात बहुत देखा जाता है। तथा अन्तरंग कारणके स्तोक होनेपर बहिरंग कारणके बहुत होते हुए भी अनुभागघात बहुत नहीं उपलब्ध होता। यतः नामकर्मसम्बन्धी अनुभागके घातके अन्तरंग कारणकी अपेक्षा वेदनीय सम्बन्धी अनुभागके घातका अन्तरंग कारण अनन्तगुणाहीन है अतः नामकर्मके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा वेदनीयके जघन्य अनुभागका अनन्तगुणा होना उचित ही है

इस प्रकार जघन्य अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

उत्कृष्ट पदका अवलम्बन लेकर भावकी अपेक्षा आयु कर्मकी उत्कृष्ट वेदना सबसे स्तोक है ॥ ४८ ॥

क्यों कि वह भवधारण मात्र कार्यको करनेवाली है।

१ अप्रतौ 'अजागे' इति पाठः। २ अप्रतौ 'अपज्जत्त' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो उक्कस्सियाओ तिण्णि वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ४९ ॥

केवलणाण-दंसणाणं समाणत्तणेण तदावरणाणुभागस्स वि होदु णाम समाणत्तं, किं तु अंतराइयाणुभागस्स ण समाणत्तं जुज्जदे; केवलणाण-दंसण-अणंतवीरियाणं समाणत्ताभावादो त्ति ? ण एस दोसो, केवलणाण-दंसण-अणंतवीरियाणं समाणत्तब्भुवगमादो। कुदो समाणत्तं णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो। ण च आवारयसत्तीए समाणाए संतीए तदावरणिज्जाणं विसरिसत्तं जुज्जदे, विरोहादो। कधं पुण आउअउक्कस्साणुभागादो अणंतगुणत्तं ? ण, अंतरंग-बहिरंगपडिबद्धाणंतकज्जुवलंभादो।

मोहणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ॥ ५० ॥

कुदो ? साभावियादो। ण च सहावो जुत्तिगोयरो, अग्गी दहणो वि संमारणमिच्चादिसु जुत्तीए अणुवलंभादो।

णामा-गोदवेयणाओ भावदो उक्कस्सियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ५१ ॥

भावकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तरायकी उत्कृष्ट वेदनायें तीनों ही तुल्य होकर आयुकर्मकी उत्कृष्ट वेदनासे अनन्तगुणी हैं ॥ ४९ ॥

शंका—यतः केवलज्ञान और केवलदर्शन दोनों ही समान हैं अतः केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरणके अनुभागमें भी समानता रही आवे किन्तु अन्तरायके अनुभागको इनके समान मानना उचित नहीं है, क्योंकि, केवलज्ञान, केवलदर्शन और अनन्तवीर्यमें समानता नहीं है।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, केवलज्ञान, केवलदर्शन और अनन्तवीर्यमें समानता स्वीकार की गई है।

शंका—उन तीनोंमें समानता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह इसी सूत्रसे जाना जाता है। और आवारकशक्तिके समान होनेपर उनके द्वारा आवरण करने योग्य गुणोंमें असमानता मानना उचित नहीं है, क्योंकि, वैसा माननेमें विरोध आता है।

शंका—तो फिर आयुके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा उनका अनुभाग अनन्तगुणा है यह कैसे सम्भव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अन्तरंग व बहिरंग कारणोंसे प्रतिबद्ध उनके अनन्त कार्य उपलब्ध होते हैं, इससे ज्ञात होता है कि आयुके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा उनका अनुभाग अनन्तगुणा है।

उससे भावकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है ॥ ५० ॥

कारण कि ऐसा स्वभाव है और स्वभाव युक्तिका विषय नहीं होता, क्योंकि, अग्नि दाहजनक होकर भी मृत्युदायक है इत्यादिमें कोई युक्ति नहीं पाई जाती।

उनसे भावकी अपेक्षा नाम व गोत्रकी उत्कृष्ट वेदनायें दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ ५१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुदो ? सुहपयडित्तादो । असुहपयडिअणुभागादो सुहपयडीणमणुभागो किमट्ठमणंतगुणो ? ण, साभावियादो । न हि स्वभावाः परपर्यनुयोगार्हाः ।

वेदणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ॥ ५२ ॥

जसकित्ति-उच्चागोदेहिंतो सादावेदणीयस्स पसत्थतमत्तादो ।

एवमुक्कस्साणुभागप्पाबहुगं समत्तं ।

जहण्णुक्कस्सपदेण सव्वत्थोवा मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया ॥ ५३ ॥

सुगमं ।

अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ५४ ॥

सुगमं ।

णाणावरणीय-दंसणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ५५ ॥

सुगमं ।

आउअवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ५६ ॥

सुगमं ।

क्योंकि, ये दोनों शुभ प्रकृति हैं ।

शंका—अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागसे शुभ प्रकृतियोंका अनुभाग अनन्तगुणा क्यों है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, वैसा स्वभाव है, और स्वभाव प्रश्नके विषय नहीं हुआ करते ।

उनसे भावकी अपेक्षा वेदनीयकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है ॥ ५२ ॥

कारण कि यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी अपेक्षा सातावेदनीय अतिशय प्रशस्त है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट अनुभाग अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

जघन्य-उत्कृष्टपदसे भावकी अपेक्षा मोहनीयकी जघन्य वेदना सबसे स्तोक है ॥ ५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा अन्तरायकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ५४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी जघन्य वेदनायें दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ ५५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उनसे भावकी अपेक्षा आयुकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ५६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णामवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ५७ ॥

गोदवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ५८ ॥

सुगमं ।

वेदणीयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ॥ ५९ ॥

सुगमं ।

आउअवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ॥ ६० ॥

सुगमं ।

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो उक्कस्सिया तिण्णि वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ६१ ॥

सुगमं ।

मोहणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ॥ ६२ ॥

सुगमं ।

णामा-गोदवेयणाओ भावदो उक्कस्सियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ॥ ६३ ॥

सुगमं ।

उससे भावकी अपेक्षा नामकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ५७ ॥

उससे भावकी अपेक्षा गोत्रकर्मकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥ ५८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा वेदनीयकी जघन्य वेदना अनन्तगुणी है ॥५९॥

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा आयुकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है ॥ ६० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तरायकी उत्कृष्ट वेदनायें तीनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ ६१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उनसे भावकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है ॥ ६२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उससे भावकी अपेक्षा नाम व गोत्रकी उत्कृष्ट वेदनायें दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ ६३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ॥ ६४ ॥

सुगमं ।

एवं जहण्णुक्कस्सप्पाबहुअं समत्तं ।

संपहि मूलपयडीओ अस्सिदूण जहण्णुक्कस्सप्पाबहुअपरूवणं करिय उत्तरपयडीओ अस्सिदूण अणुभागअप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

सादं जसुच्च-दे-कं ते-आ-वे-मणु अणंतगुणहीणा ।
ओ-मिच्छ-के-असादं वीरिय-अणंताणु-संजलणा ॥ १ ॥

'सादं' इति वुत्ते सादावेदणीयं घेत्तव्वं । 'जस' इदि वुत्ते जसकित्ती गेज्झा । कधं णामेगदेसेण णामिल्लविसयसंपच्चओ ? ण, देव-भामा-सेणसद्देहिंतो बलदेव-सच्चभामा-भीमसेणादिसु संपच्चयदंसणादो । ण च लोगववहारो चप्पलओ, ववहारिज्जमाणस्स चप्पलत्ताणुववत्तीदो । 'उच्च' इदि वुत्ते उच्चागोदं घेत्तव्वं । एत्थ विरामो किमट्ठं कदो ? जसकित्तिउच्चागोदाणमणुभागो समाणो त्ति जाणावणट्ठं । 'दे' इदि वुत्ते देवगदी घेत्तव्वा । 'कं'

उनसे भावकी अपेक्षा वेदनीयकी उत्कृष्ट वेदना अनन्तगुणी है ॥ ६४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसप्रकार जघन्य-उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

अब मूल प्रकृतियोंके आश्रयसे जघन्य-उत्कृष्ट अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करके उत्तर प्रकृतियोंके आश्रयसे अनुभागके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनेके लिये उत्तर सूत्र कहते हैं—

सातावेदनीय, यशःकीर्ति व उच्चगोत्र ये दो प्रकृतियाँ, देवगति, कार्मण शरीर, तैजस शरीर, आहारक शरीर, वैक्रियिक शरीर और मनुष्यगति ये प्रकृतियाँ उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हीन हैं । औदारिक शरीर, मिथ्यात्व, केवलज्ञानावरण–केवलदर्शनावरण–असातावेदनीय व वीर्यान्तराय ये चार प्रकृतियाँ, अनन्तानुबन्धिचतुष्टय और संज्वलनचतुष्टय ये प्रकृतियाँ उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ १ ॥

'सादं' ऐसा कहनेपर सातावेदनीयका ग्रहण करना चाहिये । 'जस' कहनसे यशःकीर्तिका ग्रहण करना चाहिये ।

शंका—नामके एक देशसे नामवाली वस्तुका बोध कैसे हो सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि देव, भामा व सेन शब्दोंसे क्रमशः बलदेव, सत्यभामा व भीमसेनका प्रत्यय होता हुआ देखा जाता है । यदि कहा जाय कि लोकव्यवहार चपल होता है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि, व्यवहारकी विषयभूत वस्तुकी चपलता नहीं बन सकती ।

'उच्च' ऐसा कहनेपर उच्चगोत्रका ग्रहण करना चाहिये ।

शंका—यहाँपर विराम किसलिये किया गया है ?

समाधान—यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका अनुभाग समान है, यह जतलानेके लिये यहाँ विराम किया गया है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इदि वुत्ते कम्मइयसरीरं घेत्तव्वं। 'ते' इदि भणिदे तेयासरीरस्स गहणं। 'आ' इदि वुत्ते आहारसरीरस्स गहणं। 'वे' इदि वुत्ते वेउव्वियसरीरस्स गहणं। 'मणु' णिद्देसो मणुसगदिगहणट्ठो। अणंतगुणहीणाओ एदाओ उत्तसव्वपयडीओ अण्णोण्णं पेक्खिदूण जहाकमेण अणंतगुणहीणाओ। एसो 'अणंतगुणहीण' णिद्देसो उवरि वि [1]मंडूगुप्पदेण अणुवट्टदे, कत्थ वि विरामादो। 'ओ' णिद्देसो ओरालियसरीरगहणट्ठो। 'मिच्छा' णिद्देसो मिच्छत्तकम्मगहणणिमित्तो। 'के' त्ति णिद्देसो केवलणाणावरणीय-केवलदंसणावरणीयाणं गहणणिमित्तो। 'असाद' णिद्देसो असादावेदणीयगहणट्ठो। 'वीरिय' णिद्देसो वीरियंतराइयगहण णिमित्तो। एदासिं चदुण्णं पयडीणमणुभागो सरिसो। एत्थ अणंतगुणहीणाणुवुत्तीए अभावादो। तदणणुवुत्ती[2] वि कुदो णव्वदे? एदस्स गाहासुत्तस्स विवरणभावेण रचिद-उवरिमचुण्णिसुत्तादो। 'अणंताणु' त्ति णिद्देसो अणंताणुबंधिचउक्कगहणट्ठो। एत्थ लोभाणुभागे अणंतगुणहीणत्तमणुवट्टदे[3] णोवरिमेसु। तेसु वि लोभादो माया विसेसहीणा कोधो विसेसहीणो माणो विसेसहीणो त्ति उवरिमसुत्ते परूविज्जमाणत्तादो। [4]'संजलणा'

'दे' ऐसा कहनेसे देवगतिका ग्रहण करना चाहिये। 'कं' ऐसा कहनेपर कार्मण शरीरका ग्रहण करना चाहिये। 'ते' ऐसा कहनेपर तैजस शरीरका ग्रहण करना चाहिये। 'आ' ऐसा कहनेपर आहारक शरीरका ग्रहण करना चाहिये। 'वे' ऐसा कहनेपर वैक्रियिक शरीरका ग्रहण करना चाहिये। 'मणु' पदका निर्देश मनुष्यगतिका ग्रहण करनेके लिये किया गया है। ये उपर्युक्त सब प्रकृतियाँ उत्तरोत्तर एक दूसरेकी अपेक्षा क्रमसे अनन्तगुणी हीन हैं। यह अनन्तगुणहीन पदका निर्देश मेंढक उत्पतन न्यायसे आगे भी अनुवृत्त होता है, क्योंकि, कहींपर विराम देखा जाता है। 'ओ' पदका निर्देश औदारिक शरीरका ग्रहण करनेके लिये किया है।

'मिच्छा' यह निर्देश मिथ्यात्व कर्मका ग्रहण करनेके निमित्त है। 'के' पदका निर्देश केवल ज्ञानावनण व केवलदर्शनावरणका ग्रहण करनेके लिये किया है। 'असाद' पदका निर्देश असाता वेदनीयका ग्रहण करनेके लिये है। 'वीरिय' पदका निर्देश वीर्यान्तरायका ग्रहण करनेके निमित्त है। इन चार प्रकृतियोंका अनुभाग समान है क्योंकि, यहाँ 'अनन्तगुणहीनता' की अनुवृत्तिका अभाव है।

शंका—उसकी अननुवृत्तिका भी परिज्ञान किस प्रमाणसे होता है?

समाधान—इस गाथासूत्रके विवरणरूपसे रचे गये आगेके चूर्णिसूत्रसे उसका परिज्ञान होता है।

'अणंताणु' पदका निर्देश अनन्तानुबन्धिचतुष्टयका ग्रहण करनेके लिये है। यहाँ लोभके अनुभागमें अनन्तगुणहीन पदकी अनुवृत्ति होती है। आगेकी कषायोंमें इसकी अनुवृत्ति नहीं होती। उनमें भी लोभसे माया विशेष हीन है, इससे क्रोध विशेष हीन है, इससे मान विशेष हीन है

१ प्रतिषु 'मंडूगप्पुदेण' इति पाठः। २ अप्रतौ 'तदणाणुवुत्ती' इति पाठः ३ प्रतिषु णोवरिमसुत्तेसु इति पाठः ४ अप्रतौ-त्तादो ''' त्ति उत्ते इति पाठः। मप्रतौ-त्तादो संजवा त्ति उत्ते इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्ति उत्ते चदुण्हं संजलणाणं गहणं। तत्थ लोभसंजलणाए अणंतगुणहीणाहियारो अणुवट्टदे, ण उवरिमेसु। कुदो णव्वदे ? उवरि भण्णमाणसुत्तादो। एत्थ वि माया-कोध-माणाणुभागाणं कमेण विसेसहीणत्तं वत्तव्वं।

(अट्ठाभिणि-परिभोगे चक्खू तिण्णि तिय पंचणोकसाया।
णिद्दाणिद्दा पयलापयला णिद्दा य पयला य ॥ २ ॥)

एदस्स विदियगाहासुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—'अट्ठ' इदि वुत्ते अट्ठकसायाणं गहणं। तत्थ पच्चक्खाणावरणीयाणं लोभे जेण अणंतगुणहीणाहियारो अणुवट्टदे तेण माणसंजलणाणुभागादो पच्चक्खाणावरणीयलोभाणुभागो अणंतगुणहीणो। माया विसेसहीणा कोधो विसेसहीणो माणो विसेसहीणो पयडिविसेसेण। कुदो ? अणंतगुणहीणअहियाराणणुवुत्तीदो। अपच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंतगुणहीणो, तत्थ तदणुवुत्तीदो। उवरि [वि–] सेसहीणदा, तदणणुवुत्तीदो। कधं सव्वमिदं णव्वदे ? उवरि भण्णमाण-

---

इसप्रकार आगेके सूत्रोंमें उसकी प्ररूपणा की जानेवाली है। 'संजलणा' ऐसा कहनेपर चार संज्वलन कषायोंका ग्रहण किया है। उनमेंसे संज्वलन लोभमें अनन्तगुणहीन पदके अधिकारकी अनुवृत्ति होती है, आगेकी कषायोंमें नहीं होती।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—यह आगे कहे जानेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

यहाँ भी माया, क्रोध और मानके अनुभागोंमें क्रमशः विशेषहीनताका कथन करना चाहिये।

आठ कषाय अर्थात् चार प्रत्याख्यानावरण और चार अप्रत्याख्यानावरण, आभिनिबोधिक ज्ञानावरण और परिभोगान्तराय ये दो, चक्षुदर्शनावरण, तीन त्रिक अर्थात् श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण और भोगान्तराय ये तीन प्रकृतियाँ, अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तराय ये तीन प्रकृतियाँ, मनःपर्ययज्ञानावरण, स्त्यानगृद्धि और दानान्तराय ये तीन प्रकृतियाँ, पाँच नोकषाय अर्थात् नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्सा, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला निद्रा और प्रचला ये प्रकृतियाँ क्रमशः उत्तरोत्तर अनन्तगुणहीन है ॥ २ ॥

इस द्वितीय गाथासूत्रका अर्थ कहते हैं। यथा 'अट्ठ' ऐसा कहनेपर आठ कषायोंका ग्रहण किया गया है। उनमेंसे प्रत्याख्यानावरण लोभमें चूँकि अनन्तगुणहीन अधिकारकी अनुवृत्ति आती है अतः संज्वलनमानके अनुभागसे प्रत्याख्यानावरण लोभका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है। उससे प्रकृतिविशेष होनेके कारण माया विशेष हीन है, उससे क्रोध विशेष हीन है, उससे मान विशेष हीन है, क्यों कि इनमें अनन्तगुणहीन अधिकारकी अनुवृत्ति नहीं होती। उससे अप्रत्याख्यानावरण लोभ अनन्तगुणाहीन है, क्योंकि, उसमें अनन्तगुणहीन पदकी अनुवृत्ति होती है। आगे माया आदि क्रमशः विशेष हीन हैं, क्योंकि, उनमें अनन्तगुणहीन पदकी अनुवृत्ति नहीं होती।

शंका—यह सब किस प्रमाणसे जाना जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चुण्णिसुत्तादो । 'आभिणि' त्ति वुत्ते आभिणिबोहियणाणावरणीयस्स गहणं । 'परिभोगे' त्ति वुत्ते परिभोगंतराइयस्स गहणं । एदाणि दो वि अण्णोण्णं तुल्लाणि होदूण पुव्विल्लाणुभागादो अणंतगुणहीणाणि । कधं तुल्लत्तं णव्वदे ? परमगुरूवएसादो । 'चक्खू' इदि वुत्ते चक्खुदंसणावरणीयस्स गहणं । 'तिण्णि' त्ति वुत्ते सुदणाणावरणीय-अचक्खुदंसणावरणीय-भोगंतराइयाणं अण्णोण्णं पेक्खिदूण अणुभागेण समाणाणं गहणं । कधमेदेसिं तुल्लत्तं णव्वदे ? ण, आइरियोवदेसादो । तेण एत्थ अणंतगुणहीणाहियारो पादेक्कं ण संबज्झदे किं तु समुदायम्मि । 'तिय' इदि वुत्ते ओहिणाणावरणीय-ओहिदंसणावरणीय-लाहंतराइयाणं अणुभागं पेक्खिदूण अण्णोण्णेण समाणाणं गहणं । कधं समाणत्तं णव्वदे ? उवरि भण्णमाणचुण्णिसुत्तादो । मणपज्जवणाणावरणीय-थीणगिद्धि-दाणंतराइयाणं अणुभागेण अण्णोण्णं तुल्लाणं 'तिण्णि तिय' णिद्देसेणेव गहणं, अन्यथा त्रि-त्रिकत्वानुपपत्तेः । एत्थ वि अणंतगुणहीणाहियारो समुदाए अणुवट्टावेदव्वो । 'पंच णोकसाया' इदि वुत्ते पंचण्णं[1] णोक-

समाधान—आगे कहे जानेवाले चूर्णिसूत्रसे जाना जाता है ।

'आभिणि' ऐसा कहनेपर आभिनिबोधिक ज्ञानावरणका ग्रहण होता है । 'परिभोग' कहनेपर परिभोगान्तरायका ग्रहण होता है । ये दोनों ही परस्पर समान होकर पूर्वके अनुभागसे अनन्तगुणे हीन हैं ।

शंका—इनकी समानताका परिज्ञान किस प्रमाणसे होता है ?

समाधान—उसका परिज्ञान परमगुरुके उपदेशसे होता है ।

'चक्खू' ऐसा कहनेपर चक्षुदर्शनावरणीयका ग्रहण होता है । 'तिण्णि' पदके निर्देशसे एक दूसरेको देखते हुए अनुभागकी अपेक्षा समान श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण और भोगान्तरायका ग्रहण होता है ।

शंका—इनकी समानता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वह आचार्योंके उपदेशसे जानी जाती है ।

इस कारण इनमेंसे प्रत्येकमें अनन्तगुणहीन पदके अधिकारका सम्बन्ध नहीं है, किन्तु समुदायमें है । 'तिय' ऐसा कहनेपर अनुभागकी अपेक्षा परस्पर समान अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तरायका ग्रहण होता है ।

शंका—यह समानता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान—वह आगे कहे जानेवाले चूर्णिसूत्रसे जानी जाती है ।

परस्पर अनुभागकी अपेक्षा समानताको प्राप्त हुईं मनःपर्ययज्ञानावरणीय, स्त्यानगृद्धि और दानान्तराय इन तीन प्रकृतियोंका भी ग्रहण 'तिण्णतिय' पदके निर्देशसे ही होता है, क्योंकि, इसके बिना तीन त्रिक घटित नहीं होते । यहाँपर भी अनन्तगुणहीन पदके अधिकारकी अनुवृत्ति समुदायमें ही करानी चाहिये । 'पंच णोकसाया' ऐसा कहनेपर पाँच नोकषायोंका ग्रहण होता है ।

१ प्रतिषु पंचण्णं कसायाणं णोकसा—इति पाठः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सायाणं गहणं । एत्थ अणंतगुणहीणाहियारो पादेक्कमणुवट्टावेदव्वो । तं जहा–णवुंसयवेदो अणंतगुणहीणो । अरदी अणंतगुणहीणा । सोगो अणंतगुणहीणो । भयमणंतगुणहीणं । दुगुंछा अणंतगुणहीणा त्ति । 'णिद्दाणिद्दा पयलापयला णिद्दा य पयला य' एदाओ पयडीओ कमेण अणंतगुणहीणाओ, पादेक्कमणंतगुणहीणाहियारस्स संबंधादो ।

अजसो णीचागोदं णिरय-तिरिक्खगइ इत्थि पुरिसो य ।
रदि-हस्सं देवाऊ णिरयाऊ मणुय-तिरिक्खाऊ ॥ ३ ॥

एदिस्से सुत्तत्तदियगाहाए अत्थो वुच्चदे । तं जहा—'अजसो णीचागोदं'इदि वुत्ते अजसकित्तिणीचागोदाणमणुभागेण समाणाणं अणंतगुणहीणाहियारेण समुदाएण बज्झमाणाणं गहणं । 'णिरय'इदि वुत्ते णिरयगदी घेत्तव्वा । 'तिरिक्खगइ-इत्थिवेद-पुरिसवेद-रदि हस्स-देवाउ-णिरयाउ-मणुस्साउ-तिरिक्खाऊ जहासंखाए अणंतगुणहीणा त्ति घेत्तव्वा ।

एदाहि तीहि गाहाहि परूविदचउसट्ठिपदियउक्कस्साणुभागमहादंडयअप्पाबहुगस्स मंदमेहाविजणाणुग्गहाय अत्थपरूवणट्ठमुवरिमसुत्तं भणदि—

एत्तो उक्कस्सओ चउसट्ठिपदियो महादंडओ कायव्वो भवदि ॥६५॥

यहाँ अनन्तगुणहीन पदके अधिकारकी अनुवृत्ति प्रत्येकमें करानी चाहिये । यथा—नपुंसक वेद अनन्तगुणा हीन है । उससे अरति अनन्तगुणी हीन है । उससे शोक अनन्तगुणा हीन है । उससे भय अनन्तगुणा हीन है । उससे जुगुप्सा अनन्तगुणी हीन है । निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, निद्रा और प्रचला ये प्रकृतियाँ क्रमशः उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हीन हैं, क्योंकि, अनन्तगुणहीन पदके अधिकारका सम्बन्ध इनमेंसे प्रत्येकमें है ।

अयशःकीर्ति और नीचगोत्र ये दो, नरकगति, तिर्यग्गति, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, रति, हास्य, देवायु, नारकायु, मनुष्यायु और तिर्यगायु ये प्रकृतियाँ अनुभागकी अपेक्षा उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ३ ॥

इस तृतीय गाथासूत्रका अर्थ कहते हैं । यथा—'अजसो णीचागोदं' ऐसा कहनेपर अनुभागकी अपेक्षा समान और अनन्तगुणहीन पदके अधिकारकी अपेक्षा समुदायरूपसे बँधनेवाली अयशःकीर्ति और नीचगोत्र प्रकृतियोंका ग्रहण होता है । 'णिरय' इस पदसे नरकगतिका ग्रहण करना चाहिए । तिर्यग्गति, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, रति, हास्य, देवायु, नरकायु, मनुष्यायु और तिर्यगायु ये प्रकृतियाँ यथाक्रमसे अनन्तगुणी हीन हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

इन तीन गाथाओं द्वारा कहे गए चौंसठ पदवाले उत्कृष्ट अनुभागके अल्पबहुत्व सम्बन्धी महादण्डकका मन्दबुद्धि शिष्योंका अनुग्रह करनेवाले अर्थका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

यहाँसे आगे चौंसठ पदवाला उत्कृष्ट महादण्डक करना चाहिये ॥ ६५ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्ण-उक्कस्स-जहण्णुक्कस्सभेदेण तिवियप्पे अप्पाबहुए परूविदूण समत्ते किमट्ठं चउसट्ठिपदियमहादंडओ वुच्चदे ? ण एस दोसो, पुव्विल्लमूलपयडिअप्पाबहुगं जेण देसामासियं तेण तमज्ज वि ण समत्तं। तदो तेणामासिदउत्तरपयडिउक्कस्स-जहण्णाणुभागअप्पाबहुगं भणिदूण तं समाणणट्ठं[1]मिदं वुच्चदे।

सव्वतिव्वाणुभागं सादावेदणीयं ॥ ६६ ॥

अइसुहपयडित्तादो सुहुमसांपराइयचरिमसमयतिव्वविसोहीए पबद्धत्तादो संसारसुहहेदुत्तादो वा।

जसगित्ती उच्चागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥६७॥

सादावेदणीयादो एदाणि दो वि कम्माणि सुहत्तणेण सुहुमसांपराइयचरिमसमए बंधभावेण च सरिसाणि होदूण कधं तत्तो अणंतगुणहीणाणि? [ण,] जसगित्ति-उच्चागोदेहिंतो अइसुहसरूवत्तादो। ण च सुहाणं कम्माणं सव्वेसिं समाणत्तं वोत्तुं सक्किज्जदे, तरतमभावेण अण्णत्थ सुहत्तुवलंभादो। जसकित्ति-उच्चागोदाणि सुहाणि त्ति कादूण तक्कारण-

शंका—जघन्य, उत्कृष्ट और जघन्य-उत्कृष्टके भेदसे तीन प्रकारके अल्पबहुत्वका कथन करके उसके समाप्त हो जानेपर फिर चौंसठ पदवाले महादण्डकको किस लिये कहा जाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, पहिलेका मूल प्रकृति अल्पबहुत्व चूँकि देशामर्शक है अतः वह आज भी समाप्त नहीं हुआ है। इस कारण उसके द्वारा आमर्शित उत्तर प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और जघन्य अनुभाग सम्बन्धी अल्पबहुत्वको कहकर उसे समाप्त करनेके लिये उक्त महादण्डक कहा जा रहा है।

सातावेदनीय प्रकृति सर्व तीव्र अनुभागसे संयुक्त है ॥ ६६ ॥

क्योंकि, वह अतिशय शुभ प्रकृति है, अथवा सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें तीव्र विशुद्धिसे उसका बन्ध हुआ है अथवा वह संसार सुखका कारण है।

इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्र ये दोनों ही परस्पर तुल्य होकर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ६७ ॥

शंका—ये दोनों ही कर्म शुभ होनेके कारण तथा सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें बँधनेके कारण सातावेदनीयके समान हैं। ऐसी अवस्थामें उससे अनन्तगुणे हीन कैसे हो सकते हैं ?

समाधान—[नहीं], क्योंकि, यशकीर्ति और उच्चगोत्रकी अपेक्षा सातावेदनीय अतिशय शुभ है। सब शुभकर्म समान ही हों, यह नहीं कहा जा सकता, क्योंकि, अन्यत्र तरतम भावसे शुभपना उपलब्ध होता है। यशःकीर्ति और उच्चगोत्रके शुभ होनेसे उनके कारणभूत कर्म भी शुभ

१ प्रतिषु-णट्ठमिदि वुच्चदे इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कम्माणि वि सुहाणि । सादावेदणीयं पुण अइसुहमुप्पादेदि त्ति सुहतमं । तदो तमणंतगुणमिदि भणिदं ।

देवगदी[1] अणंतगुणहीणा ॥ ६८ ॥

अपुव्वखवगेण चरिमसमयसुहुमसांपराइयविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिणा सगद्धासत्तभागेसु छट्ठभागचरिमसमयट्ठिदेण बद्धत्तादो ।

कम्मइयसरीरमणंतगुणहीणं ॥ ६९ ॥

दोण्णं पि समाणपरिणामेहि बद्धाण कधं विसरिसत्तं जुज्जदे ? ण, जीवविवागिपोग्गलविवागीणं च अणुभागाणं सरिसत्ताणुववत्तीदो । कम्मइयसरीरं पोग्गलविवागी, तप्फलस्स अक्खियस्स उवलंभादो । देवगदी[2] पुण जीवविवागी, तप्फलेण जीवे अणिमादिगुणदंसणादो । तदो जीवविवागिदेवगदिअणुभागादो बहिरंगपोग्गलविवागिकम्मइयसरीराणुभागो अणंतगुणहीणो त्ति सिद्धं । अंतरंग-बहिरंगाणं ण समाणत्तं, लोगे तहाणुवलंभादो ।

तेयासरीरमणंतगुणहीणं ॥ ७० ॥

हैं । परन्तु सातावेदनीय यतः अतिशय सुखको उत्पन्न कराता है अतएव वह शुभतम है । इसी कारण वह उन दोनोंकी अपेक्षा अनन्तगुणा है यह कहा गया है ।

उनसे देवगति अनन्तगुणी हीन है ॥ ६८ ॥

कारण कि अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिककी विशुद्धिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले अपूर्वकरण क्षपकके द्वारा अपने कालके सात भागोंमेंसे छठे भागके अन्तिम समयमें उसका बन्ध होता है ।

उससे कार्मण शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ६९ ॥

शंका—जब कि ये दोनों कर्म समान परिणामोंके द्वारा बांधे जाते हैं तब उनमें विसदृशता कैसे उचित है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, जीवविपाकी और पुद्गलविपाकी प्रकृतियोंके अनुभागोंमें समानता सम्भव नहीं है । कार्मण शरीर पुद्गलविपाकी है, क्योंकि, उसका फल पुद्गलसे अभिन्न उपलब्ध होता है । परन्तु देवगति जीवविपाकी है, क्योंकि, उसके फलसे जीवमें अणिमा, महिमा आदि गुण देखे जाते हैं । इसीलिये जीवविपाकी देवगति के अनुभागकी अपेक्षा बहिरंग पुद्गलविपाकी कार्मण शरीरका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है, यह सिद्ध होता है । यदि कहा जाय कि अन्तरंग और बहिरंगकी समानता है सो भी बात नहीं है, क्योंकि लोकमें वैसा उपलब्ध नही होता ।

उससे तैजस शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ७० ॥

१ प्रतिषु देवगदी णं अणंत—इति पाठः । २ प्रतिषु देवगदीए पुण इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पोग्गलविवागित्तणेण बंधसामित्तेण कम्मइयसरीरेण तेजइयसरीरं समाणं वट्टदे, तदो अणंतगुणहीणत्तं ण घडदि त्ति ? ण, कज्जमहत्तादो कम्मइयसरीराणुभागस्स महत्तसिद्धीदो, तेजइयसरीरकम्मादो तेजइयसरीरस्सेव णिप्फत्ती, कम्मइयसरीरं पुण गंधिल्लपेलियावेंटो व्व सव्वकम्माणमासयभावफलं। तदो तेजइयसरीरेण कीरमाणकज्जादो कम्मइयसरीरेण कीरमाणकज्जमइमहल्लं त्ति तदणुभागस्स अणंतगुणत्तमवगम्मदे।

आहारसरीरमणंतगुणहीणं ॥ ७१ ॥

कुदो एदं णव्वदे ? उव्वेल्लिज्जमाणत्तादो। ण च तिव्वाणुभागो उव्वेल्लिय णिस्संतो कादुं सक्किज्जदे। आहारसरीरं पुण उव्वेल्लिय णिस्संतं कीरमाणमुवलब्भदे। तदो तेजइयसरीराणुभागादो आहारसरीराणुभागो अणंत[1]गुणहीणो त्ति सिद्धं।

वेउव्वियसरीरमणंतगुणहीणं ॥ ७२ ॥

कुदो ? पयडिविसेसेण। को पयडिविसेसो ? आहारसरीरं पेक्खिदूण सत्थभावेण

शंका—चूँकि तैजस शरीर पुद्गलविपाकी होनेकी अपेक्षा व बन्धस्वामित्वकी अपेक्षा कार्मण शरीरके समान है, अतएव उसमें कार्मण शरीरकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीनता घटित नहीं होती ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, कार्यके महत्त्वसे कार्मण शरीरके अनुभागकी भी महानता सिद्ध होती है। तैजस शरीर नामकर्मसे केवल तैजस शरीरकी उत्पत्ति होती है, किन्तु कार्मण शरीर गन्धवाले पेलिया वृत्तके समान सब कर्मोंके आस्रवका कारण है इसलिये तैजस शरीरके द्वारा किये जानेवाले कार्यकी अपेक्षा कार्मण शरीरके द्वारा किया जानेवाला कार्य अतिशय महान् है, अतएव उसका अनुभाग अनन्तगुणा है यह निश्चय होता है।

उससे आहारक शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ७१ ॥

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, वह उद्वेलनाको प्राप्त होनेवाली प्रकृति है। तीव्र अनुभागकी उद्वेलना करके उसे निःसत्त्व करना तो शक्य नहीं है। परन्तु आहारक शरीरकी उद्वेलना करके उसे निःसत्त्व करते हुए देखा जाता है। इस कारण तैजस शरीरके अनुभागकी अपेक्षा आहारक शरीरका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है, यह सिद्ध होता है।

उससे वैक्रियिक शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ७२ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है।

शंका—वह प्रकृतिकी विशेषता क्या है ?

समाधान—आहारक शरीरमें जितनी प्रशस्तता है उसकी अपेक्षा इसमें वह कम है, यही प्रकृति विशेषता है।

१ प्रतिषु 'अणंतगुणो त्ति' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऊणदा। वेउव्वियसरीरमप्पसत्थमिदि कधं णव्वदे ? ण, आहारसरीरस्सेव संजदेसु चेव वेउव्वियसरीरस्स बंधाणुवलंभादो।

मणुसगदी अणंतगुणहीणा ॥ ७३ ॥

कुदो ? अपुव्वखवगविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहीए्ण[1] देवासंजदसम्मादिट्ठिणा पबद्धत्तादो।

ओरालियसरीरमणंतगुणहीणं ॥ ७४ ॥

दोण्णं पयडीणं उक्कस्सबंधस्स एक्कम्हि चेव सामीए संते कधमणुभागं पडि विसरिसत्तं[2] ? ण एस दोसो, पयडिविसेसेण विसरिसत्तुववत्तीदो। को पयडिविसेसो ? जीवविवागि-पोग्गलविवागित्तं। मणुसगदी जीवविवागी, ओरालियसरीरं पोग्गलविवागी। तेण मणुसगदीदो ओरालियसरीरस्स अणंतगुणहीणत्तं सिद्धं।

मिच्छत्तमणंतगुणहीणं ॥ ७५ ॥

सव्वदव्वपज्जायअसद्दहम्मि णिबद्धजीवविवागिमिच्छत्ताणुभागादो पोग्गलविवागि-

शंका—वैक्रियिक शरीर अप्रशस्त है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, जिस प्रकार आहारक शरीरका बन्ध संयत जीवोंके ही होता है उस प्रकार वैक्रियिक शरीरका बन्ध मात्र संयतोंके नहीं उपलब्ध होता। इसीसे उसकी अप्रशस्तता जानी जाती है।

उससे मनुष्यगति अनन्तगुणी हीन है ॥ ७३ ॥

क्योंकि, अपूर्वकरण क्षपककी विशुद्धिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाला असंयत संम्यग्दृष्टि देव उसे बाँधता है।

उससे औदारिक शरीर अनन्तगुणा हीन है ॥ ७४ ॥

शंका - दोनों प्रकृतियोंके उत्कृष्ट बन्धका स्वामी एक ही जीव है फिर इनके अनुभागमें विसदृशता कैसे सम्भव है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, प्रकृतिविशेष होनेके कारण उनमें विसदृशता सम्भव है।

शंका—वह प्रकृतिविशेष क्या है ?

समाधान—जीवविपाकित्व और पुद्गलविपाकित्व ही यहाँ प्रकृतिविशेष है। मनुष्यगति प्रकृति जीवविपाकी है और औदारिक शरीर पुद्गलविपाकी है। इस कारण मनुष्यगतिकी अपेक्षा औदारिक शरीर अनन्तगुणा हीन है, यह सिद्ध होता है।

उससे मिथ्यात्व प्रकृति अनन्तगुणी हीन है ॥ ७५ ॥

शंका—सब द्रव्यों व उनकी पर्यायोंके अश्रद्धानसे सम्बन्ध रखनेवाली जीवविपाकी

१ अप्रतौ 'विसोहीए' इति पाठः। २ अप्रतौ 'सरिसत्तं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओरालियसरीराणुभागो कधमणंतगुणो ? ण च अंतरंगवावदकम्मेहिंतो बहिरंगवावदकम्माणमणुभागेण महल्लत्तं, [1]विरोहादो त्ति ? ण एस दोसो, पयडिविसेसेण अणंतगुणहीणत्ताविरोहादो। को पयडिविसेसो ? ओरालियसरीरमिच्छत्ताणं पसत्थापसत्थत्तं। कधमोरालियसरीरस्स पसत्थत्तं णव्वदे ? मिच्छत्तस्सेव मिच्छाइट्ठिम्हि चेव ओरालियसरीरस्स बंधाणुवलंभादो णव्वदे।

केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं असादवेदणीयं वीरियंतराइयं च चत्तारि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ ७६ ॥

एदासिं चदुण्णं पयडीणमुक्कस्साणुभागस्स मिच्छाइट्ठी सव्वसंकिलिट्ठो मिच्छत्तस्सेव सामी। तदो तत्तो एदासिमणंतगुणहीणत्तं ण जुज्जदे ? ण, पयडिविसेसेण तदुववत्तीदो। कुदो पयडिविसेसो णव्वदे ? मिच्छत्तोदए संते केवलणाणावरणादिसव्वपयडीणं बंध-संत-

मिथ्यात्व प्रकृतिके अनुभागकी अपेक्षा पुद्गलविपाकी औदारिक शरीरका अनुभाग अनन्तगुणा कैसे हो सकता है ? यदि कहा जाय कि अन्तरंगमें प्रवृत्त हुए कर्मोंकी अपेक्षा बहिरंगमें प्रवृत्त हुए कर्म अनुभागकी अपेक्षा महान् होते हैं सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, ऐसा मानने में विरोध आता है।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, प्रकृतिविशेष होनेके कारण औदारिक शरीरकी अपेक्षा मिथ्यात्वके अनन्तगुणे हीन होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

शंका—वह प्रकृतिविशेष क्या है ?

समाधान—औदारिक शरीर प्रशस्त है और मिथ्यात्व अप्रशस्त है, यही यहाँ प्रकृतिविशेष है।

शंका—औदारिक शरीर प्रशस्त है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—जिस प्रकार मिथ्यात्वका बन्ध एक मात्र मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें होता है इस प्रकार औदारिक शरीरका बन्ध केवल वहाँ ही नहीं होता। इसीसे औदारिक शरीरकी प्रशस्तता जानी जाती है।

केवल ज्ञानावरणीय, केवलदर्शनावरणीय, असातावेदनीय और वीर्यान्तराय ये चारों ही प्रकृतियाँ तुल्य होकर उससे अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ७६ ॥

शंका—चूँकि मिथ्यात्वके समान इन चार प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभागका स्वामी सर्वसंक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीव ही होता है, अतएव मिथ्यात्व प्रकृतिकी अपेक्षा ये चार प्रकृतियाँ अनन्तगुणीहीन नहीं बन सकतीं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रकृति विशेष होनेके कारण वे चारों ही प्रकृतियाँ अनन्तगुणी हीन बन जाती हैं।

शंका—इनकी प्रकृतिगत विशेषताका परिज्ञान किस प्रमाणसे होता है ?

समाधान—मिथ्यात्वका उदय होनेपर केवलज्ञानावरणादि सब प्रकृतियोंके बन्ध व सत्त्वका

१ प्रतिषु 'विरोहादि त्ति' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

विणासाभावदंसणादो केवलणाणावरणादीणमुदए संते मिच्छत्तस्स बंध-संतविणासोवलंभादो।

अणंताणुबंधिलोभो अणंतगुणहीणो ॥ ७७ ॥

कुदो ? पयडिविसेसेण । को पयडिविसेसो ? तेहिंतो दुब्बलत्तं । कधं दुब्बलभावो णव्वदे ? सम्मत्तपरिणामेहि विसंजोयणाणुवलंभादो चदुण्णं तदुवलंभादो ।

माया विसेसहीणा ॥ ७८ ॥

कुदो ? पयडिविसेसेण ।

कोधो विसेसहीणो ॥ ७९ ॥

पयडिविसेसेण ।

माणो विसेसहीणो ॥ ८० ॥

पयडिविसेसेण ।

संजलणाए लोभो अणंतगुणहीणो ॥ ८१ ॥

अणंताणुबंधि-संजलणाणं मिच्छाइट्ठिम्हि चेव उक्कस्सबंधे संते अणंताणुभागादो

विनाश नहीं देखा जाता है, परन्तु केवलज्ञानावरणादिकोंके उदयमें मिथ्यात्वके बन्ध व सत्त्वका विनाश उपलब्ध होता है । इसीसे इनकी प्रकृतिगत विशेषताका ज्ञान होता है ।

उनसे अनन्तानुबन्धी लोभ अनन्तगुणा हीन है ॥ ७७ ॥

क्योंकि इसका कारण प्रकृतिगत विशेषता है ।

शंका—वह प्रकृतिगत विशेषता क्या है ?

समाधान—उपर्युक्त चारों प्रकृतियोंकी अपेक्षा इसकी दुर्बलता ही प्रकृतिगत विशेषता है ।

शंका—इसकी दुर्बलता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान—क्योंकि सम्यक्त्व परिणामोंके द्वारा उनका विसंयोजन नहीं उपलब्ध होता, परन्तु इन चारोंका विसंयोजन उपलब्ध होता है, अतएव ज्ञात होता है कि अनन्तानुबन्धी लोभ उन चारोंकी अपेक्षा दुर्बल है ।

उससे अनन्तानुबन्धी माया विशेष हीन है ॥ ७८ ॥

इसका कारण प्रकृतिगत विशेषता है ।

उससे अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेषहीन है ॥ ७९ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे अनन्तानुबन्धी मान विशेषहीन है ॥ ८० ॥

यहाँ भी कारण प्रकृति विशेष ही है ।

उससे संज्वलन लोभ अनन्तगुणा हीन है ॥ ८१ ॥

शंका—जब कि अनन्तानुबन्धी और संज्वलनका उत्कृष्ट बन्ध मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कधं संजलणाणुभागो अणंतगुणहीणो ? पयडिविसेसादो । तं जहा—अणंताणुबंधिचउक्कं सम्मत्त-संजमाणं घादयं, संजलणचदुक्कं पुण चारित्तस्सेव विणासयं । तदो अणंताणुबंधिचउक्कसत्तीदो संजलणचउक्कसत्तीए अप्पयरत्तं णव्वदे । तेण अणंताणुभागादो संजलणाणुभागस्स अणंतगुणहीणत्तं णव्वदे ।

माया विसेसहीणा ॥ ८२ ॥

पयडिविसेसेण ।

कोधो विसेसहीणो ॥ ८३ ॥

पयडिविसेसेण ।

माणो विसेसहीणो ॥ ८४ ॥

पयडिविसेसेण ।

पच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंतगुणहीणो ॥ ८५ ॥

कुदो ? पयडिविसेसेण । कधं पयडिविसेसो णव्वदे ? संजलणचउक्कं जहाक्खादसंजमघादयं पच्चक्खाणावरणीयं पुण सरागसंजमघादयं । तेण पच्चक्खाणादो संजलणाणु-

---

होता है तब अनन्तानुबन्धीके अनुभागकी अपेक्षा संज्वलनका अनुभाग अनन्तगुणा हीन कैसे हो सकता है ?

समाधान—प्रकृतिविशेष होनेके कारण वैसा होना सम्भव है । यथा—अनन्तानुबन्धिचतुष्क सम्यक्त्व और संयमका घातक है, परन्तु संज्वलनचतुष्क केवल चारित्रका ही घात करनेवाला है । इसीसे अनन्तानुबन्धिचतुष्ककी शक्तिकी अपेक्षा संज्वलनचतुष्ककी शक्ति अल्पतर है यह जाना जाता है और इस कारण अनन्तानुबन्धीके अनुभागसे संज्वलनका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है, यह जाना जाता है ।

उससे संज्वलन माया विशेषहीन है ॥ ८२ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे संज्वलन क्रोध विशेष हीन है ॥ ८३ ॥

कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे संज्वलन मान विशेष हीन है ॥ ८४ ॥

कारण प्रकृति की विशेषता है ।

उससे प्रत्याख्यानावरण लोभ अनन्तगुणा हीन है ॥ ८५ ॥

इसका कारण प्रकृतिगत विशेषता है ।

शंका—यह प्रकृतिगत विशेषता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान—संज्वलन चतुष्क यथाख्यात संयमका घातक है, परन्तु प्रत्याख्यानावरणीय सरागसंयमका घातक है । इसीसे प्रत्याख्यानावरणकी अपेक्षा संज्वलनका अनुभाग अतिशय महान् है यह जाना जाता है । दूसरे, प्रत्याख्यानावरणका उदय संयतासंयत गुणस्थान तक होता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भागमहल्लत्तं णव्वदे। किंच, पच्चक्खाणावरणस्स उदओ संजदासंजदगुणट्ठाणं जाव संजलणाणं पुण जाव सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदचरिमसमओ त्ति। उवरिमपरिणामेहिं[1] अणंतगुणेहि वि उदयविणासाणुवलंभादो वा णव्वदे जहा संजलणाणुभागादो पच्चक्खणावरणीयपयडीए अणंतगुणहीणत्तं।

माया विसेसहीणा ॥ ८६ ॥

पयडिविसेसेण। कुदो पयडिविसेसो णव्वदे ? मायाए लोभपुरंगमत्तुवलंभादो।

कोधो विसेसहीणो ॥ ८७ ॥

पयडिविसेसेण। कुदो एसो णव्वदे ? उवसंहरिदकोधमहारिसीणं पि लोभ-मायाणमुदओवलंभादो।

माणो विसेसहीणो ॥ ८८ ॥

कोधपुरंगमत्तदंसणादो।

अपच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंतगुणहीणो ॥ ८९ ॥

परन्तु संज्वलनोंका उदय सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धि संयतके अन्तिम समय तक रहता है। अथवा अनन्तगुण उपरिम परिणामोंके द्वारा संज्वलनके उदयका विनाश नहीं उपलब्ध होता इससे भी जाना जाता है कि संज्वलनके अनुभागकी अपेक्षा प्रत्याख्यानावरणीय प्रकृतिका अनुभाग अनन्त गुणा हीन है।

उससे प्रत्याख्यानावरण माया विशेष हीन है ॥ ८६ ॥

इसका कारण प्रकृतिगत विशेषता है।

शंका—यह प्रकृतिगत विशेषता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान—यतः माया लोभपूर्वक उपलब्ध होती है, अतः उससे प्रकृतिगत विशेषता जानी जाती है।

उससे प्रत्याख्यानावरण क्रोध विशेष हीन है ॥ ८७ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—जिन महर्षियोंने क्रोधका उपसंहार कर लिया है उनके भी लोभ और मायाका उदय उपलब्ध होता है। इससे प्रकृति विशेषका निश्चय होता है।

उससे प्रत्याख्यानावरण मान विशेष हीन है ॥ ८८ ॥

कारण कि वह क्रोधपूर्वक देखा जाता है।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय लोभ अनन्तगुणा हीन है ॥ ८९ ॥

---

१ प्रतिषु—'मेहिंतो अणंत' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुदो ? पयडिमाहप्पेण । तं कधं णव्वदे ? कज्जथोवबहुत्तदंसणादो । तं जहा— संजमासंजमघादयमपच्चक्खाणावरणीयं पच्चक्खाणावरणीयं पुण संजमघादयं । तेण अपच्चक्खाणावरणादो पच्चक्खाणावरणमहल्लत्तं णव्वदे ।

माया विसेसहीणा ॥ ९० ॥

पयडिविसेसेण ।

कोधो विसेसहीणो ॥ ९१ ॥

पयडिविसेसेण ।

माणो विसेसहीणो ॥ ९२ ॥

पयडिविसेसेण ।

आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ ९३ ॥

कुदो ? पयडिविसेसेण । पयडिमाहप्पं कधं णव्वदे ? सव्वघादि-देसघादित्तणेहि । अपच्चक्खाणावरणचदुक्कं सव्वघादि, णिस्सेसदेससंजमघादित्तादो । आभिणिबोहियणाणाव-

इसमें प्रकृतिका-महत्त्व ही कारण है ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—उसका परिज्ञान कार्यके अल्पबहुत्वको देखनेसे होता है। यथा—अप्रत्याख्यानावरणीय संयमासंयमका घातक है, परन्तु प्रत्याख्यानावरणीय संयमका विघातक है। इससे अप्रत्याख्यानावरणकी अपेक्षा प्रत्याख्यानावरणकी महानता जानी जाती है।

उससे अप्रत्याख्यानावरण माया विशेष हीन है ॥ ९० ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरण क्रोध विशेष हीन है ॥ ९१ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरण मान विशेष हीन है ॥ ९२ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणे हीन हैं ॥ ९३ ॥

क्योंकि ये प्रकृति विशेष हैं ।

शंका—प्रकृतिका माहात्म्य किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—उसका परिज्ञान सर्वघाती व देशघाती स्वरूपसे होता है । अप्रत्याख्यानवरण चतुष्क सर्वघाती है, क्योंकि, वह पूर्णतया देशसंयमका घात करता है । परन्तु आभिनिबोधिकज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय देशघाती हैं, क्योंकि, ये दोनों क्रमशः मतिज्ञान और

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

रणीयं परिभोगंतराइयं च देसघादि, मदिणाण-परिभोगाणमेगदेसघादित्तादो । तदो एदेसिं दोण्णं कम्माणमणुभागो अणंतगुणहीणो त्ति सिद्धं ।

चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणहीणं ॥ ६४ ॥

पयडिविसेसेण । एदस्स सत्तीए ऊणत्तं कधं णव्वदे ? किमिदि ण णव्वदे, आभिणिबोहियणाणावरणीय-परिभोगंतराइयाणं[1] व सव्वत्थ खओवसमस्स अणुवलंभादो । ण च थोवेसु चेव जीवेसु खओवसमं गंतूण अणंतजीवरासिं चक्खिदियं सव्वं घाइदूण ट्ठिदस्स चक्खिदियावरणस्स सत्तीए ऊणत्तं, विरोहादो ? ण एस दोसो, आभिणिबोहियणाणावरणीयं जेण पंचिंदियणोइंदियपडिबद्धअसेसघादयं, [चक्खुदंसणावरणीयं पुण] चक्खुदंसणोवजोगमेत्तघादयं, तदो अप्पकज्जकरणादो चक्खुदंसणावरणीयसत्ती थोवेत्ति णव्वदे ।

सुदणाणावरणीयमचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च तिण्णि [वि तुल्लाणि] अणंतगुणहीणाणि ॥ ६५ ॥

परिभोगान्तरायके एक देशका घात करनेवाले हैं । इस कारण इन दोनों कर्मोंका अनुभाग अप्रत्याख्यानावरण मानके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा हीन है, यह सिद्ध होता है ।

उनसे चक्षुदर्शनावरणीय प्रकृति अनन्तगुणी हीन है ॥ ९४ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

शंका—उन दोनोंकी अपेक्षा इसकी शक्ति हीन है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—क्यों नहीं जाना जाता है अर्थात् अवश्य जाना जाता है, क्योंकि, आभिनिबोधिकज्ञानावरणीय और परिभोगान्तरायके समान चक्षुदर्शनावरणीयका सर्वत्र क्षयोपशम नहीं पाया जाता है ।

शंका—चूंकि चक्षुदर्शनावरणका थोड़े ही जीवोंमें क्षयोपशम होता है इसके सिवा अनन्त जीवराशिमें वह पूर्ण रूपसे चक्षुरिन्द्रियका घातक है अतः उसकी शक्ति हीन नहीं हो सकती, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है ?

सामाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय चूँकि स्पर्शनादि पाँच इन्द्रिय और नोइन्द्रियसे सम्बन्ध रखनेवाले सब ज्ञानका घातक है, [परन्तु चक्षुदर्शनावरणीय] केवल चक्षुदर्शनोपयोग मात्रका घातक है, अतः अल्प कार्य करनेके कारण चक्षुदर्शनावरणीयकी शक्ति स्तोक है, यह जाना जाता है ।

श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और भोगान्तराय ये तीनों ही प्रकृतियाँ तुल्य होकर चक्षुदर्शनावरणीयसे अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ९५ ॥

---

१ प्रतिषु राइयाणं च सव्वत्थ इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुदणाणावरणीयं णाम महाविसयं, परोक्खसरूवेण सव्वत्थ परिच्छेदिसुदणाणघायणे वावदत्तादो। सेसदोपयडिअणुभागो वि महल्लो चेव, सुदणाणावरणीयसमाणत्तादो। तदो एदेसिमणुभागेण चक्खुदंसणावरणीयअणुभागादो अणंतगुणहीणेण होदव्वमिदि महाविसयस्स अणुभागो महल्लो होदि, थोवविसयस्स अणुभागो थोवो होदि त्ति एदमत्थं मोत्तूण तो क्खहि एवं घेत्तव्वं। तं जहा—खवगसेडीए देसघादिबंधकरणे जस्स पुव्वमेव अणुभागबंधो देसघादी जादो तस्साणुभागो थोवो। जस्स पच्छा जादो तस्स बहुओ। एदासिं च अणुभागबंधो चक्खुदंसणावरणीयअणुभागबंधादो पुव्वमेव देसघादी जादो। तं जहा—मिच्छाइट्ठिमादिं कादूण जाव अणियट्टिअद्धाए संखेज्जा भागा ताव एदासिमणुभागबंधो सव्वघादी बज्झदि। पुणो तत्थ मणपज्जवणाणावरणीयं दाणंतराइयं च बंधेण देसघादी करेदि। तदो उवरि अंतोमुहुत्तं गंतूण ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाहंतराइयं च तिण्णि वि बंधेण देससादी करेदि। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण सुदणाणावरणीयं अचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च तिण्णि वि बंधेण देसघादी करेदि। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण चक्खुदंसणावरणीयं बंधेण देसघादी करेदि। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च दो वि बंधेण देसघादी करेदि। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण वीरियंतराइयं बंधेण देसघादी करेदि त्ति। तेण चक्खुदंसणावरणीय-

---

श्रुतज्ञानावरणका विषय महान् है, क्योंकि, वह परोक्ष स्वरूपसे सब पदार्थोंको जाननेवाले श्रुतज्ञानके घातनेमें प्रवृत्त है। शेष दो प्रकृतियोंका अनुभाग भी महान् ही है, क्योंकि वह श्रुतज्ञानावरणके अनुभागके ही समान है। इस कारण इनका अनुभाग चक्षुदर्शनावरणीयके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा होना चाहिये, क्योंकि, महान् विषयवाली प्रकृतिका अनुभाग महान् होता है और अल्प विषयवाली प्रकृतिका अनुभाग अल्प होता है। यदि ऐसा है तो इस अर्थको छोड़कर ऐसा ग्रहण करना चाहिये। यथा—क्षपकश्रेणिमें देशघाती बन्धकरणके समय जिसका अनुभाग बन्ध पहिले ही देशघाती हो गया है उसका अनुभाग स्तोक होता है और जिसका अनुभागबन्ध पीछे देशघाती होता है उसका अनुभाग बहुत होता है। इस नियमके अनुसार इन तीन प्रकृतियोंका अनुभागबन्ध चक्षुदर्शनावरणीयके अनुभागबन्धसे पहिले ही देशघाती हो जाता है। यथा—मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरणकालके संख्यात बहुभाग तक इनका अनुभागबन्ध सर्वघाती बँधता है। फिर वहाँ मनःपर्यय ज्ञानावरण और दानान्तरायको बन्धकी अपेक्षा देशघाती करता है। इससे आगे अन्तर्मुहूर्त जाकर अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तराय इन तीनों प्रकृतियोंको बन्धकी अपेक्षा देशघाती करता है। पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और भोगान्तराय इन तीनोंको बन्धकी अपेक्षा देशघाती करता है। पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर चक्षुदर्शनावरणीयको बन्धकी अपेक्षा देशघाती करता है। पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय इन दोनों प्रकृतियोंको बन्धकी अपेक्षा देशघाती करता है। पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर वीर्यान्तरायको बन्धकी अपेक्षा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुभागो एदासिं तिण्णमणुभागादो [1]अणंतगुणो। एसो अत्थो बारसण्णं देसघादि-बंधपयडीणं सव्वत्थ[2] जोजेयव्वो।

ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाहंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ ९६ ॥

कारणं पुव्वं परूविदमिदि णेह परूविज्जदे।

मणपज्जवणाणावरणीयं थीणगिद्धी दाणंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ ९७ ॥

कारणं सुगमं।

णवुंसयवेदो अणंतगुणहीणो ॥ ९८ ॥

णोकसायत्तादो।

अरदी अणंतगुणहीणा ॥ ९९ ॥

कुदो ? पयडिविसेसेण। तं जहा—इट्टावागसण्णिहो णवुंसयवेदोदओ, अरदी पुण अरमणमेत्तुप्पाइया। तेण अणंतगुणहीणा।

देशघाती करता है। इस कारण चक्षुदर्शनावरणीयका अनुभाग इन तीन प्रकृतियोंके अनुभागसे अनन्तगुणा है। इस अर्थकी बारह देशघाती बन्ध प्रकृतियोंके सम्बन्धमें सर्वत्र योजना करनी चाहिये।

उनसे अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तराय, ये तीनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ९६ ॥

इसका कारण पहिले बतला आये हैं इसलिए यहाँ उसका कथन नहीं करते हैं।

उनसे मनःपर्यय ज्ञानावरणीय, स्त्यानगृद्धि और दानान्तराय ये तीनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ ९७ ॥

इसका कारण सुगम है।

उनसे नपुंसकवेद प्रकृति अनन्तगुणी हीन है ॥ ९८ ॥

क्योंकि, वह नोकषाय है।

उससे अरति अनन्तगुणी हीन है ॥ ९९ ॥

क्योंकि, इनमें प्रकृतिगत विशेषता है। यथा—नपुंसक वेदका उदय ईटोंके पाकके समान है, परन्तु अरति तो मात्र नहीं रमनेरूप भावको उत्पन्न करनेवाली है, इस कारण वह नपुंसक वेदकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन है।

---

१ प्रतिषु अणंतगुणहीणो इति पाठः। २ अप्रतौ 'सव्वत्थो' इति पाठः।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सोगो अणंतगुणहीणो ॥ १०० ॥

कुदो ? अरदिपुरंगमत्तादो । कधमरदिपुरंगमत्तं ? अरदीए विणा सोगाणुप्पत्तीए ।

भयमणंतगुणहीणं ॥ १०१ ॥

भयउदयकालादो सोगुदयकालस्स महल्लत्तुवलंभादो । सोगो उक्कस्सेण छम्मास-मेत्तो चेव, भयस्स कालो णेरइएसु तेत्तीससागरोवममेत्तो त्ति भयमणंतगुणं किण्ण जायदे ? ण, णेरइएसु वि भयकालस्स अंतोमुहुत्तस्सेव उवलंभादो ।

दुगुंछा अणंतगुणहीणा ॥ १०२ ॥

पयडिविसेसेण ।

णिद्दाणिद्दा अणंतगुणहीणा ॥ १०३ ॥

कस्स वि जीवस्स कहिं मि उदयदंसणादो ।

पयलापयला अणंतगुणहीणा ॥ १०४ ॥

लालासंदणेण थोवकालपडिबद्धचेयणाभावदंसणादो, णिद्दाणिद्दाए उदएण तदणुवलंभादो ।

णिद्दा अणंतगुणहीणा ॥ १०५ ॥

उससे शोक अनन्तगुणा हीन है ॥ १०० ॥

क्योंकि, वह अरतिपूर्वक होता है ।

शंका—वह अरतिपूर्वक कैसे होता है ?

समाधान—क्योंकि, अरतिके बिना शोक नहीं उत्पन्न होता है ।

उससे भय अनन्तगुणा हीन है ॥ १०१ ॥

क्योंकि, भयके उदयकालकी अपेक्षा शोकका उदयकाल बहुत पाया जाता है ।

शंका—चूंकि शोक उत्कृष्टसे छह मास पर्यन्त ही होता है, परन्तु भयका काल नारकियोंमें तेतीस सागरोपम प्रमाण है, अतएव शोककी अपेक्षा भय अनन्तगुणा क्यों नहीं होता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, नारकियोंमें भी भयका काल अन्तर्मुहूर्त ही उपलब्ध होता है ।

उससे जुगुप्सा अनन्तगुणी हीन है ॥ १०२ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

उससे निद्रानिद्रा अनन्तगुणी हीन है ॥ १०३ ॥

क्योंकि, किसी भी जीवके कहीं पर ही उसका उदय देखा जाता है ।

उससे प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी हीन है ॥ १०४ ॥

क्योंकि, लार बहनेसे थोड़े कालसे सम्बन्ध रखनेवाला चैतन्य भाव देखा जाता है, परन्तु निद्रानिन्द्राके उदयसे उसकी उपलब्धि नहीं होती ।

उससे निद्रा अनन्तगुणी हीन है ॥ १०५ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एदिस्से उदएण सचेयण व्व णिद्दुवलंभादो ।

पयला अणंतगुणहीणा ॥ १०६ ॥

एदिस्से उदएण बोल्लंतस्स वइाए वहंतस्स वा सीसस्स अइथोवसंचालदंसणादो ।

अजसकित्ती णीचागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ॥ १०७ ॥

कुदो ? साभावियादो । ण च सहाओ परपज्जणियोगारिहो ।

णिरयगई अणंतगुणहीणा ॥ १०८ ॥

कुदो ? णेरइयभावणिव्वत्तयत्तादो ।

तिरिक्खगई अणंतगुणहीणा ॥ १०९ ॥

कुदो ? णेरइयगई व्व तेत्तीससागरोवमफलुप्पायणसत्तीए अभावादो, णिरयगदीए इव एदिस्से दुक्खकारणत्ताभावादो वा ।

इत्थिवेदो अणंतगुणहीणो ॥ ११० ॥

कुदो ? अरइगब्भमुम्मरग्गिसमदुक्खुप्पायणादो ।

पुरिसवेदो अणंतगुणहीणो ॥ १११ ॥

कुदो ? तणग्गिसमथोवदुक्खुप्पायणादो ।

क्योंकि, इसके उदय से सचेतन के समान निद्रा उपलब्ध होती है ।

उससे प्रचला अनन्तगुणी हीन है ॥ १०६ ॥

क्योंकि इसके उदयसे बोलते हुए, बैठे हुए अथवा चलते हुए जीवके सिरका संचार बहुत स्तोक कालतक देखा जाता है ।

उससे अयशःकीर्ति और नीचगोत्र ये दोनों प्रकृतियाँ तुल्य होकर अनन्तगुणी हीन हैं ॥ १०७ ॥

क्योंकि, ऐसा स्वभाव है, और स्वभाव दूसरोंके प्रश्नके योग्य नहीं होता ।

उनसे नरकगति अनन्तगुणी हीन है ॥ १०८ ॥

क्योंकि, वह नारक पर्यायको उत्पन्न करानेवाली है ।

उससे तिर्यग्गति अनन्तगुणी हीन है ॥ १०९ ॥

क्योंकि, उसमें नरकगतिके समान तेतीस सागरोपम कालतक फल उत्पन्न कराने की शक्ति नहीं है, अथवा यह नरकगतिके समान दुखकी कारण नहीं है ।

उससे स्त्रीवेद अनन्तगुणा हीन है ॥ ११० ॥

क्योंकि वह अरतिगर्भित कण्डेकी आगके समान दुःखोत्पादक है ।

उससे पुरुषवेद अनन्तगुणा हीन हैं ॥ १११ ॥

क्योंकि, वह तृणाग्निके समान थोड़े दुखको उत्पन्न करनेवाला है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रदी अणंतगुणहीणा ॥ ११२ ॥

कुदो ? माया-लोभ-तिवेदपुरंगमत्तादो ।

हस्समणंतगुणहीणं ॥ ११३ ॥

कुदो ? रदिपुरंगमत्तादो ।

देवाउअमणंतगुणहीणं ॥ ११४ ॥

कुदो ? साभावियादो ।

णिरयाउअमणंतगुणहीणं ॥ ११५ ॥

कुदो ? देवाउअं पेक्खिदूण अप्पसत्थभावादो ।

मणुसाउअमणंतगुणहीणं ॥ ११६ ॥

णिरयाउअस्सेव मणुसाउअस्स दीहकालमुदयाणुवलंभादो । णिरयाउआदो मणुसाउअं पसत्थमिदि अणंतगुणं किण्ण जायदे ? ण, पसत्थभावेण जणिदाणुभागादो दीहकालादयाणबंधणाणुभागस्स पाधण्णियादो ।

तिरिक्खाउअमणंतगुणहीणं ॥ ११७ ॥

कुदो ? मणुस्साउआदो तिरिक्खाउअस्स अप्पसत्थत्तदंसणादो ।

एवमुक्कस्सओ चउसट्ठिपदियो महादंडओ कदो भवदि ।

उससे रति अनन्तगुणी हीन है ॥ ११२ ॥

क्योंकि, वह माया, लोभ और तीन वेद पूर्वक होती है ।

उससे हास्य अनन्तगुणा हीन है ॥ ११३ ॥

क्योंकि, वह रतिपूर्वक होता है ।

उससे देवायु अनन्तगुणी हीन है ॥ ११४ ॥

क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उससे नारकायु अनन्तगुणी हीन है ॥ ११५ ॥

कारण कि वह देवायुकी अपेक्षा अप्रशस्त है ।

उससे मनुष्यायु अनन्तगुणी हीन है ॥ ११६ ॥

कारण कि नारकायुके समान मनुष्यायुका बहुत समयतक उदय नहीं पाया जाता ।

शंका—चूंकि नारकायुकी अपेक्षा मनुष्यायु प्रशस्त है, अतः वह उससे अनन्तगुणी क्यों नहीं होती ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, यहाँ प्रशस्ततासे उत्पन्न अनुभागकी अपेक्षा बहुत समय तक रहनेवाले उदय निमित्तक अनुभागकी प्रधानता है ।

उससे तिर्यगायु अनन्तगुणी हीन है ॥ ११७ ॥

कारण कि मनुष्यायुकी अपेक्षा तिर्यगायुके अप्रशस्तता देखी जाती है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट चौंसठ पदवाला महादण्डक समाप्त होता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संपहि एदेण अप्पाबहुएण सूचिदउत्तरपयडिसत्थाणुक्कस्साणुभागअप्पाबहुअं वत्तइ-स्सामो। तं जहा—सव्वतिव्वाणुभागं केवलणाणावरणीयं। आभिणिबोहियणाणावर-णीयं अणंतगुणहीणं। [सुदणाणावरणीयं अणंतगुणहीणं] ओहिणाणावरणीयमणंत-गुणहीणं। मणपज्जवणाणावरणीयमणंतगुणहीणं।

सव्वतिव्वाणुभागं केवलदंसणावरणीयं। चक्खुदंसणावरणीयं अणंतगुणहीणं। अचक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणहीणं। ओहिदंसणावरणीयमणंतगुणहीणं। थीणगिद्धी अणंतगुणहीणा। णिद्दाणिद्दा अणंतगुणहीणा। पयलापयला अणंतगुणहीणा। णिद्दा अणंत गुणहीणा। पयला अणंतगुणहीणा।

सव्वतिव्वाणुभागं सादमसादमणंतगुणहीणं।

सव्वतिव्वाणुभागं मिच्छत्तं। अणंताणुबंधिलोभो अणंतगुणहीणो। माया विसे-सहीणा। कोधो विसेसहीणो। माणो विसेसहीणो। संजलणाए लोभो अणंतगुणहीणो। माया विसेसहीणा। कोधो विसेसहीणो। माणो विसेसहीणो। एवं पच्चक्खाणचदुक्का-पच्चक्खाणचदुक्कस्स च वत्तव्वं। णवुंसयवेदो अणंतगुणहीणो। अरदी अणंतगुणहीणा। सोगो अणंतगुणहीणो। भयमणंतगुणहीणं। दुगुंछा अणंतगुणहीणा। इत्थिवेदो

अब इस अल्पबहुत्वसे सूचित होनेवाला उत्तर प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अनुभागविषयक स्वथान अल्पबहुत्व कहते हैं। यथा—केवलज्ञानावरण सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे आभिनि-बोधिक ज्ञानावरणीय अनन्तगुणी हीन है। [उससे श्रुतज्ञानावरणीय अनन्तगुणी हीन है।] उससे अवधिज्ञानावरणीय अनन्तगुणी हीन है। उससे मनःपर्ययज्ञानावरणीय अनन्तगुणी हीन है।

केवलदर्शनावरणीय सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे चक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणी हीन है। उससे अचक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणी हीन है। उससे अवधि दर्शनावरणीय अनन्त-गुणी हीन है। उससे स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी हीन है। उससे निद्रानिद्रा अनन्तगुणी हीन है। उससे प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी हीन है। उससे निद्रा अनन्तगुणी हीन है। उससे प्रचला अनन्त-गुणी हीन है।

सातावेदनीय सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे असातावेदनीय अनन्तगुणी हीन है।

मिथ्यात्व प्रकृति सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे अनन्तानुबन्धी लोभ अनन्तगुणा हीन है। उससे अनन्तानुबन्धी माया विशेष हीन है। उससे अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेष हीन है। उससे अनन्तानुबन्धी मान विशेष हीन है। उससे संज्वलनलोभ अनन्तगुणा हीन है। उससे संज्वलन माया विशेष हीन है। उससे संज्वलन क्रोध विशेष हीन है। उससे संज्वलन मान विशेष हीन है। इसी प्रकार प्रत्याख्यानावरण चतुष्क और अप्रत्याख्यानावरण चतुष्कके विषयमें कहना चाहिये। अप्रत्याख्यानावरण मानसे नपुंसकवेद अनन्तगुणा हीन है। उससे अरति अनन्तगुणी हीन है। उससे शोक अनन्तगुणा हीन है। उससे भय अनन्तगुणा हीन है। उससे जुगुप्सा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणंतगुणहीणो । पुरिसवेदो अणंतगुणहीणो। रदी अणंतगुणहीणा। हस्समणंतगुणहीणं।

सव्वतिव्वाणुभागं देवाउअं । णिरयाउअमणंतगुणहीणं । मणुसाउअमणंतगुणहीणं । तिरिक्खाउअमणंतगुणहीणं ।

सव्वतिव्वाणुभागा देवगई। मणुसगई अणंतगुणहीणा। णिरयगई अणंतगुणहीणा। तिरिक्खगई अणंतगुणहीणा ।

सव्वतिव्वाणुभागा पंचिंदियजादी । एइंदियजादी अणंतगुणहीणा । बेइंदियजादी अणंतगुणहीणा । तेइंदियजादी अणंतगुणहीणा । चउरिंदियजादी अणंतगुणहीणा ।

सव्वतिव्वाणुभागं कम्मइयसरीरं । तेजइयसरीरं अणंतगुणहीणं । आहारसरीरमणंतगुणहीणं । वेउव्वियसरीरमणंतगुणहीणं । ओरालियसरीरमणंतगुणहीणं ।

सव्वतिव्वाणुभागं समचउरससंठाणं । हुंडसंठाणमणंतगुणहीणं । वामणसंठाणमणंतगुणहीणं । खुज्जसंठाणमणंतगुणहीणं । सादियसंठाणमणंतगुणहीणं । णग्गोधसंठाणमणंतगुणहीणं ।

सव्वतिव्वाणुभागमाहारसरीरअंगोवंगं । वेउव्वियसरीरअंगोवंगमणंतगुणहीणं । ओरालियसरीरमंगोवंगमणंतगुणहीणं ।

अनन्तगुणी हीन है। उससे स्त्रीवेद अनन्तगुणा हीन है। उससे पुरुषवेद अनन्तगुणा हीन है। उससे रति अनन्तगुणी हीन है। उससे हास्य अनन्तगुणा हीन है।

देवायु सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे नारकायु अनन्तगुणी हीन है। उससे मनुष्यायु अनन्तगुणी हीन है। उससे तिर्यगायु अनन्तगुणी हीन है।

देवगति सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे मनुष्यगति अनन्तगुणी हीन है। उससे नरकगति अनन्तगुणी हीन है। उससे तिर्यग्गति अनन्तगुणी हीन है।

पञ्चेन्द्रिय जाति सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे एकेन्द्रिय जाति अनन्तगुणी हीन है। उससे द्वीन्द्रिय जाति अनन्तगुणी हीन है। उससे त्रीन्द्रिय जाति अनन्तगुणी हीन है। उससे चतुरिन्द्रिय जाति अनन्तगुणी हीन है।

कार्मण शरीर सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे तैजस शरीर अनन्तगुणा हीन है। उससे आहारक शरीर अनन्तगुणा हीन है। उससे वैक्रियिक शरीर अनन्तगुणा हीन है। उससे औदारिक शरीर अनन्तगुणा हीन है।

समचतुरस्र संस्थान सबसे तीव्र अनुभाग से युक्त है। उससे हुंडक संस्थान अनन्तगुणा हीन है। उससे वामन संस्थान अनन्तगुणा हीन है। उससे कुब्जक संस्थान अनन्तगुणा हीन है। उससे स्वाति संस्थान अनन्तगुणा हीन है। उससे न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थान अनन्तगुणा हीन है।

आहारक शरीरांगोपांग सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है। उससे वैक्रियिक शरीरांगोपांग अनन्तगुणा हीन है। उससे औदारिक शरीरांगोपांग अनन्तगुणा हीन है।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

संघडणाणं संठाणभंगो । सव्वतिव्वाणुभागं [1]पसत्थ [वण्णचउक्कमप्पसत्थवण्ण] चउक्कमणंतगुणहीणं । [2]जहा गई तहाणुपुव्वी ।

एत्तो सव्वजुगलाणं सव्वतिव्वाणुभागाणि पसत्थाणि । अप्पसत्थाणि पडिवक्खाणि अणंतगुणहीणाणि ।

सव्वातिव्वाणुभागं उच्चागोदं । णीचागोदमणंतगुणहीणं । सव्वतिव्वाणुभागं विरियंतराइयं । हेट्ठा कमेण दाणंतराइया अणंतगुणहीणा ।

एवं सत्थाणप्पाबहुगं समत्तं ।

संज-मण-दाणमोही लाभं सुदचक्खु-भोग चक्खुं च ।
आभिणिबोहिय परिभोग विरिय णव णोकसायाइं ॥ ४ ॥

'संज'त्ति उत्ते चत्तारि वि संजलणाणि घेत्तव्वाणि । 'मण'-दाणं'इदि वुत्ते मणपज्जवणाणावरणीयस्स दाणंतराइयस्स गहणं । 'ओहि'त्ति वुत्ते ओहिणाणावरणीयं घेत्तव्वं । 'लाभ'णिद्देसो लाभंतराइयगहणट्ठो । 'सुद'णिद्देसो सुदणाणावरणीयपण्णवणट्ठो ।

संहननोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा संस्थानोंके समान है । प्रशस्त वर्णचतुष्क सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उससे अप्रशस्त वर्णचतुष्क अनन्तगुणा हीन है । आनुपूर्वीकी प्ररूपणा गति नामकर्मके समान है ।

आगे त्रस-स्थावरादि सब युगलोंमें प्रशस्त प्रकृतियाँ सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त हैं । उनकी प्रतिपक्षभूत अप्रशस्त प्रकृतियाँ अनन्तगुणी हीन हैं ।

उच्चगोत्र सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उससे नीचगोत्र अनन्तगुणा हीन है ।

वीर्यान्तराय सबसे तीव्र अनुभागसे युक्त है । उसके नीचे क्रमशः दानान्तरायादिक अनन्तगुणे हीन हैं ।

इस प्रकार स्वस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

संज्वलनचतुष्क, मनःपर्ययज्ञानावरण, दानान्तराय, अवधिज्ञानावरण, लाभान्तराय, श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण, भोगान्तराय, चक्षुदर्शनावरण, आभिनिबोधिकज्ञानावरण, परिभोगान्तराय, वीर्यान्तराय और नौ नोकषाय ये प्रकृतियाँ उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हैं ॥ ४ ॥

'संज' ऐसा कहनेपर चारों ही संज्वलन कषायोंका ग्रहण करना चाहिये । 'मण-दाणं' यह कहनेपर मनःपर्ययज्ञानावरणीय और दानान्तरायका ग्रहण करना चाहिये । 'ओहि' ऐसा कहनेपर अवधिज्ञानावरणीयका ग्रहण करना चाहिये । 'लाभ' पदका निर्देश लाभान्तरायका ग्रहण करनेके लिये किया है । श्रुतज्ञानावरणीयका ज्ञान करानेके लिये 'सुद' पदका निर्देश किया है । अचक्षु-

---

१ अप्रतौ 'त्रुटितोऽत्र पाठः, मप्रतौ' सव्वतिव्वाणुभागं पसत्थवण्णं चउक्कमणंतगु० इति पाठः ।

२ अप्रतौ 'महा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अचक्खु'णिद्देसो अचक्खुदंसणावरणीयगहणणिमित्तो । 'भोग'[1]णिद्देसो भोगंतराइयस्स परूवओ । 'चक्खुं च'इदि णिद्देसो चक्खुदंसणावरणीयग्गहणणिमित्तो । किमट्ठं 'च' सद्दुच्चारणं कीरदे ? सुदणाणावरणीय-अचक्खुदंसणावरणीय-भोगंतराइयं च एदाणि तिण्णि वि कम्माणि जहा अणुभागेण अण्णोण्णं समाणाणि तहा चक्खुदंसणावरणीयं ण होदि त्ति जाणावणट्ठं कीरदे । 'आभिणिबोहिय'णिद्देसेण आभिणिबोहियणाणावरणीयं घेत्तव्वं । 'परिभोग'वयणेण परिभोगंतराइयं घेत्तव्वं । 'ण व च' इदि चसद्देण एदासिमणंतरादो पयडीणमणुभागो सरिसो त्ति सूचिदो । 'विरिय'इत्ति भणिदे विरियंतराइयस्स गहणं । 'णव णोकसाया'त्ति वुत्ते णवण्णं णोकसायाणं गहणं कायव्वं । एत्थ सव्वत्थ अणंतगुण-सद्दस्स अज्झाहारो कायव्वो ।

(के-प-णि-अट्ठ-त्तिय-अण-मिच्छा-ओ-वे-तिरिक्ख-मणुसाऊ ।
तेयाकम्मसरीरं तिरिक्ख-णिरय-देव-मणुवगई ॥ ५ ॥)

केवलणाणावरणीय-केवलदंसणावरणीयाणं गहणट्ठं 'के'इति णिद्देसो कदो । ताणि च दो वि सारिसाणि त्ति जाणावणट्ठं 'के'इदि एगसद्देण णिद्दिट्ठाणि । 'प'इति उत्ते

दर्शनावरणीयका ग्रहण करनेके निमित्त 'अचक्खु' पदका निर्देश किया है । 'भोग' पदका निर्देश भोगान्तरायका प्ररूपक है । 'चक्खुं च' यह निर्देश चक्षुदर्शनावरणीयका ग्रहण करनेके निमित्त है ।

शंका—'चक्खुं च' यहाँ 'च' शब्दका उच्चारण किसलिये किया है ।

समाधान—जिस प्रकार श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और भोगान्तराय ये तीन प्रकृतियाँ अनुभागकी अपेक्षा परस्पर समान हैं उस प्रकार चक्षुदर्शनावरणीय समान नहीं है, यह जतलानेके लिये 'च' शब्दका निर्देश किया है ।

'आभिणिबोहिय' पदके निर्देशसे आभिनिबोधिकज्ञानावरणीयका ग्रहण करना चाहिये । 'परिभोग' इस वचनसे परिभोगान्तरायका ग्रहण करना चाहिये । 'णव च' यहाँ किये गये 'च' शब्दके निर्देशसे इन प्रकृतियोंसे अव्यवहित प्रकृतियोंका अनुभाग सदृश है, यह सूचना की गई है । 'विरिय' कहनेपर वीर्यान्तरायका ग्रहण किया गया है । 'णव णोकसाया' ऐसा कहनेपर नौ नोकषायोंका ग्रहण करना चाहिये । यहाँ सर्वत्र 'अनन्तगुण' शब्दका अध्याहार करना चाहिये ।

केवलज्ञानावरण व केवलदर्शनावरण, प्रचला, निद्रा, आठ कषाय, स्त्यानगृद्धि आदि तीन, अनन्तानुबन्धिचतुष्क, मिथ्यात्व, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, तिर्यगायु, मनुष्यायु, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, तिर्यग्गति, नरकगति, देवगति और मनुष्यगति ये प्रकृतियाँ उत्तरोत्तर अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणी हैं ॥ ५ ॥

केवलज्ञानावरणीय और केवलदर्शनावरणीय का ग्रहण करनेके लिये 'के' ऐसा निर्देश किया है । वे दोनों ही प्रकृतियाँ सदृश हैं, यह जतलानेके लिये 'के' इस एक ही शब्दके द्वारा

---

१ अप्रतौ 'ओघ' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पयला घेत्तव्वा, णामेगदेसादो वि णामिल्लपडिवत्तिदंसणादो। 'णि'इदि वुत्ते । ए गहणं। कारणं पुव्वं व वत्तव्वं। 'अट्ठ'इदि वुत्ते अट्ठकसाया घेत्तव्वा। 'तिय' त्ति भणिदे थीणगिद्धितियं घेत्तव्वं। कुदो? आइरियोवदेसादो। 'अण'इदि णिद्देसो अणंताणुबंधिचउक्कगहणणिमित्तो। 'मिच्छा'णिद्देसो मिच्छत्तस्स गाहओ। 'ओ'इदि वुत्ते ओरालियसरीरं घेत्तव्वं। ओहिणाणं किण्ण घेप्पदे ? ण, तस्स पुव्वं परूविदत्तादो। 'वे' इदि भणिदे वेउव्वियसरीरस्स गहणं ण अण्णस्स, असंभवादो। [1]'तिरिक्ख-मणुसाऊ' इदि भणिदे दोण्णमाउआणं गहणं, आउअसद्दस्स पादेक्कमभिसंबंधादो। 'तेया-कम्मइयसरीरं'इदि वुत्ते तेजइय-कम्मइयसरीराणं गहणं। 'तिरिक्ख-णिरय-मणुव-देवगदि'त्ति भणिदे चत्तारिगदीओ घेत्तव्वाओ, गइसद्दस्स पादेक्कमभिसंबंधादो।

णीचागोदं अजसो असादमुच्चं जसो तहा सादं।
णिरयाऊ देवाऊ आहारसरीरणामं च ॥ ६ ॥

एसा गाहा सुगमा।

उन दोनोंका निर्देश किया गया है। 'प' ऐसा कहनेपर प्रचलाका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, नामके एकदेशसे भी नामवालेका बोध होता हुआ देखा जाता है। 'नि' इस निर्देशसे निद्राका ग्रहण करना चाहिये। कारण पहिलेके समान कहना चाहिये। 'अट्ठ' ऐसा कहनेपर प्रत्याख्यानावरणचतुष्क और अप्रत्याख्यानावरणचतुष्क इन आठ कषायोंका ग्रहण करना चाहिये। 'तिय' कहनेपर स्त्यानगृद्धित्रयका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, ऐसा आचार्योंका उपदेश है। 'अण' यह निर्देश अनन्तानुबन्धिचतुष्कका ग्रहण करनेके निमित्त है। 'मिच्छा' शब्दका निर्देश मिथ्यात्वका ग्राहक है। 'ओ' कहनेपर औदारिक शरीरका ग्रहण करना चाहिये।

शंका—'ओ' कहनेपर अवधिज्ञानावरणका ग्रहण क्यों नहीं किया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उसका पहिले कथन कर आये हैं।

'वे' ऐसा कहनेपर वैक्रियिक शरीरका ग्रहण करना चाहिये, अन्यका नहीं; क्योंकि उससे अन्यका ग्रहण करना सम्भव ही नहीं है। 'तिरिक्ख-मणुसाऊ' ऐसा कहनेपर तिर्यगायु और मनुष्यायु इन दो आयुओंका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, आयु शब्दका प्रत्येकके साथ सम्बन्ध है। 'तेया-कम्मसरीरं' ऐसा कहनेपर तैजस और कार्मण शरीरका ग्रहण करना चाहिये। 'तिरिक्ख णिरय-मणुव-देवगई' ऐसा कहनेपर चारों गतियोंका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, गति शब्दका सम्बन्ध प्रत्येकके साथ है।

नीचगोत्र, अयशःकीर्ति, असातावेदनीय, उच्चगोत्र, यशःकीर्ति, तथा सातावेदनीय, नारकायु, देवायु और आहारशरीर, ये प्रकृतियाँ उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हैं ॥ ६ ॥

यह गाथा सुगम है।

१ अप्रतौ 'तिरिक्खुवणुसाऊ' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एत्तो जहण्णओ चउसट्ठिपदिओ महादंडओ कायव्वो भवदि ॥ ११८ ॥

पुव्विल्लप्पाबहुएण जहण्णेण सूचिदचउसट्ठिपदियमप्पाबहुगं भणिस्सामो ।

सव्वमंदाणुभागं लोभसंजलणं ॥ ११९ ॥

अणियट्टिचरिमसमयबंधग्गहणादो । सुहमसांपराइयचरिमसमयलोभो सुहुमकिट्टिसरूवो किण्ण घेप्पदे ? ण, बंधाधियारे संतग्गहणाणुववत्तीदो । ण वेयणाए संतं चेव परूविज्जदे, बंध-संताणं दोण्णं पि परूवयत्तादो । (एदाणि चउसट्ठिपदियाणि जहण्णुक्कस्सप्पाबहुगाणि बंधं चेव अस्सिदूण अवट्ठिदाणि । तं कधं णव्वदे ? (महाबंधसुत्तवइट्ठत्तादो ।)

मायासंजलणमणंतगुणं ॥ १२० ॥

अणियट्टिचरिमसमयादो हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोदरियट्ठिदमायाकसायचरिमाणुभागबंधग्गहणादो । कुदो एदं णव्वदे ? अणियट्टिचरिमाणुभागबंधादो दुचरिमाणुभागबंधो अणंतगुणो । तत्तो तिचरिमाणुभागबंधो अणंतगुणो । एवं सव्वत्थ अणियट्टिकालब्भंतरे

आगे चौंसठ पदवाला जघन्य महादण्डक करने योग्य है ॥ ११८ ॥

पूर्वोक्त जघन्य अल्पबहुत्वसे सूचित चौंसठ पदवाले अल्पबहुत्वको कहते हैं ।

संज्वलनलोभ सबसे मन्द अनुभागसे युक्त है ॥ ११९ ॥

क्योंकि अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय सम्बन्धी बन्धका यहाँ ग्रहण किया गया है ।

शंका—सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्म कृष्टि स्वरूप लोभका ग्रहण क्यों नहीं किया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, बन्धके अधिकारमें सत्त्वका ग्रहण करना नहीं बन सकता है । वेदनामें केवल सत्त्वका ही कथन नहीं किया जा रहा है, क्योंकि, वह बन्ध और सत्त्व दोनोंका ही प्ररूपक है । ये चौंसठ पदवाले जघन्य व उत्कृष्ट अल्पबहुत्व बन्धका आश्रय करके ही अवस्थित हैं ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—यह महाबन्ध सूत्रके उपदेशसे जाना जाता है ।

उससे माया संज्वलन अनन्तगुणा है ॥ १२० ॥

क्योंकि अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयसे नीचे अन्तमुहूर्त उतर कर स्थित माया कषायके अनुभागबन्धका यहाँ ग्रहण किया है ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय सम्बन्धी अनुभागबन्धकी अपेक्षा उसका द्विचरम समय सम्बन्धी अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है । उससे त्रिचरम समय सम्बन्धी अनुभाग-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुभागवुड्ढिदंसणादो ।

माणसंजलणमणंतगुणं ॥ १२१ ॥

मायासंजलणजहण्णबंधपदेसादो हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोदरिय ट्ठिदमाणजहण्णबंधग्गहणादो । एत्थ वि अणंतगुणत्तस्स कारणं पडिसमयमणंतगुणाए सेडीए हेट्ठिमाणुभागबंधवुड्ढी ।

कोधसंजलणमणंतगुणं ॥ १२२ ॥

तत्तो हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोदिण्णजहण्णबंधग्गहणादो ।

मणपज्जवणाणावरणीयं दाणंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १२३ ॥

कुदो ? कोधसंजलण जहण्णाणुभागबंधो बादरकिट्टी, एदासिं दोण्णं पयडीणमणुभागो पुण फद्दयं; एदासिं सुहुमसांपराइयचरिमजहण्णबंधस्स फद्दयत्तं मोत्तूण किट्टित्ताभावादो । तेण कोधसंजलणजहण्णबंधादो अप्पिद-दोपयडीणं जहण्णबंधो अणंतगुणो ।

ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाभंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १२४ ॥

कुदो ? पयडिविसेसेण । सो कधं णव्वदे ? खवगसेडीए देसघादिबंधकरणेसु

बन्ध अनन्तगुणा है । इस प्रकार सर्वत्र अनिवृत्तिकरण कालके भीतर अनुभागकी वृद्धि देखे जानेसे उक्त कथनका परिज्ञान होता है ।

उससे मान संज्वलन अनन्तगुणा है ॥ १२१ ॥

क्योंकि, माया संज्वलनके जघन्य बन्ध सम्बन्धी स्थानसे पीछे अन्तर्मुहूर्त जाकर स्थित मान संज्वलनके जघन्य बन्धका यहाँ ग्रहण किया है । यहाँ भी अनन्तगुणेका कारण प्रतिसमय अनन्तगुणी श्रेणिरूपसे पीछे अनुभागबन्धकी वृद्धि है ।

उससे क्रोध संज्वलन अनन्तगुणा है ॥ १२२ ॥

क्योंकि, उससे पीछे अन्तर्मुहूर्त जाकर स्थित जघन्य बन्धका यहाँ ग्रहण किया है ।

उससे मनःपर्ययज्ञानावरणीय और दानान्तराय ये दोनों ही प्रकृतियाँ तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ १२३ ॥

क्योंकि, संज्वलन क्रोधका जघन्य अनुभागबन्ध बादर कृष्टि स्वरूप है, परन्तु इन दोनों प्रकृतियोंका अनुभाग स्पर्धक स्वरूप है, क्योंकि, इनका सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें जो जघन्य बन्ध होता है वह स्पर्धकरूप होता है वह कृष्टि स्वरूप नहीं हो सकता इसलिये संज्वलन क्रोधके जघन्य बन्धकी अपेक्षा विवक्षित इन दो प्रकृतियोंका जघन्य बन्ध अनन्तगुणा है ।

अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तराय, ये तीनों ही प्रकृतियां तुल्य होकर उनसे अनन्तगुणी हैं ॥ १२४ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

शंका — वह किस प्रमाण से जाना जाता है ?

समाधान — क्षपक श्रेणिके भीतर देशघातिबन्धकरणविधानमें जो यह बतलाया गया है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुव्विल्लेहिंतो पच्छा देसघादित्तमुववण्णत्तादो णव्वदे ।

सुदणाणावरणीयं अचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १२५ ॥

कुदो ? पयडिविसेसादो । कुदो सो णव्वदे ? पच्छा देसघादिबंधजोगादो ।

चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणं ॥ १२६ ॥

कारणं सुगमं ।

आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १२७ ॥

सुगमं ।

विरियंतराइयमणंतगुणं ॥ १२८ ॥

एदं पि सुगमं ।

पुरिसवेदो अणंतगुणो ॥ १२९ ॥

विरियंतराइयस्स अणुभागो देसघादी एगट्ठाणियो, पुरिसवेदस्स वि अणुभागो

कि "जिन प्रकृतियोंका अनुभागबन्ध पूर्वमें देशघाती हो जाता है उनका अनुभाग स्तोक होता है, तथा जिनका अनुभागबन्ध पीछे देशघाती होता है उनका अनुभाग बहुत होता है।" इसीसे वह जाना जाता है।

श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और भोगान्तराय ये तीनों ही प्रकृतियां तुल्य होकर उनसे अनन्तगुणी हैं ॥ १२५ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

शंका—वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—चूंकि इन प्रकृतियोंका अनुभागबन्ध पीछे देशघातित्वको प्राप्त होता है अतः इसीसे उसका निश्चय हो जाता है ।

उनसे चक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणी है ॥ १२६ ॥

इसका कारण सुगम है ।

उससे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय ये दोनों ही प्रकृतियां तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ १२७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उनसे वीर्यान्तराय अनन्तगुणा है ॥ १२८ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उससे पुरुषवेद अनन्तगुणा है ॥ १२९ ॥

वीर्यान्तरायका अनुभाग देशघाती एकस्थानीय है तथा पुरुषवेदका भी अनुभाग इसी

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

एरिसो चेव । किं तु अंतोमुहुत्तं हेट्ठा ओदरिय बद्धो तेण अणंतगुणहीणो जादो ।

हस्समणंतगुणं ॥ १३० ॥

अपुव्वकरणचरिमसमयसव्वघादिविट्ठाणियजहण्णाणुभागबंधग्गहणादो ।

रदी अणंतगुणा ॥ १३१ ॥

तप्पुरंगमत्तादो ।

दुगुंछा अणंतगुणा ॥ १३२ ॥

दोण्णं पयडीणं अपुव्वकरणचरिमसमए चेव जदि वि जहण्णबंधो जादो तो वि रदीदो दुगुंछा अणंतगुणा, पयडिविसेसमस्सिदूण संसारावत्थाए सव्वत्थ तहावट्ठाणादो ।

भयमणंतगुणं ॥ १३३ ॥

पयडिविसेसेण ।

सोगो अणंतगुणो ॥ १३४ ॥

कुदो ? अपुव्वकरणविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिणा पमत्तसंजदेण बद्धजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

अरदी अणंतगुणा ॥ १३५ ॥

प्रकारका है । परन्तु वह चूंकि अन्तर्मुहूर्त पीछे जा कर बांधा गया है अतः वह अनन्तगुणा हीन है ।

उससे हास्य अनन्तगुणा है ॥ १३० ॥

कारण कि यहाँ अपूर्वकरणके अन्तिम समय सम्बन्धी सर्वघाती द्विस्थानीय जघन्य अनुभागबन्धका ग्रहण किया गया है ।

उससे रति अनन्तगुणी है ॥ १३१ ॥

कारण कि वह हास्यपूर्वक होती है ।

उससे जुगुप्सा अनन्तगुणी है ॥ १३२ ॥

यद्यपि रति और जुगुप्सा इन दोनों प्रकृतियोंका अपूर्वकरणके अन्तिम समय में ही जघन्य बन्ध हो जाता है तो भी रतिकी अपेक्षा जुगुप्सा अनन्तगुणी है, क्योंकि, प्रकृतिविशेषका आश्रय करके संसार अवस्थामें सर्वत्र इसी प्रकार की स्थिति है ।

उससे भय अनन्तगुणा है ॥ १३३ ॥

इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

उससे शोक अनन्तगुणा है ॥ १३४ ॥

कारण यह है कि अपूर्वकरणकी विशुद्धिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले प्रमत्त संयतके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका यहाँ ग्रहण किया है ।

उससे अरति अनन्तगुणी है ॥ १३५ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साभावियादो ।

इत्थिवेदो अणंतगुणो ॥ १३६ ॥

पमत्तसंजदविसोहीदो अणंतगुणहीणसव्वविसुद्धमिच्छाइट्ठिणा बद्धइत्थिवेदजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

णवुंसयवेदो अणंतगुणो ॥ १३७ ॥

मिच्छाइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण संजमाहिमुहेण बद्धजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥ १३८ ॥

एदासिं दोण्णं पि पयडीणं सुहुमसांपराइयचरिमसमए अंतोमुहुत्तमणंतगुणहाणी गंतूण जहण्णाणुभागबंधो जदि वि जादो तो वि मिच्छाइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण बद्धणवुंसयवेदजहण्णाणुभागबंधादो अणंतगुणो । कुदो ? साभावियादो ।

पयला अणंतगुणा ॥ १३९ ॥

अपुव्वकरणेण सगद्धाए पढमसत्तमभागे बट्टमाणेण चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स विसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिणा बद्धत्तादो ।

क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उससे स्त्रीवेद अनन्तगुणा है ॥ १३६ ॥

कारण यह है कि यहाँ प्रमत्तसंयतकी विशुद्धिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन विशुद्धि युक्त सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा बांधे गये स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका ग्रहण किया है ।

उससे नपुंसकवेद अनन्तगुणा है ॥ १३७ ॥

कारण कि संयमके अभिमुख हुए सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टिके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका ग्रहण किया है ।

उससे केवलज्ञानावरणीय और केवलदर्शनावरणीय ये दोनों ही प्रकृतियाँ तुल्य होकर अनन्तगुणी हैं ॥ १३८ ॥

यद्यपि इन दोनों ही प्रकृतियोंका अन्तर्मुहूर्तकाल तक अनन्तगुणी हानि होकर सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें जघन्य अनुभागबन्ध होता है तो भी सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टिके द्वारा बांधे गये नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागबन्धकी अपेक्षा वह अनन्तगुणा है, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उनसे प्रचला अनन्तगुणी है ॥ १३९ ॥

क्योंकि, वह अपने कालके सात भागोंमेंसे प्रथम भाग में वर्तमान और अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिककी विशुद्धिसे अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवके द्वारा बांधी जाती है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिद्दा अणंतगुणा ॥ १४० ॥

एदिस्से वि तत्थेव जहण्णबंधो जादो । किं तु पयडिविसेसेण अणंतगुणा ।

पच्चक्खाणावरणीयमाणो अणंतगुणो ॥ १४१ ॥

कुदो ? अपुव्वकरणखवगविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिणा सव्वविसुद्धेण संजदासंजदेण बद्धजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

कोधो विसेसाहियो ॥ १४२ ॥

पयडिविसेसेण ।

माया विसेसाहिया ॥ १४३ ॥

पयडिविसेसेण ।

लोभो विसेसाहिओ ॥ १४४ ॥

पयडिविसेसेण ।

अपच्चक्खाणावरणीयमाणो अणंतगुणो ॥ १४५ ॥

संजदासंजदविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिणा असंजदसम्माइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण चरिमसमए बद्धजहण्णाणुभागग्गहणादो ।

कोधो विसेसाहिओ ॥ १४६ ॥

उससे निद्रा अनन्तगुणी है ॥ १४० ॥

यद्यपि इसका जघन्य बन्ध वहींपर होता है, तो भी प्रकृतिविशेषके कारण वह प्रचलासे अनन्तगुणी है ।

उससे प्रत्याख्यानावरणीय मान अनन्तगुणा है ॥ १४१ ॥

क्योंकि, अपूर्वकरण क्षपककी विशुद्धिसे अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले तथा सर्वविशुद्ध संयतासंयत जीवके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका यहां ग्रहण किया है ।

उससे प्रत्याख्यानावरणीय क्रोध विशेष अधिक है ॥ १४२ ॥

इसका कार प्रकृति विशेष है ।

उससे प्रत्याख्यानावरणीय माया विशेष अधिक है ॥ १४३ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे प्रत्याख्यानावरणीय लोभ विशेष अधिक है ॥ १४४ ॥

इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय मान अनन्तगुणा है ॥ १४५ ॥

क्योंकि, संयतासंयतकी विशुद्धिसे अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले सर्वविशुद्ध असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका यहाँ ग्रहण किया है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय क्रोध विशेष अधिक है ॥ १४६ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पयडिविसेसेण ।

माया विसेसाहिया ॥ १४७ ॥

पयडिविसेसेण ।

लोभो विसेसाहिओ ॥ १४८ ॥

पयडिविसेसेण

णिद्दाणिद्दा अणंतगुणा ॥ १४९ ॥

असंजदसम्मादिट्ठिविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिमिच्छाइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण बद्धत्तादो ।

पयलापयला अणंतगुणा ॥ १५० ॥

जदि वि दोण्णं पि जहण्णाणुभागबंधाणमेक्को चेव सामी तो वि पयडिविसेसेण पयलापयला अणंतगुणा ।

थीणगिद्धी अणंतगुणा ॥ १५१ ॥

पयडिविसेसेण ।

अणंताणुबंधिमाणो अणंतगुणो ॥ १५२ ॥

संजमाहिमुहचरिमसमयमिच्छाइट्ठिजहण्णबंधग्गहणादो ।

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय माया विशेष अधिक है ॥ १४७ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अप्रत्याख्यानावरणीय लोभ विशेष अधिक है ॥ १४८ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है ॥ १४९ ॥

क्योंकि, वह असंयतसम्यग्दृष्टिकी विशुद्धिसे अनन्तगुणी हीन विशुद्धिवाले सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा बाँधी जाती है ।

उससे प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है ॥ १५० ॥

यद्यपि इन दोनों ही प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागबन्धका एक ही स्वामी है, तो भी प्रकृतिविशेष होनेसे प्रचलाप्रचला निद्रानिद्राकी अपेक्षा अनन्तगुणी है ।

उससे स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है ॥ १५१ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अनन्तानुबन्धी मान अनन्तगुणा है ॥ १५२ ॥

क्योंकि, संयमके अभिमुख हुए अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागबन्धका यहाँ ग्रहण किया है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोधो विसेसाहिओ ॥ १५३ ॥

पयडिविसेसेण ।

माया विसेसाहिआ ॥ १५४ ॥

पयडिविसेसेण ।

लोभो विसेसाहिओ ॥ १५५ ॥

पयडिविसेसेण ।

मिच्छत्तमणंतगुणं ॥ १५६ ॥

मिच्छाइट्ठिणा सव्वविसुद्धेण संजमाहिमुहेण सगद्धाए चरिमसमए वट्टमाणेण बद्ध-जहण्णाणुभागग्गहणादो । दोण्णं पि पयडीणं मिच्छाइट्ठिम्हि चेव सामीए संते कधं मिच्छत्तस्स अणंतगुणत्तं जुज्जदे ? ण, पयडिविसेसेण तदविरोहादो ।

ओरालियसरीरमणंतगुणं ॥ १५७ ॥

जेणेसा पसत्थपयडी तेणेदिस्से संकिलेसेण जहण्णबंधो होदि । पुणो एसा जदि वि मिच्छाइट्ठिउक्कट्ठसंकिलेसेण बद्धा तो वि मिच्छत्तादो[1] अणंतगुणा । कुदो ? सुहाणं पयडीणं संकिलेसेण महल्लाणुभागक्खयाभावादो ।

उससे अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेष अधिक है ॥ १५३ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अनन्तानुबन्धी माया विशेष अधिक है ॥ १५४ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे अनन्तानुबन्धी लोभ विशेष अधिक है ॥ १५५ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे मिथ्यात्व अनन्तगुणा है ॥ १५६ ॥

क्योंकि, संयमके अभिमुख हुए व अपने कालके अन्तिम समयमें स्थित सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा बांधे गये जघन्य अनुभागका यहाँ ग्रहण किया है ।

शंका—जब कि इन दोनों ही प्रकृतियोंका एक ही मिथ्यादृष्टि जीव स्वामी है तब अनन्तानुबन्धी लोभकी अपेक्षा मिथ्यात्वका अनन्तगुणा होना कैसे उचित है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रकृतिविशेष होनेसे उसमें कोई विरोध नहीं आता ।

उससे औदारिक शरीर अनन्तगुणा है ॥ १५७ ॥

चूँकि यह प्रशस्त प्रकृति है इसलिये इसका संक्लेशसे जघन्य बन्ध होता है । यद्यपि यह प्रकृति मिथ्यादृष्टिसम्बन्धी उत्कृष्ट संक्लेशसे बाँधी गई है, तो भी वह मिथ्यात्वकी अपेक्षा अनन्तगुणी है, क्योंकि, संक्लेशसे शुभ प्रकृतियोंके महान् अनुभागका क्षय नहीं होता ।

---

१ अप्रतौ 'विच्छित्तादो' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

वेउव्वियसरीरमणंतगुणं ॥ १५८ ॥

ओरालियसरीरं पेक्खिदूण पसत्थतमत्तादो ।

तिरिक्खाउअमणंतगुणं ॥ १५९ ॥

उक्कस्ससंकिलेस-विसोहीहि बंधाभावेण तप्पाओग्गसंकिलेस-विसोहीहि बद्धतिरिक्ख-अपज्जत्तजहण्णाउग्गहणादो ।

मणुसाउअमणंतगुणं ॥ १६० ॥

तिरिक्खाउआदो विसुद्धतमत्तादो ।

तेजइयसरीरमणंतगुणं ॥ १६१ ॥

तेजइयसरीरं जेण सुहपयडी तेण दिस्से जहण्णबंधो सव्वसंकिलिट्ठमिच्छाइट्ठिम्हि होदि । होंतो वि मणुस्साउआदो अणंतगुणो । कुदो ? सुहाणं बहुअणुभागबंधोसरणाभावादो ।

कम्मइयसरीरमणंतगुणं ॥ १६२ ॥

पयडिविसेसेण ।

तिरिक्खगदी अणंतगुणा ॥ १६३ ॥

कुदो ? सव्वविसुद्धसत्तमपुढविणेरइयमिच्छाइट्ठिणा बद्धत्तादो ।

णिरयगदी अणंतगुणा ॥ १६४ ॥

उससे वैक्रियिक शरीर अनन्तगुणा है ॥ १५८ ॥

क्योंकि, औदारिक शरीरकी अपेक्षा वैक्रियिक शरीर अतिशय प्रशस्त है ।

उससे तिर्यगायु अनन्तगुणी है ॥ १५९ ॥

क्योंकि उत्कृष्ट संक्लेश व विशुद्धिके द्वारा आयुका बन्ध नहीं होता अतएव तत्प्रायोग्य संक्लेश व विशुद्धिके द्वारा बाँधी गई तिर्यञ्च अपर्याप्तकी जघन्य आयुका यहाँ ग्रहण किया है ।

उससे मनुष्यायु अनन्तगुणी है ॥ १६० ॥

क्योंकि, वह तिर्यंचायुकी अपेक्षा अतिशय विशुद्ध है ।

उससे तैजस शरीर अनन्तगुणा है ॥ १६१ ॥

चूँकि तैजस शरीर शुभ प्रकृति है, अतएव इसका जघन्य बन्ध सर्वसंक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीवके होता है । मिथ्यादृष्टिके होता हुआ भी वह मनुष्यायुकी अपेक्षा अनन्तगुणा है, क्योंकि, शुभ प्रकृतियोंके बहुत अनुभागबन्धका अपसरण नहीं होता ।

उससे कामर्ण शरीर अनन्तगुणा है ॥ १६२ ॥

इसका कारण प्रकृतिकी विशेषता है ।

उससे तिर्यग्गति अनन्तगुणी है ॥ १६३ ॥

कारण कि वह सर्वविशुद्ध सातवीं पृथिवीके मिथ्यादृष्टि नारकी जीवके द्वारा बाँधी गई है ।

उससे नरकगति अनन्तगुणी है ॥ १६४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असण्णिपंचिंदियतिरिक्खगइसंकिलेसादो अणंतगुणसंकिलेसेण बद्धत्तादो ।

मणुसगदी अणंतगुणा ॥ १६५ ॥

जदि वि एदिस्से एइंदिएसु जहण्णबंधो जादो तो वि एसा णिरयगदिं पेक्खिदूण अणंतगुणा, सुहपयडित्तादो ।

देवगदी अणंतगुणा ॥ १६६ ॥

जदि वि एदिस्से जहण्णबंधो असण्णिपंचिंदिएसु परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेसु जादो तो वि मणुसगदिं पेक्खिदूण देवगदी अणंतगुणा, एइंदियपरियत्तमाणमज्झिमपरिणामादो असण्णिपंचिंदियपरियत्तमाणमज्झिमपरिणामाणमणंतगुणत्तदंसणादो ।

णीचागोदमणंतगुणं ॥ १६७ ॥

जदि वि एदस्स सत्तमपुढवीणेरइएसु सव्वविसुद्धपरिणामेसु जहण्णं जादं तो वि देवगदीदो णीचागोदमणंतगुणं, साभावियादो ।

अजसकित्ती अणंतगुणा ॥ १६८ ॥

पमत्तसंजदेण सव्वविसुद्धेण पबद्धत्तादो ।

असादावेदणीयमणंतगुणं ॥ १६९ ॥

एदस्स जहण्णबंधो जदि वि पमत्तसंजदम्मि चेव जादो तो वि तत्तो एदस्स

क्योंकि वह असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच गतिके संक्लेशकी अपेक्षा अनन्तगुणे संक्लेशके द्वारा बांधी गई है।

उससे मनुष्यगति अनन्तगुणी है ॥ १६५ ॥

यद्यपि इसका एकेन्द्रियोंमें जघन्य बन्ध होता है तो भी यह नरकगतिकी अपेक्षा अनन्तगुणी है, क्योंकि, वह शुभ प्रकृति है ।

उससे देवगति अनन्तगुणी है ॥ १६६ ॥

यद्यपि इसका जघन्य बन्ध परिवर्तमान मध्यम परिणामोंसे युक्त असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके होता है तो भी मनुष्यगतिकी अपेक्षा देवगति अनन्तगुणी है, क्योंकि, एकेन्द्रियके परिवर्तमान मध्यम परिणामोंकी अपेक्षा असंज्ञी पंचेन्द्रियके परिवर्तमान मध्यम परिणाम अनन्तगुणे देखे जाते हैं ।

उससे नीचगोत्र अनन्तगुणा है ॥ १६७ ॥

यद्यपि सर्वविशुद्ध परिणामवाले सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें इसका जघन्य बन्ध होता है, तो भी देवगतिकी अपेक्षा नीचगोत्र अनन्तगुणा है, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उससे अयशःकीर्ति अनन्तगुणी है ॥ १६८ ॥

क्योंकि वह, सर्वविशुद्ध प्रमत्तसंयत जीवके द्वारा बांधी गई है ।

उससे असातावेदनीय अनन्तगुणो है ॥ १६९ ॥

यद्यपि इसका जघन्य बन्ध प्रमत्तसंयतके ही होता है, तो भी उससे इसका अनुभाग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुभागो अणंतगुणो पयडिविसेसेण ।

जसकित्ती उच्चागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि ॥१७०॥

एदेसिं दोण्णं पि पंचिंदिएसु अइतिव्वसंकिलिट्ठमिच्छाइट्ठीसु जदि वि जहण्णं जादं तो वि तत्तो एदेसिमणुभागो अणंतगुणो, सुहपयडीणं बहुवाणुभागबंधोसरणाभावादो ।

सादावेदणीयमणंतगुणं ॥ १७१ ॥

एदस्स वि जहण्णाणुभागबंधस्स सव्वसंकिलिट्ठो मिच्छाइट्ठी चेव सामी, किं तु पयडिविसेसेण अणंतगुणो ।

णिरयाउअमणंतगुणं ॥ १७२ ॥

कुदो ? साभावियादो ।

देवाउअमणंतगुणं ॥ १७३ ॥

कारणं सुगमं ।

आहारसरीरमणंतगुणं ॥ १७४ ॥

अप्पमत्तसंजदेण तप्पाओग्गविसुद्धेण पबद्धत्तादो ।

एवं जहण्णयं चउसट्ठिपदियं परत्थाणप्पाबहुगं समत्तं ।

संपहि एदेण सूचिदसत्थाणप्पाबहुगं वत्तइस्सामो—सव्वमंदाणुभागं मणपज्जव-

---

प्रकृतिविशेष होनेसे अनन्तगुणा है ।

उससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्र दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणे हैं ॥१७०॥

यद्यपि अति तीव्र संक्लेशयुक्त पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंमें इन दोनों ही प्रकृतियोंका जघन्य बन्ध होता है, तो भी असाता वेदनीयकी अपेक्षा इनका अनुभाग अनन्तगुणा है; क्योंकि, शुभ प्रकृतियों के बहुत अनुभाग बन्धका अपसरण नहीं होता ।

उनसे सातावेदनीय अनन्तगुणी है ॥ १७१ ॥

इसके भी जघन्य अनुभागबन्धका स्वामी सर्वसंक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीव ही है, किन्तु प्रकृतिविशेष होनेसे वह उक्त दोनों प्रकृतियोंसे अनन्तगुणी है ।

उससे नारकायु अनन्तगुणी है ॥ १७२ ॥

क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

उससे देवायु अनन्तगुणी है ॥ १७३ ॥

इसका कारण सुगम है ।

उससे आहारक शरीर अनन्तगुणा है ॥१७४ ॥

क्योंकि, वह तत्प्रायोग्य विशुद्धिको प्राप्त अप्रमत्तसंयत जीवके द्वारा बांधा गया है ।

इस प्रकार चौंसठ पदवाला जघन्य परस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

अब इससे सूचित होनेवाले स्वस्थान अल्पबहुत्वको कहते हैं—मनःपर्ययज्ञानावरणीय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाणावरणीयं । ओहिणाणावरणीयमणंतगुणं । सुदणाणावरणीयमणंतगुणं । आभिणिबोहियणाणावरणीयमणंतगुणं । केवलणाणावरणीयमणंतगुणं ।

सव्वमंदाणुभागमोहिदंसणावरणीयं । अचक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणं । चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणं । केवलदंसणावरणीयमणंतगुणं । पचला अणंतगुणा । णिद्दा अणंतगुणा । णिद्दाणिद्दा अणंतगुणा । पयलापयला अणंतगुणा । थीणगिद्धी अणंतगुणा ।

सव्वमंदाणुभागमसादावेदणीयं । सादावेदणीयमणंतगुणं ।

सव्वमंदाणुभागं लोभसंजलणं । मायासंजलणमणंतगुणं । माणसंजलणमणंतगुणं । कोधसंजलणमणंतगुणं । पुरिसवेदो अणंतगुणो । हस्समणंतगुणं । रदी अणंतगुणा । दुगुंछा अणंतगुणा । भयमणंतगुणं । सोगो अणंतगुणो । अरदी अणंतगुणा । इत्थिवेदो अणंतगुणो । णवुंसयवेदो अणंतगुणो । पच्चक्खाणमाणो अणंतगुणो । कोधो विसेसाहिओ । माया विसेसाहिया । लोभो विसेसाहिओ । अपच्चक्खाणमाणो अणंतगुणो । कोधो विसेसाहिओ । माया विसेसाहिया । लोभो विसेसाहिओ । अणंताणुबंधिमाणो अणंतगुणो । कोधो विसेसाहिओ । माया विसेसाहिया । लोभो विसेसाहिओ । मिच्छत्तमणंतगुणं ।

सर्वमन्द अनुभागसे युक्त है । उससे अवधिज्ञानावरणीय अनन्तगुणा है । उससे श्रुतज्ञानावरणीय अनन्तगुणा है । उससे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय अनन्तगुणा है । उससे केवलज्ञानावरणीय अनन्तगुणा है ।

अवधिदर्शनावरणीय सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे अचक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणा है । उससे चक्षुदर्शनावरणीय अनन्तगुणा है । उससे केवल दर्शनावरणीय अनन्तगुणा है । उससे प्रचला अनन्तगुणी है । उससे निद्रा अनन्तगुणी है । उससे निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है । उससे प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है । उससे स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है ।

आसातावेदनीय सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे सातावेदनीय अनन्तगुणा है ।

संज्वलन लोभ सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे संज्वलन माया अनन्तगुणी है । उससे संज्वलन मान अनन्तगुणा है । उससे संज्वलन क्रोध अनन्तगुणा है उससे पुरुषवेद अनन्तगुणा है । उससे हास्य अनन्तगुणा है । उससे रति अनन्तगुणी है । उससे जुगुप्सा अनन्तगुणी है । उससे भय अनन्तगुणा है । उससे शोक अनन्तगुणा है । उससे अरति अनन्तगुणी है । उससे स्त्रीवेद अनन्तगुणा है । उससे नपुंसकवेद अनन्तगुणा है । उससे प्रत्याख्यानावरण मान अनन्तगुणा है । उससे प्रत्याख्यानावरण क्रोध विशेष अधिक है । उससे प्रत्याख्यानावरण माया विशेष अधिक है । उससे प्रत्याख्यानावरण लोभ विशेष अधिक है । उससे अप्रत्याख्यानावरण मान अनन्तगुणा है । उससे अप्रत्याख्यानावरण क्रोध विशेष अधिक है । उससे अप्रत्याख्यानावरण माया विशेष अधिक है । उससे अप्रत्याख्यानावरण लोभ विशेष अधिक है । उससे अनन्तानुबन्धी मान अनन्तगुणा है । उससे अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेष अधिक है । उससे अनन्तानुबन्धी माया विशेष अधिक है । उससे अनन्तानुबन्धी लोभ विशेष अधिक है । उससे मिथ्यात्व अनन्तगुणा है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वमंदाणुभागं तिरिक्खाउगं । मणुसाउअमणंतगुणं । णिरयाउअमणंतगुणं । [देवाउअमणंतगुणं] ।

सव्वमंदाणुभागा तिरिक्खगई । णिरयगई अणंतगुणा । मणुसगई अणंतगुणा । देवगई अणंतगुणा ।

सव्वमंदाणुभागा चउरिंदियजादी । तीइंदियजादी अणंतगुणा । बीइंदियजादी अणंतगुणा । एइंदियजादी अणंतगुणा । पंचिंदियजादी अणंतगुणा ।

सव्वमंदाणुभागं ओरालियसरीरं । वेउव्वियसरीरमणंतगुणं । तेजइयसरीरमणंतगुणं । कम्मइयसरीरमणंतगुणं । आहारसरीरमणंतगुणं ।

सव्वमंदाणुभागं णग्गोधसंठाणं । सादियसंठाणमणंतगुणं । खुज्जसंठाणमणंतगुणं । वामणसंठाणमणंतगुणं । हुंगगसंठाणमणंतगुणं । समचउरससंठाणमणंतगुणं ।

सव्वमंदाणुभागमोरालियसरीरअंगोवंगं । वेउव्वियसरीरअंगोवंगमणंतगुणं । आहारसरीरअंगोवंगमणंतगुणं ।

संघडणाणं संठाणभंगो । सव्वमंदाणुभागमप्पसत्थवण्णाइचउक्कं । पसत्थचउक्कमणंतगुणं । जहा गई तहा आणुपुव्वी । सव्वमंदाणुभागं उववादं । परघादमणंतगुणं ।

तिर्यगायु सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे मनुष्यायु अनन्तगुणी है । उससे नारकायु अनन्तगुणी है । [उससे देवायु अनन्तगुणी है ।]

तिर्यग्गति सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे नरकगति अनन्तगुणी है । उससे मनुष्यगति अनन्तगुणी है । उससे देवगति अनन्तगुणी है ।

चतुरिन्द्रिय जाति सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे त्रीन्द्रिय जाति अनन्तगुणी है । उससे द्वीन्द्रिय जाति अनन्तगुणी है । उससे एकेन्द्रिय जाति अनन्तगुणी है । उससे पञ्चेन्द्रिय जाति अनन्तगुणी है ।

औदारिक शरीर सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे वैक्रियिक शरीर अनन्तगुणा है । उससे तैजस शरीर अनन्तगुणा है । उससे कार्मण शरीर अनन्तगुणा है । उससे आहारक शरीर अनन्तगुणा है ।

न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थान सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे स्वाति संस्थान अनन्तगुणा है । उससे कुब्जक संस्थान अनन्तगुणा है । उससे वामन संस्थान अनन्तगुणा है । उससे हुंडक संस्थान अनन्तगुणा है । उससे समचतुरस्र संस्थान अनन्तगुणा है ।

औदारिक शरीर अंगोपांग सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे वैक्रियिकशरीरांगोपांग अनन्तगुणा है । उससे आहारकशरीरांगोपांग अनन्तगुणा है ।

संहननोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा संस्थानोंके समान है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क सर्वमन्द अनुभागसे सहित है । उससे प्रशस्त वर्णचतुष्क अनन्तगुणा है । जिस प्रकार गतिके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार आनुपूर्वीके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनी चाहिये । उपघात

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

उस्सासमणंतगुणं। अगुरुलहुवमणंतगुणं। सव्वमंदाणुभागा अप्पसत्थविहायगई। [पसत्थविहायगई] अणंतगुणा। तसादिदसजुगलस्स सादासादभंगो।

सव्वमंदाणुभागं णीचागोदं। उच्चागोदमणंतगुणं। सव्वमंदाणुभागं दाणंतराइयं। एवं परिवाडीए उवरिमचत्तारि वि अणंतगुणा। एवं सत्थाणजहण्णप्पाबहुगं समत्तं।

पढमा चूलिया

संपहि एत्तो उवरि चूलियं भणिस्सामो। तं जहा—

सम्मत्तुप्पत्ती वि य सावय-विरदे अणंतकम्मंसे।
दंसणमोहक्खवए कसायउवसामए य उवसंते ॥ ७ ॥
खवए य खीणमोहे जिणे य णियमा भवे असंखेज्जा।
तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणा य सेडीओ[1] ॥ ८ ॥

एदाओ दो वि गाहाओ एक्कारसगुणसेडीयो णिज्जरमाणपदेसकालेहि विसेसिदूण

सर्वमन्द अनुभागसे सहित है। उससे परघात अनन्तगुणा है। उससे उच्छ्वास अनन्तगुणा है। उससे अगुरुलघु अनन्तगुणा है।

अप्रशस्त विहायोगति सर्वमन्द अनुभागसे सहित है। उससे प्रशस्त विहायोगति अनन्तगुणी है। त्रसादिक दस युगलोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा साता व असाता वेदनीयके समान है।

नीच गोत्र सर्वमन्द अनुभागसे सहित है। उससे उच्च गोत्र अनन्तगुणा है।

दानान्तराय सर्वमन्द अनुभागसे सहित है, इस प्रकार परिपाटी क्रमसे आगेकी चार अन्तराय प्रकृतियाँ उत्तरोत्तर अनन्तगुणी हैं।

इस प्रकार जघन्य स्वस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

अब यहाँसे आगे चूलिकाको कहते हैं। वह इस प्रकार है—

सम्यक्त्वोत्पत्ति अर्थात् सातिशय मिथ्यादृष्टि, श्रावक अर्थात् देशव्रती, विरत अर्थात् महाव्रती, अनन्तानुबन्धी कषायका विसंयोजन करनेवाला, दर्शनमोहका क्षपक, चारित्रमोहका उपशामक, उपशान्तकषाय, क्षपक, क्षीणमोह और स्वस्थान जिन व योगनिरोधमें प्रवृत्त जिन इन स्थानोंमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणी निर्जरा होती है। परन्तु निर्जराका काल उससे विपरीत अर्थात् आगेसे पीछेकी ओर बढ़ता हुआ है जो संख्यातगुणित श्रेणि रूप है ॥ ७-८ ॥

ये दोनों ही गाथायें निर्जीर्ण होनेवाले प्रदेश और कालसे विशेषित ग्यारह गुणश्रेणियोंका कथन करती हैं।

१ त. सू. ९-४५। जयध. अ. ३९७। गो. जी. ६७. सम्मत्तुप्पत्तासावय-विरए संजोयणाविणासे य। दंसणमोहक्खगे कसायउवसामगुवसंते ॥ खवगे य खीणमोहे जिणे य दुविहे असंखगुणसेढी। उदओ तव्विवरीओ कालो संखेजगुणसेडी ॥ क. प्र. ६, ८-९.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परूवेंति। भावविहाणे परूविज्जमाणे एक्कारसगुणसेडिपदेसणिज्जरपरूवणा तक्कालपरूवणा च किमट्ठं कीरदे ? विसोहीहि अणुभागक्खएण पदेसणिज्जराजाणावणदुवारेण जीव-कम्माणं संबंधस्स अणुभागो चेव कारणमिदि जाणावणट्ठं वुच्चदे। अहवा, दव्वविहाणे जहण्णसामित्ते भण्णमाणे गुणसेडिणिज्जरा सूचिदा। तिस्से गुणसेडिणिज्जराए भावो कारणमिदि भावविहाणे तव्वियप्पपरूवणट्ठं वुच्चदे।

'सम्मत्तुप्पत्ति'त्ति भणिदे दंसणमोहउवसामणं कादूण पढमसम्मत्तुप्पायणं घेत्तव्वं। 'सावए'त्ति भणिदे देसविरदीए गहणं। 'विरदे' त्ति भणिदे संजयस्स गहणं। 'अणंतकम्मंसे' त्ति वुत्ते अणंताणुबंधिविसंजोयणा घेत्तव्वा। 'दंसणमोहक्खवगे'त्ति वुत्ते दंसणमोहणीयक्खवगो घेत्तव्वो। 'कसायउवसामगे' त्ति वुत्ते चरित्तमोहणीयउवसामगो घेत्तव्वो। 'उवसंते'त्ति वुत्ते उवसंतकसाओ घेत्तव्वो। 'खवगे' त्ति वुत्ते चरित्तमोहणीयखवगो घेत्तव्वो। 'खीणमोहे' त्ति भणिदे खीणकसायस्स गहणं। 'जिणे' त्ति भणिदे सत्थाणजिणाणं जोगणिरोहे वा वावदजिणाणं च गहणं।

एदेण[1] गाहासुत्तकलावेण एक्कारस[2] पदेसगुणसेडिणिज्जरा परूविदा। 'तव्विवरीदो

शङ्का—भावविधानका कथन करते समय ग्यारह गुणश्रेणियोंमें होनेवाली प्रदेशनिर्जराका कथन और उसके कालका कथन किसलिये करते हैं ?

समाधान—विशुद्धियोंके द्वारा अनुभागक्षय होता है और उससे प्रदेशनिर्जरा होती है इस बातका ज्ञान करानेसे जीव और कर्मके सम्बन्धका कारण अनुभाग ही है, इस बातको बतलानेके लिये उक्त कथन किया जा रहा है। अथवा, द्रव्यविधानमें जघन्य स्वामित्वकी प्ररूपणा करते हुए गुणश्रेणिनिर्जराकी सूचना की गई थी। उस गुणश्रेणिनिर्जराका कारण भाव है, अतएव यहाँ भावविधानमें उसके विकल्पोंका कथन करनेके लिये यह कथन किया जा रहा है।

पूर्वोक्त गाथामें 'सम्मत्तुप्पत्ती' ऐसा कहने पर दर्शनमोहका उपशम करके प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिका ग्रहण करना चाहिये। 'सावए' कहनेसे देशविरतिका ग्रहण किया गया है। 'विरदे' कहनेपर संयतका ग्रहण करना चाहिये। 'अणंतकम्मंसे' ऐसा निर्देश करनेपर अनन्तानुबन्धी कषायकी विसंयोजनाका ग्रहण करना चाहिये। 'दंसणमोहक्खवगे' ऐसा कहने पर दर्शनमोहनीयके क्षपकका ग्रहण करना चाहिये। 'कसायउवसामगे' कहने पर चारित्रमोहनीयका उपशम करनेवाले जीवका ग्रहण करना चाहिये। 'उवसंते' कहनेपर उपशान्तकषाय जीवका ग्रहण करना चाहिये। 'खवगे' कहने पर चारित्रमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवका ग्रहण करना चाहिये। 'खीणमोहे' ऐसा कहनेपर क्षीणकषाय जीवका ग्रहण करना चाहिये। 'जिणे' कहनेपर स्वस्थान जिनोंका और योगनिरोधमें प्रवर्तमान जिनोंका ग्रहण करना चाहिए।

इस गाथा सूत्रकलापके द्वारा ग्यारह प्रदेशगुणश्रेणिनिर्जराओंकी प्ररूपणा की गई है।

१ प्रतिषु एदेण सुत्त इति पाठः। २. प्रतिषु एक्कारसगाहापदेस—इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

कालो' एदेसिं गुणसेडिणिक्खेवद्धाणं पुण विवरीदं होदि। उवरिदो हेट्ठा वड्ढमाणं गच्छदि त्ति भणिदं होदि। पुव्वं व असंखेज्जगुणसेडीए पत्तवुड्ढीए पडिसेहट्ठं 'संखेज्जगुणाए सेडीए' त्ति भणिदं। एवं दोगाहाहि परूविदएक्कारसगुणसेडीणं बालजणाणुग्गहट्ठं पुणरवि परूवणं कीरदे त्ति उवरिमसुत्तं भणदि—

सव्वत्थोवो दंसणमोहउवसामयस्स गुणसेडिगुणो ॥१७५॥

गुणो गुणगारो, तस्स सेडी ओली पंती गुणसेडी णाम। दंसणमोहुवसामयस्स पढमसमए णिज्जिण्णदव्वं थोवं। विदियसमए णिज्जिण्णदव्वमसंखेज्जगुणं। तदियसमए णिज्जिण्णदव्वमसंखेज्जगुणं। एवं णेयव्वं जाव दंसणमोहउवसामगचरिमसमओ त्ति। एसा गुणगारपंत्ती गुणसेडि त्ति भणिदं होदि। गुणसेडीए गुणो गुणसेडिगुणो, गुणसेडिगुणगारो त्ति भणिदं होदि। एदस्स भावत्थो—सम्मत्तुप्पत्तीए जो गुणसेडिगुणगारो सव्वमहंतो सो[1] वि उवरि भण्णमाणजहण्णगुणगारादो वि थोवो त्ति भणिदं होदि।

संजदासंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥१७६॥

संजदासंजदस्स गुणसेडिणिज्जराए जो जहण्णओ गुणगारो सो पुव्विल्लउक्कस्सगुणगारादो असंखेज्जगुणो।

'तव्विवरीदो कालो' परन्तु इनका गुणश्रेणिनिक्षेप अध्वान उससे विपरीत है, अर्थात् आगेसे पीछेकी ओर वृद्धिंगत होकर जाता है, यह उक्त कथनका तात्पर्य है। पूर्वके समान असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे प्राप्त वृद्धिका प्रतिषेध करनेके लिये 'संखेज्जगुणाए सेडीए' यह कहा है।

इस प्रकार दो गाथाओंके द्वारा कही गई ग्यारह गुणश्रेणियोंका मन्दबुद्धि शिष्योंका अनुग्रह करनेके लिए पुनः दूसरी बार कथन करते हैं। इसके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

दर्शनमोहका उपशम करनेवालेका गुणश्रेणिगुणकार सबसे स्तोक है ॥१७५॥

गुण शब्दका अर्थ गुणकार है। तथा उसकी श्रेणि, आवलि या पंक्तिका नाम गुणश्रेणि है। दर्शनमोहका उपशम करनेवाले जीवका प्रथम समयमें निर्जराको प्राप्त होनेवाला द्रव्य स्तोक है। उससे द्वितीय समयमें निर्जराको प्राप्त हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा है। उससे तीसरे समयमें निर्जराको प्राप्त हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा है। इस प्रकार दर्शनमोह उपशामकके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिये। यह गुणकारपंक्ति गुणश्रेणि है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। तथा गुणश्रेणिका गुण गुणश्रेणिगुण अर्थात् गुणश्रेणिगुणकार कहलाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसका भावार्थ यह है—सम्यक्त्वकी उत्पत्तिमें जो गुणश्रेणिगुणकार सर्वोत्कृष्ट है वह भी आगे कहे जानेवाले गुणकारकी अपेक्षा स्तोक है, यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

उससे संयतासंयतका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥१७६॥

संयतासंयतकी गुणश्रेणिनिर्जराका जो जघन्य गुणकार है वह पूर्वके उत्कृष्ट गुणकारकी अपेक्षा असंख्यातगुणा है।

---

१ अ-काप्रत्योः 'से' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अधापवत्तसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥१७७॥

संजदासंजदस्स उक्कस्सगुणसेडिगुणगारादो सत्थाणसंजदस्स जहण्णगुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो। संजमासंजमपरिणामादो जेण संजमपरिणामो अणंतगुणो तेण पदेसणिज्जराए वि अणंतगुणाए होदव्वं, एदम्हादो अण्णत्थ सव्वत्थ कारणाणुरूवकज्जुवलंभादो त्ति ? ण, जोगगुणगाराणुसारिपदेसगुणगारस्स अणंतगुणत्तविरोहादो। ण च पदेसणिज्जराए अणंतगुणत्तब्भुवगमो जुत्तो, गुणसेडिणिज्जराए विदियसमए चेव णिव्वुइप्पसंगादो। ण च कज्जं कारणाणुसारी चेव इत्ति णियमो अत्थि, अंतरंगकारणावेक्खाए पवत्तस्स कज्जस्स बहिरंगकारणाणुसारित्तणियमाणुववत्तीदो। सम्मत्तसहायसंजम-संजमासंजमेहि जायमाणा गुणसेडिणिज्जरा सम्मत्तवदिरित्तसंजम-संजमासंजमेहि चेव होदि त्ति कधमुच्चदे ? ण, अप्पहाणीकयसम्मत्तभावादो। अधवा, सो संजमो जो सम्मत्ताविणाभावी ण अण्णो, तत्थ गुणसेडिणिज्जराकज्जाणुवलंभादो। तदो संजमगहणादेव सम्मत्तसहायसंजमसिद्धी जादा।

उससे अधःप्रवृत्तसंयतका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥१७७॥

संयतासंयतके उत्कृष्ट गुणश्रेणिगुणकारकी अपेक्षा स्वस्थानसंयतका जघन्य गुणकार असंख्यातगुणा है।

शंका—यतः संयमासंयम रूप परिणामकी अपेक्षा संयमरूप परिणाम अनन्तगुणा है, अतः संयमासंयम परिणामकी अपेक्षा संयम परिणामके द्वारा होनेवाली प्रदेशनिर्जरा भी अनन्तगुणी होनी चाहिये, क्योंकि, इससे दूसरी जगह सर्वत्र कारणके अनुरूप ही कार्यकी उपलब्धि होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रदेशनिर्जराका गुणकार योगगुणकारका अनुसरण करनेवाला है, अतएव उसके अनन्तगुणे होनेमें विरोध आता है। दूसरे, प्रदेशनिर्जरामें अनन्तगुणत्व स्वीकार करना उचित नहीं है, क्योंकि, ऐसा स्वीकार करनेपर गुणश्रेणिनिर्जराके दूसरे समयमें ही मुक्तिका प्रसङ्ग आवेगा। तीसरे, कार्य कारणका अनुसरण करता ही हो, ऐसा भी कोई नियम नहीं है, क्योंकि, अन्तरंग कारणकी अपेक्षा प्रवृत्त होनेवाले कार्यके बहिरंग कारणके अनुसरण करनेका नियम नहीं बन सकता।

शंका—सम्यक्त्व सहित संयम और संयमासंयमसे होनेवाली गुणश्रेणिनिर्जरा सम्यक्त्वके विना संयम और संयमासंयमसे ही होती है, यह कैसे कहा जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, यहाँ सम्यक्त्व परिणामको प्रधानता नहीं दी गई है। अथवा, संयम वही है जो सम्यक्त्वका अविनाभावी है अन्य नहीं। क्योंकि, अन्यमें गुणश्रेणिनिर्जरा रूप कार्य नहीं उपलब्ध होता। इसलिए संयमके ग्रहण करनेसे ही सम्यक्त्व सहित संयमकी सिद्धि हो जाती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणंताणुबंधी विसंजोएंतस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्ज-गुणो ॥ १७८ ॥

सत्थाणसंजदउक्कस्सगुणसेडिगुणगारादो असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद-संजदेसु अणंताणुबंधिं विसंजोएंतस्स जहण्णगुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो। एत्थ सव्वत्थ गुणसेडिगुणगारो त्ति वुत्ते गलमाणपदेसगुणसेडिगुणगारो णिसिंचमाणपदेसगुणसेडिगुणगारो च घेत्तव्वो। कधमेदं लब्भदे ? गुणसेडिगुणो त्ति सामण्णणिद्देसादो। संजमपरिणामेहिंतो अणंताणुबंधिं विसंजोएंतस्स असंजदसम्मादिट्ठिस्स परिणामो अणंतगुणहीणो, कधं तत्तो असंखेज्जगुणपदेसणिज्जरा जायदे ? ण एस दोसो, संजमपरिणामेहिंतो अणंताणुबंधीणं विसंजोजणाए कारणभूदाणं सम्मत्तपरिणामाणमणंतगुणत्तुवलंभादो। जदि सम्मत्तपरिणामेहि अणंताणुबंधीणं विसंजोजणा कीरदे तो सव्वसम्माइट्ठीसु तब्भावो[1] पसज्जदि त्ति वुत्ते ण, विसिट्ठेहि चेव सम्मत्त[2]परिणामेहि तव्विसंजोयणब्भुवगमादो त्ति।

उससे अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवालेका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥१७८॥

स्वस्थान संयतके उत्कृष्ट गुणश्रेणिगुणकारकी अपेक्षा असंयतसम्यग्दृष्टि, संयतासंयत और संयत जीवोंमें अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन करनेवाले जीवका जघन्य गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है।

यहाँ सब जगह 'गुणश्रेणिगुणकार' ऐसा कहनेपर गलमान प्रदेशोंका गुणश्रेणिगुणकार और निसिंचमान प्रदेशोंका गुणश्रेणिगुणकार ग्रहण करना चाहिये।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—यह 'गुणश्रेणिगुणकार' ऐसा सामान्य निर्देश करनेसे जाना जाता है।

शंका—संयमरूप परिणामोंकी अपेक्षा अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन करनेवाले असंयतसम्यग्दृष्टिका परिणाम अनन्तगुणा हीन होता है, ऐसी अवस्थामें उससे असंख्यातगुणी प्रदेश निर्जरा कैसे हो सकती है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि संयमरूप परिणामोंकी अपेक्षा अनन्तानुबन्धी कषायोंकी विसंयोजनामें कारणभूत सम्यक्त्वरूप परिणाम अनन्तगुणे उपलब्ध होते हैं।

शंका—यदि सम्यक्त्वरूप परिणामोंके द्वारा अनन्तानुबन्धी कषायोंकी विसंयोजना की जाती है तो सभी सम्यग्दृष्टि जीवोंमें उसकी विसंयोजनाका प्रसंग आता है ?

समाधान—ऐसा पूछने पर उत्तरमें कहते हैं कि सब सम्यग्दृष्टियोंमें उसकी विसंयोजना का प्रसंग नहीं आ सकता, क्योंकि, विशिष्ट सम्यक्त्वरूप परिणामोंके द्वारा ही अनन्तानुबन्धी कषायोंकी विसंयोजना स्वीकार की गई है।

१ प्रतिषु 'तदभावो' इति पाठः। २ प्रतिषु 'सव्वत्थ' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दंसणमोहक्खवगस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥ १७९ ॥

अणंताणुबंधिं विसंजोएंतस्स दोण्णं गुणसेडीणमुक्कस्सगुणगारादो[1] दंसणमोहणीयं खवेंतस्स दुविहगुणसेडीणं जहण्णगुणगारो असंखेज्जगुणो। तीदाणागद-वट्टमाणपदेसगुणगारो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो दट्ठव्वो।

कसायउवसामगस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥ १८० ॥

दंसणमोहणीयं खवेंतस्स दुविहगुणसेडीणमुक्कस्सगुणगारादो कसाए उवसामेंतस्स जहण्णओ वि गुणगारो असंखेज्जगुणो। दंसणमोहणीयखवगगुणसेडिगुणगारादो अपुव्वउवसामगस्स गुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो। अणियट्टिउवसामगस्स गुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो। सुहुमसांपराइयस्स गुणसेडिगुणगारो असंखेज्जगुणो। एवं चारित्तमोहक्खवगाणं पि पुध पुध गुणगारप्पाबहुए भण्णमाणे गुणसेडिणिज्जरा एक्कारसविहा फिट्टिदूण पण्णारसविहा होदि त्ति भणिदे ण, णइगमणए अवलंबिज्जमाणे तिण्णमुवसामगाणं तिण्णं खवगाणं च एगत्तप्पणाए एक्कारसगुणसेडिणिज्जरुवलंभादो।

उससे दर्शनमोहका क्षय करनेवाले जीवका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥ १७९ ॥

अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले जीवके दोनों गुणश्रेणि सम्बन्धी उत्कृष्ट गुणकारकी अपेक्षा दर्शनमोहका क्षय करनेवाले जीवकी दोनों प्रकारकी गुणश्रेणियोंका जघन्य गुणकार असंख्यातगुणा है। अतीत, अनागत और वर्तमान प्रदेशगुणश्रेणिगुणकार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण जानना चाहिये।

उससे कषायोपशामक जीवका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥ १८० ॥

दर्शनमोहनीयका क्षय करनेवाले जीवकी दोनों प्रकारकी गुणश्रेणियोंके उत्कृष्ट गुणकारकी अपेक्षा कषायोंका उपशम करनेवाले जीवका जघन्य गुणकार असंख्यातगुणा है। दर्शनमोहनीयके क्षपक के गुणश्रेणिगुणकारसे अपूर्वकरण उपशामकका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है। उससे अनिवृत्तिकरण उपशामकका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है। उससे सूक्ष्मसाम्परायिकका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है।

शंका— इसी प्रकार चारित्रमोहके क्षपकोंके भी पृथक् पृथक् गुणकारके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनेपर गुणश्रेणिनिर्जरा ग्यारह प्रकारकी न रहकर पन्द्रह प्रकारकी हो जाती है?

समाधान— इस शंकाके उत्तरमें कहते हैं कि वह पन्द्रह प्रकारकी नहीं होती, क्योंकि नैगम नयका अवलम्बन करनेपर तीन उपशामकों और तीन क्षपकोंके एकत्वकी विवक्षा होनेपर ग्यारह प्रकारकी गुणश्रेणिनिर्जरा बन जाती है।

---

१ ता-प्रतिपाठोऽयम्। अ-आ-प्रत्योः 'गुणगारो' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

उवसंतकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्ज-गुणो ॥ १८१ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । एत्थ मोहणीयं मोत्तूण सेस-कम्माणं दुविहगुणसेडीणं गुणगारस्स अप्पाबहुगपरूवणं कायव्वं, उवसंतमोहणीयकम्मस्स णिज्जराभावादो ।

कसायखवगस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥१८२॥

उवसंतकसायदुविहगुणसेडिउक्कस्सगुणगारेहिंतो तिण्णं खवगाणं दव्वट्ठियणएण-एयत्तमावण्णाणं दुविहगुणगारो गुणसेडिजहण्णओ वि असंखेज्जगुणो । सेसं सुगमं ।

खीणकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्ज-गुणो ॥ १८३ ॥

कुदो ? मोहणीयस्स बंधुदय-संताभावेण वड्ढिदअणंतगुणकम्मणिज्जरणसत्तीदो ?

अधापवत्तकेवलिसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥१८४॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । कुदो ? घादिकम्मक्खएण वड्ढिदाणंतगुणकम्मणिज्जरणपरिणामादो ।

उससे उपशान्तकषाय वीतराग छद्मस्थका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यात-गुणा है ॥ १८१ ॥

शंका—गुणकार कितना है ?

समाधान—वह पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

यहाँ मोहनीय कर्मको छोड़कर शेष कर्मोंकी दोनों गुणश्रेणियोंके गुणकार सम्बन्धी अल्प-बहुत्वकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, यहां उपशम भावको प्राप्त मोहनीय कर्मकी निर्जरा सम्भव नहीं है ।

उससे कषायक्षपकका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥ १८२ ॥

उपशान्तकषायकी दोनों गुणश्रेणियों सम्बन्धी उत्कृष्ट गुणकारकी अपेक्षा द्रव्यार्थिक नयसे अभेदको प्राप्त हुए तीन क्षपकोंका जघन्य भी गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है । शेष कथन सुगम है ।

उससे क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है॥१८३

क्योंकि मोहनीयके बन्ध, उदय व सत्त्वका अभाव हो जानेसे कर्मनिर्जराकी शक्ति अनन्त-गुणी वृद्धिंगत हो जाती है।

उससे अधःप्रवृत्त केवली संयतका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥१८४॥

गुणकार क्या है ? गुणकार पल्योपमका असंख्यातवां भाग है, क्योंकि, घातिया कर्मोंके क्षीण हो जानेसे कर्मनिर्जराका परिणाम अनन्तगुणी वृद्धिको प्राप्त हो जाता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जोगणिरोधकेवलिसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ॥ १८५॥

कुदो ? साभावियादो ।

संपहि 'तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणो [य] सेडीए' एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

(सव्वत्थोवो जोगणिरोधकेवलिसंजदस्स गुणसेडिकालो ॥ १८६॥)

जोगणिरोधं कुणमाणो सजोगिकेवली आउववज्जाणं कम्माणं पदेसमोकड्डिदूण उदए थोवं देदि । विदियसमए असंखेज्जगुणं देदि । तदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं णिसिंचदि । एवं ताव णिसिंचदि जाव अंतोमुहुत्तं । तदुवरिमसमए असंखेज्जगुणं णिसिंचदि । तत्तो विसेसहीणं जाव अप्पप्पणो अइच्छावणावलियमपत्तो त्ति । एत्थ जं गुणसेडीए कम्मपदेसणिक्खेवद्धाणं तं थोवं, सव्वजहण्णअंतोमुहुत्तपमाणत्तादो ।

अधापवत्तकेवलिसंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १८७॥

एत्थ वि उदयादिगुणसेडिकमो पुव्वं व परूवेदव्वो । णवरि पुव्विल्लगुणसेडिपदेसणिसेगद्धाणादो एदस्स गुणसेडीए पदेसणिसेगद्धाणं संखेज्जगुणं । को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

खीणकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १८८॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

उससे योगनिरोधकेवली संयतका गुणश्रेणिगुणकार असंख्यातगुणा है ॥ १८५ ॥

क्योंकि ऐसा स्वभाव है ।

अब 'तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणो [य] सेडीए' इस गाथासूत्रके अर्थका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

योगनिरोध केवली संयतका गुणश्रेणिकाल सबसे स्तोक है ॥ १८६ ॥

योगनिरोध करनेवाला सयोगकेवली आयुको छोड़कर शेष कर्मोंके प्रदेशोंका अपकर्षण कर उदयमें स्तोक देता है । उससे द्वितीय समयमें असंख्यातगुणा देता है । उससे तीसरी स्थितिमें असंख्यातगुणा निक्षिप्त करता है । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल तक निक्षिप्त करता है । उससे आगेके समयमें असंख्यातगुणे प्रदेश निक्षिप्त करता है । आगे अपनी अपनी अतिस्थापनावलिको नहीं प्राप्त होने तक विशेष हीन निक्षिप्त करता है । यहां गुणश्रेणि कर्मप्रदेशनिक्षेपका अध्वान स्तोक है, क्योंकि, वह सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है ।

उससे अधःप्रवृत्त केवली संयतका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १८७ ॥

यहांपर भी उदयादि गुणश्रेणिका क्रम पहिलेके ही समान कहना चाहिए । विशेष इतना है कि पहिलेके गुणश्रेणिप्रदेशनिषेकके अध्वानसे अधःप्रवृत्त केवलीके गुणश्रेणिप्रदेशनिषेकका अध्वान संख्यातगुणा है । गुणाकार क्या है ? गुणाकार संख्यात समय है ।

उससे क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १८८ ॥

गुणकार क्या है । गुणकार संख्यात समय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कसायखवगस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १८९ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया । एत्थ गुणसेडीए पदेसणिक्खेवकमो संभरिय वत्तव्वो ।

उवसंतकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिकालो संखेज्ज-गुणो ॥ १९० ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

कसायउवसामयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९१ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

दंसणमोहक्खवयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९२ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

अणंताणुबंधिविसंजोएंतस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९३ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

अधापवत्तसंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९४ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया । अधापवत्तसंजदो एयंताणुवड्डिआदिकिरिया-विरहिदसंजदो त्ति एयट्ठो ।

संजदासंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥ १९५ ॥

उससे कषायक्षपकका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १८९ ॥

गणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है । यहां गुणश्रेणिके प्रदेशनिक्षेपक्रमको स्मरण करके कहना चाहिये ।

उससे उपशान्तकषाय वीतराग छद्मस्थका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९० ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है ।

उससे कषायोपशामकका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९१ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है ।

उससे दर्शनमोहक्षपकका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९२ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है ।

उससे अनन्तानुबन्धिविसंयोजकका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९३ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है ।

उससे अधःप्रवृत्तसंयतका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९४ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय हैं । अधःप्रवृत्तसंयत और एकान्तानुवृद्धि आदि क्रियाओंसे रहित संयत, इन दोनोंका अर्थ एक है ।

उससे संयतासंयतका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९५ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

दंसणमोहउवसामयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ॥१९६॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया । एत्थ संदिट्ठी[1]—

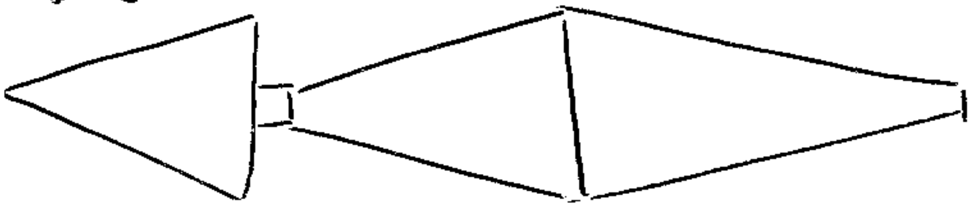

एवं पढमा चूलिया समत्ता ।

विदिया चूलिया

संपहि विदियचूलियापरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

एत्तो अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणपरूवणदाए तत्थ इमाणि बारस अणियोगद्दाराणि ॥१९७॥

'अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि' त्ति उत्ते अणुभागट्ठाणाणं गहणं कायव्वं ।

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है ।

उससे दर्शनमोहोपशामकका गुणश्रेणिकाल संख्यातगुणा है ॥ १९६ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय हैं ।

विशेषार्थ—यहाँ मूलमें गुणश्रेणि रचनाका ज्ञान करानेके लिए तथा रचनाके आकारमात्रको प्रदर्शित करनेके लिए संदृष्टि दी है । गुणश्रेणि रचना दो प्रकारकी होती है—उदयादि गुणश्रेणि रचना और उदयावलि बाह्य गुणश्रेणि रचना । इन दोनों विकल्पोंको ध्यानमें रख कर यह संदृष्टि दी गई है । यदि उदयादि गुणश्रेणि रचना होती है तो उदय समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त प्रमाण निषेकोंकी असंख्यात गुणित क्रमसे प्रदेश रचना होती है और यदि उदयावलि बाह्य गुणश्रेणि रचना होती है तो उदयावलिको छोड़ कर आगेके अन्तर्मुहूर्त प्रमाण निषेकोंकी असंख्यात गुणित क्रमसे प्रदेश रचना होती है । इससे आगे प्रथम समयमें असंख्यातगुणे प्रदेश निक्षिप्त होते हैं और तदनन्तर एक एक चय न्यून क्रमसे प्रदेश निक्षिप्त होते हैं । यही भाव इस संदृष्टिमें निहित है ।

इस प्रकार प्रथम चूलिका समाप्त हुई ।

अब द्वितीय चूलिकाकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

इसके आगे अनुभागबन्धाध्यवसान स्थानकी प्ररूपणाका अधिकार है । उसमें ये बारह अनुयोगद्वार हैं ॥ १९७ ॥

अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान कहनेपर अनुभागस्थानोंका ग्रहण करना चाहिये ।

---

१ ताप्रतावत्र 'एत्थ संदिट्ठी—' इत्येतन्निर्देशपुरस्सरं सा संदृष्टिरुपादत्ता या खल्वप्रतौ १९६ तमसूत्रस्यान्ते 'बाहुवलियं ण नवरय० एत्थ संदिट्ठी' एवंविधोल्लेखपूर्वकमुपादत्ता । आप्रतौ त्वेषा संदृष्टिः 'अधापवत्तकेवलि·········कालो संखेज्जगुणो' इत्यादिसूत्राणां मध्य उपादत्ता ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कधमणुभागबंधट्ठाणाणमणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणसण्णा ? ण एस दोसो, कज्जे कारणोवयारेण तेसिं तण्णामुववत्तीदो। किमट्ठमेसा चूलिया आगया ? अजहण्णअणुक्कस्सट्ठाणाणि पुव्विल्लेसु तिसु अणियोगद्दारेसु सूचिदाणि चेव ण परूविदाणि, तेसिं परूवणट्ठमिमा आगदा; अण्णहा अवुत्तसमाणत्तप्पसंगादो। तम्हि परूविज्जमाणे बारस चेव अणियोगद्दाराणि होंति, अण्णेसिमसंभवादो। तेसिमणियोगद्दाराणं णामणिद्देसो उत्तरसुत्तेण कीरदे—

अविभागपडिच्छेदपरूवणा ट्ठाणपरूवणा अंतरपरूवणा कंदयपरूवणा ओजजुम्मपरूवणा छट्ठाणपरूवणा हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समयपरूवणा वड्ढिपरूवणा जवमज्झपरूवणा पज्जवसाणपरूवणा अप्पाबहुए त्ति ॥ १९८ ॥

अविभागपडिच्छेदपरूवणा किमट्ठमागदा ? एक्केक्कम्हि अणुभागबंधट्ठाणे एत्तिया अविभागपडिच्छेदा होंति त्ति जाणावणट्ठमागदा। ठाणपरूवणा णाम किमट्ठमागदा ? अणुभागबंधट्ठाणाणि सव्वाणि वि एत्तियाणि चेव होंति त्ति जाणावणट्ठमागदा। अंतरपरूवणा किमट्ठमागदा ? एक्केक्कस्स ट्ठाणस्स संखेज्जासंखेज्जाणंताविभागपडिच्छेदेहि अंतरं

शंका—अनुभाग बन्धस्थानोंकी अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान संज्ञा कैसे सम्भव है ?

समाधान - यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, कार्यमें कारणका उपचार करनेसे उनकी वह संज्ञा बन जाती है।

शंका इस चूलिकाका अवतार किसलिये हुआ है ?

समाधान—पहिले तीन अनुयोगद्वारोंमें अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थानोंकी सूचना मात्र की है, प्ररूपणा नहीं की है। अतएव उनकी प्ररूपणा करनेके लिये इस चूलिकाका अवतार हुआ है, क्योंकि, अन्यथा अनुक्तसमानताका प्रसंग आता है।

उनकी प्ररूपणा करनेपर भी बारह ही अनुयोगद्वार होते हैं, क्योंकि, और दूसरे अनुयोग द्वारोंकी सम्भावना नहीं है। उन अनुयोगद्वारोंका नामनिर्देश आगेके सूत्र द्वारा करते हैं—

अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा, स्थानप्ररूपणा, अन्तरप्ररूपणा, काण्डकप्ररूपणा, ओज-युग्मप्ररूपणा, षट्स्थानप्ररूपणा, अधस्तनस्थानप्ररूपणा, समयप्ररूपणा, वृद्धिप्ररूपणा, यवमध्यप्ररूपणा, पर्यवसानप्ररूपणा और अल्पबहुत्व ॥ १९८ ॥

अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा किसलिये की गई है ? एक एक अनुभागबन्धस्थानमें इतने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं, यह बतलानेके लिये उक्त प्ररूपणा की गई है।

स्थानप्ररूपणा किसलिये की गई है ? सभी अनुभागबन्धस्थान इतने ही होते हैं, यह बतलानेके लिये उक्त प्ररूपणा की गई है।

अन्तरप्ररूपणा किसलिये की गई है ? एक एक स्थानका संख्यात, असंख्यात व अनन्त अविभागप्रतिच्छेदोंके द्वारा अन्तर नहीं होता, किन्तु सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेदोंसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ण होदि त्ति, किं तु सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तअविभागपडिच्छेदेहि अंतरिदूण अण्णट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति जाणावणट्ठमागदा। कंदयपरूवणा किमट्ठमागदा ? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो एगं कंदयं। पुणो एगकंदयपमाणेण अणंतभागवड्ढी-असंखेज्जभागवड्ढी-संखेज्जभागवड्ढी-संखेज्जगुणवड्ढी-असंखेज्जगुणवड्ढी-अणंतगुणवड्ढीयो कादूण जोइज्जमाणे सव्ववड्ढीयो णिरग्गाओ होंति त्ति जाणावणट्ठमागदा। ओज-जुम्मपरूवणा किमट्ठमागदा ? सव्वाणि अणुभागट्ठाणाणि सव्वाविभागपडिच्छेदा वग्गणाओ फद्दयाणि कंदयाणि च कदजुम्माणि चेव इत्ति जाणावणट्ठमागदा। छट्ठाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? अणंतभागवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिभागहारो सव्वजीवरासी, असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिभागहारो असंखेज्जा लोगा, संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिभागहारो उक्कस्ससंखेज्जयं, संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिगुणगारो उक्कस्ससंखेज्जयं, असंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिगुणगारो असंखेज्जा लोगा, अणंतगुणवड्ढिट्ठाणेसु वड्ढिगुणगारो सव्वजीवरासी होदि त्ति जाणावणट्ठमागदा। हेट्ठाट्ठाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? कंदयमेत्तअणंतभागवड्ढीयो गंतूण असंखेज्जभागवड्ढी होदि, कंदयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढीयो गंतूण संखेज्जभागवड्ढी होदि, कंदयमेत्तसंखेज्जभागवड्ढीयो गंतूण संखेज्जगुणवड्ढी होदि, कंदयमेत्तसंखेज्जगुणवड्ढीयो गंतूण असंखेज्जगुणवड्ढी होदि,

---

अन्तरको प्राप्त होकर दूसरा स्थान उत्पन्न होता है, यह जतलानेके लिए अन्तरप्ररूपणा की गई है।

काण्डकप्ररूपणा किसलिये आई है ? अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र एक काण्डक होता है। पुनः एक काण्डकके प्रमाणसे अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि, इन वृद्धियोंको करके देखनेपर वे निरग्र होती हैं, यह बतलानेके लिये काण्डकप्ररूपणा आई है।

ओज-युग्मप्ररूपणा किसलिये आई है ? सब अनुभागस्थान, सब अविभागप्रतिच्छेद, वर्गणायें, स्पर्धक और काण्डक कृतयुग्म ही होते हैं, यह जतलानेके लिये उक्त प्ररूपणा आई है।

षट्स्थानप्ररूपणा किसलिये आई है ? अनन्तभागवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका भागहार सर्व जीवराशि है, असंख्यातभागवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका भागहार असंख्यात लोक है, संख्यातभागवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका भागहार उत्कृष्ट संख्यात है, संख्यातगुणवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका गुणकार उत्कृष्ट संख्यात है, असंख्यातगुणवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका गुणकार असंख्यात लोक है तथा अनन्तगुणवृद्धिके स्थानोंमें वृद्धिका गुणकार सर्व जीवराशि है, यह बतलानेके लिये षट्स्थानप्ररूपणा आई है।

अधस्तनस्थानप्ररूपणा किसलिये आई है ? काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियाँ होने पर असंख्यातभागवृद्धि होती है, काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियाँ होने पर संख्यातभागवृद्धि होती है, काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियाँ होने पर संख्यातगुणवृद्धि होती है, काण्डकप्रमाण संख्यातगुणवृद्धियाँ होने पर असंख्यातगुणवृद्धि होती है, तथा काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धियाँ होने पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कंदयमेत्तअसंखेज्जगुणवड्डीयो गंतूण अणंतगुणवड्डी होदि त्ति जाणावणट्ठमागदा। समय-परूवणा किमट्ठमागदा ? एदाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि जहण्णेण एत्तियं कालं बज्झंति उक्कस्सेण एत्तियमिदि जाणावणट्ठमागदा। वड्ढिपरूवणा किमट्ठमागदा ? अणुभाग-बंधट्ठाणेसु अणंतभागवड्ढि-हाणीयो आदिं कादूण वड्ढि-हाणीयो छच्चेव होंति। एदासिं बंधकालो जहण्णुक्कस्सेण एत्तियो होदि त्ति जाणावणट्ठमागदा। जवमज्झपरूवणा किम-ट्ठमागदा ? अणंतगुणवड्ढिम्हि कालजवमज्झस्स आदी होदूण अणंतगुणहाणीए समत्ता त्ति जाणावणट्ठमागदा। पज्जवसाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? सव्वसमयट्ठाणाणं पज्जव-साणं [1]अणंतगुणस्स उवरि अणंतगुणं भविस्सदि त्ति पज्जवसाणं जादमिदि जाणावण-ट्ठमागदा। अप्पाबहुए त्ति किमट्ठमागदं। एक्कम्हि छट्ठाणम्हि अणंतगुणवड्ढिआदिट्ठा-णाणं थोवबहुत्तपरूवणट्ठमागदं। एदं देसामासियं सुत्तं, तेण [2]बंधसमुप्पत्तिय[3]-हदसमु-

अनन्तगुणवृद्धि होती है, यह दिखलानेके लिये उक्त प्ररूपणा आई है।

समय प्ररूपणा किसलिये आई है ? ये अनुभागबन्धस्थान जघन्य रूपसे इतने काल तक बँधते हैं और उत्कृष्ट रूपसे इतने काल तक बँधते हैं, यह जतलानेके लिये समय प्ररूपणा आई है।

वृद्धिप्ररूपणा किसलिये आई है ? अनुभागबन्धस्थानोंमें अनन्तभागवृद्धि और अनन्तभाग-हानिसे लेकर वृद्धियाँ व हानियाँ छह ही होती हैं, इनका बन्धकाल जघन्य व उत्कृष्ट रूपसे इतना है, यह जतलानेके लिये वृद्धिप्ररूपणा आई है।

यवमध्यप्ररूपणा किसलिये आई है ? अनन्तगुणवृद्धिमें कालयवमध्यका प्रारम्भ होकर वह अनन्तगुणहानिमें समाप्त होता है, यह बतलानेके लिये यवमध्यप्ररूपणा आई है।

पर्यवसानप्ररूपणा किसलिये आई है ? सब समयस्थानों का पर्यवसान अनन्तगुणितके ऊपर अनन्तगुणा होगा तब पर्यवसान होता है, यह बतलानेके लिये पर्यवसानप्ररूपणा आई है।

अल्पबहुत्व किसलिये आया है ? एक षट्स्थानमें अनन्तगुणवृद्धि आदि स्थानोंके अल्प-बहुत्वकी प्ररूपणा करनेके लिये आया है।

यह देशामर्शक सूत्र है, अतएव बन्धसमुत्पत्तिक, हतसमुत्पत्तिक और हतहतसमु-

१ प्रतिषु 'पज्जवसाणअणंत—' इति पाठः। २ तत्थ हदसमुप्पत्तिय कादूणच्छिदसुहुमणिगोदजहण्णा-णुभागसंतट्ठाणसमाणबंधट्ठाणमादिं कादूण जाव सण्णिपंचिंदियपज्जत्तसव्वुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणे त्ति ताव एदाणि असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि बंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि त्ति भणंति, बंधेण समुप्पण्णत्तादो। जयध. अ. प. ३१३. ३ पुणो एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं मज्झे अणंतगुणवड्ढिअणंतगुणहाणिअट्ठंकुव्वंकाणं विचालेसु असं-खेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि हदसमुप्पत्तियसंतकम्मट्ठाणाणि भणंति, बंधट्ठाणघादेण बंधट्ठाणाणं विचालेसु जच्चंतरभावेण उप्पण्णत्तादो। जयध. अ. प. ३१३–१४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्पत्तिय[1]-हदहदसमुप्पत्तिय[2]ट्ठाणेसु तिसु वि एदाणि बारसाणियोगद्दाराणि परूवेदव्वाणि। तत्थ ताव बंधट्ठाणेसु एदाणि अणियोगद्दाराणि भणिस्सामो। कुदो? बंधादो संतुप्पत्ति-दंसणादो।

अविभागपडिच्छेदपरूवणदाए एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि केवडिया अविभागपडिच्छेदा? अणंता अविभागपडिच्छेदा सव्वजीवेहि अणंतगुणा, एवदिया अविभागपडिच्छेदा ॥१९९॥

संपहि जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमस्सिदूण विभागपडिच्छेदपमाणपरूवणा कीरदे—को अणुभागो णाम? अट्ठण्णं वि कम्माणं जीवपदेसाणं[3] च अण्णोण्णाणुगमणहेदुपरिणामो। पयडी अणुभागो किण्ण होदि? ण, जोगादो उप्पज्जमाणपयडीए कसायदो उप्पत्तिविरोहादो। ण च भिण्णकारणाणं कज्जाणमेयत्तं, विप्पडिसेहादो। किं च अणुभागवुड्ढी पयडिवुड्ढिणिमित्ता, तीए महंतीए संतीए पयडिकज्जस्स अण्णाणादियस्स वुड्ढिदंसणादो।

त्पत्तिक इन तीनों ही स्थानोंमें इन बारह अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये। उनमें पहिले बन्धस्थानोंमें इन अनुयोगद्वारोंको कहेंगे, क्योंकि, बन्धसे सत्त्वकी उत्पत्ति देखी जाती है।

अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणाका प्रकरण है—एक एक स्थानमें कितने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं? अनन्त अविभागप्रतिच्छेद होते हैं जो सब जीवोंसे अनन्तगुणे होते हैं, इतने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं ॥ १९९ ॥

अब जघन्य अनुभागबन्धस्थानका आश्रय लेकर अविभागप्रतिच्छेदोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं।

शंका—अनुभाग किसे कहते हैं?

समाधान—आठों कर्मों और जीवप्रदेशोंके परस्परमें अन्वय (एकरूपता) के कारणभूत परिणामको अनुभाग कहते हैं।

शंका—प्रकृति अनुभाग क्यों नहीं होती?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रकृति योगके निमित्तसे उत्पन्न होती है, अतएव उसकी कषायसे उत्पत्ति होनेमें विरोध आता है। भिन्न कारणोंसे उत्पन्न होनेवाले कार्योंमें एकरूपता नहीं हो सकती, क्योंकि इसका निषेध है। दूसरे, अनुभागकी वृद्धि प्रकृतिकी वृद्धिमें निमित्त होती है,

१ हते घातिते समुत्पत्तिर्यस्य तदुत्तरसमुत्पत्तिकं कर्म अणुभागसंतकम्मे वा जमुव्वरिदं जहण्णाणुभागसंतकम्मं तस्स हदसमुप्पत्तियकम्ममिदि सण्णा। जयध. अ. प. ३२२.

२ पुणो एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्ताणं हदसमुप्पत्तियसंतकम्मट्ठाणाणमणंतगुणवड्ढि-हाणिअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चालेसु असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणा हदहदसमुप्पत्तियसंतट्ठाणाणि वुच्चंति, घादेणुभागगट्ठाणेहिंतो विसरिसाणि घादिय बंधसमुप्पत्तिय-हदसमुप्पत्तिपअणुभागट्ठाणेहिंतो विसरिसभावेण उप्पायिदत्तादो। जयध. अ. प. ३१४

३ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ प्रत्योः 'कम्माणं जे पदेसाणं', ताप्रतौ 'कम्माणं [जे] पेदसाणं' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

तम्हा ण पयडिअणुभागो त्ति घेत्तव्वो। अण्णोण्णं पासहेदुगुणस्स अणुभागत्ते संते उदयावलियाए ट्ठिदपदेसग्गाणमुक्कस्साणुभागाभावो पसज्जदि त्ति णासंकणिज्जं, ठिदिक्खएण अण्णोण्णपासक्खएण णियमाणुववत्तीदो। तत्थ एक्कम्हि परमाणुम्हि जो जहण्णेणवट्ठिदो[1] अणुभागो तस्स अविभागपडिच्छेदो त्ति सण्णा। ठाणम्हि जहण्णेणवट्ठिद[2]-अणुभागस्स अविभागपडिच्छेदसण्णा णत्थि, तत्थ णिव्वियप्पत्ताभावादो। पुणो एदेण अविभागपलिच्छेदपमाणेण जहण्णाणुभागट्ठाणे कदे सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्ता अविभागपडिच्छेदा होंति।

एत्थ ताव दव्वट्ठियणयमस्सिदूण जं जहण्णट्ठाणं तस्साविभागपडिच्छेदाणमवट्ठाणकमो उच्चदे। तं जहा—णइगमणयमस्सिदूण जं जहण्णाणुभागट्ठाणं तस्स सव्वपरमाणुपुंजं एकदो कादूण ठ्ठविय तत्थ सव्वमंदाणुभागपरमाणुं घेत्तूण वण्ण-गंध-रसे[3] मोत्तूण पासं चेव बुद्धीए घेत्तूण तस्स पण्णाच्छेदो[4] कायव्वो जाव विभागवज्जिदपरिच्छेदो[5] त्ति। तस्स अंतिमस्स खंडस्स अच्छेज्जस्स अविभागपडिच्छेद इदि सण्णा। पुणो तेण पमाणेण

क्योंकि, उसके महान् होनेपर प्रकृतिके कार्य रूप अज्ञानादिकी वृद्धि देखी जाती है। इस कारण प्रकृति अनुभाग नहीं हो सकती, ऐसा यहाँ जानना चाहिये।

शंका—परस्पर स्पर्शके हेतुभूत गुणको यदि अनुभाग स्वीकार किया जाता है तो उदयावलिमें स्थित प्रदेशाग्रोंके उत्कृष्ट अनुभागके अभावका प्रसंग आता है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, स्थितिके क्षयसे परस्पर स्पर्शका अभाव होता है, ऐसा नियम नहीं बनता।

एक परमाणुमें जो जघन्यरूपसे अवस्थित अनुभाग है उसकी अविभागप्रतिच्छेद संज्ञा है। स्थानमें जघन्यरूपसे अवस्थित अनुभागकी अविभागप्रतिच्छेद संज्ञा नहीं है, क्योंकि वहाँ निर्विकल्परूपता नहीं उपलब्ध होती। अब इस अविभागप्रतिच्छेदके प्रमाणसे जघन्य अनुभागस्थानका विभाग करनेपर वहाँ सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेद होते हैं।

यहाँ सर्व प्रथम द्रव्यार्थिक नयका आश्रय करके जो जघन्य स्थान है उसके अविभागप्रतिच्छेदोंके अवस्थानक्रमको कहते हैं। यथा—नैगमनयका आश्रय करके जो जघन्य अनुभागस्थान है उसके सब परमाणुओंके समूहको एकत्रित करके स्थापित करे। फिर उनमेंसे सर्वमन्द अनुभागसे संयुक्त परमाणुको ग्रहण करके वर्ण, गन्ध और रसको छोड़कर केवल स्पर्शका ही बुद्धिसे ग्रहण कर उसका विभाग रहित छेद होने तक प्रज्ञाके द्वारा छेद करना चाहिये। उसे नहीं छेदने योग्य अन्तिम खण्डकी अविभागप्रतिच्छेद संज्ञा है। पश्चात् उक्त प्रमाणसे सब स्पर्श-

---

१ अ-आप्रत्योः 'वड्ढीदो', ताप्रतौ 'वड्ढिदो' इति पाठः। २ अप्रतौ 'ठाणम्हि जेण वडिद', आ-ताप्रत्योः 'ठाणम्हि जहण्णेण वड्ढिद' इति पाठः। ३ ताप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः 'वग्गो' इति पाठः। ४ ताप्रतौ 'पण्ण' इति पाठः। ५ आप्रतौ 'जाव विभागपडिछेदो' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सव्वपासखंडेसु खंडिदेसु सव्वजीवेहि अणंतगुणअविभागपडिच्छेदा लब्भंति। तेसिं सव्वेसिं पि वग्ग इदि सण्णा। सो च संदिट्ठीए अणंतो वि संतो अट्ठ इदि घेत्तव्वो [८]। पुणो तम्हि चेव परमाणुपुंजम्हि तस्सरिसविदियपरमाणुं घेत्तूण तप्पासस्स पुव्वं व पण्णच्छेदणए कदे एत्थ वि तत्तिया चेव अविभागपडिच्छेदा लब्भंति। अच्छेज्जस्स परमाणुस्स कधं छेदो कीरदे? ण एस दोसो, तस्स दव्वमेव अच्छेज्जं, ण गुणा इदि अब्भुवगमादो। परमाणुगुणाणं वड्ढि-हाणीए संतीए परमाणुत्तं कधं ण विरुज्झदे? ण, दव्वदो वड्ढि-हाणिअभावं पडुच्च परमाणुत्तब्भुवगमादो। एसो विदियो वग्गो अणंतो वि संतो संदिट्ठीए अट्ठसंखो पुव्विल्लवग्गपासे ट्ठवेयव्वो [८ ८]। एदेण कमेण गुणेण पुव्विल्लपरमाणुसरिसएगेगपरमाणुं घेत्तूण तेसिं गहिदपरमाणूणं पासस्स अविभागपडिच्छेदे कदे एगेगो वग्गो उप्पज्जदि। एवं ताव कादव्वं जाव जहण्णगुणपरमाणू सव्वे णिट्ठिदा त्ति। एवं कदे अभवसिद्धिएहि अणंतगुणा सिद्धाणमणंतभागमेत्ता वग्गा लद्धा भवंति। तेसिं पमाणं संदिट्ठीए एवं [८ ८ ८ ८]। एदेसिं सव्वेसिं पि दव्वट्ठियणए अवलंबिदे वग्गणा इदि सण्णा।

खंडोंके खण्डित करनेपर सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेद प्राप्त होते हैं। उन सभीकी वर्ग यह संज्ञा है। उसका प्रमाण अनन्त होकर भी संदृष्टिमें आठ (८) ऐसा ग्रहण करना चाहिए। पुनः उसी परमाणुपुंजमेंसे उसके सदृश दूसरे परमाणुको ग्रहण कर उसके स्पर्शके पहिलेके समान प्रज्ञाके द्वारा च्छेद करनेपर यहाँ भी उतने ही अविभागप्रतिच्छेद उपलब्ध होते हैं।

शंका—नहीं छिदने योग्य परमाणुका छेद कैसे किया जा सकता है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उसका केवल द्रव्य ही अच्छेद्य है, गुण नहीं, ऐसा यहाँ स्वीकार किया गया है।

शंका—परमाणुके गुणोंमें वृद्धि एवं हानि होनेपर उसका परमाणुपना कैसे विरोधको नहीं प्राप्त होगा?

समाधान—नहीं, क्योंकि, द्रव्यकी अपेक्षा वृद्धि व हानिके अभावका आश्रय लेकर परमाणुपना स्वीकार किया गया है।

यह द्वितीय वर्ग अनन्त होता हुआ भी संदृष्टिमें आठ संख्या रूप है। इसे पूर्व वर्गके पासमें स्थापित करना चाहिये। ८ ८। इस क्रम से गुणकी अपेक्षा पूर्व परमाणुके सदृश एक एक परमाणुको लेकर उन ग्रहण किये गये परमाणुओंमें स्थित स्पर्शके अविभागप्रतिच्छेद करनेपर एक एक वर्ग उत्पन्न होता है। इस क्रियाको जघन्य गुणवाले सब परमाणुओंके समाप्त होने तक करना चाहिये। ऐसा करनेपर अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग प्रमाण वर्ग प्राप्त होते हैं। उनका प्रमाण संदृष्टिमें इस प्रकार है ८ ८ ८ ८। इन सबोंकी द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर 'वर्गणा' संज्ञा है।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

कधं वग्गाणं वग्गणा इदि ववएसो ? ण, वग्ग-वग्गणाणं भेदोवलंभादो। वग्गाणं समूहो वग्गणा, तेसिं चेव असमूहो वग्गो। वग्गणा एगा, वग्गा अणंता। तम्हा ण तेसिमेयत्तमिदि। जदि पुण वग्गेहिंतो वग्गणाए अभेदो विवक्खिज्जदे तो वग्गणाओ वि अणंताओ चेव, वग्गभेदेण तदभिण्णवग्गणाए वि भेदुवलंभादो। तम्हा एगा वि वग्गणा होदि वग्गमेत्ता वि, णत्थि एत्थ एयंतो। तत्थ दव्वट्ठियणयावलंबणाए एसा एया वग्गणा त्ति पज्जवट्ठियणयावलंबणाए एदाओ अणंताओ वग्गणाओ त्ति वा पुध ट्ठवेदव्वं। एवं ठविय पुणो अण्णं परमाणुं पुव्विल्लपुंजादो घेत्तूण पण्णच्छेदणए कदे संपहि पुव्विल्लपुंजादो एग[1]परमाणुअविभागपडिच्छेदेहिंतो एगाविभागपडिच्छेदेण अहिया लब्भंति [९]। एसो एत्थ वग्गो त्ति पुध ट्ठवेदव्वो। एदेण कमेण तस्सरिसमेगेगपरमाणुं घेत्तूण तप्पडिच्छेदं कादूण अणंता वग्गणा उप्पादेदव्वा जाव तस्सरिसपरमाणू सव्वे णिट्ठिदा[2] त्ति। तेसिं पमाणमेदं [९ ९ ९]। एत्थ वि पुव्वं व एसा वग्गणा एया अणंता त्ति वा वत्तव्वं। एयत्तं मोत्तूण अणंतत्तं ण प्पसिद्धमिदि चे ? एयत्तं कत्थ सिद्धं ? पाहुडचुण्णिसुत्ते सुपसिद्धं, लोगपूरणाए एया वग्गणा जोगस्स[3] इत्ति

शंका—वर्गोंकी वर्गणा संज्ञा कैसे हो सकती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, वर्ग और वर्गणामें भेद उपलब्ध होता है। वर्गोंके समूहका नाम वर्गणा है और उन्हींके असमूहका नाम वर्ग है वर्गणा एक होती है, परन्तु वर्ग अनन्त होते हैं। इस कारण वे दोनों एक नहीं हो सकते।

परन्तु यदि वर्गोंसे वर्गणाका अभेद कहना चाहते हैं तो वर्गणायें भी अनन्त ही होंगी, क्योंकि, वर्गोंके भेदसे उनसे अभिन्न वर्गणाका भेद पाया जाता है। इसलिये वर्गणा एक भी होती है और वर्गोंके बराबर भी इस विषयमें कोई एकान्त नहीं है। द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर यह एक वर्गणा है और पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर ये अनन्त वर्गणायें हैं। इसलिए इसको पृथक् स्थापित करना चाहिये। इस प्रकार स्थापित करके पुनः पूर्वोक्त पुंजमेंसे अन्य परमाणुको ग्रहण कर बुद्धिसे छेद करनेपर अब पूर्वोक्त पुंजसे एक परमाणुके अविभाग-प्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा इसमें एक अधिक अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते हैं। ९। यह यहाँपर वर्ग है, अतः उसे पृथक् स्थापित करना चाहिये। इस क्रमसे तत्समान एक एक परमाणुको ग्रहण कर तथा उस एक एक परमाणुके प्रतिच्छेद करके उसके सदृश सब परमाणुओंके समाप्त होने तक अनन्त वर्गोंको उत्पन्न करना चाहिये। उनका प्रमाण यह है। ९ ९ ९। यहाँ भी पहिलेके ही समान यह वर्गणा एक भी है अथवा अनन्त भी हैं, ऐसा कहना चाहिये।

शंका—वर्गणाकी एक संख्याको छोड़कर अनन्तता प्रसिद्ध नहीं है ?

प्रतिशंका—उसकी एकता कहाँ प्रसिद्ध है ?

प्रतिशंकाका समाधान—वह कषायप्राभृतके चूर्णिसूत्रमें प्रसिद्ध है, क्योंकि, वहाँ 'लोकपूरण

१ अ-आप्रत्योः 'एगा' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'णेट्ठिदा' इति पाठः।

३ लोगे पुण्णे एक्का वग्गणा जोगस्स त्ति समजोगो त्ति णायव्वो। जयध. १२३६.

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

भणिदत्तादो । वग्गणावियप्पो [1]एगवियप्पो जोगो सव्वजीवपदेसाणं जादो त्ति उत्तं होदि ? ण एस दोसो, एक्किस्से वग्गणाए कत्थ वि अणेयववहारुवलंभादो । तं कधं णव्वदे ? एगपदेसियवग्गणा केवडिया ? अणंता, दुपदेसियवग्गणा अणंता, इच्चादिवग्गणवक्खाणादो णव्वदे । ण हि [2]वक्खाणमप्पमाणं, चुण्णिसुत्तस्स वि वक्खाणत्तणेण[2] समाणस्स अप्पमाणत्तप्पसंगादो । पुणो एदमुक्खिविय[3] पढमवग्गणाए उवरि ट्ठविदे विदियवग्गणा होदि । एवं तदिय-चउत्थ-पंचमादिवग्गणाओ अविभागपडिच्छेदुत्तरकमेण उवरि उवरि वड्ढमाणाओ[4] उप्पादेदव्वाओ जाव अभवसिद्धिएहि अणंतगुण सिद्धाणमणंतभागमेत्तवग्गणाओ उप्पण्णाओ त्ति । पुणो एत्तियमेत्तवग्गणाओ घेत्तूण जहण्णट्ठाणस्स एगं फद्दयं होदि ।

कधं फद्दयसण्णा ? क्रमेण स्पर्द्धते वर्द्धत इति स्पर्द्धकम् । एदस्स कधमेयत्तं ?

अवस्थामें योगकी एक वर्गणा होती है' ऐसा कहा गया है । लोकपूरणसमुद्घातके होनेपर समस्त जीवप्रदेशोंमें एक विकल्प रूप योगके होनेसे वर्गणा एक होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंकाका समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, एक वर्गणामें कहींपर अनेकत्वका भी व्यवहार उपलब्ध होता है ।

शंका—वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—एक प्रदेशवाली वर्गणा कितनी हैं ? अनन्त हैं । दो प्रदेशवाली वर्गणा अनन्त हैं, इत्यादि वर्गणा व्याख्यानसे जाना जाता है । यदि कहा जाय कि यह वर्गणाव्याख्यान अप्रमाण है, सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, व्याख्यान रूपसे चूर्णिसूत्र भी समान है इसलिए उसकी भी अप्रमाणताका प्रसंग आता है ।

पुनः इसको उठाकर प्रथम वर्गणाके आगे रखनेपर द्वितीय वर्गणा होती है । इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एक अविभागप्रतिच्छेदकी अधिकताके क्रमसे आगे आगे अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र वर्गणाओंके उत्पन्न होने तक तृतीय, चतुर्थ व पंचम आदि वर्गणाओंको उत्पन्न कराना चाहिये । इतनी मात्र वर्गणाओंको ग्रहण कर जघन्य स्थानका एक स्पर्धक होता है ।

शंका—स्पर्धक संज्ञा कैसे है ?

समाधान—क्रमसे जो स्पर्धा करता है अर्थात् बढ़ता है वह स्पर्द्धक है ।

शंका—वह एक कैसे है ?

---

१ 'प्रतिषु' ण वि वक्खाण–' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'विवक्खाणत्तणेण' इति पाठः । ३ ताप्रतौ 'एदमक्खिविय' इति पाठः । ४ अ-आप्रत्योः 'वड्ढमाणीए', ताप्रतौ 'वड्ढमाणीए (ओ)' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतरिदूण वड्ढीए अणुवलंभादो । पढमवग्गणाविभागपडिच्छेदसमूहादो विदियवग्गणाविभागपडिच्छेदसमूहो अणंतेहि अविभागपडिच्छेदेहि ऊणो, विदियादो[१] तदियो वि तत्तो विसेसाहिएहिंतो ऊणो त्ति फद्दयत्तं ण जुज्जदे, कमवड्ढीए कमहाणीए वा अभावादो ? ण, भावविहाणे अप्पहाणीकयसमाणधणपरमाणुपुंजे एगोलीवड्ढिं मोत्तूण णाणोलिवड्ढि-हाणिग्गहणाभावादो । ण च एगोलीए कमवड्ढी णत्थि, उवलंभादो । किमट्ठं भावविहाणे समाणधणपरमाणुविवक्खा ण कीरदे ? बंधाणुभागखंडयघादेहि विणा उक्कड्डण-ओकड्डणाहि वड्ढि-हाणीयो ण होंति त्ति जाणावणट्ठं । तं पि किमट्ठं जाणाविज्जदे ? एगपरमाणुम्हि ट्ठिदाणुभागस्स ट्ठाणत्तपदुप्पायणट्ठं । ण भिण्णपरमाणुट्ठिदअणुभागो ट्ठाणं, एक्कम्हि चेव अणुभागट्ठाणे अणंतट्ठाणत्तप्पसंगादो । ण जोगट्ठाणेण वियहिचारो, एयदव्वसत्तीए एयत्तं पडि विरोहाभावादो । ण जीवपदेसभेदेण भेदो, अवयवभेदेण दव्वभेदा-

समाधान—क्योंकि उसमें अन्तर देकर वृद्धि नहीं उपलब्ध होती, अतः वह एक है ।

शंका—चूँकि प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंके समूहसे द्वितीय वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंका समूह अनन्त अविभाग प्रतिच्छेद हीन है तथा द्वितीयकी अपेक्षा तृतीय भी उनसे विशेष अधिक अविभागप्रतिच्छेद हीन है, इसलिए पूर्वोक्त स्पर्द्धकका स्वरूप नहीं बनता, क्योंकि, उसमें क्रमवृद्धि अथवा क्रमहानिका अभाव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, समान धनवाले परमाणुपुंजको अप्रधान करनेवाले भावविधान अनुयोग द्वारमें एक श्रेणिवृद्धिको छोड़कर नानाश्रेणिरूप वृद्धि व हानिका ग्रहण नहीं किया गया है और एक श्रेणिसे क्रमवृद्धि न हो, ऐसा भी नहीं है, क्योंकि वह पाई जाती है ।

शंका—भावविधान अनुयोगद्वारमें समान धनवाले परमाणुओंकी विवक्षा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान—बद्धानुभाग काण्डकघातोंके बिना उत्कर्षण और अपकर्षणके द्वारा वृद्धि व हानि नहीं होती, इस बातके ज्ञापनार्थ वहाँ समान धनवाले परमाणुओंकी विवक्षा नहीं की गई है ।

शंका—उसका ज्ञापन किसलिये कराया जा रहा है ?

समाधान—एक परमाणुमें स्थित अनुभागकी स्थानरूपता बतलानेके लिये उसका ज्ञापन कराया जा रहा है । भिन्न परमाणुओंमें स्थित अनुभाग स्थान नहीं हो सकता, क्योंकि, इस प्रकारसे एक ही अनुभागस्थान में अनन्त स्थानरूपताका प्रसंग आता है । यदि कहा जाय कि इस प्रकारसे योगस्थानके साथ व्यभिचार होना सम्भव है, तो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, एक द्रव्य शक्तिसे योगस्थानकी एकतामें कोई विरोध नहीं है । जीवप्रदेशोंके भेदसे भी स्थानभेद होना सम्भव नहीं है, क्योंकि अवयवोंके भेदसे द्रव्यभेद असम्भव है ।

१ अप्रतौ 'विदियादो तदियादो तत्तो' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

भावादो। कम्मपरमाणूणं पि खंडभावेण ट्ठिदाणमेगत्तमत्थि त्ति समाणधणाणं[1] पि गहणं किण्ण कीरदे ? ण, दव्वभावेण एयत्ताभावादो। भावे वा ण भेदो होज्ज, एयत्तादो जीवागास-धम्मत्थियादीणं व। अण्णं च, फद्दयपरूवणा एगोलिं चेव अस्सिदूण ट्ठिदा, अण्णहा जोगट्ठाणे फद्दयाणमभावप्पसंगादो। ण च एवं, जोगट्ठाणे सुत्तप्पसिद्धफद्दय-परूवणुवलंभादो। ण च एवं घेप्पमाणे अणंताहि वग्गणाहि एगं फद्दयं होदि त्ति एदं विरुज्झदे, एक्कस्स वि वग्गस्स दव्वट्ठियणयादो वग्गणत्तसिद्धीदो। भिण्णदव्वट्ठिदो त्ति अणुभागस्स जदि ण एयत्तं वुच्चदे, ण एगोली वि फद्दयं, भिण्णदव्वउत्तीए भेदाभावादो ? ण एस दोसो, कमेण एगोलीए [2]वड्ढिदसव्वाविभागपडिच्छेदाणमेक्कम्हि परमाणुम्हि उवलंभादो। ण च भिण्णदव्वउत्तिअविभागपडिच्छेदाणं फद्दयत्तं, तेसिं चरिमपरिमाणुम्हि संताणं गहणे पुणरुत्तदोसप्पसंगादो भिण्णदव्वउत्तीणमेयत्तविरोहादो वा। जदि एवं तो एगणाणोलीपदेसरचणा किमट्ठं कीरदे ? ण, एदस्सेव अणुभागफद्दयस्स

शंका—खण्ड स्वरूपसे स्थित कर्मपरमाणुओंमें चूँकि एकरूपता विद्यमान है, अतएव समान धनवाले उनका भी ग्रहण क्यों नहीं करते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उनमें द्रव्य स्वरूपसे एकता नहीं है। यदि उनमें द्रव्य स्वरूपसे एकता मानी जाय तो फिर भेद होना अशक्य है, क्योंकि, उनमें द्रव्य स्वरूपसे एकता है, जैसे जीव आकाश व धर्म अस्तिकाय। दूसरे, स्पर्द्धकप्ररूपणा एक श्रेणिका ही आश्रय करके स्थित है, क्योंकि, इसके बिना योगस्थानमें स्पर्द्धकोंके अभावका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, योगस्थानमें सूत्रप्रसिद्ध स्पर्द्धकप्ररूपणा पायी जाती है। यदि कहा जाय कि ऐसा स्वीकार करनेपर 'अनन्त वर्गणाओंसे एक स्पर्द्धक होता है' यह कथन विरोधको प्राप्त होगा, क्योंकि एक वर्गके भी द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा वर्गणात्व सिद्ध है।

शंका—भिन्न द्रव्य में रहनेके कारण यदि अनुभागकी एकता स्वीकार नहीं की जाती है तो फिर एक श्रेणिको भी स्पर्द्धक नहीं कहा जा सकता, क्योंकि, भिन्नद्रव्यवृत्तित्वकी अपेक्षा उसमें कोई भेद नहीं है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, क्रमशः एक श्रेणिरूपसे अवस्थित समस्त अविभागप्रतिच्छेद एक परमाणुमें पाये जाते हैं। भिन्न द्रव्यमें रहनेवाले अविभागप्रतिच्छेदोंके स्पर्द्धकरूपता सम्भव भी नहीं है, क्योंकि, अन्तिम परमाणुमें रहनेवाले उक्त अविभागप्रतिच्छेदोंको ग्रहण करनेपर पुनरुक्ति दोषका प्रसंग आता है, अथवा भिन्न द्रव्यमें रहनेवाले अविभागप्रतिच्छेदोंके एक होनेका विरोध है।

शंका—यदि ऐसा है तो एक व नानाश्रेणि स्वरूपसे प्रदेशरचना किसलिये की जाती है ?

१ अ-आप्रत्योः 'समाणधाणाणं' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'वड्डिद–' इति पाठः।
छ. १२–१३.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगपरमाणुम्हि अवट्ठिदस्स [1]अविणाभावीणमणुभागपदेसाणं परूवणदुवारेण तप्परूवणत्तादो। ण च अणिच्छिदवदिरेगस्स अण्णए णिच्छओ अत्थि, अण्णत्थ तहाणुवलंभादो।

पुणो एदं पढमफद्दयं पुध ट्ठविय पुव्विल्लपुंजम्मि एगपरमाणुं घेत्तूण पण्णच्छेदणए कदे सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तअविभागवड्ढिच्छेदेहि[2] अंतरिदूण विदियफद्दयस्स अण्णो वग्गो उप्पज्जदि। संदिट्ठीए तस्स पमाणमेदं [१६]। एदेण कमेण अभवसिद्धिएहि[3] अणंतगुणे सिद्धाणमणंतभागमेत्ते समाणधणपरमाणू घेत्तूण परमाणुमेत्तवग्गेसु उप्पाइदेसु विदियफद्दयस्स आदिवग्गणा होदि। एदं पढमफद्दयचरिमवग्गणाए उवरि अंतरमुल्लंघिय ठवेदव्वं। एदेण कमेण वग्ग-वग्गणाओ फद्दयाणि जाणिदूण उप्पादेदव्वाणि जाव पुव्विल्लपरमाणुपुंजो समत्तो त्ति। एवं फद्दयरचणाए कदाए अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाणि सिद्धाणमणंतभागमेत्ताणि फद्दयाणि वग्गणाओ च उप्पण्णाणि हवंति। एत्थ चरिमफद्दय-चरिमवग्गणाए एगपरमाणुम्हि ट्ठिदिअणुभागो जहण्णट्ठाणं[4]।

समाधान—नहीं, क्योंकि इसी अनुभाग स्पर्द्धकके एक परमाणुमें अवस्थित अविभागी अनुभाग प्रदेशोंकी प्ररूपणा द्वारा उक्त रचनाकी प्ररूपणा की गई है। दूसरे, जिसे व्यतिरेकका निश्चय नहीं है उसके अन्वयके विषयमें निश्चय नहीं हो सकता; क्योंकि, अन्यत्र वैसा पाया नहीं जाता।

इस प्रथम स्पर्द्धकको पृथक् स्थापित करके पूर्वोक्त परमाणुपुंजमेंसे एक परमाणुको ग्रहण कर बुद्धिसे छेद करनेपर सब जीवोंसे अनन्तगुणे मात्र अविभागप्रतिच्छेदोंके द्वारा अन्तर करके द्वितीय स्पर्द्धकका अन्य वर्ग उत्पन्न होता है। संदृष्टिमें उसका प्रमाण यह है—१६। इस क्रमसे अभव्यसिद्धिकोंसे अनन्तगुणे व सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र समान धनवाले परमाणुओंको ग्रहण करके परमाणु प्रमाण वर्गोंके उत्पन्न करानेपर द्वितीय स्पर्द्धककी प्रथम वर्गणा होती है। इसे प्रथम स्पर्द्धककी अन्तिम वर्गणाके ऊपर अन्तरको लाँघ कर स्थापित करना चाहिये। इस क्रमसे वर्ग, वर्गणाओं और स्पर्द्धकोंको जानकर पूर्वोक्त परमाणुपुंजके समाप्त होने तक उत्पन्न कराना चाहिये। इस प्रकार स्पर्द्धक रचनाके किये जानेपर अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र स्पर्द्धक व वर्गणायें उत्पन्न होती हैं। यहां अन्तिम स्पर्द्धककी अन्तिम वर्गणा सम्बन्धी एक परमाणुमें स्थित अनुभाग जघन्य स्थान रूप है।

---

१ ताप्रतौ 'अविणाभावीण' इति पाठः।

२ प्रतिषु 'अविभागवड्ढिच्छेदेहि' इति पाठः।

३ प्रतिषु 'भवसिद्धिएहि' इति पाठः।

४ अणुभागट्ठाणं णाम चरिमफद्दयचरिमवग्गणाए एगपरमाणुम्मि ट्ठिदअणुभागाविभागपलिच्छेद-कलावो। जयध. अ. प. ३५६.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एत्थ एसा संदिट्ठी–

०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	
११	१९	२७	३५	४३	५१
१० १०	१८	२६	३४	४२	५०
९ ९ ९ ९	१७	२५	३३	४१	४९
८ ८ ८ ८	१६	२४	३२	४०	४८

सो च सव्वजीवेहि अणंतगुणो। एवमेकट्ठाणे वग्गणाओ फद्दयाणि च ट्ठविय अविभागपलिच्छेदपरूवणं कस्सामो। सा च अविभागपलिच्छेदपरूवणा तिविहा— वग्गणपरूवणा फद्दयपरूवणा अंतरपरूवणा चेदि। अविभागपडिच्छेदपरूवणाए सह चउव्विहा किण्ण उत्ता? ण, अणवगयाणं अविभागपडिच्छेदाणमाधारत्तं विरुज्झदि त्ति कट्टु अविभागपडिच्छेदपरूवणाए पुव्वं चेव कदत्तादो। तत्थ वग्गणपरूवणा तिविहा— परूवणा पमाणमप्पाबहुगं चेदि। तत्थ परूवणा सुगमा, अविभागपडिच्छेदपरूवणादो चेव वग्गणसण्णिदअविभागपडिच्छेदाणमत्थित्तसिद्धीदो।

यहाँ यह संदृष्टि है—(मूलमें देखिये)।

वह सब जीवोंसे अनन्तगुणा है। इस प्रकार एक स्थानमें वर्गणाओं और स्पर्द्धकोंको स्थापित करके अविभागप्रतिच्छेदोंकी प्ररूपणा करते हैं—वह अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा तीन प्रकारकी है—वर्गणाप्ररूपणा, स्पर्द्धकप्ररूपणा और अन्तरप्ररूपणा।

शंका—अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणाके साथ वह चार प्रकारकी क्यों नहीं कही गई है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अविभागप्रतिच्छेदोंके अज्ञात होनेपर उनके आधारका कथन करना विरोधको प्राप्त होता है, ऐसा मानकर अविभागप्रतिच्छेदोंकी प्ररूपणा पहले ही कर आये हैं।

उनमेंसे वर्गणाप्ररूपणा तीन प्रकारकी है—प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व। इनमेंसे प्ररूपणा सुगम है, क्योंकि, अविभागप्रतिच्छेदोंकी प्ररूपणा करनेसे ही वर्गणा संज्ञावाले अविभाग प्रतिच्छेदोंका अस्तित्व सिद्ध होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्थ पमाणं उच्चदे । तं जहा—अणंताओ वग्गणाओ अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाओ सिद्धाणमणंतभागमेत्ताओ । पमाणपरूवणा गदा ।

अप्पाबहुगं उच्चदे । सव्वत्थोवा जहण्णियाए वग्गणाए अविभागपडिच्छेदा । उक्कस्सियाए वग्गणाए अविभागपडिच्छेदा अणंतगुणा । को गुणगारो ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो । कुदो ? चरिमसमयसुहुमसंपराइयजहण्णबंधग्गहणादो तत्थावट्ठिदफद्दयंतरुवलंभादो । अजहण्ण-अणुक्कस्सवग्गणाविभागपलिच्छेदा अणंतगुणा । को गुणगारो ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो । एसा परूवणा एगोलिमस्सिदूण कदा, अण्णहा उक्कस्सवग्गणादो अजहण्ण-अणुक्कस्सवग्गणाए अणंतगुणत्ताणुववत्तीदो ।

संपहि फद्दयपरूवणा तिविहा—परूवणा पमाणमप्पाबहुगं चेदि । परूवणा सुगमा, अविभागपडिच्छेदपरूवणाए चेव परूविदत्तादो । संपहि फद्दयाणं पमाणं उच्चदे—अणंताहि वग्गणाहि सव्वत्थ अवट्ठिदसंखाहि एगं फद्दयं होदि । ताणि च जहण्णबंधट्ठाणे अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाणि सिद्धाणमणंतभागमेत्ताणि । पमाणं गदं ।

अप्पाबहुगं उच्चदे—सव्वत्थोवा जहण्णफद्दयअविभागपडिच्छेदा । उक्कस्सफद्दयाविभागपडिच्छेदा अणंतगुणा । अजहण्ण-अणुक्कस्सफद्दयाणमविभागपडिच्छेदा अणंत-

....

अब प्रमाणका कथन करते हैं । यथा—वर्गणाएं अनन्त हैं जो अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणी हैं और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र हैं । प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अब अल्पबहुत्व कहते हैं—जघन्य वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद सबसे स्तोक हैं । उनसे उत्कृष्ट वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद अनन्तगुणे हैं । गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र गुणकार है । कारण कि यहाँ अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके जघन्य बन्धका ग्रहण करनेसे वहाँ अवस्थित स्पर्द्धकका अन्तर उपलब्ध होता है । उनसे अजघन्य-अनुत्कृष्ट वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद अनन्तगुणे हैं । गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र गुणकार है । यह प्ररूपणा एक श्रेणिका आश्रय करके की गई है, क्योंकि, इसके बिना उत्कृष्ट वर्गणाकी अपेक्षा अजघन्यअनुत्कृष्ट वर्गणामें अनन्तगुणत्व नहीं बन सकता ।

स्पर्द्धकप्ररूपणा तीन प्रकारकी है—प्ररूपणा प्रमाण और अल्पबहुत्व । प्ररूपणा सुगम है, क्योंकि, अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणासे ही उसकी प्ररूपणा हो जाती है । अब स्पर्द्धकोंका प्रमाण कहते हैं । सर्वत्र अवस्थित संख्यावाली अनन्त वर्गणाओंसे एक स्पर्द्धक होता है । वे जघन्य बन्धस्थानमें अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे व सिद्धों के अनन्तवें भाग मात्र होते हैं । प्रमाण समाप्त हुआ ।

अल्पबहुत्व कहते हैं—जघन्य स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेद सबसे स्तोक हैं । उनसे उत्कृष्ट स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेद अनन्तगुणे हैं । उनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्पर्द्धकोंके अविभागप्रतिच्छेद

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

गुणा। को गुणगारो? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो। फद्दयपरूवणा गदा।

अंतरपरूवणा तिविहा—परूवणा पमाणमप्पाबहुअं चेदि। परूवणा सुगमा, बहुफद्दयपरूवणादो चेव अंतरस्स अत्थित्तसिद्धीदो। ण च अंतरेण विणा विदियादिफद्दयाणं संभवो, विरोहादो।

पमाणं वुच्चदे—सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तेहि अविभागपडिच्छेदेहि एगेगं फद्दयंतरं होदि। पमाणपरूवणा गदा। अप्पाबहुअं णत्थि, जहण्णट्ठाणसव्वफद्दयाणं सरिसत्तुवलंभादो।

संपहि अविभागपडिच्छेदाधारपरमाणू वि[1] अविभागपडिच्छेदा भण्णंति[2], आधारे आधेयोवयारादो। तदो पदेसपरूवणा वि अविभागपडिच्छेदपरूवणा त्ति कट्टु एत्थ जहण्णट्ठाणे पदेसपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एत्थ छ अणियोगद्दाराणि—परूवणा पमाणं सेडी अवहारो भागाभागमप्पाबहुगं चेदि। बेसदछप्पण्णमादिं कादूण जाव णव इत्ति संदिट्ठीए ट्ठविय एदिस्से उवरि बालजणाणुग्गहट्ठं छ अणियोगद्दाराणि भणिस्सामो—जहण्णियाए वग्गणाए णिसित्ता अत्थि कम्मपदेसा। विदियाए वग्गणाए णिसित्ता अत्थि

अनन्तगुणे हैं। गुणकार क्या है? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र गुणकार है। स्पर्द्धकप्ररूपणा समाप्त हुई।

अन्तरप्ररूपणा तीन प्रकारकी है—प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व। प्ररूपणा सुगम है, क्योंकि बहुत स्पर्द्धकोंकी प्ररूपणासे ही अन्तरका अस्तित्व सिद्ध होता है। अन्तरके विना द्वितीय आदि स्पर्द्धकोंकी सम्भावना नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेमें विरोध आता है।

प्रमाण कहते हैं—सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेदोंसे एक एक स्पर्द्धकका अन्तर होता है। प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई। अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, जघन्य स्थानके सब स्पर्द्धक समान पाये जाते हैं।

अब आधारमें आधेयका उपचार करनेसे अविभागप्रतिच्छेदोंके आधारभूत परमाणु भी अविभागप्रतिच्छेद कहे जाते हैं। इसलिये प्रदेशप्ररूपणाको भी अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा मानकर यहाँ जघन्य स्थानमें प्रदेशप्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—यहाँ छह अनुयोगद्वार हैं—प्ररूपणा, प्रमाण, श्रेणि, अवहार, भागाभाग और अल्पबहुत्व। दो सौ छप्पनसे लेकर नौ तक संदृष्टिमें स्थापित कर इसके ऊपर अज्ञानी जनोंके अनुग्रहार्थ छह अनुयोगद्वारों को कहते हैं—जघन्य वर्गणामें दिये गये कर्मप्रदेश हैं। द्वितीय वर्गणामें दिये गये कर्मप्रदेश हैं। इस प्रकार

१ अप्रतौ 'वि' इति पदं नास्ति। २ आ-ताप्रत्योः 'भणंति' इति पाठः। 'अविभागपडिच्छेदा भण्णंति आधारे आधेयोवयारादो। तदो पदेसपरूवणा वि अविभाग' इत्येतावानयं पाठस्ता-मप्रत्योः पुनरप्युपलभ्यते।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

कम्मपदेसा । एवं णेदव्वं जाव उक्कस्सिया वग्गणा त्ति । परूवणा गदा ।

जहण्णिया [ए] वग्गणाए णिसित्ता कम्मपदेसा अणंता अभवसिद्धिएहि अणंतगुणा सिद्धाणमणंतभागमेत्ता । एवं णेयव्वं जाव उक्कस्सिया वग्गणा त्ति । पमाणपरूवणा गदा ।

सेडिपरूवणा दुविहा—अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा चेदि । अणंतरोवणिधाए जहण्णियाए वग्गणाए कम्मपदेसा बहुगा । विदियाए वग्गणाए कम्मपदेसा विसेसहीणा । एवं विसेसहीणा[1] विसेसहीणा जाव उक्कस्सिया वग्गणा इत्ति । विसेसो पुण अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो । एदस्स पडिभागो वि अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो । सो तिविहो—अवट्ठिदभागहारो रूवूणभागहारो छेदभागहारो चेदि । एदेहि तीहि भागहारेहि अणंतरोवणिधा जाणिदूण परूवेदव्वा ।

परंपरोवणिधाए[2] जहण्णियाए वग्गणाए कम्मपदेसेहिंतो अभवसिद्धिएहि अणंतगुणं-सिद्धाणमणंतभागमेत्तमद्धाणं गंतूण दुगुणहाणी होदि । एवं दुगुणहीणा दुगुणहीणा जाव चरिमदुगुणहाणी त्ति । एत्थ दुगुणहाणिविहाणं भणिस्सामो । तं जहा[3]—अभवसिद्धिएहि अणंतगुण-सिद्धाण मणंतभागमेत्तणिसेगभागहारं[4] विरलेदूण जहण्णवग्गणपदेसेसु

....

उत्कृष्ट वर्गणा तक ले जाना चाहिये । प्ररूपणा समाप्त हुई ।

जघन्य वर्गणामें दिये गये कर्मप्रदेश अनन्त हैं जो अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे हैं और सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र हैं । इस प्रकार उत्कृष्ट वर्गणा तक ले जाना चाहिये । प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई ।

श्रेणिप्ररूपणा दो प्रकारकी है—अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा । अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा जघन्य वर्गणामें कर्मप्रदेश बहुत हैं । उनसे द्वितीय वर्गणामें कर्मप्रदेश विशेष हीन हैं । इस प्रकार उत्कृष्ट वर्गणा तक उत्तरोत्तर विशेषहीन विशेषहीन हैं । विशेषका प्रमाण अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र है । इसका प्रतिभाग भी अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र है । वह तीन प्रकारका है—अवस्थितभागहार, रूपोनभागहार और छेदभागहार । इन तीन भागहारों द्वारा अनन्तरोपनिधाकी जानकर प्ररूपणा करनी चाहिये ।

परम्परोपनिधाकी अपेक्षा जघन्य वर्गणाके कर्मप्रदेशोंकी अपेक्षा अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे व सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र स्थान जाकर दुगुणी हानि होती है । इस प्रकार अन्तिम दुगुणहानि तक उत्तरोत्तर दुगुने दुगुने हीन कर्मप्रदेश हैं । यहाँ दुगुणहानिका विधान कहते हैं । यथा—अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र निषेकभागहारका विरलन करके

....

१ अ-ताप्रत्योः 'एवं विसेसहीणा जाव' इति पाठः । २ प्रतिषु 'अणंतरोवणिधाए जहण्णि' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'तम्हा अभवसिद्धि'- इति पाठः । ४ अ-आप्रत्योः 'मेत्ताणिसेग–', ताप्रतौ 'मेत्ताणि सेग' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समखंडं कादूण दिण्णेसु विरलणरूवं पडि वग्गणविसेसपमाणं पावदि । पुणो एत्थ एगरूवधरिदं घेत्तूण जहण्णवग्गणाए अवणिदे विदियवग्गणापमाणं होदि । एवमेगेग-रूवधरिदमुप्पण्णुप्पण्णवग्गणाए अवणेदूण णेदव्वं जाव णिसेगभागहारस्स अद्धं गदं ति । तदित्थवग्गणाकम्मपदेसा पढमवग्गणकम्मपदेसेहिंतो दुगुणहीणा । पुणो एदं दुगुणहीण-वग्गणकम्मपदेसपिंडमवट्ठिदभागहारस्स समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेग-वग्गणविसेसपमाणं पावदि । णवरि पढमगुणहाणिविसेसादो इमो विसेसो दुगुणहीणो, अवट्ठिदभागहारेण पुव्वं विहत्तरासीए अद्धस्स छिज्जमाणस्स उवलंभादो ।

एत्थ एगरूवधरिदं घेत्तूण विदियगुणहाणिपढमवग्गणाए अवणिदे तिस्से चेव तदणंतरविदियवग्गणपमाणं होदि । एवमेत्थ वि एगेगविसेसमवणेदूण जाव अवट्ठिदभाग-हारस्स अद्धमेत्तविसेसा झीणा त्ति तत्थ दुगुणहाणी होदि । एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाओ सिद्धाणमणंतभागमेत्ताओ दुगुणहाणीओ उप्पण्णाओ त्ति ।

[1]एत्थ तिण्णि अणियोगद्दाराणि—परूवणा पमाणमप्पाबहुगं चेदि । परूवणा गदा, एगगुणहाणिट्ठाणंतरस्स णाणागुणहाणिट्ठाणंतराणं च परंपरोवणिधाए चेव अत्थि-त्तसिद्धीदो ।

जघन्य वर्गणाके प्रदेशोंको समखण्ड करके देनेपर विरलन अंकके प्रति वर्गणाविशेषका प्रमाण प्राप्त होता है । पुनः इसमेंसे एक अंकके ऊपर रखी हुई राशिको ग्रहण कर जघन्य वर्गणामेंसे कम कर देनेपर द्वितीय वर्गणाका प्रमाण प्राप्त होता है । इस प्रकार एक एक अंकके ऊपर रखी हुई राशिको उत्पन्न-उत्पन्न (उत्तरोत्तर) वर्गणामेंसे कम करके निषेकभागहारका अर्ध भाग समाप्त होने तक ले जाना चाहिये । वहाँकी वर्गणाके कर्मप्रदेश प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंकी अपेक्षा दुगुने हीन होते हैं । फिर इस दुगुने हीन वर्गणाके कर्मप्रदेशपिण्डको अवस्थित भागहारके समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक वर्गणाविशेषका प्रमाण प्राप्त होता है । विशेष इतना है कि प्रथम गुणहानिके विशेषसे यह विशेष दुगुना हीन है, क्योंकि अवस्थितभागहारके द्वारा पूर्वमें विभक्त हुई राशिका आधा भाग क्षीण होता हुआ देखा जाता है ।

यहाँ एक अंकके ऊपर रखी हुई राशिको ग्रहण कर द्वितीय गुणहानिकी प्रथम वर्गणामेंसे कम कर देनेपर उसकी ही तदनन्तर द्वितीय वर्गणाका प्रमाण होता है । इस प्रकार यहाँपर भी एक एक विशेषको कम करके अवस्थितभागहारके अर्ध भाग प्रमाण विशेषोंके क्षीण होने तक वहाँ दुगुनी हानि होती है । इस प्रकार जानकर अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र दुगुणहानियोंके उत्पन्न होने तक ले जाना चाहिये ।

यहाँ तीन अनुयोगद्वार हैं—प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व । प्ररूपणा अवगत है क्योंकि, एकगुणहानिस्थानान्तर और नानागुणहानिस्थानान्तरोंका अस्तित्व परम्परोपनिधासे ही सिद्ध है ।

---

१ त्रुटितोऽत्र प्रतिभाति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

पमाणं वुच्चदे— णाणापदेसगुणहाणिट्ठाणंतरसलागाणमेगपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरस्स च पमाणमभवसिद्धिएहि अणंतगुणं सिद्धाणमणंतभागमेत्तं होदि । पमाणपरूवणा गदा ।

अप्पाबहुगं उच्चदे— सव्वत्थोवा णाणापदेसगुणहाणिट्ठाणंतरसलागाओ । एगपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरमणंतगुणं । को गुणगारो ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो । एवं सेडिपरूवणा गदा ।

अवहारो उच्चदे— पढमाए वग्गणाए कम्मपदेसपमाणेण सव्ववग्गणकम्मपदेसा केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? अणंतेण कालेण, पढमणिसेयपमाणेण सव्वदव्वे कीरमाणे दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपढमणिसेयाणमुवलंभादो । एत्थ दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपढमणिसेयाणं उप्पायणविहाणं जहा दव्वविहाणे भणिदं तहा भणिय गेण्हिदव्वं । विदियाए वग्गणाए कम्मपदेसपमाणेण सव्ववग्गणकम्मपदेसा केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? सादिरेयदिवड्ढगुणहाणिट्ठाणंतरेण कालेण अवहिरिज्जंति । तं जहा— संदिट्ठीए[1] सव्ववग्गणदव्वमेदं [३०७२] । पढमवग्गणभागहारदिवड्ढपमाणं संदिट्ठए एदं [१२] । दिवड्ढं विरलेदूण सव्वदव्वं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स पढमवग्गणपदेसपमाणं पावदि । पुणो तासु दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपढमवग्गणासु विदियवग्गणापमाणेण

प्रमाणका कथन करते हैं— नानाप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरशलाकाओं और एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरका प्रमाण अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और भव्यसिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र है । प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अल्पबहुत्वका कथन करते हैं— नानाप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरशलाकायें सबसे स्तोक हैं । उनसे एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तर अनन्तगुणा है । गुणकार क्या है ? गुणकार अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण है । इस प्रकार श्रेणिप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अवहारका कथन करते हैं— प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंके प्रमाणसे सब वर्गणाओंके कर्मप्रदेश कितने कालद्वारा अपहृत होते हैं ? अनन्त काल द्वारा अपहृत होते हैं, क्योंकि, सब द्रव्यको प्रथम निषेकके प्रमाणसे करनेपर डेढ़ गुणहानि मात्र प्रथम निषेक पाये जाते हैं । यहाँ डेढ़ गुणहानि मात्र प्रथम निषेकोंके उत्पादनकी विधि जैसे द्रव्यविधानमें कही गई है वैसे कहकर ग्रहण करना चाहिये । द्वितीय वर्गणाके कर्मप्रदेशप्रमाणसे सब वर्गणाओंके कर्मप्रदेश कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? साधिक डेढ़ गुणहानिस्थानान्तर काल द्वारा अपहृत होते हैं । यथा— संदृष्टिमें सब वर्गणाओंका द्रव्य यह है— ३०७२ । प्रथम वर्गणाके भागहार स्वरूप डेढ़ गुणहानिका प्रमाण यह है— १२ । डेढ़ गुणहानिका विरलन कर समस्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंका प्रमाण प्राप्त होता है । फिर उन डेढ़ गुणहानि मात्र प्रथम वर्गणाओंको द्वितीय वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत करनेपर एक एकके प्रति एक एक वर्गणा-

---

१ अ-ताप्रत्योः 'संदिट्ठी' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवहिरिज्जमाणासु वारं पडि वारं पडि एगेगो वग्गणविसेसो अवचिट्ठदे । पुणो एत्थ अवणिदविदियवग्गणाओ दिवड्ढगुणहाणिमेत्ताओ होंति । पुणो अवणिदसेसा दिवड्ढगुणहाणिमेत्ता वग्गणविसेसा अत्थि । सव्वे वि विदियवग्गणपमाणेण अवहिरिज्जमाणा एक्कं पि विदियवग्गणपमाणं ण पूरेंति, रूवूणणिसेयभागहारमेत्तविसेसेहि एगविदियणिसेगुप्पत्तीदो। ण च दिवड्ढगुणहाणिमेत्तविसेसा रूवूणणिसेगभागहारमेत्तविसेसा होंति, गुणहाणीए अद्धरूवूणमेत्तविसेसेहि ऊणस्स तप्पमाणत्तविरोहादो ।

पुणो एदस्स विरलणे भण्णमाणे रूवूणणिसेगभागहारेण दिवड्ढगुणहाणिमोवट्टिय जं लद्धं तं विरलणमिदि भाणिदव्वं । एदम्मि दिवड्ढगुणहाणीए पक्खित्ते विदियणिसेगभागहारो होदि । तस्स पमाणमेदं $\frac{६४}{५}$ । एदेण सव्वदव्वे भागे हिदे विदियवग्गणदव्वं होदि । अधवा, दिवड्ढगुणहाणिक्खेत्तं ठविय 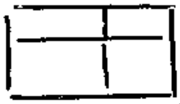 [1]एगवग्गणविसेस[2]विक्खंभेण दिवड्ढगुणहाणिआयामेण च एकोलीए फालिय रूवूणणिसेयभागहारमेत्तवग्गणविसेसवि-

---

विशेष अवस्थित रहता है । अब यहाँ अपनीत द्वितीय वर्गणाऐं डेढ़ गुणहानि मात्र होती हैं । अपनयनसे शेष रहे वर्गणाविशेष डेढ़ गुणहानि मात्र होते हैं । ये सभी द्वितीय वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत होकर एक भी द्वितीय वर्गणाके प्रमाणको पूरा नहीं करते हैं, क्योंकि, एक कम निषेकभागहार प्रमाण विशेषोंका आश्रयकर एक द्वितीय निषेक उत्पन्न होता है । परन्तु डेढ़ गुणहानि मात्र विशेष एक कम निषेकभागहार मात्र विशेष नहीं होते हैं, क्योंकि, गुणहानिके एक अंक कम अर्ध भाग मात्र विशेषोंसे हीनके उतने मात्र होनेका विरोध है ।

पुनः इसके विरलनका कथन करनेपर एक कम निषेकभागहारसे डेढ़ गुणहानिको अपवर्तितकर जो लब्ध हो वह विरलनका प्रमाण होता है, ऐसा कहलाना चाहिये । इसको डेढ़ गुणहानिमें मिलानेपर द्वितीय निषेकका भागहार होता है । उसका प्रमाण यह है— $\frac{१२}{१६-१} = \frac{४}{५}$; $१२ + \frac{४}{५} = \frac{६४}{५}$ । इसका समस्त द्रव्यमें भाग देनेपर द्वितीय वर्गणाका द्रव्य होता है ($३०७ \div \frac{६४}{५} = २४०$) । अथवा, डेढ़ गुणहानि मात्र क्षेत्रको स्थापित कर (मूलमें देखिये) उसे एक वर्गणाविशेषके विस्तार रूपसे और डेढ़ गुणहानिके आयाम रूपसे एक श्रेणिसे फाड़कर एक

---

१. ताप्रतौ एवंविधात्र संदृष्टिः 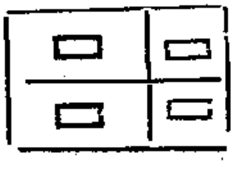 इति पाठः ।
२. प्रतिषु 'विसेसे' इति पाठः ।

क. १२-१४.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्खंभेण [दिवड्डगुणहाणि-] आयामेण दिवड्डगुणहाणिट्ठाणंतरखेत्तस्सुवरि ठविदे सादिरेयदिवड्डगुणहाणी भागहारो होदि ।

संपहि तदियवग्गणकम्मपदेसपमाणेण सव्ववग्गणपदेसा केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? सादिरेयरूवाहियदिवड्डगुणहाणिट्ठाणंतरेण कालेण अवहिरिज्जंति । तं जहा— पुव्विल्लविरलणम्मि दिवड्डगुणहाणिमेत्तपढमवग्गणासु रूवं पडि तदियवग्गणपमाणे अवणिदे दिवड्डगुणहाणिमेत्ततदियवग्गणाओ लब्भंति । पुणो एक्केक्कस्स रूवस्स उवरि दो-दो-वग्गणविसेसा आगच्छंति । संपहि तेसु तदियवग्गणपमाणेण अवहिरिज्जमाणेसु सादिरेयरूवमेत्तो अवहारकालो लब्भदि । तं जहा—दुरूवूणदुगुणहाणिमेत्तवग्गणविसेसे घेत्तूण जदि एगं तदियवग्गणपमाणं होदि तो तिण्णिगुणहाणिमेत्तवग्गणविसेसाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए सादिरेयमेगरूवमागच्छदि । पुणो अण्णेसु केत्तिएसु वग्गणविसेसु संतेसु विदियरूवमुप्पज्जदि त्ति भणिदे चदुरूवूणगुणहाणिमेत्तवग्गणविसेसेसु संतेसु उप्पज्जदि । एदम्मि दिवड्डगुणहाणिम्मि पक्खित्ते सादिरेयरूवेण अहियदिवड्डगुणहाणी भागहारो होदि । तिस्से पमाणमेदं $\frac{१९२}{१४}$ । एदेण सव्वदव्वे भागे

कम निषेकभागहार मात्र वर्गणाविशेष रूप विष्कम्भ व डेढ़ गुणहानि आयामसे डेढ़ गुणहानिस्थानान्तर क्षेत्रके ऊपर स्थापित करनेपर साधिक डेढ़ गुणहानि भागहार होता है ।

अब तृतीय वर्गणाके कर्मप्रदेशोंके प्रमाणसे सब वर्गणाओंके प्रदेश कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? साधिक एक अधिक डेढ़ गुणहानिस्थानान्तर काल द्वारा अपहृत होते हैं । यथा— पूर्वोक्त विरलनमें जो डेढ़ गुणहानि मात्र प्रथम वर्गणाऐं स्थापित हैं उनमें प्रत्येकमेंसे तृतीय वर्गणाके प्रमाणको घटानेपर डेढ़ गुणहानि मात्र तृतीय वर्गणाऐं उपलब्ध होती हैं और एक एक अंकके ऊपर दो दो वर्गणाविशेष उपलब्ध होते हैं । अब उनको तृतीय वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत करनेपर साधिक एक अंक प्रमाण अवहारकाल उपलब्ध होता है । यथा—दो अंक कम दो गुणहानि मात्र वर्गणाविशेषोंको ग्रहणकर यदि एक तृतीय वर्गणाका प्रमाण होता है तो तीन गुणहानि मात्र वर्गणाविशेषोंको ग्रहणकर कितनी तृतीय वर्गणाऐं होंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर साधिक एक अंक आता है ।

शंका—अन्य कितने वर्गणाविशेषोंके होनेपर द्वितीय अंक उत्पन्न होता है ?

समाधान—ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि चार अंक कम गुणहानि मात्र अन्य वर्गणाविशेषोंके होनेपर द्वितीय अंक उत्पन्न होता है ।

इसको डेढ़ गुणहानिमें मिलानेपर साधिक एक अङ्क अधिक डेढ़ गुणहानि भागहार होता है । उसका प्रमाण यह है—$८ \times २ - २ = १४$; $१४ \times १६ = २२४$ तृतीय वर्गणा; $८ \times ३ \times १६ = ३८४$; $\frac{३८४}{२२४} = \frac{२४}{१४}$; $१२ = \frac{१६८}{१४}$; $\frac{१६८}{१४} + \frac{२४}{१४} = \frac{१९२}{१४}$ । इसका समस्त द्रव्यमें भाग देनेपर तृतीय वर्गणाका प्रमाण होता है—$३०७२ \div \frac{१९२}{१४} = २२४$ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हिदे तदियवग्गणपमाणं होदि । अधवा, दिवड्ढगुणहाणिमेत्तखेत्तं ठविय 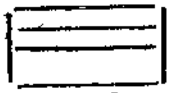 एगेगवग्गणविसेसविक्खंभेण दिवड्ढगुणहाणिआयामेण दोफालीयो पाडिय दुरूवूणणिसेय-भागहारमेत्तवग्गणविसेसविक्खंभ-दिवड्ढगुणहाणिआयामखेत्तस्सुवरि ठविदे सादिरेयदिवड्ढगुणहाणी भागहारो[1] होदि ।

संपहि चउत्थवग्गणपमाणेण सव्वदव्वे अवहिरिज्जमाणे सादिरेयदुरूवाहियदिवड्ढ-गुणहाणिट्ठाणंतरेण कालेण अवहिरिज्जदि । तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपढमवग्गणासु चउत्थवग्गणपमाणेण अवहिरिज्जमाणासु वारं पडि वारं पडि तिण्णि-तिण्णिवग्गणविसेसा उव्वरंति । एवमवहिरिदे दिवड्ढगुणहाणिमेत्तचउत्थवग्गणाओ लब्भंति । पुणो उव्वरिदवग्गणविसेसेसु तिगुणदिवड्ढगुणहाणिमेत्तेसु चउत्थवग्गणपमाणेण अवहिरिज्जमाणेसु सादिरेयदोरूवाणि लब्भंति । पुणो एत्थ अण्णेसु केत्तिएसु वग्गणविसेसेसु संतेसु तदिया भागहारसलागा लब्भदि त्ति भणिदे णवरूवूणदिवड्ढगुणहाणिमेत्तवग्गणविसेसेसु संतेसु उप्पज्जदि । ण च एत्तियमत्थि । तेण सादिरेयदोरूवमेत्तो चेव पक्खेवो होदि । एदम्मि दिवड्ढगुणहाणिम्मि पक्खित्ते सादिरेयदोरूवाहियदिवड्ढगुणहाणीयो भागहारो होदि । सो

अथवा, डेढ़ गुणहानि मात्र क्षेत्रको स्थापित कर (संदृष्टि मूल में देखिये) एक एक वर्गणा-विशेषके विष्कम्भरूप और डेढ़ गुणहानि आयामरूप दो फालियाँ फाड़कर दो अंक कम निषेकभागहार प्रमाण वर्गणा विशेष विष्कम्भवाले और डेढ़ गुणहानि आयामवाले क्षेत्रके ऊपर रखनेपर साधिक डेढ़ गुणहानि भागहार होता है ।

अब चतुर्थ वर्गणाके प्रमाणसे सब द्रव्यको अपहृत करनेपर वह साधिक दो अङ्क अधिक डेढ़ गुणहानिस्थानान्तरकालके द्वारा अपहृत होता है । यथा—डेढ़ गुणहानि प्रमाण प्रथम वर्गणाओंको चतुर्थ वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत करनेपर प्रत्येक बार तीन तीन वर्गणाविशेष शेष रहते हैं। इस प्रकार अपहृत करनेपर डेढ़ गुणहानि मात्र चतुर्थ वर्गणाऐं प्राप्त होती हैं । फिर शेष रहे तिगुनी डेढ़गुण-हानि मात्र वर्गणाविशेषोंको चतुर्थ वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत करनेपर साधिक दो अंक प्राप्त होते हैं। पुनः यहाँ अन्य कितने वर्गणाविशेषोंके होनेपर तृतीय भागहारशलाका प्राप्त होती है ऐसा पूँछनेपर कहते हैं कि नौ अंक कम डेढ़ गुणहानि मात्र वर्गणाविशेषोंके होनेपर तृतीय भागहार-शलाका प्राप्त होती है ।

परन्तु यहाँ इतना नहीं है अतएव साधिक दो अंक मात्र ही प्रक्षेप होता है । इसको डेढ़ गुणहानिमें मिलानेपर साधिक दो अंक अधिक डेढ़ गुणहानियाँ भागहार होती हैं । वह भी यह

---

१ प्रतिषु 'गुणहाणिभागहारो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वि एसो[1] $\frac{१६२}{१३}$ । एदेण सव्वदव्वे भागे हिदे चउत्थवग्गणपमाणमागच्छदि ।

अथवा, 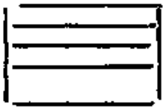 दिवड्ढखेत्तं ठविय एगेगवग्गणविसेसविक्खंभेण दिवड्ढगुणहाणिआयामेण तिण्णिफालीयो पादिय तिरूवूणणिसेयभागहारमेत्तवग्गणविसेसविक्खंभदिवड्ढगुणहाणिआयामखेत्तस्सुवरि ठविदे सादिरेयदोरूवाहियदिवड्ढगुणहाणी भागहारो होदि । सेसं जाणिय वत्तव्वं । एवमणेण विहाणेण ताव णेयव्वं जाव पढमगुणहाणीए रूवाहियमद्धं चडिदं ति । तदित्थवग्गणपमाणेण सव्वदव्वे अवहिरिज्जमाणे दोगुणहाणिट्ठाणंतरेण कालेण अवहिरिज्जदि । तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिविरलणरूवमेत्तपढमवग्गणाओ तदित्थवग्गणपमाणेण अवहिरिज्जमाणाओ वारं पडि वारं पडि णिसेयभागहारतिण्णिचदुब्भागमेत्तवग्गणविसेसा अवहिरिज्जंति । कुदो ? णिसेयभागहारतिण्णिचदुब्भागमेत्तवग्गणविसेसेहि [1]तदित्थवग्गणुप्पत्तीदो । जे रूवं पडि उव्वरिदणिसेयभागहारचदुब्भागमेत्तवग्गणविसेसा ते वि तप्पमाणेण कस्सामो । तं जहा—णिसेयभागहारतिण्णिचदुब्भागमेत्तवग्ग-

है—$\frac{५७६}{२०८} = २\frac{१०}{१३}$; $१२ + २\frac{१०}{१३} = \frac{१९२}{१३}$ । इसका समस्त द्रव्यमें भाग देनेपर चतुर्थ वर्गणाका प्रमाण आता है [$३७२ \div \frac{१९२}{१३} = २०८$] ।

अथवा, डेढ़ गुणहानि प्रमाण क्षेत्रको स्थापितकर (संदृष्टि मूलमें देखिये) एक एक वर्गणाविशेषके विष्कम्भरूप व डेढ़ गुणहानि आयामरूप तीन फालियाँ फाड़कर उन्हें तीन अंक कम निषेकभागहार मात्र विस्तृत और डेढ़ गुणहानि आयत क्षेत्रके ऊपर रखनेपर साधिक दो अंक अधिक डेढ़ गुणहानि भागहार होता है । शेष जानकर कहना चाहिये । इस प्रकार इस विधिसे प्रथम गुणहानिका एक अधिक आधा भाग जाने तक ले जाना चाहिये । वहाँकी वर्गणाके प्रमाणसे सब द्रव्यको अपहृत करनेपर वह दो गुणहानिस्थानान्तरकालके द्वारा अपहृत होता है । यथा—डेढ़ गुणहानिके विरलन अंक प्रमाण प्रथम वर्गणाओंको वहाँकी वर्गणाके प्रमाणसे अपहृत करनेपर प्रत्येक एकके प्रति निषेकभागहारके तीन चतुर्थ भाग प्रमाण वर्गणाविशेष ($\frac{१६ \times ३}{४} \times \frac{१६}{१} = १९२$) अपहृत होते हैं, क्योंकि, निषेकभागहारके तीन चतुर्थ भाग प्रमाण वर्गणाविशेषोंसे वहाँकी वर्गणा उत्पन्न होती है ।

तथा जो प्रत्येक अंकके प्रति निषेकभागहारके चतुर्थ भाग प्रमाण वर्गणाविशेष शेष रहते हैं उन्हें भी उसके प्रमाणसे करते हैं । यथा—निषेकभागहारके तीन चतुर्थ भाग प्रमाण वर्गणा-

१ अप्रतौ 'होदि सो विसेसो $\frac{१९२}{१३}$', आप्रतौ 'होदि $\frac{१९२}{१३}$' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णविसेसाणं जदि दिवड्ढगुणहाणी भागहारो होदि तो णिसेयभागहारचदुब्भागमेत्तवग्गणविसेसाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए गुणहाणीए अद्धभागच्छदि। तम्मि दिवड्ढगुणहाणिम्मि पक्खित्ते दोगुणहाणीयो भागहारो होदि। एदेण सव्वदव्वे ३०७२ भागे हिदे तदित्थवग्गणपमाणं होदि। संदिट्ठीए तस्स पमाणमेदं १९२।

अथवा दिवड्ढगुणहाणिखेत्तं ठविय 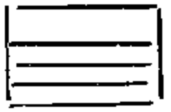 चत्तारि फालीयो कादूण एक्केक्किस्से फालीए विक्खंभो णिसेयभागहारस्स चदुब्भागमेत्तो, आयामो पुण दिवड्ढगुणहाणिमेत्तो। एत्थ तिण्णिफालीयो मोत्तूण सेसेगफालिं घेत्तूण आयामेण तिण्णि खंडाणि करिय सेसतीसु फालीसु समयाविरोहेण ढोइदे विगुणहाणिमेत्तायाम-णिसेगभागहारतिण्णिचदुब्भागमेत्त[1]वग्गणविक्खंभखेत्तं होदि।

एवं सयलाए पढमगुणहाणीए चडिदाए तिण्णिगुणहाणी[2] भागहारो होदि। तं जहा—एगगुणहाणी चडिदा त्ति एगरूवं विरलिय विगं करिय अण्णोण्णब्भत्थे कदे तत्थुप्पण्णरासिणा दिवड्ढगुणहाणीए गुणिदाए तिण्णिगुणहाणीयो भागहारो होदि। कुदो? पढमगुणहाणिपढमवग्गणकम्मपदेसेहिंतो विदियगुणहाणिपढमवग्गणकम्मपदेसा-

---

विशेषोंका यदि डेढ़ गुणहानि भागहार होता है तो निषेकभागहारके चतुर्थ भाग मात्र वर्गणाविशेषोंका कितना भागहार होगा, इस प्रकार फलगुणित इच्छा राशिको प्रमाण राशिसे अपवर्तित करनेपर गुणहानिका अर्ध भाग आता है। उसको डेढ़ गुणहानिमें मिलानेपर दो गुणहानियाँ भागहार होती हैं। इसका समस्त द्रव्यमें भाग देनेपर (३०७२ ÷ १६ = १९२) वहाँकी वर्गणाका प्रमाण होता है। संदृष्टिमें उसका प्रमाण यह है—१९२।

अथवा, डेढ़ गुणहानि प्रमाण क्षेत्रको स्थापितकर (संदृष्टि मूलमें देखिये) चार फालियाँ करके, इनमेंसे एक एक फालिका विष्कम्भ निषेकभागहारके चतुर्थ भाग प्रमाण होता है परन्तु आयाम डेढ़ गुणहानि प्रमाण होता है। इनमेंसे तीन फालियोंको छोड़कर शेष एक फालिको ग्रहणकर और आयामकी ओरसे तीन खण्ड करके आगमानुसार शेष तीन फालियोंमें जोड़ देनेपर दो गुणहानि मात्र आयामरूप और निषेकभागहारके तीन चतुर्थ भाग मात्र वर्गणा विष्कम्भ रूप क्षेत्र होता है।

इस प्रकार समस्त प्रथम गुणहानि जानेपर तीन गुणहानियाँ भागहार होती हैं। यथा—चूँकि एक गुणहानि गये हैं, अतः एक अंकका विरलनकर दुगुना करके परस्पर गुणित करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उससे डेढ़ गुणहानिको गुणित करनेपर तीन गुणहानियाँ भागहार होती हैं, क्योंकि, प्रथम गुणहानिकी प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंसे द्वितीय गुणहानिकी प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेश आधे

---

१ मप्रतौ 'तिण्णिचदुब्भागहारचदुब्भागमेत्त' इति पाठः। २ प्रतिषु 'गुणहाणिभागहारो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णमद्धुत्तुवलंभादो । संदिट्ठीए तिण्णिगुणहाणिभागहारो एसो २४ ।

अथवा, दिवड्ढगुणहाणिखेत्तं ठविय 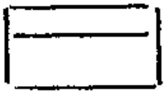 अण्णोण्णब्भत्थरासिमेत्तफालीयो कादूण तत्थ एगफालीए उवरि सेसफालीसु ठविदासु तिण्णिगुणहाणीयो भागहारो होदि । अणेण विहाणेण खेत्तपरूवणं तेरासियकमं[1] च जाणिदूण णेदव्वं जाव जहण्णाणुभागट्ठाणस्स चरिमवग्गणे त्ति । एवमवहारपरूवणा समत्ता ।

जधा अवहारो तधा भागाभागो, विसेसाभावादो ।

अप्पाबहुगं उच्चदे—सव्वत्थोवा उक्कस्सियाए वग्गणाए कम्मपदेसा ९ । जहण्णियाए वग्गणाए कम्मपदेसा अणंतगुणा २५६[2] । को गुणगारो ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो[3] सिद्धाणमणंतभागमेत्तो[4] किंचूणण्णोण्णब्भत्थरासी । अजहण्ण-अणुक्कस्सियासु वग्गणासु कम्मपदेसा अणंतगुणा २८०७ । को गुणगारो ? किंचूणदिवड्ढगुणहाणीयो । अपढमासु वग्गणासु कम्मपदेसा विसेसाहिया २८१६ । केत्तियमेत्तो विसेसो ? उक्कस्सवग्गणमेत्तो । अणुक्कस्सियासु वग्गणासु कम्मपदेसा विसेसाहिया । ३०६३ । केत्तियमेत्तो विसेसो ? उक्कस्सवग्गणकम्मपदेसेहि ऊणपढमवग्गणकम्मपदेसमेत्तो । सव्वासु वग्गणासु

पाये जाते हैं । संदृष्टिमें तीन गुणहानि रूप भागहार यह है—२४ ।

अथवा, डेढ़ गुणहानि क्षेत्रको स्थापित कर (संदृष्टि मूलमें देखिये) अन्योन्याभ्यस्त राशि प्रमाण फालियाँ करके उनमेंसे एक फालिके ऊपर शेष फालियोंको स्थापित करनेपर तीन गुणहानियाँ भागहार होती हैं । इस विधिसे क्षेत्रप्ररूपणा और त्रैराशिक क्रमको जानकर जघन्य अनुभागस्थानकी अन्तिम वर्गणा तक ले जाना चाहिये । इस प्रकार अवहारप्ररूपणा समाप्त हुई ।

जैसी अवहारकी प्ररूपणा की गई है वैसी ही भागाभागकी भी प्ररूपणा है, क्योंकि इससे उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

अल्पबहुत्वका कथन करते हैं—उत्कृष्ट वर्गणामें कर्मप्रदेश सबसे स्तोक हैं (९) । उनसे जघन्य वर्गणामें कर्मप्रदेश अनन्तगुणे हैं (२५६) । गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र कुछ कम अन्योन्याभ्यस्त राशि गुणकार है । उनसे अजघन्य-अनुत्कृष्ट वर्गणाओंमें कर्मप्रदेश अनन्तगुणे हैं (२८०७) । गुणकार क्या है । ? कुछ कम डेढ़ गुणहानियाँ गुणकार है । उनसे अप्रथम वर्गणाओंमें कर्मप्रदेश विशेष अधिक हैं (२८१६) । विशेषका प्रमाण कितना है ? उत्कृष्ट वर्गणाके बराबर है । उनसे अनुत्कृष्ट वर्गणाओंमें कर्मप्रदेश विशेष अधिक हैं (३०६३) । विशेष कितना है ? उत्कृष्ट वर्गणाके कर्मप्रदेशोंसे हीन प्रथम वर्गणाके कर्मप्रदेशोंके बराबर है । उनसे सब वर्गणाओंमें कर्मप्रदेश विशेष अधिक हैं (३०७२) । विशेष

---

१ अ-आप्रत्योः 'तेरासियकम्मं' इति पाठः । २ प्रतिषु संदृष्टिरियं 'किंचूणण्णोण्णब्भत्थरासी' इत्यतः पश्चादुपलभ्यते इति पाठः । ३ अप्रतौ 'अणंतगुणा' इति पाठः । ४ ताप्रतौ 'भागमेत्तो । किंचूण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कम्मपदेसा विसेसाहिया ३०७२। केत्तियमेत्तो विसेसो ? उक्कस्सवग्गणकम्मपदेसमेत्तो। एवं दुचरिमादिअणुभागबंधट्ठाणाणं पि वत्तव्वं। णवरि जहण्णबंधट्ठाणादो[1] विदियबंधट्ठाणमणंतगुणं। तदियबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवं णेयव्वं जाव अपुव्वसंजदो त्ति। तत्तो अणुभागबंधट्ठाणाणि छव्विहाए वड्ढीए गच्छंति जाव उक्कस्सअणुभागबंधट्ठाणे त्ति। जहण्णट्ठाणं मोत्तूण सेससव्वट्ठाणेसु जहण्णवग्गण-जहण्णफद्दयअविभागपलिच्छेदेहिंतो उक्कस्सवग्गण-उक्कस्सफद्दयअविभागपलिच्छेदा अणंतगुणा। को गुणगारो ? सव्वजीवेहि अणंतगुणो। फद्दयंतराणि विसरिणाणि, छव्विहवड्ढीए अणुभागबंधवुड्ढिदंसणादो। एवं हदसमुप्पत्तियहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं पि अविभागपडिच्छेदपरूवणा कायव्वा। विभागपडिच्छेदपरूवणा समत्ता।

ठाणपरूवणदाए केवडियाणि ट्ठाणाणि ? असंखेज्जलोगट्ठाणाणि ? एवदियाणि ट्ठाणाणि ॥ २०० ॥

किं ठाणं णाम ? एगजीवम्मि एक्कम्हि समए जो दीसदि कम्माणुभागो तं ठाणं णाम। तं च ठाणं दुविहं—अणुभागबंधट्ठाणं अणुभागसंतट्ठाणं चेदि। तत्थ जं बंधेण णिप्फण्णं[2] तं बंधट्ठाणं णाम। पुव्वबंधाणुभागे घादिज्जमाणे जं बंधाणुभागेण सरिसं

कितना है ? उत्कृष्ट वर्गणाके कर्मप्रदेशोंके बराबर है।

इसी प्रकार द्विचरमादि अनुभागबन्धस्थानोंका भी कथन करना चाहिये। विशेष इतना है कि जघन्य बन्धस्थानसे द्वितीय बन्धस्थान अनन्तगुणा है। उससे तृतीय बन्धस्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार अपूर्वकरणसंयत तक ले जाना चाहिये। उससे आगेके अनुभागबन्धस्थान उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान तक छह प्रकारकी वृद्धिसे जाते हैं। जघन्य स्थानको छोड़कर शेष सब स्थानोंमें जघन्य वर्गणा व जघन्य स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेदोंसे उत्कृष्ट वर्गणा व उत्कृष्ट स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेद अनन्तगुणे हैं। गुणकार क्या है ? गुणकार सब जीवोंसे अनन्तगुणा है। स्पर्द्धकान्तर विसदृश हैं, क्योंकि, छह प्रकारकी वृद्धि द्वारा अनुभागबन्धकी वृद्धि देखी जाती है। इसी प्रकारसे हतसमुत्पत्तिक और हतहतसमुत्पत्तिक स्थानोंके भी अविभाग प्रतिच्छेदोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये। इस प्रकार अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा समाप्त हुई।

स्थानप्ररूपणतासे स्थान कितने हैं ? असंख्यात लोक प्रमाण हैं। इतने स्थान हैं ॥ २०० ॥

स्थान किसे कहते हैं ? एक जीवमें एक समयमें जो कर्मानुभाग दिखता है उसे स्थान कहते हैं। वह स्थान दो प्रकार का है अनुभागबन्धस्थान और अनुभागसत्त्वस्थान। उनमेंसे जो बन्धसे उत्पन्न होता है वह बन्धस्थान कहा जाता है। पूर्व बद्ध अनुभागका घात किये जानेपर जो बन्ध

१ ताम्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः 'बंधट्ठाणादो चडियबंधट्ठाणमणंतगुणं तदिय' मप्रतौ 'बंधट्ठणादो चड्डियबंधट्ठाणमणंतगुणं विदियबंधट्ठाणमणंतगुणं तदिय' इति पाठः। २ आप्रतौ 'णिप्फलं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होदूण पददि तं पि बंधट्ठाणं चेव, तस्सरिसअणुभागबंधुवलंभादो[1]। जमणुभागट्ठाणं घादिज्जमाणं बंधाणुभागट्ठाणेण[2] सरिसं ण होदि, बंधअट्ठंक-[3]उव्वंकाणं विच्चाले हेट्ठिम-उव्वंकादो अणंतगुणं उवरिमअट्ठंकादो अणंतगुणहीणं होदूण चेट्ठदि, तमणुभागसंतकम्म-ट्ठाणं णाम। पुणो अणुभागबंधट्ठाणाणि संतकम्मट्ठाणाणि च असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति। एत्थ अणुभागबंधट्ठाणं संतकम्मट्ठाणं चेदि वुत्ते एगजीवम्हि अवट्ठिदकम्मपरमाणुसु जो उक्कस्साणुभागसहिदकम्मपरमाणू सो चेव ट्ठाणं, भिण्णपरमाणुट्ठिदअणुभागाणं अप्पिद-परमाणुट्ठिदअणुभागेण सह पवुत्तीए अभावेण बुद्धीए[4] पत्तएयत्ताणं एयट्ठाणत्तविरोहादो। एकम्हि परमाणुम्हि जदि ट्ठाणं होदि तो अणंताणं तत्थतणवग्गणाणं फद्दयाणं च अभावो होदि त्ति भणिदे—ण, फद्दय-वग्गणसण्णिदाणुभागाणं सव्वेसिं पि तत्थेवुवलंभादो। अण्णत्थ एस ववहारो ण प्पसिद्धो त्ति उत्ते—ण, [5]ट्ठिदिपरूवणाए चरिमणिसेगम्मि एग-परमाणुकालं चेव घेत्तूण उक्कस्सट्ठिदिपरूवणदंसणादो। ण परमाणुकालसंकलणा सजादि-

---

अनुभागके सदृश होकर पड़ता है वह भी बन्धस्थान ही है, क्योंकि, उसके सदृश अनुभागबन्ध पाया जाता है। घाता जानेवाला जो अनुभागस्थान बन्धानुभागके सदृश नहीं होता है, किन्तु बन्ध सदृश अष्टांक और ऊर्वंकके मध्यमें अधस्तन ऊर्वंकसे अनन्तगुणा और उपरिम अष्टांकसे अनन्तगुणा हीन होकर स्थित रहता है वह अनुभाग सत्कर्मस्थान है। अनुभागबन्धस्थान और सत्कर्मस्थान असंख्यात लोक मात्र होते हैं। यहाँ अनुभागबन्धस्थान और सत्कर्मस्थान, ऐसा कहनेपर एक जीवमें अवस्थित कर्मपरमाणुओंमें जो उत्कृष्ट अनुभाग सहित कर्मपरमाणु है वही स्थान होता है, क्योंकि भिन्न परमाणुओंमें स्थित अनुभागोंकी विवक्षित परमाणुमें स्थित अनु-भागके साथ प्रवृत्ति न होनेसे बुद्धिसे एकताको प्राप्त हुए उनकी एकस्थानताका विरोध है।

शंका—यदि एक परमाणुमें स्थान होता है तो उनमें अनन्त वर्गणाओं और स्पर्द्धकोंका अभाव होता है?

समाधान—ऐसा कहनेपर उत्तर देते हैं कि नहीं, क्योंकि, स्पर्द्धक और वर्गणा संज्ञावाले सभी अनुभाग वहाँ ही पाये जाते हैं।

शंका—अन्यत्र यह व्यवहार प्रसिद्ध नहीं है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, स्थितिप्ररूपणामें अन्तिम निषेकमें एक परमाणुकालको ही ग्रहण कर उत्कृष्ट स्थितिकी प्ररूपणा देखी जाती है।

परमाणुकालसंकलना सजाति व विजाति स्वरूप नहीं ग्रहण की जाती है, क्योंकि, वैसा

---

१ अणुभागसंतट्ठाणघादेण जमुप्पण्णमणुभागसंतट्ठाणं तं पि णवबंधट्ठाणाणि त्ति घेत्तव्वं, बंधट्ठाणसमाण-त्तादो। जयध अ. प. ३१३. । २ ताप्रतौ 'बंधाणुभागट्ठाणेहि' इति पाठः। ३ किमट्ठंकं णाम? अणंतगुणवड्ढी। कधमेदिस्से अट्ठंकसण्णा? अट्ठण्हं अंकाणमणंतगुणवड्ढि त्ति ठवणादो। जयध. अ. प. ३५८.। ४ अप्रतौ 'वुत्तीए' इति पाठः। ५ अ-आप्रत्योः 'ट्ठिद' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विजादिसरूवा घेप्पदे, कालस्स आणंतियप्पसंगादो। ण च सेसपरूवणा णिप्फला, अप्पिदअणुभागपरमाणुणा अविणाभावियअणुभागपरूवणदुवारेण पयदस्सेव परूवणाए सफलत्तादो। एगेण चेव परमाणुणा जदि एगं ट्ठाणं णिप्फज्जदि[1] तो एगसमए एगजीवम्मि ट्ठाणाणमाणंतियं पसज्जदे? जदि एवं घेप्पदि तो सव्वमणंताणि[2] चेव ट्ठाणाणि होंति। [ण] च एवं, दव्वट्ठियणयावलंबणादो। तं जहा—ण ताव समाणधणाणं गहणं, तदणुभागस्स समाणत्तणेण अप्पिदेण एगत्तमुवगयस्स तत्थेव उवलंभादो। ण असमाणाणं गहणं, सद[3]संखाए एगादिसंखाए व हेट्ठिमाणुभागाणमुक्कस्साणुभागे उवलंभादो। एत्थ दव्वट्ठियणओ अवलंबिदो त्ति कधं णव्वदे? ओकड्डुकड्डणाए ट्ठाणहाणि-वड्ढीणमभावादो संतस्स हेट्ठा [4]अणुभागे बज्झमाणे अणुभागट्ठाणवुड्ढीए अणुवलंभादो संतं पेक्खिदूण एक्कम्हि समए अणंतभागवड्ढीए बंधे वि अणुभागवुड्ढिदंसणादो अगुणियकम्मंसियम्मि उक्कस्साणुभागाभावादो वत्तीए[5]। ण च समाणासमाणधणेसु पोग्गलेसु घेप्पमाणेसु

होनेपर कालकी अनन्तताका प्रसंग आता है। यदि कहा जाय कि शेष प्ररूपणा निष्फल है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि, विवक्षित अनुभाग परमाणुके साथ अविनाभाव रखनेवाले अनुभागकी प्ररूपणा द्वारा प्रकृत की ही प्ररूपणा सफल है।

शंका एक ही परमाणुसे यदि एक स्थान उत्पन्न होता है तो एक समयमें एक जीवमें स्थानोंकी अनन्तताका प्रसंग आता है।

समाधान—यदि ऐसा ग्रहण करते हैं तो सचमुचमें सब अनन्त स्थान होते हैं। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है। वह इस प्रकारसे—समान धनवाले परमाणुओंका तो ग्रहण हो नहीं सकता, क्योंकि, उनके अनुभागकी समानता होनेसे विवक्षितके साथ एकताको प्राप्त हुआ वह वहाँ ही पाया जाता है। असमान धनवाले परमाणुओंका भी ग्रहण नहीं हो सकता है, क्योंकि, जिस प्रकार एक आदि संख्याऐं शत संख्यामें पायी जाती हैं उसी प्रकार अधस्तन अनुभाग उत्कृष्ट अनुभागमें पाये जाते हैं।

शंका—यहाँ द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है, यह कैसे जाना जाता है?

समाधान—अपकर्षण व उत्कर्षण द्वारा स्थानकी हानि व वृद्धि का अभाव होनेसे, सत्त्वके नीचे अनुभागके बाँधे जानेपर अनुभागस्थानवृद्धिके न पाये जानेसे, सत्त्वकी अपेक्षा एक समयमें अनन्तभागवृद्धि द्वारा बन्धके होनेपर भी अनुभागवृद्धिके देखे जानेसे, तथा गुणितकर्मांशिकसे अन्य जीवमें उत्कृष्ट अनुभागके अभावकी आपत्ति आनेसे जाना जाता है कि यहाँ द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है। इसके अतिरिक्त समान व असमान धनवाले पुद्गलोंको ग्रहण करनेपर

१ आ-ताप्रत्योः 'णिप्पज्जदि' इति पाठः। २ अप्रतौ 'सव्वमणंताणि', आप्रतौ 'सव्वधणंताणि ताप्रतौ 'सच (व्व) मणंताणि' इति पाठः। ३ आप्रतौ 'सग' इति पाठः। ४ अप्रतौ 'अणुभागे बज्झमाणे' इत्येतावान् पाठो नास्ति। ५ अप्रतौ 'भावादो व वत्तीए च', आप्रतौ 'भावादो वड्ढीए च', ताप्रतौ 'भावादो वत्तीए च', मप्रतौ भावादो वत्तीए' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वजीवरासिपडिभागअणंतभागब्भहियत्तं जुज्जदे, विरोहादो। एवं असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणं पादेक्कं सरूवपरूवणं कायव्वं। एवं ट्ठाणपरूवणा समत्ता।

अंतरपरूवणदाए एक्केक्कस्स ट्ठाणस्स केवडियमंतरं? सव्वजीवेहि अणंतगुणं, एवडियमंतरं॥ २०१॥

असंखेज्जलोगमेत्ताणि अणुभागबंधट्ठाणाणि संतट्ठाणाणि च परूविदाणि। एदम्हादो चेव परूवणादो णव्वदे जहा ट्ठाणाणमंतरमत्थि त्ति, अण्णहा ट्ठाणभेदाणुववत्तीदो। तदो अंतरपरूवणा णिप्फले त्ति? ण णिप्फला, अंतरपमाणपरूवणदुवारेण सहलत्तदंसणादो। ण च ट्ठाणभेदावगममेत्तेण अंतरपमाणमवगम्मदे, तहाणुवलंभादो। ण च ट्ठाणाणमंतरेण होदव्वमेव इत्ति णियमो अत्थि, अविभागपडिच्छेदुत्तरकमेण गदाणं पि ठाणत्तं पडि विरोहाभावादो[2]। किं ठाणंतरं णाम? हेट्ठिमट्ठाणमुवरिमट्ठाणम्हि सोहिय रूवूणे कदे जं लद्धं तं ट्ठाणंतरं णाम। तत्थ जं जहण्णं ट्ठाणंतरं तं पि सव्वजीवेहिंतो अणंतगुणं, एगम्मि अणंतभागवड्ढिपक्खेवे वि सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तअविभागपडि-

---

सब जीवराशिके प्रतिभाग रूप अनन्तभागसे अधिकता भी घटित नहीं होती, क्योंकि, उसमें विरोध है।

इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र स्थानोंमेंसे प्रत्येकके स्वरूपकी प्ररूपणा करनी चाहिये। इस प्रकार स्थानप्ररूपणा समाप्त हुई।

अन्तरप्ररूपणामें एक एक स्थान का अन्तर कितना है? सब जीवोंसे अनन्तगुणा है, इतना अन्तर है॥ २०१॥

शंका—असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थान और सत्त्वस्थानोंकी प्ररूपणा की जा चुकी है। इसी प्ररूपणासे जाना जाता है कि स्थानोंमें अन्तर है, क्योंकि, इसके बिना स्थानभेद घटित नहीं होता। इस कारण अन्तरप्ररूपणा निष्फल है?

समाधान—वह निष्फल नहीं है, क्योंकि अन्तरके प्रमाणकी प्ररूपणा द्वारा उसकी सफलता देखी जाती है। कारण कि स्थानभेदके जान लेने मात्रसे अन्तरका प्रमाण नहीं जाना जाता, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता है। दूसरे स्थानोंका अन्तर होना ही चाहिये, ऐसा नियम भी नहीं है, क्योंकि, एक एक अविभागप्रतिच्छेदकी अधिकताके क्रमसे गये हुए भी स्थानोंकी स्थानरूपतामें कोई विरोध नहीं है।

शंका—स्थानान्तर किसे कहते हैं?

समाधान—उपरिम स्थानोंमेंसे अधस्तन स्थानको घटाकर एक कम करनेपर जो प्राप्त हो वह स्थानोंका अन्तर कहा जाता है।

उसमें जो जघन्य स्थानान्तर है वह भी सब जीवोंसे अनन्तगुणा है, क्योंकि, एक अनन्तभाग वृद्धि प्रक्षेपमें भी सब जीवोंसे अनन्तगुणे मात्र अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते हैं। यहाँ

---

१ अ-आप्रत्योः 'केवडिय', मप्रतौ 'येवडिय' इति पाठः। २ अप्रतौ 'विरोहाभावो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

च्छेदुवलंभादो। एत्थ अणुभागबंधट्ठाणाणमंतराणि जोगट्ठाणंतराणि इव सरिसाणि ण होंति, जोगट्ठाणपक्खेवाणं व अणुभागट्ठाणपक्खेवाणं सरिसत्ताभावादो। अणुभागट्ठाणेसु छव्विहवड्ढिदंसणादो वा णाणुभागट्ठाणंतराणं सरिसत्तण[1]मत्थि। तं जहा—सुहुमसांपराइयचरिमसमए जहण्णाणुभागबंधट्ठाणं चेव होदि। जोगवड्ढिवसेण सुहुमसांपराइयचरिमसमए अजहण्णाणुभागबंधट्ठाणं पि कत्थ वि जीवविसेसे किण्ण भवे? ण, जोगवड्ढीदो अणुभागवड्ढीए अभावादो। तं कधं णव्वदे? वेदणीय-णामा-गोदाणं सजोगिकेवलीसु उक्कस्साणुभागो चेव होदि त्ति वेयणसामित्तसुत्ते परूविदत्तादो। जदि पुण जोगवड्ढी अणुभागवड्ढीए कारणं होज्ज तो ण एसो णियमो जुज्जदे, उक्कस्साणुक्कस्साणं दोण्णं पि अणुभागट्ठाणाणं संभवादो। वेयणसण्णियासविहाणे जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स भाववेयणा णियमा उक्कस्से त्ति परूविदत्तादो वा णव्वदे जहा जोगवड्ढि-हाणीयो अणुभागवड्ढि-हाणीणं कारणं ण होंति त्ति। सजोगिकेवलिस्स लोगपूरणे वट्टमाणस्स खेत्तमुक्कस्सं जादं। भावो वि सुहुमसांपराइयखवगेण जो बद्धो[2] सो उक्कस्सो वा अणुक्कस्सो[3] वा लोगमावूरिदकेवलिम्हि होदि त्ति अभणिदूण उक्कस्सो चेव

अनुभागबन्धस्थानोंके अन्तर योगस्थानान्तरोंके समान सदृश नहीं होते हैं, क्योंकि, योगस्थानप्रक्षेपोंके समान अनुभागस्थानप्रक्षेपोंमें सदृशताका अभाव है। अथवा अनुभागस्थानोंमें छह प्रकारकी वृद्धिके देखे जानेसे अनुभागस्थानान्तरोंमें सदृशता नहीं है। वह इस प्रकारसे—सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें जघन्य अनुभागबन्धस्थान ही होता है।

शंका—योगवृद्धिके प्रभावसे सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें किसी जीवविशेषमें अजघन्य अनुभागस्थान भी क्यों नहीं होता?

समाधान—नहीं, क्योंकि, योगवृद्धिसे अनुभागवृद्धि सम्भव नहीं है।

शंका—वह कैसे जाना जाता है?

समाधान—वेदनीय, नाम और गोत्र कर्मका सयोग और अयोग केवलियोंमें उत्कृष्ट अनुभाग ही होता है; ऐसा चूँकि वेदनास्वामित्व सूत्रमें कहा जा चुका है, अतः इससे जाना जाता है कि योगवृद्धिके होनेसे अनुभागवृद्धि सम्भव नहीं है। यदि योगवृद्धि अनुभागवृद्धिका कारण होती तो यह नियम उचित नहीं था, क्योंकि, वैसा होनेपर उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट दोनों ही अनुभागस्थान वहाँ सम्भव थे। अथवा, जिस जीवके वेदनीय कर्मकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है, उसके भाववेदना नियमसे उत्कृष्ट होती है; इस प्रकार जो वेदनासंनिकर्षविधानमें प्ररूपणा की गई है उससे भी जाना जाता है कि योगकी वृद्धि व हानि अनुभागकी वृद्धि व हानिमें कारण नहीं है। लोकपूरण समुद्घातमें वर्तमान केवलीका क्षेत्र उत्कृष्ट होता है। भाव भी जो सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके द्वारा बाँधा गया है वह लोकपूरणको प्राप्त केवलीमें उत्कृष्ट भी होता है व अनुत्कृष्ट भी

१ अ-आप्रत्योः 'सरिसत्तण्ण' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'लद्धो', ताप्रतौ 'ल [ब] द्धो' इति पाठः। ३ आप्रतौ 'उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होदि त्ति परूविदत्तादो[1] जोगवड्ढि-हाणीयो अणुभागवड्ढिहाणीणं कारणं ण होंति[2] त्ति भणिदं होदि। कसायपाहुडे सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागो दंसणमोहक्खवगं मोत्तूण सव्वत्थ होदि त्ति परूविदत्तादो[3] वा णव्वदे। खविदकम्मंसियलक्खणेण वा गुणिदकम्मंसियलक्खणेण वा आगंतूण सम्मत्तं घडिवज्जिय बे-छावट्ठीयो भमिय[4] दंसणमोहक्खवगअपुव्वकरणपढमाणुभागखंडओ जाव ण[5]पददि ताव[6] सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागो चेव होदि त्ति भणिदं।[7] अण्णहा खविदकम्मंसियं मोत्तूण गुणिदकम्मंसिएण चेव सम्मत्ते गहिदे सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्कस्साणुभागो होज्ज, तत्थ जोगबहुत्तुवलंभादो। एवं संते दंसणमोहक्खवगं मोत्तूण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमणुभागो उक्कस्सो वा अणुक्कस्सो सव्वत्थ होज्ज। ण च एवं, तहोवदेसाभावादो। तम्हा जोगो अणुभागकारणं ण होदि त्ति सिद्धं। वुत्तं च—

होता है, ऐसा न कहकर 'उत्कृष्ट ही होता है' इस प्रकार की गई प्ररूपणासे निश्चित होता है कि योगकी वृद्धि व हानि अनुभागकी वृद्धि व हानिका कारण नहीं है, यह अभिप्राय है। अथवा कषायप्राभृतमें दर्शनमोहक्षपकको छोड़कर सर्वत्र सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अनुभाग होता है, यह जो कहा गया है उससे भी जाना जाता है कि योगवृद्धि अनुभागवृद्धिका कारण नहीं है। इसीसे क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे अथवा गुणितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर सम्यक्त्वको प्राप्त कर दो छयासठ सागरोपम परिभ्रमण करके दर्शनमोहक्षपक अपूर्वकरणका जब तक प्रथम अनुभागकाण्डक पतित नहीं होता है तब तक सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अनुभाग ही होता है ऐसा कहा है। अन्यथा (योगवृद्धिको अनुभागवृद्धिका कारण माननेपर) क्षपितकर्मांशिकको छोड़कर गुणित कर्मांशिकके द्वारा ही सम्यक्त्वके ग्रहण किये जानेपर सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अनुभाग होना चाहिये, क्योंकि, वहाँ योगकी अधिकता पायी जाती है। और ऐसा होनेपर दर्शनमोहक्षपकको छोड़कर सर्वत्र सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्वका अनुभाग उत्कृष्ट अथवा अनुत्कृष्ट होना चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वैसा उपदेश नहीं है। इसलिये योग अनुभागका कारण नहीं है, यह सिद्ध होता है। कहा भी है—

१ ताप्रतौ 'परूविदत्तादो। जोग' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'कारणं [ण] होंति' इति पाठः। वेयणासण्णियासुत्तण्णहाणुववत्तीदो च ण जुज्जदे जहा अणुभागवड्ढीए कसाओ चेव कारणं, ण जोगो त्ति। तं जहा— जस्स णामा-गोद-वेदणीयवेदणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स भावदो णियमा उक्कस्सा त्ति वेयणासुत्तं। णेदं घडदे, खविदकम्मंसियसजोगिम्मि लोगपूरणाए वट्टमाणम्मि उक्कस्साणुभागाभावादो। तदो ण जोगत्थोवत्तमणुभागत्थोवत्तस्स कारणमिदि सद्दहेयव्वं। जयध अ. प. १६०। ३ समत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंतकम्मं कस्स? सुगममेदं। दंसणमोहक्खवयं मोत्तूण सव्वस्स उक्कस्सयं। जयध. अ. प. ३२१,। ४ ताप्रतौ 'भणि-(मि)य' इति पाठः। ५ अप्रतौ 'जाव △ ण' इति पाठः। ६ प्रतिषु 'सव्व-वुत्त' इति पाठः। ७ किं च ण परमाणुबहुत्तमणुभागबहुत्तस्स कारणं, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तुक्कस्साणुभागसामित्तसुत्तण्णहाणुववत्तीदो। तं जहा—दंसणमोहक्खवगं मोत्तूण सव्वम्हि उक्कस्समिदि सामित्तसुत्तं। णेदं घडदे, गुणिदकम्मंसियलक्खणेण [णा] गंतूण सम्मत्तं पडिवण्णस्स गुणसंकमचरिमसमए वट्टमाणस्स चेव सम्मत्तुक्कस्साणुभागदस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'जोगा[1] पयडि पदेसे ट्ठिदि-अणुभागे कसायदो कुणदि ।' त्ति ।

खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय बे-छावट्ठीयो भमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लिय एगं ठिदिं दुसमयकालं करेदूण अच्छिदजहण्णसंतकम्मियस्स वि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्कस्साणुभागुवलंभादो सरिसधणियवुड्ढीए अणुभागवुड्ढी णत्थि त्ति णव्वदे । एदेण सरिसधणिएहि बहुएहि संतेहि अणुभागबहुत्तं होदि त्ति एसो आग्गहो ओसारिदो होदि । असरिसधणिय-एगोलीयबहुत्तं णाणुभागबहुत्तस्स कारणं 'केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं असादा-वेदणीयं वीरियंतराइयं च चत्तारि वि तुल्लाणि'[2] त्ति चउसट्ठिपदियउक्कस्साणुभागअप्पाब-हुगादो णव्वदे । तं जहा—वीरियंतराइयस्स लदा[2]समाणजहण्णफद्दयप्पहुडि एगट्ठाण-विट्ठाण-तिट्ठाण-चउट्ठाणाणि गंतूण उक्कस्साणुभागो ट्ठिदो । केवलणाण-केवलदंसणाव-रणीयाणं पुण सव्वघादिजहण्णफद्दयप्पहुडि जाव दारुसमाणस्स अणंते भागे गंतूण पुणो तिट्ठाण-चउट्ठाणाणि च गंतूण उक्कस्साणुभागो अवट्ठिदो । एत्थ केवलणाणकेवलदंसणा-

---

'जीव योगसे प्रकृति और प्रदेशबन्धको तथा कषायसे स्थिति और अनुभागबन्धको करता है।'

क्षपित कर्मांशिक स्वरूपसे आकर सम्यक्त्वको प्राप्त करके दो छ्यासठ सागरोपम कालतक भ्रमण करके मिथ्यात्वको प्राप्त हो दीर्घ उद्वेलनकाल द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर दो समय काल प्रमाण एक स्थिति करके स्थित हुए जघन्य सत्त्ववालेके भी चूँकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अनुभाग पाया जाता है अतएव इससे जाना जाता है कि समान धन युक्त वृद्धिसे अनुभागकी वृद्धि नहीं होती। इससे समान धनवाले बहुत परमाणुओंके होनेसे अनुभागकी अधिकता होती है, इस आग्रहका निराकरण होता है।

असमान धनवालोंकी एक पंक्तिकी अधिकता अनुभागकी अधिकताका कारण नहीं है, यह बात "केवलज्ञानावरणीय, केवलदर्शनावरणीय, असातावेदनीय और वीर्यान्तराय, ये चारों ही प्रकृतियाँ तुल्य [व मिथ्यात्वसे अनन्तगुणे हीन अनुभागसे युक्त] हैं" इस चौंसठ पदवाले उत्कृष्ट अनुभाग सम्बन्धी अल्पबहुत्वसे जानी जाती है। यथा—वीर्यान्तरायके लता समान जघन्य स्पर्द्धकसे लेकर एकस्थान, द्विस्थान, त्रिस्थान और चतुःस्थान जाकर उत्कृष्ट अनुभाग स्थित है। परन्तु केवलज्ञानावरणीय और केवलदर्शनावरणीयके सर्वघाती जघन्य स्पर्द्धकसे लेकर दारु समान अनुभागका अनन्त बहुभाग जाकर, इससे आगे त्रिस्थान व चतुःस्थान जाकर उत्कृष्ट अनुभाग अवस्थित है। यहाँ केवलज्ञानावरणीय और केवलदर्शनावरणीयके अनुभागस्पर्द्धकोंकी

णादो । सुत्ताहिप्पाएण पुण खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय बेछावट्ठिसागरोवमाणि भमिय दंसणमोहक्खवणं पारभिय जाव अपुव्वकरणपढमाणुभागकंदयस्स चरिमफाली ण पददि ताव सम्मत्तस्सुक्कस्समणु-भागसंतकम्ममिदि । जयध. अ. प. ३६०

१ मूला. ५–४७. जोगा पयडि-पदेसा ठिदि-अणुभागा कसायदो होंति । गो. क. २५७.

२ अ-आप्रत्योः 'लद्धा' इति पाठः ।

वरणीयअणुभागफद्दयपंतीदो वीरियंतराइयस्स अणुभागफद्दयपंती बहुआ। केत्तियमेत्तेण ? लदासमाणफद्दएहि दारुसमाणफद्दयाणं अणंतिमभागेण च। तदो चदुण्हं कम्माणं अणुभागस्स सरिसत्तं ण जुज्जदे। भणिदं च सुत्ते सरिसत्तं। तेण असरिसधणियएगोलीपरमाणूणमणुभागे मेलाविदे वि णाणुभागट्ठाणं होदि त्ति णव्वदे। एदं जहण्णट्ठाणं सव्वजीवेहि अणंतगुणेण गुणगारेण गुणिदे सुहुमसांपराइयदुचरिमसमए पबद्धविदियाणुभागट्ठाणपमाणं होदि। एदम्मि जहण्णट्ठाणं सोहिय रूवूणे कदे दोण्णं ट्ठाणाणं अंतरं होदि। वड्डिफद्दयसलागाओ विरलिय वड्डिदअणुभागं समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स वड्डिफद्दयपमाणं होदि। एदाओ फद्दयवड्डीयो, जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्स उवरि पक्खिविज्जमाणत्तादो। कथमेदासिं[1] फद्दयसण्णा ? अणुभागं मोत्तूण अक्कमेण वड्डिदूण कमवड्डिमुवगदाणुभाग[2]वुड्डीए चेव फद्दयत्तुवलंभादो। एत्थ पढमरूवधरिदं जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्सुवरि पक्खित्ते वड्डिफद्दएसु पढमफद्दयं होदि। फद्दयवड्डीरूवूणा फद्दयंतरं होदि। फद्दयवड्डी चेव एगफद्दयवग्गणाहि ऊणा हेट्ठिम-उवरिमवग्गणाणमंतरं होदि। पुणो विदियफद्दयं घेत्तूण पक्खेवपढमफद्दयं पडिरासिय पक्खित्ते विदियफद्दयं होदि। रूवूणा वड्डी

पंक्तिसे वीर्यान्तरायके अनुभाग स्पर्द्धकोंकी पंक्ति बहुत है। कितनी मात्रसे वह बहुत है ? वह लता समान अनुभागस्पर्द्धकों तथा दारु समान अनुभागस्पर्द्धकोंके अनन्तवें भागमात्र अधिक है। इसी कारण उक्त चार कर्मोंके अनुभागकी समानता उचित नहीं है। परन्तु सूत्रमें सदृशता बतलायी गई है। इससे जाना जाता है कि असमान धनवाले एक पंक्ति रूप परमाणुओंके अनुभागके मिलानेपर भी अनुभागस्थान नहीं होता है।

इस जघन्य स्थानको सब जीवोंसे अनन्तगुणे गुणकारके द्वारा गुणित करनेपर सूक्ष्मसाम्परायिकके द्विचरम समयमें बाँधे गये द्वितीय अनुभागस्थानका प्रमाण होता है। इसमेंसे जघन्य स्थानको घटाकर एक कम करनेपर दोनों स्थानोंका अन्तर होता है। वृद्धिस्पर्द्धक शलाकाओंका विरलन कर वृद्धिगत अनुभागको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति वृद्धिस्पर्द्धकोंका प्रमाण होता है। ये स्पर्द्धकवृद्धियाँ हैं, क्योंकि, जघन्य स्थानके अन्तिम स्पर्द्धकके ऊपर उनका प्रक्षेप किया जानेवाला है।

शंका—इनकी स्पर्द्धक संज्ञा कैसे है ?

समाधान—कारण कि अनुभागको छोड़कर युगपत् वृद्धिको प्राप्त होकर क्रमवृद्धिको प्राप्त अनुभागकी वृद्धिके ही स्पर्द्धकपना पाया जाता है। यहाँ प्रथम अंकके ऊपर रखी हुई राशिको जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके ऊपर रखनेपर वृद्धिस्पर्द्धकोंमेंसे प्रथम स्पर्द्धक होता है। एक स्पर्द्धकवृद्धि प्रमाण उन स्पर्द्धकोंका अन्तर होता है। एक स्पर्द्धक वर्गणाओंसे हीन स्पर्द्धकवृद्धि ही अधस्तन और उपरिम वर्गणाओंका अन्तर होता है।

पुनः द्वितीय स्पर्द्धकको ग्रहण कर प्रक्षेपभूत प्रथम स्पर्द्धकको प्रतिराशि करके उसमें मिलाने-

१ ताप्रतौ 'कथं ? एदासिं' इति पाठः। २ अप्रतौ 'कमवड्ढीमुवरिगदाणुभाग' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

फद्दयंतरं। सा[1] चेव वड्ढी एगफद्दयवग्गणाहि ऊणा उवरिम-हेट्ठिमफद्दयाणं जहण्णुक्कस्सवग्गणाणमंतरं होदि। तदियफद्दयं घेत्तूण विदियफद्दयं पडिरासिय पक्खित्ते तदियफद्दयं होदि। वड्ढिदव्वं रूवूणं फद्दयंतरं। एगफद्दयवग्गणाहि ऊणं जहण्णुक्कस्सवग्गणंतरं। एवं णेयव्वं जाव विरलणदुचरिमरूवधरिदं दुचरिमफद्दयम्मि पक्खित्ते विदियं ठाणं चरिमफद्दओ च उप्पज्जदि। ण च विदियट्ठाणस्स तस्सेव चरिमफद्दयस्स च एगत्तं, चरिमरूवधरिदवड्ढीए अक्कमेण वड्ढिदूण कमवुड्ढिमुवगयाए पाधण्णपदे फद्दयत्तब्भुवगमादो दुचरिमफद्दएण सह चरिमवड्ढीए ट्ठाणत्तब्भुवगमादो। जदि एवं तो वड्ढीए पक्खित्ताए फद्दयमुप्पज्जदि त्ति कधं घडदे? ण एस दोसो, संजोगसरूवेण पुव्वणिप्फण्णफद्दयस्स वि कधं चि उप्पत्तीए अब्भुवगमादो।

एदस्स विदियट्ठाणस्स फद्दयंतराणि जहण्णट्ठाणफद्दयंतरेहिंतो अणंतगुणाणि। को गुणकारो? सव्वजीवेहि अणंतगुणो। तं जहा—जहण्णट्ठाणफद्दयसलागाहि अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाहि सिद्धाणमणंतभागमेत्ताहि जहण्णट्ठाणे भागे हिदे एगं फद्दयं होदि। तं रूवूणं जहण्णट्ठाणफद्दयंतरं। पुणो विदियट्ठाणवड्ढिं वड्ढिफद्दयसलागाहि खंडिदे फद्दयं

पर द्वितीय स्पर्द्धक होता है। एक कम वृद्धि उक्त स्पर्द्धकोंका अन्तर होती है। एक स्पर्द्धककी वर्गणाओंसे हीन वही वृद्धि अधस्तन और उपरिम स्पर्द्धकोंकी जघन्य एवं उत्कृष्ट वर्गणाओंका अन्तर होती है। तृतीय स्पर्द्धकको ग्रहण कर द्वितीय स्पर्द्धकको प्रतिराशि करके उसमें मिलानेपर तृतीय स्पर्द्धक होता है। एक कम वृद्धिंगत द्रव्य दोनों स्पर्द्धकोंका अन्तर होता है। एक स्पर्द्धककी वर्गणाओंसे हीन वही जघन्य व उत्कृष्ट वर्गणाओंका अन्तर होता है। इस प्रकार विरलन राशिके द्विचरम अंकके प्रति प्राप्त राशिको द्विचरम स्पर्द्धकमें मिलानेपर द्वितीय स्थान और अन्तिम स्पर्द्धकके उत्पन्न होने तक ले जाना चाहिये। यहाँ द्वितीय स्थान और उसका ही अन्तिम स्पर्द्धक एक नहीं हो सकते, क्योंकि, अन्तिम अंकके प्रति प्राप्त वृद्धिसे युगपत् वृद्धिंगत होकर क्रमवृद्धिको प्राप्त [अनुभागकी वृद्धिको] प्राधान्य पदमें स्पर्द्धक स्वीकार किया गया है, तथा द्विचरम स्पर्द्धकके साथ अन्तिम वृद्धिको स्थान स्वीकार किया गया है।

शंका—यदि ऐसा है तो वृद्धिका प्रक्षेप करनेपर स्पर्द्धक होता है, यह कथन कैसे घटित होगा?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, संयोग स्वरूपसे पहिले उत्पन्न हुए स्पर्द्धककी भी कथंचित् उत्पत्ति स्वीकार की गई है।

इस द्वितीय स्थान सम्बन्धी स्पर्द्धकोंके अन्तर जघन्य स्थान सम्बन्धी स्पर्द्धकोंके अन्तरोंसे अनन्तगुणे हैं। गुणकार क्या है? वह सब जीवोंसे अनन्तगुणा है। यथा—अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र जघन्य स्थान सम्बन्धी स्पर्द्धक शलाकाओंका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर एक स्पर्द्धक होता है। उसमेंसे एक कम करनेपर जघन्य स्थान सम्बन्धी स्पर्द्धकोंका

---

१ अप्रतौ 'सो' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

होदि । तम्हि रूवूणे कदे फद्दयंतरं होदि । जहण्णट्ठाणफद्दएण विदियट्ठाणवड्ढिफद्दए भागे हिदे[1] सव्वजीवेहि अणंतगुणो गुणगारो आगच्छदि । एवं फद्दयंतरस्स वि गुणगारो साधेयव्वो । एवं सुहुमसांपराइयतिचरिमसमयप्पहुडि जाणि बंधट्ठाणाणि तेसिं सव्वेसिं पि एवं चेव फद्दयरचणा कायव्वा । णवरि विदियबंधट्ठाणादो तदियबंधट्ठाणमणंतगुणं । तदियादो चउत्थबंधट्ठाणमणंतगुणं । एवमणंतगुणाए सेडीए सुहुमसांपराइय-अणियट्टिखवगद्धासु णेदव्वं । पुणो एदेसु बंधट्ठाणेसु हेट्ठिमट्ठाणंतरादो उवरिमट्ठाणंतरमणंतगुणं । हेट्ठिमट्ठाणफद्दयंतरादो वि उवरिमट्ठाणफद्दयंतरमणंतगुणं । कुदो ? अणंतगुणाए सेडीए वड्ढिमुवगत्तादो ।

सव्वविसुद्धसंजमाहिमुहचरिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स णाणावरणजहण्णट्ठिदिबंधपाओग्गाणि असंखेज्जलोगमेत्तविसोहिट्ठाणाणि । पुणो तेसिं उक्कस्सचरिमविसोहीए असंखेज्जलोगमेत्तउत्तरकारणसहायाए बज्झमाणअणुभागविसोहिट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि । । तत्थ असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि हवंति ।

किं छट्ठाणं णाम ? जत्थ अणंतभागवड्ढिट्ठाणाणि कंदयमेत्ताणि [गंतूण] सइमसंखेज्जभागवड्ढी होदि । पुणो वि अणंतभागवड्ढीए चेव कंदयमेत्तट्ठाणाणि गंतूण विदिय-

---

अन्तर होता है । फिर द्वितीय स्थानकी वृद्धिको वृद्धिस्पर्द्धकशलाकाओंसे खण्डित करनेपर स्पर्द्धक होता है । उसमेंसे एक कम करनेपर स्पर्द्धकोंका अन्तर होता है । जघन्य स्थान सम्बन्धी स्पर्द्धकका द्वितीय स्थान सम्बन्धी वृद्धिस्पर्द्धकमें भाग देनेपर सब जीवोंसे अनन्तगुणा गुणकार आता है । इसी प्रकार स्पर्द्धकोंके अन्तरका भी गुणकार सिद्ध करना चाहिये ।

इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिकके त्रिचरम समयसे लेकर जो बन्धस्थान हैं उन सभीके स्पर्द्धकोंकी रचना इसी प्रकारसे करना चाहिये । विशेष इतना है कि द्वितीय बन्धस्थानसे तृतीय बन्धस्थान अनन्तगुणा है । तृतीय से चतुर्थ बन्धस्थान अनन्तगुणा है । इस प्रकार अनन्तगुणित श्रेणिसे सूक्ष्मसाम्पराय और अनिवृत्तिकरण क्षपककालोंमें ले जाना चाहिये । पुनः इन बन्धस्थानोंमें अधस्तन स्थानके अन्तरसे उपरिम स्थानका अन्तर अनन्तगुणा है । तथा अधस्तन स्थानके स्पर्धकोंके अन्तरसे भी उपरिम स्थानके स्पर्धकोंका अन्तर अनन्तगुणा है, क्योंकि, वह अनन्तगुणित श्रेणिसे वृद्धिको प्राप्त हुआ है ।

संयमके अभिमुख हुए सर्वविशुद्ध अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीवके ज्ञानावरणके जघन्य स्थितिबन्धके योग्य असंख्यात लोक मात्र विशुद्धिस्थान हैं । फिर उनमें असंख्यात लोक मात्र उत्तर कारणोंकी सहायता युक्त उत्कृष्ट अन्तिम विशुद्धिके द्वारा बाँधे जानेवाले अनुभागके विशुद्धिस्थान असंख्यात लोक मात्र हैं । वहाँ असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान होते हैं ।

शंका—षट्स्थान किसे कहते हैं ?

समाधान—जहाँपर अनन्त भागवृद्धिस्थान काण्डक प्रमाण जाकर एक बार असंख्यात भागवृद्धि होती है । फिर भी अनन्त भागवृद्धिके ही काण्डक प्रमाण स्थान जाकर द्वितीय असंख्यात-

---

१ अ-आप्रत्योः 'भागे हि' इति पाठः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

असंखेज्जभागवड्ढी होदि । अणेण विहाणेण कंदयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढीसु गदासु पुणो कंदयमेत्तअणंतभागवड्ढीयो गंतूण सइं संखेज्जभागवड्ढी होदि । पुणो पुव्वुद्दिट्ठहेट्ठिल्लमद्धाणं सयलं गंतूण विदिया संखेज्जभागवड्ढी होदि । पुणो वि तेत्तियं चेव अद्धाणं गंतूण तदिया संखेज्जभागवड्ढी होदि । एवं कंदयमेत्तासु संखेज्जभागवड्ढीसु गदासु अण्णेगं संखेज्जभागवड्ढिसमुप्पत्तीए पाओग्गमद्धाणं गंतूण सइं संखेज्जगुणवड्ढी होदि । पुणो हेट्ठिमद्धाणं संपुण्णमुवरि गंतूण विदिया संखेज्जगुणवड्ढी होदि । एदेण विहाणेण कंदयमेत्तासु संखेज्जगुणवड्ढीसु गदासु पुणो अण्णेगं संखेज्जगुणवड्ढिविसयं गंतूण सइमसंखेज्जगुणवड्ढी होदि । पुणो हेट्ठिल्लमद्धाणं संपुण्णं गंतूण विदियमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणं होदि । एवं कंदयमेत्तासु असंखेज्जगुणवड्ढीसु गदासु पुणो अण्णेगमसंखेज्जगुणवड्ढिविसयं गंतूण अणंतगुणवड्ढी सइं होदि । एदं एगछट्ठाणं । एरिसाणि असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि ।

पुणो तत्थ सव्वजहण्णं णाणावरणीयस्स अणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो एदेसिं चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणीयउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव चरिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णविसोहीए बज्झमाणजहण्णाणुभागट्ठाणमणंतगुणं । पुणो एदेसिं चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो दुचरिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स उक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणम-

---

भागवृद्धि होती है । इस क्रमसे काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियोंके वीतनेपर फिरसे काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियाँ जाकर एक बार संख्यातभागवृद्धि होती है । पश्चात् पूर्वोद्दिष्ट समस्त अधस्तन अध्वान जाकर द्वितीय संख्यातभागवृद्धि होती है । फिरसे भी उतना मात्र ही अध्वान जाकर तृतीय संख्यातभागवृद्धि होती है । इस प्रकार काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियोंके बीतनेपर संख्यातभागवृद्धिकी उत्पत्तिके योग्य एक अन्य अध्वान जाकर एक बार संख्यातगुणवृद्धि होती है । पश्चात् फिरसे आगे समस्त अधस्तन अध्वान जाकर द्वितीय संख्यात गुणवृद्धि होती है । इस विधिसे काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियोंके बीतनेपर फिरसे संख्यातगुणवृद्धि विषयक एक अन्य अध्वान जाकर एक बार असंख्यातगुणवृद्धि होती है । फिर अधस्तन समस्त अध्वान जाकर असंख्यातगुणवृद्धिका द्वितीय स्थान होता है । इस प्रकार काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धियोंके बीतनेपर फिर असंख्यातगुणवृद्धिविषयक एक अन्य अध्वान जाकर एक बार अनन्तगुणवृद्धि होती है । यह एक षट्स्थान है । ऐसे असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान होते हैं ।

पुनः उनमें ज्ञानावरणीयका सर्वजघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर इन्हीं असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें ज्ञानावरणीयका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर अन्तिम समयवर्ती उसी मिथ्यादृष्टिका जघन्य विशुद्धिके द्वारा बाँधा जानेवाला जघन्य अनुभागस्थान अनन्तगुणा है । फिर इन्हीं असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर द्विचरम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी

छ. १२–१६.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णंतगुणं। पुणो एदिस्से चेव विसोहीए असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तम्हि चेव दुचरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवं तिचरिमादिसमएसु अणंतगुणकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। पुणो तत्तो मिच्छाइट्ठिस्स सत्थाणुक्कस्सविसोहिपरिणामस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव सत्थाणजहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं।

एदस्सुवरि सव्वविसुद्धअसण्णिपंचिंदियमिच्छाइट्ठिचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवं दुचरिमादिसमएसु अणंतगुणाए सेडीए ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। पुणो असण्णिपंचिंदियसत्थाणउक्कस्स-

---

ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसी विशुद्धिके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसी द्विचरम समयमें जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार त्रिचरमादि समयोंमें अनन्तगुणित क्रमसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये। पुनः उससे आगे मिथ्यादृष्टिके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धि परिणाम सम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही स्वस्थान जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है।

इसके आगे सर्वविशुद्ध असंज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही अन्तिम समयमें जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोकमात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार द्विचरमादिक समयोंमें अनन्तगुणित श्रेणिसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये। फिर असंज्ञी पंचेन्द्रियके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव सत्थाणजहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव जहण्णविसोहिट्ठाणस्स असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागट्ठाणमणंतगुणं ।

पुणो एदस्सुवरि सव्वविसुद्धचउरिंदियचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । एवं दुचरिमादिसमएसु अणंतगुणकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति । पुणो चउरिंदियसत्थाणुक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव चउरिंदियस्स सत्थाणविसोहिजहण्णट्ठाणस्स[1] णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव जहण्णविसोहिट्ठाणस्स असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं ।

अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोकमात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही स्वस्थान जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही जघन्य विशुद्धिस्थानके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागस्थान अनन्तगुणा है ।

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध चतुरिन्द्रियके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसीके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही अन्तिम समयमें होनेवाला जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । इसी प्रकार द्विचरमादिक समयोंमें अनन्तगुणित क्रमसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये । फिर चतुरिन्द्रियके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसी चतुरिन्द्रियके स्वस्थान जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही जघन्य विशुद्धिस्थानके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है ।

---

१ अप्रतौ "सत्थाणविसोहिट्ठाणस्स जहण्णणाणा" इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुणो एदस्सुवरि सव्वविसुद्धचरिमसमयतेइंदियउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरण-जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरण-उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स जह-ण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभाग-बंधट्ठाणमणंतगुणं। एवं दुचरिमादिसमएसु अणंतगुणकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। पुणो तेइंदियसत्थाणविसोहिउक्कस्सट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव सत्थाणविसोहिजहण्णट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलो-गमेत्तछट्ठाणेसु उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं।

पुणो एदस्सुवरि बेइंदियसव्वविसुद्धचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणु-भागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाण-मणंतगुणं। पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंत-गुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणेसु उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवं दुचरिमादिसमएसु अणंतगुणाए सेडीए ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। तत्तो बेइंदियसत्थाणउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध चरमसमयवर्ती त्रीन्द्रियके उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञाना-वरणका जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही अन्तिम समयमें जघन्य विशुद्धि स्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। इसी प्रकारसे द्विचरमादिक समयों-में अनन्तगुणितक्रमसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये। फिर त्रीन्द्रियके स्वस्थान विशुद्धि उत्कृष्ट स्थानसम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही स्वस्थान विशुद्धि जघन्य स्थानसम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है।

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध द्वीन्द्रियके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धि स्थानसम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही अन्तिम समयमें जघन्य विशुद्धि स्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकर द्विचरमा-दिक समयोंमें अनन्तगुणित श्रेणिरूपसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये। इसके पश्चात् द्वीन्द्रियके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसके ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव जहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं।

पुणो एदस्सुवरि सव्वविसुद्धबादरेइंदियचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव चरिमसमए जहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। एवमणंतगुणकमेण दुचरिमादिसमएसु ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। तत्तो बादरेइंदियसत्थाणुक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो एदस्स चेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव बादरेइंदियसत्थाणजहण्णविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं।

पुणो एदस्सुवरि सव्वविसुद्धसुहुमणिगोदअपज्जत्तचरिमसमयउक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स जहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं। पुणो तस्सेव चरिमसमयजहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभाग-

---

असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है।

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध बादर एकेन्द्रियके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धि स्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही अन्तिम समयमें जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र छह स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार द्विचरमादिक समयोंमें अनन्तगुणितक्रमसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये। उसके आगे बादर एकेन्द्रियके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर इसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसी बादर एकेन्द्रियके स्वस्थान जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है।

पुनः इसके आगे सर्वविशुद्ध सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। उसीके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसके ही अन्तिम समयमें जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है। फिर उसीके असं-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । एवं दुचरिमादिसमएसु अणंतगुणकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति । तदो हदसमुप्पत्तियं [1]कादूणच्छिदसुहुमणिगोदअपज्जत्तसत्थाणुक्कस्सविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणउक्कस्साणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव सुहुमणिगोदअपज्जत्तसत्थाणजहण्णविसोहिट्ठाणस्स णाणावरणजहण्णाणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं । पुणो तस्सेव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं णाणावरणबंध-संतसरिसअणुभागबंधट्ठाणमणंतगुणं ।

एदेसिं ट्ठाणाणमंतराणि छवड्डीए अवट्ठिदाणि । तं जहा—अणंतभागवड्डिट्ठाणंतराणि फद्दयंतराणि च अणंतभागब्भहियाणि । अणंतभागवड्डिट्ठाणंतराणि फद्दयंतराणि[2] च पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्डि–[संखेज्जभागवड्डि–] संखेज्जगुणवड्डि-असंखेज्जगुणवड्डि-अणंतगुणवड्डीणं ट्ठाणंतराणि[3] फद्दयंतराणि च अणंतगुणाणि । असंखेज्जभागवड्डिअब्भंतरमणंतभागवड्डीणं[3] ट्ठाणंतराणि फद्दयंतराणि च असंखेज्जभागब्भहियाणि । संखेज्जभागवड्डिअब्भंतरं अणंतभागवड्डीणं ट्ठाणंतरफद्दयंतराणि च संखेज्जभागब्भहियाणि । संखेज्जगुणवड्डिअब्भंतरअणंतभागवड्डीणं ट्ठाणंतर-फद्दयंतराणि च संखेज्जगुणब्भहियाणि । असंखेज्जगुणवड्डि-

---

ख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । इस प्रकार द्विचरमादिक समयोंमें अनन्तगुणितक्रमसे अन्तर्मुहूर्त तक उतारना चाहिये । तत्पश्चात् हतसमुत्पत्ति करके स्थित सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके स्वस्थान उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसी सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके स्वस्थान जघन्य विशुद्धिस्थान सम्बन्धी ज्ञानावरणका जघन्य अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है । फिर उसके ही असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानों सम्बन्धी ज्ञानावरणका बन्ध व सत्त्वके सदृश अनुभाग बन्धस्थान अनन्तगुणा है ।

इन स्थानोंके अन्तर छह प्रकारकी वृद्धिमें अवस्थित हैं । यथा—अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके अन्तर और स्पर्द्धकोंके अन्तर अनन्तवें भागसे अधिक हैं । अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके अन्तरों और स्पर्द्धकोंके अन्तरोंकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धि, [संख्यातभागवृद्धि], संख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि सम्बन्धी स्थानोंके अन्तर व स्पर्द्धकोंके अन्तर अनन्तगुणे हैं । असंख्यातभागवृद्धिके भीतर अनन्तभागवृद्धियोंके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर असंख्यातवें भाग अधिक हैं । संख्यातभागवृद्धिके भीतर अनन्तभागवृद्धियोंके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर संख्यातवें भाग अधिक हैं । संख्यातगुणवृद्धिके भीतर अनन्तभागवृद्धियोंके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर संख्यातगुणे अधिक हैं । असंख्यातगुणवृद्धिके भीतर

---

१ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-ताप्रतिषु 'कादूणट्ठिद' इति पाठः । २ अप्रतौ 'फद्दयंतराणि' इत्येतत् पदं नास्ति । ३ अप्रतौ 'वड्डीट्ठाणंतराणि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब्भंतरं अणंतभागवड्डीणं ट्ठाणंतर-फद्दयंतराणि [च] असंखेज्जगुणब्भहियाणि । एवं सेसाणं पि ट्ठाणाणमंतरपरूवणा जाणिय[1] कायव्वा ।

संपहि एत्थ चोदगो भणदि—सुहुमणिगोदअपज्जत्तजहण्णाणुभागट्ठाणादो हेट्ठिमअणुभागबंधट्ठाणाणं केवलाणं ण कदाचि वि कहिं वि जीवे संभवो अत्थि । तदो ण तेसिमणुभागट्ठाणसण्णा । बंधं पडि ट्ठाणसण्णा होदि त्ति भणिदे—ण, तेण सरूवेण अणुवलंभमाणस्स सरिसधणिएसु एगोलीए ट्ठिदपरमाणुपोग्गलेसु च अंतब्भावं गयस्स अपत्तसंताणुभागट्ठाणपमाणस्स अणुभागट्ठाणत्तविरोहादो । तदो सुहुमणिगोदापज्जत्तजहण्णसंताणुभागट्ठाणादो हेट्ठिमअणुभागट्ठाणाणं परूवणा अणत्थिए त्ति ? ण एस दोसो, एदस्सेव जहण्णाणुभागट्ठाणस्स सरूवपरूवणट्ठं तप्परूवणाकरणादो । ण तेहि अपरूविदेहि जहण्णट्ठाणाणुभागपमाणं फद्दयपमाणं तत्थतणवग्गणपमाणं अंतरपमाणं च अवगम्मदे । तदो हेट्ठिमबंधट्ठाणपरूवणा सफला इत्ति घेत्तव्वा । एवं सेसअसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं पि परूवणा कायव्वा ।

एवमंतरपरूवणा समत्ता ।

अनन्तभागवृद्धियोंके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर असंख्यातगुणे अधिक हैं । इसी प्रकार शेष स्थानोंके भी अन्तरोंकी प्ररूपणा जानकर करनी चाहिये ।

शंका—यहां शंकाकार कहता है कि सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके जघन्य अनुभागस्थानसे नीचेके अनुभागबन्धस्थान केवल कभी भी किसी भी जीवमें सम्भव नहीं हैं । इस कारण उनकी अनुभागस्थान संज्ञा संगत नहीं है । बन्धके प्रति स्थान संज्ञा हो सकती है, ऐसा कहनेपर कहते हैं कि वैसा भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, उस स्वरूपसे न पाये जानेवाले, समान धनवालों व एक पंक्ति रूपसे स्थित परमाणु पुद्गलोंमें अन्तर्भावको प्राप्त हुए, तथा सत्त्वानुभागस्थानके प्रमाणको न प्राप्त करनेवालेके अनुभागस्थान होनेका विरोध है । इस कारण सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तके जघन्य अनुभागसत्त्वस्थानसे नीचेके अनुभागस्थानोंकी प्ररूपणा अनर्थक है ?

समाधान यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि इसी जघन्य अनुभागस्थानके स्वरूपकी प्ररूपणा करनेके लिये उक्त अनुभागस्थानोंकी प्ररूपणा की गई है । कारण कि उनकी प्ररूपणाके बिना जघन्य अनुभागस्थानका प्रमाण, स्पर्द्धकोंका प्रमाण, उनकी वर्गणाओंका प्रमाण और अन्तरका प्रमाण नहीं जाना जा सकता है । अतएव उक्त नीचेके बन्धस्थानोंकी प्ररूपणा सफल है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

इसी प्रकारसे शेष असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

इस प्रकार अन्तरप्ररूपणा समाप्त हुई ।

---

१ आ-ताप्रत्योः 'जाणिदूण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कंदयपरूवणदाए अत्थि अणंतभागपरिवड्ढिकंदयं असंखेज्जभाग-परिवड्ढिकंदयं संखेज्जभागपरिवड्ढिकंदयं संखेज्जगुणपरिवड्ढिकंदयं असंखेज्जगुणपरिवड्ढिकंदयं अणंतगुणपरिवड्ढिकंदयं ॥२०२॥

सुहुमणिगोदजहण्णसंतट्ठाणप्पहुडि उवरिमेसु ट्ठाणेसु कंदयपरूवणा कीरदे । कुदो ? एदम्हादो अण्णस्स अक्खवगाणुभागसंतकम्मस्स थोवीभूदस्स अभावादो । कुदो णव्वदे ? सव्वविसुद्धसंजमाहिमुहमिच्छाइट्ठिस्स णाणावरणीयजहण्णाणुभागबंधो थोवो । सव्वविसुद्ध असण्णिणाणावरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो । सव्वविसुद्धचउरिंदियणाणावरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो । एवं तेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो । बेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो । सव्वविसुद्धबादरेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो । सव्वविसुद्धसुहुमेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभागबंधो अणंतगुणो । तस्सेव हदसमुप्पत्तियं [1]कादूणच्छिदणाणावरणजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणं । बादरेइंदियजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणं । बेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणं । तेइंदियणाणावरणजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणं । चउरिंदियणाणावरणजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणं । असण्णिपंचिंदियणाणावरणजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणं ।

काण्डकप्ररूपणामें अनन्तभागवृद्धिकाण्डक, असंख्यातभागवृद्धिकाण्डक, संख्यातभागवृद्धिकाण्डक, संख्यातगुणवृद्धिकाण्डक, असंख्यातगुणवृद्धिकाण्डक और अनन्तगुणवृद्धिकाण्डक होते हैं ॥ २०२ ॥

सूक्ष्म निगोद जीवके जघन्य सत्त्वस्थानसे लेकर ऊपरके स्थानोंमें काण्डक प्ररूपणा की जाती है, क्योंकि, अक्षपकका इससे अल्प और कोई अनुभागसत्त्वस्थान नहीं है ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—संयमके अभिमुख हुए सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टिके ज्ञानवरणीयका जघन्य अनुभागबन्ध स्तोक है । उससे सर्वविशुद्ध असंज्ञी [पंचेन्द्रिय] के ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है । उससे सर्वविशुद्ध चतुरिन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है । इस प्रकार त्रीन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध उससे अनन्तगुणा है । उससे द्वीन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है । उससे सर्वविशुद्ध बादर एकेन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है । उससे सर्वविशुद्ध सूक्ष्म एकेन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है । हतसमुत्पत्ति करके स्थित हुए उसके ही ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है । उससे बादर एकेन्द्रियके [ज्ञानावरणका] जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है । उससे द्वीन्द्रियके ज्ञानावरण जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है । उससे त्रीन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है । उससे चतुरिन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है । उससे असंज्ञी पंचेन्द्रियके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व

१ प्रतिषु 'कादूणच्छिद' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सण्णिपंचिंदियसंजमाहिमुहमिच्छाइट्ठिणाणावरणीयजहण्णाणुभागसंतकम्ममणंतगुणमिदि अणुभागप्पाबहुगादो ।

एक्केक्कस्स गुणगारो असंखेज्जलोगमेत्तजीवरासीणं असंखेज्जलोगमेत्तअसंखेज्जलोगाणं असंखेज्जलोगमेत्तउक्कस्स[1]संखेज्जाणं असंखेज्जलोगमेत्तअण्णोण्णब्भत्थरासीणं च गुणगार-सरूवेण ट्ठिदाणं संवग्गो[2] ।

खीणसायचरिमसमए णाणावरणीयजहण्णाणुभागसंतकम्मं होदि त्ति सामित्तसुत्ते उत्तं । तदो प्पहुडि कंदयपरूवणा किण्ण कीरदे ? ण, तदो प्पहुडि कमेण छण्णं वड्ढीण-मभावादो । ण च कमेण णिरंतरं वड्ढिविरहिदट्ठाणेसु कंदयपरूपणा कादुं सक्किज्जदे, विरो-हादो । अविभागपडिच्छेदाणंतरपरूवणाओ किमिदि जहण्णबंधट्ठाणप्पहुडि परूविदाओ ? ण एस दोसो, तेसिं तप्पहुडि परूवणाए कीरमाणाए वि दोसाभावादो । अथवा, तेसु वि सुहुमेइंदियजहण्णाणुभागसंतकम्मट्ठाणप्पहुडि उवरिमट्ठाणाणं परूवणा कायव्वा । कुदो ? हेट्ठिमाणं अणुभागबंधट्ठाणाणं संतसरूवेण उवलंभाभावादो ।

एदं च सुहुमणिगोदजहण्णाणुभागसंतट्ठाणं बंधट्ठाणेण सरिसं । कुदो एदं णव्वदे ? एदस्सुवरि एगपक्खेवुत्तरं कादूण बंधे अणुभागस्स जहण्णिगा वड्ढी, तम्मि चेव अंतो-

अनन्तगुणा है । उससे संयमके अभिमुख हुए संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टिके ज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा है । इस अनुभग अल्पबहुत्वसे वह जाना जाता है ।

इनमेंसे एक एकका गुणकार असंख्यात लोक मात्र सब जीवराशियां, असंख्यात लोक मात्र असंख्यात लोक, असंख्यात लोक मात्र उत्कृष्ट संख्यात और असंख्यात लोक मात्र अन्योन्या-भ्यस्त राशियां, इन गुणकार स्वरूपसे स्थित राशियोंका संवर्ग है ।

शंका—क्षीणकषायके अन्तिम समयमें ज्ञानावरणीयका जघन्य अनुभागसत्त्व होता है, यह स्वामित्वसूत्रमें कहा जा चुका है । उससे लेकर काण्डकप्ररूपणा क्यों नहीं की जाती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उससे लेकर क्रमसे छह वृद्धियोंका अभाव है । और क्रमसे निरन्तर वृद्धिसे रहित स्थानोंमें काण्डकप्ररूपणा करना शक्य नहीं है, क्योंकि, उसमें विरोध है ।

शंका—फिर अविभागप्रतिच्छेदोंकी अन्तरप्ररूपणायें जघन्य बन्धस्थानसे लेकर क्यों कही गई हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उससे लेकर उनकी प्ररूपणाके करनेमें भी कोई दोष नहीं हैं । अथवा, उनमें भी सूक्ष्म एकेन्द्रियके जघन्य अनुभागसत्त्वस्थानसे लेकर ऊपरके स्थानोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, अधस्तन बन्धस्थान सत्ता रूपसे उपलब्ध नहीं है ।

यह सूक्ष्मनिगोदका जघन्य अनुभागसत्त्वस्थान बन्धस्थानके सदृश है ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह "इसके आगे एक प्रक्षेप अधिक करके बन्ध होनेपर अनुभागकी जघन्य

१ अाप्रतौ 'मेत्तउक्करसाणं' इति पाठः । २ अप्रतौ 'सवग्गो', आ—ता-मप्रतिषु 'सव्वग्गो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुहुत्तेण खंडयघादेण घादिदे जहण्णिया हाणी होदि त्ति कसायपाहुडे परूविदत्तादो। बंधेण असरिसे सुहुमणिगोदजहण्णाणुभागट्ठाणे संजादे एदाओ जहण्णवड्ढि-हाणीयो ण लब्भंति। किं कारणं? बंधेण विणा वड्ढीए अभावादो। घादट्ठाणस्सुवरि एगपक्खेववड्ढी किण्ण होदि त्ति भणिदे वुच्चदे—घादसंतट्ठाणं णाम बंधसरिसअट्ठंक-उव्वंकाणं विचाले हेट्ठिमउव्वंकादो अणंतगुणं उवरिमअट्ठंकादो अणंतगुणहीणं होदूण चेट्ठदि। एदस्सुवरि जदि विसुद्ध जहण्णेण वड्ढिदूण बंधदि तो वि उवरिमअट्ठंकसमाणबंधेण होदव्वं। तेण एत्थ अणंतगुणवड्ढी चेव लब्भदि, णाणंतभागवड्ढी। एत्थ जहण्णहाणी किण्ण घेप्पदे? ण, जहण्णबंधट्ठाणादो संखेज्जट्ठाणाणि उवरि अब्भुस्सरिय ट्ठिदसंतट्ठाणस्स अणंतगुणहाणिं मोत्तूण अणंतभागहाणीए अभावादो। तेणेदं सुहुमणिगोदजहण्णट्ठाणं संतट्ठाणं ण होदि, किंतु बंधट्ठाणमिदि सिद्धं। होंतं पि एदमणंतगुणवड्ढीए चेव ट्ठिदमिदि दट्ठव्वं।

एदमट्ठंकमेव इत्ति कधं णव्वदे? उवरि हेट्ठाट्ठाणपरूवणाए[1] एगछट्ठाणमस्सिदूण ट्ठिदाए जहण्णट्ठाणादो अणंतभागब्भहियं कंदयं गंतूण असंखेज्जभागवड्ढियं ट्ठाणं होदि त्ति परूविदत्तादो णव्वदे जहा जहण्णट्ठाणमुव्वंकं ण होदि त्ति, उव्वंकम्हि संते सयलकंदयमेत्त-

वृद्धि तथा उसीका अन्तर्मुहूर्तमें काण्डकघातके द्वारा घात कर डालनेपर जघन्य हानि होती है" इस कषायप्राभृतकी प्ररूपणासे जाना जाता है। सूक्ष्म निगोदके जघन्य अनुभागस्थानके बन्धके सदृश न होनेपर यह जघन्य वृद्धि और हानि नहीं पायी जा सकती है, कारण कि बन्धके विना वृद्धिकी सम्भावना नहीं है।

शंका— घातस्थानके ऊपर एक प्रक्षेपकी वृद्धि क्यों नहीं होती है?

समाधान—ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि घात सत्त्वस्थान बन्धके सदृश अष्टांक और ऊर्वंकके मध्यमें नीचेके ऊर्वंकसे अनन्तगुणा और ऊपरके अष्टांकसे अनन्तगुणा हीन होकर स्थित है। इसके ऊपर यद्यपि अतिशय जघन्य स्वरूपसे बढ़कर बांधता है तो भी ऊपरके अष्टांक समान बन्ध होना चाहिये। इस कारण यहां अनन्तगुणवृद्धि ही पायी जाती है, न कि अनन्तभागवृद्धि।

शंका—यहां जघन्य हानि क्यों नहीं ग्रहण की जाती है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, जघन्य बन्धस्थानसे संख्यात स्थान आगे हटकर स्थित सत्त्वस्थानकी अनन्तगुणहानिको छोड़कर अनन्तभागहानिका अभाव है। इसी कारण यह सूक्ष्म निगोदका जघन्य स्थान सत्त्वस्थान नहीं है, किन्तु बन्धस्थान ही है, यह सिद्ध है। बन्धस्थान होकर भी वह अनन्तगुणवृद्धिमें ही स्थित है, ऐसा जानना चाहिये।

शंका—यह अष्टांक ही है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—एक षट्स्थानका आश्रय करके स्थित आगे की अधस्तनस्थानप्ररूपणामें "जघन्य स्थानसे अनन्तवें भागसे अधिक स्थानोंका काण्डक जाकर असंख्यातवें भागसे अधिक (असंख्यातभागवृद्धिका) स्थान होता है" यह जो प्ररूपणाकी गई है उससे जाना जाता है कि जघन्य स्थान

१ अ-आप्रत्योः 'ट्ठाणपरूपणा', ताप्रतौ 'ट्ठाणपरूवणा [ए]' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गमणाणुववत्तीदो। चत्तारिअंकं पि ण होदि, कंदयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढीयो गंतूण पढमासंखेज्जभागवड्ढी होदि त्ति तत्थेव भणिदत्तादो। पंचंकं पि ण होदि, संखेज्जभागब्भहियं कंदयं गंतूण संखेज्जगुणवड्ढी होदि त्ति परूविदत्तादो। छअंकं पि ण होदि, कंदयमेत्तसंखेज्जगुणवड्ढीयो गंतूण असंखेज्जगुणवड्ढी होदि त्ति वयणादो। सत्तंकं पि ण होदि, कंदयमेत्तअसंखेज्जगुणवड्ढीयो गंतूण अणंतगुणवड्ढी होदि त्ति वयणादो। तदो परिसेसयादो जहण्णट्ठाणमट्ठंकं त्ति सिद्धं। किमट्ठंकं णाम? हेट्ठिमउव्वंकं सव्वजीवरासिणा गुणिदे जं लद्धं तेत्तियमेत्तेण हेट्ठिमउव्वंकादो जमहियं ट्ठाणं तमट्ठंकं णाम। हेट्ठिमउव्वंकं रूवाहियसव्वजीवरासिणा गुणिदे अट्ठंकमुप्पज्जदि त्ति भणिदं होदि[1]।

हेट्ठिमट्ठाणंतरादो अट्ठंकट्ठाणंतरमणंतगुणं। तं जहा—अणंतरहेट्ठिमउव्वंके रूवाहियसव्वजीवरासिणा भागे हिदे लद्धं रूवूणमुव्वंकट्ठाणंतरं होदि। सव्वजीवरासिणा हेट्ठिमउव्वंकं गुणिय रूवूणे कदे अट्ठंकट्ठाणंतरं होदि। उव्वंकट्ठाणंतरादो अट्ठंकट्ठाणंतरमणंतगुणं। को गुणगारो? रूवाहियसव्वजीवरासिणा गुणिदसव्वजीवरासी। दोसु वि वड्ढीसु सग-

ऊर्वंक नहीं होता है, क्योंकि, ऊर्वंकके होनेपर समस्त काण्डक प्रमाण गमन घटित नहीं होता है। वह चतुरंक भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियां जाकर प्रथम असंख्यातभागवृद्धि होती है, ऐसा वहां ही कहा गया है। वह पंचाक भी नहीं हो सकता है, क्योंकि, संख्यातवें भागसे अधिक स्थानोंका काण्डक जाकर संख्यातगुणवृद्धि होती है, ऐसा बतलाया गया है। वह षष्ठांक भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, काण्डक मात्र संख्यातगुणवृद्धियां जाकर असंख्यातगुणवृद्धि होती है, ऐसा वचन है। वह सप्तांक भी नहीं हो सकता है, क्योंकि काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धियां जाकर अनन्तगुणवृद्धि होती है, ऐसा वचन है। अतएव परिशेष स्वरूपसे वह जघन्य स्थान अष्टांक ही है, यह सिद्ध होता है।

शंका—अष्टांक किसे कहते हैं?

समाधान—अधस्तन ऊर्वंकको सब जीवराशिसे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतने मात्रसे जो अधस्तन ऊर्वंकसे अधिक स्थान है उसे अष्टांग कहते हैं। अधस्तन ऊर्वंकको एक अधिक सब जीवराशिसे गुणित करनेपर अष्टांक उत्पन्न होता है, यह उसका अभिप्राय है।

अधस्तन स्थानके अन्तरसे अष्टांकस्थानका अन्तर अनन्तगुणा है। वह इस प्रकारसे—अनन्तर अधस्तन ऊर्वंकमें एक अधिक सब जीवराशिका भाग देनेपर जो लब्ध हो उसमेंसे एक कम करनेपर ऊर्वंकस्थानका अन्तर होता है। अधस्तन ऊर्वंकको सब जीवराशिसे गुणित करके एक कम करनेपर अष्टांकस्थानका अन्तर होता है। ऊर्वंकस्थानके अन्तरसे अष्टांकस्थानका अन्तर अनन्तगुणा है। गुणकार क्या है? एक अधिक सब जीवराशिसे गुणित सब जीवराशि गुणकार है। दोनों ही वृद्धियोंको अपनी अपनी स्पर्द्धकशलाकाओंसे अपवर्तित करनेपर

१ पुणो अवरमेगमसंखेज्जगुणवड्ढिविसयं गंतूण जं चरिममुव्वंकट्ठाणमवट्ठिदं तम्मि रूवाहियसव्वजीवरासिणा गुणिदे पढममट्ठंकट्ठाणमुप्पज्जदि। जयध. अ. प. ३६८.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सगफद्दयसलागाहि ओवट्टिदासु फद्दयं होदि। रूवूणे कदे फद्दयंतरं। उव्वंकफद्दयंतरादो अट्ठंकफद्दयंतरमणंतगुणं। को गुणगारो ? ठाणंतरगुणगारस्स अणंतिमभागो। एवंविहजहण्णट्ठाणप्पहुडि सव्वट्ठाणाणमणंतभागवड्ढिकंदयसलागाओ घेत्तूण वड्ढीए पुंजं कादूण ट्ठवेयव्वा। एवमसंखेज्जभागवड्ढिकंदयसलागाओ विउव्विणिदूण[1] पुध ट्ठवेयव्वाओ। तहा संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीणं च कंदयसलागाओ उव्विणिदूण पुध पुध ट्ठवेयव्वाओ। तासिं सलागाणं पमाणं वुच्चदे। तं जहा--एगट्ठाणब्भंतरे अणंतभागवड्ढीयो पंचण्णं कंदयाणमण्णोण्णब्भासमेत्तीयो चत्तारिकंदयवग्गावग्गमेत्तीयो छकंदयघणमेत्तीयो [चत्तारिकंदयवग्गमेत्तीयो] कंदयमेत्तीयो च। तासिं संदिट्ठी १०२४ २५६ २५६ २५६ २५६ ६४ ६४ ६४ ६४ ६४ ६४ १६ १६ १६ १६ ४। असंखेज्जभागवड्ढीओ एगकंदयवग्गावग्गमेत्तीयो तिण्णिकंदयघणमेत्तीयो तिण्णिकंदयवग्गमेत्तीओ कंदयमेत्तीओ च। एदासिं संदिट्ठी—२५६ ६४ ६४ ६४ १६ १६ १६ ४। संखेज्जभागवड्ढीयो एगकंदयघणमेत्तीयो बेकंदयवग्गमेत्तीयो कंदयं च। एदासिं संदिट्ठी—६४ १६ १६ ४। संखेज्जगुणवड्ढीयो कंदयवग्ग-कंदयमेत्तीओ। एदासिं संदिट्ठी—१६ ४। असंखेज्जगुणवड्ढीयो कंदयमेत्तीओ। तासिं संदिट्ठी ४। अट्ठंकमेक्कं।

स्पर्द्धक होता है। इसमेंसे एक कम करने पर स्पर्धकका अन्तर होता है। ऊर्वक स्पर्द्धकके अन्तरसे अष्टांक स्पर्द्धकका अन्तर अनन्तगुणा है। गुणकार क्या है ? गुणकार स्थानान्तरके गुणकारका अनन्तवां भाग है। इस प्रकारके जघन्य स्थानसे लेकर सब स्थानोंकी-अनन्तभागवृद्धिकाण्डकशलाकाओंको ग्रहण कर वृद्धिका पुंज करके स्थापित करना चाहिये। इसी प्रकार असंख्यातभागवृद्धिकाण्डकशलाकाओंको उत्पन्न करके पृथक् स्थापित करना चाहिये। तथा संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धिकी काण्डकशलाकाओंको उत्पन्न करके पृथक् पृथक् स्थापित करना चाहिये। उन शलाकाओंका प्रमाण बतलाते है। वह इस प्रकार है—एक स्थानके भीतर अनन्तभागवृद्धियां पांच काण्डकोंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि (४×४ × ४ × ४×४ = १०२४) के बराबर, चार काण्डकोंके वर्गके वर्ग प्रमाण, छह काण्डकोंके घन प्रमाण, [चार काण्डकोंके वर्ग प्रमाण] और एक काण्डक प्रमाण हैं। इनकी संदृष्टि—१०२४; २५६, २५६, २५६, २५६; ६४, ६४, ६४, ६४, ६४, ६४; १६, १६, १६, १६, ४। असंख्यात भागवृद्धियां एक काण्डकके वर्गावर्ग प्रमाण, तीन काण्डकोंके घन प्रमाण, तीन काण्डकोंके वर्ग प्रमाण और एक काण्डक प्रमाण हैं। इनकी संदृष्टि २५६; ६४, ६४, ६४; १६, १६, १६; ४। संख्यातभागवृद्धियां एक काण्डकके घन प्रमाण, दो काण्डकोंके वर्ग प्रमाण और एक काण्डक प्रमाण हैं। इनकी संदृष्टि—६४; १६, १६; ४। संख्यातगुणवृद्धियां एक काण्डकके वर्ग व काण्डक प्रमाण हैं। इनकी संदृष्टि—१६, ४। असंख्यात-

---

१ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ प्रतिषु '-सलागाओ एउव्विणिदूण', ताप्रतौ 'सलागाओ [ए] उव्विणिदूण' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं च जहण्णट्ठाणमिदि घेत्तव्वं । एदं पुध पुध असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणसलागाहि गुणिदे सव्वट्ठाणाणं अप्पिदवड्डीयो होंति । एदासु एगकंदएण पुध पुध ओवट्टिदासु लद्धमप्पणो कंदयसलागाओ होंति । एवं ट्ठविय एदासिं परूवणा सुत्ते उद्दिट्ठा । तं जहा— अणंतभागपरिवड्ढिकंदयं असंखेज्जभागपरिवड्ढिकंदयं संखेज्जभागपरिवड्ढिकंदयं संखेज्जगुणपरिवड्ढिकंदयं असंखेज्जगुणपरिवड्ढिकंदयं अणंतगुणपरिवड्ढिकंदयं पि अत्थि । कधमेत्थ बहूणमेगवयणणिद्देसो ? ण, जादिदुवारेण बहूणं पि एगत्ताविरोहादो । एदं परूवणासुत्तं देसामासियं, सूचिदपमाणप्पाबहुगत्तादो । तेण तेसिं दोण्णं पि एत्थ परूवणा कीरदे । तं जहा—अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-[संखेज्जभागवड्ढि-] संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीओ च असंखेज्जलोगमेत्ताओ । कुदो ? असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं सलागाहि अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसग-सगकंदयसलागासु गुणिदासु वि असंखेज्जलोगमेत्तरासिसमुप्पत्तीए । पमाणं गदं ।

अप्पाबहुगं उच्चदे—सव्वत्थोवाओ अणंतगुणवड्ढिकंदयसलागाओ । असंखेज्जगुणवड्ढिकंदयसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो ? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तगं कंदयं । संखेज्जगुणवड्ढिकंदयसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो ? रूवाहियकंदयं

....

गुणवृद्धियां काण्डक प्रमाण हैं । उनकी संदृष्टि—४ । अष्टांक एक है । वह जघन्य स्थान है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये । इसको पृथक् पृथक् असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानशलाकाओंसे गुणित करनेपर सब स्थानोंकी विवक्षित वृद्धियां होती हैं । इनको एक काण्डकसे पृथक् पृथक् अपवर्तित करनेपर जो लब्ध हो उतनी अपनी काण्डकशलाकायें होती हैं । इस प्रकार स्थापित करके इनकी प्ररूपणा सूत्रमें कही है । यथा—अनन्तभागवृद्धिकाण्डक, असंख्यातभागवृद्धिकाण्डक, संख्यात भागवृद्धिकाण्डक, संख्यातगुणवृद्धिकाण्डक, असंख्यातगुणवृद्धिकाण्डक और अनन्तगुणवृद्धिकाण्डक भी हैं ।

शंका—यहाँ बहुतोंके लिये एक वचनका निर्देश कैसे किया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, जातिके द्वारा बहुतोंके भी एक होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

यह प्ररूपणासूत्र देशामर्शक है, क्योंकि, वह प्रमाण और अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारोंका सूचक है । इसलिये उन दोनोंकी भी यहाँ प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि ये असंख्यात लोक प्रमाण हैं, क्योंकि, असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानशलाकाओंके द्वारा अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र अपनी अपनी काण्डकशलाकाओंको गुणित करनेपर भी असंख्यात लोक मात्र राशि उत्पन्न होती है । प्रमाण समाप्त हुआ ।

अल्पबहुत्वको कहते हैं—अनन्तगुणवृद्धि काण्डक शलाकायें सबसे स्तोक हैं । उनसे असंख्यातगुणवृद्धि काण्डक शलाकायें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र एक काण्डक है । उनसे संख्यातगुणवृद्धि काण्डक शलाकयें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेज्जभागवड्डिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो ? रूवाहियकंदयं । (असंखेज्जभागवड्डिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो ? रूवाहियकंदयं । अणंतभागवड्डिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो ? रूवाहियकंदयं । एत्थ कारणं जाणिदूण वत्तव्वं । एवमप्पाबहुगं समत्तं । कंदयपरूवणा गदा ।

ओजजुम्मपरूवणदाए अविभागपडिच्छेदाणि कदजुम्माणि, ट्ठाणाणि कदजुम्माणि, कंदयाणि कदजुम्माणि ॥ २०३ ॥

अविभागपडिच्छेद णं सरूवपरूवणं पुव्वं वित्थारेण कदमिदि णेह कीरदे । सव्वाणुभागट्ठाणाणं अविभागपडिच्छेदाणि कदजुम्माणि, चदुहि अवहिरिज्जमाणे णिरंसत्तादो । सव्वेसिं ट्ठाणाणं चरिमवग्गणाए एगेगपरमाणुम्हि ट्ठिदअविभागपडिच्छेदा कदजुम्मा, तत्थ ट्ठिदअणुभागस्सेव ट्ठाणववएसादो । दुचरिमादिवग्गणाणमविभागपडिच्छेदा पुण कदजुम्मा चेव इत्ति णत्थि णियमो, तत्थ कद-बादरजुम्म-कलि-तेजोजाणं पि उवलंभादो । 'ठाणाणि कदजुम्माणि' त्ति उत्ते सगसंखाए फद्दयसलागाहि एगफद्दयवग्गणसलागाहि एगेगपक्खेवफद्दयसलागाहि य ट्ठाणाणि कदजुम्माणि त्ति उत्तं होदि । 'कंदयाणि कदजुम्माणि' त्ति भणिदे एगकंदयपमाणेण छण्णं वड्ढीणं पुध पुध कंदयसलागाहि य कंदयाणि कदजुम्माणि । एवमोज–जुम्मपरूवणा समत्ता ।

है ? गुणकार एक अधिक काण्डक है । उनसे संख्यातभागवृद्धि काण्डक शलाकायें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार एक अधिक काण्डक है । उनसे असंख्यातभागवृद्धि काण्डक शलाकायें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या है । गुणकार एक अधिक काण्डक है । उनसे अनन्तभागवृद्धि काण्डक शलाकायें असंख्यातगुणी हैं ।°गुणकार क्या है । गुणकार एक अधिक काण्डक है । यहां कारणको जानकर कहना चाहिये । इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ । काण्डकप्ररूपणा समाप्त हुई ।

ओज-युग्मप्ररूपणामें अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म हैं, स्थान कृतयुग्म हैं, और काण्डक कृतयुग्म हैं ॥ २०३ ॥

अविभागप्रतिच्छेदोंके स्वरूपकी प्ररूपणा पहिले विस्तारसे की जा चुकी है, अतएव अब यहां उनकी प्ररूपणा नहीं की जाती है । समस्त अनुभागस्थानोंके अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म हैं, क्योंकि उन्हें चारसे अपहृत करनेपर कुछ शेष नहीं रहता । सब स्थानोंकी अन्तिम वर्गणाके एक एक परमाणुमें स्थित अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म हैं, क्योंकि, उसमें स्थित अनुभागका नाम ही स्थान है । परन्तु द्विचरमादिक वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म ही हों, ऐसा नियम नहीं है; क्योंकि, उनमें कृतयुग्म, बादरयुग्म, कलिओज और तेजोज संख्यायें भी पायी जाती हैं । 'स्थान कृतयुग्म हैं' ऐसा कहनेपर स्थान अपनी संख्यासे, स्पर्द्धकशलाकाओंसे, एक स्पर्द्धककी वर्गणाशलाकाओंसे तथा एक प्रक्षेपस्पर्द्धककी शलाकाओंसे कृतयुग्म हैं, ऐसा अभिप्राय ग्रहण करना चाहिये । 'काण्डक कृतयुग्म हैं' ऐसा कहनेपर एक काण्डकके प्रमाणसे तथा छह वृद्धियोंकी पृथक् पृथक् काण्डकशलाकाओंसे काण्डक कृतयुग्म हैं, ऐसा समझना चाहिये । इस प्रकार ओज-युग्मप्ररूपणा समाप्त हुई ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छट्ठाणपरूवणदाए अणंतभागपरिवड्डी काए परिवड्डीए [वड्डिदा?] सव्वजीवेहि अणंतभागपरिवड्डी । एवदिया परिवड्डी ॥२०४॥

'अणंतभागपरिवड्डी काए परिवड्डीए वड्डिदा' इत्ति पुच्छिदे अणंतभागपरवड्डी सव्वजीवेहि वड्डिदा । 'सव्वजीवेहिं' ति उत्ते सव्वजीवाणं गहणं ण होदि, जीवेहिंतो अणुभागवड्डीए असंभवादो । किं तु सव्वजीवरासिस्स जा संखा सा तदभेदेण 'सव्वजीव' इत्ति घेत्तव्वा । तेहि सव्वजीवेहि भागहारभावेण करणत्तमावण्णेहि वड्डिदा । सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणे भागे हिदे जं लद्धं सा वड्डी, जहण्णट्ठाणे पडिरासिय वड्डिदपक्खेवे पक्खित्ते पढममणंतभागवड्डिट्ठाणं उप्पज्जदि त्ति भणिदं होदि । जहण्णट्ठाणे सव्वजीवरासिणा खंडिदे तत्थ एगखंडेणोवट्टिय[1] पढममणंतभागवड्डिट्ठाणमुप्पज्जदि जं भणिदं तण्ण घडदे । तं जहा—जहण्णट्ठाणं पण्णारसविहं, परमाणुफद्दयवग्गणाविभागपडिच्छेदेसु एग-दुगादिअक्खसंचारवसेण पण्णारसविहजहण्णट्ठाणुप्पत्तिदंसणादो । एदेसु पण्णारसविहजहण्णट्ठाणेसु सव्वजीवरासिणा कं ठाणं छिज्जदे ? ण ताव परमाणू छिज्जंति, सव्वजीवेहि अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणहीणकम्मपोग्गलेसु छिज्जमाणेसु एगपरमाणुअणंतिमभागस्स उवलंभादो । ण च पक्खेवो एगपरमाणुअणंतिमभागमेत्तो होदि, अणंतेहि परमाणूहि

षट्स्थानप्ररूपणामें अनन्तभागवृद्धि किस वृद्धिके द्वारा वृद्धिंगत हुई है ? अनन्तभागवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिंगत हुई है । इतनी मात्र वृद्धि है ॥ २०४ ॥

'अनन्तभागवृद्धि किस वृद्धि द्वारा वृद्धिंगत हुई है', ऐसा पूछनेपर अनन्तभागवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिंगत हुई है । 'सब जीवोंसे' ऐसा कहनेपर सब जीवोंका ग्रहण नहीं होता है, क्योंकि, जीवोंसे अनुभागवृद्धि सम्भव नहीं है । किन्तु सब जीवराशिकी जो संख्या है वह उक्त जीवोंसे अभिन्न होनेके कारण 'सब जीव' ग्रहण करने योग्य हैं । भागहार स्वरूपसे करणकारक अवस्थाको प्राप्त हुए उन सब जीवोंसे वह वृद्धिको प्राप्त हुई है । सब जीवराशिका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो वह वृद्धिका प्रमाण है । जघन्य स्थानको प्रतिराशि करके उसमें वृद्धिप्राप्त प्रक्षेपको मिलानेपर प्रथम अनन्तभागवृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है, यह उसका अभिप्राय है ।

शंका—जघन्य स्थानको सब जीवराशिसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खण्डके द्वारा अपवर्तित प्रथम अनन्तभागवृद्धिका स्थान होता है, यह जो कहा गया है वह घटित नहीं होता है । वह इस प्रकारसे—जघन्य स्थान पन्द्रह प्रकारका है, क्योंकि परमाणु, स्पर्द्धक, वर्गणा और अविभागप्रतिच्छेद इनमें एक, दो आदिरूपसे अक्षसंचारके वश पन्द्रह प्रकारके जघन्य स्थानकी उत्पत्ति देखी जाती है । इन पन्द्रह प्रकारके जघन्य स्थानोंमेंसे सब जीवराशिके द्वारा कौनसा स्थान खण्डित किया जाता है ? उसके द्वारा परमाणु तो खण्डित किये नहीं जा सकते, क्योंकि, अभव्यसिद्धोंकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन कर्मपुद्गलोंको सब जीवों द्वारा खण्डित करनेपर एक परमाणुका अनन्तवां भाग पाया जाता है । परन्तु प्रक्षेप एक परमाणुके अनन्तवें भाग मात्र होता नहीं है, क्योंकि, अभव्यसिद्धोंसे

१ प्रतिषु 'खंडेगोवट्टिय (या-वट्टिय)' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अभवसिद्धिएहि अणंतगुणेहि एगपक्खेवणिप्फत्तीदो । ण फद्दयाणि छिज्जंति, सव्वजीवेहि सिद्धेहिंतो अणंतगुणहीणजहण्णट्ठाणफद्दएसु छिज्जमाणेसु एगफद्दयस्स अणंतिमभागागमुवलंभादो । ण च जहण्णट्ठाणजहण्णफद्दयाणि अणंताणि आगच्छंति त्ति पक्खेवागमो वोत्तुं सक्किज्जदे, जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयसरिसेहि अणंतेहि फद्दएहि पक्खेवणिप्फत्तीदो । ण च जहण्णट्ठाणम्हि सव्वजीवेहिंतो अणंतगुणाणि फद्दयाणि अत्थि जेण सव्वजीवरासिणा भागे हिदे अणंताणि फद्दयाणि आगच्छेज्ज । जहण्णट्ठाणफद्दयाणि परमाणू च सिद्धाणमणंतभागमेत्ता चेव इत्ति एदं कुदो णव्वदे ? सव्वट्ठाणपरमाणू फद्दयाणि वि सिद्धाणमणंतभागमेत्ताणि चेव इत्ति जिणोवदेसादो । ण जिणो चप्पलओ, तक्कारणाभावादो । ण वग्गणाओ छिज्जंति, तासु वि छिज्जमाणासु एगवग्गणाए अणंतिमभागस्स आगमुवलंभादो । ण एगवग्गणाए अणंतिमभागेण पक्खेवो णिप्फज्जदि, अणंताहि वग्गणाहि णिप्फज्जमाणस्स एक्किस्से वग्गणाए अणंतिमभागेण णिप्फत्तिविरोहादो । ण च वग्गणाओ सव्वजीवेहि अणंतगुणाओ जेण सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणवग्गणासु ओवट्टिदासु अणंतगुणाओ वग्गणाओ आगच्छेज्ज । सव्वाओ वि वग्गणाओ सिद्धाणमणंतभागमेत्ताओ, एगफद्दयवग्गणसलागाओ ठविय जहण्णट्ठाणफद्दयसलागाहि गुणिदे सिद्धाणमणंतभागमे-

---

अनन्तगुणे अनन्त परमाणुओंके द्वारा एक प्रक्षेप उत्पन्न होता है। सब जीवों द्वारा स्पर्द्धक भी नहीं खण्डित किये जा सकते, क्योंकि, सिद्धोंसे अनन्तगुणे हीन जघन्य स्थानके स्पर्द्धकोंको सब जीवों द्वारा खण्डित करनेपर एक स्पर्द्धकके अनन्तवें भागका आना पाया जाता है। परन्तु जघन्य स्थान सम्बन्धी जघन्य स्पर्द्धक अनन्त नहीं आते हैं। इसीलिये उक्त रीतिसे प्रक्षेपका आना बतलाना शक्य नहीं है, क्योंकि, जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके सदृश अनन्त स्पर्द्धकोंसे प्रक्षेपकी उत्पत्ति होती है। और जघन्यस्थानमें सब जीवोंसे अनन्तगुणे स्पर्द्धक हैं नहीं जिससे कि उनमें सब जीवराशिका भाग देनेपर अनन्त स्पर्द्धक आ सकें। जघन्य स्थानके स्पर्द्धक और परमाणु सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र ही हैं, यह कहांसे जाना जाता है? स्थानोंके परमाणु और स्पर्द्धक भी सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र ही है, ऐसा जो जिन भगवान का उपदेश है उसीसे वह जाना जाता है। यदि कहा जाय कि जिन भगवान असत्यवक्ता हैं सो यह सम्भव नहीं है, क्योंकि, उनके असत्यवक्ता होनेका कोई कारण नहीं है। वर्गणायें भी सब जीवराशिके द्वारा खण्डित नहीं की जा सकती हैं, क्योंकि, उनके भी खण्डित किये जानेपर एक वर्गणाके अनन्तवें भागका आगमन पाया जाता है। और एक वर्गणाके अनन्तवें भागसे प्रक्षेप उत्पन्न होता नहीं है, क्योंकि, जो प्रक्षेप अनन्त वर्गणाओं द्वारा उत्पन्न होनेवाला है उसकी एक वर्गणाके अनन्तवें भागसे उत्पत्तिका विरोध है। और वर्गणायें सब जीवोंसे अनन्तगुणी हैं नहीं, जिससे कि सब जीवराशि द्वारा जघन्य स्थानकी वर्गणाओंको अपवर्तित करनेपर अनन्तगुणी वर्गणायें आ सकें। सभी वर्गणायें सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र हैं, क्योंकि, एक स्पर्द्धककी वर्गणाशलाकाओंको स्थापित करके जघन्य स्थानकी स्पर्द्धकशलाकाओंसे गुणित करनेपर सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र राशि उत्पन्न होती है। इनके संयोगसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वरासिसमुप्पत्तीदो। एदेसिं संजोगजणिदजहण्णट्ठाणेसु वि अवहिरिज्जमाणेसु एसो चेव दोसो, सिद्धाणमणंतिमभागं पडि विसेसाभावादो। ण जहण्णट्ठाणअविभागपडिच्छेदा वि सव्वजीवरासिणा छिज्जंति, जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयअविभागपडिच्छेदाणमणंतिमभागमेत्त-अविभागपडिच्छेदेहि[1] पक्खेवाविभागपडिच्छेदाणमुप्पत्तीए अभावादो। ण च अणंताणं जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयाणं अविभागपडिच्छेदेहि उप्पज्जमाणो पक्खेवो जहण्णट्ठाणचरिम-फद्दयअविभागपडिच्छेदाणमणंतिमभागेण उप्पज्जदि, विरोहादो[2]। ण च पक्खेवफद्दया-णमणंतत्तमसिद्धं, पक्खेवाहिच्छावणणिक्खेवफद्दयाणि अणंताणि त्ति पाहुडसुत्तसिद्धत्तादो।

णाविभागपडिच्छेदसंजोगजणिदजहण्णट्ठाणाणि वि छिज्जंति, पादेक्कभंगदोस-दूसिदत्तादो। ण चापुव्वेहि फद्दएहि विणा सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणे खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्तअविभागपडिच्छेदेसु उक्कड्डिदेसु विदियट्ठाणमुप्पज्जदि, उक्कड्डणाए वड्ढीए इच्छिज्जमाणाए सरिसधणियपरमाणुवड्ढीए वि अणुभागट्ठाणवड्ढिप्पसंगादो। ण च एवं, जोगादो वि अणुभागस्स वुड्ढिप्पसंगादो। ण च एवं, गुणिदकम्मंसियं मोत्तूण अण्णत्थ उक्कस्साणुभागट्ठाणस्स अभावावत्तीदो। ण च एवं, उक्कस्साणुभागट्ठाणकालस्स जहण्णेण एगसमयावट्ठाणप्पसंगादो। ण च एवं, उक्कस्साणुभागकालस्स जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहु-

उत्पन्न हुए जघन्य स्थानोंको भी अपहृत करनेपर यही दोष है, क्योंकि, सिद्धोंके अनन्तवें भागके प्रति कोई भेद नहीं है। जघन्य स्थानके अविभाग प्रतिच्छेद भी सब जीवराशिके द्वारा खण्डित नहीं किये जा सकते, क्योंकि, जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेदोंके अनन्तवें भाग मात्र अविभागप्रतिच्छेदोंसे प्रक्षेप सम्बन्धी अविभागप्रतिच्छेदोंकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है। जघन्य स्थान सम्बन्धी अनन्त अन्तिम स्पर्द्धकोंके अविभागप्रतिच्छेदोंसे उत्पन्न होनेवाला प्रक्षेप जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके अविभागप्रतिच्छेदोंके अनन्तवें भागसे नहीं उत्पन्न हो सकता, क्योंकि, उसमें विरोध है। और प्रक्षेपस्पर्द्धकोंकी अनन्तता असिद्ध नहीं है, क्योंकि प्रक्षेप, अतिस्थापना और निक्षेप स्पर्द्धक अनन्त हैं; यह प्राभृतसूत्रसे सिद्ध है।

अविभागप्रतिच्छेदोंके संयोगसे उत्पन्न जघन्य स्थान भी उक्त सब जीवराशि द्वारा खण्डित नहीं किये जा सकते हैं, क्योंकि, जो दोष प्रत्येक भंगमें सम्भव हैं वे ही दोष यहां भी सम्भव हैं। दूसरे, अपूर्व स्पर्द्धकोंके विना सब जीवराशि द्वारा जघन्य स्थानको खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खण्ड मात्र अविभागप्रतिच्छेदोंके उत्कर्षणको प्राप्त होनेपर द्वितीय स्थान उत्पन्न भी नहीं हो सकता है, क्योंकि, उत्कर्षण द्वारा वृद्धिको स्वीकार करनेपर समान धनवाले परमाणुओंकी वृद्धिसे भी अनुभाग-स्थानकी वृद्धिका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, योगके द्वारा भी अनुभाग वृद्धिका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं; क्योंकि, गुणितकर्मांशिकको छोड़कर अन्यत्र उत्कृष्ट अनुभागस्थानके अभावकी आपत्ति आती है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, इस प्रकारसे उत्कृष्ट अनुभागस्थानके कालके जघन्य स्वरूपसे एक समय अवस्थानका प्रसंग आता है। परन्तु

१ अ-आप्रत्योः '-पडिच्छेदेहिं' इति पाठः। २ आप्रतौ '-भागेण उप्पज्जदि त्ति विरोहादो' ताप्रतौ '-भागेणे त्ति ण उप्पज्जदि त्ति विरोहादो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्तब्भुवगमादो। ण च अब्भुवगमो णिण्णिबंधणो, (जहण्णुक्कस्सकालपरूवयकसायपाहुड-सुत्तावट्ठंभबलेण तदुप्पत्तीदो) किं च ण उक्कड्डणाए अणुभागवड्डी होदि, ओकड्डणाए हाणिप्पसंगादो। ण च एवं, अणुभागट्ठाणस्स एगसमयावट्ठाणप्पसंगादो। उक्कड्डिदअणुभागो अचलावलियमेत्तकालेण विणा ण ओकड्डिज्जदि, तदो एगसमओ ण लब्भदि त्ति उत्ते ण, अधाट्ठिदीए गलंतपरमाणू विट्ठाणसंतकम्मोकड्डणं च पेक्खिय तदुवलंभादो। ण च ओकड्डणाए अणुभागस्स खंडयघादेण विणा अत्थि घादो, तहाणुवलंभादो। ण च उक्कड्डिदअणुभागो खंडयघादेण घादिज्जदि, सयलसरिसधणियाणं घादाभावेण अणुभागखंडयस्स घादाभावादो। तं कुदो णव्वदे? अणुभागहाणीए जहण्णुक्कस्सेण एगो चेव समओ त्ति कालणिद्देससुत्तादो णव्वदे। अध ओकड्डिदअणुभागो जहण्णट्ठाणादो उवरि अपुव्वफद्दयाणं सरूवेण पददि, थोवत्तादो। ण च सरिसधणियं होदूण चेट्ठदि, पुव्वुत्तदोसप्पसंगादो। किंतु जहण्णट्ठाणफद्दयाणं विचालेसु अणंतेसु अपुव्वफद्दयागारो होदूण चेट्ठदि त्ति। ण [1]उक्कड्डिज्जमाणपरमाणूणमणुभागो बज्झमाणपरमाणूणमणुभागेणूणसमाणो चेव होदि, णाहियो ण चूणो; 'बंधे उक्कडिज्जदि' त्ति वयणादो वग्गणवुड्ढीए अभावादो च।

ऐसा है नहीं, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभागस्थानका काल जघन्य उत्कृष्ट रूपसे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्वीकार किया गया है। और वैसा स्वीकार करना अकारण नहीं है, क्योंकि, जघन्य व उत्कृष्ट कालकी प्ररूपणा करनेवाले कषायप्राभृतसूत्रके आश्रयबलसे वह सुसंगत ही है। इसके अतिरिक्त, उत्कर्षण द्वारा अनुभागकी वृद्धि नहीं हो सकती है, क्योंकि, वैसा माननेपर अपकर्षण द्वारा उसकी हानिका भी प्रसंग अनिवार्य होगा। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वैसा होनेपर अनुभागस्थानके एक समय अवस्थानका प्रसंग आता है। यदि कहा जाय कि उत्कर्षण प्राप्त अनुभाग अचलावली मात्र कालके विना चूँकि अपकर्षणको प्राप्त होता नहीं है, अतएव एक समय अवस्थान नहीं पाया जा सकता है; सो ऐसा कहनेपर उत्तर देते हैं कि वैसा नहीं है, क्योंकि, अधःस्थितिके गलनेवाले परमाणुओंकी तथा द्विस्थान सत्कर्मके उत्कर्षकी अपेक्षा करके उक्त एक समय पाया जाता है। दूसरे काण्डकघातके विना अपकर्षण द्वारा अनुभागका घात सम्भव भी नहीं है, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता है। और उत्कर्षणप्राप्त अनुभाग काण्डकघातके द्वारा घाता भी नहीं जा सकता है, क्योंकि, समस्त समान धनवाले परमाणुओंका घात न होनेसे अनुभागकाण्डकके घातका अभाव है। वह किस प्रमाणसे जाना जाता है? वह "अनुभागहानिका जघन्य व उत्कृष्टरूपसे काल एक ही समय है" इस कालनिर्देशसूत्रसे जाना जाता है। यहाँ यह शंका की जा सकती है कि अपकर्षणप्राप्त अनुभाग जघन्य स्थानके ऊपर अपूर्व स्पर्द्धकोंके स्वरूपसे गिरता है, क्योंकि, वह स्तोक है। वह समान धन युक्त होकर स्थित नहीं होता है, क्योंकि, पूर्वोक्त दोषोंका प्रसंग आता है। किन्तु वह जघन्य स्थानसम्बन्धी स्पर्द्धकोंके अनन्त अन्तरालोंमें अपूर्व स्पर्द्धकोंके आकार होकर स्थित होता है। उत्कर्षणको प्राप्त होनेवाले परमाणुओंका अनुभाग बांधे जानेवाले परमाणुओंके अनुभागसे हीन न समान ही होता है, न अधिक और न हीन; क्योंकि, "बन्धके समय उत्कर्षण करता है" ऐसा वचन है, तथा वर्गणा-

---

१ ताप्रतौ 'चेट्ठदि त्ति। ण ओकड्डिजमाण' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तदो फद्दयंतरेसु उक्कड्डिदूण अपुव्वाणि करेदि; त्ति ण घडदे । एवं अपुव्वफद्दयाणि करेंतो वि ण सव्वफद्दयंतरेसु करेदि अहिच्छावणाए [1]विणा णिक्खेवस्साभावादो । णाहिच्छावणं मोत्तूण उवरिमफद्दयंतरेसु करेदि, एदस्स ट्ठाणस्स बंधसंतागुभागट्ठाणेहिंतो पुधत्तप्पसंगादो । ण ताव एदं बंधट्ठाणं, बंधट्ठाणत्तेण सिद्धजहण्णट्ठाणचरिमफद्दयादो उवरि अणंतफद्दयरचणाभावेण अणभागवुड्डीए अभावादो । ण च मज्झे अपुव्वेसु फद्दयेसु ढोइदेसु अणुभागट्ठाणवड्डी होदि, केवलणाणावरणुक्कस्साणुभागादो फद्दयसंखाए अहिय-वीरियंतराइयउक्कस्साणुभागट्ठाणस्स महल्लत्तप्पसंगादो । ण चेदं संतट्ठाणं पि, तस्स अट्ठंकुव्वंकाणमंतरे उप्पज्जमाणस्स अट्ठंकादो अणंतगुणहीणस्स उव्वंकादो अणंतगुणस्स फद्दयंतरेसु उप्पत्तिविरोहादो । ण च संतट्ठाणाणि बंधेण ओकड्डुक्कड्डणाए वा उप्पज्जंति, तेसिमणुभागफद्दयघादेण उप्पत्तिदंसणादो । ण च बंधेण विणा उक्कड्डणादो चेव अपुव्वाणं फद्दयाणं उप्पत्ती, तहाणुवलंभादो । उवलंभे वा खंडयघादेण विणा ओकड्डणाए चेव फद्दयाणं सुण्णत्तं होज्ज । ण च एवं, एवंविहजिणवयणाणुवलंभादो । किं च, एवं जहण्णट्ठाणस्सुवरि वड्डिदकंदयमेत्तअणंतभागवड्डीयो घादिय जहण्णट्ठाणं ण उप्पादेदुं

वृद्धिका अभाव भी है । इस कारण स्पर्द्धकोंके अन्तरालोंमें उत्कर्षण करके अपूर्व स्पर्द्धकोंको करता है, यह कथन घटित नहीं होता है । इसी प्रकार अपूर्व स्पर्द्धकोंको करता हुआ भी वह सब स्पर्द्धकोंके अन्तरालोंमें नहीं करता है, क्योंकि, अतिस्थापनाके बिना निक्षेपका अभाव है । यदि कहा जाय कि अतिस्थापनाको छोड़कर उपरिम स्पर्द्धकोंके अन्तरालोंमें अपूर्व स्पर्द्धकोंको करता है तो यह भी ठीक नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे इस स्थानके बन्धस्थान और सत्त्वस्थानसे पृथक् होनेका प्रसंग आता है । वह बन्धस्थान तो हो नहीं सकता है, क्योंकि, बन्धस्थान स्वरूपसे सिद्ध जघन्य स्थानके अन्तिम स्पर्द्धकसे ऊपर अनन्त स्पर्द्धकोंकी रचनाका अभाव होनेसे अनुभागवृद्धिका अभाव है । यदि कहा जाय कि मध्यमें अपूर्व स्पर्द्धकोंकी रचना करनेपर अनुभागस्थानकी वृद्धि हो सकती है, तो यह कहना भी उचित नहीं है; क्योंकि, ऐसा होनेपर केवलज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा स्पर्द्धक संख्यामें अधिक वीर्यान्तरायके उत्कृष्ट अनुभागस्थानके महान् होनेका प्रसंग आता है । वह सत्त्वस्थान भी नहीं हो सकता है, क्योंकि, अष्टांकसे अनन्तगुणे हीन व उर्वंकसे अनन्तगुणे होकर अष्टांक व ऊर्वंकके अन्तरालमें उत्पन्न होनेवाले उसकी स्पर्द्धकान्तरोंमें उत्पत्तिका विरोध है । दूसरे, सत्त्वस्थान बन्ध, अपकर्षण या उपकर्षणसे उत्पन्न भी नहीं होते हैं, क्योंकि, उनकी उत्पत्ति अनुभागस्पर्द्धकोंके घातसे देखी जाती है । और बन्धके विना केवल उत्कर्षणसे ही अपूर्व स्पर्द्धकोंकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता । यदि वैसा पाया जाना स्वीकार किया जाय तो काण्डकघातके बिना अपकर्षणसे ही स्पर्द्धकोंकी शून्यता हो जानी चाहिये । परन्तु वैसा है नहीं, क्योंकि, इस प्रकारका जिनवचन नहीं पाया जाता है । और भी, इस प्रकार जघन्य स्थानके ऊपर वृद्धिंगत काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियोंका घात करके जघन्य स्थानको उत्पन्न कराना शक्य नहीं है, क्योंकि, सन्धिके विना मध्यमें अनुभागकाण्डकघात-

१ ताप्रतौ 'वि ण,' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सक्किज्जदे, संधीए विणा मज्झे अणुभागखंडयघादस्स अभावादो। काओ अणुभागट्ठाणसंधीयो णाम ? बंधछवड्डीयो। ण च ओकड्डणाए घादेदि, सरिसधणियपरमाणूणमणुभागोवट्टणाए वावदाए तिस्से फद्दयंतरेसु ट्ठिदफद्दयाणमभावे वावारविरोहादो। अध सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणे भागे हिदे असंखेज्जलोगमेत्तसव्वजीवरासीओ असंखेज्जलोगमेत्तअसंखेज्जा लोगा असंखेज्जलोगमेत्तउक्कस्ससंखेज्जाणि असंखेज्जलोगमेत्तअण्णोण्णब्भत्थरासीयो च अण्णोण्णगुणिदमेत्तजहण्णबंधट्ठाणाणि आगच्छंति। तेसु वि जहण्णफद्दयपमाणेण कीरमाणेसु अणंताणि होंति त्ति सिद्धाणमणंतिमभागेण गुणिदेसु जहण्णफद्दयाणं पमाणं होदि। एदाणि फद्दयाणि एगादिएगुत्तरकमेण जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्सुवरि पवेसिय[1] अणंतभागवड्डिट्ठाणं जदि उप्पाइज्जदि तं पि ण घडदे, एगअणंतभागवड्डिपक्खेवब्भंतरे सव्वजीवेहि अणंतगुणमेत्तफद्दयाणं उप्पत्तिदंसणादो। तं पि कुदो णव्वदे ? जहण्णपक्खेवजहण्णफद्दयसलागाणमट्ठुत्तरगुणिदाणमुत्तरूण[2] विगुणादिवग्गसहिदाणं वग्गमूलं पुरिममूलेण विगुणुत्तरभाजिदलद्धे वि अणंतसव्वजीवरासीणमुवलंभादो। ण च एदं जुज्जदे, सव्वट्ठाणाणं फद्दयाणि वग्गणाओ परमाणू च सिद्धाणमणंतिमभागमेत्ता होंति त्ति सुत्तेण सह विरोहादो। तदो सव्वजीवरासी वड्डीए भागहारो

का अभाव है। अनुभागस्थानसन्धियोंसे क्या अभिप्राय है ? उनसे अभिप्राय बन्धगत छह वृद्धियोंका है। दूसरे अपकर्षणसे घात होता भी नहीं है, क्योंकि, समान धनवाले परमाणुओंके अनुभागके अपवर्तन (अपकर्षण) में व्यापृत उसके स्पर्द्धकान्तरोंमें स्थित स्पर्द्धकोंके अभावमें व्यापृत होनेका विरोध है। यहां शंका उपस्थित हो सकती है कि सब जीवराशिका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर असंख्यात लोक मात्र सब जीवराशियों, असंख्यात लोक मात्र असंख्यात लोकों, असंख्यात लोक मात्र उत्कृष्ट संख्यातों और असंख्यात लोक मात्र अन्योन्याभ्यस्त राशियोंको परस्पर गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतने मात्र जघन्य स्थान आते हैं। उनको भी जघन्य स्थानके स्पर्द्धकोंके प्रमाणसे करनेपर चूंकि वे अनन्त होते हैं, अतएव सिद्धोंके अनन्तवें भागसे गुणित करनेपर जघन्य स्पर्द्धकोंका प्रमाण होता है। इन स्पर्द्धकोंको एकको आदि लेकर एक अधिक क्रमसे जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके ऊपर प्रवेश कराकर यदि अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है तो वह भी घटित नहीं होता है, क्योंकि, एक अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपके भीतर सब जीवोंसे अनन्तगुणे स्पर्धकोंकी उत्पत्ति देखी जाती है। यह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ? चूंकि आठ व उत्तरसे गुणित व उत्तर कम द्विगुणित आदिके वर्गसे सहित ऐसी जघन्य प्रक्षेप सम्बन्धी जघन्य स्पर्द्धकशलाकाओंके प्रक्षेपवर्गमूलसे कम वर्गमूलमें दुगुणे उत्तरका भाग देनेपर जो लब्ध होता है उसमें भी अनन्त सब जीवराशियां पायी जाती हैं; अतएव इसीसे वह जाना जाता है। परन्तु यह योग्य नहीं है, क्योंकि, वैसा होनेपर स्थानोंके स्पर्द्धक, वर्गणायें और परमाणु सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र होते हैं, इस सूत्रके साथ विरोध आता है। इस कारण

१ मप्रतिपाठोऽयम्। अ० आ० ताप्रतिषु, 'पदेसिय' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'मुत्तरूवूण' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ण होदि त्ति घेत्तव्वं। सव्वजीवेहिंतो सिद्धेहिंतो च अणंतगुणहीणो अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणो जहण्णट्ठाणभागहारो होदि। एदेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे अणंताणि फद्दयाणि अणंताओ वग्गणाओ कम्मपरमाणू च आगच्छंति। तत्थ जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयाणि पक्खेवसलागमेत्ताणि घेत्तूण जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्स उवरि पंतियागारेण ट्ठविय फद्दयसलागसंकलणं विरलिय गलिद[1]सेसाविभागपडिच्छेदे समखंडं करिय दिण्णे रूवं पडि फद्दयविसेसो पावदि। तत्थ एगरूवधरिदं घेत्तूण पढमपडिरासीए पक्खित्ते पक्खेवस्स फद्दयं होदि। दोरूवधरिदं घेत्तूण विदियपडिरासीए पक्खित्ते विदियफद्दयं होदि। तिण्णिरूवधरिदं घेत्तूण तदियपडिरासीए पक्खित्ते तदियफद्दयं होदि। एवं णेयव्वं जाव चरिमफद्दए त्ति। णवरि पक्खेवफद्दयसलागमेगरूवधरिदं घेत्तूण चरिमपडिरासीए पक्खित्ते चरिमफद्दयं होदि। तदो पुव्वुत्तासेसदोसाभावादो एसो अत्थो घेत्तव्वो त्ति?

एत्थ परिहारो उच्चदे तं जहा—तुब्भेहि उत्तभागहारो सिद्धाणमणंतिमभागमेत्तसंखो ण घडदे, अणंतभागपरिवड्ढी सव्वजीवेहि वड्ढिदा त्ति सुत्तेण सह विरोहादो। तदियाबहुवयणंतं सव्वजीवसद्दं मोत्तूण पंचमीए एगवयणंते गहिदे ण सुत्तविरोहो होदि

सब जीवराशि वृद्धिका भागहार नहीं होता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। किन्तु सब जीवों और सिद्धोंसे अनन्तगुणा हीन तथा अभवसिद्धोंसे अनन्तगुणा जघन्य स्थानका भागहार होता है। इसका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर अनन्त स्पर्द्धक, अनन्त वर्गणायें और अनन्त कर्मपरमाणु आते हैं। उनमें प्रक्षेपशलाकाओं प्रमाण जघन्य स्थानके अन्तिम स्पर्द्धकोंको ग्रहण करके जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके ऊपर पंक्तिके आकारसे स्थापित कर स्पर्द्धकशलाकाओंके संकलनका विरलन कर गलनेसे शेष रहे अविभागप्रतिच्छेदोंको समखण्ड करके देनेपर प्रत्येक अंकके प्रति स्पर्द्धकविशेष प्राप्त होता है। उसमेंसे एक अंकके प्रति प्राप्त राशिको ग्रहण कर प्रथम प्रतिराशिमें मिलानेपर प्रक्षेपक स्पर्द्धक होता है। दो अंकोंके प्रति प्राप्त राशिको ग्रहण कर द्वितीय प्रतिराशिमें मिलानेपर द्वितीय स्पर्द्धक होता है। तीन अंकोंके प्रति प्राप्त राशिको ग्रहणकर तृतीय प्रतिराशिमें मिलानेपर तृतीय स्पर्द्धक होता है। इस प्रकार अन्तिम स्पर्द्धक तक ले जाना चाहिये। विशेष इतना है कि प्रक्षेपस्पर्धकशलाकाओं प्रमाण अंकोंके प्रति प्राप्त राशिको ग्रहण कर अन्तिम प्रतिराशिमें मिलानेपर अन्तिम स्पर्द्धक होता है। इस कारण पूर्वोक्त समस्त दोषोंसे रहित होनेके कारण इस अर्थको ग्रहण करना चाहिये?

समाधान—यहां इस शंकाका परिहार कहते हैं। वह इस प्रकार है—तुम्हारे द्वारा कहा गया सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र संख्यावाला भागहार घटित नहीं होता है, क्योंकि, उसे माननेपर "अनन्तभागवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिको प्राप्त होती है" इस सूत्रके साथ विरोध प्राप्त होता है। यदि कहा जाय कि सूत्रमें स्थित 'सव्वजीव' शब्दको तृतीयाका बहुवचनान्त न लेकर पंचमीका

१ अ-आप्रत्योः 'गहिद' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्ति वोत्तुं ण जुत्तं, पंचमीए [1]एगवयणंते गहिदे वि सव्वजीवरासिस्सेव भागहारत्तुवलंभादो। तं पि कुदो णव्वदे? सर्वजीवादन्यस्य राशेरनिष्टत्वात्, ततः [2]कर्तृविवक्षायामनन्तभागवृद्धिः सर्वजीवैर्वर्द्धिता, हेतुविवक्षायां सर्वजीवाद् वृद्धिः इति सिद्धम्। ण च सुत्तविरुद्धं वक्खाणं होदि, तस्स वक्खाणाभासत्तप्पसंगादो। किं च, एसो भागहारो अणुभागट्ठाणवुड्ढीए अण्णस्स, अण्णहा अणंतभागवड्ढी सव्वजीवेहि वड्ढिदा त्ति सुत्तेण सह विरोहादो। [3]सावि अणुभागट्ठाणवुड्ढी ण सरिसधणपरमाणुउड्ढीए होदि, जोगवड्ढीदो वि अणुभागवुड्ढिप्पसंगादो। ण च एवं; वेदणीयस्स उक्कस्सखेत्ते जादे तस्सेव भावो णियमा उक्कस्सो[4] त्ति सुत्तवयणादो। उक्कड्डणाए अणुभागवुड्ढिप्पसंगादो ओकड्डणाए अणुभागहाणिप्पसंगादो च ण सरिसधणियपरमाणुवुड्ढीए अणुभागट्ठाणवड्ढी। जोगट्ठाणम्मि सरिसधणियजीवपदेसाणमविभागपडिच्छेदउड्ढीए जहा जोगट्ठाणवुड्ढी गहिदा तहा एत्थ किण्ण घेप्पदे? ण, णाणापोग्गलदव्वट्ठिदसत्तीणं एगजीवदव्वट्ठिदसत्तीणं च एगत्तविरोहादो। ण च भिण्णदव्वट्ठिदसत्तीणं तव्वड्ढीणं वा एगत्तमत्थि, अइप्पसंगादो।

एक वचनान्त ग्रहण करनेपर सूत्रके साथ विरोध नहीं होता है, सो ऐसा कहना भी योग्य नहीं है; क्योंकि, पंचमीका एकवचनान्त ग्रहण करनेपर भी सब जीवराशिके ही भागहारपना पाया जाता है। वह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है? कारण कि सब जीवराशिसे भिन्न अन्य भागहार अनिष्ट है। इसलिये कर्तृत्व विवक्षामें अनन्तभागवृद्धि सब जीवों द्वारा वृद्धिको प्राप्त होती है और हेतु विवक्षामें सब जीवराशिके निमित्तसे वृद्धि होती है, यह सिद्ध है। दूसरे, सूत्रसे विरुद्ध व्याख्यान होता नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे उसके व्याख्यानाभास होनेका प्रसंग आता है। और भी—यह भागहार अनुभागस्थानवृद्धिसे अन्यका है, क्योंकि, अन्यथा "अनन्तभागवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिको प्राप्त होती है" इस सूत्रके साथ विरोध होता है। वह भी अनुभागस्थानवृद्धि समान धनवाले परमाणुओंकी वृद्धिसे नहीं होती है, क्योंकि, वैसा होनेपर योगवृद्धिसे भी अनुभागवृद्धिके होनेका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि "वेदनीय कर्मका उत्कृष्ट क्षेत्र हो जानेपर उसीका भाव नियमसे उत्कृष्ट होता है" ऐसा सूत्र वचन है। उत्कर्षणसे अनुभागकी वृद्धिका प्रसंग होनेसे तथा अपकर्षणसे अनुभागकी हानिका प्रसंग होनेसे भी समान धनवाले परमाणुओंकी वृद्धिसे अनुभागस्थानकी वृद्धि नहीं होती है।

शंका—योगस्थानमें समान धनवाले जीवप्रदेशोंके अविभागप्रतिच्छेदोंकी वृद्धिसे जैसे योगस्थानकी वृद्धि ग्रहण की गई है वैसे यहां वह क्यों नहीं ग्रहण की जाती है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, नाना पुद्गल द्रव्योंमें स्थित शक्तियों और एक जीव द्रव्यमें स्थित शक्तियोंके एक होनेका विरोध है। परन्तु भिन्न द्रव्योंमें स्थित शक्तियां अथवा उनकी वृद्धियां एक नहीं हो सकतीं, क्योंकि, वैसा होनेपर अतिप्रसंग दोष आता है।

१ ताप्रतौ 'जुत्तं पि (त्ति), पंचमीए'। २ अप्रतौ 'रनिष्टत्वात्तद्राशीतः', आप्रतौ 'रनिष्टत्वात्तर्हीतः' इति पाठः। ३ अ आप्रत्योः 'सो' इति पाठः। ४ अ आप्रत्योः 'उक्कस्सा' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

किं च सरिसधणियपरमाणूहि अणुभागवुड्ढीए संतीए सरिसधणियपरमाणुपरिक्खएण अणुभागहाणीए होदव्वं । ण च एवं, पढमाणुभागखंडयफालीए पदमाणाए वि[1] अणुभागट्ठाणहाणिप्पसंगादो । सजोगिकेवलिम्हि गुणसेडीए उच्चागोदपरमाणुपोग्गलक्खंधेसु गलमाणेसु वि उच्चागोदाणुभागस्स उक्कस्सत्तुवलंभादो वा ण सरिसधणिएहि अणुभागवुड्ढी । तदो पक्खेवफद्दयवग्गणाणं एसो भागहारो होदि, तव्वुड्ढीए अणुभागट्ठाणवुड्ढिदंसणादो । ण च पक्खेवस्स एगोलीए ट्ठिदपरमाणूणमविभागपडिच्छेदेहि ट्ठाणवुड्ढी होदि, भिण्णदव्वट्ठिदाणं सत्तीणमेयत्तविरोहादो । केवलणाणावरणुक्कस्साणुभागादो वीरियंतराइयस्स तप्फद्दएहिंतो बहुदरफद्दयसंखस्स अणुभागेण समाणत्तण्णहाणुववत्तीदो वा एगोलिट्ठिदपरमाणूणमणुभागपडिच्छेदा णाणुभागवुड्ढीए कारणं । तदो सरिसधणियाणुभागस्सेव एगोलीअणुभागस्स वि ण एसो भागहारो । किं तु एगपक्खेवचरिमवग्गणाए अणुभागवुड्ढीए एसो भागहारो ।

पुणो एदेण भागहारेण जहण्णट्ठाणसण्णिदएगपरमाणुअणुभागे भागे हिदे जहण्णट्ठाणस्स अणंतिमभागो आगच्छदि त्ति सव्वजीवरासिभागहारस्सुवरि जे उब्भाविददोसा ते सव्वे एत्थ पावेंति त्ति एसो पक्खो ण णिरवज्जो । तदो सुत्तवइट्ठत्तादो सव्वजीवरासी चेव

दूसरे, समान धनवाले परमाणुओंसे अनुभागवृद्धिके होनेपर समान धनवाले परमाणुओंकी हानिसे अनुभागकी हानि भी होनी चाहिये । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वैसा होनेपर प्रथम अनुभागकाण्डककी फालिके नष्ट होनेके समयमें भी अनुभागस्थानकी हानिका प्रसंग अनिवार्य होगा । इसके अतिरिक्त सयोगकेवली गुणस्थानमें गुणश्रेणि द्वारा उच्च गोत्रके परमाणुओंसम्बन्धी पुद्गलस्कन्धोंके गलनेके समयमें भी चूंकि उच्चगोत्रका अनुभाग उत्कृष्ट पाया जाता है इसलिये भी समान धनवाले परमाणुओंसे अनुभागकी वृद्धि होना संभव नहीं है । इस कारण यह भागहार प्रक्षेपस्पर्द्धकोंकी वर्गणाओंका है, क्योंकि, उनकी वृद्धिसे अनुभागस्थानकी वृद्धि देखी जाती है । प्रक्षेपके एक पंक्तिमें स्थित परमाणुओं सम्बन्धी अविभागप्रतिच्छेदोंसे भी स्थानवृद्धि नहीं होती है, क्योंकि, भिन्न द्रव्योंमें स्थित शक्तियोंके एक होनेका विरोध है। अथवा, केवलज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागसे उसके स्पर्द्धकोंकी अपेक्षा अधिक स्पर्द्धकसंख्यावाले वीर्यान्तरायके अनुभागरूपसे समानता अन्यथा बन नहीं सकती अतः एक पंक्तिमें स्थित परमाणुओंके अविभागप्रतिच्छेद अनुभागवृद्धिके कारण नहीं हो सकते। अतएव समान धनवाले अनुभागके समान एक पंक्ति रूप अनुभागका भी यह भागहार सम्भव नहीं है । किन्तु एक प्रक्षेप सम्बन्धी अन्तिम वर्गणाकी अनुभागवृद्धिका यह भागहार है ।

इस भागहारका जघन्य स्थान संज्ञावाले एक परमाणुके अनुभागमें भाग देनेपर चूँकि जघन्य स्थानका अनन्तवाँ भाग आता है, अतएव सब जीवराशि भागहारके ऊपर जो दोष दिये गये हैं वे सब यहाँ पाये जाते हैं । इसीलिये यह निर्दोष पक्ष नहीं है । इस कारण सूत्रोपदिष्ट

१ अ-आप्रत्योः 'पढमट्ठाणाए वि'; ताप्रतौ 'पढमणाए वि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भागहारो होदि त्ति घेत्तव्वं । ण च पुव्वुत्तदोसा एत्थ संभवंति, जिणवयणे दोसाणमवट्ठाणाभावादो । तं जहा—ण ताव परमाणुफद्दयवग्गणासण्णिदजहण्णट्ठाणे विहज्जमाणे वुत्तदोसाण संभवो, भावविहाणे अभावेहि संववहाराभावादो । ण तत्थतणदुसंजोगादिसु उत्तदोससंभवो वि, अभावे उत्तदोसाणं भावम्हि उत्तिविरोहादो । एदेणेव कारणेण भावाणुभागसंजोगेण दव्वफद्दयवग्गणासु जादजहण्णट्ठाणम्हि उत्तदोसा ण संति । ण चउत्थसंजोगम्हि उत्तदोसा वि संभवंति, फद्दयंतरेसु णिसेगाणमणब्भुवगमादो ओकड्डुक्कड्डणाहि हाणि-वड्ढीणमणब्भुवगमादो जहण्णफद्दयाणि संकलणागारेण जहण्णट्ठाणस्सुवरि पवेसिय बिदियट्ठाणमुप्पाइज्जदि त्ति पइज्जाभावादो सव्वजीवरासिपडिभागेगपक्खेवम्मि अणंताणं फद्दयाणमुवलंभादो । ण च वड्ढिं मोत्तूण पुव्विल्लाणुभागस्स फद्दयत्तं, तत्थ तल्लक्खणाभावादो । तम्हा सव्वजीवरासी भागहारो णिरवज्जो त्ति दट्ठव्वो ।

तदो सव्वजीवरासिं विरलिय जहण्णट्ठाणसण्णिदएगपरमाणुअविभागं समखंडं कादूण दिण्णे रूवं पडि पक्खेवपमाणं पावदि । तत्थ एगपक्खेवं घेत्तूण जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते विदियमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि ।

जम्हि वा तम्हि वा पक्खेवे अणंतेहि फद्दएहि होदव्वं । एत्थ पुण एक्को वि फद्दओ

होनेसे सब जीवराशि ही भागहार होता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये । इसके अतिरिक्त इस पक्षमें दिये गये पूर्वोक्त दोष यहाँ सम्भव नहीं हैं, क्योंकि, जिनवचनमें दोषोंका रहना अशक्य है । वह इस प्रकारसे—परमाणु, स्पर्द्धक और वर्गणा संज्ञावाले जघन्य स्थानको विभक्त करनेमें जो दोष बतलाये गये हैं वे सम्भव नहीं हैं, क्योंकि, भावविधानमें अभावोंसे संव्यवहारका अभाव है । वहाँ द्विसंयोगादिक भंगोंमें बतलाये गये दोषोंकी भी सम्भावना नहीं है, क्योंकि, अभावमें जो दोष बतलाये गये हैं उनके भावमें रहनेका विरोध है । इसी कारण भावानुभागसंयोगसे द्रव्य रूप स्पर्द्धकवर्गणाओंमें उत्पन्न हुए जघन्य स्थानमें उक्त दोष सम्भव नहीं हैं । चतुर्थ संयोगमें कहे गये दोष भी सम्भव नहीं हैं, क्योंकि स्पर्द्धकान्तरोंमें निषेकोंको स्वीकार नहीं किया गया है, अपकर्षण व उत्कर्षणके द्वारा हानि व वृद्धि नहीं स्वीकार की गई है, जघन्य स्पर्द्धकोंको संकलनके आकारसे जघन्य स्थानके ऊपर प्रवेश कराकर द्वितीय स्थान उत्पन्न कराया जाता है ऐसी प्रतिज्ञाका अभाव है और सब जीवराशिके प्रतिभाग रूप एक प्रक्षेपमें अनन्त स्पर्द्धक पाये जाते हैं । और वृद्धिको छोड़कर पूर्वके अनुभागके स्पर्द्धकरूपता भी नहीं बनती, क्योंकि, उसमें उसके लक्षणका अभाव है । इसलिये सब जीवराशि भागहार निर्दोष है, ऐसा समझना चाहिये ।

इस कारण सब जीवराशिका विरलनकर जघन्य स्थान संज्ञावाले एक परमाणुअविभागको समखण्ड करके देनेपर प्रत्येक अंकके प्रति प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है । उनमें एक प्रक्षेपको ग्रहण कर जघन्य स्थानको प्रतिराशि करके उसमें मिलानेपर अनन्तभागवृद्धिका द्वितीय स्थान होता है ।

शंका—जिस किसी भी प्रक्षेपमें अनन्त स्पर्द्धक होने चाहिये । परन्तु यहाँ एक भी स्पर्द्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णत्थि, कधमेदस्स पक्खेवत्तं जुज्जदे ? ण, एत्थ वि अणंताणं फद्दयाणं उवलंभादो । तं जहा—पक्खेवसलागाओ विरलिय पक्खेवं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगफद्दयपमाणं पावदि । कधमेदस्स फद्दयववएसो ? अंतरिदूण कमेण वड्ढिदाविभाग-पडिच्छेदा सांतरा फद्दयं । तेणेत्थ एगरूवधरिदस्स फद्दयसण्णा । तं रूवूणं फद्दयंतरं । एत्थ एगफद्दयम्मि सगवग्गणासलागूणा सव्वजीवेहि सव्वागासादो वि सव्वपोग्गलादो वि अणंतगुणमेत्ता अविभागपडिच्छेदा वग्गणंतरं । एदेहि अविभागपडिच्छेदेहि जहण्णट्ठाणादो एगुत्तरादिकमेण जुत्तपरमाणू तिसु वि कालेसु सव्वजीवेसु णत्थि त्ति उत्तं होदि ।

वग्गणंतरादो अविभागपडिच्छेदुत्तरभावो पढमफद्दयआदिवग्गणा होदि । तत्तो पहुडि णिरंतरं अविभागपडिच्छेदुत्तरकमेण वग्गणाओ गंतूण पढमफद्दयस्स चरिमवग्गणा होदि । वग्गणसण्णिदाणमविभागपडिच्छेदाणमाधारभूदा परमाणू अत्थि त्ति वुत्तं होदि । एदं पक्खेवस्स जहण्णफद्दयं पडिरासिय विदियरूवधरिदे पक्खित्ते विदियफद्दयं होदि । एगरूवधरिदाविभागपडिच्छेदाणं जुत्ता फद्दयसण्णा, अंतरिदूण कमेण तत्थ वड्ढिदंसणादो,

---

नहीं है, फिर इसको प्रक्षेप मानना कैसे योग्य है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, यहाँ भी अनन्त स्पर्द्धक पाये जाते हैं यथा—प्रक्षेपशलाकाओंका विरलन कर प्रक्षेपको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक स्पर्द्धकका प्रमाण प्राप्त होता है ।

शंका—इसकी स्पर्द्धक संज्ञा कैसे है ?

समाधान—अन्तर करके क्रमसे वृद्धिको प्राप्त हुए सान्तर अविभागप्रतिच्छेदोंको स्पर्द्धक कहा जाता है । इसी कारण यहाँ एक अंकके प्रति प्राप्त राशिकी स्पर्द्धक संज्ञा है ।

उसमेंसे एक अंक कम कर देनेपर स्पर्द्धकोंका अन्तर होता है । यहाँ एक स्पर्द्धकमें अपनी वर्गणाशलाकाओंसे कम सब जीवों, समस्त आकाश तथा सब पुद्गलोंसे भी अनन्तगुणे मात्र अविभाग प्रतिच्छेद वर्गणाओंके अन्तर होते हैं । अभिप्राय यह है कि इन अविभाग प्रतिच्छेदोंसे जघन्य स्थानसे उत्तरोत्तर एक एक अधिक क्रमसे युक्त परमाणु तीनों ही कालोंमें सब जीवोंमें नहीं हैं ।

वर्गणान्तरसे एक अविभागप्रतिच्छेदसे अधिक अनुभागका नाम प्रथम स्पर्द्धककी आदि वर्गणा है । उससे लेकर उत्तरोत्तर एक एक अविभाग प्रतिच्छेदकी अधिकताके क्रमसे वर्गणामें जाकर प्रथम स्पर्द्धककी अन्तिम वर्गणा होती है । वर्गणा संज्ञावाले अविभागप्रतिच्छेदोंके आधार-भूत परमाणु हैं, यह उसका अभिप्राय है । प्रक्षेपके इस जघन्य स्पर्द्धकको प्रतिराशि करके उसमें द्वितीय अंकके प्रति प्राप्त राशिको मिलानेपर द्वितीय स्पर्द्धक होता है ।

शंका—एक अंकके प्रति प्राप्त अविभागप्रतिच्छेदोंकी स्पर्द्धक संज्ञा योग्य है, क्योंकि अन्तरको प्राप्त होकर क्रमसे उनमें वृद्धि देखी जाती है । किन्तु जघन्य स्थानसे सहित स्पर्द्धककी

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

ण जहण्णट्ठाणसहिदफद्दयस्स फद्दयसण्णा जुज्जदे ? ण एस दोसो, सहचारेण अभेदेण वा जहण्णट्ठाणस्स फद्दयसहिदस्स फद्दयत्तब्भुवगमादो।

विदियफद्दयस्स वि अणंतभागा वग्गणंतरं, सेसअणंतिमभागो विदियफद्दयवग्गणाओ। कुदो? एगपक्खेवब्भंतरफद्दयाणं फद्दयंतराणि सरिसाणि त्ति जिणोवदेसादो। एवं सव्वत्थ परूवेदव्वं। तदियफद्दयं घेत्तूण विदियफद्दयस्सुवरि पक्खित्ते ओवचारियफद्दयं होदि। एवं गंतूण चरिमफद्दए ओवचारियदुचरिमफद्दयस्सुवरि पक्खित्ते पढममणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि। एवमेगपक्खेवम्मि अणंताणं फद्दयाणं अत्थित्तपरूवणा कदा।

किमट्ठं फद्दयपरूवणा कीरदे? एदेसु ट्ठाणसण्णिदअविभागपडिच्छेदेसु एदेसिमविभागपडिच्छेदट्ठाणाणमाधारभूदा परमाणू अत्थि एदेसिं च णत्थि त्ति जाणावणट्ठं कीरदे। तेसिं परूवणा सुत्ते किण्ण कदा? ण, एगोलीअविणाभाविट्ठाणपरूवणाए कदाए एदम्हादो चेव तेसिमेगोलीट्ठिदपरमाणूणमविभागपडिच्छेदाणं च अत्थित्तसिद्धीदो। सरिसधणियपरमाणुपरूवणा सुत्ते किण्ण कदा? ण एस दोसो, कदा चेव। कुदो? जेणेदं सुत्तं देसामासियं तेण पदेसपरूवणा वि एदेण सूचिदा चेव। तदो एत्थ पदेसपरूवणा

स्पर्द्धक संज्ञा योग्य नहीं है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, स्पर्द्धक सहित जघन्य स्थानको सहचारसे अथवा अभेदसे स्पर्द्धक रूप स्वीकार किया गया है।

द्वितीय स्पर्द्धकका भी अनन्त बहुभाग वर्गणान्तर और शेष अनन्तवाँ भाग द्वितीय स्पर्द्धककी वर्गणायें होती हैं, क्योंकि, एक प्रक्षेपके भीतर स्पर्द्धकोंके स्पर्द्धकान्तर सदृश होते हैं, ऐसा जिन भगवान्का उपदेश है। इसी प्रकार सब जगह प्ररूपणा करनी चाहिये। तृतीय स्पर्द्धकको ग्रहण करके द्वितीय स्पर्द्धकके ऊपर मिलानेपर औपचारिक स्पर्द्धक होता है। इस प्रकार जाकर अन्तिम स्पर्द्धकका औपचारिक द्विचरम स्पर्द्धकके ऊपर प्रक्षेप करनेपर अनन्तभागवृद्धिका प्रथम स्थान होता है। इस प्रकार एक प्रक्षेपमें अनन्त स्पर्द्धकोंके अस्तित्वकी प्ररूपणा की गई है

शंका—स्पर्द्धकप्ररूपणा किसलिये की जा रही है ?

समाधान—स्थान संज्ञावाले इन अविभागप्रतिच्छेदोंमें इन अविभागप्रतिच्छेदस्थानोंके आधारभूत परमाणु हैं और इनके नहीं है, इस बातका ज्ञान करानेके लिये उक्त स्पर्द्धकप्ररूपणा की जा रही है।

शंका—उनकी प्ररूपणा सूत्रमें क्यों नहीं की गई है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, एक श्रेणिके अविनाभावी स्थानोंकी प्ररूपणा कर चुकनेपर इससे ही उन एक श्रेणिमें स्थित परमाणुओं और अविभागप्रतिच्छेदोंका अस्तित्व सिद्ध हो जाता है।

शंका—समान धनवाले परमाणुओंकी प्ररूपणा सूत्रमें क्यों नहीं की गई है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, वह कर ही दी गई है। क्योंकि यह सूत्र देशामर्शक है, अतएव प्रदेश प्ररूपणा भी इसीके द्वारा ही सूचित की गई है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहा बंधजहण्णट्ठाणम्हि परूविदा तहा परूवेदव्वा। णवरि संतकम्मपरमाणुं मोत्तूण णवकबंधपरमाणूणमुक्कड्डिदपरमाणूहि सह णिसेगविण्णासकमो परूवेदव्वो। संतस्स पुण णिसेगविण्णासकमो णत्थि, ओकड्डुकड्डणाहि तस्स बंधसमए रचिदसरूवेण अवट्ठाणाभावादो।

एक्कम्हि परमाणुम्हि ट्ठिदअणुभागस्स ट्ठाणसण्णा ण घडदे, अणंतफद्दएहि वग्गणाहि विणा अणुभागट्ठाणासंभवादो ? ण एस दोसो, जहण्णबंधट्ठाणस्स जहण्णफद्दयस्स जहण्णवग्गणमादिं कादूण सव्ववग्गणाणं सव्वफद्दयाणं सव्वट्ठाणाणं च एत्थेव उवलंभादो। जहा सदसंखा अक्खित्तएगादिसंखा तहा एदमणंतभागवड्ढिट्ठाणं पि सगकुक्खिणिक्खित्तअसेसहेट्ठिमट्ठाणं। तदो ण पुव्वुत्तदोसप्पसंगो त्ति। किं च, मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागो चउट्ठाणीयो त्ति सुत्तसिद्धो। तस्स चउट्ठाणसण्णा ण घडदे, सव्वघादित्तणेण एगट्ठाणाभावादो। सम्मामिच्छत्ताणुभागस्स वि दुट्ठाणत्तं ण जुज्जदे, तस्स दारुसमाणट्ठाणं मोत्तूण अण्णट्ठाणाभावादो। अह देसघादिजहण्णफद्दयस्स जहण्णाविभागपडिच्छेदप्पहुडि सव्वाविभागपडिच्छेदा एग-दो-तिण्णि-चत्तारिट्ठाणसण्णिदा सव्वे मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठाणम्मि अत्थि त्ति जदि तस्स चदुट्ठाणत्तं उच्चदि तो एक्कम्हि ट्ठाणे हेट्ठिमासेसट्ठाणफद्दयव-

---

इस कारण जिस प्रकारसे जघन्य बन्धस्थानमें प्रदेशप्ररूपणा की गई उसी प्रकारसे यहाँ भी उसकी प्ररूपणा करनी चाहिये। विशेषता इतनी है कि सत्कर्मपरमाणुको छोड़कर नवकबन्धपरमाणुओं सम्बन्धी निषेकोंके विन्यासक्रमकी प्ररूपणा उत्कर्षण प्राप्त परमाणुओंके साथ करनी चाहिये। परन्तु सत्त्वका निषेक विन्यासक्रम नहीं है, क्योंकि अपकर्षण व उत्कर्षणके साथ उसके बन्धसमयमें रचित स्वरूपसे रहनेका अभाव है।

शंका—एक परमाणुमें स्थित अनुभागकी स्थान संज्ञा घटित नहीं होती, क्योंकि, वर्गणाओंके बिना अनन्त स्पर्द्धकोंसे अनुभागस्थानकी सम्भावना नहीं है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जघन्य बन्धस्थान और जघन्य स्पर्द्धककी जघन्य वर्गणासे लेकर सब वर्गणायें, सब स्पर्द्धक और सब स्थान यहाँ ही पाये जाते हैं। जिस प्रकार सौ संख्या एक आदि संख्याओंमें गर्भित है, उसी प्रकार यह अनन्तभागवृद्धिस्थान भी अपनी कुक्षिके भीतर समस्त नीचेके स्थानोंको रखनेवाला है, इसलिये पूर्वोक्त दोषका प्रसंग नहीं आता है। दूसरे, मिथ्यात्व प्रकृतिका अनुभाग चतुःस्थानीय है यह सूत्रसिद्ध है। उसकी चतुःस्थान संज्ञा घटित नहीं होती, क्योंकि सर्वघाती प्रकृति होनेसे उसके एक स्थानका अभाव है। सम्यक्मिथ्यात्व प्रकृतिके अनुभागके भी द्विस्थानरूपता योग्य नहीं है, क्योंकि, उसके एक दारु समान स्थानको छोड़कर अन्य स्थानोंका अभाव है। देशघाती जघन्य स्पर्द्धकके जघन्य अविभागप्रतिच्छेदसे लेकर एक, दो, तीन व चार स्थान संज्ञायुक्त सब अविभागप्रतिच्छेद मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्थानमें विद्यमान हैं, अतएव यदि उसके चतुःस्थानरूपता कही जाती है तो एक स्थानमें नीचेके समस्त स्थान स्पर्द्धक और वर्गणाओंके अस्तित्वको क्यों नहीं कहते; क्योंकि, उससे यहाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्गणाणमत्थित्तं किण्ण वुच्चदे, विसेसाभावादो ।

[1]एसा अणंतभागवड्ढी उकड्डणादो ण होदि, बंधादो चेव होदि । तं जहा—जहण्ण-कसायोदयट्ठाणपक्खेवुत्तरअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेण जेण वा तेण वा जोगेण वड्ढिदूण बंधे अणंतभागवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि ।

संपहि एदस्स णवगबंधस्स फद्दयरचणं कस्सामो । तं जहा—जहण्णट्ठाणादो अणुभागेण अहियपरमाणू समयपबद्धम्मि अवणिय पुध ट्ठवेदूण पुणो जहण्णट्ठाणसेसपरमाणू सव्वे घेत्तूण रचणाए कीरमाणाए जहण्णट्ठाणजहण्णवग्गणप्पहुडि जाव तस्सेव उकस्सवग्गणा त्ति ताव एदेसु सरिसधणिया होदूण सव्वे पदंति । पुणो अवणिदपरमाणू अणंता अत्थि, तेसु पक्खेवजहण्णफद्दयमेत्तपरमाणू घेत्तूण जहासरूवेण जहण्णट्ठाणचरिमफद्दयस्स उवरिमे देसे ट्ठविदे पक्खेवपढमफद्दयं समुप्पज्जदि । पुणो तस्सेव विदियफद्दयमेत्तपरमाणू घेत्तूण पक्खेवपढमफद्दयस्सुवरि अंतरमुल्लंघिय ट्ठविदे विदियफद्दयमुप्पज्जदि । एवं पुणो पुणो घेत्तूण फद्दयरचणा कायव्वा जाव पुध ट्ठवियपरमाणू समत्ता त्ति । एत्थ एगपरमाणुट्ठिदउकस्साणुभागो ट्ठाणं णाम । एत्थ जहण्णट्ठाणे अवणिदे सेसं वड्ढी होदि । एदिस्से पमाणं सव्वजीवरासिणा जहण्णट्ठाणे भागे हिदे लद्धमेत्तं होदि ।

कोई विशेषता नहीं है ।

यह अनन्तभागवृद्धि उत्कर्षणसे नहीं होती है, केवल बन्धसे ही होती है । यथा—जघन्य कषायोदयस्थान प्रक्षेपसे अधिक अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानसे व जिस किसी भी योगसे वृद्धिंगत हो बन्धमें अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है ।

अब इस नवकबन्धकी स्पर्द्धकरचनाको करते हैं । वह इस प्रकार है—जघन्य स्थानसे अनुभागमें अधिक परमाणुओंको समयप्रबद्धमेंसे कम करके पृथक् स्थापित कर फिर जघन्य स्थानके शेष सब परमाणुओंको ग्रहण कर रचनाके करनेपर जघन्य स्थानकी जघन्य वर्गणासे लेकर उसीकी उत्कृष्ट वर्गणा तक इनमें समान धन युक्त होकर सब गिरते हैं । फिर कम किये गये जो अनन्त परमाणु हैं उनमेंसे प्रक्षेपरूप जघन्य स्पर्द्धक प्रमाण परमाणुओंको ग्रहण कर उन्हें यथाविधि जघन्य स्थान सम्बन्धी अन्तिम स्पर्द्धकके उपरिम देशके ऊपर स्थापित करनेपर प्रक्षेप रूप प्रथम स्पर्द्धक उत्पन्न होता है । फिर उसीके द्वितीय स्पर्द्धक प्रमाण परमाणुओंको ग्रहण कर प्रक्षेप रूप प्रथम स्पर्द्धकके ऊपर अन्तरको लाँघकर स्थापित करनेपर द्वितीय स्पर्द्धक उत्पन्न होता है । इस प्रकार बार बार ग्रहण करके पृथक् स्थापित परमाणुओंके समाप्त होने तक स्पर्द्धक रचना करनी चाहिये । यहाँ एक परमाणुमें स्थित उत्कृष्ट अनुभागका नाम स्थान है । इसमेंसे जघन्य स्थानको कम कर देनेपर शेष वृद्धि होती है । इसका प्रमाण सब जीवराशिका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उतना मात्र है ।

---

१ ताप्रतौ 'जा एसा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संपहि पढममणंतभागवड्डिट्ठाणं सव्वजीवरासिणा खंडिय लद्धे पडिरासिदपढम-अणंतभागवड्डिट्ठाणे पक्खित्ते विदियमणंतभागवड्डिट्ठाणं होदि। पुव्विल्लट्ठाणंतरादो एदं ट्ठाणंतरं अणंतभागब्भहियं। केत्तियमेत्तेण? सव्वजीवरासिवग्गेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे जं लद्धं तेत्तियमेत्तेण। अणंतरहेट्ठिमट्ठाणपक्खेवफद्दयंतरादो एदस्स पक्खेवस्स फद्दयंतरमणंतभागब्भहियं। कुदो? पुव्विल्लविहज्जमाणरासीदो संपहि [य-] विहज्जमाणरासीए अणंतभागब्भहियत्तादो अणंतरहेट्ठिमपक्खेवफद्दयसलागाहिंतो संपहियपक्खेवफद्दयसलागाणं तुल्लत्तादो। पक्खेवफद्दयसलागाणं तुल्लत्तं कधं णव्वदे? सव्वेसिमणंतभागवड्ढीणं पक्खेवफद्दयसलागाओ अण्णोण्णं समाणाओ, असंखेज्जभागवड्डिट्ठाणपक्खेवाणं पि फद्दयसलागाओ अण्णोण्णेहि तुल्लाओ, संखेज्जभागवड्डिट्ठाणपक्खेवफद्दयसलागाओ वि परोप्परं तुल्लाओ, एवं संखेज्जगुणवड्डि-असंखेज्जगुणवड्डि-अणंतगुणवड्डिफद्दयसलागाणं पि तुल्लत्तं वत्तव्वमिदि जिणवयणादो। अणंतभागवड्ढीसु हेट्ठिमपक्खेवफद्दयंतरादो उवरिमपक्खेवफद्दयंतरमणंतभागब्भहियमिदि वयणादो वा णव्वदे? फद्दयसलागासु विसरिसासु संतासु कधमणंतभागब्भहियत्तं ण घडदे? उच्चदे—रूवाहियसव्वजीवरासिणा अणंतरहेट्ठिमअणंतभा-

अब प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानको सब जीवराशिसे खण्डित कर जो लब्ध हो उसे प्रतिराशिभूत प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानमें मिलानेपर द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है। पूर्वके स्थानान्तरसे यह स्थानान्तर अनन्तवें भागसे अधिक है। कितने मात्रसे अधिक है? सब जीवराशिके वर्गका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उतने मात्रसे अधिक है। अनन्तर अधस्तन स्थान सम्बन्धी प्रक्षेप रूप स्पर्द्धकके अन्तरसे इस प्रक्षेपके स्पर्द्धकका अन्तर अनन्तवें भागसे अधिक है, क्योंकि, पूर्वोक्त विभज्यमान राशिसे इस समयकी विभज्यमान राशि अनन्तवें भागसे अधिक है, तथा अनन्तर अधस्तन प्रक्षेप स्पर्द्धकशलाकाओंसे इस समयकी प्रक्षेप स्पर्द्धकशलाकायें तुल्य हैं।

शंका—प्रक्षेप स्पर्द्धकशलाकाओंकी तुल्यता किस प्रमाणसे जानी जाती है?

समाधान—सब अनन्तभागवृद्धियोंकी प्रक्षेपस्पर्द्धकशलाकायें परस्परमें समान हैं, असंख्यातभागवृद्धिस्थानों सम्बन्धी प्रक्षेपोंकी भी स्पर्द्धकशलाकायें परस्परमें तुल्य हैं, संख्यातभागवृद्धिस्थानों सम्बन्धी प्रक्षेपोंकी स्पर्द्धकशलाकायें भी परस्पर तुल्य हैं। इसी प्रकार संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि सम्बन्धी स्पर्द्धकशलाकाओंकी भी समानता बतलानी चाहिये। इस जिनवचनसे उनकी तुल्यता जानी जाती है। अथवा, वह "अनन्तभागवृद्धियोंमें अधस्तन प्रक्षेप स्पर्द्धकोंके अन्तरसे उपरिम प्रक्षेप स्पर्द्धकोंका अन्तर अनन्तवें भागसे अधिक है" इस वचनसे जानी जाती है।

शंका—स्पर्द्धकशलाकाओंके विसदृश होनेपर अनन्तवें भागसे अधिकता कैसे घटित नहीं होती है?

समाधान—इसका उत्तर कहते हैं। अनन्तर अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थानमें एक अधिक

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

गवड्डिट्ठाणे भागे हिदे ट्ठाणंतरं होदि। पुणो तं चेव[1] फद्दयसलागाहि खंडिदेगखंडं फद्दयंतरं होदि। पुणो तम्हि चेव[2] ट्ठाणे सव्वजीवरासिणा भागे हिदे उवरिमट्ठाणंतरं होदि। पुणो तम्हि ट्ठाणंतरे उवरिमफद्दयसलागाहि भागे हिदे तत्थतणफद्दयंतरं होदि। संपहि पुव्विल्ल-फद्दयसलागाहिंतो उवरिमट्ठाणफद्दयसलागाओ जदि [वि] एगरूवेण अहियाओ होंति तो वि पुव्विल्लभागहारादो उवरिमट्ठाणफद्दयंतरभागहारो अणंतभागब्भहियो त्ति हेट्ठिमफद्दयंतरादो उवरिमपक्खेवफद्दयंतरमणंतभागहीणं होज्ज। ण च एवमणब्भुवगमादो। तदो सव्वप-क्खेवाणं फद्दयसलागाओ सजादिपक्खेवसलागाहि सरिसाओ त्ति घेत्तव्वं। सेसं पुव्वं व वत्तव्वं। सव्वजीवरासिणा विदियअणंतभागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे जं लद्धं तं तम्मि चेव पडिरासिय पक्खित्ते तदियमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि। एदं ट्ठाणंतरमणंतरादीदट्ठाणंतरादो अणंतभागब्भहियं। एदम्हि ट्ठाणंतरे फद्दयसलागाहि भागे[3] हिदे फद्दयंतरं होदि। एदं च फद्दयंतरं पुव्विल्लफद्दयंतरादो अणंतभागब्भहियं। कुदो? फद्दयसलागाहि तुल्लत्तादो। पुणो सव्वजीवरासिणा तदियअणंतभागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे जं लद्धं तं तम्हि चेव पडि-रासिय पक्खित्ते चउत्थमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि। एत्थ वि ट्ठाणंतरफद्दयंतराणं परिक्खा

सब जीवराशिका भाग देनेपर स्थानान्तर होता है। फिर उसी स्थानान्तरको स्पर्द्धकशलाकाओंसे खण्डित करनेपर एक खण्ड प्रमाण स्पर्द्धकान्तर होता है। फिर उसी स्थानमें सब जीवराशिका भाग देनेपर ऊपरका स्थानान्तर होता है। फिर उस स्थानान्तरमें उपरिम स्पर्द्धकशलाकाओंका भाग देनेपर वहांका स्पर्द्धकान्तर होता है। अब पूर्वकी स्पर्द्धकशलाकाओंसे उपरिम स्थानकी स्पर्द्धकशलाकायें यद्यपि एक अंकसे अधिक होती हैं तो भी पूर्वके भागहारसे उपरिम स्थान सम्बन्धी स्पर्द्धकान्तरका भागहार चूंकि अनन्तवें भागसे अधिक है। अतएव अधस्तन स्पर्द्धकान्तरसे उपरिम प्रक्षेपस्पर्द्धकान्तर अनन्तवें भागसे हीन होना चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वैसा स्वीकार नहीं किया गया है। इस कारण सब प्रक्षेपोंकी स्पर्द्धकशलाकायें सजाति प्रक्षेप स्पर्द्धकशलाकाओंके समान हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

शेष कथन पहिलेके ही समान कहना चाहिये। सब जीवराशिका द्वितीय अनन्तभागवृद्धि-स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे उसमें ही प्रतिराशि करके मिलानेपर तृतीय अनन्तभाग-वृद्धिस्थान होता है। यह स्थानान्तर अनन्तर अतीत स्थानान्तरकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे अधिक है। इस स्थानान्तरमें स्पर्द्धकशलाकाओंका भाग देनेपर स्पर्द्धकान्तर होता है। यह स्पर्द्धकान्तर पूर्वके स्पर्द्धकान्तरकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे अधिक है, क्योंकि, वह स्पर्द्धकशलाकाओंके समान है। फिर सब जीवराशिका तृतीय अनन्तभागवृद्धिस्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे उसीमें प्रतिराशि करके मिलानेपर चतुर्थ अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है। यहांपर भी स्थानान्तर और

---

१ अ-आप्रत्योः 'तच्चेव' इति पाठः। २ प्रतिषु तम्हि चेव फद्दयसलागहि खंडिदेगखंडं फद्दयंतरं होदि। पुणो तम्हि चेव ट्ठाणे इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'फद्दयसलागाहि [दे] भागे' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुव्वं व कायव्वा । एवं णेयव्वं[1] जाव कंदयमेत्तअणंतभागवड्ढि-ट्ठाणाणि समत्ताणि त्ति ।

असंखेज्जभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ? ॥२०५॥

एदं पुच्छासुत्तं जहण्णपरित्तासंखेज्जमादिं कादूण जाव उक्कस्समसंखेज्जासंखेज्जे त्ति एदाणि [2]असंखेज्जसंखाट्ठाणाणि अवलंबिय ट्ठिदं । एवं पुच्छिदे उत्तरसुत्तेण परिहारो उच्चदे—

असंखेज्जलोगभागपरिवड्ढीए[3] एवदिया परिवड्ढी ॥२०६॥

असंखेज्जलोग इदि वुत्ते जिणदिट्ठभावाणमसंखेज्जाणं लोगाणं गहणं कायव्वं, विसिट्ठोवएसाभावादो । पढमअणंतभागवड्ढिकंदयस्स चरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे असंखेज्जलोगेहि भागे हिदे भागलद्धे तम्हि चेव पक्खित्ते पढमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । एसो पक्खेवो अविभागपडिच्छेदूणो[4] ट्ठाणंतरं होदि । एदं ट्ठाणंतरं हेट्ठिमट्ठाणंतरादो अणंतगुणं । को गुणगारो ? असंखेज्जलोगेहि ओवट्टिय रूवाहियसव्वजीवरासी । असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवं ठविय एत्थतणफद्दयसलागाहि ओवट्टिदे असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवस्स फद्दयंतरं होदि । एदं फद्दयंतरं हेट्ठिमपक्खेवफद्दयंतरादो अणंतगुणं । अणंतगुणत्तं कधं

स्पर्द्धकान्तरकी परीक्षा पहिलेके ही समान करनी चाहिये । इस प्रकार काण्डक मात्र अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके समाप्त होने तक ले जाना चाहिये ।

असंख्यातभागवृद्धि किस वृद्धिके द्वारा होती है ? ॥ २०४ ॥

यह पृच्छासूत्र जघन्य परीतासंख्यातसे लेकर उत्कृष्ट असंख्यातसंख्यात तक इन असंख्यात संख्याके स्थानोंका अवलम्बन करके स्थित है इस प्रकार पूछनेपर उत्तर सूत्रसे उसका परिहार कहते हैं—

उक्त वृद्धि असंख्यात लोक भागवृद्धि द्वारा होती है । इतनी मात्र वृद्धि होती है ॥ २०५ ॥

'असंख्यात लोक' ऐसा कहनेपर जिन भगवान्के द्वारा जिनका स्वरूप देखा गया है ऐसे असंख्यात लोकोंका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, इस सम्बन्धमें विशिष्ट उपदेशका अभाव है । प्रथम अनन्तभागवृद्धिकाण्डकके अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानमें असंख्यात लोकोंका भाग देनेपर जो लब्ध हो उसको उसीमें मिलानेपर असंख्यातभागवृद्धिका प्रथम स्थान उत्पन्न होता है । यह प्रक्षेप एक अविभागप्रतिच्छेदसे रहित होकर स्थानान्तर होता है । यह स्थानान्तर अधस्तन स्थानान्तरसे अनन्तगुणा है । गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोकोंसे अपवर्तित एक अधिक सब जीवराशि है । असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको स्थापित करके यहांकी स्पर्धकशलाकाओंसे अपवर्तित करनेपर असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपका स्पर्धकान्तर होता है । यह स्पर्धकान्तर अधस्तन प्रक्षेपके स्पर्धकान्तरसे अनन्तगुणा है ।

१ अप्रतौ 'एवं कोणेयव्वं' इति पाठः ।
२ अ-आप्रत्योः 'असंखेज्जासंखा' इति पाठः । ३ ताप्रतौ '—परिवड्ढी [ए]', इति पाठः ।
४ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः 'पडिछेदाणो' ताप्रतौ 'पडिच्छेदाणं' इति पाठः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

णव्वदे ? भागहारमाहप्पादो । तं जहा—हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिफद्दयसलागाहि रूवाहियसव्वजीवरासिं गुणेदूण चरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे फद्दयंतरं होदि । अणंतभागवड्ढिपक्खेवफद्दयसलागाहिंतो असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवफद्दयसलागाओ विसेसाहियाओ । केत्तियमेत्तेण ? असंखेज्जदिभागमेत्तेण । तत्तो संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवफद्दयसलागाओ विसेसाहियाओ । केत्तियमेत्तेण ? संखेज्जदिभागमेत्तेण । तत्तो संखेज्जगुणवड्ढिफद्दयसलागाओ संखेज्जगुणाओ । को गुणगारो ? संखेज्जा समया । तत्तो असंखेज्जगुणवड्ढीए फद्दयसलागाओ असंखेज्जगुणाओ । को गुणगारो ? असंखेज्जसमया । अणंतगुणवड्ढिफद्दयसलागाओ अणंतगुणाओ ।

पुणो एत्थ असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवसलागाहि असंखेज्जलोगे गुणिय चरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवस्स फद्दयंतरं होदि । हेट्ठिमफद्दयंतरेण उवरिमफद्दयंतरे भागे हिदे जं भागलद्धं सो गुणगारो । एदम्हादो असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणादो उवरिमकंदयमेत्तअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं परूवणा पुव्वं व कायव्वा । णवरि असंखेज्जभागवड्ढिफद्दयंतरट्ठाणंतरेहिंतो उवरिमअणंतभागवड्ढिपक्खेवाणं ट्ठाणंतरफद्दयंतराणि अणंतगुणवड्ढिहीणाणि । हेट्ठिमकंदयमेत्तमणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं [1]ट्ठाणंतरफद्दयंतरेहिंतो

शंका—वह उससे अनन्तगुणा है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह भागहारके माहात्म्यसे जाना जाता है । यथा—अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्पर्धक शलाकाओंसे एक अधिक सब जीवराशिको गुणित करके अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानमें भाग देनेपर स्पर्धकान्तर होता है ।

अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपकी स्पर्धकशलाकाओंसे असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपकी स्पर्धकशलाकायें विशेष अधिक हैं । कितने मात्र विशेषसे वे अधिक हैं ? वे असंख्यातवें भाग मात्रसे अधिक हैं । उनसे संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपकी स्पर्धकशलाकायें विशेष अधिक हैं । कितने मात्रसे वे अधिक हैं ? वे संख्यातवें भागमात्रसे अधिक हैं । उनसे संख्यातगुणवृद्धिप्रक्षेपकी स्पर्धकशलाकायें संख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात समय है । उनसे असंख्यातगुणवृद्धिकी स्पर्धकलाकायें असंख्यातगुणी हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात समय है । उनसे अनन्तगुणवृद्धिकी स्पर्धकशलाकायें अनन्तगुणी हैं ।

पुनः यहां असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपकी शलाकाओंसे असंख्यात लोकोंको गुणित करके अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानमें भाग देनेपर असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपका स्पर्धकान्तर होता है । अधस्तन स्पर्द्धकान्तरका उपरिम स्पर्धकान्तरमें भाग देनेपर जो लब्ध हो वह गुणकार होता है । इस असंख्यातभागवृद्धिस्थानसे ऊपरके काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थानोंकी प्ररूपणा पहिलेके समान करनी चाहिये । विशेष इतना है कि असंख्यातभागवृद्धिके स्पर्धकान्तरों और स्थानान्तरोंसे उपरिम अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपोंके स्थानान्तर और स्पर्धकान्तर अनन्तगुणवृद्धिसे हीन हैं । काण्डक प्रमाण अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके स्थानान्तरों और स्पर्धकान्तरोंसे ऊपरके काण्डक प्रमाण

१ अप्रतौ 'अणंतर-' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवरिमकंदयमेत्तअणंतभागवड्डिट्ठाणाणं ट्ठाणंतरफद्दयाणि असंखेज्जभागब्भहियाणि । एत्थ कारणं चिंतिय वत्तव्वं । विदियकंदयमेत्तअणंतभागवड्डिट्ठाणाणं चरिमट्ठाणे असंखेज्जलोगेहि भागे हिदे जं लद्धं तं तम्हि चेव पडिरासिय पक्खित्ते [1]विदियमसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणं[2] होदि । एदम्हादो पक्खेवादो एगाविभागपडिच्छेदे अवणिदे ट्ठाणंतरं होदि । एदं ट्ठाणंतरं हेट्ठिमासेसअणंतभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं । उवरिमासेसअणंतभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो वि अणंतगुणमेव । एत्थ कारणं जाणिय परूवेदव्वं । हेट्ठिमअसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणंतरादो एदं ट्ठाणंतरमसंखेज्जभागब्भहियं । [केत्तियमेत्तेण ?] एगअसंखेज्जभागवड्डिपक्खेवस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण । एवं फद्दयंतराणं परिक्खा कायव्वा । एवं कंदयमेत्तअसंखेज्जभागवड्डीणं जाणिदूण परूवणा कायव्वा । णवरि हेट्ठिमअणंतभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जभागवड्डिविसयम्हि ट्ठिदअणंतभागवड्डिट्ठाणाणं ट्ठाणंतरफद्दयंतराणि असंखेज्जभागब्भहियाणि । संखेज्जभागवड्डिविसयम्मि ट्ठिदाणं संखेज्जभागब्भहियाणि । संखेज्जगुणवड्डिविसयम्मि ट्ठिदाणं संखेज्जगुणब्भहियाणि । असंखेज्जगुणवड्डिविसयम्मि ट्ठिदाणं असंखेज्जगुणाणि । अणंतगुणवड्डिविसयम्मि ट्ठिदाणमणंतगुणाणि । एवमसंखेज्जभागवड्डि-संखेज्जभागवड्डि–संखेज्जगुणवड्डि–[असंखेज्जगुणवड्डि–] अणंतगुणवड्डिट्ठाणाणं

अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके स्थानान्तर और स्पर्धकान्तर असंख्यातवें भागसे अधिक हैं । यहां कारणको विचारकर कहना चाहिये । काण्डक प्रमाण द्वितीय अनन्तभागवृद्धिके स्थानोंमेंसे अन्तिम स्थानमें असंख्यात लोकोंका भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे उसीमें प्रतिराशि करके मिलानेपर असंख्यातभागवृद्धिका द्वितीय स्थान होता है । इस प्रक्षेपमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्थानान्तर होता है । यह स्थानान्तर अधस्तन समस्त अनन्तभागवृद्धि स्थानान्तरों से अनन्तगुणा है । वह उपरिम समस्त अनन्तभागवृद्धिस्थानोंसे भी अनन्तगुणा ही है । यहां कारण जानकर बतलाना चाहिये । अधस्तन असंख्यातभागवृद्धिस्थानान्तरसे यह स्थानान्तर असंख्यातवें भागसे अधिक है । [कितने मात्रसे वह अधिक है ?] एक असंख्यातभागवृद्धि प्रक्षेपके असंख्यातवें भाग मात्रसे अधिक है । इस प्रकार स्पर्द्धकान्तरोंकी परीक्षा करनी चाहिये । इस प्रकार काण्डकप्रमाण असंख्यातभागवृद्धियोंकी जानकर प्ररूपणा करना चाहिये । विशेष इतना है कि अधस्तन अनन्तभागवृद्धि स्थानान्तरोंसे असंख्यातभागवृद्धिके विषयमें स्थित अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर असंख्यातवें भागसे अधिक हैं । संख्यातभागवृद्धिके विषयमें स्थित उनके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर संख्यातवें भागसे अधिक हैं । संख्यातगुणवृद्धिके विषयमें स्थित उनके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर संख्यातगुणे अधिक हैं । असंख्यातगुणवृद्धिके विषयमें स्थित उनके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर असंख्यातगुणे हैं । अनन्तगुणवृद्धिके विषयमें स्थित उनके स्थानान्तर और स्पर्द्धकान्तर अनन्तगुणे हैं । इस प्रकार असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, [असंख्यातगुणवृद्धि]

१ ताप्रतौ 'लद्धं तम्हि चेव पक्खित्ते पडिरासिय विदिय- इति पाठः । २ प्रतिषु 'वड्डिट्ठाणाणं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठाणंतरफद्दयंतराणं च पंच-चदु-तिण्णि-दु-एगविहवड्ढीयो जहाकमेण वत्तव्वाओ। एवमसंखेज्ज-लोगमेत्तछट्ठाणम्मि ट्ठिदअसंखेज्जभागवड्ढीणं परूवणा कायव्वा।

संखेज्जभागवड्ढी काए परिवड्ढीए ॥ २०७ ॥

एदं पुच्छासुत्तं दोण्णि आदिं कादूण जाव उक्कस्ससंखेज्जयं ति ताव एदाणि संखेज्जवियप्पट्ठाणाणि अवेक्खदे[1]। एदस्स णिण्णयत्थं उत्तरसुत्तं भणदि—

जहण्णयस्स असंखेज्जयस्स रूवूणयस्स संखेज्जभागपरिवड्ढी, एवदिया परिवड्ढी ॥ २०८ ॥

'जहण्णयस्स असंखेज्जयस्स रूवूणयस्स' इदि भणिदे उक्कस्सं संखेज्जयं घेत्तव्वं। उज्जुएण उक्कस्ससंखेज्जेण इत्ति अभणिदूण सुत्तगउरवं कादूण किमट्ठं उच्चदे 'जहण्णयस्स[2] असंखेज्जयस्स रूवूणयस्स' इत्ति? उक्कस्ससंखेज्जयस्स पमाणेण सह संखेज्जभागवड्ढीए पमाणपरूवणट्ठं। परियम्मादो उक्कस्ससंखेज्जयस्स पमाणमवगदमिदि ण पच्चवट्ठाणं कादुं जुत्तं, तस्स सुत्तत्ताभावादो। एदस्स णिस्सेसस्स आइरियाणुग्गहणेण पदत्तिणिग्गयस्स एदम्हादो पुधत्तविरोहादो वा ण तदो उक्कस्ससंखेज्जयस्स पमाणसिद्धी। एदेण उक्कस्ससंखेज्जेण रूवाहियकंदएण गुणिदकंदयमेत्ताणमणंतभागवड्ढीणं चरिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणे भागे हिदे जं भाग-

और अनन्तगुणवृद्धि स्थानोंके स्थानान्तरों और स्पर्द्धकान्तरोंके यथाक्रमसे, पांच, चार, तीन, दो और एक वृद्धियां कहनी चाहिये। इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानमें स्थित असंख्यातभागवृद्धियोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये।

संख्यातभागवृद्धि किस वृद्धि द्वारा वृद्धिको प्राप्त होती है? ॥ २०७ ॥

यह पृच्छासूत्र दो से लेकर उत्कृष्ट संख्यात तक इन संख्यात विकल्पोंकी अपेक्षा करता है इसके निर्णयके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

एक कम जघन्य असंख्यातको वृद्धिसे संख्यातभागवृद्धि होती है। इतनी वृद्धि होती है ॥ २०८ ॥

'एक कम जघन्य असंख्यात' के कहनेपर उत्कृष्ट संख्यातको ग्रहण करना चाहिये।

शंका— सीधेसे उत्कृष्ट संख्यात न कहकर सूत्रको बड़ा करके 'एक कम जघन्य असंख्यात' ऐसा किसलिये कहा जा रहा है?

समाधान— उत्कृष्ट संख्यातके प्रमाणके साथ संख्यातभागवृद्धिके प्रमाणकी प्ररूपणा करनेके लिये वैसा कहा गया है। यदि कहा जाय कि उत्कृष्ट संख्यातका प्रमाण परिकर्मसे अवगत है, तो ऐसा प्रत्यवस्थान करना योग्य नहीं है, क्योंकि, उसमें सूत्ररूपता नहीं है। अथवा, आचार्यके अनुग्रहसे परिपूर्ण होकर पद रूपसे निकले हुए इस परिकर्मके चूंकि इससे पृथक् होनेका विरोध है, अतएव भी उससे उत्कृष्ट संख्यातका प्रमाण सिद्ध नहीं होता।

इस उत्कृष्ट संख्यातका एक अधिक काण्डकसे गुणित काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियोंसे

१ अ-आ-ताप्रतिषु 'उवेक्खदे' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'वुच्चदे? जहण्णयस्स' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

लद्धं तं तम्हि चेव पडिरासिय पक्खित्ते पढमसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणमुप्पज्जदि । एदम्हादो एगाविभागपडिच्छेदे अवणिदे ट्ठाणंतरं होदि । एदं हेट्ठिमअणंतभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं । असंखेज्जभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं । उवरिमअणंतगुणवड्डीए हेट्ठिम-अणंतभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं । असंखेज्जगुणवड्डीए हेट्ठिमअसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणंत-रेहिंतो असंखेज्जगुणं । अणंतगुणवड्डीए हेट्ठिमसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो संखेज्जभागहीणं संखेज्जगुणहीणं असंखेज्जगुणहीणं वा । एवं फद्दयंतराणं पि थोवबहुत्तं जाणिय वत्तव्वं । असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणब्भंतरे ट्ठिदसंखेज्जभागवड्डीणमेवं चेव परूवणा कायव्वा ।

संखेज्जगुणपरिवड्डी काए परिवड्डीए ? ॥२०९॥

सुगमं ।

जहण्णयस्स असंखेज्जयस्स रूवूणयस्स संखेज्जगुणपरिवड्डी, एवदिया परिवड्डी ॥२१०॥

कंदयमेत्तसंखेज्जभागवड्डीयो गंतूण पुणो उवरि संखेज्जभागवड्डिविसयम्मि ट्ठिद-चरिमअणंतभागवड्डिट्ठाणे उक्कस्ससंखेज्जेण गुणिदे संखेज्जगुणवड्डी होदि । पुणो हेट्ठिमट्ठाणम्मि पडिरासिदम्मि इमाए वड्डीए पक्खित्ताए पढमं संखेज्जगुणवड्डिट्ठाणं होदि । उक्कस्ससंखेज्ज-मेत्तउव्वंकेसु एगाविभागपडिच्छेदे अवणिदे ट्ठाणंतरं [होदि । एदं ट्ठाणंतरं]हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणं-

---

अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे उसमें ही प्रतिराशि करके मिलानेपर संख्यातभागवृद्धिका प्रथम स्थान उत्पन्न होता है । इसमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्थानान्तर होता है । यह अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा है । असंख्यात-भागवृद्धि स्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा है । उपरिम अनन्तगुणवृद्धिके अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थाना-न्तरोंसे अनन्तगुणा है । असंख्यातगुणवृद्धिके अधस्तन असंख्यातभागवृद्धि स्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा है । अनन्तगुणवृद्धिके अधस्तन संख्यातभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे संख्यातवें भागसे हीन, संख्यातगुणा हीन अथवा असंख्यातगुणा हीन है । इस प्रकार स्पर्द्धकान्तरोंके भी अल्पबहुत्वको जानकर कहना चाहिये । असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंके भीतर स्थित संख्यातभागवृद्धियोंकी इसी प्रकार ही प्ररूपणा करनी चाहिये ।

संख्यातगुणवृद्धि किस वृद्धिसे वृद्धिंगत है ? ॥ २०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह एक कम जघन्य असंख्यातकी वृद्धिसे वृद्धिंगत है । इतनी मात्र वृद्धि होती है ॥ २१० ॥

काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियाँ जाकर फिर आगे संख्यातभागवृद्धिके विषयमें स्थित अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानको उत्कृष्ट संख्यातसे गुणित करनेपर संख्यातगुणवृद्धि होती है । फिर प्रतिराशिभूत अधस्तन स्थानमें इस वृद्धिको मिलानेपर प्रथम संख्यातगुणवृद्धिस्थान होता है । उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण ऊर्वकोंमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्थानान्तर होता है । यह

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

तरेहिंतो अणंतगुणं। चत्तारिअंकट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। पंचंकट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। उवरिमअट्ठंक-हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं। पढमछट्ठाणम्हि उवरिमपढमसत्तंकादो हेट्ठिमचत्तारिअंकट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। बिदियसंखेज्जगुणवड्ढीए हेट्ठिमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणंतरेहिंतो संखेज्जगुणं संखेज्जभागहीणं संखेज्जगुणहीणं असंखेज्जगुणहीणं वा। इमं चेव संखेज्जगुणवड्ढिं उक्कस्ससंखेज्जमेत्तउव्वंकं संखेज्जगुणवड्ढिअब्भंतरफद्दयसलागाहि ओवट्टिय रूवे अवणिदे फद्दयंतरं होदि। एदं हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिपक्खेवफद्दयंतरेहिंतो अणंतगुणं। चत्तारिअंकफद्दयंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। पंचंकपक्खेवफद्दयंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं। एवमुवरिमफद्दयंतरेहि वि सह जाणिदूण सण्णियासो कायव्वो। एवमसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणब्भंतरे ट्ठिदसंखेज्जगुणवड्ढीणं परूवणा कायव्वा। एत्थ गंथबहुत्तभएण जण्ण लिहिदं तमेदेण उवदेसेण भणिय गेण्हियव्वं।

असंखेज्जगुणपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ॥२११॥

सुगमं।

असंखेज्जलोगगुणपरिवड्ढी, एवदिया परिवड्ढी ॥२१२॥

कंदयमेत्तछअंकेसु गदेसु समयाविरोहेण वड्ढिदउवरिमछअंकविसयम्मि ट्ठिदचरिमउव्वंके असंखेज्जेहि लोगेहि गुणिदे असंखेज्जगुणवड्ढी उप्पज्जदि। उव्वंकं पडिरासिय

स्थानान्तर अधस्तन ऊर्वंक स्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा, चतुरंक स्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा, पंचांक स्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा, उपरिम अष्टांक और अधस्तन ऊर्वंकस्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा, प्रथम षट्स्थानमें उपरिम सप्तांकसे व अधस्तन चतुरंकस्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा तथा द्वितीय संख्यातगुणवृद्धिसे अधस्तन संख्यातभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे संख्यातगुणा, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणाहीन अथवा असंख्यातगुणा हीन है। इसी संख्यातगुणवृद्धिको उत्कृष्ट संख्यात मात्र ऊर्वंकको संख्यातगुणवृद्धिके भीतर स्पर्द्धकशलाकाओंसे अपवर्तित कर एक अंकके कम करनेपर स्पर्द्धकान्तर होता है। यह अधस्तन अनन्तभागवृद्धि प्रक्षेपस्पर्द्धकान्तरोंसे अनन्तगुणा, चतुरंकस्पर्द्धकान्तरोंसे असंख्यातगुणा और पंचांकप्रक्षेपस्पर्द्धकान्तरोंसे असंख्यातगुणा है। इसी प्रकार उपरिम स्पर्द्धकान्तरोंके भी साथ जानकर तुलना करनी चाहिये। इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंके भीतर स्थित संख्यातगुणवृद्धियोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये। यहाँ ग्रन्थविस्तारके भयसे जो नहीं लिखा गया है उसे इस उपदेशसे कहकर ग्रहण करना चाहिये।

असंख्यातगुणवृद्धि किस वृद्धिके द्वारा वृद्धिंगत है ? ॥ २११ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह असंख्यात लोकोंसे वृद्धिंगत है। इतनी वृद्धि होती है ॥ २१२ ॥

काण्डक प्रमाण छह अंकोंके बीतनेपर यथाविधि वृद्धिको प्राप्त उपरिम षडंकके विषयमें स्थित अन्तिम ऊर्वंकको असंख्यात लोकोंसे गुणित करनेपर असंख्यातगुणवृद्धि उत्पन्न होता है। ऊर्वंकको

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तत्थ तम्मि पक्खित्ते असंखेज्जगुणवड्डिट्ठाणं होदि । असंखेज्जगुणवड्डीए एगाविभागपडिच्छेदे अवणिदे ट्ठाणंतरं होदि । एदं हेट्ठिमअणंतभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं । असंखेज्जभागवड्डि-संखेज्जभागवड्डि-संखेज्जगुणवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं । उवरिमगुणवड्डिट्ठाणादो हेट्ठिमअणंतभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो अणंतगुणं। असंखेज्जभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणं । संखेज्जभागवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो संखेज्जगुणं संखेज्जभागहीणं संखेज्जगुणहीणं असंखेज्जगुणहीणं वा । संखेज्जगुणवड्डि-असंखेज्जगुणवड्डिट्ठाणंतरेहिंतो असंखेज्जगुणहीणं । उवरि जाणिय णेयव्वं । इमाए असंखेज्जगुणवड्डीए एत्थतणफद्दयसलागाहि ओवट्टिदाए फद्दयं होदि । एत्थ एगाविभागपडिच्छेदे अवणिदे फद्दयंतरं होदि । एदं पि हेट्ठिम-उवरिमफद्दयंतरेहि सह सण्णिकासिदव्वं ।

अणंतगुणपरिवड्डी काए परिवड्डीए ? ॥२१३॥

सुगमं ।

सव्वजीवेहि अणंतगुणपरिवड्डी, एवदिया परिवड्डी ॥२१४॥

हेट्ठिमउव्वंके सव्वजीवरासिणा गुणिदे अणंतगुणवड्डी होदि । तं चेव पडिरासिय अणंतगुणवड्डिं पक्खित्ते अणंतगुणवड्डिट्ठाणं होदि । एदाए चेव वड्डीए अणंतगुणवड्डिफद्दयसलागाहि ओवट्टिदाए फद्दयं होदि । एत्थ वि ट्ठाणंतर-फद्दयंतरसण्णिकासो कायव्वो ।

प्रतिराशि करके उसमें उसे मिलानेपर असंख्यातगुणवृद्धिस्थान होता है। असंख्यातगुणवृद्धिमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्थानान्तर होता है । यह अधस्तन अनन्तभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा; असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिस्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा, उपरिम गुणवृद्धिस्थानसे नीचेके अनन्तभागवृद्धिस्थानान्तरोंसे अनन्तगुणा, असंख्यातभागवृद्धि स्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा, संख्यातभागवृद्धि स्थानान्तरोंसे संख्यातगुणा, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन अथवा असंख्यातगुणहीन, तथा संख्यातगुणवृद्धि व असंख्यातगुणवृद्धिस्थानान्तरोंसे असंख्यातगुणा हीन है । आगे जानकर ले जाना चाहिये । इस असंख्यातगुणवृद्धिको यहाँकी स्पर्द्धकशलाकाओंसे अपवर्तित करनेपर स्पर्द्धक होता है। इसमेंसे एक अविभागप्रतिच्छेदके कम करनेपर स्पर्द्धकान्तर होता है । इसकी भी अधस्तन व उपरिम स्पर्द्धकान्तरोंके साथ तुलना करनी चाहिये ।

अनन्तगुणवृद्धि किस वृद्धिसे वृद्धिंगत है ? ॥ २१३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अनन्तगुणवृद्धि सब जीवोंसे वृद्धिंगत है । इतनी मात्र वृद्धि होती है ॥ २१४ ॥

अधस्तन ऊर्वकको सब जीवराशिसे गुणा करनेपर अनन्तगुणवृद्धि होती है । उसीको प्रतिराशि करके अनन्तगुणवृद्धिको मिलानेपर अनन्तगुणवृद्धिस्थान होता है । इसी वृद्धिको अनन्तगुणवृद्धि स्पर्द्धकशलाकाओंसे अपवर्तित करनेपर स्पर्द्धक होता है । यहाँपर भी स्थानान्तर और स्पर्द्ध-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवमसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणट्ठिदअणंतगुणवड्डीणं परूवणा कायव्वा । एदेण सुत्तेण अणंत-रोवणिधा परूविदा ।

संपधि एदेणेव देसामासियभावेण सूचिदं परंपरोवणिधं भणिस्सामो । तं जहा—जहण्णट्ठाणे सव्वजीवरासिणा भागे हिदे जं भागलद्धं तम्मि जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते पढममणंतभागवड्डिट्ठाणं होदि । पुणो विदियै अणंतभागवड्डिट्ठाणे भण्णमाणे पढमअणंतभागवड्डिट्ठाणम्मि वड्डिदपक्खेवे अवणिदे जहण्णट्ठाणं होदि । पुणो सव्वजीव-रासिं विरलिय जहण्णट्ठाणे समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स पक्खेवपमाणं पावदि । पुणो अवणिदपक्खेवं पि एदिस्से विरलणाए समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स सव्वजीवरासिणा सगलपक्खेवं खंडेदूण एगखंडपमाणं पावदि । पुणो एदस्स सगलपक्खेवअणंतिमभागस्स पिसुल इत्ति सण्णा होदि । पुणो एत्थ एगरूवं हेट्ठिमसग-लपक्खेवमेगपिसुलं च घेत्तूण पढमअणंतभागवड्डिट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते विदियमणंत-भागवड्डिट्ठाणमुप्पज्जदि ।

संपहि जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण विदियमणंतभागवड्डिट्ठाणं दोहि पक्खेवेहि एगपिसु-लेण च अहियं होदि त्ति । एदमधियपमाणं जहण्णट्ठाणादो आणिज्जदे । तं जहा—सव्वजीवरासिअद्धं विरलेदूण जहण्णट्ठाणाणं समखंडं करिय दिण्णे रूवं पडि दो-दोपक्खेव-

---

कान्तरोंसे तुलना करनी चाहिये । इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें स्थित अनन्तगुण-वृद्धियोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये । इस सूत्रके द्वारा अनन्तरोपनिधाकी प्ररूपणा की गई है ।

अब इसी सूत्रके द्वारा देशामर्शक रूपसे सूचित परंपरोपनिधाको कहते हैं । इस प्रकार है—जघन्य स्थानमें सब जीवराशिका भाग देनेपर जो लब्ध हो उसको जघन्य स्थानको प्रतिराशि करके मिलाने पर प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है । पुनः द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थानकी प्ररूपणामें प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानमेंसे वृद्धिप्राप्त प्रक्षेपको कम करनेपर जघन्य स्थान होता है । पुनः सब जीवराशिका विरलन करके जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है । अब कम किये गये प्रक्षेपको भी इस विरलनके समान खण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति सब जीवराशिसे सकल प्रक्षेपको खण्डित कर एक खण्ड प्रमाण प्राप्त होता है । सकलप्रक्षेपके अनन्तवें भाग प्रमाण इसकी पिशुल संज्ञा है । यहाँ एक अंक, अधस्तन सकल प्रक्षेप और एक पिशुलको भी ग्रहण करके प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानको प्रतिराशि कर मिला देनेपर द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है ।

अब जघन्य स्थानकी अपेक्षा द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान दो प्रक्षेपों और एक पिशुलसे अधिक होता है । जघन्य स्थानसे इस अधिकताके प्रमाण को लाते हैं । यथा—सब जीवराशिके अर्ध भागका विरलन कर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकसे प्रति दो दो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पमाणं पावदि । पुणो एदेसिमुवरि एगपिसुलागमणमिच्छामो त्ति दुगुणसव्वजीवरासिं हेट्ठा विरलेदूण उवरिमविरलणाए एगरूवधरिददोपक्खेवे घेत्तूण समखण्डं कादूण दिण्णे विरलिदरूवं पडि एगेगपिसुलपमाणं पावदि । पुणो एत्थ एगेगपिसुलं घेत्तूण उवरिमविरलणाए एगरूवधरिददोपक्खेवेसु दिण्णे हेट्ठिमविरलणमेत्तद्धाणं गंतूण एगरूवपरिहाणी दिस्सदि । एदस्स पिसुलस्स दोहि पक्खेवेहि सह आगमणे इच्छिज्जमाणे दुगुणं रूवाहियं सव्वजीवरासिं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो सव्वजीवरासिअद्धम्मि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स चदुब्भागो किंचूणं आगच्छदि । केत्तियेणूणो[1] ? एगरूवस्स अणंतिमभागेण । संपधि एदम्मि किंचूणेगरूवचदुब्भागे उवरिमविरलणाए सव्वजीवरासिदुभागमेत्ताए अवणिदे सेसं किंचूणं सव्वजीवरासिअद्धं भागहारो होदि । पुणो एदेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे एगपिसुलसहिददोपक्खेवा आगच्छंति । एदेसु जहण्णट्ठाणस्सुवरि पक्खित्तेसु विदियमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि ।

संपहि तदियअणंतभागवड्ढिट्ठाणं भणिस्सामो । तं जहा— विदियट्ठाणम्मि एगपिसुले दोपक्खेवेसु अवणिदेसु जहण्णट्ठाणं होदि । तम्मि सव्वजीवरासिणा भागे हिदे

प्रक्षेपोंका प्रमाण प्राप्त होता है। अब इनके ऊपर चूँकि एक पिशुलका लाना अभीष्ट है, अतएव दुगुणी सब जीवराशिका नीचे विरलन कर उपरिम विरलन राशिके एक अंकके प्रति प्राप्त दो प्रक्षेपोंको ग्रहण कर समखण्ड करके देनेपर विरलित अंकके प्रति एक एक पिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इनमेंसे एक एक पिशुलको ग्रहण कर उपरिम विरलनके एक अंकके प्रति दो प्रक्षेपोंमें देनेपर अधस्तन विरलन मात्र अध्वान जाकर एक अंककी हानि देखी जाती है। इस पिशुलके दो प्रक्षेपोंके साथ लानेकी इच्छा करनेपर एक अधिक दुगुणी सब जीवराशि जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जावेगी तो सब जीवराशिके आधेमें क्या प्राप्त होगा, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम चतुर्थ भाग आता है।

शंका—वह कितना कम ?

समाधान—वह एक अंकके अनन्तवें भागसे कम है।

अब एक अंकके कुछ कम इस चतुर्थ भागको सब जीवराशिके अर्ध भाग प्रमाण उपरिम विरलनमेंसे कम कर देनेपर शेष कुछ कम सब जीवराशिका अर्ध भाग भागहार होता है। इसका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर एक पिशुल सहित दो प्रक्षेप आते हैं। इनको जघन्य स्थानके ऊपर मिलानेपर द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है।

अब तृतीय अनन्तभागवृद्धिस्थानकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—द्वितीय स्थानमेंसे एक पिशुल और दो प्रक्षेपोंको कम करनेपर जघन्य स्थान होता है। उसमें सब जीवराशिका

---

१ ताप्रतौ 'केत्तिएणूणो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगपक्खेवो आगच्छादि । इमं पुध ट्ठविय पुणो तेणेव सव्वजीवरासिणा दोपक्खेवेसु भागे हिदेसु दोपिसुलाणि आगच्छंति । पुणो एदाणि दो वि पिसुलाणि पुव्विल्लपक्खेवपस्से ठविय पुणो तेणेव भागहारेण एगपिसुले भागे हिदे एगं पिसुलापिसुलमागच्छदि । पुणो एगपक्खेवं दोपिसुलाणि एगं पिसुलापिसुलं च घेत्तूण विदियवड्ढिट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते तदियं वड्ढिट्ठाणं होदि । एदं तदियवड्ढिट्ठाणं जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण तीहि पक्खेवेहि तीहि पिसुलेहि एगेण पिसुलापिसुलेण च अहियं होदि ।

पुणो एदेसिं जहण्णट्ठाणादो आणयणविधिं भणिस्सामो । तं जहा—सव्वजीवरासितिभागं विरलिय जहण्णट्ठाणं समखण्डं करिय दिण्णे विरलिदरूवं पडि तिण्णि-तिण्णिपक्खेवपमाणं पावदि । पुणो एदिस्से[1] विरलणाए हेट्ठा सव्वजीवरासिं विरलेदूण उवरिमविरलणाए एगरूवधरिदं समखण्डं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स तिण्णि-तिण्णि-पिसुलपमाणं पावदि । पुणो एदिस्से विरलणाए हेट्ठा तिगुणं सव्वजीवरासिं विरलेदूण मज्झिमविरलणाए एगरूवधरिदं घेत्तूण समखण्डं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेग-पिसुलापिसुलपमाणं पावदि । पुणो तिगुणं सव्वजीवरासिं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूव-परिहाणी लब्भदि तो सव्वरासिमेत्तमज्झिमविरलणम्हि कि लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स तिभागो किंचूणो आगच्छदि । पुणो इमं सव्वजी-

भाग देनेपर एक प्रक्षेप आता है। इसको पृथक् स्थापित करके उसी सब जीवराशिका दो प्रक्षेपोंमें भाग देनेपर दो पिशुल आते हैं। फिर इन दोनों ही पिशुलोंको पूर्व प्रक्षेपके पासमें स्थापित कर फिरसे उसी भागहारका एक पिशुलमें भाग देनेपर एक पिशुलापिशुल आता है। पुनः एक प्रक्षेप, दो पिशुल और एक पिशुलापिशुलको ग्रहणकर द्वितीय वृद्धिस्थानको प्रतिराशि करके मिलानेपर तृतीय वृद्धिस्थान होता है। यह तृतीय वृद्धिस्थान जघन्य स्थानकी अपेक्षा तीन प्रक्षेपों, तीन पिशुलों और एक पिशुलापिशुलसे अधिक होता है।

अब इनकी जघन्य स्थानसे लानेकी विधि कहते हैं। वह इस प्रकार है—सब जीवराशिके तृतीय भागका विरलन कर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर विरलित अंकके प्रति तीन-तीन प्रक्षेपोंका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इस विरलनके नीचे सब जीवराशिका विरलनकर उपरिम विरलन राशिके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति तीन-तीन पिशुलोंका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इस विरलनके नीचे तिगुणी सब जीवराशिका विरलन कर मध्यम विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको ग्रहणकर समखण्ड करके देनेपर एक-एक अंकके प्रति एक एक पिशुलापिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है। अब एक अधिक तिगुणी सब जीवराशि जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो सब जीवराशि प्रमाण मध्यम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम

१ ताप्रतौ 'एदेसिं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वरासिम्हि सोहिय सुद्धसेसं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिम-विरलणाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए अणंतभागहीणो एगरूवस्स तिभागो आगच्छदि । एदं सव्वजीवरासितिभागम्मि सोहिय सुद्धसेसेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे तिण्णि पक्खेवाणि तिण्णि पिसुलाणि एगं पिसुलापिसुलं च आगच्छदि । पुणो एदम्मि जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते तदियं वड्डिट्ठाणमुप्पज्जदि । एदेण बीजपदेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तउव्वंकट्ठाणाणं पुध पुध परूवणा कायव्वा जाव पढमअसंखेज्जभागवड्डीए हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणे त्ति ।

पुणो कंदयमेत्तद्धाणं गंतूण ट्ठिदचरिमअणंतभागवड्डिट्ठाणस्स भागहारपरूवणा कीरदे । तं जहा—तत्थ एगकंदयमेत्तपक्खेवा अत्थि, एगादिएगुत्तरकमेण पक्खेववुड्डिदंसणादो । रूवूणकंदयस्स संकलणमेत्तपिसुलाणि अत्थि, पढममणंतभागवड्डिट्ठाणं मोत्तूण उवरि संकलणागारेण पिसुलाणं वड्डिदंसणादो । दुरूवूणकंदयस्स संकलणासंकलणमेत्तपिसुलापिसुलाणि अत्थि, तदियअणंतभागवड्डिट्ठाणप्पहुडि उवरि संकलणासंकलणसरूवेण पिसुलापिसुलाणं वड्डिदंसणादो । तिरूवूणकंदयस्स तदियवारसंकलणमेत्तचुण्णियाओ अत्थि, चउट्ठाणप्पहुडि तदियवारसंकलणाकमेण चुण्णियाणं वड्डिदंसणादो । एवं कंदयगच्छो एगादिएगुत्तरकमेण हायमाणो गच्छदि जाव एगरूवावसेसो त्ति । पक्खेवा एगा-

---

एक तृतीय भाग आता है । इसको सब जीवराशियोंमेंसे कम करके जो शेष रहे उसमें एक अधिक जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका अनन्तवें भागसे हीन तृतीय भाग आता है । इसको सब जीवराशिके तृतीय भागमेंसे कम करके शेषका जघन्यस्थानमें भाग देनेपर तीन प्रक्षेप, तीन पिशुल और एक पिशुलापिशुल आता है । अब इसे जघन्य स्थानको प्रतिराशिकर उसमें मिला देनेपर तृतीय वृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । इस बीजपदसे प्रथम असंख्यातभागवृद्धिके अधस्तन ऊर्वंक स्थान तक अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र ऊर्वंकस्थानोंकी पृथक् पृथक् प्ररूपणा करना चाहिये ।

अब काण्डक प्रमाण अध्वान जाकर स्थित अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानके भागहारकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—उसमें एक काण्डक प्रमाण प्रक्षेप हैं, क्योंकि, एकको आदि लेकर उत्तरोत्तर एक एक अधिक क्रमसे प्रक्षेपकी वृद्धि देखी जाती है । एक कम काण्डकके संकलन प्रमाण पिशुल हैं, क्योंकि, प्रथम अनन्तभागवृद्धिस्थानको छोड़कर आगे संकलनके आकारसे पिशुलोंकी वृद्धि देखी जाती है । दो कम काण्डकके दो बार संकलन प्रमाण पिशुलापिशुल हैं, क्योंकि, तृतीय अनन्तभागवृद्धिस्थानसे लेकर आगे दो बार संकलन स्वरूपसे पिशुलापिशुलोंकी वृद्धि देखी जाती है । तीन कम काण्डकके तीन बार संकलन प्रमाण चूर्णिकायें हैं, क्योंकि, चतुर्थ स्थानसे लेकर तीन बार संकलनके क्रमसे चूर्णिकाओंकी वृद्धि देखी जाती है । इस प्रकार काण्डकगच्छ एकको आदि लेकर एक एक अधिक क्रमसे हीन होता हुआ एक रूप शेष रहने तक जाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिकमेण, पिसुलाणि संकलणसरूवेण, पिसुलापिसुलाणि विदियवारसंकलणसरूवेण, चुण्णियाओ तिण्णिवारसंकलणासरूवेण, चुण्णाचुण्णियाओ चउत्थवारसंकलणसरूवेण, भिण्णाओ पंचमवारसंकलणसरूवेण, भिण्णाभिण्णाओ छट्ठवारसंकलणसरूवेण गच्छंति। एवं छिण्ण-छिण्णाछिण्ण-तुट्ट-तुट्टतुट्ट-दलिद-दलिददलिदादीणं पि णेदव्वं। एदेसिमाणयणसुत्तं—

(एकोत्तरपदवृद्धो रूपाद्यैर्भाजितश्च पदवृद्धैः। गच्छसंपातफलं [1]समाहतस्सन्निपातफलम्[2] ॥)

संपहि एदेसिं सव्वेसिं पि जहण्णट्ठाणादो आणयणविहाणं वुच्चदे। तं जहा— पढमकंदएणोवट्टिदसव्वजीवरासिं विरलिय जहण्णट्ठाणं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स कंदयमेत्ता सयलपक्खेवा पावेंति। पुणो एदिस्से विरलणाए हेट्ठा रूवूणकंदयद्धेणोवट्टिदसव्वजीवरासिं विरलेदूण उवरिमविरलणाए एगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स रूवूणकंदयस्स संकलणमेत्तपिसुलाणि पावेंति। पुणो एदिस्से विदियविरलणाए हेट्ठा रूवूणकंदयसंकलणगुणिदसव्वजीवरासिं दुरूवूणकंदयस्स विदियवारसंकलणाए ओवट्टिय लद्धं विरलेदूण विदियविरलणाए एगरूवधरिदं समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स दुरूवूणकंदयस्स विदियवारसंकलणामेत्तपिसुलापिसुलाणि पावेंति। एवं कंदयमे-

---

है। प्रक्षेप एक आदि क्रमसे, पिशुल संकलन स्वरूपसे, पिशुलापिशुल द्वितीय वार संकलन स्वरूपसे, चूर्णिकायें तीन वार संकलन स्वरूपसे, चूर्णाचूर्णिकायें चतुर्थ वार संकलन स्वरूपसे, भिन्न पंचम वार संकलन स्वरूपसे तथा भिन्नाभिन्न छठे वार संकलन स्वरूपसे जाते हैं। इसी प्रकार छिन्न, छिन्नाछिन्न, त्रुटित, त्रुटितात्रुटित, दलित और दलितादलित आदिकोंके भी ले जाना चाहिये। इनके लानेका सूत्र —

एक एक अधिक होकर पद प्रमाण वृद्धिगत गच्छको पद प्रमाण वृद्धिको प्राप्त हुए एक आदि अंकोंसे भाजित करनेपर संपातफल अर्थात् एक संयोगी भंगोंका प्रमाण आता है। इनको परस्पर गुणित करनेसे सन्निपातफल अर्थात् द्विसंयोगी आदि भंग आते हैं ॥

अब इन सभीके जघन्य स्थानसे लानेकी विधिका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है— प्रथम काण्डकसे अपवर्तित सब जीवराशिका विरलन करके जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति काण्डक प्रमाण सकलप्रक्षेप प्राप्त होते हैं। फिर इस विरलनके नीचे एक कम काण्डकके अर्ध भागसे अपवर्तित सब जीवराशिका विरलनकर उपरिम विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक कम काण्डकके संकलन प्रमाण पिशुल प्राप्त होते हैं। फिर इस द्वितीय विरलनके नीचे एक कम काण्डकके संकलनसे गुणित सब जीवराशिको दो कम काण्डकके द्वितीय वार संकलनसे अपवर्तित कर लब्धका विरलन करके द्वितीय विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देने पर एक अंकके प्रति दो कम काण्डकके द्वितीय वार संकलन प्रमाण पिशुलापिशुल प्राप्त होते हैं। इस प्रकार काण्डक प्रमाण विरलन राशियोंको जान करके

---

१ अ-आप्रत्योः 'समाहितः' इति पाठः। २ अ-आ-प्र० ५ पृ० १९३, क० पा० २, पृ० ३००।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

त्ताओ विरलणाओ जाणिदूण विरलेदव्वाओ। तत्थ चउत्थादिविरलणाओ अप्पहाणाओ त्ति छोड्डिदूण तदिय-विदिय-पढमाणं पक्खेवंसाणमाणयणं वुच्चदे। तं जहा—रूवाहियतदियविरलणमेत्तद्धाणं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स किंचूण-बे-तिभागो आगच्छदि। तम्मि मज्झिमविरलणाए अवणिय रूवाहियं काऊण ताए फलगुणिदमिच्छमोवट्टिय लद्धं किंचूणरूवस्सद्धं उवरिमविरलणाए अवणिदाए जहण्णट्ठाणे भागे हिदे लद्धं जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते चत्तारिअंकस्स हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणं होदि। पुणो तं ट्ठाणमसंखेज्जेहि लोगेहि ओवट्टिय तम्मि चेव पडिरासीकदे पक्खित्ते असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि।

संपहि जहण्णट्ठाणादो असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं उप्पाइज्जदे। तं जहा—चत्तारिअंकदो हेट्ठिमउव्वंकम्हि कंदयमेत्तअणंतभागवड्ढिपक्खेवेसु रूवूणकंदयस्स संकलणमेत्तपिसुलेसु दुरूवूणकंदयविदियवारसंकलणमेत्तपिसुलापिसुलेसु सेसचुण्णियभागेसु च अवणिदेसु जहण्णट्ठाणं होदि। पुणो असंखेज्जलोगे विरलिय जहण्णट्ठाणं समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो होदि। पुणो पुव्वमवणिदकंदयमेत्तअणंतभागवड्ढिपक्खेवादिं पि समखंडं कादूण दिण्णे जहासरूवेण पावदि। पुणो एदस्स एगभागहारेणागमणकिरियं कस्सामो। तं जहा—असंखेज्जलोगे विरलिय जहण्णट्ठाणं समखंडं

विरलन करना चाहिए। उनमें चतुर्थ आदि विरलन राशियां चूंकि अप्रधान हैं, अतएव उनको छोड़कर तृतीय, द्वितीय और प्रथम प्रक्षेपांशोंके लानेकी विधि कहते हैं। वह इस प्रकार है—एक अधिक तृतीय विरलन मात्र अध्वान जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकके कुछ कम दो तृतीय भाग आते हैं। उनको मध्यम विरलनमेंसे कमकर एक अधिक करके उससे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करके प्राप्त हुए एक रूपके कुछ कम अर्ध भागको उपरिम विरलनमेंसे कम कर देनेपर जघन्य स्थानमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उसे जघन्य स्थानको प्रतिराशि करके मिलानेपर चतुरंकके नीचेका ऊर्वंक स्थान होता है। फिर उस स्थानको असंख्यात लोकोंस अपवर्तित कर प्रतिराशीकृत उसीमें मिलानेपर असंख्यातभागवृद्धिस्थान होता है।

अब जघन्य स्थानसे असंख्यातभागवृद्धिस्थानको उत्पन्न कराते हैं। यथा—चतुरंकसे नीचेके ऊर्वंकमेंसे काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपों, एक कम काण्डकके संकलन प्रमाण पिशुलों, दो कम काण्डकके द्वितीयवार संकलन प्रमाण पिशुलापिशुलों तथा शेष चूर्णिकभागोंको कम करनेपर जघन्य स्थान होता है। फिर असंख्यात लोकोंका विरलन कर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति असंख्यातभागवृद्धिका प्रक्षेप होता है। फिर पहिले कम कियेगये काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप आदिको भी समखण्ड करके देनेपर यथा स्वरूपसे प्राप्त होता है। अब इसके एक भागहार रूपसे लानेकी क्रिया करते हैं। वह इस प्रकार है—असंख्यात लोकों-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कादूण दिण्णे जहण्णट्ठाणस्स असंखेज्जदिभागो एक्केक्कस्स रूवस्स पावदि । पुणो असंखेज्जेहि लोगेहि ओवट्टिदसव्वजीवरासिं[1] हेट्ठा विरलिय उवरिमएगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगअणंतभागवड्डिपक्खेवो पावदि । पुणो एगकंदएणोवट्टियं विरलिय उवरिमेगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स कंदयमेत्तअणंतभागवड्डिपक्खेवा पावेंति । पुणो सेसाणं पि आगमणहं भागहारम्हि अणंतिमभागो असंखेज्जदिभागो च अवणेदव्वो । [2]एदमुवरिमरूवधरिदेसु दादूण समकरणे कीरमाणे परिहीणरूवाणं पमाणं वुच्चदे । तं जहा—रूवाहियविरलणमेत्तद्धाणं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणम्हि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स अणंतिमभागो आगच्छदि । तं उवरिमविरलणाए अवणिय सेसेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे लद्धे [3]पडिरासीकयजहण्णस्सुवरि पक्खित्ते असंखेज्जभागवड्डिट्ठाणं होदि । संपहि एदस्सुवरि अणंतभागवड्डीणं कंदयमेत्ताणमुप्पायणविहाणं जाणिदूण वत्तव्वं ।

संपहि विदियअसंखेज्जभागवड्डिउप्पायणविहाणं वुच्चदे । तं जहा—तदो हेट्ठिमउव्वंकस्सुवरि असंखेज्जभागवड्डि-अणंतभागवड्डिपक्खेवेसु च अवणिदेसु सेसं जहण्णट्ठाणं होदि । तम्मि असंखेज्जेहि लोगेहि भागे हिदे असंखेज्जभागवड्डिपक्खेवो आगच्छदि ।

का विरलन कर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देने पर एक एक अंक के प्रति जघन्य स्थानका असंख्यातवां भाग प्राप्त होता है । फिर असंख्यात लोकोंसे अपवर्तित सब जीवराशिका नीचे विरलन कर उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त होता है । फिर एक काण्डकसे अपवर्तित उसे विरलित कर उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त होते हैं । फिर शेष रहे उनको भी लानेके लिये भागहारमेंसे अनन्तवें भाग व असंख्यातवें भागको भी कम करना चाहिये । इसे उपरिम विरलन अंकोंके प्रति प्राप्त द्रव्योंमें देकर समकरण करनेपर हीन अंकोंका प्रमाण बतलाते हैं । वह इस प्रकार है—एक अधिक विरलन मात्र अध्वान जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका अनन्तवां भाग आता है । उसको उपरिम विरलनमेंसे कम कर शेषका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर लब्धको प्रतिराशीकृत जघन्य स्थानके ऊपर मिलानेपर असंख्यातभागवृद्धिस्थान होता है । अब इसके आगे काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियोंके उत्पन्न करानेकी विधि जानकर कहना चाहिये ।

अब द्वितीय असंख्यातभागवृद्धिके उत्पन्न करानेकी विधि कहते हैं । वह इस प्रकार है—उससे अधस्तन ऊर्वंकके ऊपर असंख्यातभागवृद्धि और अनन्तभागवृद्धि प्रक्षेपोंको कम करनेपर शेष जघन्य स्थान होता है । उसमें असंख्यात लोकोंका भाग देनेपर असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त

---

१ अप्रतौ 'जीवरासिंहि' इति पाठः । २ अप्रतौ 'एव' इति पाठः । ३ अ-आप्रत्योः 'पडिरासीय' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एदं पुध ट्ठविय पुणो अवणिदपक्खेवेसु अणंतभागवड्डिपक्खेवा अप्पहाणा त्ति ते छोड्डिय असंखेज्जभागवड्डिपक्खेवे असंखेज्जलोगेण खंडिदे तत्थ एगखंडमसंखेज्जभागवड्डिपिसुलं होदि। एदं पिसुलं पुव्विल्लपक्खेवं च घेत्तूण चरिमउव्वंकं पडिरासिय पक्खित्ते विदियमसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो एदं जहण्णट्ठाणादो दोहि असंखेज्जभागवड्डिपक्खेवेहि एगपिसुलेण च अहियं होदि। एदं दुअहियदव्वं जहण्णट्ठाणस्स केवडियो भागो होदि त्ति पुच्छिदे— असंखेज्जलोगे विरलिय जहण्णट्ठाणे समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगो असंखेज्जभागवड्डीहि-पक्खेवो पावदि। पुणो दोपक्खेवे इच्छामो त्ति पुव्विल्लभागहारस्स अद्धेण भागे हिदे रूवं पडि दो-दोपक्खेवपमाणं पावदि। पुणो एदाणमुवरि एगअसंखेज्जभागवड्डिपिसुला-गमणमिच्छामो त्ति पुव्विल्लविरलणाए[1] हेट्ठा दुगुणअसंखेज्जलोगे विरलिय उवरिमएग-रूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे एगेगपिसुलपमाणं पावदि। पुणो एदं विरलणं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणम्हि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स चदुब्भागं किंचूणमागच्छदि। पुणो एदम्मि उवरिमविरलणाए सोहिदे सुद्धसेसं भागहारो होदि। एदेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे दोप-

---

होता है। इसको पृथक् स्थापित कर फिर कम किये गये प्रक्षेपोंमें चूंकि अनन्त भागवृद्धिप्रक्षेप अप्रधान हैं, अतएव उनको छोड़कर असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको असंख्यात लोकसे खण्डित करने पर उसमेंसे एक खण्ड असंख्यातभागवृद्धिपिशुल होता है। इस पिशुल और पूर्वके प्रक्षेपको ग्रहण कर अन्तिम ऊर्वकको प्रतिराशि करके मिलानेपर द्वितीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। यह जघन्य स्थान की अपेक्षा दो असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपों और एक पिशुलसे अधिक होता है।

शंका — यह अधिक द्रव्य जघन्य स्थानके कितनेवें भाग प्रमाण होता है?

समाधान — ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि असंख्यात लोकोंका विरलन कर जघन्य स्थान-को समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक असंख्यातवृद्धि प्रक्षेप प्राप्त होता है। पुनः चूंकि दो प्रक्षेप अभीष्ट हैं अतः पूर्वके भागहारके अर्ध भागका भाग देनेपर एक अंकके प्रति दो दो प्रक्षेपांका प्रमाण प्राप्त होता है। पुनः इनके ऊपर एक असंख्यातभागवृद्धि पिशुलका लाना अभीष्ट है, अतः पूर्व विरलनके नीचे दुगुणे असंख्यात लोकोंका विरलन कर उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक एक पिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर एक अधिक इस विरलन प्रमाण जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम चतुर्थ भाग आता है फिर इसको उपरिम विरलनमेंसे कम करनेपर जो शेष रहे वह भागहार होता है। इसका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर दो प्रक्षेप और एक पिशुल प्राप्त होता है। इसको

---

१ अ-आप्रत्योः 'विरलणा', ताप्रतौ 'विरलणा [ए]' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

क्खेवा एगपिसुलं च लब्भदि। पुणो एदम्मि जहण्णट्ठाणे पडिरासिय पक्खित्ते विदिय-मसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो एदस्सुवरि सव्वजीवरासी भागहारो होदूण ताव गच्छदि जाव कंदयमेत्तअणंतभागवड्डिट्ठाणाणं चरिमउव्वंकट्ठाणे त्ति।

पुणो एदस्सुवरिमतदियअसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणम्हि[1] भण्णमाणे चरिमउव्वंकस्सुरिमअसंखेज्जभागवड्डिपक्खेवे अवणिय पुध ट्ठविय जहण्णट्ठाणं होदि, अप्पहाणीकयअणंतभागवड्डिपक्खेवत्तादो। पुणो असंखेज्जलोगेहि जहण्णट्ठाणे भागे हिदे एगो पक्खेवो आगच्छदि। इमं पुध ट्ठविय पुणो पुव्विल्लअसंखेज्जलोगेहि चेव दोसु पक्खेवेसु अवहिरिदेसु [2]असंखेज्जभागवड्डिपिसुलाणि आगच्छंति। एदे पुध ट्ठविय पुणो तेणेव भागहारेण असंखेज्जभागवड्डिपिसुले खंडिदे एगं पिसुलापिसुलमागच्छदि। पुणो एगमसंखेज्जभागवड्डिपक्खेवं तिस्से वड्डीए दोपिसुलाणि एगं पिसुलापिसुलं च घेत्तूण चरिमउव्वंकं पडिरासिय पक्खित्ते तदियअसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणं होदि। तदियअसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणं णाम जहण्णट्ठाणादो तीहि असंखेज्जभागवड्डिपक्खेवेहि तीहि [3]असंखेज्जभागवड्डिपिसुलेहि एगेण पिसुलापिसुलेण च अधियं होदि। [4]पुणो एदमहियदव्वं जहण्णट्ठाणादो उप्पाइज्जदे। तं जहा—असंखेज्जालोगाणं तिभागं[5] विरलेदूण जहण्णट्ठाणं समखंडं कादूण

जघन्य स्थानमें प्रतिराशि करके मिलानेपर द्वितीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। फिर इसके आगे काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके अन्तिम ऊर्वकस्थान तक सब जीवराशि भागहार होकर जाती है।

पुनः इसके ऊपरके तृतीय असंख्यातभागवृद्धिस्थानका कथन करनेपर अन्तिम ऊर्वकके ऊपरके असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको कम करके पृथक् स्थापित करनेपर जघन्य स्थान होता है, क्योंकि, यहाँ अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपको प्रधान नहीं किया गया है। फिर असंख्यात लोकोंका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर एक प्रक्षेप आता है। इसको पृथक् स्थापित करके फिर पूर्वके असंख्यात लोकोंसे ही दो प्रक्षेपोंके अपहृत करनेपर असंख्यातभागवृद्धिपिशुल आते हैं। इनको पृथक् स्थापित करके उसी भागहारसे असंख्यातभागवृद्धिपिशुलको खण्डित करनेपर एक पिशुलापिशुल आता है। अब एक असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप, उसी वृद्धिके दो पिशुलों और एक पिशुलापिशुलको ग्रहण कर अन्तिम ऊर्वकको प्रतिराशि करके मिलानेपर तृतीय असंख्यातभागवृद्धि स्थान होता है। तृतीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान जघन्य स्थानकी अपेक्षा तीन असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपों, तीन असंख्यातभागवृद्धिपिशुलों और एक पिशुलापिशुलसे अधिक है। अब जघन्य स्थानसे इस अधिक द्रव्यको उत्पन्न कराते हैं। यथा—असंख्यात लोकोंके तृतीय भागका विरलन करके

१ अ-काप्रतिषु 'वड्डिट्ठाणेहि' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'दो' इतिपदं नोपलभ्यते. ताप्रतौ तूपलभ्यते। ३ अ-आ-ताप्रतिषु 'तेहि' इति पाठः। ४ अ-आ-ताप्रतिषु 'एदमादियदव्वं' इति पाठः। ५ ताप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः '-लोगाणंतिभागं' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स तिण्णि-तिण्णिपक्खेवपमाणं पावदि। पुणो एदिस्से विरलणाए हेट्ठा असंखेज्जलोगे विरलिय [1]एगरूवधरिदतिण्णिपक्खेवे घेत्तूण समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स तिण्णि तिण्णि पिसुलाणि पावेंति। पुणो एदिस्से विदियविरलणाए हेट्ठा तिगुणमसंखेज्जलोगे विरलिय उवरिमएगेगरूवधरिद[2]तिण्णि-तिण्णिपिसुलाणि घेत्तूण समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगपिसुलापिसुलपमाणं पावदि। पुणो एस विरलणं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो मज्झिमविरलणम्मि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए किंचूणो एगरूवस्स तिभागो आगच्छदि। पुणो एदं मज्झिमविरलणाए सोहिय सुद्धसेसं रूवाहियमेत्तद्धाणं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स तिभागो किंचूणो आगच्छदि। पुणो एदमुवरिमविरलणम्हि सोहिय जहण्णट्ठाणे भागे हिदे तिण्णिपक्खेवा तिण्णिपिसुलाणि एगं पिसुलापिसुलं च आगच्छदि। पुणो एदम्मि जहण्णट्ठाणस्सुवरि पक्खित्ते तदियमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि। एदेण बीजपदेण उवरि वि णेयव्वं जाव अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं चरिमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणे त्ति।

पुणो चरिमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणस्स भागहारो उच्चदे। तं जहा — अंगुलस्स

जघन्य स्थानको समखण्ड करके देने पर एक एक अंकके प्रति तीन तीन प्रक्षेपोंका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इस विरलनके नीचे असंख्यात लोकोंका विरलन कर एक अंकके प्रति प्राप्त तीन प्रक्षेपोंको ग्रहणकर समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति तीन तीन पिशुल प्राप्त होते हैं। फिर इस द्वितीय विरलनके नीचे तिगुणे असंख्यात लोकोंका विरलन करके उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त तीन तीन पिशुलोंको ग्रहण कर समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक पिशुलापिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है। पुनः एक अधिक इस विरलन प्रमाण जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो मध्यम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम एक तृतीय भाग आता है। फिर इसको मध्यम विरलनमेंसे कम करके जो शेष रहे उससे एक अधिक मात्र अध्वान जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी; इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम एक तृतीय भाग आता है। फिर इसको उपरिम विरलनमेंसे कम करके जघन्य स्थानमें भाग देनेपर तीन प्रक्षेप, तीन पिशुल और एक पिशुलापिशुल आता है। पुनः इसको जघन्य स्थानके ऊपर मिला देनेपर तृतीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान होता है। इस बीज पदसे अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिस्थानोंमें अन्तिम असंख्यातभाग वृद्धिस्थान तक ले जाना चाहिये।

अब अन्तिम असंख्यातभागवृद्धिस्थानके भागहारको कहते हैं। वह इस प्रकार है — अंगुलके

१ अ-आप्रत्योः '-धरिदे' इति पाठः। २ अ-आ-प्रत्योः '-धरिदं' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

असंखेज्जदिभागेण असंखेज्जलोगमोवट्टिय किंचूणं कादूण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे जं भागलद्धं तम्हि कंदयमेत्तअसंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवा रूवूणकंदयस्स संकलणमेत्ताणि असंखेज्जभागवड्ढिपिसुलाणि दुरूवूणकंदयस्स संकलणासंकलणमेत्तअसंखेज्ज-भागवड्ढिपिसुलापिसुलाणि सेसचुण्णाणि च आगच्छंति। एदं सुद्धं घेत्तूण[1] जहण्णट्ठाणेसु उवरि पक्खित्ते चरिमअसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि। पुणो एदस्सुवरि सव्वजीवरासी भागहारो होदूण कंदयमेत्तअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणि गच्छंति[2] जाव चरिमअणंतभागव-ड्ढिट्ठाणे त्ति।

पुणो एदस्सुवरि पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि। तम्मि उप्पाइज्जमाणे चरिमअ-णंतभागवड्ढिट्ठाणस्सुवरि वड्ढिददव्वे अवणिदे जहण्णट्ठाणं होदि। पुणो उक्कस्ससंखेज्जं विरलेदूण जहण्णट्ठाणं समखंडं कादूण दिण्णे संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो आगच्छदि। अव-णिदपक्खेवेसु संखेज्जरूवेहि ओवट्टिदेसु [3]लद्धदव्वमप्पहाणं, संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवस्स[4] असंखेज्जभागत्तादो। पुणो तम्मि आणिज्जमाणे हेट्ठा असंखेज्जलोगे विरलिय संखेज्ज-भागवड्ढिपक्खेवं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवस्स संखेज्जदिभागो पावदि। पुणो सगलपक्खेवमिच्छामो त्ति असंखेज्जलोगे उक्कस्ससंखेज्जे-णोवट्टिय विरलेदूण संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवं समखंडं कादूण दिण्णे विरलणरूवं पडि

असंख्यातवें भागसे असंख्यात लोकोंको अपवर्तित कर कुछ कम करके जघन्य स्थानमें भाग देने पर जो लब्ध हो उसमें काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप, एक कम काण्डकके संकलन प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिपिशुल दो कम काण्डकके संकलनासंकलन प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिपिशुलापिशुल और शेष चूर्ण आते हैं। इस सबको ग्रहण करके जघन्य स्थानके ऊपर मिलानेपर अन्तिम असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। पुनः इसके आगे सब जीवराशि भागहार होकर अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थान तक काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थान जाते हैं।

फिर इसके आगे प्रथम संख्यातभागवृद्धिस्थान होता है। इसको उत्पन्न करानेमें अन्तिम अनन्तभागवृद्धिस्थानके ऊपर वृद्धिप्राप्त द्रव्यको कम करनेपर जघन्य स्थान होता है। अब उत्कृष्ट संख्यातका विरलन करके जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर संख्यातभागवृद्धि प्रक्षेप आता है। कम किये हुए प्रक्षेपोंको संख्यात अंकोंसे अपवर्तित करनेपर जो द्रव्य लब्ध हो वह अप्रधान है, क्योंकि, वह संख्यातभागवृद्धि प्रक्षेपके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसको लाते समय नीचे असंख्यात लोकोंका विरलन कर संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपका संख्यातवां भाग प्राप्त होता है। अब चूँकि सकल प्रक्षेपका लाना अभीष्ट है, अतः असंख्यात लोकोंको उत्कृष्ट संख्यातसे अपवर्तित कर लब्धका विरलन करके संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको समखण्ड करके देनेपर विरलन अंकके प्रति असंख्यातभा-

१ अप्रतौ 'एदं घेत्तूण' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'आगच्छंति' इति पाठः।
३ प्रतिषु 'अद्ध'-इति पाठः। ४ प्रतिषु-'वस्स अणंत असंखे'-इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

असंखेज्जभागवड्डिसगलपक्खेवो पावदि। पुणो कंदयमेत्तअसंखेज्जभागवड्डिपक्खेवे इच्छामो त्ति एगकंदएण इदाणींतणविरलिदरासिमोवट्टिय विरलेदूण संखेज्जभागवड्डिपक्खेवं समखंडं कादूण दिण्णे कंदयमेत्ता असंखेज्जभागवड्डिपक्खेवा [1]विरलणरूवं पडि पावेंति। पुणो कंदयसहिदकंदयवग्गमेत्तअणंतभागवड्डिपक्खेवे इच्छामो त्ति कंदयगुणिदसव्वजीवरासिं विरलिय कंदयमेत्तअसंखेज्जभागवड्डिपक्खेवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु एक्केक्कस्स रूवस्स अणंतभागवड्डिपक्खेवस्स असंखेज्जदिभागो पावदि। पुणो सगलमणंतभागवड्डिपक्खेवमिच्छामो त्ति असंखेज्जलोगेहि कंदयगुणिदसव्वजीवरासिमोवट्टिय विरलेदूण मज्झिमविरलणाए एगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे रूवं पडि सगलपक्खेवपमाणं पावदि। पुणो कंदयसहिदकंदयवग्गेण ओवट्टिय विरलेदूण मज्झिमविरलणाए एगरूवधरिदं समखंडं कादूण दिण्णे समकंदय-कंदयवग्ग[2]मेत्तअणंतभागवड्डिपक्खेवा होंति। पुणो समकरणं कादूण अवणयणरूवाणं पमाणं वुच्चदे—हेट्ठिमविरलणं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो मज्झिमविरलणम्हि केवडियरूवपरिहाणिं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स अणंतिमभागो आगच्छदि। एदं मज्झिमविरलणाए सोहिय सुद्धसेसं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरल-

---

गवृद्धिका सकल प्रक्षेप प्राप्त होता है। पुनः काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपोंकी चूँकि इच्छा है, अतएव एक काण्डकसे इस समयकी विरलित राशिको अपवर्तित करके विरलित कर संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपको समखण्ड करके देनेपर काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप विरलन अंकके प्रति प्राप्त होते हैं। पुनः काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपोंके लानेकी इच्छा है, अतएव काण्डकसे गुणित सब जीवराशिका विरलन कर काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेपका असंख्यातवां भाग प्राप्त होता है। अब चूँकि अनन्तभागवृद्धिका सकल प्रक्षेप अभीष्ट है, अतएव असंख्यात लोकों द्वारा काण्डकसे गुणित सब जीवराशिका अपवर्तन कर विरलित करके मध्यम विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक अङ्कके प्रति सकल प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर उसे काण्डक सहित काण्डकके वर्गसे अपवर्तित करके विरलित कर मध्यम विरलनके एक अङ्कके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर काण्डकके साथ काण्डकवर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप होते हैं। फिर समीकरण करके हीन अङ्कोंका प्रमाण बतलाते हैं—एक अधिक अधस्तन विरलन जाकर यदि एक अङ्ककी हानि पायी जाती है तो मध्यम विरलनमें कितने अङ्कोंकी हानि पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अङ्कका अनन्तवां भाग आता है। इसको मध्यम विरलनमेंसे कम करके जो शेष रहे उससे एक अधिक जाकर यदि एक अङ्ककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी,

---

१ प्रतिषु 'विरलणरूवं ति' इति पाठः। २ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः 'समकंदयवग्ग', ताप्रतौ भप्रतिसमः पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

णाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स असंखेज्जदिभागो लब्भदि। एदमुक्कस्ससंखेज्जम्हि सोहिय[1] सेसेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे एगो संखेज्जभागवड्ढिपक्खेवो कंदयमेत्ता[2] असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवा[3] सकंदय-कंदयवग्गमेत्ता अणंतभागवड्ढिपक्खेवा च लब्भंति। पुणो एत्तियदव्वं जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि।

एत्थ अणंतभागवड्ढीए उव्वंकसण्णा, असंखेज्जभागवड्ढी चत्तारिअंको, संखेज्जभागवड्ढी पंचंको, संखेज्जगुणवड्ढी छअंको, असंखेज्जगुणवड्ढी सत्तंको, अणंतगुणवड्ढी अट्ठंको त्ति घेत्तव्वो[4]। एदीए सण्णाए एगछट्ठाणसंदिट्ठी जोजेयव्वो।

संपहि पयदं उच्चदे— अणंतभागवड्ढिपक्खेवा जे एत्थ एगभागहारेण आणिदा सकंदय-कंदयवग्गमेत्ता ते सरिसा ण होंति[5], अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढिसरूवेण तेसिमवट्ठाणादो। असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवा वि सरिसा ण होंति, अण्णोण्णं पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढीए अवट्ठाणादो। तदो एगभागहारेण आणयणं ण जुज्जदे। अह पिसुल-पिसुलापिसुलादीणं पुध पुध भागहारे उप्पाइय भागहारपरिहाणिं कादूण एगभागहारेण

इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अङ्कका असंख्यातवां भाग पाया जाता है। इसको उत्कृष्ट संख्यातमें से कम करके शेषका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर एक संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप, काण्डक प्रमाण असंख्यातभाग वृद्धिप्रक्षेप और काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप पाये जाते हैं। इतने द्रव्यको जघन्य स्थानको प्रतिराशि कर उसमें मिलानेपर असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है।

यहां अनन्तभागवृद्धिकी उर्वंक संज्ञा, असंख्यातभागवृद्धिकी चतुरंक, संख्यातभागवृद्धिकी पंचांक, संख्यातगुणवृद्धिकी षडंक, असंख्यातगुणवृद्धिकी सप्तांक और अनन्तगुणवृद्धिकी अष्टांक संज्ञा जानना चाहिये। इस संज्ञासे एक षट्स्थान संदृष्टिकी योजना करनी चाहिये।

अब यहां प्रकृतका कथन करते हैं—

शंका— काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण जो अनन्तभागवृद्धिप्रक्षेप एक भागहारके द्वारा लाये गये हैं वे सदृश नहीं हैं, क्योंकि, उनका अनन्तभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि स्वरूपसे अवस्थान है। असंख्यातभागवृद्धिके प्रक्षेप भी सदृश नहीं होते, क्योंकि, उनका परस्परकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धि स्वरूपसे अवस्थान है। इसीलिये उनका एक भागहारसे लाना योग्य नहीं है। यदि कहा जाय कि पिशुल व पिशुलापिशुल आदिकोंके पृथक् पृथक् भागहारोंको उत्पन्न कराकर भागहारकी हानि कराकर एक भागहारके द्वारा वे लाये जा सकते हैं तो यह भी घटित

१ अप्रतौ '–संखेज्जं सोहिय' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'कंदयमेत्तो' इति पाठः। ३ ताप्रतावतोऽग्रे [कंदयमेत्ता असंखे०भागवड्ढिपक्खेवा]' इत्यधिकः पाठः कोष्ठकान्तर्गतः।

४ उव्वंकं चउरंकं पण-छस्सत्तंक अट्ठअंकं च। छव्वड्ढीणं सण्णा कमसो संदिट्ठिकरणट्ठं॥ गो०जी० ३२५.

५ मप्रतौ 'सारिसाणि होंति' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आणिज्जंति त्ति णेदं पि घडदे, एगभवम्मि संखेज्जकिरियस्स पुरिसस्स असंखेज्जकिरियासु वावारविरोहादो । तदो पुव्वपरूविदभागहारपरूवणं ण घडदे त्ति ? सुच्चमेदं, किं तु असरिसत्तं पक्खेवाणमविवक्खिय सरिसा इदि बुद्धीए संकप्पिय भागहारपरूवणा कीरदे। अलीयवयणेण कधं ण कम्मबंधो[1] ? णेदमलीयवयणं, एयंतग्गहाभावादो । ण च एदेण वयणेण मिच्छाणाणमुप्पाइज्जदे, असंखेज्जेहि वासेहि पुध पुध तेरासियं काऊण उप्पाइदभागहारेहिंतो समुप्पण्णणाणसमाणसुदणाणुप्पत्तीदो । ण च अंतेवासीणमाइरिया सव्वसुत्तत्थं भणंति, तहाविहसत्तीए अभावादो। कधं पुण सयलसुदणाणुप्पत्ती ? ण एस दोसो, अणुत्तोवग्गह-ईहावाय-धारणाहि तदुप्पत्तीदो । उत्तं च—

पण्णवणिज्जा भावा अणंतभागो दु अणभिलप्पाणं ।
पण्णवणिज्जाणं पुण अणंतभागो सुदणिबद्धो[2] ॥ १० ॥
आचार्यः [3]पादमाचष्टे पादः शिष्यः स्वमेधया[4] ।
तद्विद्यसेवया पादः पादः कालेन पच्यते ॥ ११ ॥

नहीं होता है, क्योंकि, संख्यात क्रिया युक्त पुरुषके असंख्यात क्रियाओंमें व्यापारका विरोध है। इस कारण पूर्व प्ररूपित भागहारकी प्ररूपणा घटित नहीं होती ?

समाधान—यह सत्य है, किन्तु प्रक्षेपांकी असमानताकी विवक्षा न कर बुद्धिसे उन्हें सदृश कल्पित कर भागहारकी प्ररूपणा की जा रही है।

शंका—इस असत्यभाषणसे कर्मबन्ध कैसे न होगा ?

समाधान—यह असत्यभाषण नहीं है, क्योंकि, इसमें एकान्त आग्रहका अभाव है। इस वचनसे मिथ्याज्ञान भी नहीं उत्पन्न कराया जा रहा है, क्योंकि, उसके द्वारा असंख्यात वर्षोंसे पृथक् पृथक् त्रैराशिक करके उत्पन्न कराये गये भागहारोंसे उत्पन्न ज्ञानके समान श्रुतज्ञान उत्पन्न होता है। दूसरे, आचार्य शिष्योंके लिये समस्त सूत्रार्थको नहीं कहते हैं, क्योंकि, वैसी सामर्थ्य नहीं है।

शंका—तो फिर पूर्ण श्रुतज्ञान कैसे उत्पन्न हो सकता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अनुक्तावग्रह, ईहा, अवाय और धारणाके द्वारा वह उत्पन्न हो सकता है। कहा भी है—

वचनके अगोचर अर्थात् केवल केवलज्ञानके विषयभूत जीवादिक पदार्थोंके अनन्तवें भागमात्र प्रज्ञापनीय अर्थात् तीर्थंकरकी सातिशय दिव्यध्वनिके द्वारा प्रतिपादनके योग्य हैं। तथा प्रतिपादनके योग्य उक्त जीवादिक पदार्थोंका अनन्तवाँ भाग मात्र श्रुतनिबद्ध है ॥ १० ॥

आचार्य एक पादको कहते हैं, एक पादको शिष्य अपनी बुद्धिसे ग्रहण करता है, एक पाद उसके जानकार पुरुषोंकी सेवासे प्राप्त होता है, तथा एक पाद समयानुसार परिपाकको प्राप्त होता है ॥ ११ ॥

१ अप्रतौ 'कमबंधो' इति पाठः । २ गो० जी० ३३४. विशेषा० १४१. । ३ अ-आप्रत्योः 'पद—' इति पाठः । ४ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः 'पादः शिष्यस्य' मेधया, ताप्रतौ 'पादः शिष्यस्य मेधया' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

एदिस्से संखेज्जभागवड्डीए उवरि सव्वजीवरासी भागहारो होदूण गच्छदि जाव कंदयमेत्तअणंतभागवड्डिट्ठाणाणं चरिमउव्वंकट्ठाणे त्ति। पुणो असंखेज्जभागवड्डिट्ठाणं होदि। एदस्स भागहारो असंखेज्जा लोगा। एवं सकंदय-कंदयवग्गमेत्ताणि अणंतभागवड्डिट्ठाणाणि कंदयमेत्ताणि असंखेज्जभागवड्डिट्ठाणाणि च गंतूण विदियसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणमुप्पज्जदि। जहण्णट्ठाणं पुण पेक्खिदूण पढमसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणादो उवरि दुगुणवड्डीदो हेट्ठा सव्वत्थ संखेज्जभागवड्डी चेव। संपहि एत्तो प्पहुडि उवरिमसंखेज्जभागवड्डीणं परूवणाए कीरमाणाए अणंतभागवड्डिअसंखेज्जभागवड्डीयो छोड्डिदूण परूवणं कस्सामो। कुदो? तासिं वड्डीणं अइत्थोवत्तणेण पहाणत्ताभावादो।

संपहि विदियसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—हेट्ठिमउव्वंकस्सुवरि वड्डिददव्वं पुध ट्ठविदे सेसं जहण्णट्ठाणं[1] होदि। पुणो तम्हि उक्कस्ससंखेज्जेण भागे हिदे एगो संखेज्जभागवड्डिपक्खेवो लब्भदि। एदं पुध ट्ठविय पुणो उक्कस्ससंखेज्जेण भागे हिदे एगो संखेज्जभागवड्डिपक्खेवो लब्भदि। एदं पुध ट्ठविय पुणो उक्कस्ससंखेज्जेण पुध पुध ट्ठविदसंखेज्जभागवड्डिपक्खेवे भागे हिदे एगं संखेज्जभागवड्डिपिसुलं लब्भदि त्ति[2]।

इस संख्यातभागवृद्धिके आगे सब जीवराशि भागहार होकर काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थानोंके अन्तिम ऊर्वक स्थानतक जाती है। फिर असंख्यातभागवृद्धिस्थान होता है। इसका भागहार असंख्यात लोक है। इस प्रकार काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थान और काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिस्थान जाकर द्वितीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। परन्तु जघन्यस्थानकी अपेक्षा प्रथम असंख्यातभागवृद्धिस्थानसे ऊपर और दुगुणवृद्धिसे नीचे सर्वत्र संख्यातभागवृद्धि ही होती है।

अब यहाँसे लेकर उपरिम संख्यातभागवृद्धियोंकी प्ररूपणा करनेमें अनन्तभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धिको छोड़कर प्ररूपणा करते हैं, क्योंकि, बहुत थोड़ी होनेसे उन वृद्धियोंकी प्रधानता नहीं है।

अब द्वितीय संख्यातभागवृद्धिकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—अधस्तन ऊर्वकके ऊपर वृद्धिप्राप्त द्रव्यको पृथक् स्थापित करनेपर शेष रहा जघन्य स्थान होता है। फिर उसमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर एक संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त होता है। इसको पृथक स्थापित कर फिर उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर एक संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त होता है। इसको पृथक् स्थापितकर फिर उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर एक संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप प्राप्त होता है। इसको पृथक् स्थापित कर फिर पृथक् पृथक् स्थापित संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर एक संख्यातभागवृद्धिपिशुल होता है। इस प्रकार एक प्रक्षेप और एक पिशुलको

१ अप्रतौ 'जहण्णट्ठाणो' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'लब्भदि तो', ताप्रतौ 'लब्भदि तो (त्ति)' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवमेगपक्खेवमेगपिसुलं च घेत्तूण उवरिमउव्वंकं पडिरासिय पक्खित्ते विदियसंखेज्ज-भागवड्डिट्ठाणं होदि। विदियसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणं णाम जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण दोहि संखेज्जभागवड्डिपक्खेवेहि एगेण संखेज्जभागवड्डिपिसुलेण च अहियं होदि।

एदेसिं जहण्णट्ठाणादो उप्पत्ती वुच्चदे। तं जहा— उक्कस्ससंखेज्जयस्स अद्धं विरलेदूण जहण्णट्ठाणं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स दो-दोसगलपक्खेवा पावेंति। पुणो एदस्स हेट्ठा दुगुणमुक्कस्ससंखेज्जं विरलेदूण उवरिमएगरूवधरिदं समखंडं दादूण दिण्णे रूवं पडि एगेगपिसुलपमाणं पावदि। पुणो एदमुवरिमरूवधरिदेसु[1] दादूण समकरणे कीरमाणे परिहीणरूवाणं परूवणं कस्सामो। तं जहा— रूवाहियहेट्ठिमविरलणमेत्तद्धाणं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए किंचूणो एगरूवस्स चदुब्भागो आगच्छदि। एदमुवरिम-विरलणाए सोहिय सुद्धसेसेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे बेपक्खेवा एगपिसुलं च लब्भदि। पुणो लद्धे जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते विदियसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणमुप्पज्जदि। एव-मुवरिमसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणाणं सव्वेसिं पि जाणिदूण भागहारो परूवेदव्वो जाव चरिम-संखेज्जभागवड्डिट्ठाणे त्ति। तदुवरि संखेज्जगुणवड्डिट्ठाणं होदि।

संपहि संखेज्जभागवड्डिकमेण जहण्णट्ठाणादो अणुभागट्ठाणेसु वड्डमाणेसु केत्तिय-

---

ग्रहण कर उपरिम ऊर्वंकको प्रतिराशि करके मिलानेपर द्वितीय संख्यातभागवृद्धिस्थान होता है। द्वितीय संख्यातभागवृद्धिस्थान जघन्य स्थानकी अपेक्षा दो संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेपों और एक संख्यातभागवृद्धिपिशुलसे अधिक होता है।

इनकी जघन्य स्थानसे उत्पत्तिको कहते हैं। वह इस प्रकार है— उत्कृष्ट संख्यातके अर्ध भागका विरलनकर जघन्य स्थानको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति दो दो प्रक्षेप प्राप्त होते हैं। फिर इसके नीचे दुगुणे उत्कृष्ट संख्यातका विरलन कर उपरिम एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक अंकके प्रति एक एक पिशुलका प्रमाण प्राप्त होता है। इसको उपरिम अंकोंके प्रति प्राप्त द्रव्योंमें देकर समीकरण करनेपर हीन अंकोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है— एक अधिक अधस्तन विरलन मात्र अध्वान जाकर यदि एक अंककी हानि पायी जाती है तो उपरिम विरलनमें वह कितनी पायी जावेगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अंकका कुछ कम चतुर्थभाग आता है। इसको उपरिम विरलनमेंसे कम करके शेषका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर दो प्रक्षेप और एक पिशुल प्राप्त होता है। फिर लब्धको प्रतिराशीकृत जघन्य स्थानमें मिलानेपर द्वितीय असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है। इस प्रकार अन्तिम असंख्यातभागवृद्धिस्थानतक सभी उपरिम असंख्यातभागवृद्धिस्थानोंके भागहारकी जानकर प्ररूपणा करना चाहिये। इससे आगे संख्यातगुणवृद्धिस्थान होता है।

अब संख्यातभागवृद्धिक्रमसे जघन्य स्थानसे अनुभागस्थानोंके बढ़नेपर कितना अध्वान

---

१ अ-आप्रत्योः 'एदमुवरि रूवधरिदेसु'; ताप्रतौ 'एदमुवरिमधरिदेसु' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मद्धाणं गंतूण दुगुणवड्ढी होदि त्ति जाणावणट्ठं परूवणा कीरदे । तं जहा— एत्थ बालजणाणं बुद्धिजणणट्ठं तीहि पयारेहि दुगुणवड्ढिपरूवणा कीरदे[1] । कधं तिविहा परूवणा कीरदे ? थूला मज्झिमा सुहुमा चेदि । तत्थ ताव थूला परूवणा कस्सामो— जहण्णट्ठाणादो उवरि उक्कस्ससंखेज्जमेत्तेसु संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणेसु गदेसु दुगुणवड्ढी होदि । कुदो ? उक्कस्ससंखेज्जमेत्त[2]संखेज्जभागपक्खेवेहि एगजहण्णठाणुप्पत्तीदो वड्ढिजणिदजहण्णट्ठाणेण सह ओघजहण्णट्ठाणस्स तत्तो दुगुणत्तदंसणादो । कधमेदिस्से परूवणाए थूलत्तं ? पिसुलादीणि मोत्तूण पक्खेवेहिंतो चेव उप्पण्णजहण्णट्ठाणेण दुगुणत्तपरूवणादो ।

संपहि मज्झिमपरूवणा कीरदे । तं जहा– अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेसु संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणेसु उक्कस्ससंखेज्जमेत्त[2]संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं पढमट्ठाणप्पहुडि रचणं कादूण तत्थ उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तद्धाणमुवरि गंतूण दुगुणवड्ढी होदि । उक्कस्ससंखेज्जयमिदि संदिट्ठीए सोलस घेत्तव्वा । उक्कस्ससंखेज्जस्स जहण्णट्ठाणे भागे हिदे संखेज्जभागवड्ढी होदि । तम्मि जहण्णट्ठाणे पक्खित्ते पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि । दोपक्खेवेसु एगपिसुले च जहण्णट्ठाणे पक्खित्ते विदियसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि । तिसु पक्खेवेसु तिसु पिसुलेसु एगपिसुलापिसुले च जहण्णट्ठाणे पडिरासिय

जाकर दुगुणी वृद्धि होती है, यह जतलानेके लिये प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—यहाँ अज्ञानी जनोंके बुद्धि उत्पन्न करानेके लिये तीन प्रकारसे दुगुणवृद्धिकी प्ररूपणा करते हैं । कैसे तीन प्रकारसे प्ररूपणाकी जाती है ? वह स्थूल, सूक्ष्म और मध्यमके भेदसे तीन प्रकार है । उनमें पहिले स्थूल प्ररूपणा करते हैं— जघन्य स्थानके आगे उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके बीतनेपर दुगुणवृद्धि होती है, क्योंकि, उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातभागप्रक्षेपोंसे एक जघन्य स्थानके उत्पन्न होनेसे वृद्धिजनित जघन्य स्थानके साथ ओघ जघन्य स्थान उससे दुगुणा देखा जाता है ।

शंका— यह प्ररूपणा स्थूल कैसे है ?

समाधान— कारण कि इसमें पिशुलादिकोंको छोड़कर प्रक्षेपोंसे ही उत्पन्न जघन्य स्थानसे दुगुणत्वकी प्ररूपणा की गई है ।

अब मध्यम प्ररूपणा की जाती है । वह इस प्रकार है— अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र संख्यातभागवृद्धिस्थानोंमें उत्कृष्ट संख्यात मात्र संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके प्रथम स्थानसे लेकर रचना करे । उनमें उत्कृष्ट संख्यातका तीन चतुर्थभाग ($\frac{3}{4}$) मात्र अध्वान आगे जाकर दुगुणवृद्धि होती है । उत्कृष्ट संख्यातके लिये संदृष्टिमें सोलह (१६) अङ्क ग्रहण करने चाहिये । उत्कृष्ट संख्यातका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर संख्यातभागवृद्धि होती है । उसको जघन्य स्थानमें मिलानेपर प्रथम संख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । दो प्रक्षेपों और एक पिशुलको जघन्य स्थानमें मिलानेपर द्वितीय संख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । तीन प्रक्षेपों, तीन पिशुलों और एक पिशुला-

१ अप्रतौ 'कीरदे' इत्येतत् पदं नोपलभ्यते इति पाठः ।

२ ताप्रतौ '–संखेज्जमेत्तसंखेज्जमेत्त' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

पक्खित्ते तदियसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणं होदि । चदुसु पक्खेवेसु छसु पिसुलेसु चदुसु पिसुलापिसुलेसु एगपिसुलापिसुलपिसुले[1] च जहण्णट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते चउत्थसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणं होदि । एवमुवरि वि जाणिदूण णेयव्वं । णवरि पक्खेवा एगादिएगुत्तरकमेण वड्ढंति । पिसुलाणि रूवूणचडिदद्धाणसंकलणासरूवेण वड्ढंति । पिसुलापिसुलाणि दुरूवूणचडिदद्धाणविदियवारसंकणसरूवेण वड्ढंति । पिसुलापिसुलापिसुलाणि तिरूवूणचडिदद्धाणतदियवारसंकलणसरूवेण गच्छंति । एवमुवरिमाणं पि वत्तव्वं । तेसिमेसा संदिट्ठी—

o [2]
o
o
o o o o o o o o o o o o o
o o o o o o o o o o o o
o o o o o o o o o o o
o o o o ● o o o o o
o o o o o o o o o
o o o o o o o o
o o o o o o o
o o o o o o
o o o o o
o o o o
o o o

पिशुलको जघन्य स्थानमें प्रतिराशि करके मिलानेपर तृतीय संख्यातभागवृद्धिस्थान होता है । चार प्रक्षेपों, छह पिशुलों, चार पिशुलापिशुलों और एक पिशुलापिशुलपिशुलको जघन्य स्थानमें प्रतिराशि करके मिलानेपर चतुर्थ संख्यातभागवृद्धिस्थान होता है । इस प्रकारसे आगे भी जानकर ले जाना चाहिये । विशेष इतना है कि प्रक्षेप एकसे लेकर एक अधिक क्रमसे बढ़ते हैं । पिशुल एक कम बीते हुए अध्वानके सङ्कलन स्वरूपसे बढ़ते हैं । पिशुलापिशुल दो कम गये हुए अध्वानके द्वितीय बार सङ्कलनके स्वरूपसे बढ़ते हैं। पिशुलमपिशलापिशुल तीन कम गये हुए अध्वानके तृतीय बार संकलन स्वरूपसे जाते हैं । इस प्रकारसे आगे भी कहना चाहिये । उनकी यह संदृष्टि है (मूल में देखिये)

१ ताप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः 'एगपिसुलापिसुले' इति पाठः ।
२ अ-आ-ताप्रतिषु तारम्भे शून्यमेकमधिके तथा समाप्तौ शून्यद्वयमुपलभ्यते ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

संदिट्ठीए एत्थ पक्खेवा बारस १२ । पिसुलाणि छासट्ठी ६६ । पिसुलापिसुलाणि वीसुत्तरबिसदमेत्ताणि २२० । एवं ट्ठविय दुगुणवड्ढी वुच्चदे । तं जहा—उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्ता पक्खेवा अत्थि[1] १२ । ते पुध ट्ठविय पुणो एत्थ उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागमेत्ता सगलपक्खेवा जदि होंति तो दुगुणड्ढिट्ठाणं होदि । ण च एत्तियमत्थि । तदो एत्थ दुगुणवड्ढी ण उप्पज्जदि त्ति ? ण, पिसुलेहिंतो उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागमेत्तपक्खेवुवलंभादो । तं जहा—उक्कस्ससंखेज्जतिण्णिचदुब्भागस्स रूवूणस्स संकलणमेत्ताणि पिसुलाणि उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमुवरि चडिदूण ट्ठिदसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणम्मि अत्थि । तेसिमेगादिएगुत्तरकमेण ट्ठिदाणं समकरणे कीरमाणे पढमिल्लमेगपिसुलं घेत्तूण चरिमपिसुलेसु पक्खित्ते उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तपिसुलाणि होंति । विदियट्ठाणट्ठिददोपिसुलाणि घेत्तूण दुचरिमपिसुलेसु दुरूवूणेसु पक्खित्ते एत्थ वि उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तपिसुलाणि होंति । तदियट्ठाणट्ठिदतिण्णिपिसुलाणि घेत्तूण तिचरिमपिसुलेसु तिरूवूणेसु पक्खित्ते उक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तपिसुलाणि होंति । एवं सव्वेसिं समकरणे कदे उक्कस्ससंखेज्जयस्स

संदृष्टिमें यहाँ प्रक्षेप बारह (१२), पिशुल छयासठ (६६) और पिशुलापिशुल दो सौ बीस (२२०) मात्र हैं। इस प्रकार स्थापित करके दुगुणी वृद्धिकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—

शंका—उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग ($१६ \times \frac{३}{४} = १२$) मात्र प्रक्षेप हैं। इनको पृथक् स्थापित करके फिर यहाँ उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग मात्र सकल प्रक्षेप यदि होते हैं तो दुगुणी वृद्धिका स्थान होता है परन्तु इतना है नहीं। अतएव यहाँ दुगुणी वृद्धि नहीं उत्पन्न होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि पिशुलोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग मात्र प्रक्षेप पाये जाते हैं। यथा—उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग मात्र आगे जाकर स्थित संख्यातभागवृद्धिस्थानमें उत्कृष्ट संख्यातके एक कम तीन चतुर्थ भागके संकलन प्रमाण पिशुल हैं। एकको आदि लेकर एक अधिक क्रमसे स्थित उनका समीकरण करनेमें प्रथम स्थानके एक पिशुलको ग्रहणकर अन्तिम पिशुलोंमें मिलानेपर उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग मात्र पिशुल होते हैं। द्वितीय स्थानमें स्थित दो पिशुलोंको ग्रहणकर दो कम द्विचरम पिशुलोंमें मिलानेपर यहाँ भी उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग मात्र पिशुल होते हैं। तृतीय स्थानमें स्थित तीन पिशुलोंको ग्रहणकर तीन त्रिचरम पिशुलोंमें मिलानेपर उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग मात्र पिशुल होते हैं। इस प्रकार सबका समीकरण करनेपर उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग आयत और एक कम तीन चतुर्थ

१ प्रतिषु १२ संख्येयम् 'ते पुध ट्ठविय' इत्यतः पश्चादुपलभ्यते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिण्णिचदुब्भागायामं रूवूणतिण्णिचदुब्भागद्धविक्खंभखेत्तं होदूण चेट्ठदि । तं चेदं—

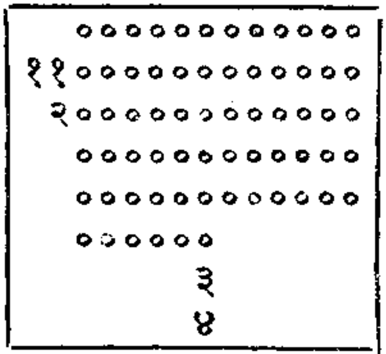

पुणो एत्थ उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागविक्खंभेण तिण्णिचदुब्भागायामेण तच्छेदूण पुध ट्ठवेदव्वं । तं च एदं—

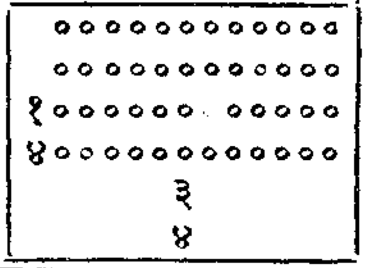

सेसखेत्तमुक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागायामं उक्कस्ससंखेज्जयस्सेव अद्धरूवूणट्ठमभागविक्खंभखेत्तं होदूण चेट्ठदि ।

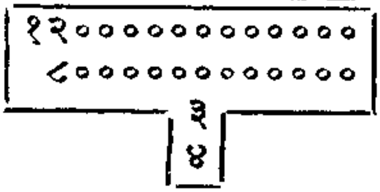

पुणो एदं तिण्णिखंडाणि कादूण तत्थ तदिखंडम्हि उक्कस्ससंखेज्जयस्स अट्ठम-भागमेत्तपिसुलाणि घेत्तूण विदयखंडम्मि ऊणपंतीए ढोइदे[1] पढम-विदियखंडाणि उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागायामेण तस्स अट्ठमभागविक्खंभेण चेट्ठंति । पुणो तत्थ विदियखंडं घेत्तूण पढमखंडस्सुवरि ठविदे उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भाग-

---

भागके अर्ध भाग प्रमाण विस्तृत क्षेत्र होकर स्थित होता है । वह यह है (संदृष्टि मूलमें देखिये)।

फिर इसमेंसे उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग विष्कम्भ और उसके तीन चतुर्थ भाग आयामके प्रमाणसे छीलकर पृथक् स्थापित करना चाहिये । वह यह है—(मूलमें देखिये ।)

शेष क्षेत्र उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग आयत और उत्कृष्ट संख्यातके ही अर्ध अंकसे कम आठवें भाग विस्तृत क्षेत्र होकर स्थित होता है (संदृष्टि मूलमें देखिये)।

फिर इसके तीन खण्ड करके उनमें तृतीय खण्डमेंसे उत्कृष्ट संख्यातके आठवें भाग मात्र पिशुलोंको ग्रहणकर द्वितीय खण्डकी हीन पंक्तिमें मिलानेपर प्रथम और द्वितीय खण्ड उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग आयाम और उसके आठवें भाग विष्कम्भसे स्थित होते हैं । फिर उनमेंसे द्वितीय खण्डको ग्रहणकर प्रथम खण्डके ऊपर स्थापित करनेपर उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग विष्कम्भ और

---

१ अ-आप्रत्योः 'धोइदे' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विक्खंभायामं समचउरसखेत्तं होदि । एदं पुव्विल्ल-खेत्तम्हि उक्कस्ससंखेज्जचदुब्भागविक्खंभम्मि तिण्णिचदुब्भागायामम्मि संधिदे उक्कस्ससंखेज्जायामं तच्चदुब्भागविक्खंभं खेत्तं होदूण चिट्ठदि । तस्स पमाणमेदं

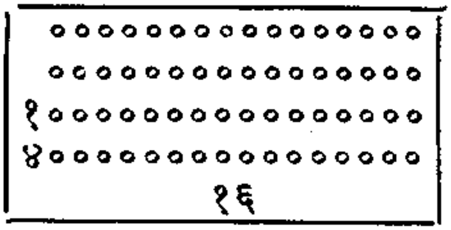

इदि ⁴संदिट्ठीए घेत्तव्वं । एत्थ उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलाणि घेत्तूण एगो संखेज्जभागवड्डिपक्खेवो होदि त्ति उक्कस्ससंखेज्जयस्स चदुब्भागमेत्तसगलपक्खेवा लब्भंति । एदेसु पक्खेवेसु [४] पुव्विल्लउक्कस्ससंखेज्जयस्स तिण्णिचदुब्भागमेत्तपक्खेवेसु [१२] पक्खित्तेसु [१६] उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसंखेज्जभागवड्डिपक्खेवा होंति । एदे सव्वे मिलिदूण एगं जहण्णट्ठाणं होदि । एदम्मि[1] जहण्णट्ठाणे पक्खित्ते दुगुणवड्डी होदि । सेसपिसुलाणि पिसुलापिसुलाणि च तहा चेव चेट्ठंति । एसो वि थूलत्थो ।

संपधि एदम्हादो सुहुमत्थपरूवणा कीरदे । तं जहा—उक्कस्ससंखेज्जं छप्पण्णखंडाणि कादूण तत्थ इगिदालखंडाणि पढमसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणादो उवरि चडिदूण उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसंखेज्जभागवड्डिट्ठाणाणं चरिमट्ठाणादो पण्णारसखंडाणि हेट्ठा ओसरिदूण तदित्थट्ठाणम्मि दुगुणवड्डिट्ठाणमुप्पज्जदि । तं जहा—इगिदालमेत्तखंडाणि उवरि चढिदूण ट्ठिदतदित्थट्ठाणम्मि इगिदालखंडमेत्ता चेव सगलपक्खेवा लब्भंति [४१] ।

आयाम युक्त समचतुरस्र क्षेत्र होता है । इसको उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग विष्कम्भ और उसके तीन चतुर्थ भाग आयामवाले पूर्वके क्षेत्रमें मिला देनेपर उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण आयाम और उसके चतुर्थ भाग मात्र विष्कम्भ युक्त क्षेत्र होकर स्थित रहता है । उसका प्रमाण यह है (मूलमें देखिये), ऐसा संदृष्टिमें ग्रहण करना चाहिये । यहाँ चूँकि उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण पिशुलोंको ग्रहणकर एक संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप होता है, अतएव समस्त प्रक्षेप उत्कृष्ट संख्यातके चतुर्थ भाग प्रमाण होते हैं । इन (४) प्रक्षेपोंको पहिले उत्कृष्ट संख्यातके तीन चतुर्थ भाग प्रमाण (१२) प्रक्षेपोंमें मिलानेपर उत्कृष्ट संख्यात (१६) प्रमाण संख्यातभागवृद्धिप्रक्षेप होते हैं । ये सब मिलकर एक जघन्य स्थान होता है । इसे एक जघन्य स्थानमें मिलानेपर दुगुणी वृद्धि होती है । शेष पिशुल और पिशुलापिशुल उसी प्रकारसे स्थित रहते हैं । यह भी स्थूल अर्थ है ।

अब इसकी अपेक्षा सूक्ष्म अर्थकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है— उत्कृष्ट संख्यातके छप्पन खण्ड करके उनमेंसे इकतालीस खण्ड प्रथम संख्यातभागवृद्धिस्थानसे आगे जाकर अथवा उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके अन्तिम स्थानसे पन्द्रह खण्ड नीचे उतर कर वहाँके स्थानमें दुगुणी वृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है । यथा—इकतालीस मात्र खण्ड ऊपर चढ़कर स्थित वहाँके स्थानमें इकतालीस (४१) खण्ड प्रमाण ही सकल प्रक्षेप पाये जाते हैं ।

---

१ प्रतिषु 'एगम्मि' इती पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संपहि एत्थ पण्णारसखंडमेत्तसगलपक्खेवेसु संतेसु एगं जहण्णट्ठाणं उप्पज्जदि। तेसिं उप्पत्तिविहाणं वुच्चदे। तं जहा—तदित्थट्ठाणपिसुलपमाणमिगिदालखंडसंकलणमेत्तं[1] [४१]। रूवूणमिदि किण्ण भण्णदे ? ण, थोवभावेण अप्पहाणत्तादो। पुणो समकरणे कदे इगिदालखंडायाममिगिदालदुभागविक्खंभं च होदूण चेट्ठदि [२० ४१ / १ / २ ▭]

एवं ट्ठिदक्खेत्तब्भंतरे पुव्विल्लायामपमाणेण पण्णारसखंडमेत्तपिसुलविक्खंभं मोत्तूण एगखंडदुभागाहियपंचखंडविक्खंभं इगिदालखंडायामक्खेत्तं खंडेदूणमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं पण्णारसखंडविक्खंभइगिदालखंडायामखेत्तग्गहणट्ठं। [११ ४१ / २ ▭]

पुणो एत्थ एगखंडद्धविक्खंभेण इगिदालखंडायामेण खेत्तं घेत्तूण पुध ट्ठवेदव्वं [१ ४१ / २ ▯]

पुणो एत्थ एगखंडद्धविक्खंभेण एगखंडायामेण तच्छेदूण पुध ट्ठवेदव्वं। [१ १ / २ ▭]

अब यहाँ पन्द्रह खण्ड प्रमाण सकल प्रक्षेपोंके होनेपर एक जघन्य स्थान उत्पन्न होता है। उनकी उत्पत्तिका विधान बतलाते हैं। वह इस प्रकार है—वहाँके स्थान सम्बन्धी पिशुलोंका प्रमाण इकतालीस खण्डोंके संकलन मात्र है (४१)।

शंका—वह एक अंकसे कम है, ऐसा क्यों नहीं कहते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, स्तोक स्वरूप होनेसे यहाँ उसकी प्रधानता नहीं है।

फिर उनका समीकरण करनेपर इकतालीस खण्ड प्रमाण आयाम और इकतालीसके द्वितीय भाग प्रमाण विष्कम्भसे युक्त होकर क्षेत्र स्थित होता है—${२०}\frac{१}{२}$ $\frac{४१}{▭}$। इस प्रकारसे स्थित क्षेत्रके भीतर पन्द्रह खण्ड विस्तृत और इकतालीस खण्ड आयत क्षेत्रको ग्रहण करनेके लिये—पहिले आयामके प्रमाणसे पन्द्रह खण्ड मात्र पिशुलोंके बराबर विष्कम्भको छोड़कर एक खण्डके द्वितीय भागसे अधिक पांच खण्ड प्रमाण विस्तृत और इकतालीस खण्ड प्रमाण आयत क्षेत्रको खण्डित करके अलग करके पृथक स्थापित करना चाहिये $\frac{११}{२}$ $\frac{४१}{▭}$। फिर इसमेंसे एक खण्डके अर्ध भाग मात्र विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड मात्र आयामसे क्षेत्रको ग्रहणकर पृथक् स्थापित करना चाहिये $\frac{१}{२}$ $\frac{४१}{▯}$। फिर इसमेंसे एक खण्डके अर्ध भाग मात्र विष्कम्भ और एक खण्ड मात्र आयामसे काटकर पृथक् स्थापित करना चाहिये $\frac{१}{२}$ $\frac{१}{▭}$। इस ग्रहण किये गये क्षेत्रसे शेष क्षेत्र

---

१ प्रतिषु 'मेत्त' इति पाठः। २ ताप्रतौ [२० ४१ / १ / १ ▭] एवंविधात्र संदृष्टिः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गहिदसेसखेत्तमेत्तियं होदि 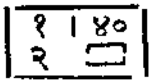

एदं खेत्तमायामेण अट्ठखंडाणि कादूण विक्खंभस्सुवरि संधिदे चत्तारिखंडविक्खंभ-पंचखंडायामं खेत्तं होदि 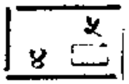

एदं पंचखंडविक्खंभ-इगिदालखंडायामखेत्तस्स सीसम्हि ठविदे पंच-खंडविक्खंभं पणदालखंडायामखेत्तं होदि 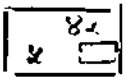

एदं तिण्णिखंडाणि कादूण एगखंडविक्खंभस्सुवरि सेसदोखंडविक्खंभेसु ढोइदेसु विक्खंभायामेहि पण्णारसखंडमेत्तं समचउरसखेत्तं होदि 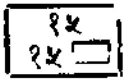

एदं घेत्तूण पण्णारसखंडविक्खंभइगिदालखंडायामखेत्तस्स सीसम्मि ठविदे पण्णारसखंडविक्खंभ-छप्पण्णखंडायामखेत्तं होदि 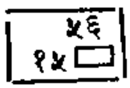

आयामछप्पण्णखंडेसु उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलाणि होंति । उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलेहि वि एगो सगलपक्खेवो होदि, एगसगलपक्खेवे उक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदे एगपिसुलुवलंभादो । तम्हा एत्थ पण्णारसखंडमेत्ता सगलपक्खेवा लब्भंति । एदेसु सगलपक्खेवेसु इगिदालखंडमेत्तसगलपक्खेवेसु पक्खित्तेसु छप्पण्णखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति । ते च सव्वे मेलिदूण एगं जहण्णट्ठाणं, छप्पण्णखंड-मेत्तसगलपक्खेवेहि उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसगलपक्खेवउप्पत्तीदो । उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपक्खेवेहि

इतना होता है २ ४० । इस क्षेत्रके आयामकी ओरसे आठ खण्ड करके विष्कम्भके ऊपर जोड़ देनेपर चार खण्ड विष्कम्भ और पाँच खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है ४ ५ । इसको पाँच खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके शिरके ऊपर स्थापित करनेपर पाँच खण्ड विष्कम्भ और पैंतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है ५ ४५ । इसके तीन खण्ड करके एक खण्डके विष्कम्भके ऊपर शेष दो खण्डोंके विष्कम्भको जोड़ देनेपर विष्कम्भ और आयामसे पन्द्रह खण्ड मात्र समचतुष्कोण क्षेत्र होता है १५ १५ । इसको ग्रहणकर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके शिरपर स्थापित करनेपर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और छप्पन खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है १५ ५६ । आयामके छप्पन खण्डोंमें उत्कृष्ट संख्यात मात्र पिशुल होते हैं । उत्कृष्ट संख्यात मात्र पिशुलोंसे भी एक सकल प्रक्षेप होता है, क्योंकि, एक सकल प्रक्षेपको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करनेपर एक पिशुल पाया जाता है । इसलिये इसमें पन्द्रह खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप पाये जाते हैं । इन सकल प्रक्षेपोंको इकतालीस खण्ड मात्र सकल प्रक्षेपोंमें मिलानेपर छप्पन खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं । वे सब मिलकर एक जघन्य स्थान होता है, क्योंकि छप्पन खण्ड मात्र सकल प्रक्षेपों द्वारा उत्कृष्ट संख्यात मात्र सकल प्रक्षेप उत्पन्न होते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णट्ठाणं होदि त्ति कधं णव्वदे ? उक्कस्ससंखेज्जेण जहण्णट्ठाणे खंडिदे तत्थ एगखंडस्स सगलपक्खेवो त्ति अब्भुवगमादो। एदम्मि जहण्णट्ठाणे मूलिल्लजहण्णट्ठाणम्मि पक्खित्ते दुगुणवड्ढी होदि। पुणो पुव्विल्लअवणियट्ठविदखेत्तं एगखंडद्धविक्खंभं एगखंडायामं विक्खंभेण छप्पण्णखंडाणि कादूण एगखंडस्सुवरि सेसखंडेसु ट्ठविदेसु एगखंडं बारहोत्तरसदेण खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति। एदे सगलपक्खेवा सेसपिसुलापिसुलाणि च अधिया होंति। एसा वि परूवणा थूला चेव।

अथवा, पुव्विल्लखेत्तस्स अण्णेण पयारेण खंडणविहाणं वुच्चदे। तं जहा—इगिदालमेत्तखंडाणि उवरि चडिदूण ट्ठिदट्ठाणम्मि सव्वपिसुलाणि इगिदालीसखंडाणं संकलणमेत्ताणि हवंति। पुणो एदाणं एगादिएगुत्तरसंकलणसरूवेण ट्ठिदाणं तिकोणखेत्तागाराणं समकरणे कदे एगखंडद्धजुदवीसखंडविक्खंभ-इगिदालखंडायामं खेत्तं होदि। पुणो एत्थ पण्णारसखंडविक्खंभेण इगिदालखंडायामेण तच्छिय पुध ट्ठविदे सेसखेत्तमिगिदालखंडायामं अद्धछट्ठखंडविक्खंभं होदूण चेट्ठदि। पुणो एत्थ एगखंडद्धविक्खंभ-इगिदालायामखेत्तमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो सेसखेत्तम्हि पंचखंडविक्खंभम्मि इगिदालखंडायामम्मि पंचखंडविक्खंभ-एक्कारसखंडायामखेत्तं छिंदिय पुध ट्ठविय पुणो पंचखंडविक्खंभं तीसखंडायामं सेसखेत्तं मज्झे सरिसदोखंडाणि कादूण विदियखंडं परावत्तिय

शंका—उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रक्षेपोंसे जघन्य स्थान होता है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—उसका कारण यह है कि जघन्य स्थानमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर उसमेंसे जो एक भाग प्राप्त होता है उसको सकल प्रक्षेप स्वीकार किया गया है।

इस जघन्य स्थानको मूलके जघन्य स्थानमें मिलानेपर दुगुणी वृद्धि होती है। फिर एक खण्डके अर्ध भाग विष्कम्भ और एक खण्ड आयाम रूप पूर्वमें अपनीत करके स्थापित क्षेत्रके विष्कम्भकी ओरसे छप्पन खण्ड करके एक खण्डके ऊपर शेष खण्डोंके स्थापित करनेपर एक खण्डको एकसौ बारहसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं। ये सकल प्रक्षेप और शेष पिशुलापिशुल अधिक होते हैं। यह प्ररूपणा भी स्थूल ही है।

अथवा, पूर्वोक्त क्षेत्रके खण्डनकी विधिका अन्य प्रकारसे कथन करते हैं। यथा—इकतालीस मात्र खण्ड आगे जाकर स्थित स्थानमें सब पिशुल इकतालीस खण्डोंके संकलन प्रमाण होते हैं। फिर एकसे लेकर एक एक अधिक रूप संकलन स्वरूपसे स्थित त्रिकोणाकार इस क्षेत्रका समीकरण करनेपर एक खण्डके अर्ध भाग सहित बीस खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। फिर इसमेंसे पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयामसे छीलकर पृथक् स्थापित करनेपर शेष क्षेत्र इकतालीस खण्ड आयाम और साढ़े पाँच खण्ड विष्कम्भसे युक्त होकर स्थित रहता है। फिर इसमेंसे एक खण्डके अर्ध भाग मात्र विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको अलग करके पृथक् स्थापित करना चाहिये। फिर पाँच खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त शेष क्षेत्रमेंसे पाँच खण्ड विष्कम्भ और ग्यारह खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको काटकर पृथक् स्थापित करके पश्चात् पाँच खण्ड विष्कम्भ और तीस खण्ड आयाम युक्त शेष क्षेत्रके मध्यमेंसे समान दो खण्ड करके द्वितीय खण्डको परिवर्तित

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

पढमखंडस्सुवरि ठविदे दसखंडविक्खंभ-पण्णारसखंडायामखेत्तं होदूण अच्छदि। संपहि पुव्वमवणिय पुध ट्ठविदपंचखंडविक्खंभ-एक्कारखंडायामखेत्तं घेत्तूण एदस्सुवरि ट्ठविदे दक्खिण-पच्छिमदिसासु पण्णारसखंडमेत्तं पुव्वुत्तरदिसासु दस-एक्कारसखंडपमाणं होदूण चिट्ठदि। पुणो पुव्वमवणेदूण पुध ट्ठविदखेत्तम्हि एगखंडद्धविक्खंभम्मि इगिदालखंडायामम्मि एगखंडद्धविक्खंभ-सगलेगखंडायामं खेत्तं घेत्तूण पुध ट्ठविय सेसक्खेत्तायामट्ठखंडाणि कादूण परावत्तिय एगखंडस्सुवरि सेसखंडेसु ट्ठविदेसु चत्तारिखंडविक्खंभं पंचखंडायामं [1]खेत्तं होदि। तम्मि पुव्विल्लखेत्ते समयाविरोहेण ट्ठविदे समचउरसं पण्णारसखंडविक्खंभायामं खेत्तं होदि। एदं घेत्तूण पण्णारसखंडविक्खंभ-इगिदालखंडायामखेत्तस्सुवरि ट्ठविदे पण्णारसखंडविक्खंभ-छप्पण्णखंडायामखेत्तं होदि। एत्थ एगपंतिसगलपक्खेवो होदि, उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलाणं तत्थुवलंभादो। तेणेत्थ पण्णारसखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति त्ति इगिदालखंडमेत्तसगलपक्खेवेसु पक्खित्तेसु छप्पण्णखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति। एदे सव्वे मिलिदूण जहण्णट्ठाणं, उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसगलपक्खेवाणमेत्थुवलंभादो। एदम्हि जहण्णट्ठाणे पक्खित्ते दुगुणवड्ढी होदि। पुणो एगखंडद्धविक्खंभ-सगलेगखंडायामं पुव्वमवणिय पुध ट्ठविदखेत्तं विक्खंभेण छप्पण्ण-

कर प्रथम खण्डके ऊपर स्थापित करनेपर दस खण्ड विष्कम्भ और पन्द्रह खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होकर स्थित रहता है। अब पूर्वमें अपनीत करके पृथक् स्थापित पाँच खण्ड विष्कम्भ और ग्यारह खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको ग्रहणकर इसके ऊपर स्थापित करनेपर दक्षिणपश्चिम दिशाओंमें पन्द्रह खण्ड मात्र और पूर्व-उत्तर दिशाओंमें दस-ग्यारह खण्ड प्रमाण होकर स्थित होता है। फिर एक खण्डके अर्ध भाग विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त पूर्वमें अपनयन करके पृथक् स्थापित क्षेत्रमेंसे एक खण्डके अर्ध भाग विष्कम्भ और सम्पूर्ण एक खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको ग्रहणकर पृथक् स्थापित करके शेष क्षेत्रके आयामकी ओरसे आठ खण्ड करके परिवर्तितकर एक खण्डके ऊपर शेष खण्डोंके स्थापित करनेपर चार खण्ड विष्कम्भ और पाँच खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। उसको यथाविधि पहिलके क्षेत्रके ऊपर स्थापित करनेपर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और उतने ही आयामसे युक्त क्षेत्र होता है। इसको ग्रहणकर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और इकतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके ऊपर स्थापित करनेपर पन्द्रह खण्ड विष्कम्भ और छप्पन खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। यहाँ एक पंक्ति रूप सकल प्रक्षेप होता है, क्योंकि, वहाँ उत्कृष्ट संख्यात मात्र पिशुल पाये जाते हैं। इसीलिये चूँकि यहाँ पन्द्रह खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं, अतएव इकतालीस खण्ड मात्र सकल प्रक्षेपोंके मिलानेपर छप्पन खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं। ये सब मिलकर जघन्य स्थान होता है, क्योंकि, यहाँ उत्कृष्ट संख्यात मात्र सकल प्रक्षेप यहाँ पाये जाते हैं। इसको जघन्य स्थानमें मिलानेपर दुगुणी वृद्धि होती है। फिर एक खण्डके अर्ध भाग विष्कम्भ और एक सम्पूर्ण खण्ड आयाम रूप पहिले अपनीत करके पृथक्

१ अ-ताप्रत्योः '—खंडायामखेत्तं' अप्रतौ 'खंडायामक्खेत्तं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खंडाणि कादूण एगखंडस्स सीसे सेसखंडेसु संधिदेसु छप्पण्णखंडायामं एगखंडस्स बारहोत्तरसदभागविक्खंभखेत्तं होदि । एत्थ विक्खंभमेत्ता चेव सगलपक्खेवा उप्पज्जंति । पुणो सेसपिसुलापिसुलाणि वि सगलपक्खेवो कादूण पुव्विलेहि सह दुगुणवड्डिम्हि पक्खित्ते जहण्णट्ठाणादो सादिरेयदुगुणमेत्तं होदि ।

संपहि जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण तिगुणवड्डिट्ठाणं दुगुणवड्डिट्ठाणादो उवरि इगिदालदुभागमेत्तखंडाणि तिहि खंडेहि अहियाणि गंतूण होदि । तं जहा— इगिदालदुभागस्सुवरि तिसु खंडेसु पक्खित्तेसु साद्धतेवीसखंडाणि होंति | २३½ |

दुगुणवड्डीए उवरि एत्तियमेत्तमद्धाणं गंतूण ट्ठिदट्ठाणम्मि सगलपक्खेवा चडिदद्धाणमेत्ता होंति । $\left| 23\frac{1}{2} \right|$

एदे पक्खेवा दुगुणवड्डिअद्धाणपक्खेवेहिंतो दुगुणा, उक्कस्ससंखेज्जेण दोसु जहण्णट्ठाणेसु अक्कमेण खंडिज्जमाणेसु दोसगलपक्खेवुप्पत्तीदो । तेण एदेसु पक्खेवेसु दुगुणिदेसु एत्थ पुव्विल्लपक्खेवा सत्तेतालीसखंडमेत्ता होंति । एदेहि पक्खेवेहि जहण्णट्ठाणं ण उप्पज्जदि, अण्णेसिं णवण्णं खंडाणमभावादो ।

संपहि तेसिमुप्पत्तिविहाणं उच्चदे । तं जहा—साद्धतेवीसखंडगच्छस्स एगादिएगुत्तरसंकलणतिकोणखेत्तं ठविय समकरणे कदे एगखंडतिण्णिचदुब्भागेण समहियएक्कारसखंडविक्खंभं $\left| 11\frac{3}{4} \right|$ साद्धतेवीसखंडायामं खेत्तं $\left| 23\frac{1}{2} \right|$ होदूण चेट्ठदि ।

स्थापित क्षेत्रके विष्कम्भकी ओरसे छप्पन खण्ड करके एक खण्डके शिरपर शेष खंडोंके स्थापित करनेपर छप्पन खण्ड आयाम और एक खण्डके एक सौ बारहवें भाग विष्कम्भ युक्त क्षेत्र होता है । यहाँ विष्कम्भके बराबर ही सकल प्रक्षेप उत्पन्न होते हैं । फिर शेष पिशुलापिशुलोंको भी सकल प्रक्षेप करके पूर्व पिशुलापिशुलोंके साथ दुगुणी वृद्धिमें मिलानेपर जघन्य स्थानकी अपेक्षा साधिक दुगुण मात्र होता है ।

अब जघन्य स्थानकी अपेक्षा तिगुणी वृद्धिका स्थान दुगुणवृद्धिस्थानसे आगे इकतालीसके द्वितीय भाग मात्र खण्ड तीन खण्डोंसे अधिक जाकर होता है । वह इस प्रकारसे—इकतालीस खण्डोंके द्वितीय भागके ऊपर तीन खण्डोंके मिलानेपर साढ़े तेईस खण्ड होते हैं | २३½ | । दुगुण वृद्धिके आगे इतने मात्र स्थान जाकर स्थित स्थानमें सकल प्रक्षेप गत स्थानोंके बराबर होते हैं २३½ । ये प्रक्षेप दुगुणवृद्धिके स्थानों सम्बन्धी प्रक्षेपोंसे दुगुणे होते हैं, क्योंकि, दो जघन्य स्थानोंमें एक साथ उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर दो सकल प्रक्षेप उत्पन्न होते हैं । इसलिये इन प्रक्षेपोंको दूने करनेपर यहाँ पहलेके प्रक्षेप सैंतालीस खण्ड प्रमाण होते हैं । इन प्रक्षेपोंसे जघन्य स्थान नहीं उत्पन्न होता है, क्योंकि, दूसरे नौ खण्डोंका यहाँ अभाव है ।

अब उनकी उत्पत्तिके विधानको कहते हैं । वह इस प्रकार है—साढ़े तेईस खण्ड गच्छके एकसे लेकर उत्तरोत्तर एक एक अधिक संकलन प्रमाण त्रिकोण क्षेत्रको स्थापित करके समीकरण करनेपर एक खण्डके तीन चतुर्थ भागसे अधिक ग्यारह खण्ड विष्कम्भ (११¾) और साढ़े तेईस खण्ड (२३½) आयाम युक्त क्षेत्र होकर स्थित रहता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णवरि एदं खेत्तं दोपिसुलबाहल्लमिदि कट्टु अब्भपटलं व मज्झे दोफालीओ कादूण एगफालीए उवरि विदियफालीए ट्ठविदाए तिण्णिचदुब्भागाहियएक्कारसखंडविक्खंभं सत्तेतालीसखंडायामक्खेत्तं होदि । एत्थ तिण्णिचदुब्भागाहियदोखंडविक्खंभेण सत्तेत्तालखंडायामेण तच्छेदूण अवणिय पुध ट्ठविदे सेसखेत्तपमाणं णवखंडविक्खंभं सत्तेतालखंडायामं होदि । पुणो पुव्वमवणेदूण पुध ट्ठविदखेत्तम्हि[1] तिण्णिचदुब्भागविक्खंभेण सत्तेतालीसखंडायामेण तच्छेदूण पुध ट्ठविय सेसखेत्तं दोखंडविक्खंभं सत्तेतालीसखंडायामं मज्झे दोफालीयो कादूण एगफालीए उवरि विदियफालीए संधिदाए एगखंडविक्खंभं चदुणउदिखंडायामं खेत्तं होदि । एत्थ एक्कासीदिमेत्तखंडवग्गो घेत्तूण पदरागारेण ठइदे समचउरंसं णवखंडयाम-विक्खंभखेत्तं होदि । एदं घेत्तूण पुव्वुत्तणवविक्खंभ-सत्तदालीसखंडायामखेत्तस्स पासे ट्ठविदे णवविक्खंभ-छप्पण्णायामखेत्तं होदि । एत्थ णवखंडमेत्तसगलपक्खेवा लब्भंति; एगोलीए उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपिसुलुवलंभादो । एदे सगलपक्खेवे घेत्तूण सत्तेतालीसखंडमेत्तसगलपक्खेवेसु पक्खित्ते छप्पण्णखंडमेत्ता सगलपक्खेवा होंति । एदेहि सगलपक्खेवेहि एगं जहण्णट्ठाणं होदि, एदेसु छप्पण्णखंडेसु उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसगलपक्खेवुवलंभादो । एदम्मि उप्पण्णजहण्णट्ठाणे दुगुणवड्ढिट्ठाणम्हि[2]

विशेष इतना है कि यह क्षेत्र चूँकि दो पिशुल बाहल्य रूप है, इसलिये अभ्रपटलके समान बीचमेंसे दो फालियाँ करके एक फालिके ऊपर दूसरी फालिको स्थापित करनेपर तीन चतुर्थ भागोंसे अधिक ग्यारह खण्ड विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है । इसमेंसे तीन चतुर्थ भागसे अधिक दो खण्ड विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयामसे काटकर पृथक् स्थापित करनेपर शेष क्षेत्रका प्रमाण नौ खण्ड विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयामरूप होता है । फिर पहिले अपनयन करके पृथक् स्थापित क्षेत्रमेंसे तीन चतुर्थ भाग विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयामसे क्षेत्रको काटकर पृथक् स्थापित करके दो खण्ड विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयाम युक्त शेष क्षेत्रके बीचमेंसे दो फालियाँ करके एक फालिके ऊपर दूसरी फालिको जोड़ देनेपर एक खण्ड विष्कम्भ और चौरानवें खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है । इसमेंसे इक्यासी मात्र खण्डोंके वर्गको ग्रहणकर प्रतराकारसे स्थापित करनेपर नौ खण्ड विष्कम्भ और नौ खण्ड आयाम युक्त समचतुष्कोण क्षेत्र होता है । इसको ग्रहणकर पूर्वोक्त नौ खण्ड विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके पार्श्व भागमें स्थापित करनेपर नौ खण्ड विष्कम्भ और छप्पन खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है । यहाँ नौ खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप पाये जाते हैं, क्योंकि, एक पंक्तिमें उत्कृष्ट संख्यात मात्र पिशुलोंकी उपलब्धि है । इन सकल प्रक्षेपोंको ग्रहण करके सैंतालीस खण्ड मात्र सकल प्रक्षेपोंमें मिलानेपर छप्पन खण्ड मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं । इन सकल प्रक्षेपोंसे एक जघन्य स्थान होता है, क्योंकि, इन छप्पन खण्डोंमें उत्कृष्ट संख्यात मात्र सकल प्रक्षेप पाये जाते हैं । उत्पन्न हुए इस जघन्य

१ अप्रतौ 'ट्ठविदे खेत्तम्हि' इति पाठः ।

२ आप्रतौ 'वड्ढिट्ठाणेहि', ताप्रतौ 'वड्ढिट्ठाणे [हि]' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पक्खित्ते तिगुणवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि । संपहि एगासीदिखंडेसु गहिदेसु सेसखेत्तमेगखंड-विक्खंभं तेरसखंडायामं एगखंडतिण्णिचदुब्भागविक्खंभसत्तेतालीसखंडायामखेत्तं च अधियं होदि । एदाणि दो वि खेत्ताणि एक्कदो करिय तिगुणट्ठाणम्मि पक्खित्ते सादि-रेयतिगुणवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । तेणेसा परूवणा थूलत्था ।

जदि थूलत्था, किमट्ठं उच्चदे ? अव्वुप्पण्णजणवुप्पायणट्ठं । अथवा, इगिदालदु-भागस्सुवरि सादिरेयदोखंडेसु पक्खित्तेसु तिगुणवड्ढिअद्धाणं होदि, तत्थतणपिसुलापि-सुलेसु दुरूवूणगच्छतिभागगुणिदरूवूणगच्छसंकलणमेत्तेसु पक्खित्तेसु तिगुणट्ठाणुप्पत्तीदो ।

संपहि तिगुणवड्ढीए उवरि इगिदालखंडतिभागं किंचूणतिखंडाहियं गंतूण चदु-ग्गुणवड्ढी उप्पज्जदि । केत्तिएणूणाणं तिण्णं खंडाणं पक्खेवो कीरदे ? एगखंडतिभागेण ऊणाणं पक्खेवो कीरदे । वड्डिदद्धाणखंडपमाणमेदं १६ १/२

पुणो एत्तियमेत्तखंडायाम-विक्खंभेण तिण्णिपिसुलबाहल्लेण तिकोणं होदूण पिसुलखे-त्तमागच्छदि । एत्थ पक्खेवा पुण तिगुणवड्डिदद्धाणमेत्ता लब्भंति । किमट्ठं पक्खेवाणं तिगुणत्तं कीरदे ? ण एस दोसो, तिसु जहण्णट्ठाणेसु उक्कस्ससंखेज्जेण खंडिज्जमाणेसु तिण्णं पक्खेवाणम-

स्थानमें दुगुणवृद्धिस्थानको मिलानेपर त्रिगुणवृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है । अब इक्यासी खण्डोंके ग्रहण करनेपर शेष क्षेत्र एक खण्ड विष्कम्भ और तेरह खण्ड आयाम युक्त तथा एक खण्डके तीन चतुर्थ भाग विष्कम्भ और सैंतालीस खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र अधिक होता है । इन दोनों ही क्षेत्रोंको इकट्ठा करके त्रिगुणवृद्धिस्थानमें मिलानेपर साधिक त्रिगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । इस कारण यह स्थूलार्थ प्ररूपणा है ।

शंका—यदि यह प्ररूपणा स्थूलार्थ है तो उसका कथन किसलिये किया जा रहा है ?

समाधान—इसका कथन अव्युत्पन्न जनोंको व्युत्पन्न करानेके लिये किया जा रहा है ।

अथवा, इकतालीस खण्डके द्वितीय भागके ऊपर साधिक दो खण्डोंके मिलानेपर त्रिगुण-वृद्धिका अध्वान होता है, क्योंकि, दो कम गच्छके तृतीय भागसे गुणित एक कम गच्छके संकलन प्रमाण वहाँ के पिशुलापिशुलोंको मिलानेपर तिगुणी वृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है ।

अब त्रिगुण वृद्धिके ऊपर कुछ कम तीन खण्डोंसे अधिक इकतालीस खण्डके तृतीय भाग प्रमाण जाकर चौगुणी वृद्धि उत्पन्न होती है ।

शंका—कितने मात्रसे हीन तीन खण्डों का प्रक्षेप किया जाता है ?

समाधान—एक खण्डके तृतीय भागसे हीन तीन खण्डोंका प्रक्षेप किया जाता है ।

गत अध्वानखण्डोंका प्रमाण यह है—१६ १/२ । फिर इतने मात्र खण्ड आयाम व विष्कम्भ तथा तीन पिशुल बाहल्यसे त्रिकोण होकर पिशुलक्षेत्र आता है । परन्तु यहाँ प्रक्षेप गत अध्वानसे तिगुणे मात्र पाये जाते हैं ।

शंका—प्रक्षेपोंको तिगुणा किसलिये किया जाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, तीन जघन्य स्थानोंको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करनेपर एक साथ तीन प्रक्षेपोंकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

छ. १२-२४.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कमेणुप्पत्तिदंसणादो। तेसिं पमाणमेदं |४९|। संपहि एत्थ सत्तखंडमेत्तपक्खेवा जदि होंति तो अण्णं जहण्णट्ठाणं उप्पज्जदि। सत्तखंडमेत्तपक्खेवा- [१६ १/२][1] णमेत्थतणपिसुलेहिंतो उप्पत्तिविहाणं वुच्चदे। तं जहा— [१६ / १ / २]

[२]एदस्स गच्छस्स संकलणाए समकरणे कदे सछब्भागअट्ठखंडविक्खंभं [८ / १ / ६]

सतिभागसोलसखंडायामं [१६ / १ / ३]

खेत्तं होदि। संपहि तिण्णिपिसुलमेत्तो एदस्स खेत्तस्स [२]पहवो होदि त्ति बाहल्लेण तिण्णि फालीयो कादूण एगफालीए सेसदोफालीसु संधिदासु आयामो पुव्विल्लायामादो तिगुणो होदि |४९|। विक्खंभो पुण पुव्विल्लो चेव। एवंट्ठिदखेत्तम्हि सत्तखंडविक्खंभेण एगूणवंचासखंडायामेण खेत्तं मोत्तूण सच्छभागएगखंडविक्खंभं एगूणवंचासखंडायामं[३] खेत्तं पादेदूण पुध ट्ठविय पुणो एत्थ एगखंडछब्भागविक्खंभं एगूणवंचासखंडायामं[४] तच्छेदूण पुध ट्ठवेदव्वं। पुणो एगखंडविक्खंभ-एगूणवंचासायामक्खेत्तं सत्तफालीयो कादूण पदरागारेण ट्ठइदे आयाम-विक्खंभेहि सत्तखंडपमाणसमचउरसखेत्तं होदि। पुणो एदम्मि सत्तविक्खंभएगूणवंचासायामक्खेत्तस्सुवरि ठविदे सत्तखंडविक्खंभ-छप्पण्णा-

उनका प्रमाण यह है - ४९। अब यहाँ यदि सात खण्ड मात्र प्रक्षेप होते हैं तो अन्य जघन्य स्थान उत्पन्न होता है। यहाँके पिशुलोंसे सात खण्ड मात्र प्रक्षेपोंकी उत्पत्तिके विधानको कहते हैं। वह इस प्रकार है—१६ १/२ इस गच्छके संकलनका समीकरण करनेपर छठे भाग सहित आठ (८ १/६) खण्ड विष्कम्भ और एक तृतीय भाग सहित सोलह (१६ १/३) खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। अब चूँकि इस क्षेत्रका प्रभव तीन पिशुल प्रमाण होता है, अतएव इसकी बाहल्यकी ओरसे तीन फालियाँ करके एक फालिके ऊपर शेष दो फालियोंको रखनेपर पूर्व आयामसे तिगुणा आयाम होता है—१६ १/३ × ३ = ४९। परन्तु विष्कम्भ पहिलेका ही रहता है। इस प्रकार स्थित क्षेत्रमें सात खण्ड विष्कम्भ और उनंचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको छोड़कर छठे भाग सहित एक खण्ड विष्कम्भ और उनंचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको फाड़कर पृथक् स्थापित करके फिर यहाँ एक खण्डके छह भाग विष्कम्भ एवं उनंचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको काटकर पृथक् स्थापित करना चाहिये। फिर एक खण्ड विष्कम्भ और उनंचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रकी सात फालियाँ करके प्रतराकारसे स्थापित करनेपर आयाम व विष्कम्भसे सात खण्ड प्रमाण समचतुष्कोण क्षेत्र होता है। फिर इसको सात खण्ड विष्कम्भ और उनंचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रके

१ ताप्रतौ [१६ / १ / ३] इति पाठः। २ प्रतिषु पोहवो होदि इति पाठः।

३ ताप्रतौ 'खंडायामेण' इति पाठ। ४ अ-आप्रत्योरनुपलभ्यमानोऽयं पाठस्ताप्रतितोऽत्र योजितः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यामक्खेत्तं होदि। एत्थ सत्तखंडमेत्तपक्खेवा लब्भंति, छप्पण्णखंडमेत्तपिसुलेहि एगपक्खेवुप्पत्तीदो। पुणो एदे सत्तखंडमेत्तपक्खेवे घेत्तूण एगूणवंचासखंडमेत्तपक्खेवेसु पक्खित्तेसु उक्कस्ससंखेज्जमेत्तसगलपक्खेवा होंति, छप्पण्णखंडमेत्तपक्खेवेहि उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपक्खेवुप्पत्तीदो। एदेहि सव्वेहि पक्खेवेहि एगं जहण्णट्ठाणं होदि। तम्मि [1]तिसु जहण्णट्ठाणेसु पक्खित्ते चदुगुणवड्ढी होदि।

पुणो पुव्वमवणिदछब्भागविक्खंभएगूणवंचासखंडायामक्खेत्ते समकरणं करिय पक्खित्ते सादिरेयचदुग्गुणवड्ढिट्ठाणं होदि। सेसपिसुलापिसुलाणं पि जाणिय पक्खेवो कायव्वो। संपहि इगिदालदुभाग-तिभागादिसु पक्खेवखंडाणि णावट्ठिदसरूवेण गच्छंति, तहाणुवलंभादो। कुदो पुण पक्खेवपमाणमवगम्मदे? ईहादो। तत्थ संदिट्ठी—

४९	२३	३	१६	३	१२	२	१०	२	८	१	७	१	६	१	६	१	५	१	४	१	
	१		१	२	३	२	२	१	४	५	४	५	५	४	०	४	४	३	१०	२	—
	२		३	३	४	४	५	५	६	६	७	७	८	८	०	९	१०	१०	११	११	
४	१	४	२	३	३	३	३	३	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१	१
६	१	२	०	१३	१०	७	४	१	१७	१५	१३	११	९	७	५	३	१	२७	१६	२५	२४
१०	१२	१३		१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१

एसा संदिट्ठी पिसुलाणि चेव अस्सिदूणुप्पण्णदुगुणवड्ढीणमद्धाणपरूवणट्ठं ट्ठविदा, पिसुलापिसुलेहि विणा दुगुणत्तुवलंभादो।

ऊपर रखनेपर सात खण्ड विष्कम्भ और छप्पन खण्ड आयाम युक्त क्षेत्र होता है। इसमें सात खण्ड मात्र प्रक्षेप पाये जाते हैं, क्योंकि, छप्पन खण्ड मात्र पिशुलोंसे एक प्रक्षेप उत्पन्न होता है। फिर इन सात खण्ड प्रमाण प्रक्षेपोंको ग्रहणकर उनंचास खण्ड मात्र प्रक्षेपोंमें मिलानेपर उत्कृष्ट संख्यात मात्र सकल प्रक्षेप होते हैं, क्योंकि, छप्पन खण्ड मात्र प्रक्षेपोंसे उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रक्षेप उत्पन्न होते हैं। इन सब प्रक्षेपोंसे एक जघन्य स्थान होता है। उसे तीन जघन्य स्थानोंमें मिलानेपर चतुर्गुणी वृद्धि होती है।

फिर पहिले अलग किये गये छठे भाग [सहित एक खण्ड] विष्कम्भ और उनंचास खण्ड आयाम युक्त क्षेत्रको समीकरण करके मिलानेपर साधिक चौगुणी वृद्धिका स्थान होता है। शेष पिशुलापिशुलोंका भी जानकर प्रक्षेप करना चाहिये। अब इकतालीस द्वितीय भाग और तृतीय भागादिकोंमें प्रक्षेपखण्ड अवस्थित स्वरूपसे नहीं जाते हैं, क्योंकि, वैसे पाये नहीं जाते हैं।

शंका—फिर प्रक्षेपोंका प्रमाण कैसे जाना जाता है?

समाधान—वह ईहासे जाना जाता है।

यहाँ संदृष्टि—(मूलमें देखिये)। यह संदृष्टि पिशुलोंका ही आश्रय करके उत्पन्न दुगुणवृद्धियोंके अध्वानकी प्ररूपणा करनेके लिये स्थापित की गई है, क्योंकि, पिशुलापिशुलोंके बिना दुगुणापन पाया नहीं जाता।

---

१ ताप्रतौ 'दि (ति) सु' इति पाठः।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

संपहि एत्थ एगकंदयमेत्तसंखेज्जभागवड्डीसु पण्णाए पुध कादूण एगपंतियागारेण ठविदासु सव्वगुणहाणीणमद्धाणं सरिसं चेव, गुणहाणिअद्धाणाणं विसरिसत्तस्स कारणाणुवलंभादो। ण ताव गुणहाणिं पडि पक्खेवपिसुलादीणं दुगुणत्तं गुणहाणीणं विसरिसत्तस्स कारणं, गुणहाणिं पडि दुगुण-दुगुणपक्खेवकसाउदयट्ठाणगुणहाणीणं पि विसरिसत्तब्भुवगमादो। ण च पक्खेवाणं गुणहाणिं पडि दुगुणत्तणेण विणा गुणहाणीणमवट्ठिदत्तं संभवइ, अण्णासिं तव्वड्ढि-हाणीणं तेण विरोहुवलंभादो। ण च एत्थ पक्खेवादीणं दुगुणत्तमसिद्धं, अवट्ठिदभागहारेण दुगुण-दुगुणविहज्जमाणरासीसु ओवट्टिज्जमाणासु विहज्जमाणरासिपडिभागबाहल्लस्सुवलंभादो। छप्पण्णोवट्टिदउक्कस्ससंखेज्जस्स इगिदालंसाणं दुभाग-तिभागादिसु संकलिदेसु गुणहाणिअद्धाणस्स णावट्ठिदत्तमुवलंभदि त्ति णासंकणिज्जं, तेसु वि संकलिदेसु पढमगुणहाणिपमाणेणेव उप्पज्जेयव्वं, पढमगुणहाणिपक्खेवादीहिंतो दुगुणेसु विदियगुणहाणिपक्खेवादिसु संतेसु विदियगुणहाणीए अद्धाणस्स [1]विसरिसत्तविरोहादो। पक्खेण गुणहाणीणं सरिसत्तं बाहिज्जदि त्ति णासंकणिज्जं, खंडाणं पक्खेव-

अब यहाँ एक काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियोंको बुद्धिसे पृथक् करके एक पंक्तिके आकारसे स्थापित करनेपर सब गुणहानियोंका अध्वान समान ही रहता है, क्योंकि, गुणहानियोंके अध्वानोंके असमान होनेका कोई कारण नहीं पाया जाता। यदि कहा जाय कि प्रत्येक गुणहानिमें प्रक्षेप व पिशुलादिकोंकी दुगुणता गुणहानियोंकी असमानताका कारण है, सो यह भी ठीक नहीं है; क्योंकि, प्रत्येक गुणहानिमें दूने दूने प्रक्षेप, कषायोदयस्थान और गुणहानियोंकी भी असमानता स्वीकार की गई है। प्रत्येक गुणहानिमें प्रक्षेपोंके दूने होनेके बिना गुणहानियोंका अवस्थित रहना सम्भव भी नहीं है, क्योंकि, उससे अन्य उक्त वृद्धि-हानियोंका विरोध पाया जाता है। दूसरे, यहाँ प्रक्षेप आदिकोंका दूना होना असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि, अवस्थित भागहारके द्वारा दूनी दूनी विभज्यमान राशियोंको अपवर्तित करनेपर विभज्यमान राशि मात्र प्रतिभाग बाहल्य पाया जाता है।

शंका—छप्पनसे अपवर्तित उत्कृष्ट संख्यातके इकतालीस अंशोंके द्वितीय व तृतीय भागादिकोंके संकलनोंमें गुणहानिअध्वान अवस्थित नहीं पाया जाता है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, उन संकलनोंको भी प्रथम गुणहानिके प्रमाणसे ही उत्पन्न होना चाहिये; क्योंकि, प्रथम गुणहानि सम्बन्धी प्रक्षेपादिकोंसे द्वितीय गुणहानि सम्बन्धी प्रक्षेपादिकोंके दूने होनेपर द्वितीय गुणहानि सम्बन्धी अध्वानके विसदृश होनेका विरोध है।

शंका—गुणहानियोंकी सदृशता तो प्रत्यक्षसे बाधित है?

समाधान—यह शंका ठीक नहीं है, क्योंकि, खण्डोंके प्रक्षेपोंका विधान चूँकि अन्यथा

१ ताप्रतौ 'वि सरिसत्त-' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

विहाणण्णहाणुववत्तीए तत्थुप्पाइदगुणहाणिअद्धाणस्स पुधत्ताभावसिद्धीदो। ण च गुणहाणिअद्धाणस्स संखेज्जदिभागहीणत्तं संखेज्जगुणहीणत्तं वा वोत्तुं जुत्तं, गुणहाणिअद्धाणस्स णिस्सेसविलयत्तप्पसंगादो। ण च एवं, अप्पिददुगुणवड्ढीदो अवराए दुगुणवड्ढीए एगपक्खेवाहियमेत्तेण दुगुणत्तप्पसंगादो। तं पि ण घडदे, पमाणविसयमुल्लंघिय अवट्ठिदत्तादो। तम्हा सव्वासिं गुणहाणीणमद्धाणं सरिसं ति दट्ठव्वं। एवं संखेज्जगुणवड्ढी चेव होदूण ताव गच्छदि जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयमेत्तगुणहाणीयो गदाओ त्ति। पढमदुगुणवड्ढीदो जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणयमेत्तासु दुगुणवड्ढीसु गदासु पढमा असंखेज्जगुणवड्ढी उप्पज्जदि, जहण्णपरित्तासंखेज्जेण जहण्णट्ठाणे गुणिदे तदित्थट्ठाणुप्पत्तीदो। एत्तो प्पहुडि उवरि सव्वत्थ असंखेज्जगुणवड्ढी चेव जाव अट्ठंकहेट्ठिमतदणंतरउव्वंके त्ति। पढमअट्ठंकप्पहुडि जाव पज्जवसाणउव्वंके त्ति ताव सव्वट्ठाणाणि जहण्णट्ठाणादो अणंतगुणाणि, अट्ठंकेसु पुध पुध सव्वजीवरासिगुणगारुवलंभादो।

संपहि वड्ढीणं जहण्णट्ठाणमवलंबिय विसयपमाणपरूवणा कीरदे। तं जहा— अणंतभागवड्ढीए विसओ एगकंदयमेत्तो, उवरि असंखेज्जभागवड्ढिदंसणादो। संपहि असंखेज्जभागवड्ढिविसयस्स पमाणपरूवणा कीरदे। तं जहा—कंदयसहिदकंदयवग्गमेत्तो

बनता नहीं है, अतएव वहाँ उत्पन्न कराये गये गुणहानिअध्वानकी अभिन्नता (सदृशता) सिद्ध है। गुणहानिअध्वान संख्यातवें भागसे हीन अथवा संख्यातगुणा हीन है, ऐसा कहना भी उचित नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे गुणहानिअध्वानके पूर्णतया नष्ट होनेका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वैसा होनेपर विवक्षित दुगुणवृद्धिकी अपेक्षा इतर दुगुणवृद्धिके एक प्रक्षेपकी अधिकता मात्रसे दूने होनेका प्रसंग आता है।

वह भी घटित नहीं होता है, क्योंकि, प्रमाणविषयताका उल्लंघन करके उसका अवस्थान है। इस कारण सब गुणहानियोंका अध्वान सदृश है, ऐसा समझना चाहिये।

इस प्रकार संख्यातगुणवृद्धि ही होकर तब तक जाती है जब तक कि जघन्य परीतासंख्यात के एक अंकसे हीन अर्धच्छेदोंके बराबर गुणहानियाँ समाप्त नहीं होती हैं। प्रथम दुगुणवृद्धिसे जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर दुगुणवृद्धियोंके समाप्त होनेपर प्रथम असंख्यातगुणवृद्धि उत्पन्न होती है, क्योंकि, जघन्य परीतासंख्यातसे जघन्य स्थानको गुणित करनेपर वहाँका स्थान उत्पन्न होता है। इससे आगे अष्टांकके अधस्तन तदनन्तर ऊर्वक तक सर्वत्र असंख्यातगुणवृद्धि ही है। प्रथम अष्टांकसे लेकर अन्तिम ऊर्वक तक सब स्थान जघन्य स्थानसे अनन्तगुणे हैं, क्योंकि अष्टांकोंमें पृथक् पृथक् सब जीवराशि गुणकार पाया जाता है।

अब जघन्य स्थानका आलम्बन करके वृद्धियोंके विषयके प्रमाणकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है—अनन्तभागवृद्धिका विषय एक काण्डक प्रमाण है, क्योंकि, आगे असंख्यातभागवृद्धि देखी जाती है। अब असंख्यातभागवृद्धि विषयक प्रमाणकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है—असंख्यातभागवृद्धिका विषय एक काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण है।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

असंखेज्जभागवड्ढीए विसओ। तं जहा—एक्किस्से असंखेज्जभागवड्ढीए जदि रूवाहियकंदयमेत्ताओ असंखेज्जभागवड्ढीओ लब्भंति तो कंदयमेत्तासु असंखेज्जभागवड्ढीसु केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए कंदयसहिदकंदयवग्गमेत्तो असंखेज्जभागवड्ढिविसओ होदि।

संपहि संखेज्जभागवड्ढिविसयस्स पमाणपरूवणा कीरदे। तं जहा—रूवाहिय[1]-कंदएण एगकंदए गुणिदे दोण्णं संखेज्जभागवड्ढीणं अंतरं होदि। पुणो तत्थ पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणे पक्खित्ते रूवाहियमंतरं होदि। पुणो एक्कसंखेज्जभागवड्ढीए जदि एत्तियो संखेज्जभागवड्ढिविसओ लब्भदि तो उक्कस्ससंखेज्जं छप्पण्णखंडाणि कादूण तत्थ इगिदालखंडेसु जत्तियाणि रूवाणि तत्तियासु संखेज्जभागवड्ढीसु किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए संखेज्जभागवड्ढिविसओ होदि।

संपहि संखेज्जगुणवड्ढिविसयस्स पमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—पुव्विल्लसंखेज्जभागवड्ढिविसयं ठविय तेरासियकमेण जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणएहि रूवूणएहि सव्व[2]गुणहाणिअद्धाणाणि सरिसाणि त्ति गुणिदे संखेज्जगुणवड्ढिविसयो होदि।

संपहि असंखेज्जगुणवड्ढिविसयपमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—संखेज्जभागवड्ढिविसओ अणंतरोवणिधाए अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो। एदस्स असंखेज्ज-

---

यथा—एक असंख्यातभागवृद्धिमें यदि एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियाँ पायी जाती हैं तो काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियोंमें वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक काण्डकके साथ काण्डकके वर्ग मात्र असंख्यातभागवृद्धिका विषय होता है।

अब संख्यातभागवृद्धिके विषयप्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक अधिक काण्डकसे एक काण्डकको गुणित करनेपर दोनों संख्यातभागवृद्धियोंका अन्तर होता है। फिर उसमें प्रथमसंख्यातभागवृद्धिके स्थानको मिलानेपर एक अंकसे अधिक अन्तर होता है। अब एक संख्यातभागवृद्धिमें यदि संख्यातभागवृद्धिविषयक इतना अन्तर पाया जाता है तो उत्कृष्ट संख्यातके छप्पन खण्ड करके उनमेंसे इकतालीस खण्डोंमें जितने अंक हैं उतनी मात्र संख्यातभागवृद्धियोंमें वह कितना पाया जावेगा, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर संख्यातभागवृद्धिका विषय होता है।

अब संख्यातगुणवृद्धिके विषयप्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—पूर्वोक्त संख्यातभागवृद्धिके विषयको स्थापित करके त्रैराशिक क्रमसे जघन्य परीतासंख्यातके एक अंकसे हीन अर्धच्छेदोंसे सब गुणहानिअध्वानोंको सदृश होनेके कारण गुणित करनेपर संख्यातगुणवृद्धिका विषय होता है।

अब असंख्यातगुणवृद्धिके विषयप्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—संख्यातभागवृद्धिका विषय अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र है। इसके असंख्या-

---

१ ताप्रतौ 'दुरूवाहिय' इति पाठः। २ अप्रतौ 'रूवूणसव्व' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिभागे चेव अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीओ समत्ताओ त्ति संखेज्जभागवड्ढिअद्धाणस्स असंखेज्जा भागा, संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढिअद्धाणाणि च संपुण्णाणि असंखेज्जगुणवड्ढिविसओ होदि।

संपहि पढमअट्ठंकप्पहुडि जाव उव्वंके त्ति ताव अणंतगुणवड्ढीए विसओ। एत्थ तिण्णि अणिओगद्दाराणि—परूवणा पमाणमप्पाबहुगं चेदि। परूवणाए अत्थि एगाणुभागदुगुणवड्ढिट्ठाणंतरं णाणादुगुणवड्ढिसलागाओ च। पमाणं—एगाणुभागदुगुणवड्ढिट्ठाणंतरमंगुलस्स असंखेज्जदिभागो। णाणादुगुणवड्ढिट्ठाणंतरसलागाओ असंखेज्जा लोगा। अप्पाबहुगं—एगाणुभागदुगुणवड्ढिट्ठाणंतरं थोवं। णाणादुगुणवड्ढिट्ठाणंतरसलागाओ असंखेज्जगुणाओ।

अवहारो—जहण्णट्ठाणफद्दयपमाणेण सव्वट्ठाणफद्दयाणि अणंतेण कालेण अवहिरिज्जंति। एवं सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जहण्णट्ठाणप्पहुडि उवरिमट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि अणंतेण कालेण अवहिरिज्जंति त्ति वत्तव्वं। णवरि चरिमअट्ठंकप्पहुडि जाव पज्जवसाणउव्वंके त्ति ताव एदेसिं ट्ठाणाणं पमाणेण सव्वट्ठाणेसु अवहिरिज्जमाणेसु असंखेज्जेण कालेण अवहिरिज्जंति, कंदयमेत्तअसंखेज्जलोगेसु कंदयसहिदकंदयवग्गमेत्तउकस्ससंखेज्जेसु अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तअसंखेज्जलोगअण्णोण्णब्भत्थरासीसु च परोप्परं गुणिदासु वि अणंतरासिसमुप्पत्तीए अभावादो। पज्जवसाणउव्वंकपमाणेण सव्व-

---

तवें भागमें ही अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि ये वृद्धियाँ चूँकि समाप्त हो जाती हैं, अतएव संख्यातभागवृद्धिअध्वानका असंख्यातबहुभाग तथा संख्यातगुणवृद्धि एवं असंख्यातगुणवृद्धिका सम्पूर्ण अध्वान असंख्यातगुणवृद्धिका विषय होता है।

अब प्रथम अष्टांकसे लेकर ऊर्वंक तक अनन्तगुणवृद्धिका विषय है। यहाँ तीन अनुयोगद्वार हैं—प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व। प्ररूपणाकी अपेक्षा—एकानुभागदुगुणवृद्धिस्थानान्तर और नानादुगुणवृद्धिशलाकायें हैं। प्रमाण—एकानुभागदुगुणवृद्धिस्थानान्तर अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। नानादुगुणवृद्धिस्थानान्तरशलाकायें असंख्यात लोक प्रमाण हैं। अल्पबहुत्व—एकानुभागदुगुणवृद्धिस्थानान्तर स्तोक है। उससे नानादुगुणवृद्धिस्थानान्तरशलाकायें असंख्यातगुणी हैं।

अवहारकी प्ररूपणा करते हैं—जघन्य स्थानसम्बन्धी स्पर्द्धकके प्रमाणसे सब स्थानोंके स्पर्द्धक अनन्तकालसे अपहृत होते हैं। इसी प्रकार सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके जघन्य स्थानसे लेकर आगेके स्थानोंके प्रमाणसे सब स्थान अनन्तकालसे अपहृत होते हैं, ऐसा कहना चाहिये। विशेष इतना है कि अन्तिम अष्टांकसे लेकर अन्तिम ऊर्वंक तक इन स्थानोंके प्रमाणसे सब स्थानोंके अपहृत करनेपर वे असंख्यातकालसे अपहृत होते हैं, कारण कि काण्डक प्रमाण असंख्यात लोकों, काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण उत्कृष्ट संख्यातों और अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र असंख्यात लोकोंकी अन्योन्याभ्यस्त राशियोंको परस्पर गुणित करनेपर भी अनन्त राशिके उत्पन्न होनेकी सम्भावनाका अभाव है। अन्तिम ऊर्वंकके प्रमाणसे सब स्थानोंको अपहृत करनेपर

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

ट्ठाणेसु अवहिरिज्जमाणेसु केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? एगवारमवहिरिज्जंति, चरिमुव्वंकम्मि सव्वट्ठाणाणमुवलंभादो । दुचरिमउव्वंकट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? सादिरेयएगरूवेण । तिचरिमउव्वंकट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? सादिरेयएगरूवेण । एवं णेयव्वं जाव दुगुणहीणट्ठाणउवरिमट्ठाणं[1] ति । पुणो दुगुणहीणट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? दोहि रूवेहि । तत्तो हेट्ठिमट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? संखेज्जेहि रूवेहि । एवं णेयव्वं जाव पज्जवसाणउव्वंकट्ठाणं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तअणुभागट्ठाणस्स उवरिमट्ठाणं ति । तत्तो हेट्ठिमट्ठाणपमाणेण सव्वट्ठाणाणि केवचिरेण कालेण अवहिरिज्जंति ? जहण्णपरित्तासंखेज्जेण । एवं हेट्ठिमअणुभागट्ठाणाणं पमाणेण अवहिरिज्जमाणे असंखेज्जेण कालेण अवहिरिज्जंति त्ति णेयव्वं जाव पढमअणंतगुणहाणीए उवरिमट्ठाणे त्ति । सेसं चिंतिय वत्तव्वं गंथबहुत्तभएण जं ण लिहिदल्लयं । अवहारो समत्तो ।

भागाभागो जधा अवहारकालो तधा वत्तव्वो । अप्पाबहुगं—सव्वत्थोवाणि जहण्णट्ठाणे फद्दयाणि । अणुक्कस्सए ट्ठाणे फद्दयाणि अणंतगुणाणि । को गुणगारो ? अवि-

वे कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? वे एक वारमें अपहृत होते हैं, क्योंकि, अन्तिम ऊर्वंकके सब स्थान पाये जाते हैं । द्विचरम ऊर्वंकस्थानके प्रमाणसे सब स्थान कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे साधिक एक अंकके द्वारा अपहृत होते हैं । त्रिचरम ऊर्वंकस्थानके प्रमाणसे वे कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे साधिक एक अंकके द्वारा अपहृत होते हैं । इस प्रकार दुगुणहीनस्थानसे आगेके स्थान तक ले जाना चाहिये । पुनः दुगुणहीनस्थानके प्रमाणसे सब स्थान कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे दो अंकों के द्वारा अपहृत होते हैं । उससे नीचेके स्थानके प्रमाणसे वे कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे संख्यात अंकों द्वारा अपहृत होते हैं । इस प्रकार अन्तिम ऊर्वंकस्थानको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डितकर उसमेंसे एक खण्ड मात्र अनुभागस्थानके उपरिम स्थानतक ले जाना चाहिये । उससे नीचेके स्थानके प्रमाणसे सब स्थान कितने काल द्वारा अपहृत होते हैं ? उक्त प्रमाणसे वे जघन्य परीतासंख्यातके द्वारा अपहृत होते हैं । इस प्रकारसे अधस्तन स्थानोंके प्रमाणसे अपहृत करनेपर वे असंख्यात काल द्वारा अपहृत होते हैं, ऐसा प्रथम अनन्त गुणहानिके उपरिम स्थानतक ले जाना चाहिये । शेष अर्थकी प्ररूपणा विचारकर करना चाहिये, जो कि यहाँ ग्रन्थबहुत्वके भयसे नहीं लिखा गया है । अवहार समाप्त हुआ ।

जैसा अवहारकाल कहा गया है वैसे ही भागाभागका कथन करना चाहिये । अल्पबहुत्वका कथन करते हैं—जघन्य स्थानमें स्पर्द्धक सबसे स्तोक हैं । अनुत्कृष्ट स्थानमें उनसे अनन्तगुणे स्पर्द्धक हैं । गुणकार क्या है ? अविभागप्रतिच्छेदोंका आश्रय करके वह सब जीवोंसे अनन्त-

१ ताप्रतौ 'जाव गुणहीणउवरिमट्ठाणं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भागपलिच्छेदे पडुच्च सव्वजीवेहि अणंतगुणो फद्दयगणणाए अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतिमभागो । उक्कस्सए ट्ठाणे फद्दयाणि विसेसाहियाणि । एवं छट्ठाणपरूवणा[1] समत्ता ।

हेट्ठाट्ठाणपरूवणाए अणंतभागब्भहियं कंदयं गंतूण असंखेज्जभागब्भहियं ट्ठाणं ॥ २१५ ॥

असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं णिरुंभिय हेट्ठिमट्ठाणाणं परूवणट्ठमिदं सुत्तमागयं । अणंतभागब्भहियट्ठाणाणं कंदयं गंतूण असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि । किं कंदयपमाणं ? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो । तस्स को भागहारो ? विसिट्ठुवदेसाभावादो [ण] णव्वदे[2] । फद्दयवग्गणप्पमाणं व सव्वकंदयाण पमाणं सरिसं । कुदो णव्वदे ? अविसंवादिगुरुवयणादो । चरिमसमयसुहुमसांपराइयजहण्णाणुभागबंधट्ठाणप्पहुडि दुचरिमादिअणुभागबंधट्ठाणाणमणंतगुणवड्ढिअणुभागबंधदंसणादो "जहण्णट्ठाणादो अणंतभागब्भहियं कदयं गंतूण असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं होदि" त्ति जं भणिदं तण्ण घडदे ? ण एस दोसो, जत्थ छव्विहवड्ढिकमेण छव्विहहाणिकमेण च अणुभागो[3] बज्झदि तमस्सिऊण तधा परूविदत्तादो । ण

गुणा है, तथा स्पर्द्धकगणनाकी अपेक्षा अभवसिद्धिकोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र है । उनसे उत्कृष्ट स्थानमें विशेष अधिक स्पर्द्धक हैं । इस प्रकार षट्स्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अधस्तनस्थानप्ररूपणामें अनन्तवें भागसे अधिक काण्डक प्रमाण जाकर असंख्यातवें भागसे अधिक स्थान होता है ॥ २१५ ॥

असंख्यातभागवृद्धिस्थानकी विवक्षाकर नीचेके स्थानोंकी प्ररूपणा करनेके लिये यह सूत्र आया है । अनन्तवें भागसे अधिक स्थानोंका काण्डक जाकर असंख्यातभागवृद्धिका स्थान उत्पन्न होता है । काण्डकका प्रमाण कितना है ? उसका प्रमाण अंगुलका असंख्यातवाँ भाग है । उसका भागहार क्या है ? विशिष्ट उपदेशका अभाव होनेसे उसका परिज्ञान नहीं है । स्पर्द्धककी वर्गणाओंके प्रमाणके समान सब काण्डकोंका प्रमाण सदृश है । वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ? वह गुरुके विसंवाद रहित उपदेशसे जाना जाता है ।

शंका—अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके जघन्य अनुभागबन्धस्थानसे लेकर द्विचरम आदि अनुभागबन्धस्थानोंका अनुभागबन्ध चूँकि अनन्तगुणवृद्धि युक्त देखा जाता है, अतएव "जघन्य स्थानसे अनन्तवें भागसे अधिक काण्डक जाकर असंख्यातभागवृद्धिका स्थान होता है" ऐसा जो कहा गया है वह घटित नहीं होता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जहाँपर छह प्रकारकी वृद्धि अथवा छह प्रकारकी हानिके क्रमसे अनुभाग बंधता है उसका आश्रय करके उस प्रकारकी प्ररूपणा की गई

१ अ-आप्रत्योः 'छट्टणवपरूवणा' इति पाठः । २ अ-आप्रत्योः 'विसुट्ठुवदेसाभावो णव्वदे' इति पाठः । ३ अप्रतौ 'वड्ढदि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

च सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणम्हि छव्विहाए वड्ढीए बंधो अत्थि, विरोहादो। पुणो कत्तो प्पहुडि एसा हेट्ठाट्ठाणपरूवणा कीरदे ? सुहुमेइंदियजहण्णट्ठाणप्पहुडि कीरदे। एदम्हादो हेट्ठिमट्ठाणेसु एगं ट्ठाणं णिरुंभिय परूवणा किण्ण कीरदे ? ण, हेट्ठा एदम्हादो ऊणसंतट्ठाणाभावादो। चरिमसमयखीणकसायस्स संतट्ठाणप्पहुडि परूवणा किण्ण कीरदे ? ण, तत्तो प्पहुडि ट्ठाणाणं छव्विहवड्ढीए अभावादो। जेणेदं सुत्तं देसामासियं तेण अणंतभागब्भहियट्ठाणाणं कंदयं गंतूण संखेज्जभागवड्ढी संखेज्जगुणवड्ढी असंखेज्जगुणवड्ढी अणंतगुणवड्ढी च उप्पज्जदि त्ति घेत्तव्वं[1]। संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणणिरुंभणं काऊण हेट्ठिमट्ठाणपरूवणट्ठं उवरिमसुत्तं भणदि—

असंखेज्जभागब्भहियं कंदयं गंतूण संखेज्जभागब्भहियं ट्ठाणं॥२१६॥

कंदयमेत्ताणि असंखेज्जभागब्भहियट्ठाणाणि जाव ण गदाणि ताव णिच्छएण संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं ण उप्पज्जदि त्ति भणिदं होदि। असंखेज्जभागवड्ढीणं विच्चालेसु अणंत-

है। परन्तु सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें छह प्रकारकी वृद्धिसे बन्ध नहीं होता, क्योंकि, उसमें विरोध है।

शंका—तो फिर कौनसे जघन्य स्थानसे लेकर यह अधस्तनस्थानप्ररूपणा की जा रही है ?

समाधान—वह सूक्ष्म एकेन्द्रियके जघन्य स्थानसे लेकर की जा रही है।

शंका—इससे नीचेके स्थानोंमेंसे एक स्थानकी विवक्षाकर वह प्ररूपणा क्यों नहीं की जाती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, नीचे इससे हीन सत्त्वस्थानका अभाव है।

शंका—अन्तिम समयवर्ती क्षीणकषायके सत्त्वस्थानसे लेकर उक्त प्ररूपणा क्यों नहीं की जाती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उस स्थानसे लेकर जो स्थान हैं उनके छह प्रकारकी वृद्धि सम्भव नहीं है।

यह सूत्र चूँकि देशामर्शक है अतएव अनन्तवें भागसे अधिक स्थानोंका काण्डक जाकर संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि उत्पन्न होती है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। अब संख्यातभागवृद्धिस्थानकी विवक्षा करके अधस्तन स्थानोंकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

असंख्यातवें भागसे अधिक काण्डक जाकर संख्यातवें भागसे अधिक स्थान होता है॥२१६॥

असंख्यातवें भागसे अधिक काण्डक प्रमाण स्थान जबतक नहीं बीतते हैं तबतक निश्चयसे संख्यातभागवृद्धिका स्थान नहीं उत्पन्न होता है, यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है।

१ अ-ताप्रत्योः 'वत्तव्वं' इति पाठः।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

भागवड्डीयो वि कंदयमेत्ताओ अत्थि, ताओ किं ण परूविदाओ ? ण एस होदि दोसो, "अणंतभागब्भहियं कंदयं गंतूण असंखेज्जभागब्भहियट्ठाणं होदि" त्ति पुव्विल्लसुत्तादो चेव तदवगमादो उवरिमसुत्तेण भण्णमाणत्तादो वा। संपहि संखेज्जगुणवड्ढिमाधारं कादूण हेट्ठिमट्ठाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

संखेज्जभागब्भहियं कंडयं गंतूण संखेज्जगुणब्भहियं ट्ठाणं ॥२१७॥

संखेज्जभागवड्ढीयो कंदयमेत्ताओ जाव ण गदाओ ताव संखेज्जगुणवड्ढी ण उप्पज्जदि, कंदयमेत्ताओ संखेज्जभागवड्ढीयो गंतूण चेव उप्पज्जदि त्ति घेत्तव्वं। असंखेज्जगुणवड्ढिमाधारं कादूण हेट्ठिमसंखेज्जगुणवड्ढिपमाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

संखेज्जगुणब्भहियं कंदयं गंतूण असंखेज्जगुणब्भहियं ट्ठाणं ॥२१८॥

असंखेज्जगुणवड्ढी उप्पज्जमाणा संखेज्जगुणवड्ढीणं कंडयं गंतूण चेव उप्पज्जदि, अण्णहा ण उप्पज्जदि त्ति घेत्तव्वं। अणंतगुणवड्ढिणिरुंभणं कादूण हेट्ठिमट्ठाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमागयं—

असंखेज्जगुणब्भहियं कंडयं गंतूण अणंतगुणब्भहियं ट्ठाणं ॥२१९॥

शंका—असंख्यातभागवृद्धियोंके बीच बीचमें अनन्तभागवृद्धियाँ भी काण्डक प्रमाण होती हैं, उनकी सूत्रमें प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, "अनन्तवें भागसे अधिक काण्डक प्रमाण जाकर असंख्यातवें भागसे अधिक स्थान होता है" इस पूर्वोक्त सूत्रसे उसका ज्ञान हो जाता है। अथवा, उसका कथन आगे कहे जानेवाले सूत्रके द्वारा किया जायगा।

अब संख्यातगुणवृद्धिको आधार करके नीचेके स्थानोंकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

संख्यातवें भागसे अधिक काण्डक जाकर संख्यातगुणा अधिक स्थान होता है ॥ २१७ ॥

जबतक संख्यातभागवृद्धियाँ काण्डक प्रमाण नहीं बीतती हैं तबतक संख्यातगुणवृद्धि नहीं उत्पन्न होती है, किन्तु काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियाँ जाकर ही वह उत्पन्न होती है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। अब असंख्यातगुणवृद्धिको आधार करके उससे नीचेकी संख्यातगुणवृद्धिके प्रमाणकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

संख्यातगुणा अधिक काण्डक जाकर असंख्यातगुणा अधिक स्थान होता है ॥२१८॥

असंख्यातगुणवृद्धि उत्पन्न होती हुई संख्यातगुणवृद्धियोंके काण्डकके बीतने पर ही उत्पन्न होती है, इसके बिना वह उत्पन्न नहीं होती; ऐसा ग्रहण करना चाहिये। अब अनन्तगुणवृद्धिकी विवक्षा करके नीचे के स्थानों की प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र प्राप्त होता है—

असंख्यातगुणा अधिक काण्डक जाकर अनन्तगुणा अधिक स्थान उत्पन्न होता है ॥ २१९ ॥

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अणंतगुणवड्ढी उप्पज्जमाणा सव्वा वि असंखेज्जगुणवड्ढीणं कंदयं गंतूण चेव उप्पज्जदि, ण अण्णहा इदि दट्ठव्वं । पढमा हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

अणंतभागब्भहियाणं[1] कंडयवग्गं कंडयं च गंतूण संखेज्जभागब्भहियट्ठाणं ॥ २२० ॥

एसा विदिया हेट्ठाट्ठाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीणं च हेट्ठिमअणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीणं पमाणपरूवणट्ठं । संखेज्जभागवड्ढी उप्पज्जमाणा अणंतभागवड्ढीणं कंदयवग्गं कंदयब्भहियं गंतूण चेव उप्पज्जदि $\frac{16}{4}$, ण अण्णहा, विरोहादो । एदेसिमुप्पायणविहाणमणुवायादो उच्चदे । कोऽनुपातः ? त्रैराशिकम् । तं जहा—एक्किस्से असंखेज्जभागवड्ढीए हेट्ठा जदि कंदयमेत्ताओ अणंतभागवड्ढीयो लब्भंति तो रूवाहियकंदयमेत्ताणमसंखेज्जभागवड्ढीणं केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए कंदयसहिदकंदयवग्गमेत्ताओ अणंतभागवड्ढीयो लब्भंति । पुव्वं संखेज्जभागवड्ढीदो हेट्ठा

अनन्तगुणवृद्धि उत्पन्न होती हुई सब ही असंख्यातगुणवृद्धियोंके काण्डकको बिताकर ही उत्पन्न होती है, इसके बिना वह उत्पन्न नहीं होती; ऐसा समझना चाहिये । प्रथम अधस्तनस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अनन्तभाग अधिक अर्थात् अनन्तभागवृद्धियोंके काण्डकका वर्ग और एक काण्डक जाकर संख्यातभागवृद्धिका स्थान होता है ॥ २२० ॥

शंका—यह द्वितीय अधस्तनस्थानप्ररूपणा किस लिये प्राप्त हुई है ?

समाधान—वह संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि व अनन्तगुणवृद्धि; इनके तथा नीचेकी अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि; इन वृद्धियोंके भी प्रमाण की प्ररूपणा करनेके लिये प्राप्त हुई है ।

संख्यातभागवृद्धि उत्पन्न होती हुई अनन्तभागवृद्धियोंके एक काण्डकसे अधिक काण्डकके वर्गको बिताकर ही उत्पन्न होती है ($4 \times 4 + 4$), इसके बिना वह उत्पन्न नहीं होती; क्योंकि, उसमें विरोध है । इनके उत्पन्न करानेकी विधि अनुपातसे कहते हैं ।

शंका—अनुपात किसे कहते हैं ?

समाधा—त्रैराशिकको अनुपात कहते हैं ।

यथा—एक असंख्यातभागवृद्धिके नीचे यदि काण्डक प्रमाण अनन्तभागवृद्धियाँ पायी जाती हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियोंके नीचे वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर काण्डक सहित काण्डकके वर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धियाँ पायी जाती हैं

१ ताप्रतौ 'अणंतभागब्भहियं' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

कंदयमेत्ताओ चेव असंखेज्जभागवड्डीयो सुत्तेण परूविदाओ । संपहि तेरासिए[1] कीरमाणे रूवाहियकंडयादो अणंतभागवड्डिट्ठाणाणं उप्पायणं कधं जुज्जदे? ण एस दोसो, संखेज्ज-भागवड्डीए हेट्ठा असंखेज्जभागवड्डीयो कंदयमेत्ताओ चेव, किंतु अण्णेक्किस्से असंखेज्ज-भागवड्डीए विसयं गंतूण असंखेज्जभागवड्डिपाओग्गद्धाणे असंखेज्जभागवड्डी अहोदूण[2] संखेज्जभागवड्डिसमुप्पत्तीदो।

असंखेज्जभागब्भहियाणं कंदयवग्गं कंदयं च गंतूण संखेज्जगुण-ब्भहियट्ठाणं ॥ २२१ ॥ $\frac{१६}{४}$

एदेसिमुप्पायणविहाणं उच्चदे । तं जहा — एक्किस्से संखेज्जभागवड्डीए हेट्ठा जदि कंदयमेत्ताओ असंखेज्जभागवड्डीयो लब्भंति तो रूवाहियकंदयमेत्ताणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए कंदयसहियकंदयवग्गमेत्ताओ असंखेज्जभाग-वड्डीयो होंति । सेसं सुगमं ।

संखेज्जभागब्भहियाणं कंदयवग्गं कंदयं च गंतूण असंखेज्जगुण-ब्भहियट्ठाणं ॥ २२२ ॥ $\frac{१६}{४}$

तं जहा—एक्किस्से संखेज्जगुणवड्डीए हेट्ठा जदि कंदयमेत्ताओ संखेज्जभाग-

---

शंका — पहिले संख्यातभागवृद्धिके नीचे काण्डक प्रमाण ही असंख्यातभागवृद्धियाँ सूत्र द्वारा बतलाई गई हैं। अब त्रैराशिक करनेपर एक अधिक काण्डकसे अनन्तभागवृद्धिस्थानोंका उत्पन्न कराना कैसे योग्य है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, संख्यातभागवृद्धिके नीचे असंख्यातभागवृद्धियाँ काण्डक प्रमाण ही होती हैं, किन्तु अन्य एक असंख्यातभागवृद्धिके विषयको प्राप्त होकर असंख्यात-वृद्धिके योग्य अध्वानमें असंख्यातभागवृद्धि न होकर संख्यातभागवृद्धि उत्पन्न होती है।

असंख्यातभागवृद्धियोंका काण्डकवर्ग व एक काण्डक जाकर संख्यातगुणवृद्धिका स्थान होता है ॥ २२१ ॥

१६ + ४ इनके उत्पन्न करानेकी विधि बतलाते हैं। वह इस प्रकार है—एक संख्यातभाग-वृद्धिके नीचे यदि काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियाँ पायी जाती हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियोंके नीचे वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियाँ होती हैं। शेष कथन सुगम है।

संख्यातभागवृद्धियोंका काण्डकवर्ग और एक काण्डक जाकर (१६ + ४) असंख्यातगुणवृद्धिका स्थान होता है ॥ २२२ ॥

यथा—एक संख्यातगुणवृद्धिके नीचे यदि काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धियाँ पायी

---

१ प्रतिषु 'तेराचीए' इति पाठः । २ अ-आ प्रत्योः 'आहोदूण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वड्ढीओ लब्भंति तो रूवाहियकंदयमेत्ताणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए कंदयसहिदकंदयवग्गमेत्ताओ संखेज्जभागवड्ढीयो लब्भंति । सेसं सुगमं ।

संखेज्जगुणब्भहियाणं कंदयवग्गं कंदयं च गंतूण अणंतगुणब्भहियं ट्ठाणं ॥ २२३ ॥ १६ ४

एदेसिं उप्पत्तिविहाणं उच्चदे । तं जहा—एक्किस्से अणंतगुणवड्ढीए हेट्ठा जदि कंदयमेत्ताणि संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि लब्भंति तो रूवाहियकंदयमेत्ताणमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठणाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए कंदयसहिदकंदयवग्गमेत्ताणि संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि अट्ठंकादो हेट्ठा लद्धाणि होंति । एवं बिदिया हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

संखेज्जगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंदयघाणो बेकंदयवग्गा कंदयं च ॥ २२४ ॥ ६४ १६ १६ ४

तदियहेट्ठाट्ठाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीणं हेट्ठदो[1] अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढीणं जहाक्कमेण

जाती हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियोंके नीचे वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण संख्यातभागवृद्धियाँ पायी जाती हैं । शेष कथन सुगम है ।

संख्यातगुणवृद्धियोंका काण्डकवर्ग और एक काण्डक (१६ + ४) जाकर अनन्तगुणवृद्धिका स्थान होता है ॥ २२३ ॥

इनके उत्पन्न करानेकी विधि बतलाते हैं । वह इस प्रकार है—एक अनन्तगुणवृद्धिके नीचे यदि काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियाँ पायी जाती हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धिस्थानोंके नीचे वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर अष्टांकके नीचे काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण संख्यातगुणवृद्धिस्थान पाये जाते हैं । इस प्रकार द्वितीय अधस्तनस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

संख्यातगुणवृद्धिके नीचे अनन्तभागवृद्धियों का काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक ($४^३ + (४^२ \times २) + ४$) होता है ॥ २२४ ॥

शंका—तृतीय अधस्तनस्थानप्ररूपणा किसलिये प्राप्त हुई है ?

समाधान—वह संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि, इन वृद्धियोंके नीचे क्रमशः अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागवृद्धि, इनका प्रमाण बतलानेके लिये प्राप्त हुई है ।

---

१ अ-आप्रत्योः 'हेट्ठादो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पमाणपरूवणट्ठं । एदस्स अत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एक्किस्से संखेज्ज भागवड्ढीए हेट्ठा जदि कंदयसहिदकंदयवग्गमेत्ताणि अणंतभागवड्ढिट्ठाणाणि लब्भंति तो रूवाहियकंदयमेत्ताणं संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं किं लभामो त्ति कंदयवग्गं कंदयं च दो पडिरासीयो करिय जहाकमेण एगकंदएण एगरूवेण च गुणिय मेलाविदे एगकंदयघणो बे-कंदयवग्गा कंदयं च उवलब्भदे ।

असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो[1] असंखेज्जभागब्भहियाणं कंदयघणो बेकंदयवग्गा कंदयं च ॥२२५॥ | ६४ १६ १६ ४ |

एदस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—एक्कस्स संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणस्स हेट्ठदो जदि कंदयसहिदकंदयवग्गमेत्ताणि असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि लब्भंति तो रूवा-हियकंदयमेत्तसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणं किं लभामो त्ति पुव्वं व दुप्पडिरासिं कादूण कमेणेगकंदएणेगरूवेण च गुणिय मेलाविदे एगो कंदयघणो बेकंदयवग्गा कंदयं च उवलब्भदे ।

अणंतगुणस्स हेट्ठदो संखेज्जभागब्भहियाणं कंदयघणो वेकंदयवग्गा कंदयं च ॥ २२६ ॥ | ६४ १६ १६ ४ |

इसकी अर्थप्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक संख्यातभागवृद्धिके नीचे यदि काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण अनन्तभागवृद्धिस्थान पाये जाते हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके नीचे वे कितने पाये जावेंगे, इस प्रकार काण्डकवर्ग और काण्डक प्रमाण दो प्रतिराशियाँ करके क्रमशः एक काण्डक और एक अंकसे गुणित करके मिला देनेपर एक काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक पाया जाता है।

असंख्यातगुणवृद्धिस्थानके नीचे असंख्यातभागवृद्धियोंका एक काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक [$४^३ + (४^२ \times २) + ४$] होता है ॥ २२५ ॥

इसका अर्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—एक संख्यातगुणवृद्धिस्थानके नीचे यदि काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिस्थान पाये जाते हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धिस्थानोंके वे कितने पाये जावेंगे इस प्रकार पहलेके समान दो प्रतिराशियाँ करके क्रमशः एक काण्डक और एक अंकसे गुणित करके मिलानेपर एक काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक पाया जाता है।

अनन्तगुणवृद्धिस्थानके नीचे संख्यातभागवृद्धिस्थानोंका एक काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक [$४^३ + (४^२ \times २) + ४$] होता है ॥ २२६ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एदस्स अत्थो उच्चदे—एक्कस्स असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो जदि कंदयसहिद-कंदयवग्गमेत्ताणि संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि लब्भंति तो रूवाहियकंदयमेत्ताणम-संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणं किं लभामो त्ति फलं दुप्पडिरासीकदं कमेणेगकंदयेणेग-रूवेण च गुणिय मेलाविदे कंदयघणो बेकंदयवग्गा कंदयं च लब्भदे। एवं तदिया हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समत्ता।

१ अ-आप्रत्योः 'हेट्ठादो' इति पाठः।

असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंदयवग्गावग्गो तिण्णिकंदयघणा तिण्णिकंदयवग्गा कंदयं च ॥ २२७ ॥

२५६
६४
६४
६४
१६
१६
१६
४

चउत्थी हेट्ठाट्ठाणपरूवणा किमट्ठमागदा ? असंखेज्जगुणब्भहिय-अणंतगुणब्भहिय-ट्ठाणाणं हेट्ठिमअणंतभागवड्ढिट्ठाणाणं[1] पमाणपरूवणट्ठं। एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—कंदयघणं दोण्णिकंदयवग्गे कंदयं च दुप्पडिरासिं करिय ट्ठवेदूण एगकंदएण एगरूवेण च जहाकमेण गुणिदे कंदयवग्गावग्गो तिण्णिकंदयघणा तिण्णिकंदयवग्गा कंदयं च उप्पज्जदि त्ति।

इसका अर्थ कहते हैं—एक असंख्यातगुणवृद्धिस्थानके नीचे यदि काण्डक सहित काण्डकवर्ग प्रमाण संख्यातभागवृद्धिस्थान पाये जाते हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धि-स्थानोंके नीचे वे कितने पाये जावेंगे, इस प्रकार दो प्रतिराशि रूप किये गये फलको क्रमशः एक काण्डक और एक अंकसे गुणित करके मिला देनेपर एक काण्डकघन, दो काण्डकवर्ग और एक काण्डक पाया जाता है। इस प्रकार तृतीय अधस्तनस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई।

असंख्यातगुणवृद्धिके नीचे अनन्तभागवृद्धियोंका एक काण्डकवर्गावर्ग, तीन काण्डकघन, तीन काण्डकवर्ग और एक काण्डक [$४^२ = १६; १६^२ = २५६; २५६ + (४^३ \times ३) + (४^२ \times ३) + ४$] होता है ॥ २२७ ॥

शंका—चतुर्थ अधस्तनस्थानप्ररूपणा किसलिये प्राप्त हुई है ?

समाधान—वह असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि स्थानोंके नीचेके अनन्तभागवृद्धि स्थानोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करनेके लिये प्राप्त हुई है।

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—एक काण्डकघन, दो काण्डक वर्गों और एक काण्डकको दो प्रतिराशिरूप करके स्थापित कर एक काण्डक और एक अंकसे क्रमशः गुणित करनेपर एक काण्डकवर्गावर्ग, तीन काण्डकघन, तीन काण्डकवर्ग और एक काण्डक उत्पन्न होता है।

१ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-ताप्रत्योः 'हेट्ठिमअणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणंतगुणस्स हेट्ठदो असंखेज्जभागब्भहियाणं कंदयवग्गावग्गो तिण्णिकंदयघणा तिण्णिकंदयवग्गा कंदयं च ॥ २२८ ॥

२५६
६४
६४
६४
१६
१६
१६
४

एदेसिमंकाणमुप्पत्तीए भण्णमाणाए पुव्वं व वत्तव्वं, विसेसाभावादो । एवं चउत्थी हेट्ठाहाणपरूवणा समत्ता ।

अणंतगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंदयो[1]पंचहदो चत्तारिकंदयवग्गावग्गा छकंदयघणा चत्तारिकंदयवग्गा कंदयं च ॥ २२९ ॥

१०२४
२५६
२५६
२५६
२५६
६४
६४
६४
६४
६४
६४
१६
१६
१६
१६
४

एदेसिमंकाणमुप्पत्तिविहाणं वुच्चदे । तं जहा—कंदयवग्गावग्गं तिण्णि कंदयघणे

अनन्तगुणवृद्धिके नीचे असंख्यातभागवृद्धियोंका एक काण्डकवर्गावर्ग, तीन काण्डकघन, तीन काण्डकवर्ग और एक काण्डक होता [(४×४×१६)+(४³×३)+(४²×३)×४]है ॥ २२८ ॥

इन अंकोंकी उत्पत्तिका कथन करते समय पहिलेके समान प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि उसमें कोई विशेषता नहीं है। इस प्रकार चतुर्थी अधस्तनस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई।

अनन्तगुणवृद्धिके नीचे अनन्तभागवृद्धियोंका पाँच वार गुणित काण्डक, चार काण्डकवर्गावर्ग, छह काण्डकघन, चार काण्डकवर्ग और एक काण्डक [(४ × ४ × ४ × ४ × ४) + (४ × ४ × १६ × ४) + (४³ × ६) + (४² × ४) + ४] होता है ॥ २२९ ॥

इन अंकोंके उत्पादनकी विधि कही जाती है। वह इस प्रकार है—एक काण्डक वर्गावर्ग, तीन

१ अप्रतौ 'कंदयपंचहदो' आप्रतौ 'कंदयपंचहदो' इति पाठः ।

छ. १२-२६.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिण्णिकंदयवग्गे कंदयं च दोसु ट्ठाणेसु ट्ठविय जहाकमेण रूवेण कंदएण¹ च गुणिय मेलाविदे कंदओ पंचहदो चत्तारिकंदयवग्गावग्गा छकंदयघणा चत्तारिकंदयवग्गा कंदयं च उप्पज्जदि । एवं पंचमी हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

समयपरूवणदाए चदुसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ॥२३०॥

संतपरूवणमकाऊण पमाणप्पाबहुआणं चेव परूवणा किमट्ठं कीरदे ? ण एस दोसो, एदेहि दोहि अणियोगद्दारेहि अवगदेहि तदवगमादो । ण च संतरहियाणं पमाणं थोवबहुत्तं च संभवइ, विरोहादो । अधवा, अविभागपडिच्छेदपरूवणादिअणियोगद्दारेहि चेव अणुभागबंधट्ठाणाणं कालविसेसिदाणं तस्स परूवणा कदा, एगसमयादिकालेण अविसेसिदाणं संतस्स गगणकुसुमसमाणत्तप्पसंगादो । जहण्णाणुभागबंधट्ठाणप्पहुडि जाव उक्कस्साणुभागबंधट्ठाणे त्ति एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्ताणमणुभागबंधट्ठाणाणं पण्णाए एगपंतीए आयारेण रचणाए कदाए तत्थ हेट्ठिमाणि असंखेज्जलोगमेत्तअणुभागबंधट्ठाणाणि चदुसमइयाणि । एगसमयमादिं कादूण उक्कस्सेण णिरंतरं चत्तारिसमयं बज्झंति त्ति भणिदं होदि । उवरि किण्ण बज्झंति ? सभावियादो ।

काण्डकघनों, तीन काण्डक वर्गों और एक काण्डकको दो स्थानोंमें स्थापित करके क्रमशः एक अंक और काण्डक द्वारा गुणित करके मिलानेपर पाँचवार गुणित काण्डक, चार काण्डकवर्गावर्ग, छह काण्डकघन, चार काण्डकवर्ग और एक काण्डक उत्पन्न होता है । इस प्रकार पंचम अधस्तनस्थान प्ररूपणा समाप्त हुई ।

समयप्ररूपणामें चार समयवाले अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ॥ २३० ॥

शंका—सत्प्ररूपणा न करके प्रमाण और अल्पबहुत्वकी ही प्ररूपणा किसलिये की जा रही है ।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, इन दो अनुयोगद्वारोंके अवगत हो जानेपर उनके द्वारा सत्प्ररूपणा का अवगम हो जाता है । कारण कि सत्त्वसे रहित पदार्थोंका प्रमाण और अल्पबहुत्व सम्भव नहीं है, क्योंकि, उसमें विरोध है । अथवा, अविभागप्रतिच्छेद आदि अनुयोगद्वारोंके द्वारा ही कालसे विशेषित अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके सत्त्वकी प्ररूपणा की जा चुकी है, क्योंकि, एक समय आदि कालकी विशेषतासे रहित उनके सत्त्वके आकाशकुसुमके समान होनेका प्रसंग आता है ।

जघन्य अनुभागबन्धस्थानसे लेकर उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थानतक इन असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थानोंकी बुद्धिसे एक पंक्तिके आकारसे रचना करनेपर उनमेंसे नीचेके असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थान चार समयवाले हैं । अभिप्राय यह है कि ये स्थान एक समयसे लेकर उत्कर्षसे निरन्तर चार समयतक बंधते हैं ।

शंका—चार समयसे आगे वे क्यों नहीं बँधते हैं ?

१ अ-आप्रत्योः 'जहाकमेण रूवेण रूवेण कंदएण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ॥ २३१ ॥

चदुसमइयपाओग्गअणुभागबंधट्ठाणेसु जमुक्कस्साणुभागबंधट्ठाणं तत्तो उवरिमअणुभागबंधट्ठाणं पंचसमइयं। तमणुभागबंधट्ठाणमादिं कादूण असंखेज्जलोगमेत्तअणुभागबंधट्ठाणाणि पंचसमइयाणि, एगसमयमादिं कादूण उक्कस्सेण पंचसमयं बज्झंति त्ति उत्तं होदि।

एवं छसमइयाणि सत्तसमइयाणि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ॥ २३२ ॥

पंचसमइयअणुभागबंधट्ठाणेहिंतो उवरि असंखेज्जलोगमेत्ताणि अणुभागबंधट्ठाणाणि छसमइयाणि होंति। तेहिंतो उवरि सत्तसमइयाणि[1] अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति। तेहिंतो उवरि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति।

पुणरवि सत्तसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ॥ २३३ ॥

अट्ठसमइयअणुभागबंधट्ठाणेहिंतो हेट्ठा जेण अणुभागबंधट्ठाणाणि सत्तसमइयपाओ-

---

समाधान—वे स्वभावसे ही चार समयके आगे नहीं बंधते हैं।

पाँच समयवाले अनुभागबन्धाध्यसानस्थान असंख्यातलोक प्रमाण हैं ॥ २३१ ॥

चार समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंमें जो उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थान है उससे आगेका अनुभागबन्धस्थान पाँच समयवाला है। उस अनुभागबन्धस्थानसे लेकर असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थान पाँच समयवाले हैं, अर्थात् वे एक समयसे लेकर उत्कर्षसे पाँच समयतक बंधते हैं।

इस प्रकार छह समय, सात समय और आठ समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ॥ २३२ ॥

पाँच समय योग्य स्थानोंसे आगे असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थान छह समय योग्य हैं। उनसे आगे सात समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं। उनसे आगे आठ समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं।

फिरसे भी सात समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ॥ २३३ ॥

चूँकि आठ समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंके नीचे सात समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंकी

---

१ मप्रतौ 'सत्तसमइयाणि' अयं सन्दर्भः नोपलभ्यते शेषप्रतिषु तु अस्ति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्गाणि पुव्वं परूविदाणि तेण[1] पुणरवि त्ति भणिदं । एसो[2] 'पुणरवि' त्ति सद्दो उवरिमछ-प्पंच-चदुसमइयअणुभागबंधट्ठाणेसु अणुवट्टावेदव्वो । अणुभागबंधट्ठाणाणमणुभागबंधज्झवसाणववएसो कधं जुज्जदे ? ण एस दोसो, कज्जे कारणोवयारेण तेसिं[3] तदविरोहादो । अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि णाम जीवस्स परिणामो अणुभागबंधट्ठाणणिमित्तो । तेणेदस्स सण्णा[4] अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणं होदि त्ति जुज्जदे । एदाणि सत्तसमयपाओग्गअणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति । कुदो ? साभावियादो ।

एवं छसमइयाणि पंचसमइयाणि चदुसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ॥ २३४ ॥

उवरिमसत्तसमइयअणुभागबंधट्ठाणेहिंतो उवरिमाणि छसमइयाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि । तेहिंतो उवरि पंचसमइयाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि । तेहिंतो उवरि चदुसमइयाणि अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि । सेसं सुगमं ।

प्ररूपणा पहले की जा चुकी है, अतएव सूत्रमें 'पुणरवि' अर्थात् 'फिरसे भी' पदका प्रयोग किया गया है । इस 'पुणरवि' शब्दकी अनुवृत्ति आगेके छह, पाँच और चार समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंमें लेनी चाहिये ।

शंका—अनुभागबन्धस्थानोंकी अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान संज्ञा कैसे योग्य है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, कार्यमें कारणका उपचार करनेसे उनकी उपर्युक्त संज्ञा करनेमें कोई विरोध नहीं है । अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानका अर्थ अनुभागबन्धस्थानमें निमित्तभूत जीवका परिणाम है । इस कारण इस अनुभागबन्धस्थानकी संज्ञा अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान उचित है ।

ये सात समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है

इसी प्रकार छह समय योग्य, पाँच समय योग्य और चार समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ॥ २३४ ॥

उपरिम सात समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंसे ऊपरके छह समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक मात्र हैं । उनसे आगे पाँच समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं । उनसे आगे चार समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । शेष कथन सुगम है ।

---

१ प्रतिषु 'केण' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'भणिदं ! एसो' इति पाठः । ३ आप्रतौ 'कारणेवयारादो ण तेसिं' इति पाठः । ४ प्रतिषु सण्णा अणुभागबंधट्ठाणस्स होदि इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

उवरि तिसमइयाणि बिसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ॥ २३५ ॥

उवरिमचदुसमइएहिंतो उवरिमाणि तिसमइयाणि बिसमइयाणि च अणुभागबंधट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति त्ति घेत्तव्वं। एत्थतणउवरिसद्दो हेट्ठा सिंघावलोअण-[1] कमेण उवरिं णदीसोदकमेण अणुवट्टावेदव्वो, अण्णहा तदत्थपडिवत्तीए अभावादो। एवं पमाणपरूवणा समत्ता।

एत्थ अप्पाबहुअं ॥ २३६ ॥

कादव्वमिदि अज्झाहारेयव्वं। किमट्ठमप्पाबहुअं कीरदे? ण एस दोसो, अप्पाबहुए अणवगए अवगयपमाणस्स अणवगयसमाणत्तप्पसंगादो।

सव्वत्थोवाणि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि ॥२३७॥

केहिंतो थोवाणि? उवरि भण्णमाणट्ठाणेहिंतो। कुदो? साभावियादो।

दोसु वि पासेसु सत्तसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि दो वि तुल्लाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २३८ ॥

आगे तीन समय योग्य और दो समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ॥ २३५ ॥

उपरिम चार समय योग्य अनुभागबन्धस्थानोंसे ऊपरके तीन समय योग्य और दो समय योग्य अनुभागबन्धस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। यहाँ सूत्रमें प्रयुक्त 'उवरि' शब्दकी अनुवृत्ति पीछे सिंहावलोकनके क्रमसे और आगे नदीस्रोतके क्रमसे कर लेनी चाहिये, क्योंकि, इसके बिना अर्थकी प्रतिपत्ति नहीं बनती है। इस प्रकार प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई।

यहाँ अल्पबहुत्व करने योग्य है ॥ २३६ ॥

सूत्रमें 'कादव्वं' अर्थात् करने योग्य है, इस पदका अध्याहार करना चाहिये।

शंका— अल्पबहुत्व किसलिये किया जा रहा है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अल्पबहुत्वके ज्ञात न होनेपर जाने हुए प्रमाणके भी अज्ञात रहनेके समान प्रसंग आता है।

आठ समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं ॥ २३७ ॥

किनसे वे स्तोक हैं? वे आगे कहे जानेवाले स्थानोंसे स्तोक हैं, क्योंकि ऐसा, स्वभावसे है।

दोनों ही पार्श्वभागोंमें सात समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान दोनों ही तुल्य होकर पूर्वोक्त स्थानोंसे असंख्यातगुणे हैं ॥ २३८ ॥

---

१ अ-आप्रत्योः 'संघावलोव' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा। कुदो एदं णव्वदे ? परमगुरूवदेसादो। एसो अविभागपलिच्छेदाणं गुणगारो ण होदि, किं तु ट्ठाणसंखाए। अविभागपडिच्छेदस्स गुणगारो किण्ण होदि? ण, अणंतगुणहीणप्पसंगादो[1]। तं पि कुदो णव्वदे? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तअणुभागबंधट्ठाणेसु अदिक्कंतेसु असंखेज्जसव्वजीवरासिमेत्तगुणगारुवलंभादो।

एवं छसमइयाणि पंचसमइयाणि चदुसमइयाणि ॥ २३९ ॥

एवमिदि णिद्देसो किमट्ठं कदो? दोसु वि पासेसु ट्ठिदछ-पंच-चदुसमइयअणुभागट्ठाणाणं गहणट्ठं तत्तुल्लत्तपदुप्पायणट्ठं असंखेज्जलोगगुणगारजाणावणट्ठं च।

उवरि तिसमइयाणि ॥ २४० ॥

तिसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। एत्थ गुणगारो असंखेज्जा लोगा। एदस्स सुत्तस्स असंपुण्णत्तं किमिदि ण पसज्जदे? ण, उवरिमसुत्तस्स

गुणकार क्या है? गुणकार असंख्यात लोक है। यह कहाँसे जाना जाता है? वह परम गुरुके उपदेशासे जाना जाता है। यह अविभागप्रतिच्छेदोंका गुणाकार नहीं है, किन्तु स्थान-संख्याका गुणकार है।

शंका—यह अविभागप्रतिच्छेदका गुणकार क्यों नहीं है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, वैसा होनेपर उसके अनन्तगुणे हीन होनेका प्रसंग आता है।

शंका—वह भी कहाँसे जाना जाता है?

समाधान—कारण यह कि अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र अनुभागबन्धस्थानोंके अतिक्रान्त होनेपर असंख्यात सब जीवराशि प्रमाण गुणकार पाया जाता है।

इसीप्रकार छह समय योग्य, पाँच समय योग्य और चार समय योग्य स्थानोंका अल्पबहुत्व समझना चाहिये ॥ २३९ ॥

शंका—सूत्रमें 'एवं' पदका निर्देश किसलिये किया गया है?

समाधान—दोनों ही पार्श्वभागोंमें स्थित छह, पाँच और चार समय योग्य अनुभागस्थानोंका ग्रहण करनेके लिए, उनकी समानता बतलानेके लिये, तथा असंख्यात लोक गुणकार बतलानेके लिये उक्त पदका निर्देश किया गया है।

आगेके तीन समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान उनसे असंख्यातगुणे हैं ॥ २४० ॥

तीन समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। यहाँ गुणकार असंख्यात लोक हैं।

शंका—इस सूत्रके अपूर्ण होनेका प्रसंग क्यों नहीं आता है?

---

१ आप्रतौ 'ण, अणंतगुणप्पसंगादो', ताप्रतौ 'ण, अणंतगुणा (?) अणंतगुणहीणत्तपसंगादो' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अवयवाणमेत्थ अणुवट्टिभावेण[1] एदस्स असंपुण्णत्ताणुववत्तीदो ।

विसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥२४१॥

एत्थ उवरिसद्दो अणुवट्टदे । अधवा अत्थावत्तीए चेव उवरित्तं णव्वदे । सेसं सुगमं । एदं चेव सुत्तमणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणं पि जोजेयव्वं, विसेसाभावादो । अणुभागबंधट्ठाणाणं परूवणाए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाण[2] परूवणा किमट्ठं कीरदे ? ण, अणुभागबंधट्ठाणाणि सहेउआणि णिरहेउआणि ण होंति त्ति जाणावणट्ठं तक्कारणपरूवणा कीरदे । अणुभागट्ठाणपडिबद्धत्तादो[3] अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणपरूवणा संबद्धा त्ति ? अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाविभाग[4]पडिच्छेदाणमणंतत्तं कत्तो णव्वदे[5] ? तक्कज्जकम्मपरमाणूणमविभागपडिच्छेदस्स आणंतियण्णहाणुववत्तीदो । अणुभागट्ठाणाणं संखामाहप्पजाणावणट्ठं पुव्वुत्तप्पाबहुअस्स सव्वपदेसु अवट्ठिदकमेण तेउक्काइयकायट्ठिदी चेव गुणगारो होदि त्ति जाणावणट्ठं च उत्तरसुत्तं भणदि—

समाधान—नहीं, क्योंकि, आगेके सूत्रके अवयवोंकी यहाँ अनुवृत्ति होनेसे इस सूत्रकी अपूर्णता घटित नहीं होती ।

दो समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान उससे असंख्यातगुणे हैं ॥ २४१ ॥

यहाँ 'उपरि' शब्दकी अनुवृत्ति आती है । अथवा, अर्थापत्तिसे ही उपरित्वका ज्ञान हो जाता है । शेष कथन सुगम है । इसी सूत्रकी योजना अनुभागबन्धस्थानोंकी भी करनी चाहिये, क्योंकि, उनमें कोई विशेषता नहीं है ।

शंका—अनुभागबन्धस्थानोंकी प्ररूपणामें अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंकी प्ररूपणा किसलिये की जा रही है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अनुभागबन्धस्थान सहेतुक हैं, निर्हेतुक नहीं हैं; इस बातका ज्ञान करानेके लिये उनके कारणोंकी प्ररूपणा की जा रही है । अनुभागस्थानोंसे सम्बद्ध होनेके कारण अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंकी प्ररूपणा असंबद्ध भी नहीं है ।

शंका—अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके अविभागप्रतिच्छेदोंकी अनन्तता कहाँसे जानी जाती है ?

समाधान—उनके कार्यभूत कर्मपरमाणुओंके अविभागप्रतिच्छेदोंकी अनन्तता चूँकि उसके विना बन नहीं सकती है, अतएव इसीसे उनकी अनन्तता सिद्ध है ।

अनुभागस्थानोंकी संख्याका माहात्म्य जतलानेके लिये तथा पूर्वोक्त अल्पबहुत्वका गुणकार सब पदोंमें अवस्थित क्रमसे तेककायिक जीवोंकी कायस्थिति ही होती है, इस बातको भी जतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं ।

---

१ अप्रतौ 'अणुमत्थिभावेण' आप्रतौ 'अणुभागमत्थिभावेण, ताप्रतौ अणुमत्थि [वत्ति] भावेण' इति पाठः । २ अ-आप्रत्योः '-ट्ठाणाणि', ताप्रतौ "ट्ठाणाणि (णं)' इति पाठः । ३ ताप्रतौ 'कीरदे, अणुभागबंधट्ठाणपडिबद्धत्तादो ।' इति पाठः । ४ आ-ताप्रत्योः '-ट्ठाणं विभाग-' इति पाठः । ५ ताप्रतौ'-मणंतत्तं (?) कत्तो णव्वदे इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सुहुमतेउकाइया[1] पवेसणेण असंखेज्जा लोगा ॥ २४२ ॥

अण्णकाइएहिंतो आगंतूण सुहुमअगणिकाएसु उववादो पवेसणं णाम । तेण पवेसणेण विसेसियतेउकाइया जीवा असंखेज्जलोगमेत्ता होदूण थोवा भवंति उवरि भण्णमाणपदेहिंतो ।

अगणिकाइया असंखेज्जगुणा ॥ २४३ ॥

अगणिकाइयणामकम्मोदइल्ला सव्वे जीवा अगणिकाइया णाम । ते असंखेज्जगुणा, अंतोमुहुत्तसंचिदत्तादो । को गुणगारो ? अंतोमुहुत्तं ।

कायट्ठिदी असंखेज्जगुणा ॥ २४४ ॥

अण्णकाइएहिंतो अगणिकाइएसु उप्पण्णपढमसमए चेव अगणिकाइयणामकम्मस्स उदओ होदि । तदुदिदपढमसमयप्पहुडि उक्कस्सेण जाव असंखेज्जा लोगा त्ति तदुदयकालो होदि । सो कालो अगणिकाइयकायट्ठिदी णाम । सा अगणिकाइयरासीदो असंखेज्जगुणा । को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा ।

अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २४५ ॥

अणुभागट्ठाणाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि च असंखेज्जगुणा त्ति भणिदं

सूक्ष्म तेजकायिक जीव प्रवेशकी अपेक्षा असंख्यात लोक प्रमाण हैं ॥ २४२ ॥

अन्यकायिक जीवोंमेंसे आकर सूक्ष्म अग्निकायिक जीवोंमें उत्पन्न होनेका नाम प्रवेश है । उस प्रवेशसे विशेषताको प्राप्त हुए तेजकायिक जीव असंख्यात लोक प्रमाण होकर आगे कहे जानेवाले पदोंकी अपेक्षा स्तोक हैं ।

उनसे अग्निकायिक जीव असंख्यातगुणे हैं ॥ २४३ ॥

अग्निकायिक नामकर्मके उदयसे संयुक्त सब जीव अग्निकायिक कहे जाते हैं । वे पूर्वोक्त जीवोंसे असंख्यातगुणे हैं क्योंकि, वे अन्तर्मुहूर्तमें संचित होते हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार अन्तर्मुहूर्त है ।

अग्निकायिकोंकी कायस्थिति उनसे असंख्यातगुणी है ॥ २४४ ॥

अन्यकायिक जीवोंमेंसे अग्निकायिक जीवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही अग्निकायिक नामकर्मका उदय होता है । उसके उदय युक्त प्रथम समयसे लेकर उत्कर्षसे असंख्यात लोक प्रमाण उसका उदयकाल है । वह काल अग्निकायिकोंकी कायस्थिति कहा जाता है । वह (कायस्थिति) अग्निकायिक जीवोंकी राशिसे असंख्यातगुणी है । गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है ।

अनुभागबन्धाध्यवसानवस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २४५ ॥

अनुभागस्थान और अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं, यह अभिप्राय है ।

---

१ अ-आप्रत्योः 'तेउकाइय' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

होदि । कधं एदं लब्भदे ? दोण्णं पि अत्थाणं वाचगभावेण एदस्स सुत्तस्स उवलंभादो । एत्थ गुणगारपमाणमसंखेज्जा लोगा । तं कुदो णव्वदे ? गुरूवदेसादो ।

वड्ढिपरूवणदाए अत्थि अणंतभागवड्ढि-हाणी असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणी अणंतगुणवड्ढि-हाणी ॥ २४६ ॥

एदेण सुत्तेण छण्णं वड्ढि-हाणीणं संतपरूवणा कदा । छट्ठाणपरूवणाए चेव अवगदसंताणं छण्णं वड्ढि-हाणीणं ण एत्थ परूवणा कीरदे ?, पुणरुत्तदोसप्पसंगादो ? ण एत्थ पुणरुत्तदोसो ढुक्कदे, वड्ढि-हाणीणं कालस्स पमाणप्पाबहुगपरूवणट्ठं छण्णं वड्ढि-हाणीणं संतस्स संभालणकरणादो । अधवा[1], अणंतगुणवड्ढि-हाणिकालो त्ति कालसद्दस्स अज्झाहारे कदे छण्णं वड्ढि-हाणीणं कालस्स संतपरूवणा त्ति कट्टु ण पुणरुत्तदोसो ढुक्कदे ।

पंचवड्ढि-पंचहाणीओ केवचिरं कालादो होंति ? ॥ २४७ ॥

एदं पुच्छासुत्तं एगसमयमादिं कादूण जाव कप्पो त्ति[2] एदं कालं अवेक्खदे[3] ।

शंका— यह कैसे पाया जाता है ?

समाधान—कारण कि यह सूत्र इन दोनों ही अर्थोंके वाचक स्वरूपसे पाया जाता है ।

यहाँ गुणकारका प्रमाण असंख्यात लोक है । वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ? वह गुरुके उपदेशसे जाना जाता है ।

वृद्धिप्ररूपणाकी अपेक्षा अनन्तभागवृद्धि-हानि, असंख्यातभागवृद्धि-हानि संख्यातभागवृद्धि-हानि, संख्यातगुणवृद्धि-हानि, असंख्यातगुणवृद्धि-हानि और अनन्तगुणवृद्धि-हानि होती है ॥ २४६ ॥

इस सूत्रके द्वारा छह वृद्धियों व हानियोंकी प्ररूपणा की गई है ।

शंका— छह वृद्धियों व हानियोंका अस्तित्व चूँकि षट्स्थानप्ररूपणासे ही जाना जा चुका है अतएव उनकी प्ररूपणा यहाँ नहीं की जानी चाहिये, क्योंकि, पुनरुक्त दोषका प्रसंग आता है ?

समाधान—यहाँ पुनरुक्त दोष नहीं आता है, क्योंकि, वृद्धियों व हानियोंके कालके प्रमाण व अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनेके लिये इस सूत्र द्वारा छह वृद्धियों व हानियोंके अस्तित्वका स्मरण कराया गया है । अथवा अनन्तगुणवृद्धि-हानिकाल इस प्रकार काल शब्दका अध्याहार करनेपर छह वृद्धियों व हानियोंके कालकी यह सत्प्ररूपणा है, ऐसा मानकर पुनरुक्त दोष नहीं आता है ।

पाँच वृद्धियाँ व हानियाँ कितने काल तक होती हैं ? ॥ २४७ ॥

यह पृच्छासूत्र एक समयसे लेकर जहाँ तक सम्भव है उतने कालकी अपेक्षा करता है ।

---

१ अ-आप्रत्योर्नोपलभ्यते पदमिदम्, ताप्रतौ तूपलभ्यते तत् ।

२ आप्रतौ 'जाव उक्कस्सो त्ति' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'उवेक्खदे' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णेण एगसमओ ॥ २४८ ॥

एदाओ पंचवड्डि-हाणीयो एगसमयं चेव कादूण विदियसमए अणप्पिदवड्डि-हाणीसु गदे संते एगसमओ लब्भदि ।

उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ॥ २४९ ॥

पंचण्णं वड्डि-हाणीणं मज्झे जदि एकिस्से वड्डीए हाणीए वा सुट्ठु दीहकालमच्छदि तो आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तं चेव अच्छदि, णो आवलियादिक्कंतं कालं[1], साभावियादो । अणंतभागवड्डिविसयं पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्डिविसओ अंगुलस्स असंखेज्जदिभागगुणो[2] त्ति असंखेज्जभागवड्डिकालो असंखेज्जपलिदोवममेत्तो किण्ण जायदे ? ण, विसयगुणगारपडिभागेण अणुभागबंधकाले इच्छिज्जमाणे अणंतगुणवड्डि-हाणीणमसंखेज्जलोगमेत्तबंधकालप्पसंगादो । ण च एवं, सुत्ते तासिमंतोमुहुत्तमेत्तउक्कस्सकालणिद्देसादो ।

अणंतगुणवड्डि-हाणीयो केवचिरं कालादो होंति ? ॥ २५० ॥

सुगमं ।

जहण्णेण एगसमओ ॥ २५१ ॥

कुदो ? अणंतगुणवड्डिबंधमणंतगुणहाणिबंधं च एगसमयं कादूण विदियसमए

जघन्यसे ये एक समय होती हैं ॥ २४८ ॥

इन पाँच वृद्धियों व हानियोंको एक समय ही करके द्वितीय समयमें अविवक्षित वृद्धियों व हानियोंके प्राप्त होनेपर इनका एक समय काल उपलब्ध होता है ।

वे उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग काल तक होती हैं ॥ २४९ ॥

पाँच वृद्धियों व हानियोंके मध्यमें यदि एक वृद्धि अथवा हानिमें अतिशय दीर्घ काल तक रहता है तो वह आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र ही रहता है, आवलीका अतिक्रमण कर वह अधिक काल तक नहीं रहता, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

शंका - अनन्तभागवृद्धिके विषयकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धिका विषय चूँकि अंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणित है, अतएव असंख्यातभागवृद्धिका काल असंख्यात पल्योपम प्रमाण क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि विषयगुणकारके प्रतिभागसे अनुभागबन्धके कालको स्वीकार करनेपर अनन्तभागवृद्धि व हानि सम्बन्धी बन्धकालके असंख्यात लोक मात्र होनेका प्रसंग आता है । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, सूत्रमें उनके उत्कृष्ट कालका निर्देश अन्तर्मुहूर्त मात्र काल ही किया है ।

अनन्तगुणवृद्धि और हानि कितने काल तक होती हैं ? ॥ २५० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे एक समय तक होती हैं ॥ २५१ ॥

कारण कि अनन्तगुणवृद्धिबन्ध और अनन्तगुणहानिबन्धको एक समय करके द्वितीय समय-

१ प्रतिषु 'आवलियादिकालं' इति पाठः । २ आप्रतौ 'असंखे० भागमेत्तगुणो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणप्पिदवड्ढि-हाणीणं गदस्स तासिं एगसमयकालदंसणादो ।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ २५२ ॥

एदासिं दोण्णं वड्ढि-हाणीणं मज्झे एक्किस्से वड्ढीए हाणीए वा सुट्ठु जदि दीहकालमच्छदि तो अंतोमुहुत्तं चेव णो अहियं, जिणोवएसाभावादो । विसुज्झमाणो णिरंतरमंतोमुहुत्तकालमसुहाणं पयडीणमणुभागट्ठाणाणि अणंतगुणहाणीए बंधदि, सुहाणमणंतगुणवड्ढीए । संकिलेसमाणो असुहाणं पयडीणमणुभागट्ठाणाणि णिरंतरमंतोमुहुत्तकालमणंतगुणवड्ढीए सुहाणमणुभागट्ठाणाणि अणंतगुणहाणीए बंधदि त्ति भणिदं होदि ।

एदेहि दोहि अणियोगद्दारेहि सूचिदमणुभागवड्ढि-हाणिकालाणमप्पाबहुगं वत्तइस्सामो । तं जहा—सव्वत्थोवो अणंतभागवड्ढि-हाणिकालो । असंखेज्जभागवड्ढि-हाणिकालो असंखेज्जगुणो । को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो ? कुदो ? अणंतभागवड्ढि-हाणिविसयादो असंखेज्जभागवड्ढि-हाणिविसयस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो । संखेज्जभागवड्ढि-हाणिकालो संखेज्जगुणो । कुदो ? असंखेज्जभागवड्ढि-हाणिविसयं पेक्खिदूण संखेज्जभागवड्ढि-हाणिविसयस्स संखेज्जगुणत्तुवलंभादो । तं च संखेज्जगुणत्तं कत्तो णव्वदे ? जुत्तीदो । सा च जुत्ती पुव्वं परूविदा त्ति णेह परू-

---

में अविवक्षित वृद्धि अथवा हानिके बन्धको प्राप्त हुए जीवके उनका एक समय काल देखा जाता है ।

उत्कृष्टसे वे अन्तर्मूहूर्त काल तक होती हैं ॥ २५२ ॥

इन दो वृद्धि-हानियोंके मध्यमें एक वृद्धि अथवा हानिमें अतिशय दीर्घ काल तक यदि रहता है तो अन्तर्मुहूर्त ही रहता है, अधिक काल तक नहीं; क्योंकि, वैसा जिन भगवान्‌का उपदेश नहीं है । विशुद्धिको प्राप्त होनेवाला जीव निरन्तर अन्तर्मुहूर्त काल तक अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागस्थानोंको अनन्तगुणहानिके साथ बाँधता है तथा शुभ प्रकृतियोंके अनुभागस्थानोंको अनन्तगुणवृद्धिके साथ बाँधता है । इसके विपरीत संक्लेशको प्राप्त होनेवाला जीव अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागस्थानोंको निरन्तर अन्तर्मुहूर्त काल तक अनन्तगुणवृद्धिके साथ बाँधता है तथा शुभ प्रकृतियोंके अनुभागस्थानोंको अनन्तगुणहानिके साथ बाँधता है, यह उक्त कथनका अभिप्राय है ।

इन दो अनुयोगद्वारोंके द्वारा सूचित अनुभागकी वृद्धि एवं हानिके काल सम्बन्धी अल्पबहुत्वको कहते हैं । वह इस प्रकार है अनन्तभागवृद्धि व हानिका काल सबसे स्तोक है । उससे असंख्यातभागवृद्धि व हानिका काल असंख्यातगुणा है । गुणकार क्या है ? गुणकार आवलीका असंख्यातवाँ भाग है, क्योंकि, अनन्तभागवृद्धि व हानिके विषयकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धि व हानिका विषय असंख्यातगुणा पाया जाता है । उससे संख्यातभागवृद्धि व हानिका काल संख्यातगुणा है, क्योंकि, असंख्यातभागवृद्धि व हानिके विषयकी अपेक्षा संख्यातभागवृद्धि व हानिका विषय संख्यातगुणा पाया जाता है ।

शंका—वह संख्यातगुणत्व किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह युक्तिसे जाना जाता है । और वह युक्ति चूँकि पहिले बतलायी जा चुकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विज्जदे । संखेज्जगुणवड्ढि-हाणिकालो संखेज्जगुणो । कुदो ? पुव्विल्लविसयादो एदासिं विसयस्स संखेज्जगुणत्तदंसणादो । असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणिकालो असंखेज्जगुणो । कुदो ? पुव्विल्लवड्ढि-हाणिविसयादो एदासिं विसयस्स जुत्तीए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो । को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । अणंतगुणवड्ढि–हाणिकालो असंखेज्जगुणो । कुदो ? पुव्विल्लविसयादो एदासिं वड्ढि-हाणीणं विसयस्स जुत्तीए असंखेज्जगुणत्तदंसणादो । को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । वड्ढिकालो विसेसाहिओ । केत्तियमेत्तेण ? हेट्ठिमासेसवड्ढिकालमेत्तेण । हाणिकालो वि वड्ढिकालेण सह किण्ण परूविदो । ण, वड्ढिकालेण हाणिकालो समाणो त्ति पुध परूवणाए फलाभावादो । एवं वड्ढिकालप्पाबहुगं समत्तं । एवं वड्ढिपरूवणा गदा ।

जवमज्झपरूवणदाए अणंतगुणवड्ढी अणंतगुणहाणी च जवमज्झं ॥ २५३ ॥

एदं किं कालजवमज्झं आहो जीवजवमज्झमिदि ? जीवजवमज्झं ण होदि, अणुभागट्ठाणेसु जीवाणमवट्ठाणकमस्स पुव्वमपरूविदत्तादो । तदो कालजवमज्झमेदं । जदि एवं तो जवमज्झपरूवणा ण कायव्वा, समयपरूवणाए चेव असंखेज्जलोगमेत्ताण-

---

है, अतएव उसकी प्ररूपणा यहाँ नहीं की जाती है ।

उससे संख्यातगुणवृद्धि और हानिका काल संख्यातगुणा है, क्योंकि, पूर्वकी वृद्धि और हानिके विषयकी अपेक्षा इनका विषय संख्यातगुणा देखा जाता है । उससे असंख्यातगुणवृद्धि और हानि का काल असंख्यातगुणा है, क्योंकि, पूर्वकी वृद्धि और हानिके विषयकी अपेक्षा इनका विषय युक्तिसे असंख्यातगुणा पाया जाता है । गुणकार क्या है ? गुणकार आवलीका असंख्यातवाँ भाग है । उससे अनन्तगुणवृद्धि और हानिका काल असंख्यातगुणा है, क्योंकि, पूर्वकी वृद्धि व हानिके विषयकी अपेक्षा इन वृद्धि-हानियोंका विषय युक्तिसे असंख्यातगुणा देखा जाता है । गुणकार क्या है ? गुणकार आवलीका असंख्यातवाँ भाग है । वृद्धिका काल उससे विशेष अधिक है । कितने मात्रसे वह विशेष अधिक है ? वह अधस्तन समस्त वृद्धियोंके कालसे विशेष अधिक है ।

शंका— वृद्धिकालके साथ हानिकालकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान —नहीं, क्योंकि, हानिकाल वृद्धिकालके बराबर है, अतः उसकी अलगसे प्ररूपणा करना निष्फल है ।

इस प्रकार वृद्धि कालका अल्पबहुत्व समाप्त हुआ । इस प्रकार वृद्धिप्ररूपणा समाप्त हुई ।

यवमध्यकी प्ररूपणामें अनन्तगुणवृद्धि और अनन्तगुणहानि यवमध्य है ॥२५३॥

शंका—यह क्या कालयवमध्य है अथवा जीवयवमध्य ?

समाधान—वह जीवयवमध्य नहीं है, क्योंकि, अनुभागस्थानोंमें जीवोंके अवस्थानके क्रमकी पहिले प्ररूपणा नहीं की गई है । इस कारण यह कालयवमध्य है ।

शंका—यदि ऐसा है तो फिर यवमध्यकी प्ररूपणा नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, समय-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मट्ठसमइयाणमणुभागट्ठाणाणं कालमस्सिदूण जवमज्झत्तसिद्धिदो ? सच्चमेदं, कालजवमज्झं समयपरूवणादो चेव सिद्धमिदि, किं तु तस्स जवमज्झस्स पारंभो परिसमत्ती च काए वड्डीए हाणीए वा जादा त्ति ण णव्वदे। तस्स पारंभपरिसमत्तीओ एदासु वड्ढि-हाणीसु जादाओ त्ति जाणावणट्ठं जवमज्झपरूवणा आगदा। अणंतगुणवड्डीए जवमज्झस्स आदी होदि, पुव्वमुद्दिट्ठत्तादो गुरूवएसादो वा। परिसेसियादो अणंतगुणहाणीए परिसमत्ती होदि त्ति घेत्तव्वं। जेणेदं सुत्तं देसामासियं तेण जवमज्झादो हेट्ठिम-उवरिम-चदु-पंच-छ-सत्तसमयपाओग्गट्ठाणाणं तिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणाणं च पारंभो अणंतगुणवड्डीए परिसमत्ती अणंतगुणहाणीए त्ति सिद्धं। संपहि सव्वट्ठाणाणं पज्जवसाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि[1]—

पज्जवसाणपरूवणदाए अणंतगुणस्स उवरि अणंतगुणं भविस्सदि त्ति पज्जवसाणं ॥ २५४ ॥

सुहुमेइंदियजहण्णट्ठाणप्पहुडि पुव्वपरूविदासेसट्ठाणाणं पज्जवसाणं अणंतगुणस्सुवरि अणंतगुणं होहिदि त्ति अहोदूण ट्ठिदं[2]। एवं पज्जवसाणपरूवणा समत्ता।

प्ररूपणासे ही आठ समय योग्य असंख्यात लोकमात्र अनुभागस्थानोंको कालका आश्रय करके यवमध्यपना सिद्ध है।

समाधान—सचमुचमें यह कालयवमध्य समयप्ररूपणासे ही सिद्ध है, किन्तु उस यवमध्यका प्रारम्भ और समाप्ति कौनसी वृद्धि अथवा हानिमें हुई है, यह नहीं जाना जाता है। इस कारण उसका प्रारम्भ और समाप्ति इन वृद्धि हानियोंमें हुई है, यह जतलानेके लिये यवमध्यप्ररूपणा प्राप्त हुई है। अनन्तगुणवृद्धिसे यवमध्यका प्रारम्भ होता है, क्योंकि, वह पूर्वमें उद्दिष्ट है अथवा गुरुका वैसा उपदेश है। पारिशेष रूपसे अनन्तगुणहानिसे उसकी समाप्ति होती है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। चूँकि यह सूत्र देशामर्शक है अतएव यवमध्यसे नीचेके और ऊपरके चार, पाँच, छह और सात समय योग्य स्थानोंका तथा तीन समय व दो समय योग्य स्थानोंका प्रारम्भ अनन्तगुणवृद्धिसे और समाप्ति अनन्तगुणहानिसे होती है, यह सिद्ध है।

अब सब स्थानोंकी पर्यवसान प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

पर्यवसानप्ररूपणामें अनन्तगुणके ऊपर अनन्तगुणा होगा यह पर्यवसान है ॥ २५४ ॥

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवके जघन्य स्थानसे लेकर पहिले कहे गये समस्त स्थानोंका पर्यवसान अनन्तगुणके ऊपर अनन्तगुणा होगा, इस प्रकार न होकर स्थित है। इस प्रकार पर्यवसानप्ररूपणा समाप्त हुई।

---

१ अ-आप्रत्योः 'भणिदं' इति पाठः। २ आप्रतौ 'आहोदूणिट्ठिदं', ताप्रतौ 'अहोदू [ण] णिदिट्ठं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पाबहुए त्ति तत्थ इमाणि दुवे अणियोगद्दाराणि अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा ॥ २५५ ॥

अणंतगुणवड्ढीए असंखेज्जगुणवड्ढीए संखेज्जगुणवड्ढीए संखेज्जभागवड्ढीए असंखेज्जभागवड्ढीए अणंतभागवड्ढीए अणंतरहेट्ठिमट्ठाणं पेक्खिदूण ट्ठिदट्ठाणाणं[1] जा थोवबहुत्तपरूवणा सा अणंतरोवणिधा। जहण्णट्ठाणं पेक्खिदूण अणंतभागब्भहियादिसरूवेण ट्ठिदट्ठाणाणं जा थोवबहुत्तपरूवणा सा परंपरोवणिधा। एवमेत्थ दुविहं चेव अप्पाबहुअं होदि, तदियस्स अप्पाबहुगभंगस्स असंभवादो।

तत्थ अणंतरोवणिधाए सव्वत्थोवाणि अणंतगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि ॥ २५६ ॥

जदि वि एदमप्पाबहुगं सव्वट्ठाणाणि अस्सिदूणवट्ठिदं तो वि अव्वुप्पण्णजणस्स वुप्पत्तिजणणट्ठमेगछट्ठाणमस्सिदूण अप्पाबहुगपरूवणा कीरदे। जेण एगछट्ठाणम्मि अणंतगुणवड्ढिट्ठाणमेक्कं चेव तेण सव्वत्थोवमिदि भणिदं।

असंखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २५७॥

एत्थ गुणगारो एगकंडयमेत्तो होदि, एगछट्ठाणब्भंतरे कंदयमेत्ताणं चेव असंखेज्जगुणवड्ढीणमुवलंभादो।

संखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २५८ ॥

अल्पबहुत्व—इस अधिकारमें अनन्तरोपनिधा और परंपरोपनिधा ये दो अनुयोगद्वार होते हैं ॥ २५५ ॥

अनन्तगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि और अनन्तभागवृद्धिमें अनन्तर अधस्तन स्थानको देखते हुए अवस्थित स्थानोंकी जो अल्पबहुत्वप्ररूपणा है वह अनन्तरोपनिधा कहलाती है। जघन्य स्थानकी अपेक्षा करके अनन्तवें भागसे अधिक इत्यादि स्वरूपसे स्थित स्थानोंकी जो अल्पबहुत्वप्ररूपणा है वह परम्परोपनिधा है। इस प्रकार यहाँ दो प्रकारका ही अल्पबहुत्व होता है, क्योंकि, तृतीय अल्पबहुत्वभंगकी यहाँ सम्भावना नहीं है।

उनमें अनन्तरोपनिधासे अनन्तगुणवृद्धिस्थान सबसे स्तोक हैं ॥ २५६ ॥

यद्यपि यह अल्पबहुत्व सब स्थानोंका आश्रय करके स्थित है तो भी अव्युत्पन्न जनको व्युत्पन्न करानेके लिये एक षट्स्थानका आश्रय करके अल्पबहुत्वप्ररूपणा की जा रही है। चूँकि एक षट्स्थानमें अनन्तगुणवृद्धिस्थान एक ही है, अतएव 'सबसे स्तोक' ऐसा कहा गया है।

उनसे असंख्यातगुणवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २५७ ॥

यहाँ गुणकार एक काण्डकमात्र है, क्योंकि एक षट्स्थानके भीतर काण्डक प्रमाण ही असंख्यातगुणवृद्धियाँ पायी जाती है।

उनसे संख्यातगुणवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २५८ ॥

---

१ प्रतिषु 'वड्ढिट्ठाणाणं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एत्थ गुणगारो रूवाहियकंदयं । कुदो ? कंदयमेत्तछांकाणि गंतूण एगसत्तंकुप्पत्तीदो । जदि कंदयमेत्ताणि संखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि गंतूण एगमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि तो एगं चेव कंदयं गुणगारो होदि, ण रूवाहियकंदयं; एगछट्ठाणम्मि कंदयमेत्ताणं चेव असंखेज्जगुणवड्ढीणमुवलंभादो ? ण एस दोसो, कंदयमेत्ताणि असंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि उप्पज्जिय अण्णेगमसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणं होहिदि त्ति अहोदूण जेण पढमछट्ठाणं ट्ठिदं तेण अण्णेगासंखेज्जगुणवड्ढीए अभावे वि तदो हेट्ठिमकंदयमेत्तसंखेज्जगुणवड्ढीयो लब्भंति । तेण रूवाहियकंदयं गुणगारो । एदं कारणं उवरि सव्वत्थ वत्तव्वं । एत्थ एदेसिमाणयणविहाणं उच्चदे—एगअसंखेज्जगुणवड्ढीए जदि कंदयमेत्ताओ संखेज्जगुणवड्ढीयो लब्भंति तो रूवाहियकंदयमेत्ताणमसंखेज्जगुणवड्ढीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगछट्ठाणब्भंतरसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणाणि उप्पज्जंति । एदेसु कंदयमेत्तअसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणेहि ओवट्ठिदेसु रूवाहियकंदयमे त्त गुणगारो होदि ।

संखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २५८ ॥

को गुणगारो ? रूवाहियकंदयं । तं जहा—रूवाहियकंदयगुणिदकंदयमेत्त[1]संखेज्जगुणवड्ढीसु | ४ | ५ | रूवाहियकंदएण गुणिदासु एगछट्ठाणब्भंतरसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि

यहाँ गुणकार एक अंकसे अधिक काण्डक है, क्योंकि, काण्डक प्रमाण छह अंक जाकर एक सात अंक उत्पन्न होता है ।

शंका—काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धिस्थान जाकर एक असंख्यातगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है तो एक ही काण्डक गुणकार होता है, न कि एक अंकसे अधिक काण्डक, क्योंकि, एक षट्स्थानमें काण्डक प्रमाण ही असंख्यातगुणवृद्धियां पायी जाती हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होकर अन्य एक असंख्यातगुणवृद्धिस्थान होगा, ऐसा न होकर चूंकि प्रथम षट्स्थान स्थित है अतएव अन्य एक असंख्यातगुणवृद्धिका अभाव होनेपर भी उससे नीचेके काण्डक प्रमाण संख्यात गुणवृद्धियां पायी जाती हैं । इस कारण एक अंकसे अधिक काण्डक गुणकार होता है । यह कारण आगे सब जगह बतलाना चाहिये ।

यहां इनके लानेकी विधि बतलाते हैं—एक असंख्यातगुणवृद्धिके यदि काण्डक प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियां पायी जाती हैं तो एक अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धियोंके वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक षट्स्थानके भीतर संख्यातगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होते हैं । इनको काण्डक प्रमाण असंख्यातगुणवृद्धिस्थानोंके द्वारा अपवर्तित करनेपर एक अधिक काण्डक प्रमाण गुणकार होता है ।

उनसे संख्यातभागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २५९ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार एक अंकसे अधिक काण्डक है । वह इस प्रकारसे—एक अधिक काण्डकसे गुणित काण्डक (४ × ५) प्रमाण संख्यातगुणवृद्धियोंको एक अधिक काण्डके

१ अ-आप्रत्योः 'मेत्ते', ताप्रतौ 'मेत्ते (त्त)' ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होंति |४|५|५|। एदेसु संखेज्जगुणवड्डिट्ठाणेहि ओवट्टिदेसु रूवाहियकंदयं गुणगारो लब्भदे।

असंखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २६० ॥

एत्थ वि गुणगारो रूवाहियकंदयं। कुदो? संखेज्जभागवड्डिट्ठाणाणि ठविय रूवाहियकंदएण गुणिदे एगछट्ठाणब्भंतरे असंखेज्जभागवड्डिट्ठाणाणि समुप्पज्जंति |४|५|५|५|, हेट्ठिमरासिणा तेसु ओवट्टिदेसु[1] गुणगारुप्पत्तीदो।

अणंतभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २६१ ॥

एत्थ वि गुणगारो रूवाहियकंदयं। कुदो? रूवाहियकंदएण असंखेज्जभागवड्डिट्ठाणेसु गुणिदेसु एगछट्ठाणब्भंतरे अणंतभागवड्डिट्ठाणाणमुप्पत्तीदो |४|५|५|५|५|। एदाणि एगछट्ठाणब्भंतरअणंतगुणवड्डि |१| असंखेज्जगुणवड्डि |४| संखेज्जगुणवड्डि |४|५[2]| संखेज्जभागवड्डि |४|५|५| असंखेज्जभागवड्डि |४|५|५|५| अणंतभागवड्डि |४|५|५|५|५| ट्ठाणाणि ठविय एगछट्ठाणब्भंतरे जदि एत्तियाणि अप्पिदट्ठाणाणि लब्भंति तो असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए सव्वछट्ठाणाणमणंतगुणवड्डि-असंखेज्जगुणवड्डि-संखेज्जगुण-

---

द्वारा गुणित (४×५×५) करनेपर एक षट्स्थानके भीतर संख्यातवृद्धिस्थान हैं। इनको संख्यातगुणवृद्धिस्थानोंके द्वारा अपवर्तित करनेपर एक अंकसे अधिक काण्डक गुणकार पाया जाता है।

उनसे असंख्यातभागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६० ॥

यहाँपर भी गुणकार एक अंकसे अधिक काण्डक है, क्योंकि, संख्यातभागवृद्धिस्थानोंको स्थापित कर एक अधिक काण्डकसे गुणित करनेपर एक षट्स्थानके भीतर असंख्यातभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होते हैं—४×५×५×५, क्योंकि, उनको अधस्तन राशिसे अपवर्तित करनेपर गुणकार उत्पन्न होता है।

उनसे अनन्त भागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६१ ॥

यहाँपर भी गुणकार एक अधिक काण्डक है,। क्योंकि, एक अधिक काण्डकसे असंख्यातभागवृद्धिस्थानोंको गुणित करनेपर एक षट्स्थानके भीतर अन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होते हैं ४×५×५×५×५। एक षट्स्थानके भीतर इन अनन्तगुणवृद्धिस्थानों (१),असंख्यातगुणवृद्धिस्थानों (४), संख्यातगुणवृद्धिस्थानों (४×५), संख्यातभागवृद्धिस्थानों (४×५×५), असंख्यातभागवृद्धिस्थानों (४×५×५×५), और अनन्तभागवृद्धिस्थानों (४×५×५×५×५) को स्थापित कर एक षट्स्थानके भीतर यदि इतने विवक्षित स्थान पाये जाते हैं तो असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंके वे कितने पाये जावेंगे, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर समस्त षट्स्थानोंकी अनन्तगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि,

---

१ प्रतिषु 'वड्डिदेसु' इति पाठः। २ प्रतिषुः |४|४| इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-अणंतभागवड्ढिट्ठाणाणि होंति। जहा एगछट्ठाणस्स अप्पाबहुगं भणिदं तहा णाणाछट्ठाणाणं पि वत्तव्वं, गुणगारं पडि भेदाभावादो। एवमणंतरोवणिधाअप्पाबहुगं समत्तं।

परंपरोवणिधाए सव्वत्थोवाणि अणंतभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि ॥२६२॥

कुदो? एगकंदयपमाणत्तादो।

असंखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥ २६३ ॥

एत्थ गुणगारो रूवाहियकंदयं। तं जहा—एगउव्वंककंदयादो उवरि जदि रूवाहियकंदयमेत्ताओ असंखेज्जभागवड्ढीयो लब्भंति तो कंदयमेत्ताणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए असंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणाणि आगच्छंति। पुणो हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासिमोवट्टिय गुणगारो साहेयव्वो।

संखेज्जभागब्भहियट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि ॥ २६४ ॥

कुदो? पढमपंचंकस्स हेट्ठिमसव्वद्धाणमेगं कादूण तस्सरिसेसु उक्कस्सं संखेज्जं छप्पण्णखंडाणि कादूण तत्थ इगिदालखंडमेत्तसंखेज्जभागवड्ढिअद्धाणेसु गदेसु जेण दुगुणवड्ढी उप्पज्जदि तेण दुगुणवड्ढीदो हेट्ठिमअणंतभाग-असंखेज्जभागवड्ढिअद्धाणादो उवरिमसव्वद्धाणं संखेज्जभागवड्ढीए विसओ होदि। तेणेगमद्धाणं ठविय इगिदालखंडेसु

असंख्यातभागवृद्धि और अनन्तभागवृद्धिके स्थान होते हैं। जिस प्रकार एक षट्स्थानके अल्पबहुत्वका कथन किया गया है उसी प्रकारसे नाना षट्स्थानोंके भी अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिये, क्योंकि, गुणकारके प्रति कोई भेद नहीं है। इस प्रकार अनन्तरोपनिधाअल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

परम्परोपनिधामें अनन्तभागवृद्धिस्थान सबसे स्तोक हैं ॥ २६२ ॥

कारण कि वे एक काण्डकके बराबर हैं।

उनसे असंख्यातभागवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६३ ॥

यहाँ गुणकार एक अंकसे अधिक काण्डक है। वह इस प्रकारसे—एक ऊर्वंक काण्डकसे आगे यदि एक अंकसे अधिक काण्डक प्रमाण असंख्यातभागवृद्धियाँ पायी जाती हैं तो काण्डक प्रमाण उनके कितनी असंख्यात भागवृद्धियाँ पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर असंख्यातभागवृद्धिस्थान आते हैं। पश्चात् अधस्तन राशिसे उपरिमराशिको अपवर्तित करके गुणकारको सिद्ध करना चाहिये।

उनसे संख्यातभागवृद्धिस्थान संख्यातगुणे हैं ॥ २६४ ॥

कारण यह कि प्रथम पंचांकके नीचेके सब अध्वानको एक करके उत्कृष्ट संख्यातके छप्पन खण्ड करके उनमेंसे उसके सदृश इकतालीस खण्ड प्रमाण संख्यातभागवृद्धिस्थानोंके बीतनेपर चूंकि दुगुणवृद्धि उत्पन्न होती है अतएव दुगुणवृद्धिसे नीचेका तथा अधस्तन अनन्तभागवृद्धि व असंख्यातभागवृद्धिके अध्वानसे ऊपरका सब अध्वान संख्यातभागवृद्धिका विषय होता है। इसलिये

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

एगरूवमवणिय सेससव्वखंडेहि गुणिदे संखेज्जभागवड्ढिविसओ होदि । एदम्मि हेट्ठिमरासिणा भागे हिदे लद्धसंखेज्जरूवाणि गुणगारो होदि ।

संखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि ॥२६५॥

को गुणगारो ? संखेज्जरूवाणि । तं जहा—जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तदुगुणवड्ढिअद्धाणेसु गदेसु पढममसंखेज्जगुणवड्ढिट्ठाणं उप्पज्जदि । दुगुणवड्ढिअद्धाणाणि च सव्वाणि सरिसाणि त्ति एगं गुणहाणिअद्धाणं ठविय जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणेहि रूवूणेहि गुणिदे संखेज्जगुणवड्ढिअद्धाणं होदि । तम्हि संखेज्जभागवड्ढिअद्धाणेण भागे हिदे गुणगारो होदि ।

असंखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥२६६॥

एत्थ गुणगारो अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो । कुदो ? अणंतरोवणिधाए जा संखेज्जभागवड्ढी तिस्से असंखेज्जे भागे संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढिविसयं सव्वमवरुंधिय ट्ठिदत्तादो ।

अणंतगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ॥२६७॥

एत्थ गुणगारो असंखेज्जलोगा । कुदो ? पढमअट्ठंकप्पहुडि उवरिमअसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणावट्ठिदसव्वाणुभागबंधट्ठाणाणं जहण्णट्ठाणादो अणंतगुणत्तुवलंभा । एवम-

---

एक अध्वानको स्थापित करके इकतालीस खण्डोंमेंसे एक अंक कम करके शेष सब खण्डोंके द्वारा गुणित करनेपर संख्यातभागवृद्धिका विषय होता है । इसमें अधस्तन राशिका भाग देने पर प्राप्त हुए संख्यात अंक गुणकार होते हैं ।

उनसे संख्यातगुणवृद्धिस्थान संख्यातगुणे हैं ॥ २६५ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार संख्यात अंक हैं । यथा—जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेद प्रमाण दुगुणवृद्धिस्थानोंके बीतनेपर प्रथम संख्यातगुणवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है । दुगुणवृद्धिस्थान चूंकि सब सदृश हैं, अतएव एक गुणहानि अध्वानको स्थापित कर जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंसे गुणित करनेपर संख्यातगुणवृद्धि अध्वान होता है । उसमें संख्यातभागवृद्धि-अध्वानका भाग देनेपर गुणकारका प्रमाण होता है ।

उनसे असंख्यातगुणवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६६ ॥

यहाँ गुणकार अंगुलका असंख्यातवाँ भाग है, क्योंकि, अनन्तरोपनिधामें जो संख्यातभागवृद्धि है उसके असंख्यातवें भागमें संख्यागुणवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धिके सब विषयका अवरोध करके स्थित है ।

उनसे अनन्तगुणवृद्धिस्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २६७ ॥

यहाँ गुणकार असंख्यात लोक हैं, क्योंकि, प्रथम अष्टांकसे लेकर आगेके असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें अवस्थित समस्त अनुभागबन्धस्थान जघन्य स्थानसे अनन्तगुणे पाये जाते हैं ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

प्पाबहुगे समत्ते अणुभागबंधज्झवसाणपरूवणा समत्ता ।

संपहि एदेण सुत्तेण सूचिदाणं अणुभागसंतकम्मट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो । पुव्वं परूविदबंधट्ठाणाणं एण्हिं[1] भण्णमाणसंतकम्मट्ठाणाणं च को विसेसो ? उच्चदे— बंधेण जाणि णिप्फज्जंति ठाणाणि ताणि बंधट्ठाणाणि । अणुभागसंते घादिज्जमाणे जाणि णिप्फज्जंति ट्ठाणाणि ताणि वि कणि वि[2] बंधट्ठाणाणि चेव भण्णंति, बज्झमाणाणुभागट्ठाणेण समाणत्तादो । जाणि पुण अणुभागट्ठाणाणि घादादो चेव उप्पज्जंति, ण बंधादो, ताणि अणुभागसंतकम्मट्ठाणाणि भण्णंति । तेसिं चेव हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि विदिया सण्णा । बंधट्ठाणपरूवणं मोत्तूण पढमं हदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणा किण्ण कदा ? ण, बंधादो उप्पज्जमाणाणं हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं अणवगयबंधट्ठाणस्स अंतेवासिस्स पण्णवणोवायाभावादो ।

संपहि सुहुमणिगोदअपज्जत्तजहण्णाणुभागट्ठाणप्पहुडि जाव पज्जवसाणअणुभागट्ठाणे त्ति ताव एदाणि असंखेज्जलोगमेत्तबंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि एगसेडिआगारेण रचेदूण पुणो एदेसिं बंधट्ठाणाणं घादकारणाणं असंखेज्जलोगमेत्तज्झवसाणट्ठाणाणं जहण्णपरिणामट्ठाणमादिं कादूण जावुक्कस्सज्झवसाणट्ठाणपज्जवसाणाणमेगसेडिआगारेण वामपा-

---

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होनेपर अनुभागबन्धाध्यवसानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अब इस सूत्रसे सूचित अनुभागसत्कर्मस्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं ।

शंका—पहिले कहे गये बन्धस्थानोंमें और इस समय कहे जानेवाले सत्त्वस्थानोंमें क्या भेद है ?

समाधान—इस शंकाका उत्तर कहते हैं । बन्धसे जो स्थान उत्पन्न होते हैं वे बन्धस्थान कहे जाते हैं । अनुभागसत्त्वके घाते जानेपर जो स्थान उत्पन्न होते हैं उनमेंसे कुछ तो बन्धस्थान ही कहे जाते हैं, क्योंकि, वे बांधे जानेवाले अनुभागस्थानके समान हैं । परन्तु जो अनुभागस्थान घातसे ही उत्पन्न होते हैं, बन्धसे उत्पन्न नहीं होते हैं; वे अनुभागसत्त्वस्थान कहे जाते हैं । उनकी ही हतसमुत्पत्तिकस्थान यह दूसरी संज्ञा है ।

शंका—बन्धस्थान प्ररूपणाको छोड़कर पहिले हतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, वैसा होनेपर जो शिष्य बन्धस्थानके ज्ञानसे रहित है उसको बन्धसे उत्पन्न होनेवाले हतसमुत्पत्तिकस्थानोंका ज्ञान करानेके लिये कोई उपाय नहीं रहता ।

अब सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके जघन्य अनुभागस्थानसे लेकर पर्यवसान अनुभागस्थान तक इन असंख्यात लोक मात्र बन्धसमुत्पत्तिकस्थानोंको एक पंक्तिके आकारसे रचकर फिर इन बन्धस्थानोंके घातके कारणभूत असंख्यात लोक मात्र अध्यवसानस्थानोंमें जघन्य परिणामस्थानसे लेकर उत्कृष्ट अध्यवसानस्थान पर्यन्त स्थानोंको एक पंक्तिके आकारसे वाम पार्श्वभागमें

---

१ अ-आप्रत्योः 'एण्हं' इति पाठः । २ आप्रतौ नोपलभ्यते पदमिदम् ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सेण रचणं कादूण तदो घादट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एगेण जीवेण सव्वुक्कस्सेण घादपरिणामट्ठाणेण परिणमिय चरिमाणुभागबंधट्ठाणे घादिदे चरिमअणंतगुणवड्ढिट्ठाणादो हेट्ठा अणंतगुणहीणं होदूण तदणंतरहेट्ठिमउव्वंकादो अणंतगुणं होदूण दोण्णं पि विचाले अण्णं हदसमुप्पत्तियट्ठाणं उप्पज्जदि। एदेण उक्कस्सविसोहिट्ठाणेण धादिज्जमाणचरिमाणुभागबंधट्ठाणं किं सव्वकालमट्ठंकुव्वंकाणं विचाले चेव पददि आहो कया वि बंधट्ठाणसमाणं होदूण पददि त्ति? अट्ठंकुव्वंकाणं विचाले चेव पददि, घादपरिणामेहिंतो उप्पज्जमाणस्स ट्ठाणस्स बंधट्ठाणसमाणत्तविरोहादो। जदि धादिज्जमाणमणुभागट्ठाणं णियमेण बंधट्ठाणसमाणो ण होदि तो एइंदिएसु सगुक्कस्सबंधादो उवरि लब्भमाणअसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणधादे संतकम्मट्ठाणाणि चेव उप्पज्जेज्ज। ण च एवं, अणुभागस्स अणंतगुणहाणिं मोत्तूण सेसहाणीणं तत्थाभावप्पसंगादो। जदि एवं तो एवहि एवं घेत्तव्वं। घादपरिणामा दुविहा—संतकम्मट्ठाणणिबंधणा बंधट्ठाणणिबंधणा चेदि। तत्थ जे संतकम्मट्ठाणणिबंधणा परिणामा तेहिंतो[1] अट्ठंकुव्वंकाणं विचाले संतकम्मट्ठाणाणि चेव उप्पज्जंति, तत्थ अणंतगुणहाणिं मोत्तूण अण्णहाणीणमभावादो। जे बंधट्ठाणणिबंधणा परिणामा तेहिंतो छव्विहाए हाणीए बंधट्ठाणाणि चेव उप्पज्जंति, ण संतकम्मट्ठा-

रचकर पश्चात् घातस्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवके द्वारा सर्वोत्कृष्ट घातपरिणामस्थानसे परिणत होकर अन्तिम अनुभागबन्धस्थानके घाते जानेपर अन्तिम अनन्तगुणवृद्धिस्थानसे नीचे अनन्तगुण हीन होकर तदनन्तर अधस्तन ऊर्वंकसे अनन्तगुण होकर दोनोंके बीचमें अन्य हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है।

शंका—इस उत्कृष्ट विशुद्धिस्थानके द्वारा घाता जानेवाला अन्तिम अनुभागबन्धस्थान क्या सर्वदा अष्टांक और ऊर्वंकके बीचमें ही पड़ता है या कदाचित् बन्धस्थानके समान होकर पड़ता है?

समाधान—वह अष्टांक और ऊर्वंकके बीचमें ही पड़ता है, क्योंकि, घातपरिणामोंसे उत्पन्न होनेवाले स्थानके बन्धस्थानके समान होनेका विरोध है।

शंका—यदि घाता जानेवाला अनुभागस्थान नियमसे बन्धस्थानके समान नहीं होता है तो एकेन्द्रियोंमें अपने उत्कृष्ट बन्धसे ऊपर पाये जानेवाले असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंका घात होनेपर सत्त्वस्थान ही उत्पन्न होने चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि वैसा होनेपर अनुभागकी अनन्तगुणहानिको छोड़कर शेष हानियोंके वहाँ अभावका प्रसंग आता है।

समाधान—यदि ऐसा है तो ऐसा ग्रहण करना चाहिए कि घातपरिणाम दो प्रकारके हैं—सत्कर्मस्थाननिबन्धन घातपरिणाम और बन्धस्थाननिबन्धन घातपरिणाम। उनमें जो सत्कर्मस्थान निबन्धन परिणाम हैं उनसे अष्टांक और ऊर्वंकके बीचमें सत्कर्मस्थान ही उत्पन्न होते हैं, क्योंकि, वहाँ अनन्तगुणहानिको छोड़कर अन्य हानियोंका अभाव है। जो बन्धस्थाननिबन्धन परिणाम हैं उनसे छह प्रकारकी हानि द्वारा बन्धस्थान ही उत्पन्न होते हैं, न कि सत्कर्मस्थान; क्योंकि, ऐसा स्वभाव है।

१ अप्रतौ 'णिबंधणा परिणामेहिंतो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाणि । कुदो ? साभावियादो । तेण एदेहिंतो घादट्ठाणाणि चेव उप्पज्जंति, ण बंधट्ठाणाणि त्ति सिद्धं ।

संतट्ठाणाणि अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले चेव होंति, चत्तारि-पंच-छ-सत्तंकाणं विच्चालेसु ण होंति त्ति कधं णव्वदे ? "उक्कस्सए अणुभागबंधट्ठाणे एगबंधट्ठाणं । तं चेव संतकम्मट्ठाणं । दुचरिमे अणुभागबंधट्ठाणे एवमेव । एवं पच्छाणुपुव्वीए णेयव्वं जाव पढमअणंतगुणहीणं बंधट्ठाणमपत्तं ति । पुव्वाणुपुव्वीए गणिज्जमाणे जं चरिममणंतगुणं बंधट्ठाणं तस्स हेट्ठा अणंतरमणंतगुणहीणं । एदम्हि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि । ताणि चेव संतमकम्मट्ठाणाणि[1]" एदम्हादो पाहुडसुत्तादो[2] । चरिमुव्वंकं घादयमाणो किमट्ठंकपढमफद्दयादो हेट्ठा अणंतगुणहीणं करेदि आहो ण करेदि त्ति ? अणंतगुणहीणं करेदि । कुदो णव्वदे ? आइरियोवदेसादो । कंदयघादेण अणुभागे घादिदे वि सरिसा पदेसरचणा किण्ण जायदे ? होदु णाम, इच्छिज्जमाणत्तादो । ण च विसरिसेसु भागहारेसु सरिसविहज्जमाणरासीदो लब्भमाणफलस्स

इसलिये इनसे घातस्थान ही उत्पन्न होते हैं, बन्धस्थान नहीं उत्पन्न होते; यह सिद्ध है ।

शंका—सत्त्वस्थान अष्टांक और ऊर्वंकके बीचमें ही होते हैं, चतुरंक, पंचांक, षडंक और सप्तांकके बीचमें नहीं होते हैं; यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह "उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थानमें एक बन्धस्थान है । वही सत्कर्मस्थान है । द्विचरम अनुभागबन्धस्थानमें इसी प्रकार क्रम है । इसी प्रकार पश्चादानुपूर्वीसे तब तक ले जाना चाहिये जब तक कि प्रथम अनन्तगुणहीन बन्धस्थान प्राप्त नहीं होता । पूर्वानुपूर्वीसे गणना करनेपर जो अन्तिम अनन्तगुण बन्धस्थान है उसके नीचे अनन्तर स्थान अनन्तगुण हीन है । इस बीचमें असंख्यात लोक प्रमाण घातस्थान हैं । वे ही सत्कर्मस्थान हैं ।" इस प्राभृतसूत्रसे जाना जाता है ।

शंका—अन्तिम ऊर्वंकको घातनेवाला जीव क्या अष्टांकके प्रथम स्पर्द्धकसे नीचे अनन्तगुणहीन करता है या नहीं करता है ?

समाधान—वह अनन्तगुणहीन करता है ।

शंका—वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह आचार्यके उपदेशसे जाना जाता है ।

शंका—काण्डकघातसे अनुभागको घातनेपर भी समान प्रदेशरचना क्यों नहीं होती है ?

समाधान—यदि वह समान होती है तो हो, क्योंकि, हमें वह अभीष्ट है । किन्तु विसदृस भागहारोंमें सदृश विभज्यमान राशिसे प्राप्त होनेवाले फलकी सदृशता घटित नहीं हैं, क्योंकि,

१ आप्रतौ 'संतकम्माणि' इति पाठः । २ उक्कस्सए अणुभागबंधट्ठाणे एगं संतकम्मं । तमेगं संतकम्मट्ठाणं । दुचरिमे एवमेव । एवं ताव जाव पच्छाणुपुव्वीए पढममणंतगुणहीणबंधट्ठाणमपत्तं ति ।...तस्स हेट्ठा अणंतरमणंतगुणहीणम्मि एदम्मि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि ।...ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि इति पाठः । जयध अ० पत्र ३७० ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सरिसत्तं घडदे, विरोहादो। किं च बज्झमाणसमए चेव पदेसरचणाए विसेसहीणकमेण अवट्ठाणणियमो, ण सव्वकालं, ओकड्डुक्कड्डणाहि विसोहि[1]—संकिलेसवसेण वड्डमाण-हीयमाणपदेसाणं णिसित्तसरूवेण[2] अवट्ठाणाभावादो।

संपहि एदं[3] हदसमुप्पत्तियट्ठाणं एत्थ सव्वजहण्णं, उक्कस्सविसोहीए[4] सव्वुक्कस्स-विसेसपच्चयसहिदाए घादिदत्तादो। पुणो अण्णेग[5] जीवेण दुचरिमविसोहिट्ठाणेण उवरिम-उव्वंके घादिदे अट्ठंकुव्वंकाणं दोण्णं पि विच्चाले पुव्वुप्पण्णट्ठाणस्सुवरि अणंतभागब्भहियं होदूण विदियं हदसमुप्पत्तियट्ठाणं उप्पज्जदि। एत्थ जहण्णट्ठाणे केण भागहारेण भागे हिदे वड्डिपक्खेवो आगच्छदि? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणेण सिद्धाणमणंतभागेण भाग-हारेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे पक्खेवो आगच्छदि। जहण्णट्ठाणं पडिरासिय तम्हि पक्खित्ते विदियमणंतभागवड्डिट्ठाणं उप्पज्जदि। संपहि एत्थ सव्वजीवरासिभागहारं मोत्तूण सिद्धाणमणंतिमभागे भागहारे कीरमाणे "अणंतभागपरिवड्डी काए परिवड्डीए? सव्वजीवेहि।" इच्चेदेण सुत्तेण[6] कधं ण विरुज्झदे? ण एस दोसो, बंधट्ठाणाणि अस्सि-दूण तं सुत्तं परूविदं, ण संतट्ठाणाणि, बंध-संतट्ठाणाणमेगत्ताभावादो। बंधवड्डिकमेण एत्थ

उसमें विरोध है। दूसरे, बन्ध होनेके समयमें ही प्रदेशरचनाके विशेष हीनक्रमसे रहनेका नियम है, न कि सर्वदा; क्योंकि, विशुद्धि व संक्लेशके वश होकर अपकर्षण व उत्कर्षण द्वारा बढ़ने व घटनेवाले प्रदेशोंके निषिक्त स्वरूपसे रहनेका अभाव है।

अब यह हतसमुत्पत्तिकस्थान यहाँ सबसे जघन्य है, क्योंकि, सर्वोत्कृष्ट विशेष प्रत्ययोंसे सहित उत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा वह घातको प्राप्त हुआ है। फिर अन्य एक जीवके द्वारा द्विचरम विशुद्धिस्थानसे उपरिम ऊर्वकके घातनेपर अष्टांक और ऊर्वक दोनोंके ही बीचमें पूर्वोत्पन्न स्थानके आगे अनन्तवें भागसे अधिक होकर दूसरा हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है।

शंका—यहाँ जघन्य स्थानमें किस भागहारका भाग देनेपर वृद्धिप्रक्षेप आता है?

समाधान—अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र भागहारका जघन्य स्थानमें भाग देनेपर प्रक्षेपका प्रमाण आता है। जघन्यस्थानको प्रतिराशि करके उसमें उसे मिलाने-पर द्वितीय अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है।

शंका—अब यहाँ सब जीवराशि भागहारको छोड़कर सिद्धोंके अनन्तवें भागको भागहार करनेपर "अनन्तभागवृद्धि किस वृद्धिके द्वारा होती है? वह सब जीवोंके द्वारा होती है।" इस सूत्रके साथ क्यों न विरोध आवेगा?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उस सूत्रकी प्ररूपणा बन्धस्थानोंका आश्रय करके की गई है, सत्त्वस्थानोंका आश्रय करके नहीं की गई है। कारण कि बन्धस्थान और सत्त्व-स्थानका एक होना सम्भव नहीं है।

१ प्रतिषु 'विहि' इति पाठः। २ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ-ताप्रतिषु 'परूवेण' इति पाठः। ३ प्रतिषु 'एवं' इति पाठः। ४ ताप्रतौ 'एत्थ सव्वजहण्णुक्कस्स-' इति पाठः। ५ अ-आप्रत्योः 'अणेण' इति पाठः।
६ भावविधान ११३-१४ इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इच्छिज्जमाणे को दोसो ? ण, सव्वजीवरासिणा संतट्ठाणे गुणिदे अट्ठंकादो अणंतगुणं होदूण संतट्ठाणस्सुप्पत्तिप्पसंगादो। ण चाट्ठंकादो उवरि संतट्ठाणाणं संभवो, सव्वेसिं संतट्ठाणाणमट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले चेव उप्पत्ती होदि त्ति गुरूवदेसादो। संतट्ठाणेसु विरोह-दंसणादो सव्वजीवरासिगुणगारो मा होदु णाम, सेसगुणगार-भागहारा बंधट्ठाणसमाणा किण्ण होंति, विरोहाभावादो ? ते चेव[1] होंतु णाम जदि विरोधो णत्थि। एत्थ पुण ते ण होंति, विरोहुवलंभादो। एत्थ पुण केण विरोहो ? गुरूवदेसेण। केरिसो एत्थ गुरूवदेसो ? संतकम्मट्ठाणेसु अणंतभागवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीणं भागहार-गुणगारा अभव-सिद्धिएहि अणंतगुणा सिद्धाणमणंतभागमेत्ता त्ति। अण्णासु वड्ढि हाणीसु बंधट्ठाणसमाणत्तं होदु णाम, पडिसेहाभावादो।

पुणो अण्णेण जीवेण तिचरिमअज्झवसाणपरिणदेण तम्हि चेव चरिमउव्वंके घादिदे तदियअणंतभागवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि। एगादो चरिमुव्वंकट्ठाणादो कधमणेगाणं

शंका—बन्धवृद्धिके क्रमसे यहाँ स्वीकार करनेपर क्या दोष है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, वैसा स्वीकार करनेसे सर्व जीवराशिके द्वारा सत्त्वस्थानको गुणित करनेपर अष्टांकसे अनन्तगुणा होकर सत्त्वस्थानकी उत्पत्तिका प्रसंग आता है। परन्तु अष्टांकसे ऊपर सत्त्वस्थान सम्भव नहीं हैं, क्योंकि, समस्त सत्त्वस्थानोंकी उत्पत्ति अष्टांक और ऊर्वकके बीचमें ही होती है, ऐसा गुरुका उपदेश है।

शंका—सत्त्वस्थानोंमें विरोधके देखे जानेसे सब जीवराशि गुणकार न होवे, किन्तु शेष गुणकार और भागहार बन्धस्थान समान क्यों नहीं होते; क्योंकि, उसमें कोई विरोध नहीं है ?

समाधान—वे वहाँ भले ही वैसे हों जहाँ कि विरोधकी सम्भावना न हो। परन्तु यहाँ वे वैसे नहीं होते हैं, क्योंकि, विरोध पाया जाता है।

शंका—परन्तु यहाँपर किसके साथ विरोध आता है ?

समाधान—गुरुके उपदेशके साथ विरोध आता है ?

शंका—यहाँ गुरुका उपदेश कैसा है ?

समाधान—सत्कर्मस्थानोंमें अनन्तभागवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धिका भागहार और गुणकार दोनों अभव्य जीवोंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग प्रमाण होते हैं, ऐसा गुरुका उपदेश है। अन्य वृद्धियों और हानियोंमें वे भले ही बन्धस्थानके समान हों, क्योंकि, इसका वहाँ प्रतिषेध नहीं है।

पुनः त्रिचरम अध्यवसानस्थानसे परिणत हुए अन्य जीवके द्वारा उसी अन्तिम ऊर्वंकका घात किये जानेपर तृतीय अनन्तभागवृद्धिस्थान उत्पन्न होता है।

शंका—एक अन्तिम ऊर्वंकस्थानसे अनेक सत्त्वस्थानोंकी उत्पत्ति कैसे सम्भव है ?

---

१ अ-ताप्रत्योः 'च्चेव' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संतट्ठाणाणं उप्पत्ती ? ण, घादकारणपरिणामभेदेण घादिदसेसाणुभागस्स वि भेदगमणं पडि विरोहाभावादो। घादपरिणामेसु जहा अणंतगुणवड्ढि-अणंतभागवड्ढीणं सव्वजीवरासी चेव गुणगारो भागहारो च जादो तहा संतकम्मट्ठाणेसु धादिदपरिणामाणुसारेण छवड्ढिमुवगएसु सव्वजीवरासी चेव गुणगारो भागहारो च किण्ण पसज्जदे ? ण, संतकम्मट्ठाणुप्पत्तिणिमित्तघादपरिणामाणमणंतगुणभागवड्ढीसु सिद्धाणमणंतभागमेत्तभागहार-गुणगारे[1] मोत्तूण सव्वजीवरासिभागहार-गुणगाराणं तत्थाभावादो। बंधट्ठाणागारेण जे घादणिमित्ता परिणामा तेसिमणंतभागवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीओ सव्वजीवरासिभागहार-गुणगारेहि वड्ढंति। तेहि घादिदसेसाणुभागट्ठाणं पि कारणाणुरूवेण चेट्ठदि त्ति घेत्तव्वं।

पुणो अण्णेण चदुचरिमअज्झवसाणट्ठाणपरिणदेण चरिमउव्वंके घादिदे चउत्थमणंतभागवड्ढिट्ठाणं होदि। एवं हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि असंखेज्जलोगछट्ठाणपरिणाममेत्ताणि कमेण छव्विहाए वड्ढीए उप्पादेदव्वाणि जाव सव्वजहण्णविसोहिट्ठाणेण पज्जवसाणउव्वंकं घादिय उप्पाइयउक्कस्साणुभागट्ठाणे त्ति। संपहि बंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणं चरिमउव्वंकमस्सिदूण चरिमअट्ठंक-उव्वंकाणं विचाले हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि एत्तियाणि चेव उप्प-

समाधान—नहीं, क्योंकि घातके कारणभूत परिणामोंके भिन्न होनेसे घातनेसे शेष रहे अनुभागके भी भिन्न होनेमें कोई विरोध नहीं है।

शंका—जिस प्रकार घातपरिणामोंमें अनन्तगुणवृद्धि और अनन्तभागवृद्धिका गुणकार व भागहार सब जीवराशि ही हुई है, उसी प्रकार घातित परिणामोंके अनुसार छह प्रकारकी वृद्धिको प्राप्त हुए सत्कर्मस्थानोंमें सब जीवराशि ही गुणकार और भागहार होनेका प्रसंग क्यों न होगा ?

समाधान—नहीं क्योंकि सत्कर्मस्थानोंकी उत्पत्तिके निमित्तभूत घातपरिणामोंकी अनन्तगुणवृद्धि व अनन्तभागवृद्धिमें सिद्धोंके अनन्तवें भाग मात्र भागहार और गुणकारको छोड़कर वहाँ सब जीवराशि भागहार व गुणकार होना सम्भव नहीं है। बन्धस्थानोंके आकारसे जो घातके निमित्तभूत परिणाम हैं उनकी अनन्तभागवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि सब जीवराशि रूप भागहार व गुणकारसे वृद्धिको प्राप्त होती हैं। उनके द्वारा घातनेसे शेष रहा अनुभागस्थान भी कारणके अनुरूप ही रहता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

पुनः चतुश्चरम अध्यवसानस्थान स्वरूपसे परिणत अन्य जीवके द्वारा अन्तिम ऊर्वंकका घात किये जानेपर चतुर्थ अनन्तभागवृद्धिस्थान होता है। इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंके बराबर हतसमुत्पत्तिकस्थानोंको क्रमशः छह प्रकारकी वृद्धिके द्वारा तब तक उत्पन्न कराना चाहिये जब तक कि सर्वजघन्य विशुद्धिस्थानके द्वारा पर्यवसान ऊर्वंकको घातकर उत्पन्न कराया गया उत्कृष्ट अनुभागस्थान प्राप्त नहीं होता।

अब बन्धसमुत्पत्तिकस्थानोंके अन्तिम ऊर्वंकका आश्रय करके अन्तिम अष्टांक और ऊर्वंकके बीचमें हतसमुत्पत्तिकस्थान इतने मात्र ही होते हैं, अधिक नहीं होते, क्योंकि, कारणके

१ प्रतिषु 'गुणगारेण' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्जंति, णाहियाणि, कारणेण विणा कज्जुप्पत्तिविरोहादो। संतकम्मट्ठाणाणं कारणं छव्विहवड्ढीए वड्ढिदघादपरिणामा। तेहिंतो परिणाममेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि उप्पज्जंति। अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढीहि एगछट्ठाणं होदि। एरिसाणि असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि। अण्णेगं रूवूणछट्ठाणं च जदि वि अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले उप्पण्णं तो वि अट्ठंकजहण्णफद्दयं ण पावेंति, संतकम्मट्ठाणे सव्वजीवरासिगुणगाराभावादो सिद्धाणमणंतिमभागमेत्तगुणगारेसु असंखेज्जलोगमेत्तेसु संवग्गिदेसु वि सव्वजीवरासिपमाणाणुवलंभादो। एत्थ अप्पप्पणो वड्ढिपक्खेवाणं पिसुलापिसुलादीणं[1] पिसुलाणं च पमाणाणयणे भागहारुप्पायणविहाणे वड्ढिपरिक्खाए च अविभागपडिच्छेदपरूवणाए ट्ठाणपरूवणाए कंदयपरूवणाए ओज-जुम्मपरूवणाए छट्ठाणपरूवणाए हेट्ठाट्ठाणपरूवणाए पज्जवसाणपरूवणाए अप्पाबहुवपरूवणाए च अणुभागबंधट्ठाणपरूवणाभंगो। णवरि सव्वत्थ सव्वजीवरासी भागहारो गुणगारो वा ण होदि त्ति अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो चेव गुणगारो भागहारो च होदि। के वि आइरिया संतट्ठाणाणं सव्वजीवरासी गुणगारो ण होदि, अट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चालेसु चेव संतकम्मट्ठाणाणि होंति त्ति वक्खाणवयणेण सह विरोहादो। किं तु भागहारो सव्वजीवरासी चेव होदि, विरोहाभावादो त्ति भणंति। परिणामेसु वि एसो

बिना कार्यकी उत्पत्तिका विरोध है। सत्त्वस्थानोंका कारण छह प्रकारकी वृद्धिके द्वारा वृद्धिगत घातपरिणाम हैं। उनसे परिणामोंके बराबर ही सत्त्वस्थान उत्पन्न होते हैं। अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि इनके द्वारा एक षट्स्थान होता है। ऐसे असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान होते हैं। एक अंकसे हीन अन्य एक षट्स्थान यद्यपि अष्टांक और अर्वकके मध्यमें उत्पन्न हुआ है तो भी अष्टांक जघन्य स्पर्द्धकको नहीं पाते हैं, क्योंकि सत्कर्मस्थानमें सब जीवराशि गुणकार नहीं है। इसका भी कारण यह है कि असंख्यात लोकप्रमाण सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र गुणकारोंको संवर्गित करनेपर भी सब जीवराशिका प्रमाण नहीं पाया जाता है। यहाँपर अपने अपने वृद्धिप्रक्षेपों पिशुलापिशुलादिकों और पिशुलोंके प्रमाणके लानेमें, भागहारके उत्पादनविधानमें, और वृद्धिपरीक्षामें अविभागप्रतिच्छेद प्ररूपणा, स्थानप्ररूपणा, काण्डकप्ररूपणा, ओज-युग्मप्ररूपणा, षट्स्थानप्ररूपणा, अधस्तनस्थान प्ररूपणा, पर्यवसानप्ररूपणा और अल्पबहुत्वप्ररूपणा ये सब अनुभागबन्धस्थानप्ररूपणाके समान हैं। विशेष इतना है कि सर्वत्र सब जीवराशि भागहार अथवा गुणकार नहीं होता है। किन्तु अभव्योंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागमात्र ही गुणकार अथवा भागहार होता है।

कितने ही आचार्य कहते हैं कि सत्त्वस्थानोंका गुणकार सब जीवराशि नहीं होता है, क्योंकि ; वैसा होनेपर अष्टांक और उर्वकके अन्तरालोंमें ही सत्त्वस्थान होते हैं इस व्याख्यानके साथ विरोध आता है। किन्तु भागहार सब जीवराशि ही होता है, क्योंकि, उसमें कोई विरोध

१ अ-ताप्रत्योः 'पिसुलापिसुलादीणं च' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चेव कमो होदि, कारणाणुरूवकज्जुवलंभादो त्ति । तं जाणिय वत्तव्वं ।

पुणो चरिमपरिणामेण पज्जवसाणदुचरिमउव्वंके घादिदे हदसमुप्पत्तियसव्वजहण्णट्ठाणस्स हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण अण्णमपुणरुत्तट्ठाणमुप्पज्जदि । एदं ट्ठाणं सव्वजीवरासिणा रूवाहिएण उवरिमट्ठाणे खंडिदे तत्थ एगखंडेण हीणं होदि, समाणपरिणामेण घादिदत्तादो । पुणो दुचरिमपरिणामेण पज्जवसाणदुचरिमउव्वंके घादिदे पढमपरिवाडीए उप्पण्णहदसमुप्पत्तियसव्वजहण्णट्ठाणेण असरिसं होदूण विदियपरिवाडीए विदियं घादट्ठाणं उप्पज्जदि । एदेसिं दोण्णं ट्ठाणाणं असरिसत्तणेण च णव्वदे[1] जहा संतकम्मट्ठाणेसु परिणामेसु च सव्वजीवरासी चेव भागहारो ण होदि त्ति । पुणो तिचरमादिपरिणामट्ठाणेहि दुचरिमउव्वंके घादिज्जमाणे परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि[2] होंति । एवं विदियपरिवाडी समत्ता ।

संपहि तदियपरिवाडी उच्चदे । तं जहा—चरिमपरिणामेणेव पज्जवसाणतिचरिमउव्वंके घादिदे विदियपरिवाडीए उप्पण्णहदसमुप्पत्तियसव्वजहण्णट्ठाणस्स हेट्ठा वामपासे अणंतभागहीणं होदूण अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं उप्पज्जदि । पुणो तेणेव दुचरिमपरिणामेण तिचरिमे उव्वंके[3] घादिदे अण्णंट्ठाणमुप्पज्जदि । एवं परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्म-

नहीं है । परिणामोंके विषयमें भी यही क्रम है, क्योंकि, कारणके अनुसार ही कार्य पाया जाता है । उसका जान कर कथन करना चाहिए ।

पुनः अन्तिम परिणामके द्वारा पर्यवसान द्विचरम ऊर्वंकके घाते जानेपर सर्वजघन्य हतसमुत्पत्तिकस्थानके नीचे अनन्तवें भागसे हीन होकर अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है । यह स्थान एक अधिक सब जीवराशिके द्वारा उपरिम स्थानको खण्डित करनेपर उसमें एक खण्डसे हीन होता है, क्योंकि वह समान परिणामके द्वारा घातको प्राप्त हुआ है । फिर द्विचरम परिणामके द्वारा पर्यवसान द्विचरम ऊर्वंकके घाते जानेपर प्रथम परिपाटीसे उत्पन्न हतसमुत्पत्तिक सर्वजघन्य स्थानसे असमान होकर द्वितीय परिपाटीसे द्वितीय घातस्थान उत्पन्न होता है । इन दोनों स्थानोंके विसदृश होनेसे जाना जाता है कि सत्कर्मस्थानोंमें और परिणामोंमें सब जीवराशि ही भागहार नहीं होता है । पश्चात् त्रिचरमादिक परिणामस्थानोंके द्वारा द्विचरम ऊर्वंकके घाते जानेपर परिणामस्थानोंके बराबर ही सत्त्वस्थान प्राप्त होते हैं । इस प्रकार द्वितीय परिपाटी समाप्त हुई ।

अब तृतीय परीपाटीकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है— अन्तिम परिणामके द्वारा ही पर्यवसान चरम ऊर्वंकके घाते जानेपर द्वितीय परिपाटीसे उत्पन्न हतसमुत्पत्तिक सर्वजघन्य स्थानके नीचे वाम पार्श्वमें अनन्तवें भागसे हीन होकर अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है । फिर उसी द्विचरम परिणामके द्वारा त्रिचरम ऊर्वंकके घाते जानेपर अन्य स्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकार तृतीय परिपाटीसे परिणामस्थानोंके बराबर ही सत्कर्मस्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये ।

१ ताप्रतौ 'णज्जदे' इति पाठः । २–अ-आप्रत्योः 'अद्धाणि'; ताप्रतौ 'अ (ल) द्धाणि' इति पाठः । ३–अ-आप्रत्योः 'उव्वंको' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठाणाणि तदियपरिवाडीए उप्पादेदव्वाणि । एवं तदियपरिवाडी गदा ।

संपहि चउत्थपरिवाडी उच्चदे । तं जहा—तेणेव चरिमपरिणामेण पज्जवसाण-चदुचरिमउव्वंके घादिदे तदियपरिवाडीए उप्पण्णहदसमुप्पत्तियसव्वजहण्णट्ठाणस्स हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण अण्णमपुणरुत्तट्ठाणमुप्पज्जदि । एवमेत्थ वि परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि । एवं चउत्थपरिवाडी गदा ।।

संपहि पंचमपरिवाडी उच्चदे । तं जहा—चरिमपरिणामेण पंचचरिमउव्वंके घादिदे चउत्थपरिवाडीए उप्पण्णजहण्णट्ठाणस्स हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण अण्णं ट्ठाणं उप्पज्जदि । एवं दुचरिमादिपरिणामेहि तं चेव ट्ठाणं घादिय पंचमपडिवाडीए ट्ठाणाणमुप्पत्ती वत्तव्वा । एवं सेसबंधट्ठाणाणि चरिमादिसव्वपरिणामेहि घादाविय ओदारेदव्वं जाव चरिमअट्ठंके त्ति । एवमोदारिदे ट्ठाणाणं विक्खंभो छट्ठाणमेत्तो आयामो पुण विसोहिट्ठाणमेत्तो होदूण चिट्ठदि । एवं उप्पण्णासेसट्ठाणाणि अपुणरुत्ताणि चेव, सरिसत्तस्स कारणाणुवलंभादो । पढमपंतीए पढमट्ठाणादो विदियपंतीए विदियट्ठाणं सरिसं ति णासंकणिज्जं ? पढमपंतिपढमट्ठाणं रूवाहियसव्वजीवरासिणा खंडिय तत्थेगखंडेणूणविदियपंति-पढमट्ठाणमभवसिद्धिएहि अणंतगुण-सिद्धाणमणंतिमभागेण खंडिय तत्थेगखंडेणाहियस्स

इस प्रकार तृतीय परिपाटी समाप्त हुई ।

अब चतुर्थ परिपाटीकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—उसी अन्तिम परिणामके द्वारा पर्यवसान चतुश्चरम ऊर्वकका घात होनेपर तृतीय परिपाटीसे उत्पन्न हतसमुत्पत्तिक सर्व-जघन्य स्थानके नीचे अनन्तवें भागसे हीन होकर अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकारसे यहाँपर भी परिणामस्थानोंके बराबर ही सत्कर्मस्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये । इस प्रकार चतुर्थ परिपाटी समाप्त हुई ।

अब पाँचवीं परिपाटीकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—अन्तिम परिणामके द्वारा पंचचरम ऊर्वकके घातनेपर चतुर्थ परिपाटीसे उत्पन्न जघन्य स्थानके नीचे अनन्तवें भागसे हीन होकर अन्य स्थान उत्पन्न होता है । इसी प्रकार द्विचरमादिक परिणामोंके द्वारा उसी स्थानको घातकर पाँचवीं परिपाटीसे स्थानोंकी उत्पत्तिका कथन करना चाहिए । इस प्रकार चरम आदि सब परिणामोंके द्वारा शेष बन्धस्थानोंका घात कराकर अन्तिम अष्टांक प्राप्त होने तक उतारना चाहिये । इस प्रकारसे उतारनेपर स्थानोंका विष्कम्भ षट्स्थान प्रमाण और आयाम विशुद्धिस्थानोंके बराबर होकर स्थित होता है । इस प्रकारसे उत्पन्न हुए समस्त स्थान अपुनरुक्त ही होते हैं, क्योंकि, उनके समान होनेका कोई कारण नहीं पाया जाता है । प्रथम पंक्तिके प्रथम स्थानसे द्वितीय पंक्तिका द्वितीय स्थान सदृश है, ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, प्रथम पंक्तिके प्रथम स्थानको एक अधिक सब जीवराशिसे खण्डित कर उसमें एक खण्डसे हीन द्वितीय पंक्तिके प्रथम स्थानको अभव्योंसे अनन्तगुणे एवं सिद्धोंके अनन्तवें भागसे खण्डित कर उसमें एक खण्डसे अधिक द्वितीय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विदियपंतिविदियट्ठाणस्स सरिसत्तविरोहादो । एवं सव्वपंतिविदियट्ठाणाणमसरिसत्तं परूवेदव्वं, समाणजाइत्तादो । एदेहिंतो सव्वपंतिसव्वट्ठाणाणमसरिसत्तं तकणिज्जं[1] ।

संपहि दुचरिमअट्ठंकस्स हेट्ठा तदणंतरहेट्ठिमउव्वंकादो उवरि दोण्णं पि बंधट्ठाणाणं विच्चाले उप्पज्जमाणसंतट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो । तं जहा--एगेण जीवेण एगछट्ठाणेणूणउक्कस्साणुभागसंतकम्मिएण उक्कस्सपरिणामेण चरिमुव्वंके घादिदे दुचरिमअट्ठंकस्स हेट्ठा अणंतगुणहीणं तस्सेव हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणादो उवरि अणंतगुणं होदूण अण्णं हदसमुप्पत्तियट्ठाणमुप्पज्जदि । पुणो दुचरिमपरिणामट्ठाणेण तम्हि चेव चरिमउव्वंके घादिदे विदियमणंतभागवड्ढिघादट्ठाणं उप्पज्जदि । पुणो एत्थ वि पुव्वविहाणेण तिचरिमादिविसोहिट्ठाणेहि तं चेव चरिमउव्वंकं घादिय परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि । एवं चरिमबंधट्ठाणादो असंखेज्जलोगछट्ठाणमेत्ताणि रूवूणछट्ठाणसहिदट्ठाणाणि उप्पण्णाणि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं हेट्ठा परिणामट्ठाणमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पज्जंति । तं जहा—चरिमपरिणामेण दुचरिमबंधट्ठाणे घादिदे पुव्विल्लजहण्णट्ठाणादो हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण अण्णट्ठाणं उप्पज्जदि । पुणो दुचरिमपरिणामेण तम्हि चेव ट्ठाणे घादिदे अणंतभागब्भहियं होदूण अण्णं ट्ठाणमुपज्जदि । एवमणेण विहाणेण तिचरिमादिसव्वपरिणामट्ठाणेहि पुव्वं णिरुद्ध-

---

पंक्ति सम्बन्धी द्वितीय स्थानके उससे सदृश होनेका विरोध है । इस प्रकार सब पंक्तियों सम्बन्धी द्वितीय स्थानोंकी असमानताका कथन करना चाहिये, क्योंकि वे सब एक जातिके हैं । इनसे सब पंक्तियों सम्बन्धी स्थानोंकी असमानताकी तर्कणा (अनुमान) करना चाहिये ।

अब द्विचरम अष्टांकके नीचे और तदनन्तर अधस्तन अष्टांकके ऊपर दोनों ही बन्धस्थानोंके मध्यमें उत्पन्न होनेवाले सत्त्वस्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है — एक षट्स्थानसे रहित उत्कृष्ट अनुभाग सत्कर्मवाले एक जीवके द्वारा उत्कृष्ट परिणामके बलसे अन्तिम ऊर्वंकके घाते जानेपर द्विचरम अष्टांकके नीचे अनन्तगुणा हीन और उसीके अधस्तन ऊर्वंक स्थानसे ऊपर अनन्तगुणा होकर अन्य हतसमुत्पत्तिक स्थान उत्पन्न होता है । फिर द्विचरम परिणामस्थानके द्वारा उसी अन्तिम ऊर्वंकके घाते जानेपर द्वितीय अनन्तभागवृद्धिघातस्थान उत्पन्न होता है । फिर यहाँपर भी पूर्व विधानसे त्रिचरम आदि विशुद्धिस्थानोंके द्वारा उसी अन्तिम ऊर्वंकको घातकर परिणामस्थानोंके बराबर ही हतसमुत्पत्तिक स्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये । इस प्रकार अन्तिम बन्धस्थानसे असंख्यातलोक षट्स्थानप्रमाण एक कम षट्स्थान सहित स्थान उत्पन्न होते हैं ।

पुनः इन स्थानोंके नीचे परिणामस्थानोंके बराबर हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं । यथा — अन्तिम परिणामके द्वारा द्विचरम बन्धस्थानके घाते जानेपर पूर्व जघन्य स्थानसे नीचे अनन्तभाग हीन होकर अन्य स्थान उत्पन्न होता है । फिर द्विचरम परिणामके द्वारा उसी स्थानके घाते जानेपर अनन्तवें भागसे अधिक होकर अन्य स्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकार इस विधिसे त्रिचरम

१–अ-ताप्रत्योः 'तकणेज' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

बंधट्ठाणे घादिज्जमाणे पुव्वुप्पण्णट्ठाणाणं हेट्ठा परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव घादिदट्ठाणाणि उप्पज्जंति। एवं तिचरिमादिअणुभागबंधट्ठाणाणि घादिय अट्ठंक-उव्वंकाणं विचाले विचाले छट्ठाणमेत्ताओ संतट्ठाणपंतीयो परिणामट्ठाणमेत्तायामाओ उप्पाएदव्वाओ। एत्थ पुणरुत्तट्ठाणपरूवणा पुव्वं व कायव्वा। एवं दुचरिमअट्ठंक-उव्वंकाणं विचाले संतकम्मट्ठाण-परूवणा कदा।

संपहि दोछट्ठाणेहि परिहीणअणुभागबंधट्ठाणे पुव्वं व घादिज्जमाणे तिचरिमअट्ठंक उव्वंकाणं विचाले असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि रूवूणछट्ठाणसहियाणि उप्पज्जंति। अहि-याणि[1] किण्ण उप्पज्जंति? ण संतकम्मट्ठाणकारणविसोहिट्ठाणाणं अब्भहियाण-मभावादो। पुणो दुचरिमादिट्ठाणेसु घादिज्जमाणेसु एक्केक्कम्हि अणुभागबंधट्ठाणे विसोहि-ट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि लब्भंति। एवं तिचरिमअट्ठंक-उव्वंकाणं विचाले उप्पज्जमाणअसंखेज्जलोगमेत्तसंतकम्मट्ठाणाणं परूवणा कदा होदि।

एवं चदुचरिम-पंचचरिमादिअसंखेज्जलोगमेत्तबंधसमुप्पत्तियअट्ठंक-उव्वंकाणं विचा-लेसु पुव्वापरायामेण दक्खिणुत्तरविक्खंभेण असंखेज्जलोगमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणपदराणि उप्पज्जंति। किं सव्वेसिं अट्ठंक-उव्वंकाणं विचालेसु परिणामट्ठाणमेत्तायामेण छट्ठाणमेत्त-

---

आदि सब परिणामोंके द्वारा पूर्व विवक्षित बन्धस्थानके घाते जानेपर पहिले उत्पन्न हुए स्थानोंके नीचे परिणामस्थानोंके बराबर ही घातित स्थान उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार त्रिचरम आदि अनु-भाग बन्धस्थानोंको घातकर अष्टांक और ऊर्वकके बीच-बीचमें परिणामस्थान प्रमाण आयामवाली षट्स्थानके बराबर सत्त्वस्थानपंक्तियोंको उत्पन्न कराना चाहिये। यहाँ पुनरुक्त स्थानोंकी प्ररूपणा पहिलेके ही समान करनी चाहिये। इस प्रकार द्विचरम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें सत्कर्मस्थानों की प्ररूपणा की गई है।

अब दो षट्स्थानोंसे हीन अनुभागबन्धस्थानको पहिलेके समान घातनेपर त्रिचरम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें एक कम षट्स्थान सहित असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान उत्पन्न होते हैं।

शंका—अधिक क्यों नहीं उत्पन्न होते हैं?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सत्त्वस्थानोंके कारणभूत विशुद्धिस्थान अधिक नहीं हैं।

पुनः द्विचरम आदि स्थानोंके घातनेपर एक एक अनुभागबन्धस्थानमें विशुद्धिस्थानोंके बराबर ही सत्कर्मस्थान पाये जाते हैं। इस प्रकार त्रिचरम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें उत्पन्न होने-वाले असंख्यात लोक प्रमाण सत्कर्मस्थानोंकी प्ररूपणा समाप्त होती है।

इस प्रकार चतुश्चरम और पंचचरम आदि असंख्यातलोक प्रमाण बन्धसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें पूर्व पश्चिम आयाम और दक्षिण उत्तर विष्कम्भसे असंख्यात लोक मात्र सत्कर्मस्थानप्रतर उत्पन्न होते हैं।

शंका—क्या सब अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें परिणामस्थानोंके बराबर आयाम और

१—अ-आप्रत्योः 'अहियाण किण्ण उप्पज्जंते' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विक्खंभेण संतकम्मट्ठाणपदराणि उप्पज्जंति आहो णेदि पुच्छिदे सुहुमणिगोदअपज्जत्त-जहण्णट्ठाणस्स उवरि संखेज्जाणं खंडसमुप्पत्तियअट्ठंक-उव्वंकाणं अंतराणि मोत्तूण उवरिम-असंखेज्जलोगमेत्तअट्ठंकुव्वंकंतरेसु सव्वेसु उप्पज्जंति। हेट्ठिमसंखेज्जअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चालेसु हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि ण उप्पज्जंति त्ति कुदो[1] णव्वदे ? आइरियोवदेसादो अणुभागवड्ढिहाणि-अप्पाबहुगादो वा। तं जहा—सव्वत्थोवा हाणी, वड्ढी विसेसाहिया त्ति। एगसमएण जत्तियमुक्कस्सेण वड्ढिदूण बंधदि पुणो तं सव्वुक्कस्सविसोहीए एगवारेण एगाणुभागकंदय-घादेण घादेदुं ण सक्कदि त्ति जाणावणट्ठं पदिदप्पाबहुगं कधं णाणासमयपबद्धवड्ढीए णाणाखंडयघादुप्पण्णहाणीए च ? उच्चदे ण एस दोसो, एदस्स अप्पाबहुअसुत्तस्स उभयत्थ पउत्तीए विरोहाभावादो। कधमेगमणेगेसु वट्टदे ? ण,[2] एगस्स मोग्गरस्स अणेगखप्परुप्पत्तीए वावारुवलंभादो। कसायपाहुडस्स अणुभागसंकमसुत्तवक्खाणादो वा णव्वदे जहा सव्वत्थ ण उप्पज्जंति त्ति। तं जहा—अणुभागसंकमे चउवीसअणियोग-द्दारेसु समत्तेसु भुजगारपदणिक्खेववड्ढीओ भणिय पच्छा अणुभागसंकमट्ठाणपरूवणं

षट्स्थानमात्र विष्कम्भसे सत्कर्मस्थानप्रतर उत्पन्न होते हैं अथवा नहीं होते हैं ?

समाधान—ऐसा पूछनेपर उत्तरमें कहते हैं कि सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके जघन्य स्थानके ऊपर संख्यात खण्डसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंको छोड़कर उपरिम असंख्यात लोकमात्र सब अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें उत्पन्न होते हैं।

शंका—अधस्तन संख्यात अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालोंमें हतसमुत्पत्तिक स्थान नहीं उत्पन्न होते हैं, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह आचार्योंके उपदेशसे जाना जाता है। अथवा अनुभागवृद्धि-हानिके अल्पबहुत्वसे जाना जाता है। यथा—हानि सबमें स्तोक है। वृद्धि उससे विशेष अधिक है।

शंका—एक समयमें उत्कृष्टरूपसे जितना वृद्धिंगत होकर बाँधता है उसे सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा एक बारमें एक अनुभागकाण्डकसे घातनेको समर्थ नहीं है, इस बातके जतलानेके लिये जो अल्पबहुत्व आया है उसकी प्रवृत्ति नाना समयप्रबद्धोंकी वृद्धि और नानाकाण्डकघातोंसे उत्पन्न हानिमें कैसे हो सकती है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, इस अल्पबहुत्वसूत्रकी दोनों जगह प्रवृत्ति होनेमें कोई विरोध नहीं आता है।

शंका—एक अनेक विषयोंमें कैसे प्रवृत्ति कर सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, एक मुद्गरका अनेक खप्परोंकी उत्पत्तिमें व्यापार पाया जाता है।

अथवा कसायपाहुड़के अनुभागसंक्रमसूत्रके व्याख्यानसे जाना जाता है कि उक्त स्थान सर्वत्र नहीं उत्पन्न होते हैं। यथा—अनुभागसंक्रममें चौबीस अनुयोगद्वारोंके समाप्त होनेपर भुजा-

१ ताप्रतौ 'उप्पज्जंति त्ति। कुदो' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'वड्ढिदेण', ताप्रतौ 'वड्ढिदेण (वट्टदे ! ण,)' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भणदि) उक्कस्सए अणुभागबंधट्ठाणे एगसंतकम्मट्ठाणं। तमेगं चेव संकमट्ठाणं। दुचरिमे अणुभागबंधट्ठाणे एगं संतकम्मट्ठाणं। एगं चेव संकमट्ठाणं। एवं पच्छाणुपुव्वीए ताव णेयव्वं जाव पढमअणंतगुणहीणट्ठाणमपत्तं त्ति। पुणो पुव्वाणुपुव्वीए गणिज्जमाणे जं चरिममणंतगुणबंधट्ठाणं तस्स हेट्ठा जमणंतरमणंतगुणहीणबंधट्ठाणं तस्स उवरि एदम्हि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि। ताणि संतकम्मट्ठाणाणि चेव। ताणि चेव संकमट्ठाणाणि[1]। तदो पुणो बंधट्ठाणाणि संकमट्ठाणाणि च ताव तुल्लाणि होदूण ओयरंति जाव पच्छाणुपुव्वीए विदियमणंतगुणहीणं बंधट्ठाणमपत्तं त्ति। तदो विदियअणंत[2]गुणहीण-बंधट्ठाणस्स उवरि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि। एदाणि संतकम्मट्ठाणाणि चेव। एदाणि चेव संकमट्ठाणाणि। पुणो एवं पच्छाणुपुव्वीए गंतूण तदियअणंतगुणहीण-ट्ठाणस्स उवरिल्लंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि। एदाणि संतकम्मट्ठाणाणि। एदाणि चेव संकमट्ठाणाणि। पुणो एवं गंतूण चउत्थअणंतगुणहीणबंधट्ठाणस्स उवरिम-अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि। एदाणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि। एदाणि चेव संकमट्ठाणाणि च। एवं णेयव्वं जाव अप्पडिसिद्ध[3]अंतरे त्ति। हेट्ठा जाणि चेव बंधट्ठा-णाणि ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि संकमट्ठाणाणि चे त्ति (एसो[4] अत्थो विउलगिरिमत्थ-यत्थेण पच्चक्खीकयतिकालगोयरछद्दव्वेण वड्ढमाणभडारएण गोदमथेरस्स कहिदो।

कार, पदनिक्षेप और वृद्धिको कहकर पश्चात् अनुभागसंक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं—उत्कृष्ट अनु-भागबन्धस्थानमें एक सत्त्वस्थान है। वह एक ही संक्रमस्थान है। द्विचरम अनुभागबन्धस्थानमें एक सत्कर्मस्थान है। यह एक ही संक्रमस्थान है। इस प्रकार पश्चादानुपूर्वीसे तब तक ले जाना चाहिये जब तक प्रथम अनन्त गुणहीन स्थान प्राप्त नहीं होता। पश्चात् पूर्वानुपूर्वीसे गणना करनेपर जो अन्तिम अनन्तगुणा बन्धस्थान है उसके नीचे जो अनन्तर अनन्तगुणा हीन बन्धस्थान है उसके ऊपर इस अन्तरमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान हैं। वे सत्कर्मस्थान ही हैं। वे ही संक्रमस्थान हैं। तत्पश्चात् बन्धस्थान और संक्रमस्थान तब तक समान होकर उतरते हैं जब तक पश्चादानुपूर्वीसे द्वितीय अनन्तगुणहीन बन्धस्थान नहीं प्राप्त होता। पश्चात् द्वितीय अनन्तगुणहीन बन्धस्थानके उपरिम अन्तरमें असंख्यात लोकमात्र घातस्थान हैं। ये सत्कर्मस्थान ही हैं। ये ही संक्रम-स्थान हैं। फिर इसी प्रकार पश्चादानुपूर्वीसे जाकर तृतीय अनन्तगुणहीन स्थानके उपरिम अन्तरमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान हैं। ये सत्कर्मस्थान हैं। ये ही संक्रमस्थान हैं। फिर इसी प्रकार जाकर चतुर्थ अनन्तगुण बन्धस्थानके उपरिम अन्तरमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान हैं। ये ही सत्कर्मस्थान हैं और ये ही संक्रमस्थान भी हैं। इस प्रकारसे अप्रतिसिद्ध अन्तर तक ले जाना चाहिये। नीचे जो बन्धस्थान हैं वे ही सत्कर्मस्थान हैं और वे ही संक्रमस्थान भी हैं। इस अर्थकी प्ररूपणा विपुलाचलके शिखरपर स्थित व तीनों कालोंके विषयभूत छह द्रव्योंका प्रत्यक्षसे अवलोकन

---

१ जयध. अ. पत्र ३७०। २ अ-आप्रत्योः 'विदियमणंत' इति पाठः। ३ अ-आप्रत्योः 'अपडिसिद्ध' इति पाठः। ४ आप्रतौ 'संतकम्मट्ठाणाणि चेति संकमट्ठाणाणि च एसो' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

पुणो सो अत्थो आइरियपरंपराए आगंतूण गुणहरभडारयं संपत्तो । पुणो तत्तो आइरिय-परंपराए आगंतूण अज्जमंखु-णागहत्थिभडारयाणं मूलं पत्तो । पुणो तेहि दोहि वि कमेण जदिवसहभडारयस्स वक्खाणिदो । तेण वि अणुभागसंकमे सिस्साणुग्गहट्ठं चुण्णिसुत्ते लिहिदो । तेण जाणिज्जदि जहा सव्वट्ठंकुव्वंकाणं विच्चालेसु घादट्ठाणाणि णत्थि त्ति ।

एवं हदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

एत्तो उवरिं [1]हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा—जहण्णविसोहिट्ठाणप्पहुडि जाव उक्कस्सविसोहिट्ठाणे त्ति ताव एदाणि असंखेज्जलोगमेत्तविसोहिट्ठाणाणि घादिदसेसाणुभागघादकारणाणि एगसेडिसरूवेण रचेदूण पुणो एदेसिं दक्खिण-पासे सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जहण्णट्ठाणप्पहुडि असंखेज्जलोगमेत्तबंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि एगसेडिसरूवेण रचेदूण पुणो सुहुमणिगोदअपज्जत्तजहण्णट्ठाणस्सुवरि संखेज्जाणं छट्ठाणाणं अट्ठंकुव्वंकट्ठाणाणि मोत्तूण पुणो तदणंतरअप्पडिसिद्धअट्ठंकप्पहुडि जाव चरिम-अट्ठंके त्ति ताव एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्तबंधसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणमंतरेसु पुव्वावरायामेण असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि रचेदूण पुणो तत्थ चरिमबंधसमुप्पत्तियअट्ठं-कुव्वंकाणं मज्झे असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि होंति । पुणो एदेसु ट्ठाणेसु असंखेज्जलोगमेत्तअट्ठंकाणि रूवूणछट्ठाणं च अत्थि ।

करनेवाले वर्धमान भट्टारक द्वारा गौतम स्थविरके लिए की गई थी । पश्चात् वह अर्थ आचार्य परम्परासे आकर गुणधर भट्टारकको प्राप्त हुआ । फिर उनके पाससे वह आचार्य परम्परा द्वारा आकर आर्यमंक्षु और नागहस्ती भट्टारकके पास आया । पश्चात् उन दोनों ही द्वारा क्रमसे उसका व्याख्यान यतिवृषभ भट्टारकके लिये किया गया । उन्होंने भी उसे शिष्योंके अनुग्रहार्थ चूर्णिसूत्रमें लिखा है । उससे जाना जाता है कि समस्त अष्टांकों और ऊर्वंकके अन्तरालोंमें घातस्थान नहीं है ।

इस प्रकार हतसमुत्पत्तिकस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

इसके आगे हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—जघन्य विशुद्धिस्थानसे लेकर उत्कृष्ट विशुद्धस्थान तक घातनेसे शेष रहे अनुभागके घातनेमें कारणभूत इन असंख्यात लोकप्रमाण विशुद्धिस्थानोंको एक पंक्तिके रूपसे रचकर फिर इनके दक्षिण पार्श्व भागमें सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त जीवके जघन्य स्थानसे लेकर असंख्यातलोक प्रमाण बन्धसमुत्पत्तिक स्थानोंको एक पंक्ति स्वरूपसे रचकर तत्पश्चात् सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके जघन्य स्थानके आगे संख्यात षट्स्थानों सम्बन्धी अष्टांग व ऊर्वंक स्थानोंको छोड़कर फिर तदनन्तर अप्रतिषिद्ध अष्टांकसे लेकर अन्तिम अष्टांक तक इन असंख्यात लोकप्रमाण बन्धसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वंक स्थानोंके अन्तरालोंमें पूर्व-पश्चिम आयामसे असंख्यात लोकप्रमाण हतसमुत्पत्तिक स्थानोंको रचकर फिर वहाँ अन्तिम बन्धसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वंकके मध्यमें असंख्यातलोक प्रमाण हतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं । इन स्थानोंमें असंख्यात लोक प्रमाण अष्टांक और एक अंकसे रहित एक षट्स्थान भी है ।

१ आप्रतौ 'हदसमुप्पत्तिय' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

तत्थ ताव चरिमउव्वंकघादणविहाणं भणिस्सामो—उक्कस्सपरिणामट्ठाणेण पज्जवसाणउव्वंके घादिदे चरिमअट्ठंकस्स हेट्ठा अणंतगुणहीणं, तस्सेव हेट्ठिमउव्वंकट्ठाणस्सुवरि अणंतगुणं होदूण दोण्णं पि अंतरे पढमं हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणं उप्पज्जदि। पुणो अणंतभागहीणदुचरिमट्ठाणेण तम्हि चेव पज्जवसाणाणुभागे घादिदे पुव्वुप्पण्णट्ठाणस्सुवरि अणंतभागब्भहियं होदूण विदियं हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणमुप्पज्जदि। कुदो ? अणंतभागहीणविसोहिट्ठाणेण घादिदत्तादो। एवं जाए जाए हाणीए समण्णिदेण परिणामट्ठाणेण पज्जवसाणट्ठाणं घादिज्जदे ताए ताए सण्णाए सहिदाणि घादघादट्ठाणाणि उप्पज्जंति। एवं कदे चरिमअट्ठंकउव्वंकाणं विचाले परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि होंति। पुणो उव्वंकस्स परिणामट्ठाणेण पज्जवसाणदुचरिमउव्वंके घादिदे सव्वजहण्णहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणस्स हेट्ठा अणंतभागहीणं होदूण वामपासे पढमट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो एदम्हादो अणुभागट्ठाणादो परिणाममेत्ताणि चेव हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि पुव्वं व उप्पादेदव्वाणि। पुणो तेणेव उक्कस्सपरिणामट्ठाणेण तिचरिमउव्वंके घादिदे पुव्वुप्पण्णापंतीए जहण्णट्ठाणादो अणंतभागहीणं होदूण अण्णं ट्ठाणं उप्पज्जदि। एवं एत्थ वि परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि उप्पज्जंति। पुणो चदुचरिमादिघादट्ठाणाणि कमेण घादिय परिणामट्ठाणमेत्ताणि घादघादट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि। एवं कदे छट्ठाणविक्खंभपरिणामट्ठाणमेत्तायामं घादघादट्ठाणपदरं होदि।

उनमें पहिले अन्तिम ऊर्वकस्थानके घातनेकी विधि बतलाते हैं—उत्कृष्ट परिणामस्थानके द्वारा पर्यवसान ऊर्वकके घाते जानेपर अन्तिम अष्टांकके नीचे अनन्तगुणाहीन व उसके ही अधस्तन ऊर्वकस्थानके ऊपर अनन्तगुणा होकर दोनोंके ही मध्यमें प्रथम हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है। पश्चात् अनन्तवें भागसे हीन द्विचरम स्थानके द्वारा उसी पर्यवसान अनुभागके घाते जानेपर पूर्व उत्पन्न स्थानके ऊपर अनन्तवें भागसे अधिक द्वितीय हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है; क्योंकि, वह अनन्तभागहीन विशुद्धिस्थान द्वारा घातको प्राप्त हुआ है। इस प्रकार जिस जिस हानिसे सहित परिणामस्थानके द्वारा पर्यवसानस्थान घाता जाता है उस उस संज्ञासे सहित घातघात उत्पन्न होते हैं। इस विधानसे अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें परिणामस्थानोंके बराबर ही हतहतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं। पश्चात् ऊर्वकके परिणामस्थान द्वारा पर्यवसान द्विचरम ऊर्वकके घाते जानेपर सर्वजघन्य हतहतसमुत्पत्तिकस्थानके नीचे अनन्तभागहीन होकर वाम पार्श्वभागमें प्रथम स्थान उत्पन्न होता है। तत्पश्चात् इस अनुभागस्थानसे परिणामस्थानोंके बराबर ही हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंको पहिलेके ही समान उत्पन्न कराना चाहिये। फिर उसी उत्कृष्ट परिणामस्थानके द्वारा त्रिचरम ऊर्वकके घाते जानेपर पूर्व उत्पन्न पंक्तिके जघन्य स्थानसे अनन्तभागहीन होकर अन्य स्थान उत्पन्न होता है। इस प्रकारसे यहाँपर भी परिणामस्थानोंके बराबर ही सत्कर्मस्थान उत्पन्न होते हैं। तत्पश्चात् क्रमसे चतुश्चरम आदि घातस्थानोंको क्रमसे घातकर परिणामस्थानोंके बराबर घातघातस्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये। ऐसा करनेपर षट्स्थान विष्कम्भ व परिणामस्थान आयाम युक्त घातघातस्थानप्रतर होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं ट्ठिदट्ठाणेसु अपुणरुत्तट्ठाणपरूवणं कस्सामो — एत्थ हेट्ठिमपढमट्ठाणपंतीए जं जहण्णट्ठाणं तमपुणरुत्तं, तेण समाणण्णट्ठाणाभावादो[1]। जं विदियट्ठाणं तं पुणरुत्तं, उवरिमविदियपरिवाडीए जहण्णट्ठाणेण समाणत्तादो। हेट्ठिमतदियट्ठाणं विदियपरिवाडीए विदियट्ठाणेण समाणं। एवं णेयव्वं जाव पढमपरिवाडीए पढमकंदयस्स चरिमउव्वंके त्ति। पुणो उवरिमचत्तारिअंकट्ठाणमपुणरुत्तं, उवरि [2]सगपणिहिट्ठिदट्ठाणेण चत्तारिअंकस्स सरिसत्ताभावादो। पुणो तदणंतरउवरिमउव्वंकट्ठाणं पुणरुत्तं, विदियपरिवाडीए पढमचत्तारिअंकेण समाणत्तादो। एवं पुव्वं व विदियकंदयउव्वंकट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि चेव होदूण गच्छंति, विदियपरिवाडीए विदियकंदयउव्वंकट्ठाणेहि समाणत्तादो। पुणो पढमपंतीए विदियचत्तारिअंकमपुणरुत्तं, उवरिमपंतीए सगोवरिट्ठिदउव्वंकाण[3] समाणत्ताभावादो। एवं भणिज्जमाणे पढमपंतीए सव्वुव्वंकट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि चेव होंति। पुणो तेसिं पुणरुत्तट्ठाणाणमवणयणे कदे पढमाए ट्ठाणपंतीए चत्तारिअंक-पचंक-छअंक-सत्तंक-अट्ठंकट्ठाणाणि चेव अपुणरुत्ताणि होदूण लब्भंति। जहा पढमपरिवाडीए उव्वंकट्ठाणाणि हेट्ठदो विदियपरिवाडीए उव्वंकट्ठाणेहि समाणाणि त्ति अवणिदाणि तहा विदियपरिवाडीए पढमउव्वंकं मोत्तूण सेसस्स उव्वंकट्ठाणाणि तदियपरिवाडीए उव्वंकट्ठाणेहि समाणाणि

इस प्रकारसे स्थित स्थानोंमें अपुनरुक्त स्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं — यहाँ अधस्तन प्रथम स्थानपंक्तिका जो जघन्य स्थान है वह अपुनरुक्त है, क्योंकि, उसके समान अन्य स्थानका अभाव है। जो द्वितीय स्थान है वह पुनरुक्त है, क्योंकि, वह उपरिम द्वितीय परिपाटीके जघन्य स्थानके समान है। अधस्तन तृतीय स्थान द्वितीय परिपाटीके द्वितीय स्थानके समान है। इस प्रकारसे प्रथम परिपाटीसम्बन्धी प्रथम काण्डकके अन्तिम ऊर्वंक तक ले जाना चाहिये। पुनः ऊपरका चतुरंकस्थान अपुनरुक्त है, क्योंकि, ऊपर अपनी प्रणिधिमें स्थित स्थानसे चतुरंककी समानताका अभाव है। तदनन्तर उपरिम ऊर्वंकस्थान पुनरुक्त है, क्योंकि, वह द्वितीय परिपाटीके प्रथम चतुरंकसे समान है। इस प्रकार पहिलेके समान द्वितीय काण्डकके ऊर्वंक स्थान पुनरुक्त ही होकर जाते हैं, क्योंकि, वे द्वितीय परिपाटीके द्वितीय काण्डक सम्बन्धी ऊर्वंकस्थानोंके समान हैं। पुनः प्रथम पंक्तिका द्वितीय चतुरंक अपुनरुक्त है, क्योंकि, उपरिम पंक्तिमें अपने ऊपर स्थित ऊर्वंकोंसे उसकी समानता नहीं है। इस प्रकार कथन करनेपर प्रथम पंक्तिके सब ऊर्वंकस्थान पुनरुक्त ही हैं। पुनः उन पुनरुक्त स्थानोंका अपनयन करनेपर प्रथम स्थानपंक्तिके चतुरंक, पंचांक, षडंक, सप्तांक और अष्टांक ये स्थान ही अपुनरुक्त होकर पाये जाते हैं। जिस प्रकार प्रथम परिपाटीके ऊर्वंकस्थान चूंकि नीचे द्वितीय परिपाटीके ऊर्वंकस्थानोंसे समान हैं, अतः उनका अपनयन किया गया है, उसी प्रकार चूंकि द्वितीय परिपाटीके प्रथम ऊर्वंकको छोड़कर शेष ऊर्वंकस्थान तृतीय परिपाटीके ऊर्वंकस्थानोंके समान हैं अतएव उनका अपनयन करना चाहिये। इस प्रकार पुनरुक्त

१ अ-आप्रत्योः 'समाणट्ठाणाभावादो' इति पाठः। २ प्रतिषु 'सगपणिदि' इति पाठः। ३ अ-आप्रत्योः '–ट्ठिदउव्वंकाण' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

त्ति अवणेदव्वाणि । एवं पुणरुत्तट्ठाणावणयणं करिय ताव णेदव्वं जाव कंदयमेत्तद्धाण-मुवरि चडिदूण ट्ठिदट्ठाणपंती पत्ता त्ति । तत्थ जं पढमं ट्ठाणं तमपुणरुत्तं, उवरिमपंतीए केण वि ट्ठाणेण समाणत्ताभावादो । जं बिदियं ट्ठाणं तं पि अपुणरुत्तं चेव, सगपंतीए जहण्णट्ठाणादो अणंतभागब्भहियस्स उवरिमपंतीए जहण्णट्ठाणेण सगपंतिजहण्णट्ठाणादो असंखेज्जभागब्भहिएण समाणत्तविरोहादो । एवमप्पिदपंतीए कंदयमेत्तसव्वुव्वंकट्ठाणाणि अपुणरुत्ताणि चेव, सगपंतिजहण्णादो असंखेज्जभागब्भहिएहि उवरिमट्ठाणेहि हेट्ठा तत्तो[1] अणंतभागब्भहियाणं समाणत्तविरोहादो । पुणो हेट्ठिमपंतीए पढमचत्तारिअंकट्ठाणं उवरि-मपंतीए[2] सगुवरिमउव्वंकट्ठाणेण समाणमिदि अवणेदव्वं । एवमेत्थ अप्पिदपरिवाडीए चत्तारिअंकट्ठाणाणि ताव पुणरुत्तट्ठाणाणि होदूण गच्छंति जाव अप्पिदपरिवाडीए पढम-पंचंकट्ठाणादो हेट्ठिमचत्तारिअंकट्ठाणे त्ति । पुणो अप्पिदपरिवाडीए उवरिमसव्वट्ठाणाणि अपुणरुत्ताणि चेव, उवरिमपंतिट्ठाणेहि तेसिं समाणत्ताभावादो ।

जहा पढमकंदयमेत्तट्ठाणपंतीणं सरिसासरिसपरिक्खा कदा तहा बिदियकंदयस-व्वट्ठाणाणं पि परिक्खा कायव्वा । णवरि असंखेज्जभागब्भहियट्ठाणं जम्हि कंदए जहण्णं

स्थानोंका अपनयन करके तबतक ले जाना चाहिये जबतक कि काण्डक प्रमाण अध्वानके आगे जाकर स्थित स्थानपंक्ति प्राप्त नहीं होती है । उसमें जो प्रथम स्थान है वह अपुनरुक्त है, क्योंकि, वह उपरिम पंक्तिके किसी भी स्थानके समान नहीं है । जो द्वितीय स्थान है वह भी अपुनरुक्त ही है, क्योंकि, अपनी पंक्तिके जघन्य स्थानकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे अधिक उक्त स्थानकी, उपरिम पंक्तिके जघन्य स्थानसे जो कि अपनी पंक्तिके जघन्य स्थानकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक है, समानताका विरोध है । इस प्रकार विवक्षित पंक्तिके काण्डक प्रमाण सब ऊर्वंक स्थान अपुनरुक्त ही होते हैं, क्योंकि, अपनी पंक्तिके जघन्य स्थानकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक उपरिम स्थानोंसे नीचे उक्त स्थानकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे अधिक स्थानोंकी समानताका विरोध है । पुनः अधस्तन पंक्तिका प्रथम चतुरंकस्थानान्तर चूंकि उपरिम पंक्तिके अपने ऊर्वंकस्थानके समान है, अतः उसका अपनयन करना चाहिये । इस प्रकारसे यहाँ विवक्षित परिपाटीके चतुरंकस्थान तब तक पुनरुक्तस्थान होकर जाते हैं जब तक कि विवक्षित परिपाटीके प्रथम पंचांकस्थानसे नीचेका चतुरंकस्थान नहीं प्राप्त होता है । पुनः विवक्षित परिपाटीके उपरिम सब स्थान अपुनरुक्त ही होते हैं, क्योंकि, उनकी उपरिम पंक्तिके स्थानोंसे समानता नहीं है ।

जिस प्रकारसे प्रथम काण्डक प्रमाण स्थान पंक्तियोंकी समानता व असमानताकी परीक्षा की गई है उसी प्रकारसे द्वितीय काण्डकके सब स्थानोंकी भी परीक्षा करनी चाहिये। विशेष इतना है कि जिस काण्डक में असंख्यातवें भागसे अधिक स्थान जघन्य है उसके अनन्तर अधस्तन

१ अतोऽग्रे ताप्रतौ 'अणंतभागब्भहियाणं अट्ठंकाणंतरउवरिमपंतीए सगुवरिमउव्वंकसमाणत्तविरोहादो । पुणो हेट्ठिमपंतीए पढमचत्तारिट्ठाणेण समाणमिदि अवणेदव्वं । एवमेत्थ ईदृक् पाठः समुपलभ्यते । २ अ-आ-प्रत्योः '–अंकट्ठाणंतरउवरिम–', ताप्रतावसंबद्धोऽत्र पाठः प्रतिभाति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्तो अणंतरहेट्ठिमअसंखेज्जभागब्भहियट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि। जम्हि कंदए संखेज्जभाग-ब्भहियं ट्ठाणं जहण्णं होदि तत्तो हेट्ठिमपंतीए संखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि। एवं सव्वत्थ वत्तव्वं। एत्थ पुणरुत्ताणि अवणिय अपुणरुत्ताणि घेत्तव्वा।

एदेण बीजपदेण[1] दुचरिम-तिचरिम-चदुचरिमादिअट्ठंक-उव्वंकाणं विचालेसु हद-हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि जाव एदेसिं हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं पढमअट्ठंके त्ति। एत्थ जहण्णबंधट्ठाणप्पहुडि जहा संखेज्जट्ठंकुव्वंकाणं अंतरेसु घादट्ठाणाणि पडिसिद्धाणि तधा एदेसिं पि घादट्ठाणाणं हेट्ठा संखेज्जट्ठंकुव्वंकाणंतरेसु घादघादट्ठाणाणं पडिसेहो किण्ण कीरदे? ण, सुत्ताणमाइरियवयणाणं च पडिसेहपडिबद्धाणमणुवलंभादो। विधीए विणा कधं सव्वत्थट्ठंकुव्वंकंतरेसु घादघादपरूवणा कीरदे? ण एत्थ अम्हाणमाग्गहो[2] सव्वट्ठंकुव्वंकट्ठाणंतरेसु घादघादट्ठाणाणि होंति चेवे त्ति। किंतु विहि-पडिसेहो णत्थि त्ति जाणावणट्ठं परूविदं। एवं कदे एक्केक्कहदसमुप्पत्तियअट्ठंकट्ठाणस्स हेट्ठा असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पण्णाणि होंति। पुणो पच्छाणुपुव्वीए ओदरिदूण बंधसमुप्पत्तियदुचरिमअट्ठंक-उव्वंकाणमंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्प-

---

असंख्यातवें भागसे अधिक स्थान पुनरुक्त हैं, और जिस काण्डकमें संख्यातवें भागसे अधिक स्थान जघन्य होता है उससे अधस्तन पंक्तिके संख्यातवें भागसे अधिक स्थान पुनरुक्त हैं, ऐसा सब जगह कथन करना चाहिये। यहाँ पुनरुक्त स्थानोंका अपनयन करके अपुनरुक्त स्थानोंको ग्रहण करना चाहिये।

इस बीज पदके द्वारा इन हतसमुत्पत्तिक स्थानोंके प्रथम अष्टांक तक द्विचरम, त्रिचरम व चतुश्चरम आदि अष्टांक एवं ऊर्वंक स्थानोंके अन्तरालोंमें हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिये।

शंका—यहाँ जिस प्रकार जघन्य बन्धस्थानसे लेकर संख्यात अष्टांक और ऊर्वंक स्थानोंके अन्तरालोंमें घातस्थानोंका प्रतिषेध किया गया है उसी प्रकार इन घातस्थानोंके भी नीचे संख्यात अष्टांक व ऊर्वंक स्थानोंके अन्तरालोंमें घातघातस्थानोंका प्रतिषेध क्यों नहीं किया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रतिषेधसे सम्बद्ध न तो सूत्र पाये जाते हैं और न आचार्य वचन ही।

शंका—विधिके बिना सर्वत्र अष्टांक और ऊर्वंकस्थानोंके अन्तरालोंमें घातघातस्थानोंकी प्ररूपणा कैसे की जाती है?

समाधान—हमारा यह आग्रह नहीं है कि सब अष्टांक और ऊर्वङ्क स्थानोंके अन्तरालोंमें घातघातस्थान होते ही हैं, किन्तु उनकी विधि व प्रतिषेध नहीं है, यह जतलानेके लिये उनकी प्ररूपणा की गई है।

इस प्रकारसे एक एक हतसमुत्पत्तिकस्थानके नीचे असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं। पुनः पश्चादानुपूर्वीसे उतर कर बन्धसमुत्पत्तिक द्विचरम अष्टांक और ऊर्वंकके मध्यमें असंख्यात लोक प्रमाण हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं। फिर इन स्थानोंके

---

१ मप्रति पाठोऽयम्। अ-आ-ताप्रतिषु 'जीवपदेण' इति पाठः। २ आप्रतौ 'एत्थ अंकाणमागहो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्तियट्ठाणाणि उप्पण्णाणि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमअट्ठंकप्पहुडि जाव पढमअट्ठंके त्ति ताव एदेसिमट्ठंकुव्वंकाणं अंतरेसु असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पज्जंति । पुणो हेट्ठा ओदरिदूण बंधसमुप्पत्तियतिचरिमट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं असंखेज्जलोगमेत्तअट्ठंकुव्वंकंतरेसु असंखेज्जलोगमेत्तहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि रूवूणछट्ठाणसहिदाणि उप्पज्जंति । एवं बंधसमुप्पत्तियचदुचरिम-पंचचरिमादिअट्ठंकंतरेसु[1] ट्ठिदाणं पच्छाणुपुव्वीए जाणिदूण णेदव्वं जाव अपडिसिद्धपढमअट्ठंके त्ति । तदो बंधसमुप्पत्तियअप्पडिसिद्धपढमअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि, पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमअट्ठंकुव्वंकाणमंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणि रूवूणछट्ठाणसहियाणि उप्पज्जंति । एवं पडिलोमेण जाणिदूण णेयव्वं जाव एदेसिं हदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणं पढमअट्ठंके त्ति । एसा ताव हदहदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणं एगा परिवाडी उत्ता होदि ।

संपहि हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं विदियपरिवाडीए भण्णमाणाए बंधसमुप्पत्तियचरिमअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमअट्ठंकउव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियछट्ठाणाणि उप्पण्णाणि । पुणो एदेसिं हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं पढमपरिवाडीए समुप्पण्णाणं

अन्तिम अष्टांकसे लेकर प्रथम अष्टांक तक इन अष्टांक और ऊर्वक स्थानोंके अन्तरालोंमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं । फिर नीचे उतर कर बन्धसमुत्पत्तिक त्रिचरम अष्टांक और ऊर्वक स्थानोंके अन्तरालोंमें असंख्यात लोक प्रमाण हतसमुत्पत्तिकषट्स्थान होते हैं । पुनः इन स्थानोंके असंख्यात लोक प्रमाण अष्टांक व ऊर्वकके अन्तरालोंमें एक अंकसे कम षट्स्थान सहित असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिक स्थान उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार बन्धसमुत्पत्तिक चतुश्चरम व पंचचरम आदि अष्टांक (व ऊर्वक) के अन्तरालोंमें स्थित उनको पश्चादानुपूर्वीसे जानकर ले जाना चाहिये जब तक अप्रतिसिद्ध प्रथम अष्टांक नहीं प्राप्त होता । पश्चात् बन्धसमुत्पत्तिक अप्रतिसिद्ध प्रथम अष्टांक व ऊर्वकके अन्तरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं । पुनः इन स्थानोंके अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालमें एक कम षट्स्थान सहित असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार प्रतिलोमसे जानकर इन हतसमुत्पत्तिक षट्स्थानोंके अष्टांक तक ले जाना चाहिये । यह हतहतसमुत्पत्तिक षट्स्थानोंकी एक परिपाटी कही गई है ।

अब हतहतसमुत्पत्तिक षट्स्थानोंकी द्वितीय परिपाटीकी प्ररूपणामें बन्धसमुत्पत्तिक अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके मध्यमें असंख्यात लोक प्रमाण हतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं । फिर इन स्थानोंके अन्तिम अष्टांक और ऊर्वकके अन्तरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिक षट्स्थान उत्पन्न होते हैं । फिर प्रथम परिपाटीसे उत्पन्न इन हतसमुत्पत्तिक स्थानोंके अन्तिम अष्टांक और

---

१ प्रतिषु '–पंचचरिमा वि अट्ठंकंतरेसु' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चरिमअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले पुणो विदियपरिवाडीए असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहद-समुप्पत्तियछट्ठाणाणि रूवूणछट्ठाणसहगदाणि हेट्ठिमअंकुसायारट्ठाणेहि सेडिबद्धेहि पुप्फपइण्णएहि च सहियाणि उप्पज्जंति । पुणो एदेसिं चेव ट्ठाणाणं दुचरिम-तिचरिम-चदुचरिम-पंचचरिमादिहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंक-उव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पाइय ओदारेदव्वं जाव एदेसिं चेव ट्ठाणाणं पढमअट्ठंक-उव्वंकंतरे त्ति । एवं सेसपढमपरिवाडिसमुप्पण्णहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पादेदूण ओदारेदव्वं जाव अप्पडिसिद्धबंधसमुप्पत्तियपढमअट्ठंक-उव्वंकविच्चाले त्ति । पुणो एदम्हि विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं[1] चरिमहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि। पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं[2] चरिमहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि उप्पज्जंति । एवं चेव अप्पिददुचरिम-तिचरिमअट्ठंकुव्वंकाणं अंतरेसु असंखेज्जलोगमेत्ताणि

ऊर्वंकके अन्तरालमें एक कम षट्स्थानके साथ अधस्तन अंकुशाकार श्रेणिबद्ध एवं पुष्पप्रकीर्णक स्थानोंसे सहित होकर फिरसे द्वितीय परिपाटीसे असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिक स्थान उत्पन्न होते हैं । पश्चात् इन्हीं स्थानोंके द्विचरम, त्रिचरम, चतुश्चरम और पंचचरम आदि हतहतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तरालमें द्वितीय परिपाटीसे असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंको उत्पन्न कराकर इन्हीं स्थानोंके प्रथम अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तराल तक उतारना चाहिये । इस प्रकार प्रथम परिपाटीसे उत्पन्न शेष हतहतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वंकके मध्यमें द्वितीय परिपाटीसे हतहतसमुत्पत्तिक स्थानोंको उत्पन्न कराकर अप्रतिषिद्ध बन्धसमुत्पत्तिक प्रथम अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तराल तक उतारना चाहिये । पुनः इस अन्तरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतसमुत्पत्तिक स्थान होते हैं । पुनः इन स्थानोंके अन्तिम हतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं । पुनः इन स्थानोंके अन्तिम हतहतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तरालमें असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थान होते हैं । पुनः इन स्थानोंके अन्तिम हतहतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तरालमें द्वितीय परिपाटीसे असंख्यात लोकमात्र हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकारसे विवक्षित द्विचरम व त्रिचरम अष्टांक व ऊर्वंकके अन्तरालोंमें द्वितीय परिपाटीसे असंख्यात लोक प्रमाण

१ अतोऽग्रे ताप्रतिपाठः—चरिमहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विच्चाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि हद-समुप्पत्तियट्ठाणाणि अत्थि । पुणो एदेसिं ट्ठाणाणं चरिमहदसमुप्पत्तियअट्ठंकुव्वंकाणं विचाले असंखेज्जलोगमेत्ताणि विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तिय० उप्पज्जंति । एवं चेव……। २ अतोऽग्र आप्रतिपाठस्त्वेवंविधोऽस्ति—हदहदसमुप्पत्तियअट्ठंकु० विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्ति० ट्ठाणाणि उप्पज्जंति एवं चेव……।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विदियपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि उप्पादिय[1] ओदारेदव्वं जाव एदेसिं चेव पढमपरिवाडीए हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणपढमअट्ठंकउव्वंकविचाले त्ति। पुणो एदेण कमेण एत्थुप्पण्णविदियपरिवाडिघादघादट्ठाणाणं जाणिदूण परूवणा कायव्वा। एवं कदे हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणं विदियपरिवाडी समत्ता होदि।

पुणो एदेण कमेण बंधसमुप्पत्तियचरिम-अट्ठंक-उव्वंकाणं विचाले संपहि विदियपरिवाडीए समुप्पण्णहदहदसमुप्पत्तियचरिमअट्ठंकट्ठाणमादिं कादूण पच्छाणुपुव्वीए ताव ओदारेदव्वं जाव बंधसमुप्पत्तियअप्पडिसिद्धपढमअट्ठंक-उव्वंकविचाले [त्ति।] विदियपरिवाडीए उप्पण्णहदहदसमुप्पत्तियअट्ठंक-उव्वंकाणं विचालेसु पुणो वि असंखेज्जलोगमेत्तहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणेसु तदियपरिवाडीए उप्पाइदेसु तदियहदहदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणा समत्ता होदि। एवं अणंतरुप्पण्णुप्पण्णअट्ठंकुव्वंकाणं विचालेसु घादघादट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि जाव संखेज्जाओ[2] परिवाडीओ गदाओ त्ति। पुणो पच्छिमघादघादट्ठाणमट्ठंकुव्वंकविचालेसु घादघादट्ठाणाणि ण उप्पज्जंति, सव्वपच्छिमाणं घादघादट्ठाणाणं घादाभावादो। संखेज्जासु घादपरिवाडीसु गदासु पुणो सव्वपच्छिमस्स अणुभागस्स घादिदसेसस्स घादो णत्थि त्ति कुदो[3] णव्वदे? अविरुद्धाइरियवयणादो। सरागाणमाइ-

हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंको उत्पन्न कराकर इन्हीं प्रथम परिपाटीसे उत्पन्न हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंके प्रथम अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तराल तक उतारना चाहिये। पुनः इस क्रमसे यहाँ उत्पन्न द्वितीय परिपाटीके घातघात स्थानोंको जानकर प्ररूपणा करना चाहिये। ऐसा करनेपर हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी द्वितीय परिपाटी समाप्त होती है।

पश्चात् इस क्रमसे बन्धसमुत्पत्तिक अन्तिम अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तरालमें अभी द्वितीय परिपाटीसे उत्पन्न हतहतसमुत्पत्तिक अन्तिम अष्टांकस्थानसे लेकर पश्चादानुपूर्वीसे बन्धसमुत्पत्तिक अप्रतिषिद्ध प्रथम अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तराल तक उतारना चाहिये। द्वितीय परिपाटीसे उत्पन्न हतहतसमुत्पत्तिक अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तरालोंमें फिरसे भी असंख्यात लोक प्रमाण हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंको तृतीय परिपाटीसे उत्पन्न करानेपर तृतीय हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी प्ररूपणा समाप्त होती है। इस प्रकार अनन्तर पुनः पुनः उत्पन्न हुए अष्टांक और ऊर्वंकके अन्तरालोंमें घातघातस्थानोंको संख्यात परिपाटियाँ समाप्त होने तक उत्पन्न कराना चाहिये परन्तु पश्चिम घातघातस्थानोंके अष्टांक और ऊर्वङ्कके अन्तरालोंमें घातघातस्थान उत्पन्न नहीं होते हैं, क्योंकि, सर्वपश्चिम घातघातस्थानोंका घात सम्भव नहीं है।

शंका—संख्यात घातपरिपाटियोंके समाप्त होनेपर फिर घातनेसे शेष रहे सर्वपश्चिम अनुभागका घात नहीं होता है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

१ प्रतिषु 'अंतरेसु असंखेज्जलोगमेत्ताणि बिदियपरिवाडीए हदहदसमुप्प० असंखे० उप्पादिय' इति पाठः।
२ अप्रतौ 'असंखेज्जाओ', आप्रतौ 'संखेज्ज-संखेज्जाओ' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'णत्थि त्ति। कुदो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रियाणं वयणं ण प्पमाणमिदि ण वोत्तुं जुत्तं, अविरुद्धविसेसणेण ओसारिदरागादिभावादो। ण च अविरुद्धाइरियपरंपरागदउवएसो एसो चप्पलो होदि, अव्ववत्थापत्तीदो।

णाणावरणीयस्स सव्वत्थोवाणि बंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि। हदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। गुणगारो असंखेज्जा लोगा। हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। एत्थ वि गुणगारो असंखेज्जा लोगा। एसा ताव णाणावरणीयस्स तिविहा ट्ठाणपरूवणा परूविदा। एवं सेससत्तण्णं पि कम्माणं तिविहा ट्ठाणपरूवणा जाणिदूण परूवेदव्वा। णवरि आउअस्स परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण अपज्जत्तसंजुत्ततिरिक्खाउअजहण्णाणुभागे पबद्धे तमेगं बंधसमुप्पत्तियट्ठाणं। पुणो पक्खेवुत्तरे पबद्धे विदियबंधसमुप्पत्तियट्ठाणं। आउअस्स जहण्णट्ठाणप्पहुडि असंखेज्जलोगमेत्ताणि परिणामट्ठाणाणि होंति। जत्तियाणि परिणामट्ठाणाणि तत्तियाणि चेव अणुभागबंधसमुप्पत्तियट्ठाणाणि। हदसमुप्पत्तिय-हदहदसमुप्पत्तियट्ठाणपरूवणाए कीरमाणाए णाणावरणभंगो। एवमणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणपरूवणा णाम विदिया चूलिया समत्ता।

समाधान—वह अविरुद्ध आचार्यवचनसे जाना जाता है। यदि कहा जावे कि आचार्य चूंकि सराग होते हैं, अतएव उनके वचन प्रमाण नहीं हो सकते; सो ऐसा कहना युक्तियुक्त नहीं है, क्योंकि, अविरुद्ध इस विशेषणसे रागादिभावका निराकरण किया गया है। कारण कि अविरुद्ध आचार्यपरम्परासे आया हुआ यह उपदेश मिथ्या नहीं हो सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर अव्यवस्थाका होना अनिवार्य है।

ज्ञानावरणीयके बन्धसमुत्पत्तिकस्थान सबसे स्तोक हैं। उनसे हतसमुत्पत्तिकस्थान असंख्यातगुणे हैं। गुणकार असंख्यात लोक है। उनसे हतहतसमुत्पत्तिकस्थान असंख्यातगुणे हैं। यहाँपर भी गुणकार असंख्यात लोक है। यह ज्ञानावरणीयकी तीन प्रकारकी स्थानप्ररूपणा कही गई है। इसी प्रकारसे शेष सातों कर्मोंकी तीन प्रकारकी स्थानप्ररूपणाको जानकर कहना चाहिये। विशेष इतना है कि आयुकर्मका परिवर्तमान मध्यम परिणामके द्वारा अपर्याप्त संयुक्त तिर्यञ्च आयुके जघन्य अनुभागको बाँधनेपर वह एक बन्धसमुत्पत्तिकस्थान होता है। पुनः उसे एक प्रक्षेप अधिक बाँधनेपर द्वितीय बन्धसमुत्पत्तिकस्थान होता है। आयुके जघन्य स्थानसे लेकर असंख्यात लोक प्रमाण परिणामस्थान होते हैं। जितने परिणामस्थान हैं उतने ही उसके अनुभागबन्धसमुत्पत्तिक स्थान हैं। हतसमुत्पत्तिक और हतहतसमुत्पत्तिक स्थानोंकी प्ररूपणाके करनेपर वह ज्ञानावरणके समान है। इस प्रकार अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानप्ररूपणा नामकी द्वितीय चूलिका समाप्त हुई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तदिया चूलिया

जीवसमुदाहारे त्ति तत्थ इमाणि अट्ठ अणियोगद्दाराणि—एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमो णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो णाणाजीवकालपमाणाणुगमो वड्डिपरूवणा जवमज्झपरूवणा फोसणपरूवणा अप्पाबहुए त्ति ॥ २६८ ॥

जीवसमुदाहारो किमट्ठमागदो ? पुव्वं परूविदबंधाणुभागट्ठाणेसु असंखेज्जलोगमेत्तेसु जीवा किं सव्वेसु सरिसा आहो विसरिसा वा सरिसा [विसरसावा] त्ति पुच्छिदे एदेण सरूवेण तत्थ चिट्ठंति त्ति जाणावणट्ठं । अट्ठसु अणियोगद्दारेसु एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमो किमट्ठमागदो ? एक्केक्कम्हि ट्ठाणे[1] जीवा जहण्णेण एत्तिया होंति उक्कस्सेण वि एत्तिया त्ति जाणावणट्ठं । णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो किमट्ठमागदो ? णिरंतरजीवसहगदाणि अणुभागट्ठाणाणि जहण्णएण एत्तियाणि उकस्सेण वि एत्तियाणि वि होंति त्ति जाणावणट्ठं । सांतरट्ठाणजीवपमाणुगमो किमट्ठागदो ? णिरंतरजीवविरहिदट्ठाणाणि जहण्णेण एत्तियाणि

तीसरी चूलिका

जीवसमुदाहार इस अधिकारमें ये आठ अनुयोगद्वार हैं—एकस्थानजीवप्रमाणानुगम, निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम, सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम, नानाजीवकालप्रमाणानुगम, वृद्धिप्ररूपणा, यवमध्यप्ररूपणा, स्पर्शनप्ररूपणा और अल्पबहुत्व ॥२६८॥

शंका—जीवसमुदाहार किसलिये आया है ?

समाधान—पहिले जिन असंख्यात लोक प्रमाण बन्धानुभागस्थानोंकी प्ररूपणा की गई है उन सब स्थानोंमें जीव क्या सदृश होते हैं, विसदृश होते हैं, अथवा सदृश [विसदृश] होते हैं; ऐसा पूछे जानेपर वे वहाँ इस स्वरूपसे स्थित होते हैं, यह बतलानेके लिये जीवसमुदाहार यहाँ प्राप्त हुआ है ।

शंका—आठ अनुयोगद्वारोंमें एकस्थानजीवप्रमाणानुगम किसलिये आया है ?

समाधान—एक एक स्थानमें जीव जघन्यसे इतने होते हैं, और उत्कृष्टसे इतने होते हैं; इस बातको बतलानेके लिये उपर्युक्त अनुगम प्राप्त हुआ है ।

शंका—निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम किसलिये आया है ?

समाधान—निरन्तर जीवोंसे सहित अनुभागस्थान जघन्यसे इतने और उत्कृष्टरूप भी इतने ही होते हैं, इस बातके ज्ञापनार्थ उक्त अनुयोगद्वार प्राप्त हुआ है ।

शंका—सान्तरस्थानजीवप्रमाणुगम किसलिये आया है ?

समाधान—निरन्तर जीवोंसे रहित स्थान जघन्यसे इतने और उत्कृष्टरूपसे भी इतने ही होते

1 अ-आप्रत्योः 'ट्ठाणेण', ताप्रतौ 'ट्ठाणे [ण]' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्कस्सेण वि एत्तियाणि वि होंति त्ति जाणावणट्ठं । णाणाजीवकालपमाणाणुगमो किमट्ठमागदो ? एक्केक्कम्हि[1] ट्ठाणे जीवा जहण्णेण एत्तियं कालमुक्कस्सेण वि एत्तियं कालमच्छंति त्ति जाणावणट्ठं । वड्ढिपरूवणा किमट्ठमागदा ? अणंतरोवणिधापरंपरोवणिधासरूवेण जीवाणं वड्ढिपरूवणट्ठं । जवमज्झपरूवणा किमट्ठमागदा ? कमेण वड्ढमाणाणं जीवाणं ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं होदूण तत्तो उवरिमसव्वट्ठाणाणि जीवेहि विसेसहीणाणि होदूण गदाणि त्ति जाणावणट्ठं । फोसणपरूवणा किमट्ठमागदा ? अदीदे काले एगजीवेण एगमणुभागट्ठाणं एत्तियं कालं पोसिदमिदि जाणावणट्ठं । अप्पाबहुगं किमट्ठमागदं ? पुव्वुत्ततिविहाणुभागट्ठाणेसु जीवाणं थोवबहुत्तपरूवणट्ठं ।

एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि जीवा जदि होंति एक्को वा दो वा तिण्णि वा जाव उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ॥ २६६ ॥

हैं, इस बातके ज्ञापनार्थ वह अधिकार प्राप्त हुआ है ।

शंका—नानाजीवकालप्रमाणानुगम किसलिये आया है ?

समाधान—एक एक स्थानमें जीव जघन्यसे इतने काल तक और उत्कृष्टसे भी इतने काल तक रहते हैं, इसके ज्ञापनार्थ यह अधिकार आया है ।

शंका—वृद्धिप्ररूपणा किसलिये आयी है ?

समाधान—वह अनन्तरोपनिधा और परम्परोनिधा स्वरूपसे जीवोंकी वृद्धिप्ररूपणा करनेके लिये आयी है ।

शंका—यवमध्यप्ररूपणा किसलिये आयी है ?

समाधान—क्रमसे वृद्धिको प्राप्त होनेवाले जीवोंके स्थानोंके असंख्यातवें भागमें यवमध्य होकर उससे आगेके सब स्थान जीवोंसे विशेषहीन होकर गये हैं, यह बतलानेके लिये वृद्धिप्ररूपणा प्राप्त हुई है ।

शंका—स्पर्शनप्ररूपणा किसलिये आयी है ?

समाधान—अतीत कालमें एक जीवके द्वारा एक अनुभागस्थानका इतने काल स्पर्शन किया गया है, यह बतलानेके लिये स्पर्शप्ररूपणा प्राप्त हुई है ।

शंका—अल्पबहुत्व किसलिये आया है ?

समाधान—वह पूर्वोक्त तीन प्रकारके अनुभागस्थानोंमें जीवोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनेके लिये आया है ।

एकस्थानजीवप्रमाणानुगमसे एक एक स्थानमें जीव यदि होते हैं तो एक, दो, तीन अथवा उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग तक होते हैं ॥ २६६ ॥

१ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-का-ताप्रतिषु 'एक्कम्हि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जलोगमेत्ताणि अणुभागट्ठाणाणि उड्ढमेगपंत्तियागारेण पण्णाए ट्ठविय तत्थ एगेगअणुभागट्ठाणम्मि जहण्णुक्कस्सेण जीवपमाणं वुच्चदे । तं जहा—जहण्णेण एगो वा जीवो तत्थ होदि दो वा होंति तिण्णि वा होंति एवमेगुत्तरवड्ढीए एक्केकअणुभागट्ठाणम्मि उक्कस्सेण जाव आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ता होंति । अणुभागट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि, जीवरासी पुण अणंतो, तेण एक्केकम्हि अणुभागट्ठाणे जहण्णुक्कस्सेण अणंतेहि जीवेहि होदव्वं, अणुभागट्ठाणाणि विरलेदूण जीवरासिं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केकम्हि ट्ठाणम्मि अणंतजीवोवलंभादो त्ति ? ण एस दोसो, तसजीवे अस्सिदूण जीवसमुदाहारस्स परूविदत्तादो । थावरजीवे अस्सिदूण किमट्ठं जीवसमुदाहारो ण परूविदो ? ण, अणुभागट्ठाणेसु तसजीवाणमच्छणविहाणे अवगदे थावरजीवाणं तत्थावट्ठाणविहाणस्स सुहेण अवगंतुं सक्किज्जमाणत्तादो । थावरजीवाणमवट्ठाणविहाणे अवगदे तसजीवाणमवट्ठाणविहाणं किण्णावगम्मदे ? ण, एक्केकम्हि ट्ठाणम्हि तसजीवपमाणस्स णिरंतरं तसजीवेहि णिरुद्धट्ठाणपमाणस्स[1] तसजीवविरहिदअणुभागट्ठाणपमाणस्स य[2] तत्तो अवगंतुमसक्किज्जमाणत्तादो । एवमेयट्ठाणजीवपमाणाणुगमो समत्तो ।

असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागस्थानोंको ऊपर एक पंक्तिके आकारसे बुद्धिद्वारा स्थापित करके उनमेंसे एक एक अनुभागस्थानमें जघन्य व उत्कृष्टसे जीवोंके प्रमाणको कहते हैं । वह इस प्रकार है—उसमें जघन्यसे एक जीव होता है, दो होते हैं, अथवा तीन होते हैं; इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एककी वृद्धिपूर्वक एक एक अनुभागस्थानमें उत्कृष्टसे वे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण तक होते हैं ।

शंका—अनुभागस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं, परन्तु जीवराशि अनन्तानन्त है; अतएव एक एक अनुभागस्थानमें जघन्य व उत्कृष्टसे अनन्त जीव होने चाहिये, क्योंकि, अनुभागस्थानोंका विरलन करके जीवराशिको समखण्ड करके देनेपर एक एक स्थानमें अनन्त जीव पाये जाते हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जीवसमुदाहारकी प्ररूपणा त्रस जीवोंका आश्रय करके की गई है ।

शंका स्थावर जीवोंका आश्रय करके जीवसमुदाहारकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अनुभागस्थानोंमें त्रस जीवोंके रहनेके विधानको जान लेनेपर उनमें स्थावर जीवोंके रहनेका विधान सुखपूर्वक जाना जा सकता है ।

शंका—स्थावर जीवोंके रहनेके विधानको जान लेनेपर त्रस जीवोंके रहनेका विधान क्यों नहीं जाना जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उससे एक एक स्थानमें त्रस जीवोंके प्रमाणको, निरन्तर त्रस जीवोंसे निरुद्ध स्थानप्रमाणको तथा त्रस जीवोंसे रहित अनुभागस्थानोंके प्रमाणको जानना शक्य नहीं है । इस प्रकार एकस्थानजीवप्रमाणानुगम समाप्त हुआ ।

१ अप्रतौ 'णिरुद्धद्वाण' इति पाठः । २ आप्रतौ 'अणुभागट्ठाणस्स य' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण जीवेहि अविरहिदट्ठाणाणि एक्को वा दो वा तिण्णि वा उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो २७०

जीवसहिदाणि ट्ठाणाणि एग-दो-तिण्णिट्ठाणाणि आदिं कादूण जाव उक्कस्सेण णिरंतरं जीवसहिदट्ठाणाणि आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ताणि चेव होंति[1]। संपहि कसायपाहुडे उवजोगो णाम अत्थाहियारो। तत्थ कसाउदयट्ठाणणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि[1]। तेसु वट्टमाणकाले जत्तिया तसा संति[2] तत्तियमेत्ताणि आवुण्णाणि त्ति कसायपाहुडसुत्तेण[3] भणिदं। तदो एसो वेयणसुत्तत्थो ण घडदे? ण, सुत्तस्स जिणवयणविणिग्गयस्स अविरुद्धाइरियपरंपराए आगयस्स अप्पमाणत्तविरोहादो। कधं पुण दोण्णं सुत्ताणमविरोहो? वुच्चदे—एत्थ वेयणाए जीवसहिदाणि ट्ठाणाणि णिरंतरं जदि होंति तो आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ताणि चेव होंति त्ति भणिदं। कसायपाहुडे पुणो[4] जीवसहिदणिरंतरट्ठा[5]णपमाणपरूवणा ण कदा, किं तु वट्टमाणकाले णिरंतराणिरंतरविसेसणेण विणा जीवसहिदट्ठाणाणं पमाणपरूवणा कदा। तेण जीवसहिदट्ठाणाणि तत्थ

निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगमसे जीवोंसे सहित स्थान एक, अथवा दो, अथवा तीन, इस प्रकार उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग तक होते हैं ॥ २७० ॥

जीव सहित स्थान एक, दो व तीन स्थानोंसे लेकर उत्कृष्टसे निरन्तर जीव सहित स्थान आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र ही होते हैं।

शंका—कसायपाहुडमें उपयोग नामका अर्थाधिकार है। उसमें कषायोदयस्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं। उनमें वर्तमानकालमें जितने त्रस जीव हैं उतने मात्र पूर्ण हैं, ऐसा कसायपाहुडसूत्रके द्वारा बतलाया गया है। इसलिये यह वेदनासूत्रका अर्थ घटित नहीं होता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, जिन भगवान्‌के मुखसे निकले और अविरुद्ध आचार्यपरम्परासे आये हुए सूत्रके अप्रमाण होनेका विरोध है।

शंका—फिर इन दोनों सूत्रोंमें अविरोध कैसे होगा?

समाधान—इसका उत्तर कहते हैं। यहाँ वेदना अधिकारमें, जीव सहित स्थान निरन्तर यदि होते हैं तो आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र ही होते हैं, ऐसा कहा गया है। परन्तु कसायपाहुडमें जीव सहित निरन्तर स्थानोंके प्रमाणकी प्ररूपणा नहीं की गई है, किन्तु वहाँ वर्तमानकालमें निरन्तर व सान्तर विशेषणके बिना जीव सहित स्थानोंके प्रमाणकी प्ररूपणा की गई है। इसलिए जीव सहित स्थान वहाँ प्रतरके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं। उतने होकरके भी त्रस-

१ संपहि एवं पुच्छाविसईकयत्थस्स परूवणं कुणमाणो तत्थ ताव कसायुदयट्ठाणाणमियत्तावहारणट्ठमुवरिमं सुत्ताह—कसाउदयट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा। जयध. अ. प. ६१६.। २ ताप्रतौ 'होंति' इति पाठः। ३ तत्थ ताव वट्टमाणसमयम्मि तसजीवेहि केत्तियाणि ट्ठाणाणि आवूरिदाणि केत्तियाणि च सुण्णट्ठाणाणि त्ति एदस्स णिद्धारणट्ठमुवरिमसुत्तामोइण्णं—तेसु जत्तिया तसा तत्तियमेत्ताणि आवुण्णाणि। जयध. अ. प. ६१६.। ४ आप्रतौ 'कसायपाहुडे सुणो', ताप्रतौ 'कसायपपाहुडे सु (पु) णो' इति पाठः। ५ अ-आप्रत्योः 'णिरंतरट्ठाण' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

पदरस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि होंति । होंताणि वि तसजीवमेत्ताणि ट्ठाणाणि तस-जीवसहिदाणि वट्टमाणकाले होंति, एगेगुदयट्ठाणम्मि एगेगतसजीवे ट्ठविदे जीवसहिद-ट्ठाणाणं तसजीवमेत्ताणमुवलंभादो । एत्थ अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु जीवसमुदाहारो परूविदो । तत्थ कसायपाहुडे कसाउदयट्ठाणेसु । तदो दोण्णं[1] जीवसमुदाहाराणं एग-महियरणं णत्थि त्ति विरोहुब्भावणमजुत्तं । तम्हा[2] दोण्णं सुत्ताणं णत्थि विरोहो त्ति सिद्धं । एवं णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो समत्तो ।

सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण जीवेहि विरहिदाणि ट्ठाणाणि एक्को वा दो वा तिण्णि वा उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ॥२७१॥

जीवेहि विरहिदमेगमणुभागबंधट्ठाणं होदि । णिरंतरं दो वि होंति, तिण्णि वि होंति, एवं जाव उक्कस्सेण जीवविरहिदट्ठाणाणि णिरंतरमसंखेज्जलोगमेत्ताणि वि होंति, असंखेज्जलोगमेत्तअणुभागबंधट्ठाणेसु जदि वि लोगमेत्तट्ठाणाणि तसजीवसहगदाणि होंति तो वि जीवविरहिदट्ठाणाणं णिरंतरमसंखेज्जलोगमेत्ताणं उवलंभादो । एवं सांतर-ट्ठाणजीवपमाणाणुगमो समत्तो ।

णाणाजीवकालपमाणाणुगमेण एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्मि णाणा जीवा केवचिरं कालादो होंदि ? ॥२७२॥

जीवोंके बराबर स्थान त्रस जीवोंसे सहित वर्तमान कालमें होते हैं, क्योंकि, एक एक उदयस्थानमें एक एक त्रस जीवको स्थापित करनेपर जीवों सहित स्थान त्रस जीवोंके बराबर पाये जाते हैं । यहाँ अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंमें जीवसमुदाहार की प्ररूपणा की गई है, परन्तु वहाँ कषायपाहुडमें कषायोदयस्थानोंमें उसकी प्ररूपणा की गई है । अतः उन दोनों समुदाहारोंका एक आधार न होनेसे विरोध बतलाना अनुचित है । इस कारण उन दोनों सूत्रोंमें कोई विरोध नहीं है, यह सिद्ध है ।

इस प्रकार निरन्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम समाप्त हुआ ।

सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगमसे जीवोंसे रहित स्थान एक, अथवा दो, अथवा तीन, इस प्रकार उत्कृष्टसे असंख्यात लोक प्रमाण होते हैं ॥ २७१ ॥

जीवोंसे रहित एक अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान होता है, निरन्तर दो भी होते हैं, और तीन भी होते हैं । इस प्रकार उत्कृष्टसे जीव रहित स्थान निरन्तर असंख्यात लोक प्रमाण भी होते हैं, क्योंकि, असंख्यातलोक प्रमाण अनुभागबन्धस्थानोंमें यद्यपि लोक प्रमाण स्थान त्रस जीव सहित होते हैं तो भी जीव रहित स्थान निरन्तर असंख्यात लोक प्रमाण पाये जाते हैं । इस प्रकार सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम समाप्त हुआ ।

नानाजीवकालप्रमाणानुगमसे एक एक स्थानमें नाना जीवोंका कितना काल है ॥ २७२ ॥

---

१ आप्रतौ 'तदोण्णं', ताप्रतौ 'तं दोण्णं' इति पाठः । २ अ-आप्रत्योः 'तं जहा', ताप्रतौ 'तं जहा (तम्हा)' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एदं पुच्छासुत्तं समयावलिय-खणलव-मुहुत्त-दिवस-पक्ख-मास-उदु-अयण-संवच्छरमादिं कादूण जाव कप्पो त्ति एवं कालविसेसमवेक्खदे[1] ।

जहण्णेण एगसमओ ॥२७३॥

कुदो ? एगस्स जीवस्स एगमणुभागबंधट्ठाणमेगसमयं बंधिय बिदियसमए वड्डिदूण अण्णमणुभागट्ठाणं बंधमाणस्स जहण्णेण एगसमयकालुवलंभादो ।

उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ॥२७४॥

एगो जीवो एक्कम्मि ट्ठाणम्मि एगसमयमादिं कादूण जावुक्कस्सेण अट्ठ समया त्ति अच्छदि । जाव सो अण्णं ट्ठाणंतरं ण गच्छदि ताव अण्णेसु वि जीवेसु तत्थ आगच्छमाणेसु जीवेहि[2] अविरहिदं होदूण जेण ट्ठाणमावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तकालं अच्छदि तेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तो चेव एक्केक्कस्स ट्ठाणस्स असुण्णकालो त्ति भणिदं । एवं णाणाजीवकालपमाणाणुगमो समत्तो ।

वड्डिपरूवणदाए तत्थ इमाणि दुवे अणियोगद्दाराणि—अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा ॥२७५॥

परूवणा-पमाण-भागाभागाणियोगद्दाराणि एत्थ किण्ण परूविदाणि ? ण ताव

यह पृच्छासूत्र समय, आवली, क्षण, लव, मुहूर्त, दिवस, पक्ष, मास, ऋतु, अयन और संवत्सरसे लेकर कल्पकाल पर्यन्त इस प्रकार कालविशेषकी अपेक्षा करता है ।

जघन्य काल एक समय है २७३ ॥

कारण कि एक अनुभागबन्धस्थानको एक समय बाँधकर द्वितीय समयमें वृद्धिको प्राप्त होकर अन्य अनुभागबन्धस्थानको बाँधनेवाले एक जीवका काल जघन्यसे एक समय पाया जाता है ।

उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भाग है ॥ २७४ ॥

एक जीव एक स्थानमें एक समयसे लेकर उत्कृष्टसे आठ समय तक रहता है । जब तक वह अन्य स्थानको नहीं प्राप्त करता है तब तक अन्य जीवोंके भी वहाँ आनेपर जीवोंके विरहसे रहित होकर चूँकि एक स्थान आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण काल तक रहता है, अतएव आवलीके असंख्यातवें भागमात्र ही एक एक स्थानका अविरहकाल होता है; यह सूत्रका अभिप्राय है । इस प्रकार नानाजीवकालप्रमाणानुगम समाप्त हुआ ।

वृद्धिप्ररूपणा इस अधिकारमें ये दो अनुयोगद्वार हैं—अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा ॥ २७५ ॥

शंका—यहाँ प्ररूपणा, प्रमाण और भागाभागानुगम अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है ?

१ प्रतिषु '-मुवेक्खदे' इति पाठः । २ अप्रतौ 'जीवेसुहि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परूवणा वुच्चदे, सेसाणियोगद्दारपरूवणण्णहाणुववत्तीदो चेव अणुभागट्ठाणेसु जीवाणमत्थित्तसिद्धीदो। ण पमाणाणियोगद्दारं पि वत्तव्वं, एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमादो चेव तदवगमादो। ण भागाभागो, अप्पाबहुगादो चेव तदवगमादो। तेण अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा चेदि दो चेव एत्थ अणियोगद्दाराणि। ण वड्ढिणिबंधणसंतादिपरूवणा[1] वि जुज्जदे, एदेहि दोहि अणियोगद्दारेहिंतो चेव तदवगमादो।

अणंतरोवणिधाए जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे थोवा जीवा ॥ २७६ ॥

कुदो? अइविसोहीए वट्टमाणजीवाणं पाएण संभवाभावादो। ते च आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ता चेव, एक्केक्कट्ठाणे एगसमएण सुट्ठु जदि बहुवा जीवा होंति तो आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ता चेव होंति त्ति एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमाणियोगद्दारे परूविदत्तादो। होदु वट्टमाणकालेण एगेगट्ठाणम्मि उक्कस्सेण जीवपमाणमावलियाए असंखेज्जदिभागो, एसा अणंतरोवणिधा च अदीदकालमस्सिदूण ट्ठिदा। कुदो णव्वदे? सव्वाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु एगसमयम्मि उक्कस्सेण संचिदएगट्ठाणजीवाणं[2] बुद्धीए कयसहजोगाणं वड्ढिपरूवणत्तादो। तदो एगेगट्ठाणम्मि अणंतेहि जीवेहि होदव्वमिदि?

समाधान—प्ररूपणाके कहनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि, इसके बिना शेष अनुयोग द्वारोंकी प्ररूपणा चूँकि बनती नहीं है अतः इसीसे अनुभागस्थानोंमें जीवोंका अस्तित्व सिद्ध है। प्रमाणानुयोगद्वार भी यहाँ कहने योग्य नहीं है, क्योंकि, एकस्थानजीवप्रमाणानुगमसे ही उसका परिज्ञान हो जाता है। भागाभागानुगम अनुयोगद्वार भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, अल्पबहुत्वसे ही उसका परिज्ञान हो जाता है। इसलिये यहाँ अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा ये दो ही अनुयोगद्वार हैं। वृद्धिके कारणभूत सत् आदि अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा भी यहाँ योग्य नहीं है, क्योंकि, इन दो अनुयोगद्वारोंसे ही उनका अवगम हो जाता है।

अनन्तरोपनिधासे जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव सबसे स्तोक हैं॥२७६॥

कारण कि अतिशय विशुद्धिमें वर्तमान जीवोंकी प्रायः सम्भावना नहीं है। वे भी आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होते हैं, क्योंकि, एक एक स्थानमें एक समयमें यदि बहुत अधिक जीव होते हैं तो आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होते हैं, ऐसा एकस्थानजीवप्रमाणानुगम अनुयोगद्वारमें कहा जा चुका है।

शंका—वर्तमान कालमें एक एक स्थानमें उत्कर्षसे जीवोंका प्रमाण आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र भले ही हो और यह अनन्तरोपनिधा अतीत कालका आश्रय करके स्थित है। यह कहाँसे जाना जाता है? वह सब अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंमें बुद्धिकृत सहयोग युक्त होते हुए एक समयमें उत्कर्षसे संचित एक स्थानके जीवोंकी वृद्धिकी जो प्ररूपणा की गई है, उससे जाना जाता है। इस कारण एक एक स्थानमें अनन्त जीव होने चाहिये?

---

१ अ-प्रतौ 'संताहिपरूवणा–' इति पाठः। २ आ-ताप्रत्योः 'एगट्ठाणाणं जीवाणं' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

ण एस दोसो, बहुएण वि कालेण वत्तिसरूवेणेव सत्तीणं वड्ढि-हाणीए अभावादो। ण चोदंचणे[1] समुद्दे वि पक्खित्ते बहुगं जलमत्थि त्ति सगप्पमाणादो वड्ढिमं पाणियं माइ। एवमदीदे वि काले वट्टमाणे इव एक्केक्कम्हि अणुभागबंधट्ठाणे उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ता चेव जीवा होंति त्ति। एगेगट्ठाणमहिट्ठियसव्वजीवे बुद्धीए मेलाविय तेसिमणंताणमणंतरोवणिधा किण्ण वुच्चदे? ण, एवं संते हेट्ठिमचदुसमयपाओग्गट्ठाणजीवेहिंतो जवमज्झादो उवरिमविसमयपाओग्गसव्वट्ठाणजीवाणमसंखेज्जगुणत्तप्पसंगादो। ण च एवं, बिसमयपाओग्गसव्वट्ठाणजीवा असंखेज्जगुणा त्ति उवरि भण्णमाणत्तादो। तदो एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्मि जीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ता चेव उक्कस्सेण होंति त्ति घेत्तव्वं।

विदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा विसेसाहिया ॥२७७॥

जहण्णट्ठाणादो असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि उवरि गंतूण जं ट्ठाणं ट्ठिदं तं विदियमणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणमिदि घेत्तव्वं। असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि उवरि चडिदूण ट्ठिदट्ठाणस्स कधं विदियत्तं? ण, वड्ढिमस्सिदूण परूवणाए कीरमाणाए अण्णस्स विदिय-

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि बहुतकालमें भी व्यक्ति स्वरूपसे ही शक्तियोंकी हानि-वृद्धिका अभाव है। उदञ्चनको समुद्रमें भी (ऊँचे उठे हुए समुद्रमें भी) फेंकनेपर बहुत जल है इसलिए उसमें अपने प्रमाणसे अधिक पानी समा सकेगा ऐसा नहीं है। कारण कि उदञ्चन (मिट्टीके पात्र विशेष) को समुद्रमें भी रखनेपर चूँकि वहाँ बहुत जल भरा हुआ है, अतः उसमें उदञ्चनमें अपने प्रमाणसे अधिक जल समा जावेगा; यह सम्भव नहीं है। इसी प्रकारसे अतीतकालमें वर्तमान कालके समान एक एक अनुभागस्थानमें उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही जीव होते हैं।

शंका—एक एक स्थानको प्राप्त सब जीवोंको बुद्धिसे मिलाकर उन अनन्तानन्त जीवोंकी अनन्तरोपनिधा क्यों नहीं कही जाती है?

समाधान—नहीं, क्योंकि ऐसा होनेपर अधस्तन चार समय योग्य स्थानोंके जीवोंकी अपेक्षा यवमध्यसे ऊपरके दो समय योग्य सब स्थानोंके जीवोंके असंख्यातगुणे होनेका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, दो समय योग्य सब स्थानोंके जीव असंख्यातगुणे हैं, ऐसा आगे कहा जानेवाला है। इस कारण एक एक स्थानमें जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होते हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

उनसे द्वितीय अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव विशेष अधिक हैं ॥ २७७ ॥

जघन्य स्थानसे आगे असंख्यातलोक मात्र स्थान जाकर जो स्थान स्थित है वह द्वितीय अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये :

शंका—असंख्यातलोक प्रमाण स्थान आगे जाकर स्थित स्थान द्वितीय कैसे हो सकता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, वृद्धिका आश्रय करके प्ररूपणाके करनेपर अन्य द्वितीय स्थान

१ अ-आप्रत्योः 'ण चेदंचणे' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

स्सासंभवादो। ण च वड्डीए परूवमाणाए वड्डिविरहिदं ट्ठाणं विदियं होदि, अणवत्था-पसंगादो। असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि जीवाधारत्तणेण जहण्णट्ठाणेण समाणाणि त्ति कधं णव्वदे? ण, अण्णहा जवमज्झादो हेट्ठा उवरिं च असंखेज्जलोगमेत्तदुगुणवड्डि-हाणिप्प-संगा। ण च एवं, णाणाजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्डिहाणिट्ठाणंतराणि आवलियाए असंखेज्जदिभागो त्ति उवरि परंपरोवणिधाए भण्णमाणत्तादो। किं च ण णिरंतरं सव्वट्ठाणेसु जीववड्डी होदि, जवमज्झम्मि आवलियाए असंखेज्जदिभागं मोत्तूण असंखेज्जलोगमेत्तजीवप्पसंगादो। केत्तियमेत्तेण विसेसाहिया[1]? एगजीवमेत्तेण। जहण्ण-ट्ठाणजीवे विरलेदूण तेसु चेव विरलणरूवं पडि समखंडं कादूण दिण्णेसु तत्थ एगखंड-मेत्तेण विसेसाहिया त्ति भणिदं होदि।

तदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा विसेसाहिया ॥ २७८ ॥

एत्थ वि पुव्वं व अवट्ठिदमसंखेज्जलोगमेत्तद्धाणं गंतूण विदियो जीवो वड्ढदि। हेट्ठिम-सव्वट्ठाणाणि जीवेहि जहण्णट्ठाणजीवेहिंतो एगजीवाहियट्ठाणेण समाणाणि। कुदो? साभावियादो।

सम्भव नहीं है। वृद्धिकी प्ररूपणा करनेपर वृद्धिसे रहित स्थान दूसरा होता नहीं है, क्योंकि, वैसा होनेपर अनवस्थाका प्रसंग आता है।

शंका—असंख्यात लोकप्रमाण स्थान जीवाधार स्वरूपसे जघन्य स्थानके समान है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, इसके विना यवमध्यसे नीचे व ऊपर असंख्यात लोकप्रमाण दुगुणवृद्धि-हानिस्थानोंके होनेका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, नानाजीवोंसम्बन्धी अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके द्विगुणवृद्धि-हानिस्थानान्तर आवलीके असंख्यातवें भाग हैं; ऐसा आगे परम्परोपनिधामें कहा जानेवाला है। दूसरे, सब स्थानोंमें निरन्तर जीववृद्धि होती हो, ऐसा भी नहीं है, क्योंकि, यवमध्यमें आवलीके असंख्यातवें भागको छोड़कर असंख्यात लोकमात्र जीवोंका प्रसंग आता है।

शंका—कितने प्रमाणसे वे विशेष अधिक हैं?

समाधान—एक जीव मात्रसे वे विशेष अधिक हैं। जघन्य स्थानके जीवोंका विरलनकर उनको ही विरलन अंकके प्रति समखण्ड करके देनेपर उनमें एक खण्ड मात्रसे वे विशेष अधिक हैं, यह अभिप्राय है।

उनसे तृतीय अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव विशेष अधिक हैं ॥ २७८ ॥

यहाँपर भी पहिलेके समान अवस्थित असंख्यात लोकमात्र अध्वान जाकर द्वितीय जीव बढ़ता है। अधस्तन सब स्थान जीवोंकी अपेक्षा जघन्य स्थानके जीवोंसे एक जीव अधिक स्थानके समान हैं, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है।

---

१ अ-आप्रत्योः 'विसेसाहियाए', ताप्रतौ 'विसेसाहिया [ए]' इति पाठः।

छ. १२-३२.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं विसेसाहिया विसेसाहिया जाव जवमज्झं ॥ २७६ ॥

एदेण कमेण असंखेज्जलोगमेत्तद्धाणं गंतूण एगेगं जीवं वड्ढाविय णेदव्वं जाव जवमज्झं ति। सव्वत्थ एगेगो चेव जीवो वड्ढदि त्ति कधं णव्वदे ? सुत्ताविरुद्धाइरियोवदेसादो। जेण गुणहाणिं पडि पक्खेवभागहारो दुगुणदुगुणक्कमेण जाव जवमज्झं ताव गच्छदि तेण पक्खेवो अवट्ठिदो एगजीवमेत्तो चेव होदि त्ति आइरिया भणंति। एदमाइरियवयणं पमाणं कादूण एगजीवो वड्ढदि त्ति सद्दहेदव्वं।

संपहि अणंतरोवणिधाए भावत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—जहण्णट्ठाणजीवपमाणं विरलेदूण तेसु चेव जीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगजीवपमाणं पावदि। पुणो एत्थ एगजीवं घेत्तूण जहण्णए ट्ठाणे जीवा थोवा। विदिए जीवा तत्तिया चेव। एवमसंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणेसु जीवा तत्तिया चेव होंति। तदो उवरिमाणंतरट्ठाणे एगो जीवो पक्खिविदव्वो। पुणो वि असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणेसु जीवा तत्तिया चेव। तदो विरलणाए विदियरूवधरिदजीवो तदणंतरउवरिमट्ठाणजीवेसु पक्खिविदव्वो। तदो एदस्स ट्ठाणस्स जीवेहि समाणाणि होदूण असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि गच्छंति। तदो अणंतरउवरिमट्ठाणे तदियो जीवो वड्ढावेदव्वो। एवमणेण विहाणेण पुव्वुत्तद्धाणं धुवं कादूण एगेगजीवं वड्ढाविय णेयव्वं जाव जहण्णट्ठाणजीवेहिंतो दुगुणजीवा त्ति। पढम-

....

इस प्रकार यवमध्य तक जीव विशेष अधिक विशेष अधिक हैं ॥ २७९ ॥

इस क्रमसे असंख्यातलोक मात्र अध्वान जाकर एक एक जीव बढ़ाकर यवमध्य तक ले जाना चाहिये।

शंका—सर्वत्र एक एक ही जीव बढ़ता है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—यह आचार्यके सूत्रविरोधसे रहित उपदेशसे जाना जाता है। चूँकि प्रत्येक गुणहानिमें यवमध्य तक प्रक्षेपभागहार दुगुणे दुगुणे क्रमसे जाता है, इसलिये प्रक्षेप अवस्थित होता हुआ एक जीव प्रमाण ही होता है; ऐसा आचार्य कहते हैं। आचार्योंके इस वचनको प्रमाण करके एक जीव बढ़ता है, ऐसा श्रद्धान करना चाहिये।

अब अनन्तरोपनिधाके भावार्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—जघन्य स्थानके जीवोंके प्रमाणका विरलनकर उन्हीं जीवोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है। पुनः यहाँ एक जीवको ग्रहणकर जघन्य स्थानमें जीव स्तोक हैं। द्वितीय स्थानमें जीव उतने ही हैं। इस प्रकार असंख्यातलोक मात्र स्थानोंमें जीव उतने मात्र ही होते हैं। उनसे आगेके अनन्तर स्थानमें एक जीवका प्रक्षेप करना चाहिये। फिर भी असंख्यात लोक मात्र स्थानोंमें जीव उतने मात्र ही होते हैं। तत्पश्चात् विरलन राशिके द्वितीय अंकके प्रति प्राप्त एक जीवका तदनन्तर आगेके स्थान सम्बन्धी जीवोंमें प्रक्षेप करना चाहिये। फिर इस स्थानके जीवोंसे समान होकर असंख्यातलोक मात्र स्थान जाते हैं। तत्पश्चात् अनन्तर आगेके स्थानमें तृतीय जीवको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार इस विधिसे पूर्वोक्त अध्वानको ध्रुव करके एक एक जीवको बढ़ाकर जघन्य स्थानके जीवोंसे दूने जीवोंके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुगुणवड्डीए एगेगजीववड्डिदद्धाणं सरिसमिदि कधं णव्वदे ? गुरूवदेसादो। आइरियोवदेसो किण्ण चप्पलओ[1] ? गंगाणईए पवाहो व्व अविच्छेदेण आइरियपरंपराए आगदस्स अप्पमाणत्तविरोहादो। पुणो पुव्विल्लभागहारादो दुगुणं भागहारं विरलिय दुगुणवड्डिजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु रूवं पडि एगेगजीवपमाणं पावदि। पुणो एत्थ एगजीवं घेत्तूण असंखेज्जलोगमेत्तेसु जोवेहि[2] दुगुणवड्डिजीवसमाणेसु[3] ट्ठाणेसु गदेसु तदो उवरिमट्ठाणे पक्खित्ते तदित्थजीवपमाणं होदि। णवरि पढमदुगुणवड्डीए[4] एगजीववड्डिदअद्धाणस्स अद्धं गंतूण विदियदुगुणवड्डीए एगो जीवो वड्डदि। पुणो एत्तियं चेव अद्धाणं गंतूण विदियो जीवो वड्डदि। एवमणेण विहाणेण णेयव्वं जाव विरलणमेत्तजीवा पइट्ठा त्ति। ताधे चउग्गुणवड्डी होदि। विदियदुगुणवड्डिअद्धाणं पढमदुगुणवड्डिअद्धाणेण सरिसं। कुदो ? पढमदुगुणवड्डीए[5] एगजीववड्डिदद्धाणस्स दुभागमवड्डिदं सरिसं गंतूण विदियदुगुणवड्डीए एगेगजीववड्डिसमुवलंभादो।

पुणो चदुग्गुण-पढमदुगुणवड्डिभागहारं विरलेदूण चदुग्गुणवड्डिजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु रूवं पडि एगेगजीवपमाणं पावदि। पुणो चदुग्गुणवड्डिजीवा आवलियाए

शंका—प्रथम दुगुणवृद्धिमें एक एक जीवकी वृद्धिको प्राप्त अध्वान सदृश है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान – वह गुरुके उपदेशसे जाना जाता है।

शंका—आचार्यका उपदेश मिथ्या क्यों नहीं हो सकता है ?

समाधान—गंगानदीके प्रवाहके समान विच्छेदसे रहित होकर आचार्यपरम्परासे आये हुए उपदेशके अप्रमाण होनेका विरोध है।

पश्चात् पूर्व भागहारसे दुगुणे भागहारका विरलनकर दुगुणवृद्धियुक्त जीवोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है। पुनः यहाँ एक जीवको ग्रहण कर जीवोंसे अर्थात् जीवप्रमाणकी अपेक्षा दुगुणवृद्धि युक्त जीवोंके समान असंख्यातलोक मात्र स्थानोंके बीत जानेपर उससे आगेके स्थानमें उसे मिलानेपर वहाँके जीवोंका प्रमाण होता है। विशेष इतना है कि प्रथम दुगुणवृद्धिमें गुणहानिमें एक जीवकी वृद्धि युक्त अध्वानका अर्ध भाग जाकर द्वितीय दुगुणवृद्धिमें एक जीव बढ़ता है। फिर इतना ही अध्वान जाकर द्वितीय जीव बढ़ता है। इस प्रकार इस विधिसे विरलन राशि प्रमाण जीवोंके प्रविष्ट होने तक ले जाना चाहिये। उस समय चतुगुणी वृद्धि होती है। द्वितीय दुगुणवृद्धिका अध्वान प्रथम दुगुणवृद्धिके अध्वानके सदृश है, क्योंकि, प्रथम दुगुणवृद्धिमें एक जीवकी वृद्धि युक्त अध्वानका अर्ध भाग समानरूपसे अवस्थित जाकर द्वितीय दुगुणवृद्धिमें एक जीवकी वृद्धि पायी जाती है।

पुनः प्रथम दुगुणवृद्धिके भागहारसे चौगुणे भागहारका विरलन करके चौगुणी वृद्धि युक्त जीवोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता

१ प्रतिषु 'चप्फलओ' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'मेत्तेसु जीवेसु जीवेहि' इति पाठः। ३ अ-आप्रत्योः 'समासेसु' इति पाठः। ४ प्रतिषु 'पढमगुणहाणीए' इति पाठः। ५ ताप्रतौ 'पढमगुणवड्डीए' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जदिभागमेत्ता । तदणंतरउवरिमविदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । तदिए वि ट्ठाणे तत्तिया चेव । एवमसंखेज्जलोगमेत्तचदुग्गुणवड्ढिट्ठाणेसु गदेसु हेट्ठिमविरलणाए एगजीवं घेत्तूण तं तदित्थट्ठाणजीवेसु पक्खित्ते उवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि । णवरि पढमदुगुणवड्ढीए एगजीववड्ढिअद्धाणस्स चदुब्भागे एत्थ एगेगो जीवो वड्ढदि । पुणो विदियचदुब्भागमेत्तद्धाणं जीवेहि अवट्ठिदं गंतूण विदियो जीवो अधियो होदि । तदियचदुब्भागमेत्तद्धाणं जीवेहि अवट्ठिदं गंतूण तदियो जीवो अधियो होदि । पुणो चउत्थचदुब्भागमेत्तद्धाणं जीवेहि अवट्ठिदं गंतूण चउत्थो जीवो अधियो होदि । एवमवट्ठिदं चउत्थभागद्धाणं गंतूण एगेगजीवो वड्ढावेदव्वो जाव विरलणमेत्ता जीवा पविट्ठा त्ति । ताधे अट्ठगुणवड्ढिट्ठाणं होदि ।

पुणो पढमदुगुणवड्ढिभागहारअट्ठगुणं विरलिय अट्ठगुणवड्ढिजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु रूवं पडि एगेगजीवपमाणं पावदि । पुणो चउत्थदुगुणवड्ढीए जहण्णट्ठाणे जीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागो । विदिए ट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । एवं तत्तिया तत्तिया चेव जीवा होदूण गच्छंति जाव असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणे त्ति । तदो हेट्ठिमविरलणाए एगजीवं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु पक्खित्ते तदणंतरउवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि । णवरि पढमदुगुणवड्ढीए एगजीववड्ढिअद्धाणादो एदिस्से दुगुण-

---

है । पुनः चौगुणी वृद्धियुक्त जीव आवालीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । तदनन्तर आगेके द्वितीय अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव उतने ही हैं । तृतीय स्थानमें भी उतने ही जीव हैं । इस प्रकार असंख्यात लोक प्रमाण चौगुणी वृद्धि युक्त स्थानोंके वीतनेपर अधस्तन विरलनके एक जीवको ग्रहण कर उसे वहाँके स्थानोंके जीवोंमें मिलानेपर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है । विशेष इतना है कि प्रथम दुगुण वृद्धिमें एक जीववृद्धि युक्त अध्वानके चतुर्थ भागमें यहाँ एक जीव बढ़ता है । पुनः द्वितीय चतुर्थ भाग प्रमाण अध्वान जीवोंसे अवस्थित जाकर द्वितीय जीव अधिक होता है । तृतीय चतुर्थ भाग प्रमाण अध्वान जीवोंसे अवस्थित जाकर तृतीय जीव अधिक होता है । फिर चतुर्थ चतुर्थ भाग प्रमाण अध्वान जीवोंसे अवस्थित जाकर चतुर्थ जीव अधिक होता है । इस प्रकार अवस्थित चतुर्थ भाग प्रमाण अध्वान जाकर एक एक जीवको बढ़ाना चाहिये जब तक कि विरलन मात्र जीव प्रविष्ट होते हैं । तब अठगुणी वृद्धिका स्थान होता है ।

पश्चात् प्रथम दुगुणवृद्धिके भागहारसे अठगुने भागहारका विरलन कर अठगुणी वृद्धि युक्त जीवोंको समखण्ड करके देनेपर प्रत्येक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है । पुनः चतुर्थ दुगुणवृद्धिके जघन्य स्थानमें जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । द्वितीय स्थानमें जीव उतने ही हैं । इस प्रकार उतने उतने ही जीव होकर असंख्यात लोक प्रमाण स्थानों तक जाते हैं । तत्पश्चात् अधस्तन विरलनके एक जीवको ग्रहण कर उसे वहाँके स्थानके जीवोंमें मिलानेपर तदनन्तर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण प्राप्त होता है । विशेष इतना है कि एक जीवकी वृद्धि युक्त अध्वानसे इस दुगुणवृद्धिका एक जीवकी वृद्धि युक्त अध्वान आठवें भाग प्रमाण होता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वड्ढीए एगजीववड्ढिअद्धाणमट्ठमभागो होदि । पुणो विदिय[1]अट्ठमभागमेत्तद्धाणं गंतूण विदियो जीवो अधियो होदि । पुणो तदियअट्ठमभागमेत्तद्धाणं गंतूण तदियो जीवो अधियो होदि । चउत्थमट्ठमभागं गंतूण चउत्थो जीवो अधिओ होदि । पंचममट्ठमभागं गंतूण पंचमो जीवो अधिओ होदि । छट्ठमट्ठमभागं गंतूण छट्ठो जीवो अहिओ होदि । सत्तममट्ठमभागं गंतूण सत्तमो जीवो अहिओ होदि । अट्ठममट्ठमभागं गंतूण अट्ठमो जीवो अधिओ होदि । अणेण भागेण अट्ठमभागं धुवं कादूण विरलणमेत्त-जीवेसु परिवाडीए पविट्ठेसु सोलसगुणवड्ढिट्ठाणं होदि । एदं दुगुणवड्ढिअद्धाणं पढमदुगुण-वड्ढिअद्धाणेण समाणं, तत्थ एगजीववड्ढिअद्धाणस्स अट्ठमभागे एदिस्से गुणहाणीए एग-जीववड्ढिदंसणादो ।

पुणो पढमदुगुणवड्ढिअद्धाणं सोलसगुणं विरलेदूण सोलसगुणवड्ढिजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगजीवपमाणं पावदि । तदो पंचमदुगुणवड्ढिपढमा-णुभागबंधज्झवसाणट्ठाणजीवा[2] आवलियाए असंखेज्जदिभागो । विदिए ट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । एवं णेयव्वं जाव असंखेज्जलोगमेत्तट्ठाणाणि त्ति । तदो हेट्ठिमविरलणाए एगजीवं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु पक्खित्ते तदणंतरउवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि । णवरि पढमदुगुणवड्ढीए एगजीववड्ढिअद्धाणस्स सोलसभागे एदिस्से गुणहाणीए एगो जीवो वड्ढदि त्ति घेत्तव्वं । पुणो विदियं सोलसभागं गंतूण विदियो जीवो अहियो होदि ।

है । पश्चात् द्वितीय अष्टम भाग प्रमाण अध्वान जाकर द्वितीय जीव अधिक होता है । पुनः तृतीय अष्टम भाग प्रमाण अध्वान जाकर तृतीय जीव अधिक होता है । चतुर्थ अष्टम भाग जाकर चतुर्थ जीव अधिक होता है । पंचम अष्टम भाग जाकर पाँचवाँ जीव अधिक होता है । छठा अष्टम भाग जाकर छठा जीव अधिक होता है । सातवाँ अष्टम भाग जाकर सातवाँ जीव अधिक होता है । आठवाँ अष्टम भाग जाकर आठवाँ जीव अधिक होता है । इस भागसे अष्टम भागको ध्रुव करके विरलन राशि प्रमाण जीवोंके परिपाटीसे प्रविष्ट होनेपर सोलहगुणी वृद्धिका स्थान होता है । यह दुगुणवृद्धिअध्वान प्रथम दुगुणवृद्धिअध्वानके समान है, क्योंकि, वहाँ एक जीववृद्धिअध्वानके आठवें भागमें इस गुणहानिमें एक जीवकी वृद्धि देखी जाती है

पुनः प्रथम दुगुणवृद्धिके अध्वानको सोलहगुणा विरलन कर सोलहगुणी वृद्धि युक्त जीवोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है । पश्चात् पांचवीं दुगुणवृद्धिके प्रथम अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानके जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । द्वितीय स्थानमें जीव उतने ही हैं । इस प्रकार असंख्यात लोक मात्र स्थानों तक ले जाना चाहिये । तत्पश्चात् अधस्तन विरलनके एक जीवको ग्रहण कर उसे वहाँके स्थानके जीवोंमें मिलाने-पर तदनन्तर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है । विशेष इतना है कि प्रथम दुगुणवृद्धि सम्बन्धी एक जीववृद्धिअध्वानके सोलहवें भागमें इस गुणहानिका एक जीव बढ़ता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये । फिर द्वितीय सोलहवाँ भाग जाकर द्वितीय जीव अधिक होता है । इस प्रकार

१ प्रतिषु 'पुणो वि अट्ठ' इति पाठः । २ अप्रतौ 'ट्ठाणाणि जीवा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवमेदं सोलसभागं धुवं कादूण एगेगजीवं[1] वड्ढाविय णेयव्वं जाव हेट्ठिमविरलणमेत्त-जीवा पविट्ठा त्ति । ताधे बत्तीसगुणवड्ढी होदि । तदो एदं बीजपदेणाणेणावहारिय उवरि णेयव्वं जाव दुरूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तदुगुणवड्ढीयो उवरि चडिदाओ त्ति ।

पुणो पढमदुगुणवड्ढिभागहारं जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स चदुब्भागेण गुणिय विरलेदूण एदाए दुगुणवड्ढीए समखंडं कादूण दिण्णाए एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगजीवपमाणं पावदि । तदो जवमज्झस्स हेट्ठिमदुगुणवड्ढिट्ठाणे जीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागो । विदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । तदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । एवं णेयव्वं जाव पढमदुगुणवड्ढीए एगजीवदुगुणवड्ढिदद्धाणं जहण्ण-परित्तासंखेज्जयस्स चदुब्भागेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तद्धाणमेदिस्से गुणहाणीए गदं ति । ताधे हेट्ठिमविरलणाए एगरूवधरिदे जीवो पक्खिविदव्वो । पक्खित्ते उवरिमट्ठाण-जीवपमाणं होदि । पुणो एदेणेव जीवपमाणेण अवट्ठिदाणि होदूण पुव्विल्लद्धाणमेत्ताणि चेव ट्ठाणाणि गच्छंति । तदो हेट्ठिमविरलणाए एगरूवधरिदेगजीवे तदित्थट्ठाणजीवेसु आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तजीवेसु पक्खित्ते उवरिमतदणंतरट्ठाणजीवपमाणं होदि । एवमवट्ठिदमद्धाणं गंतूण एगेगजीवं वड्ढिय णेयव्वं जाव हेट्ठिमविरलणमेत्तसव्वे जीवा पविट्ठा त्ति । ताधे जवमज्झजीवपमाणं होदि । जहण्णट्ठाणजीवेसु जहण्णपरित्तासंखेज्ज-

इस सोलहवें भागको ध्रुव करके अधस्तन विरलन राशिप्रमाण जीवोंके प्रविष्ट होने तक एक एक जीवको बढ़ाकर ले जाना चाहिये । तब बत्तीसगुणी वृद्धि होती है । पश्चात् इस बीजपदसे इसका निश्चय कर दो अंकोंसे कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्द्धच्छेदों प्रमाण दुगुणवृद्धियाँ आगे जाने तक ले जाना चाहिये ।

पुनः प्रथम दुगुणवृद्धिके भागहारको जघन्य परीतासंख्यातके चतुर्थ भागसे गुणित करके विरलित कर इस दुगुणवृद्धिको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है । तब यवमध्यके अधस्तन दुगुणवृद्धिस्थानमें जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । द्वितीय अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव उतने ही हैं । तृतीय अनुभागबन्धाध्यवसा-नस्थानमें जीव उतने ही है । इस प्रकारसे प्रथम दुगुणवृद्धिमें एकजीवदुगुणवृद्धि युक्त अध्वानको जघन्य परीतासंख्यातके चतुर्थ भागसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड प्रमाण अध्वान इस गुणहानिका जाने तक ले जाना चाहिये । तब अधस्तन विरलन राशिके एक जीवका प्रक्षेप करना चाहिये । उसका प्रक्षेप करनेपर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है । पश्चात् इसी जीवप्रमाणसे अवस्थित होकर पूर्वोक्त अध्वान प्रमाण ही स्थान व्यतीत होते हैं । तब अधस्तन विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त एक जीवको वहाँ के स्थानके आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोंमें मिलानेपर आगके तदनन्तर स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है । इस प्रकारसे अवस्थित अध्वान जाकर एक एक जीवको बढ़ाकर अधस्तन विरलनराशि प्रमाण सब जीवोंके प्रविष्ट होनेतक ले जाना चाहिये । तब यवमध्यके जीवोंका प्रमाण होता है । जघन्य स्थानके जीवोंको जघन्य परीतासंख्यातके अर्ध भागसे गुणित करनेपर

१ अ-आप्रत्योः 'कादूण ण एगेग' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

यस्स दुभागेण गुणिदेसु जवमज्झजीवा होंति । जवमज्झादो हेट्ठिमदुगुणहाणीओ जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयमेत्ताओ होंति त्ति वुत्तं होदि । जवमज्झादो हेट्ठिमदुगुणवड्ढीयो जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयमेत्तीयो त्ति कधं णव्वदे ? जुत्तीदो। का सा जुत्ती ? उवरि भणिस्सामो ।

तेण परं विसेसहीणा ॥ २८० ॥

तेण जवमज्झेण परमुवरि जीवा विसेसहीणा होदूण गच्छंति । कुदो ? साभावियादो तिव्वसंकिलेसेण जीवाणं पाएण संभवाभावादो वा ।

एवं विसेसहीणा विसेसहीणा जाव उक्कस्सअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति ॥ २८१ ॥

एवं विसेसहीणा विसेसहीणा त्ति [1]विच्छाणिद्देसो । तेण जवमज्झादो उवरि सव्वट्ठाणाणि अणंतरोवणिधाए जीवेहि विसेसहीणाणि त्ति दट्ठव्वं । एदस्स भावत्थो वुच्चदे । तं जहा—पढमदुगुणवड्डिभागहारं जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स दुभागेण गुणिय विरलेदूण जवमज्झजीवेसु समखंडं कादूण दिण्णेसु एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगजीवपमाणं पावदि ।

यवमध्यके जीव होते हैं। अभिप्राय यह है कि यवमध्यसे नीचेकी दुगुणहानियाँ जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंके बराबर होती हैं।

शंका—यवमध्यसे नीचेकी दुगुणवृद्धियाँ जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंके बराबर हैं, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है।

समाधान—वह युक्तिसे जाना जाता है।

शंका—वह युक्ति कौनसी है ?

समाधान—उस युक्तिको आगे कहेंगे।

इसके आगे जीव विशेष हीन हैं ॥ २८० ॥

उससे अर्थात् यवमध्यसे आगे जीव विशेष हीन होकर जाते हैं, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है, अथवा तीव्र संक्लेशसे युक्त जीवोंकी प्रायः सम्भावना नहीं है।

इस प्रकार उत्कृष्ट अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान तक जीव विशेषहीन विशेषहीन होकर जाते हैं ॥ २८१ ॥

इस प्रकार विशेषहीन विशेषहीन, यह वीप्सा निर्देश है। इसलिये यवमध्यसे आगे सब स्थान अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा जीवोंसे विशेष हीन हैं, ऐसा समझना चाहिये। इसका भावार्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—प्रथम दुगुणवृद्धिके भागहारको जघन्य परीतासंख्यातके अर्धभागसे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उसका विरलन करके यवमध्यके जीवोंको समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति एक एक जीवका प्रमाण प्राप्त होता है। इसलिये इसको इसी प्रकारसे स्थापित

१ अ-आप्रत्योः 'मिछा', ताप्रतौ 'मि (इ) च्छा' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तदो एदमेवं चेव हविय परूवणा कीरदे। तं जहा—जवमज्झजीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागा। विदियट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव। एवं तत्तिया तत्तिया चेव होदूण ताव गच्छंति जाव पढमदुगुणवड्ढिअद्धाणम्मि एगजीवपविट्ठट्ठाणं[1] जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स चदुब्भागेण खंडिदएगखंडमेत्तद्धाणं गदं ति। ताधे हेट्ठिमविरलणाए एगरूवधरिदं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु अवणिदे तदुवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि।

पुणो विदियखंडमेत्ताणि ट्ठाणाणि जीवेहि सरिसाणि होदूण गच्छंति तदो हेट्ठिमविरलणाए विदियरूवधरिदएगजीवं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु अवणिदे तदणंतरउवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि। पुणो तेण ट्ठाणेण जीवेहि सरिसाणि तदियखंडमेत्ताणि ट्ठाणाणि गंतूण तदियो जीवो परिहायदि। एवमेगेगखंडमेत्तद्धाणं गंतूण एगेगजीवपरिहाणिं करिय णेयव्वं जाव हेट्ठिमविरलणाए अद्धमेत्तजीवा परिहीणा त्ति। तदित्थट्ठाणाणं[2] जीवा जवमज्झजीवेहिंतो दुगुणहीणा, हेट्ठिमविरलणमेत्तजीवेसु समुदिदेसु जवमज्झजीवुप्पत्तीदो। पुणो दुगुणहाणीए जीवा आवलियाए असंखेज्जदिभागो। विदिए अणुभागट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव। तदिए अणुभागट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव। एवं तत्तिया तत्तिया चेव जीवा होदूण ताव गच्छंति जाव जवमज्झगुणहाणिम्हि एगजीवपरिहीणट्ठाणादो दुगुणमेत्तद्धाणं

करके प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—यवमध्यके जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। द्वितीयस्थानमें जीव उतने ही हैं। इस प्रकारसे उतने उतने ही होकर प्रथम दुगुणवृद्धिके अध्वानमें से एक जीव प्रविष्ट स्थान [अध्वान] को जघन्य परीतासंख्यातके चतुर्थ भागसे खण्डित करने पर एक खण्ड प्रमाण अध्वानके वीतने तक जाते हैं। तब अधस्तन विरलनके एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको ग्रहण करके उसे वहांके स्थानके जीवोंमेंसे कम करने पर उससे आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है।

पश्चात् द्वितीय खण्ड प्रमाण स्थान जीवोंसे (जीवप्रमाणसे) सदृश होकर जाते हैं। फिर अधस्तन विरलनके द्वितीय अंकके प्रति प्राप्त एक जीवको ग्रहण कर उसे वहांके स्थानसम्बन्धी जीवोंमेंसे कम करनेपर तदनन्तर अग्रिम स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है। पश्चात् जीवोंकी अपेक्षा उस स्थानके सदृश तृतीय खण्ड प्रमाण स्थानोंके वीतनेपर तृतीय जीवकी हानि होती है। इस प्रकारसे एक एक खण्ड प्रमाण अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानिको करके अधस्तन विरलनके आधे मात्र जीवोंकी हानि होने तक ले जाना चाहिये। वहांके स्थानोंसम्बन्धी जीव यवमध्यके जीवोंकी अपेक्षा दुगुणे हीन होते हैं, क्योंकि, अधस्तन विरलन प्रमाण जीवोंके समुदित होनेपर यवमध्य जीव उत्पन्न होते हैं। पुनः दुगुणहानिके जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं। द्वितीय अनुभागस्थानमें जीव उतने ही होते हैं। तृतीय अनुभागस्थानमें जीव उतने ही होते हैं। इस प्रकार उतने उतने ही होकर यवमध्य गुणहानिमेंसे एक जीवकी हानि युक्त स्थानसे दूना मात्र अध्वान वीतने तक जाते हैं। तब अधस्तन विरलन राशिके अर्ध भाग

१ अप्रतौ 'पविट्ठाणं' इति पाठः। २ अप्रत्योः 'तदित्थट्ठाणाणि' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

गदं ति । ताधे हेट्ठिमविरलणाए अट्ठमेत्तरूवाणमेगरूवधरिदेगजीवं घेत्तूण तदित्थट्ठाण-जीवेसु अवणिदे तदणंतरउवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि ।

किमट्ठं जवमज्झादो उवरिमगुणहाणीसु गुणहाणिं पडि दुगुण-दुगुणमद्धाणं गंतूण एगेग-जीवपरिहाणी कीरदे ? जवमज्झहेट्ठिमगुणहाणीणं च उवरिमगुणहाणीणं पि सरिसत्तपदु-प्पायणट्ठं । पुणो एत्तियं चेव अद्धाणं गंतूण विदियजीवो परिहायदि । एवमेदमद्धाणं धुवं कादूण एगजीवपरिहाणिं करिय ताव णेयव्वं जाव हेट्ठिमविरलणाए चदुब्भागमेत्तजीवा परिहीणा त्ति । ताधे तदित्थट्ठाणजीवा जवमज्झजीवाणं चदुब्भागमेत्ता । ते च आवलि-याए असंखेज्जदिभागो । तदुवरिमट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । तदियट्ठाणे जीवा तत्तिया चेव । एवं सरिसा होदूण ताव गच्छंति जाव विदियगुणहाणीए एगरूवपरिहाणिट्ठाणादो दुगुणमद्धाणं गदं ति । ताधे हेट्ठिमविरलणाए चदुब्भागमेत्तरूवाणमेगरूवधरिदेगजीवं घेत्तूण तदित्थट्ठाणजीवेसु अवणिदे[1] उवरिमट्ठाणजीवपमाणं होदि । तत्थ जीवा आव-लियाए असंखेज्जदिभागो ।

तदो अवट्ठिदसरूवेण पुव्विल्लमद्धाणं गंतूण विदियजीवो परिहायदि । एवमवट्ठि-दमद्धाणं गंतूण एगेगजीवपरिहाणिं करिय ताव णेदव्वं जाव हेट्ठिमविरलणाए अट्ठमभा-

प्रमाण अंकोंमेंसे एक अंकके प्रति प्राप्त एक जीवको ग्रहण करके उसे वहांके स्थानसम्बन्धी जीवों-मेंसे कम कर देनेपर तदनन्तर आगेके स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है ।

शंका—यवमध्यसे ऊपरकी गुणहानियोंमेंसे प्रत्येक गुणहानिमें दूना दूना अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानि किसलिये की जाती है ?

समाधान—यवमध्यसे नीचेकी गुणहानियों और ऊपरकी गुणहानियोंकी भी सदृशता बतलानेके लिये एक एक जीवकी हानि की जाती है ।

फिर इतना ही अध्वान जाकर द्वितीय जीवकी हानि होती है । इस प्रकारसे इस अध्वानको ध्रुव करके एक जीवकी हानि कर अधस्तन विरलन राशिके चतुर्थ भाग प्रमाण जीवोंकी हानि होने तक ले जाना चाहिये । उस समय वहांके स्थान सम्बन्धी जीव यवमध्य जीवोंके चतुर्थ भाग प्रमाण होते हैं और वे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं । उससे ऊपरके स्थानमें जीव उतने ही होते हैं । तृतीय स्थानमें जीव उतने ही होते हैं । इस प्रकार सदृश होकर वे तब तक जाते हैं जब तक कि द्वितीय गुणहानिके एक अंककी हानि युक्त स्थानसे दूना अध्वान नहीं बीत जाता । तब अधस्तन विरलनके चतुर्थ भाग प्रमाण अंकोंमेंसे एक अंकके प्रति प्राप्त एक जीवको ग्रहण कर उसे वहांके स्थान सम्बन्धी जीवोंमेंसे कम करनेपर अग्रिम स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है । वहाँ जीव आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं ।

पश्चात् अवस्थित स्वरूपसे पूर्वोक्त अध्वान जाकर दूसरे जीवकी हानि होती है । इस प्रकारसे अवस्थित अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानि करके अधस्तन विरलनके आठवें भाग

१ मप्रतौ 'अवणिदेसु' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गमेत्तजीवा परिहीणा त्ति। ताधे तदित्थट्ठाणजीवाणं पमाणं जवमज्झस्स अट्ठमभागो। ते च आवलियाए असंखेज्जदिभागो। एवं णेयव्वं जाव जहण्णाणुभागबंधट्ठाणजीवेहिंतो दुगुणमेत्ता जीवा जादा त्ति। णवरि जवमज्झगुणहाणीए एगरूवपरिहीणद्धाणादो[1] विदियगुणहाणीए एगरूवपरिहीणद्धाणं दुगुणं[2], [होदि।] तदियगुणहाणीए एगरूवपरिहीणद्धाणं चदुग्गुणं होदि। चउत्थगुणहाणीए एगरूवपरिहीणद्धाण[3]मट्ठगुणं होदि। पंचमगुणहाणीए एगजीवपरिहीणद्धाणं सोलसगुणं होदि। एवं दुगुण-दुगुणकमेण सव्वत्थ णेयव्वं।

पुणो अप्पिदगुणहाणीए वि समयाविरोहेण रूवाणं परिहाणीए कदाए जहण्णट्ठाणजीवेहि सरिसा होंति। पुणो पढमदुगुणवड्ढीए एगरूवपरिहीणद्धाणादो दुगुणमद्धाणं गंतूण एगजीवपरिहीणद्धाणं दुगुणं होदि। पुणो एत्तियमेत्तमवट्ठिदं गंतूण एगजीवपरिहाणिं कादूण ताव णेयव्वं जाव जहण्णट्ठाणजीवेहिंतो अद्धमेत्ता जादा त्ति। पुणो पढमदुगुणवड्ढीए एगजीवपरिहीणद्धाणादो[4] चदुग्गुणं गंतूण एगेगजीवपरिहाणिं कादूण ताव णेयव्वं जाव जहण्णट्ठाणजीवाणं चदुब्भागो ट्ठिदो त्ति। एवं जाणिदूण णेयव्वं जाव उक्कस्सट्ठाणजीवा त्ति। णवरि हेट्ठिम-हेट्ठिमगुणहाणीसु एगेगरूवपरिहीणट्ठाणादो अणंतर-

प्रमाण जीवोंकी हानि होने तक ले जाना चाहिये। तब वहांके स्थान सम्बन्धी जीवोंका प्रमाण यवमध्यके आठवें भाग होता है। वे भी आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं। इस प्रकार जघन्य अनुभागबन्धस्थान सम्बन्धी जीवोंकी अपेक्षा दूनेमात्र जीवोंके होने तक ले जाना चाहिये। विशेष इतना है कि यवमध्यगुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वानकी अपेक्षा द्वितीय गुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वान दुगुना है। तृतीय गुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वान चौगुना है। चतुर्थ गुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वान अठगुना है। पंचम गुणहानि सम्बन्धी एक अंककी हानि युक्त अध्वान सोलहगुना है। इस प्रकार सर्वत्र दूने दूने क्रमसे ले जाना चाहिये।

पश्चात् विवक्षित गुणहानिमें भी समयानुसार अंकोंकी हानिके करनेपर जघन्य स्थानके जीवोंके सदृश होते हैं। फिर प्रथम दुगुणवृद्धिमें एक अंककी हानियुक्त अध्वानसे दूना अध्वान जाकर एक जीवकी हानि युक्त अध्वान दूना होता है। फिर इतना मात्र अध्वान अवस्थित जाकर एक जीवकी हानि करके उनके जघन्य स्थान सम्बन्धी जीवोंकी अपेक्षा अर्ध भाग प्रमाण होने तक ले जाना चाहिये। तत्पश्चात् प्रथम दुगुणवृद्धिमें एक जीवकी हानियुक्त अध्वानसे चौगुणा अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानि करके तब तक ले जाना चाहिये जब तक कि जघन्य स्थान सम्बन्धी जीवोंका चतुर्थ भाग रहता है। इस प्रकार जानकर उत्कृष्ट स्थानके जीवोंके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये। विशेष इतना है कि अधस्तन अधस्तन गुणहानियोंमें एक एक अंककी हानि युक्त अध्वानसे अनन्तर

१ अ-आप्रत्योः 'पडिहीणद्धाणादो' इति पाठः। २ मप्रतौ 'चदुगुणं' इति पाठः। ३ अ-ताप्रत्योः 'हीणद्धाणं-' इति पाठः। ४ प्रतिषु 'हीणद्धाणादो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवरिमगुणहाणीसु एगेगजीवपरिहीणद्धाणं[1] दुगुणं दुगुणं होदि। एवमद्धद्धेण जीवेसु गच्छमाणेसु उक्कस्सए ट्ठाणे जीवा संखेज्जा किण्ण होंति त्ति भणिदे—ण, जहण्णट्ठाणप्पहुडि जावुक्कस्सट्ठाणे त्ति जीवा सव्वट्ठाणेसु उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ता चेव होंति त्ति सुत्तसिद्धत्तादो। जवमज्झादो हेट्ठिमगुणहाणीओ संखेज्जाओ, उवरिमाओ हेट्ठिमगुणहाणिसलागाहिंतो असंखेज्जगुणाओ होदूण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ताओ होंति त्ति। एदस्स जुत्ती वुच्चदे। तं जहा—जाव जहण्णट्ठाणजीवपमाणं चेट्ठदि[2] ताव जवमज्झजीवाणमद्धछेदणए कदे तत्थुप्पण्णसलागाओ जवमज्झादो हेट्ठिमगुणहाणिसलागपमाणं होदि। पुणो जाव उक्कस्सट्ठाणजीवपमाणं पावदि ताव जवमज्झजीवाणमद्धछेदणए कदे तत्थुप्पण्णछेदणयमेत्तं जवमज्झादो[3] उवरिमगुणहाणिसलागपमाणं जेण होदि तेण ताव जवमज्झजीवपमाणाणुगमं कस्सामो—जहण्णपरित्तासंखेज्जयं विरलेदूण एक्केक्कस्स रूवस्स [4]जहण्णपरित्तासंखेज्जयं दादूण अण्णोण्णब्भासे कदे आवलिया उप्पज्जदि। ण च आवलियमेत्ता जवमज्झजीवा होंति, सव्वट्ठाणेसु आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ता चेव जीवा होंति त्ति सुत्तवयणेण सह विरोहादो। तेण जहण्णपरित्तासंखेज्जेण

ऊपरकी गुणहानियोंमें एक एक जीवकी हानि युक्त अध्वान दूना दूना होता है।

शंका—इस प्रकार अर्ध अर्ध भाग स्वरूपसे जीवोंके जाने पर उत्कृष्ट स्थानमें जीव संख्यात क्यों नहीं होते हैं ?

समाधान—ऐसी आशंका करने पर उत्तरमें कहते हैं कि वे वहाँ संख्यात नहीं होते हैं, क्योंकि, जघन्य स्थानसे लेकर उत्कृष्ट स्थान तक सब स्थानोंमें जीव उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होते हैं, ऐसा सूत्रसे सिद्ध है।

यवमध्यसे नीचेकी गुणहानियाँ संख्यात हैं। ऊपरकी गुणहानियाँ अधस्तन गुणहानिशलाकाओंसे असंख्यातगुणी होकर आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र होती हैं। इसकी युक्ति कहते हैं। वह इस प्रकार है—जब तक जघन्य स्थानके जीवोंका प्रमाण रहता है तब तक यवमध्य जीवोंके अर्धच्छेद करनेपर वहाँ उत्पन्न हुई शलाकायें यवमध्यसे नीचेकी गुणहानिशलाकाओंके बराबर होती हैं। पश्चात् जब तक उत्कृष्ट स्थानके जीवोंका प्रमाण प्राप्त होता है तब तक यवमध्य-जीवोंके अर्धच्छेद करनेपर उनमें उत्पन्न अर्धच्छेदोंके बराबर चूँकि यवमध्यसे ऊपरकी गुणहानिशलाकाओंका प्रमाण होता है, अतएव पहिले यवमध्य जीवोंका प्रमाणानुगम करते हैं—जघन्य परीतासंख्यातका विरलन करके एक एक अंकके प्रति जघन्य परीतासंख्यातको देकर परस्पर गुणित करनेपर आवली उत्पन्न होती है। परन्तु आवली प्रमाण यवमध्य जीव हैं नहीं, क्योंकि, ऐसा मानने पर 'सब स्थानोंमें आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही जीव होते हैं' इस सूत्रवचनके साथ विरोध होता है। इसलिये जघन्य परीतासंख्यातका आवलीमें भाग देनेपर जो भाग लब्ध हो

१ अप्रतौ 'हीणद्धाणं' इति पाठः। २ अप्रतौ 'चिट्ठदि' इति पाठः। ३ आप्रतौ '-छेदणयजवमज्झादो' इति पाठः। ४ ताप्रतौ 'विरलेदूण एक्केक्कस्स रूवस्स [जहण्णपरित्तासंखेज्जयं विरलेदूण] जहण्ण' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आवलियाए भागे हिदाए जं भागलद्धं [1]तमुक्कस्सजवमज्झजीवपमाणं होदि, एत्तो अहियस्स आवलियाए असंखेज्जदिभागस्स अणुवलंभादो। उक्कस्ससंखेज्जं विरलेदूण एक्केक्कस्स रूवस्स जहण्णपरित्तासंखेज्जयं दादूण अण्णोण्णब्भासे कदे जवमज्झजीवा होंति त्ति वुत्तं होदि। पुणो एदस्स आवलियाए असंखेज्जदिभागस्स जत्तिया अद्धछेदणयसलागा तत्तियमेत्ता जवमज्झस्स अद्धछेदणया त्ति घेत्तव्वं। होंता वि जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणएहि गुणिदुक्कस्ससंखेज्जमेत्ता। एवमुक्कस्सेण जवमज्झपरूवणं कदं।

संपहि जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणयमेत्ताओ जवमज्झादो हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाओ होंति त्ति ण वोत्तुं सक्किज्जदे, जवमज्झादो हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाहिंतो उवरिमणाणागुणहाणिसलागाणमसंखेज्जगुणत्तं फिट्टिदूण संखेज्जगुणत्तप्पसंगादो। तं जहा—उक्कस्सट्ठाणजीवा जदि सुट्ठु थोवा होंति तो जहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्ता चेव होंति, एदम्हादो ऊणआवलियाए[1] असंखेज्जदिभागे घेप्पमाणे उक्कस्सट्ठाणजीवाणं संखेज्जत्तप्पसंगादो। ण च एवं, सव्वेसु ट्ठाणेसु असंखेज्जजीवब्भुवगमादो। तेण उवरिमणाणागुणहाणिसलागाओ रूवूणुक्कस्ससंखेज्जेण गुणिदजहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणयमेत्ताओ होंति। एवं संते हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाहि उवरिमणाणागुणहाणिसलागासु ओवट्टिदासु संखेज्जाणि रूवाणि आगच्छंति त्ति हेट्ठिमणाणागुणहाणिसला-

---

वह उत्कृष्ट यवमध्य जीवोंका प्रमाण होता है, क्योंकि, इससे अधिक आवलीका असंख्यातवाँ भाग पाया नहीं जाता। उत्कृष्ट संख्यातका विरलन करके एक एक अंकके प्रति जघन्य परीतासंख्यातको देकर परस्पर गुणित करनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उतने यवमध्य जीव होते हैं, यह उसका अभिप्राय है। पुनः इस आवलीके असंख्यातवें भागकी जितनी अर्धच्छेदशलाकायें हों उतने मात्र यवमध्यके अर्धच्छेद होते हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। उतने होकर भी वे जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंसे गुणित उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण होते हैं। इस प्रकार उत्कृष्टसे यवमध्यकी प्ररूपणा की गई है।

अब जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर यवमध्यसे नीचेकी नानागुणहानिशलाकायें होती हैं, ऐसा कहना शक्य नहीं है, क्योंकि, वैसा स्वीकार करनेपर यवमध्यसे नीचेकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अपेक्षा जो ऊपरकी नानागुणहानिशलाकायें असंख्यातगुणी हैं, उनका वह असंख्यातगुणत्व नष्ट होकर संख्यातगुणत्वका प्रसङ्ग आता है। यथा—उत्कृष्ट स्थानके जीव यदि बहुत ही स्तोक हों तो वे जघन्य परीतासंखतातके बराबर ही होते हैं, क्योंकि, इससे कम आवलीके असंख्यातवें भागको ग्रहण करनेपर उत्कृष्ट स्थान सम्बन्धी जीवोंके संख्यात होनेका प्रसङ्ग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, सब स्थानोंमें असंख्यात जीव स्वीकार किये गये हैं। इस कारण ऊपरकी नानागुणहानिशलाकायें एक कम उत्कृष्ट संख्यातसे गुणित जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर होती हैं। ऐसा होनेपर चूँकि अधस्तन नानागुणहानिशलाकाओंसे उपरिम नानागुणहानिशलाकाओंको अपवर्तित करनेपर संख्यात अंक आते हैं, अतएव

---

१ अ-आप्रत्योः 'एदम्हादो ओ आवलियाए' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाहिंतो उवरिमणाणागुणहाणिसलागाओ संखेज्जगुणा [ओ] होंति। ण च एवं, जवमज्झ-हेट्ठिमगुणहाणिसलागाहिंतो उवरिमसव्वगुणहाणिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ त्ति उवरि जवमज्झपरूवणाए भण्णमाणत्तादो। तदो जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणय-मेत्ताओ जवमज्झहेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाओ ण होंति त्ति परिच्छिज्जदे। तम्हा रूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्ताओ हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाओ त्ति घेत्तव्वं, एवं गहिदे [1]हेट्ठिमणाणागुणहाणिसलागाहिंतो उवरिमगुणहाणिसलागाणमसंखेज्जगुणत्तु ववत्तीदो।

संपहि रूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तासु हेट्ठिमगुणहाणिसलागासु संतासु जहा उवरिमगुणहाणिसलागाणमसंखेज्जगुणत्तं होदि तहा परूवणं कस्सामो। तं जहा— उक्कस्ससंखेज्जं विरलिय रूवं पडि जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणएसु दिण्णेसु जो एदेसिं सव्वेसिं समासो सो जवमज्झजीवद्धछेदणयपमाणं। पुणो एत्थ एगेगरूवधरिदम्हि एगेगरूवे गहिदे उक्कस्ससंखेज्जमेत्तरूवाणि होंति। पुणो ताणि पडिरासिय एगरूवधरिदेण रूवूण-जहण्णपरित्तासंखेज्जद्धच्छेदणयमेत्तेण पडिरासिदउक्कस्ससंखेज्जमोवट्टिय लद्धं[2] पुव्विल्लभाग-हारादो संखेज्जगुणहीणं उक्कस्ससंखेज्जमेत्तपुव्विल्लविरलणाए पासे विरलिय पडिरासिदउक्क-स्ससंखेज्जं समखंडं कादूण दिण्णे रूवं पडि जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयपमाणं

अधस्तन नानागुणहानिशलाकाओंसे उपरिम नानागुणहानिशलाकायें संख्यातगुणी होनी चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, यवमध्यकी अधस्तन गुणहानिशलाकाओंकी अपेक्षा उपरिम सब गुणहानिशलाकायें असंख्यातगुणी हैं, ऐसा आगे यवमध्यप्ररूपणामें कहा जानेवाला है। इसलिये यवमध्यकी अधस्तन गुणहानिशलाकायें जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर नहीं होती हैं, यह जाना जाता है। इस कारण एक कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर अधस्तन गुणहानिशलाकायें होती हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, ऐसा ग्रहण करनेपर अधस्तन नानागुणहानिशलाओंकी अपेक्षा उपरिम गुणहानिशलाकाओंका असंख्यातगुणत्व बन जाता है।

अब एक कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर अधस्तन गुणहानिशलाकाओंके होनेपर जिस प्रकारसे उपरिम गुणहानिशलाकायें असंख्यातगुणी होती हैं वैसी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है— उत्कृष्ट संख्यातका विरलन करके प्रत्येक अंकके प्रति जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंको देनेपर जो इन सबका जोड़ हो वह यवमध्य जीवोंके अर्धच्छेदोंका प्रमाण होता है। फिर यहाँ एक एक अंकके प्रति प्राप्त राशिमेंसे एक एक अंकको ग्रहण करनेपर उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण अंक होते हैं। फिर उनको प्रतिराशि करके एक कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंके बराबर एक अंकके प्रति प्राप्त राशिसे प्रतिराशि रूप उत्कृष्ट संख्यातको अपवर्तित करनेपर जो लब्ध हो वह पूर्व भागहारकी अपेक्षा संख्यातगुणा हीन होता है। इसको उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण पूर्व विरलन राशिके पासमें विरलित करके प्रतिराशिभूत उत्कृष्ट संख्यातको समखण्ड करके देनेपर प्रत्येक

१ ताप्रतौ 'गहिदेहि हेट्ठिम' इति पाठः। २ प्रतिषु 'अद्धं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पावदि, गहिदग्गहणादो। तत्थ एगरूवधरिदमेत्ताओ जवमज्झादो हेट्ठिमगुणहाणिसलागाओ त्ति घेत्तव्वं। एदासिं सलागाणं विरलिय विगुणिदाणं अण्णोण्णब्भत्थरासिपमाणं जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धमेत्तं होदि। एदेण जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धेण गुणगारगुणिज्जमाणसरूवेण अवट्ठिदेसु उवरिमविरलणमेत्तेसु जवमज्झजीवेसु ओवट्टिदेसु गुणगार-भागहारे सरिसे अवणिय रूवूणुवरिमविरलणमेत्तेसु जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धेसु अण्णोण्णब्भत्थेसु संतेसु जहण्णट्ठाणजीवपमाणं होदि। जहण्णपरित्तासंखेज्जवग्गचदुब्भागमेत्ता उक्कस्सट्ठाणजीवा जदि होंति तो जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धछेदणयसलागाओ रूवूणाओ दुरूवूणुवरिमविरलणाए गुणिदाओ जवमज्झादो उवरिमगुणहाणिसलागपमाणं होदि। उवरिमविरलणा च असंखेज्जा, जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणएहि उक्कस्ससंखेज्जे भागे हिदे तत्थ एगभागेण अब्भहियउक्कस्ससंखेज्जपमाणत्तादो। तेण हेट्ठिमगुणहाणिसलागाहिंतो उवरिमगुणहाणिसलागाओ असंखेज्जगुणा त्ति सिद्धं। ण च जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणयमेत्ताओ चेव जवमज्झादो हेट्ठिमगुणहाणिसलागाओ होंति त्ति णियमो अत्थि। किं तु एत्तियमेत्तासु हेट्ठिमगुणहाणिसलागासु गहिदासु सुत्तविरोहो[1] णत्थि त्ति परूविदं। जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धछेदणय-

अंकके प्रति जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंका प्रमाण प्राप्त होता है, यहाँ गृहीतका ग्रहण है। उनमें एक एक अंकके प्रति प्राप्त राशिप्रमाण यवमध्यसे नीचेकी गुणहानि शलाकायें होती हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। इन शलाकाओंका विरलन करके दूना कर परस्पर गुणित करनेपर जो प्रमाण प्राप्त होता है वह जघन्य परीतासंख्यातके अर्ध भाग मात्र होता है। इस जघन्य परीतासंख्यातके अर्ध भागके द्वारा गुणकार गुण्य स्वरूपसे अवस्थित उपरिम विरलन प्रमाण यवमध्य जीवोंको अपवर्तित करनेपर समान गुणकारों और भागहारोंका अपनयन कर एक कम उपरिम विरलन प्रमाण जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंको परस्पर गुणित करनेपर जघन्य स्थानके जीवोंका प्रमाण होता है। जघन्य परीतासंख्यातके वर्गके चतुर्थ भाग प्रमाण यदि उत्कृष्ट स्थानके जीव होते हैं तो जघन्य परीतासंख्यातकी एक कम अर्धच्छेदशलाकायें दो अंकोंसे हीन ऊपरकी विरलन राशिसे गुणित होकर यवमध्यसे ऊपरकी गुणहानिशलाकाओंका प्रमाण होता है। उपरिम विरलन राशि भी असंख्यात हैं, क्योंकि, वे जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंका उत्कृष्ट संख्यातमें भाग देनेपर उसमें एक भागसे अधिक उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण होती हैं। इसीलिये अधस्तन गुणहानिशलाकाओंकी अपेक्षा उपरिम गुणहानिशलाकायें असंख्यातगुणी हैं, यह सिद्ध होता है।

यवमध्यसे नीचेकी गुणहानिशलाकायें जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदोंके बराबर ही होती हैं, ऐसा नियम भी नहीं है। किन्तु अधस्तन गुणहानिशलाओंको इतनी मात्र ग्रहण करनेपर सूत्रविरोध नहीं है, ऐसी प्ररूपणा की गई है। जघन्य परीतासंख्यातके एक कम

१ अ-आप्रत्योः 'सुत्तविरोहा' इति पाठः।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

प्पहुडि दुरूवूण-तिरूवूणादिकमेण ओवट्टिदाविय जवमज्झहेट्ठिमगुणहाणिसलागाणं पमाणे परूविदे वि ण सुत्तविरोहो होदि त्ति वुत्तं होदि। हेट्ठिमगुणहाणिसलागाओ एत्तियाओ चेव होंति त्ति किण्ण वुच्चदे? ण, तहाविहसुत्तुवएसाभावादो[1]। ण च उक्कस्सट्ठाणजीवा जहण्णपरित्तासंखेज्जुवरिमवग्गस्स चदुब्भागमेत्ता चेव होंति त्ति णियमो अत्थि; ति-चत्तारि-पंचादिजहण्णपरित्तासंखेज्जद्धाणमण्णोण्णब्भत्थरासिमेत्तेसु उक्कस्सट्ठाणजीवेसु गहिदेसु वि सुत्तविरोहाभावादो। एवमणंतरोवणिधा समत्ता।

परंपरोवणिधाए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणजीवेहिंतो तत्तो असंखेज्जलोगं गंतूण दुगुणवड्ढिदा ॥ २८२ ॥

कुदो? असंखेज्जलोगमेत्तअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु जीवा जहण्णाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणजीवेहि सरिसा होदूण पुणो तेसिमेगजीवेण अहियत्तुवलंभादो। चदुसमइयट्ठाणप्पहुडि जाव विसमइयाणमसंखेज्जदिभागो त्ति ताव सव्वट्ठाणाणि जीवेहिं सरिसाणि त्ति भणिदं होदि। अवट्ठिदमेत्तियमद्धाणं गंतूण एगेगजीववड्ढीए जहण्णट्ठाणजीवमेत्तेसु जीवेसु जहण्णट्ठाणजीवाणमुवरि वड्ढिदेसु 'दुगुणवड्ढिसमुप्पत्तीदो गुणहाणिअद्धाणमसंखेज्जलोगमेत्तं होदि त्ति घेत्तव्वं।

अर्धच्छेदोंसे लेकर दो अंक कम, तीन अंक कम इत्यादि क्रमसे अपवर्तित कराकर यवमध्यकी अधस्तन गुणहानिशलाकाओंके प्रमाणकी प्ररूपणा करनेपर भी सूत्र विरोध नहीं होता है, यह उसका अभिप्राय है।

शंका— अधस्तन गुणहानिशलाकायें इतनी ही होती हैं, ऐसा क्यों नहीं कहते?

समाधान— नहीं, क्योंकि, वैसा सूत्रोपदेश नहीं है।

उत्कृष्ट स्थानके जीव जघन्य परीतासंख्यातके उपरिम वर्गके चतुर्थ भाग प्रमाण ही होते हैं, ऐसा नियम भी नहीं है, क्योंकि, तीन, चार, पाँच आदि जघन्य परीतासंख्यातके अर्ध भागोंको परस्पर गुणित करनेपर जो लब्ध हो उतने मात्र उत्कृष्ट स्थानके जीवोंको ग्रहण करनेपर भी सूत्र विरोध नहीं होता है। इस प्रकार अनन्तरोपनिधा समाप्त हुई।

परम्परोपनिधामें जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानके जो जीव हैं उनसे असंख्यात लोकमात्र जाकर वे दुगुणी वृद्धिको प्राप्त होते हैं ॥ २८२ ॥

कारण यह है कि असंख्यात लोकमात्र अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंमें जीव जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानके जीवोंसे समान होकर फिर वे एक जीवसे अधिक पाये जाते हैं। चार समय योग्य स्थानोंसे लेकर दो समय योग्य स्थानोंके असंख्यातवें भाग तक सब स्थान जीवोंकी अपेक्षा समान हैं, यह अभिप्राय है। इतना मात्र अवस्थित अध्वान जाकर एक एक जीवकी वृद्धि द्वारा जघन्य स्थानसम्बन्धी जीवोंके ऊपर जघन्य स्थान सम्बन्धी जीवोंके बराबर जीवोंके बढ़ जानेपर दूनी वृद्धिके उत्पन्न होनेके कारण गुणहानिअध्वान असंख्यात लोकमात्र होता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

१ प्रतिषु 'सुहुवएसाभावादो' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

एवं दुगुणवड्ढिदा जाव जवमज्झं ॥ २८३ ॥

सुगममेदं, अणंतरोवणिधाए परूविदविसेसत्तादो। जवमज्झादो हेट्ठिमदुगुणवड्ढिअद्धाणाणि सरिसाणि, पढमदुगुणवड्ढिप्पहुडि उवरिमदुगुणवड्ढीसु दुगुणवड्ढिं पडि हेट्ठिमदुगुणवड्ढीए एगजीववड्ढिदअद्धाणस्स अद्धद्धं गंतूण एगेगजीववड्ढीए उवलंभादो। जवमज्झादो उवरिमदुगुणहाणीयो वि हेट्ठिमदुगुणहाणीहि अद्धाणेण समाणाओ, दुगुणदुगुणमद्धाणं गंतूण एगेगजीवपरिहाणीदो।

तेण परमसंखेज्जलोगं गंतूण दुगुणहीणा ॥ २८४ ॥

सुगमं।

एवं दुगुणहीणा जाव उक्कस्सियअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति ॥ २८५ ॥

एदं पि सुगमं।

एगजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि - हाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जा लोगा ॥ २८६ ॥

गुणहाणिअद्धाणं पुव्वं परूविदं, पुणरिह किमट्ठं परूविज्जदे ? गुणहाणिअद्धाणादो णाणागुणहाणिसलागासु आणिज्जमाणासु मंदमेहाविसिस्सजणसंभालणट्ठं परूविज्जदे।

इस प्रकार यवमध्य तक वे दूनी दूनी वृद्धिसे युक्त हैं ॥ २८३ ॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, इसकी विशेषताकी प्ररूपणा अनन्तरोपनिधामें की जा चुकी है। यवमध्यसे नीचेके दुगुणवृद्धिअध्वान सदृश है, क्योंकि, प्रथम दुगुणवृद्धिसे लेकर आगेकी दुगुण वृद्धियोंमेंसे प्रत्येक दुगुणवृद्धिमें अधस्तन दुगुणवृद्धिके एक जीव वृद्धि युक्त अध्वानका आधा आधा भाग जाकर एक एक जीवकी वृद्धि पायी जाती है। यवमध्यसे ऊपरकी दुगुणहानियाँ भी अधस्तन दुगुणहानिसे अध्वानकी अपेक्षा समान हैं, क्योंकि, दूना दूना अध्वान जाकर एक एक जीवकी हानि होती है।

उससे आगे असंख्यात लोक जाकर वे दूने हीन होते हैं ॥ २८४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

इस प्रकारसे वे उत्कृष्ट अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानके प्राप्त होने तक वे दूने दूने हीन हैं ॥ २८५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है।

एक जीवके अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंसम्बन्धी दुगुणवृद्धि-हानिस्थानान्तर असंख्यात लोकप्रमाण हैं ॥ २८६ ॥

शङ्का—गुणहानिअध्वानकी प्ररूपणा पहिले की जा चुकी है, उसकी प्ररूपणा यहाँ फिरसे किसलिये की जा रही है ?

समाधान—गुणहानिअध्वानसे नानागुणहानिशलाकाओंको लाते समय मन्दबुद्धि शिष्योंको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाणाजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि-[हाणि-] ट्ठाणंतराणि आवलियाए असंखेज्जदिभागो ॥ २८७ ॥

एदस्स साहणं वुच्चदे । तं जहा—एगगुणहाणिअद्धाणमेत्तअसंखेज्जलोगअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणं जदि एगा दुगुणवड्ढिसलागा लब्भदि तो सव्वाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तणाणादुगुणवड्ढि-हाणि[1]सलागाओ लब्भंति ।

णाणाजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि-हाणिट्ठाणंतराणि थोवाणि ॥ २८८ ॥

कुदो ? आवलियाए असंखेज्जभागपमाणत्तादो ।

एयजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि-हाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं ॥ २८९ ॥

कुदो ? असंखेज्जलोगपमाणत्तादो । एदमप्पाबहुगं पमाणपरूवणादो चेव अवगदमिदि णेव परूवेदव्वं ? ण, मंदमेहाविसिस्साणुग्गहट्ठं परूवणाए कीरमाणाए दोसाभा-

---

स्मरण करानेके लिये उसकी फिरसे प्ररूपणा की जा रही है ।

नाना जीवों सम्बन्धी अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानों सम्बन्धी दुगुणवृद्धि-हानिस्थानान्तर आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ २८७ ॥

इसका साधन कहते हैं । वह इस प्रकार है—एक गुणहानिअध्वानके बराबर असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके यदि एक दुगुणवृद्धिशलाका पायी जाती है तो समस्त अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके कितनी दुगुणवृद्धिशलाकायें पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण नानादुगुणवृद्धि-हानि शलाकायें पायी जाती हैं ।

नाना जीवों सम्बन्धी अनुभागबन्धाध्यवसानदुगुणवृद्धि-हानिस्थानान्तर स्तोक हैं ॥ २८८ ॥

कारण कि वे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ।

उनसे एक जीव सम्बन्धी अनुभागबन्धाध्यवसानदुगुणवृद्धि-हानिस्थानान्तर असंख्यातगुणे हैं ॥ २८९ ॥

कारण कि असंख्यात लोक प्रमाण हैं ।

शङ्का—यह अल्पबहुत्व चूँकि प्रमाणप्ररूपणासे ही जाना जा चुका है, अतएव उसकी यहाँ प्ररूपणा नहीं करनी चाहिये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, मन्दबुद्धि शिष्योंके अनुग्रहार्थ उसकी यहाँ प्ररूपणा करनेमें कोई दोष नहीं है ।

---

१ ताप्रतौ 'णाणागुणवड्ढिहाणि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वादो । संपहि जवमज्झुप्पण्णपदेसपरूवणट्ठं जवमज्झपरूवणा कीरदे—

जवमज्झपरूवणाए ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं ॥२९०॥

सव्वट्ठाणाणि असंखेज्जखंडाणि कादूण तत्थ एगखंडे जवमज्झं होदि । एदं जवमज्झहेट्ठिमचदुसमइयट्ठाणप्पहुडि उवरि विसमयपाओग्गट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागं गंतूण होदि । [1]तिसमयपाओग्गट्ठाणं चरिमसमयम्मि जवमज्झं किण्ण जायदे ? [ण,] असंखेज्जलोगमेत्तगुणहाणिप्पसंगादो । एदं कुदो णव्वदे ? हेट्ठिमट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणतिसमयपाओग्गट्ठाणेसु असंखेज्जलोगेहि गुणिदेसु विसमयपाओग्गट्ठाणाणं पमाणुप्पत्तीदो । तं पि कुदो णव्वदे ? पुव्वं परूविदअप्पाबहुगसुत्तादो । तं जहा—सव्वत्थोवा अट्ठसमयपाओग्गअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि । दोसु वि पासेसु सत्तसमयपाओग्गअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । दोसु वि पासेसु छसमयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । दोसु वि पासेसु पंचसमइयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । दोसु वि पासेसु [2]चदुसमयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । [3]तिसमयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । [3]विसमयपाओग्गट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । गुणागारो सव्वत्थ असंखेज्ज-

अब यवमध्यमें उत्पन्न प्रदेशकी प्ररूपणा करनेके लिये यवमध्यकी प्ररूपणा करते हैं—

यवमध्यकीप्ररूपणा करनेपर स्थानोंके असंख्यातवें भागमें यवमध्य होता है॥२९०॥

सब स्थानोंके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डमें यवमध्य होता है । यह यवमध्य के अधस्तन चार समय योग्य स्थानोंसे लेकर ऊपर दो समय योग्य स्थानोंके असंख्यातवें भाग जाकर होता है ।

शंका—तीन समय योग्य स्थानोंके अन्तिम समयमें यवमध्य क्यों नहीं होता है ?

समाधान—[नहीं,] क्योंकि वैसा होनेपर असंख्यात लोक प्रमाण गुणहानियोंका प्रसंग आता है ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—अधस्तन स्थानोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणे तीन समय योग्य स्थानोंको असंख्यात लोकोंसे गुणित करनेपर चूँकि दो समय योग्य स्थानोंका प्रमाण उत्पन्न होता है, अतः इसीसे उक्त प्रसंग सुविदित है ।

शंका—वह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह पूर्वमें प्ररूपित अल्पबहुत्व सम्बन्धी सूत्रसे जाना जाता है । यथा—आठ समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । उनसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें सात समय योग्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें छह समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें पाँच समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें चार समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे तीन समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे दो समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे हैं ।

१ ताप्रतौ 'ति (वि) समय-' इति पाठः । २ अ-ताप्रत्योः 'समइय' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'समइय' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोगमेत्तो होदि त्ति सुत्तम्मि ण परूविदो। एदं सुत्तं वक्खाणेंता के वि आइरिया गुणगारो कायट्ठिदि त्ति भणंति, के वि सामण्णेण असंखेज्जा लोगा त्ति। तं जाणिय वत्तव्वं। जवमज्झस्स हेट्ठिमट्ठाणाणि किं बहुगाणि आहो उवरिमाणि, उभयथा वि ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झमिदि सिद्धीदो त्ति भणिदे तण्णिण्णयट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

जवमज्झस्स हेट्ठदो ट्ठाणाणि थोवाणि ॥ २९१ ॥

सुगमं।

उवरिमसंखेज्जगुणाणि ॥ २९२ ॥

को गुणगारो? आवलियाए असंखेज्जदिभागो। कारणं पुव्वं [१]परूविदमिदि णेह परूविज्जदे।

फोसणपरूवणदाए तीदे काले एयजीवस्स उक्कस्सए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे फोसणकालो थोवो ॥ २९३ ॥

एत्थ संत-पमाणपरूवणाहि विणा अप्पाबहुगपरूवणा चेव किमट्ठं वुच्चदे? ण ताव संतपरूवणा एत्थ कायव्वा, अप्पाबहुगेण चेव तदवगमादो। कुदो? अविज्जमाणसंतस्स

गुणकार सब स्थानोंमें असंख्यात लोक प्रमाण है, यह सूत्रमें नहीं कहा गया है। इस सूत्रका व्याख्यान करनेवाले कितने ही आचार्य गुणकार कायस्थिति प्रमाण बतलाते हैं और कितने ही समान्य रूपसे उसका प्रमाण असंख्यात लोक बतलाते हैं। उसका जान करके कथन करना चाहिये।

यवमध्यसे नीचेके स्थान क्या बहुत हैं अथवा ऊपरके, क्योंकि, दोनों प्रकारके ही स्थानोंके असंख्यातवें भागमें यवमध्य है, ऐसा सिद्ध है, इस प्रकार पूछे जानेपर उसका निर्णय करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

यवमध्यके नीचेके स्थान स्तोक हैं ॥ २९१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उनसे ऊपरके स्थान असंख्यातगुणे हैं ॥ २९२ ॥

गुणकार क्या है? गुणकार आवलीका असंख्यातवाँ भाग है? कारण की प्ररूपणा पहिले की जा चुकी है, अतएव उसकी यहाँ प्ररूपणा नहीं की जाती है।

स्पर्शनप्ररूपणाकी अपेक्षा अतीत कालमें एक जीवके उत्कृष्ट अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें स्पर्शनका काल स्तोक है ॥ २९३ ॥

शंका—यहाँ सत्प्ररूपणा व प्रमाणप्ररूपणाके विना अल्पबहुत्वप्ररूपणा ही किसलिये की जा रही है?

समाधान—यहाँ सत्प्ररूपणा करना योग्य नहीं है, क्योंकि, उसका ज्ञान अल्पबहुत्वसे ही

---

१ अ-आप्रत्योः 'पुव्वं व परूविद–', ताप्रतौ 'पुव्वं [वि] परूविद–' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

थोवबहुत्तपरूवणाणुववत्तीदो। ण पमाणपरूवणा वि वत्तव्वा, एगेगजीवेण अदीदे काले एगेगट्ठाणफोसिदकालस्स उवदेसेण विणा वि अणंतपमाणत्तसिद्धीदो। उक्कस्सअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणफोसणकालो त्ति तीदे काले एगजीवेण बिसमयपाओग्गसव्वाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु अच्छिदकालो घेत्तव्वो। कधं बिसमयपाओग्गसव्वट्ठाणाणं उक्कस्सट्ठाणववएसो? उच्चदे—उक्कस्सट्ठाणसहचारेण दोण्णं समयाणं उक्कस्सववएसो असिसहचरियस्स असिव्ववएसो व्व। उक्कस्सस्स अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणमुक्कस्साणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणं। तत्थ फोसणकालो थोवो कुदो? एगजीवस्स अइसंकिलेसे पाएण पदणाभावादो [२]। ण च एसो तत्थ णिरंतरमच्छिदकालो, किं तु अंतरिय अंतरिय तत्थ अच्छिदकाले संकलिदे थोवो त्ति भणिदं।

जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे फोसणकालो असंखेज्जगुणो ॥ २९४ ॥ [४]

जहण्णाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति भणिदे हेट्ठिमचदु[1]समयपाओग्गसव्वट्ठाणाणं गहणं। [2]कधं तेसिं सव्वेसिं जहण्णववएसो? उच्चदे—चदुण्णं समयाणं जहण्णट्ठाणसह-

हो जाता है। कारण कि जिसका अस्तित्व न हो उसके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा नहीं बनती है। प्रमाणप्ररूपणा भी कहनेके अयोग्य हैं, क्योंकि, एक एक जीवके द्वारा अतीत कालमें एक एक स्थानके स्पर्शन किये जानेका काल अनन्त है, इस प्रकार उपदेशके बिना भी उसका अनन्त प्रमाण सिद्ध है। उत्कृष्ट अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानस्पर्शनकालसे अतीत कालमें एक जीवके द्वारा दो समय योग्य सब अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंमें रहनेका काल ग्रहण करना चाहिये।

शंका—दो समय योग्य सब स्थानोंकी उत्कृष्ट स्थान संज्ञा कैसे घटित होती है?

समाधान—इस शंकाका उत्तर कहते हैं। उत्कृष्ट स्थानके साथ रहनेके कारण दो समयोंकी उत्कृष्ट संज्ञा है, जैसे असि युक्त पुरुषकी असि यह संज्ञा होती है।

उत्कृष्टका अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान उत्कृष्ट अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान, इस प्रकार यहाँ षष्ठी तत्पुरुषसमास है। उसमें स्पर्शनका काल स्तोक है। इसका कारण यह है कि एक जीवका प्रायः अतिशय संक्लेशमें पतन नहीं होता है [२]। और यह वहाँ निरन्तर रहनेका काल नहीं है, किन्तु बीच बीचमें अन्तर करके वहाँ रहनेके कालका संकलन करनेपर उसे स्तोक ऐसा कहा गया है।

उससे जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें स्पर्शन काल असंख्यातगुणा है ॥ २९४ ॥ [४]

जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान ऐसा कहनेपर नीचेके चार समय योग्य सब स्थानोंका ग्रहण किया गया है।

शंका—उन सबकी जघन्य संज्ञा कैसे है?

समाधान—जघन्य स्थानके साथ रहनेके कारण चार समयोंकी जघन्य संज्ञा कही जाती

१ अप्रतौ 'समइय' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'कदं', ताप्रतौ 'कदं (धं)' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चारेण जहण्णसण्णा । तस्स ट्ठाणाणि जहण्णाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि । तत्थ फोसण-कालो असंखेज्जगुणो । कुदो ? असंखेज्जवारं चदुसमयपाओग्गट्ठाणेसु परिभमिय सइं विसमयपाओग्गट्ठाणाणं गमणादो ।

कंदयस्स फोसणकालो त्तियो चेव ॥ २९५ ॥

पुव्वं परूविदस्सेव किमट्ठं परूवणा कीरदे, परूविदपरूवणाए फलाभावादो ? ण एस दोसो, जहण्णाणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति वयणादो उप्पण्णसंसयस्स सीसस्स संदेहणिवारणट्ठं तदुप्पत्तीदो ।

जवमज्झफोसणकालो असंखेज्जगुणो ॥ २९६ ॥ [८]

जवमज्झे त्ति भणिदे अट्ठसमयपाओग्गसव्वट्ठाणाणं गहणं । तेसिमदीदकाले एगजीवेण फोसिदकालो असंखेज्जगुणो । कुदो ? मज्झिमपरिणामेहि जवमज्झट्ठाणेसु असंखेज्जवारं परिभमिय सइं चदुसमयपाओग्गट्ठाणाणं गमणसंभवादो ।

कंदयस्स उवरि फोसणकालो असंखेज्जगुणो ॥२९७॥ [३।२]

कुदो ? अट्ठसमयपाओग्गट्ठाणेहिंतो तिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणाणमसंखेज्ज-गुणत्तादो ।

है । उसके स्थान जघन्य अनुभागस्थान कहे जाते हैं । उनमें रहनेका काल असंख्यातगुणा है, क्योंकि, असंख्यातबार चार समय योग्य स्थानोंमें परिभ्रमण करके एक बार दो समय योग्य स्थानोंको प्राप्त होता है ।

काण्डकका स्पर्शनकाल उतना ही है ॥ २९५ ॥

शंका—पहिले जिसकी प्ररूपणा की जा चुकी है उसीकी फिरसे प्ररूपणा किसलिये की जा रही है, क्योंकि, प्ररूपितकी प्ररूपणा करनेमें कोई लाभ नहीं है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान इस कथन से उत्पन्न हुए सन्देहसे युक्त शिष्यके उस सन्देहको दूर करनेके लिये प्ररूपितकी भी प्ररूपणा बन जाती है ।

उससे यवमध्यका स्पर्शनकाल असंख्यातगुणा है ॥ २९६ ॥ [८]

यवमध्य ऐसा कहनेपर आठ समय योग्य सब स्थानोंको ग्रहण करना चाहिये । अतीत कालमें एक जीवके द्वारा उनका स्पर्शनकाल असंख्यातगुणा है । कारण यह है कि मध्यम परिणामोंके द्वारा यवमध्यस्थानोंमें असंख्यात वार परिभ्रमण करके एक बार चार समय योग्य स्थानोंमें जाना सम्भव है

उससे काण्डकके ऊपर स्पर्शनकाल असंख्यातगुणा है ॥ २९७ ॥ [३।२]

इसका कारण यह है कि आठ समय योग्य स्थानोंकी अपेक्षा तीन समय व दो समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे पाये जाते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जवमज्झस्स उवरिं कंदयस्स हेट्ठदो फोसणकालो असंखेज्जगुणो ॥ २९८ ॥ [७ । ६ । ५]

किं कारणं ? जदि वि सत्त-छ-पंचसमयपाओग्गट्ठाणाणि तिसमय-बिसमयपाओग्गट्ठाणाणं असंखेज्जदिभागो तो वि एदेसिं फोसणकालो असंखेज्जगुणो, मज्झिमपरिणामेहि असंखेज्जवारं परिणमिय सइं तिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणगमणुवलंभादो[1] ।

कंदयस्स उवरि जवमज्झस्स हेट्ठदो फोसणकालो तत्तियो चेव ॥ २९९ ॥ [७ । ६ । ५]

कुदो ? समाणसंखत्तादो[2] मज्झिमपरिणामेहि बज्झमाणत्तणेण भेदाभावादो च ।

जवमज्झस्स उवरि फोसणकालो विसेसाहिओ ॥ ३०० ॥

[७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २]

सत्त-छ-पंचसमयपाओग्गट्ठाणफोसणकालस्सुवरि चदु-ति-दोण्णि-समयपाओग्गट्ठाणाणं फोसणकालप्पवेसादो । केत्तियमेत्तो विसेसो ? सत्त-छ-पंचसमयपाओग्गट्ठाणाणं फोसणकालस्स असंखेज्जदिभागो ।

उससे यवमध्यके ऊपर और काण्डकके नीचे स्पर्शनका काल असंख्यातगुणा है ॥२९८॥ [७ । ६ । ५]

शंका—इसका कारण क्या है ?

समाधान—यद्यपि सात, छह और पाँच समय योग्य स्थान तीन समय व दो समय योग्य स्थानोंके असंख्यातवें भाग हैं तो भी इनका स्पर्शनकाल असंख्यातगुणा है, क्योंकि, मध्यम परिणामोंके द्वारा असंख्यात बार सात, छह और पाँच समय योग्य स्थानोंमें परिभ्रमण करके एक बार तीन समय व दो समय योग्य स्थानोंमें गमन पाया जाता है ।

काण्डकके ऊपर और यवमध्यके नीचे स्पर्शनकाल उतना ही है ॥ २९९ ॥ [७ । ६ । ५]

इसका कारण यह है कि एक तो उनकी संख्या समान है, दूसरे मध्यम परिणामोंके द्वारा बध्यमान स्वरूपसे उनमें कोई भेद भी नहीं है ।

उनसे यवमध्यके ऊपर स्पर्शनकाल विशेष अधिक है ॥ ३०० ॥

[७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २]

कारण कि सात, छह व पाँच समय योग्य स्थानोंके स्पर्शनकालके ऊपर चार, तीन व दो समय योग्य स्थानोंके स्पर्शनकालका यहाँ प्रवेश है । विशेषका प्रमाण कितना है ? वह सात, छह व पाँच समय योग्य स्थानों सम्बन्धी स्पर्शनकालके असंख्यातवें भाग मात्र है ।

---

१ ताप्रतौ '–ट्ठाणाणमणुवलंभादो' इति पाठः । २ मप्रतौ 'समयाणसंखत्तादो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कंदयस्स हेट्ठदो फोसणकालो विसेसाहिओ ॥२०१॥

[४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ७ । ६ । ५]

केत्तियमेत्तो विसेसो ? सगकालस्स असंखेज्जा भागा[1] विसेसो । तं जहा— जवमज्झकालब्भंतरे चदुसमयपाओग्गट्ठाणकालमेत्तं घेत्तूण उवरिमसत्त-छ-पंचसमय-पाओग्गट्ठाणकालाणं उवरि ठुविदे एत्तियं होदि [४ । ५ । ६ । ७ । ७ । ६ । ५ । ४] । एसो कालो तिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणाणं कालं मोत्तूण सेसकाले पेक्खिय दुगुण-हाणी । पुणो जवमज्झकालस्स अवणिदसेसा असंखेज्जा भागा अत्थि । पुणो ते घेत्तूण हेट्ठिमतिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणकालम्मि सोहिदे सुद्धसेसं विसमय-तिसमयपाओग्ग-ट्ठाणकालस्स असंखेज्जा भागा होदि । पुणो एदम्मि पुव्वुत्तदुगुणकालम्मि सोहिदे किंचूणदुगुणकालो चिट्ठदि । तेण विसेसाहियो त्ति कालो परूविदो ।

कंदयस्स उवरिं फोसणकालो विसेसाहिओ ॥२०२॥

[५ । ६ । ७ । ८ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २]

केत्तियमेत्तो विसेसो ? उवरिमतिसमय-विसमयपाओग्गट्ठाणकालमेत्तो ।

सव्वेसु ट्ठाणेसु फोसणकालो विसेसाहिओ ॥२०३॥

[४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २]

इससे काण्डकके नीचे स्पर्शनकाल विशेष अधिक है ॥ २०१ ॥

४, ५, ६, ७, ८, ७, ६, ५,

विशेष कितना है ? वह विशेष अपने कालके असंख्यात बहुभाग प्रमाण है । यथा— यवमध्यकालके भीतर चार समय योग्य स्थानोंके काल मात्रको ग्रहण कर उपरिम सात, छह व पाँच समय योग्य स्थानों सम्बन्धी कालोंके ऊपर स्थापित करनेपर इतना होता है—४, ५, ६, ७, ७, ६, ५, ४ । यह काल तीन समय व दो समय योग्य स्थानों सम्बन्धी कालोंको छोड़कर शेष कालोंकी अपेक्षा करके दुगुणा हीन है । पुनः यवमध्यकालकाकम करनेसे शेष रहा असंख्यात बहुभाग है । उसको ग्रहण कर अधस्तन तीन समय और दो समय योग्य स्थानोंके कालमेंसे कम कर देने पर शेष दो समय व तीन समय योग्य स्थानोंके कालका असंख्यात बहुभाग रहता है । इसको पूर्वोक्त दुगुने कालमेंसे कम कर देनेपर कुछ कम दुगुणा काल रहता है । इसीलिये विशेष अधिक काल की प्ररूपणा की गई है ।

इससे काण्डकके ऊपर स्पर्शनकाल विशेष अधिक है ॥ २०२ ॥

५, ६, ७, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २,

विशेष कितना है ? वह ऊपरके तीन समय और दो समय योग्य स्थानों सम्बन्धी कालके बराबर है ।

इससे सब स्थानोंमें स्पर्शनकाल विशेष अधिक है ॥ २०३ ॥

४, ५, ६, ७, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २,

१ आप्रतौ 'असंखेज्जभाग', ताप्रतौ 'असंखेजभागो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केत्तियमेत्तो विसेसो ? हेट्ठिमचदुसमयपाओग्गट्ठाणकालमेत्तो । एवं अभवसिद्धियपाओग्गे । एवं फोसणपरूवणा समत्ता ।

अधवा, उक्कस्सज्झवसाणट्ठाणे त्ति भणिदे विसमयपाओग्गाणं चरिमं घेप्पदि । जहण्णज्झवसाणट्ठाणे त्ति भणिदे चदुसमयपाओग्गाणं जहण्णं घेप्पदि त्ति के वि आइरिया भणंति । तण्ण घडदे, उक्कस्ससंकिलेसम्मि णिवदणवारेहिंतो उक्कस्सविसोहीए पदणवाराणमसंखेज्जगुणत्तविरोहादो । कंदयस्स फोसणकालो तत्तियो चेवे त्ति वुत्ते उवरि चदुसमयपाओग्गट्ठाणाणं चरिमट्ठाणकालो गहिदो त्ति भणंति । एदं पि ण घडदे, एक्कस्स ट्ठाणस्स कंदयत्तविरोहादो उक्कस्सविसोहीए परिणमणवारेहिंतो मज्झिमसंकिलेसपरिणमणवाराणं समाणत्तविरोहादो । तम्हा विदियअप्पाबहुगपरूवणा एत्थ ण परूविदा ।

अप्पबहुए त्ति उक्कस्सए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा थोवा ॥ ३०४ ॥

कुदो ? विसमयपाओग्गट्ठाणकालस्स थोवत्तुवलंभादो ।

जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा असंखेज्जगुणा ॥ ३०५ ॥

कुदो णव्वदे ? पुव्विल्लकालादो एदस्स कालो असंखेज्जगुणो त्ति सुत्तवयणादो

विशेष कितना है ? वह अधस्तन चार समय योग्य स्थानों सम्बन्धी कालके बराबर है । इस प्रकार अभवसिद्धिक योग्य स्थानमें प्ररूपणा करना चाहिये । इस प्रकार स्पर्शनप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अथवा, उत्कृष्ट अध्यवसानस्थान ऐसा कहनेपर दो समय योग्य स्थानोंका अन्तिम स्थान ग्रहण किया जाता है । जघन्य अनुभागस्थान ऐसा कहनेपर चार समय योग्य स्थानोंका जघन्य स्थान ग्रहण किया जाता है; ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं । परन्तु वह घटित नहीं होता क्योंकि, ऐसा होनेपर उत्कृष्ट संक्लेशमें पड़नेके वारोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट विशुद्धिमें पड़नेके वारोंके असंख्यात गुणे होनेका विरोध होता है ।

काण्डकका स्पर्शनकाल उतना ही है, ऐसा कहनेपर ऊपर चार समय योग्य स्थानोंमें अन्तिम स्थानके कालको ग्रहण किया गया है; ऐसा वे कहते हैं । परन्तु यह भी घटित नहीं होता, क्योंकि, एक स्थानके काण्डक होनेका विरोध है, तथा उत्कृष्ट विशुद्धिमें परिणत होनेके वारोंकी अपेक्षा मध्यम संक्लेशमें परिणत होनेके वारोंकी समानताका विरोध है । इस कारण द्वितीय अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा यहाँ नहीं की गई है ।

अल्पबहुत्वकी अपेक्षा उत्कृष्ट अनुभागबन्धाध्यवसानमें जीव स्तोक हैं ॥ ३०४ ॥

कारण यह कि दो समय योग्य स्थानोंका काल स्तोक पाया जाता है ।

उनसे जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानमें जीव असंख्यातगुणे हैं ॥ ३०५ ॥

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—पूर्वके कालका अपेक्षा इसकी काल असंख्यातगुणा है, इस सूत्रवचनसे जाना

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

णव्वदे जहा चदुसमयपाओग्गट्ठाणेसु परिभवंति जीवा बहुगा त्ति ।

कंदयस्स जीवा त्तिया चेव ॥ ३०६ ॥

कुदो ? दोण्णं कालादो भेदाभावादो ।

जवमज्झस्स जीवा असंखेज्जगुणा ॥३०७॥

कुदो ? कंदयकालादो जवमज्झकालस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

कंदयस्स उवरिं जीवा असंखेज्जगुणा ॥ ३०८ ॥

कुदो ? जवमज्झट्ठाणेहिंतो तिसमइयविसमइयपाओग्गट्ठाणाणमसंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

जवमज्झस्स उवरि कंदयस्स हेट्ठिमदो जीवा असंखेज्जगुणा ॥३०९॥

कुदो ? असंखेज्जगुणफोसणकालत्तादो ।

कंदयस्स उवरि जवमज्झस्स हेट्ठिमदो जीवा त्तिया चेव ॥ ३१० ॥

कुदो ? फोसणकालट्ठाणसंखाहि समाणत्तादो[१] ।

जवमज्झस्स उवरिं जावा विसेसाहिया ॥ ३११ ॥

सुगमं ।

जाता है कि चार समय योग्य स्थानोंमें जीव बहुत भ्रमण करते हैं ।

काण्डकके जीव उतने ही हैं ॥ ३०६ ॥

कारण कि दोनोंमें कालकी अपेक्षा कोई भेद नहीं है ।

उनसे यवमध्यके जीव असंख्यातगुणे हैं ॥ ३०७ ॥

कारण कि काण्डककालकी अपेक्षा यवमध्यकाल असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

उनसे काण्डकके ऊपर जीव असंख्यातगुणे हैं ॥ ३०८ ॥

कारण कि यवमध्यके स्थानोंकी अपेक्षा तीन समय व दो समय योग्य स्थान असंख्यातगुणे पाये जाते हैं ।

उनसे यवमध्यके ऊपर और काण्डकके नीचे जीव असंख्यातगुणे हैं ॥ ३०९ ॥

कारण कि यहाँ असंख्यातगुणा स्पर्शनकाल पाया जाता है ।

काण्डकके ऊपर और यवमध्यके नीचे जीव उतने ही हैं ॥ ३१० ॥

कारण कि यहाँ स्पर्शनकाल और स्थानसंख्याकी अपेक्षा समानता है ।

उनसे यवमध्यके ऊपर जीव विशेष अधिक हैं ॥ ३११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

१ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-ताप्रतिषु 'पमाणत्तादो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कंदयस्स हेट्ठदो जीवा विसेसाहिया ॥३१२॥

एदं पि सुगमं ।

कंदयस्स उवरिं [1]जीवा विसेसाहिया ॥३१३॥

सुगमं ।

सव्वेसु ट्ठाणेसु जीवा विसेसाहिया । ॥ ३१४ ॥

सुगमं ।

एवमणप्पाबहुगे समत्ते जीवसमुदाहारे त्ति तदिया चूलिया समत्ता ।

एवं वेयणभावविहाणे त्ति समत्तमणियोगगद्दारं ।

उनसे काण्डकके नीचे जीव विशेष अधिक हैं ॥ ३१२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उनसे काण्डकके ऊपर जीव विशेष अधिक हैं ॥ ३१३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उनसे सब स्थानोंमें जीव विशेष अधिक हैं ॥ ३१४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त हो जानेपर जीवसमुदाहार नामकी तृतीय चूलिका समाप्त होती है ।

इस प्रकार वेदनाभावविधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

१ आप्रतौ 'उवरिम–' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेदणापच्चयविहाणाणियोगद्दारं

वेयणपच्चयविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं, अणवगयाहियारस्स अंतेवासिस्स परूवणाए फलाभावादो। सव्वं कम्मं कज्जं चेव, अकज्जस्स कम्मस्स ससिंगस्सेव अभावावत्तीदो। ण च एवं, कोहादिकज्जाणमत्थित्तण्णहाणुववत्तीदो कम्माणमत्थित्तसिद्धीए। कज्जं पि सव्वं सहेउअं चेव, णिक्कारणस्स कज्जस्स अणुवलंभादो। तम्हा सुत्तेण विणा वि कम्माणं सहेउअत्तसिद्धीदो पच्चयविहाणं णाढवेदव्वमिदि[1]? एत्थ परिहारो वुच्चदे—कम्माणं कज्जत्तं सकारणत्तं च जुत्तीए सिद्धं चेव। किंतु पच्चयस्स विहाणं पवंचो भेदो अणेण परूविज्जदे कारणविसयविप्पडिवत्तिणिराकरणट्ठं।

(णेगम-ववहार-संगहाणं णाणावरणीयवेयणा पाणादिवादपच्चए ॥२॥)

पाणादिवादो णाम[2] पाणेहिंतो पाणीणं विजोगो। सो जत्तो मण-वयण-कायवावा-

वेदनाप्रत्ययविधान अधिकार प्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण करानेवाला है, क्योंकि, अधिकारसे अनभिज्ञ शिष्यके प्रति की जानेवाली प्ररूपणाका कोई फल नहीं है।

शंका—सब कर्म कार्यस्वरूप ही है, क्योंकि, जो कर्म अकार्यस्वरूप होते हैं उनका खरगोशके सींगके समान अभावका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, क्रोधादिरूप कार्योंका अस्तित्व बिना कर्मके बन नहीं सकता, अतएव कर्मका अस्तित्व सिद्ध ही है। कार्य भी जितना है वह सब सकारण ही होता है, क्योंकि, कारण रहित कार्य पाया नहीं जाता। इस कारण चूंकि सूत्रके बिना भी कर्मोंकी सकारणता सिद्ध है, अतः प्रत्ययविधानका प्रारम्भ करना उचित नहीं है?

समाधान—यहाँ उपर्युक्त शंकाका उत्तर कहा जाता है—कर्मोंकी कार्यरूपता और सकारणता तो युक्तिसे ही सिद्ध है। किन्तु उनके कारण विषयक विरोधका निराकरण करनेके लिये इस अधिकारके द्वारा प्रत्यय अर्थात् करणके विधान अर्थात् प्रपंच या भेदकी प्ररूपणा की जा रही है।

नैगम, व्यवहार और संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय वेदना प्राणातिपात प्रत्ययसे होती है ॥ २ ॥

प्राणातिपातका अर्थ प्राणोंसे प्राणियोंका वियोग करना है। वह जिन मन, वचन या कायके

१ अ-आप्रत्योः 'णादवेदव्वमिदि' पाठः। २ ताप्रतौ 'पाणादिवादो णाम' इत्येतावानयं पाठः सूत्रान्तर्गतोऽस्ति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रादीहिंतो ते वि पाणादिवादो। के पाणा ? चक्खु-सोद-घाण-जिब्भा-पासिंदिय-मण-वयण-कायबलुस्सासणिस्सासाउआणि त्ति दस पाणा। पच्चओ कारणं णिमित्तमिच्चणत्थंतरं। पाणादिवादो च सो पच्चश्रो च पाणादिवादपच्चओ। पाणादिवादो णाम हिंसाविसयजीव-वावारो। सो च पज्जाओ। तदो ण सो कारणं, पज्जायस्स[1] एयंतस्स कारणत्तविरोहादो त्ति ? ण, पज्जायस्स पहाणीभूदस्स [2]आयड्डियपरवक्खस्स कारणत्तुवलंभादो। तम्हि पाणादिवादपच्चए[3] णाणावरणीयवेयणा होदि। कधं पच्चयस्स सत्तमीए उप्पत्ती ? ण, पाणादिवादपच्चयविसए णाणावरणीयवेयणा वट्टदि त्ति संबंधिज्जमाणे सत्तमीविहत्तीए वइसइयाए उप्पत्तिं पडि विरोहाभावादो। अधवा, तइयत्थे सत्तमी दट्ठव्वा। तधा च पाणादिवादपच्चएण णाणावरणीयवेयणा होदि त्ति सिद्धो सुत्तट्ठो। पाणादिवादो जदि णाणावरणीयबंधस्स पच्चओ होज्ज तो तिहुवणे ट्ठिदकम्मइयखंधा णाणावरणीयपज्जएण अक्कमेण किण्ण परिणमंते, कम्मजोगत्तं पडि विसेसाभावादो ? ण, तिहुवणब्भंतरकम्मइय-

व्यापारादिकोंसे होता है वे भी प्राणातिपात ही कहे जाते हैं।

शंका—प्राण कौनसे हैं ?

समाधान—चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा व स्पर्शन, ये पाँच इन्द्रियाँ; मन, वचन और काय, ये तीन बल; तथा उच्छ्वास-निःश्वास एवं आयु, ये दस प्राण हैं।

प्रत्यय, कारण और निमित्त, ये समानार्थक शब्द हैं। प्राणातिपात रूप जो प्रत्यय वह प्राणातिपातप्रत्यय, इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है।

शंका—प्राणातिपातका अर्थ हिंसा विषयक जीवका व्यापार है। वह चूँकि पर्याय स्वरूप है अतः वह कारण नहीं हो सकता, क्योंकि, एकान्त पर्यायके कारणताका विरोध है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, यहाँ पर्याय प्रधान है और परपक्ष आकर्षित होकर उसमें गृहीत है इसलिए उसे कारण मानने में कोई विरोध नहीं है।

उक्त प्राणातिपात प्रत्ययके होनेपर ज्ञानावरणीय वेदना होती है।

शंका—प्रत्यय शब्दकी सप्तमी विभक्ति कैसे संगत है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्राणातिपात प्रत्ययके विषयमें ज्ञानावरणीय कर्मकी वेदना होती है, ऐसा सम्बन्ध करनेपर विषयार्थक सप्तमी विभक्तिकी उत्पत्तिमें विरोध नहीं आता। अथवा, तृतीया विभक्तिके अर्थमें सप्तमी विभक्ति समझना चाहिये। इस प्रकार प्राणातिपात प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है, यह सूत्रका अर्थ सिद्ध होता है।

शंका—यदि प्राणातिपात ज्ञानावरणीयके बन्धका कारण है तो तीनों लोकोंमें स्थित कार्मण स्कन्ध ज्ञानावरणीय पर्याय स्वरूपसे एक साथ क्यों नहीं परिणत होते हैं, क्योंकि, उनमें कर्म-योग्यताकी अपेक्षा समानता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, तीनों लोकोंके भीतर स्थित कार्मण स्कन्धोंमें देश विषयक

१ प्रतिषु 'पज्जत्तयस्स-' इति पाठः। २ आप्रतौ 'आयदिय' शेषप्रत्योः 'आयट्टिय' इति पाठः। ३ अ-आप्रत्योः '-पच्चएहि' इति पाठः।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

यखंधेहि देसविसयपच्चासत्तीए अभावादो । वुत्तं च—

(एयक्खेत्तोगाढ सव्वपदेसेहि कम्मणो जोग्गं[1] ।
बंधइ जहुत्तहेदू सादियमहणादियं वा वि[2] ॥ १ ॥)

जदि एयक्खेत्तोगाढा कम्मइयखंधा पाणादिवादादो[3] कम्मपज्जाएण परिणमंति तो सव्वलोगगयजीवाणं पाणादिवादपच्चएण सव्वे कम्मइयखंधा अक्कमेण[4] णाणावरणीय-पज्जाएण परिणदा होंति । ण च एवं, विदियादिसमएसु कम्मइयखंधाभावेण सव्वजीवाणं णाणावरणीयबंधस्स अभावप्पसंगादो । ण च एवं, सव्वजीवाणं णिव्वाणगमणप्पसंगादो ? एत्थ परिहारो वुच्चदे—पच्चासत्तीए एगोगाहणविसयाए संतीए वि ण सव्वे कम्मइयक्खंधा णाणावरणीयसरूवेण एगसमएण परिणमंति, पत्तं दज्झं दहमाणदहणम्मि व जीवम्मि तहाविहसत्तीए अभावादो । किं कारणं जीवम्मि तारिसी सत्ती णत्थि ? साभावियादो । कम्मइयक्खंधा किं जीवेण समवेदा संता णाणावरणीयपज्जाएण परिणमंति आहो असम-वेदा[5] ? णादिपक्खो, ओरालिय-वेउव्विय-आहार-तेजइयसरीरसण्णिदणोकम्मवदिरि-

---

प्रत्यासत्तिका अभाव है । कहा भी है—

सूक्ष्म निगोद जीवका शरीर घनांगुलके असंख्यातवें भागमात्र जघन्य अवगाहनाका क्षेत्र एक क्षेत्र कहा जाता है । उस एक क्षेत्रमें अवगाहको प्राप्त व कर्मस्वरूप परिणमनके योग्य सादि अथवा अनादि पुद्गल द्रव्यको जीव यथोक्त मिथ्यादर्शनादिक हेतुओंसे संयुक्त होकर समस्त आत्म-प्रदेशोंके द्वारा बाँधता है ॥ १ ॥

शंका—यदि एक क्षेत्रावगाहरूप हुए कार्मण स्कन्ध प्राणातिपातके निमित्तसे कर्म पर्यायरूप परिणमते हैं तो समस्त लोकमें स्थित जीवोंके प्राणातिपात प्रत्ययके द्वारा सभी कार्मण स्कन्ध एक साथ ज्ञानावरणीय रूप पर्यायसे परिणत हो जाने चाहिये । परन्तु ऐसा हो नहीं सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर द्वितीयादिक समयोंमें कार्मण स्कन्धोंका अभाव हो जानेसे सब जीवोंके ज्ञाना-वरणीयका बन्ध न हो सकनेका प्रसंग आता है । किन्तु ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे समस्त जीवोंके मुक्ति प्राप्तिका प्रसंग अनिवार्य है ?

समाधान—उपर्युक्त शंकाका परिहार कहा जाता है—एक अवगाहनाविषयक प्रत्यासत्तिके होनेपर भी सब कार्मण स्कन्ध एक समयमें ज्ञानावरणीय स्वरूपसे नहीं परिणमते हैं, क्योंकि, इन्धन आदि दाह्य वस्तुको जलानेवाली अग्निके समान जीवमें उस प्रकारकी शक्ति नहीं है ।

शंका—जीवमें वैसी शक्तिके न होनेका क्या कारण है ?

समाधान—उसमें वैसी शक्ति न होनेका कारण स्वभाव ही है ।

शंका—कार्मण स्कन्ध क्या जीवमें समवेत होकर ज्ञानावरणीय पर्यायरूपसे परिणमते हैं अथवा असमवेत होकर ? प्रथम पक्ष तो सम्भव नहीं है, क्योंकि, औदारिक, वैक्रियिक, आहारक

---

१ अ-आप्रत्योः 'जोगं' इति पाठः । २ गो०, क०, १८५ । ३ अ-आप्रत्योः 'पादोदो' इति पाठः । ४ आप्रतौ 'अकम्मेण' इति पाठः । ५ आप्रतौ 'असमदणादि–' इति पाठः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

त्तस्स कम्मइयक्खंधस्स कम्मसरूवेण अपरिणदस्स जीवे समवेदस्स अणुवलंभादो। उवलंभे वा पत्तेयसरीरवग्गणाए ट्ठाणपरूवणाए कीरमाणाए ओरालिय-वेउव्विय-तेजा-कम्मइयसरीराणि अस्सिदूण जहा परूवणा कदा एवं जीवसमवेदकम्मइयखंधे वि अस्सिदूण ट्ठाणपरूवणा करेज्ज। ण च एवं, तहाणुवलंभादो। ण विदिओ[1] वि पक्खो जुज्जदे, जीवे असमवेदाणं कम्मइयक्खंधाणं[2] णाणावरणीयसरूवेण परिणमणविरोहादो। अविरोहे वा जीवो संसारावत्थाए अमुत्तो होज्ज, मुत्तदव्वेहि संबंधाभावादो। ण च एवं, जीवगमणे सरीरस्स संबंधाभावेण [3]अगमणप्पसंगादो, जीवादो पुधभूदं सरीरमिदि अणुहवाभावादो च। ण पच्छा दोण्णं पि संबंधो, कारणे अक्कमे संते कज्जस्स कमुप्पत्तिविरोहादो त्ति? एत्थ परिहारो वुच्चदे—जीवसमवेदकाले चेव कम्मइयक्खंधा ण[4] णाणावरणीयसरूवेण परिणमंति [त्ति] ण पुव्वुत्तदोसा ढुक्कंति। कधमेगो पाणादिवादो अक्कमेण दोण्णं कज्जाणं संपादओ? ण, एयादो मोग्गरादो घादावयवविभागट्ठाणसंचालणक्खेत्तंतरवत्ति[5]खप्परकज्जाणमक्कमेणुप्पत्तिदंसणादो। कधमेगो पाणादिवादो अणंते कम्मइय-

और तैजस शरीर संज्ञावाले नोकर्मसे भिन्न और कर्मस्वरूपसे अपरिणत हुआ कार्मण स्कन्ध जीव में समवेत नहीं पाया जाता। अथवा यदि पाया जाता है तो प्रत्येक शरीरकी वर्गणाके स्थानोंकी प्ररूपणा करते समय औदारिक, वैक्रियिक, तैजस और कार्मण शरीरका आश्रय करके जैसे प्ररूपणा की गई है, इस प्रकार जीव समवेत कार्मण स्कन्धोंका आश्रय करके भी स्थानप्ररूपणा करनी चाहिये थी। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वह पायी नहीं जाती। दूसरा पक्ष भी युक्तिसंगत नहीं है, क्योंकि, जीवमें असमवेत कार्मण स्कन्धोंके ज्ञानावरणीय स्वरूपसे परिणत होनेका विरोध है। यदि विरोध न माना जाय तो संसार अवस्थामें जीवको अमूर्त होना चाहिये, क्योंकि, मूर्त द्रव्योंसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु ऐसा है नहीं क्योंकि, जीवके गमन करनेपर शरीरका सम्बन्ध न रहनेसे उसके गमन न करनेका प्रसंग आता है। दूसरे, जीवसे शरीर पृथक् है, ऐसा अनुभव भी नहीं होता। पीछे दोनोंका सम्बन्ध होता है, ऐसा भी सम्भव नहीं है; क्योंकि, कारणके क्रम रहित होनेपर कार्यकी क्रमिक उत्पत्तिका विरोध है?

समाधान—यहाँ उक्त शंकाका परिहार करते हैं। यथा—जीवसे समवेत होनेके समयमें ही कार्मण स्कन्ध ज्ञानावरणीय स्वरूपसे नहीं परिणमते हैं। अतएव पूर्वोक्त दोष यहाँ नहीं ढूँकते।

शंका—प्राणातिपात रूप एक ही कारण युगपत् दो कार्योंका उत्पादक कैसे हो सकता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि एक मुद्गरसे घात, अवयवविभाग, स्थानसंचालन और क्षेत्रान्तरकी प्राप्तिरूप खप्पर कार्योंकी युगपत् उत्पत्ति देखी जाती है।

शंका—प्राणातिपात रूप एक ही कारण अनन्त कार्मण स्कन्धोंको एक साथ ज्ञानावरणीय

१ अ-आप्रत्योः 'बीइदिओ' ताप्रतौ 'बीइज्जओ' इति पाठः। २ ताप्रतौ नोपलभ्यते पदमिदम्। ३ अप्रतौ 'आगमण' इति पाठः। ४ अ-आप्रत्योः 'कम्मइयक्खंधाण', ताप्रतौ 'कम्मइयक्खंधा [णं]' इति पाठः। ५ अ-आप्रत्योः 'क्खेत्तंतरावेति' इति पाठः।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

क्खंधे णाणावरणीयसरूवेण अक्कमेण परिणामावेदि, बहुसु एक्कस्स अक्कमेण वुत्तिविरोहादो ? ण, एयस्स पाणादिवादस्स अणंतसत्तिजुत्तस्स तदविरोहादो ।

(मुसावादपच्चए ॥ ३ ॥)

असंतवयणं मुसावादो । किमसंतवयणं ? मिच्छत्तासंजम-कसाय-पमादुट्ठावियो वयणकलावो । एदम्हि मुसावादपच्चए मुसावादपच्चएण वा णाणावरणीयवेयणा जायदे । कम्मबंधो हि णाम सुहासुहपरिणामेहिंतो जायदे, सुद्धपरिणामेहिंतो तेसिं दोण्णं पि णिम्मूलक्खओ ।

(ओदइया बंधयरा उवसम-खय-मिस्सया य मोक्खयरा ।
परिणामिओ दु भावो करणोहयवज्जियो होदि[1] ॥ २ ॥)

इदिवयणादो । असंतवयणं पुण ण सुहपरिणामो, णो असुहपरिणामो, पोग्गलस्स तप्परिणामस्स वा जीवपरिणामत्तविरोहादो । तदो णासंतवयणं णाणावरणीयबंधस्स कारणं । णासंतवयणकारणकसाय-पमादाणमसंतवयणववएसो, तेसिं कोह-माण-माया-लोहपच्चएसु अंतब्भावेण पउणरुत्तियप्पसंगादो । ण पाणादिवादपच्चओ वि, भिण्णजीव-

स्वरूपसे कैसे परिणमाता है, क्योंकि, बहुतोंमें एककी युगपत् वृत्तिका विरोध है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्राणातिपात रूप एक ही कारणके अनन्त शक्तियुक्त होनेसे वैसा होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

मृषावाद प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ३ ॥

असत् वचनका नाम मृषवाद है ।

शंका—असत् वचन किसे कहते हैं ?

समाधान—मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और प्रमादसे उत्पन्न वचन समूहको असत् वचन कहते हैं ।

इस मृषावाद प्रत्ययमें अथवा मृषावाद प्रत्ययके द्वारा ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।

शंका—कर्मका बन्ध शुभ व अशुभ परिणामोंसे होता है और शुद्ध परिणामोंसे उन (शुभ व अशुभ) दोनोंका ही निर्मूल क्षय होता है; क्योंकि—

'औदयिक भाव बन्धके कारण और औपशमिक, क्षायिक व मिश्र भाव मोक्षके कारण हैं । पारिणामिक भाव बन्ध व मोक्ष दोनोंके ही कारण नहीं हैं ॥ २ ॥

ऐसा आगमवचन है । परन्तु असत्य वचन न तो शुभ परिणाम है और न अशुभ परिणाम है; क्योंकि, पुद्गलके अथवा उसके परिणामके जीवपरिणाम होनेका विरोध है । इस कारण असत्य वचन ज्ञानावरणीयके बन्धका कारण नहीं हो सकता । यदि कहा जाय कि असत्य वचनके कारणभूत कषाय और प्रमादकी असत्य वचन संज्ञा है सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, उनका क्रोध, मान, माया व लोभ प्रत्ययोंमें अन्तर्भाव होनेसे पुनरुक्ति दोषका प्रसंग आता है । इसी

१ पु. ७ पृ. ६., क. पा. १ पृ. ६. इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसयस्स पाण-पाणिविओगस्स[1] कम्मबंधहेउत्तविरोहादो। ण च पाण-पाणि[2]विओगकारणजीवपरिणामो पाणादिवादो, तस्स राग-दोस-मोहपच्चएसु अंतब्भावेण पउणरुत्तियप्पसंगादो त्ति ? एत्थ परिहारो वुच्चदे—सव्वस्स कज्जकलावस्स कारणादो अभेदो सत्तादीहिंतो त्ति णए अवलंबिज्जमाणे कारणादो कज्जमभिण्णं, कज्जादो कारणं पि, असदकरणाद् उपादानग्रहणात् सर्वसंभवाभावात् शक्तस्य शक्यकरणात् कारणभावाच्च[3]। कारणे कार्यमस्तीति विवक्षातो वा कारणात्कार्यमभिन्नं। णाणावरणीयबंधणिबंधणपरिणाम-

प्रकार प्राणातिपात भी ज्ञानावरणीयका प्रत्यय नहीं होसकता,क्योंकि,अन्य जीवविषयक प्राण-प्राणिवियोगके कर्मबन्धमें कारण होनेका विरोध है। यदि कहा जाय कि प्राण व प्राणीके वियोगका कारणभूत जीवका परिणाम प्राणातिपात कहा जाता है, सो यह भी ठीक नहीं है, क्योंकि, उसका राग, द्वेष एवं मोह प्रत्ययोंमें अन्तर्भाव होनेसे पुनरुक्ति दोषका प्रसंग आता है।

समाधान—उपर्युक्त शंकाका परिहार कहा जाता है। यथा—सत्ता आदिकी अपेक्षा सभी कार्यकलापका कारणसे अभेद है, इस नयका अवलम्बन करनेपर कारणसे कार्य अभिन्न है तथा कार्यसे कारण भी अभिन्न है; क्योंकि, असत् कार्य कभी किया नहीं जा सकता है, नियत उपादानकी अपेक्षाकी जाती है, किसी एक कारणसे सभी कार्य उत्पन्न नहीं हो सकते, समर्थ कारणके द्वारा शक्य कार्य ही किया जाता है, तथा असत् कार्यके साथ कारणका सम्बन्ध भी नहीं बन सकता।

विशेषार्थ—यहाँ कार्यका कारणके साथ अभेद बतलानेके लिये निम्न पाँच हेतु दिये गये हैं—(१) यदि कारणके साथ सत्ताकी अपेक्षा भी कार्यका अभेद न स्वीकार किया जाय तो कारणके द्वारा असत् कार्य कभी किया नहीं जा सकेगा, जैसे—खरविषाणादि। अतएव कारणव्यापारके पूर्व भी कारणके समान कार्यको भी सत् ही स्वीकार करना चाहिये। इस प्रकार सत्ताकी अपेक्षा दोनोंमें कोई भेद नहीं रहता। (२) दूसरा हेतु 'उपादानग्रहण' दिया गया है। उपादानग्रहणका अर्थ उपादान कारणोंके साथ कार्यका सम्बन्ध है। अर्थात् कार्यसे सम्बद्ध होकर ही कारण उसका जनक हो सकता है, न कि उससे असम्बद्ध रहकर भी। और चूँकि कारणका सम्बन्ध असत् कार्यके साथ सम्भव नहीं है, अतएव कारणव्यापारसे पहिले भी कार्यको सत् स्वीकार करना ही चाहिये (३) अब यहाँ शंका उपस्थित होती है कि कारण अपनेसे असंबद्ध कार्यको उत्पन्न क्यों नहीं करते हैं ? इसके समाधानमें 'सर्वसम्भवाभाव' रूप यह तीसरा हेतु दिया गया है। अभिप्राय यह है कि यदि कारण अपनेसे असम्बद्ध कार्यके उत्पादक हो सकते हैं तो जिस प्रकार मिट्टीसे घट उत्पन्न होता है उसी प्रकार उससे पट आदि अन्य कार्य भी उत्पन्न हो जाने चाहिये, क्योंकि, मिट्टीका जैसे पट आदिसे कोई सम्बन्ध नहीं है वैसे ही घटसे भी उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। इस प्रकार सब कारणोंसे सभी कार्योंके उत्पन्न होने रूप जिस अव्यवस्थाका प्रसंग आता है उस अव्यवस्थाको टालनेके लिए मानना पड़ेगा कि घट मिट्टीमें कारणव्यापारके पूर्व भी सत् ही था। वह केवल कारणव्यापारसे अभिव्यक्त किया जाता है। (४) पुनः शंका उपस्थित होती है कि असम्बद्ध रहकर भी कारण जिस

१ अ-आप्रत्योः 'विसयोगस्त' ताप्रतौ 'वियोगस्स' इति पाठः। २ प्रतिषु 'वियोग' इति पाठः। ३ असदकरणादुपादानग्रहणात् सर्वसम्भवाभावात्। शक्तस्य शक्यकरणात् कारणभावाच्च सत्कार्यम्॥ सांख्यकारिका ९.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिदो वट्टदे पाण-पाणिवियोयो वयणकलावो च। तम्हा तदो तेसिमभेदो। तेणेव कारणेण णाणावरणीयबंधस्स तेसिं पच्चयत्तं पि सिद्धं। एवंविहववहारो किमट्ठं कीरदे? सुहेण णाणावरणीयपच्चयपडिबोहणट्ठं कज्जपडिसेहदुवारेण कारणपडिसेहट्ठं च।

(अदत्तादाणपच्चए ॥ ४ ॥)

अदत्तस्स अदिण्णस्स आदाणं गहणं अदत्तादाणं[1] सो चेव पच्चओ अदत्तादाणपच्चओ, तम्हि अदत्तादाणपच्चयविसए णाणावरणीयवेयणा होदि। एत्थ वि जेण 'आदीयदे अणेण आदीयद इदि आदाणं' तेण अदिण्णत्थो तग्गहणपरिणामो च अदत्तादाणं। ण च पाणादिवाद-मुसावाद-अदत्तादाणाणमंतरंगाणं कोधादिपच्चएसु अंतब्भावो, कधंचि

कार्यके उत्पादनमें समर्थ है उसे ही उत्पन्न करेगा, न कि अन्य अशक्य कार्योंको। अतएव उपयुक्त अवस्थाकी सम्भावना नहीं है? इसके उत्तरमें 'समर्थ कारणके द्वारा शक्य ही कार्य किया जाता है' यह चतुर्थ हेतु दिया गया है। अर्थात् कारणमें विद्यमान कार्यजनन रूप शक्ति यदि सर्व कार्यविषयक है तब तो उपर्युक्त अवस्था ज्योंकी त्यों बनी रहती है। परन्तु यदि वह शक्ति शक्य विवक्षित घटादि कार्यविषयक ही है तो भला अविद्यमान घटादि कार्योंमें उक्त शक्तिकी सम्भावना ही कैसे की जा सकती है? अतएव उक्त अव्यवस्थाके निवारणार्थ कार्यको 'सत्' ही स्वीकार करना चाहिये। (५) पाचवाँ हेतु 'कारणभाव' है। इसका अभिप्राय यह है कि कार्य चूँकि कारणात्मक ही है, उससे भिन्न नहीं है; अतएव सत् कारणसे अभिन्न कार्य कभी असत् नहीं हो सकता। इस प्रकार इन पाँच हेतुओंके द्वारा कार्यके 'सत्' सिद्ध हो जानेपर सत्तादिक धर्मोंकी अपेक्षा कार्य अपने कारणसे स्वयमेव अभिन्न सिद्ध हो जाता है।

अथवा, 'कारणमें कार्य है' इस विवक्षासे भी कारणसे कार्य अभिन्न है। प्रकृतमें प्राण-प्राणिवियोग और वचनकलाप चूँकि ज्ञानावरणीयबन्धके कारणभूत परिणामसे उत्पन्न होते हैं अतएव वे उससे अभिन्न हैं। इसी कारण वे ज्ञानावरणीयबन्धके प्रत्यय भी सिद्ध होते हैं।

शंका—इस प्रकारका व्यवहार किसलिये किया जाता है?

समाधान—सुखपूर्वक ज्ञानावरणीयके प्रत्ययोंका प्रतिबोध करानेके लिये तथा कार्यके प्रतिषेध द्वारा कारणका प्रतिषेध करनेके लिये भी उपर्युक्त व्यवहार किया जाता है।

अदत्तादान प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ४ ॥

अदत्त अर्थात् नहीं दिये गये पदार्थका आदान अर्थात् ग्रहण करना 'अदत्तादान' है। अदत्तादान ऐसा जो वह प्रत्यय अदत्तादानप्रत्यय, इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है। उस अदत्तादान प्रत्ययके विषयमें ज्ञानावरणीय वेदना होती है। यहाँ भी चूँकि 'जिसके द्वारा ग्रहण किया जाय या जो ग्रहण किया जाय' इस प्रकार आदान शब्दकी निरुक्ति की गई है अतएव उससे अदत्त पदार्थ और उसके ग्रहण करनेका परिणाम दोनों ही अदत्तादान ठहरते हैं। प्राणातिपात, मृषावाद और अदत्तादान इन अन्तरंग प्रत्ययोंका क्रोधादिक प्रत्ययोंमें अन्तर्भाव नहीं हो सकता,

१ अ-आप्रत्योः 'अदत्तादाणगहणं', ताप्रतौ 'अदत्तादाणं [गहणं]' इति पाठः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्तो[1] तेसिं भेदुवलंभादो। एत्थ [2]बज्झत्थाणं पुव्वं पच्चयत्तं परूवेदव्वं। ण च पमादेण विणा तियरणसाहणट्ठं गहिदबज्झट्ठो णाणावरणीयपच्चओ, पच्चयादो अणुप्पण्णस्स पच्चयत्तविरोहादो।

मेहुणपच्चए ॥ ५ ॥

इत्थी-पुरिसविसयवावारो मण-वयण-कायसरूवो मेहुणं। तेण मेहुणपच्चएण णाणावरणीयवेयणा जायदे। एत्थ वि अंतरंगमेहुणस्सेव बहिरंगमेहुणस्स आसवभावो वत्तव्वो। ण च मेहुणं अंतरंगरागे णिपददि, तत्तो कथंचि एदस्स भेदुवलंभादो।

परिग्गहपच्चए ॥ ६ ॥

परिगृह्यत इति परिग्रहः बाह्यार्थः क्षेत्रादिः, परिगृह्यते अनेनेति च परिग्रहः बाह्यार्थग्रहणहेतुरत्र परिणामः। एदेहि परिग्गहेहि णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे। एत्थ बहिरंगस्स परिग्गहस्स पुव्वं व पच्चयभावो वत्तव्वो।

रादिभोयणपच्चए ॥ ७ ॥

भुज्यत इति भोजनमोदनः भुक्तिकारणपरिणामो वा भोजनं। रत्तीए भोयणं

क्योंकि, उनसे इनका कथंचित् भेद पाया जाता है। यहाँ बाह्य पदार्थोंको पूर्वमें प्रत्यय बतलाना चाहिये। इसका कारण यह है कि प्रमादके बिना रत्नत्रयको सिद्ध करनेके लिये ग्रहण किया गया बाह्य पदार्थ ज्ञानावरणीयके बन्धका प्रत्यय नहीं हो सकता, क्योंकि, जो प्रत्ययसे उत्पन्न नहीं हुआ है उसे प्रत्यय स्वीकार करना विरुद्ध है।

मैथुन प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ५ ॥

स्त्री और पुरुषके मन, वचन व काय स्वरूप विषयव्यापारको मैथुन कहा जाता है। उस मैथुनप्रत्ययके द्वारा ज्ञानावरणीयकी वेदना होती है। यहाँपर भी अन्तरंग मैथुनके ही समान बहिरंग मैथुनको भी कारण बतलाना चाहिये। मैथुन अन्तरंग रागमें गर्भित नहीं होता, क्योंकि, उससे इसमें कथंचित् भेद पाया जाता है।

परिग्रह प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ६ ॥

'परिगृह्यते इति परिग्रहः' अर्थात् जो ग्रहण किया जाता है।' इस निरुक्तिके अनुसार क्षेत्रादि रूप बाह्य पदार्थ परिग्रह कहा जाता है, तथा 'परिगृह्यते अनेनेति परिग्रहः' जिसके द्वारा ग्रहण किया जाता है वह परिग्रह है, इस निरुक्तिके अनुसार यहाँ बाह्य पदार्थके ग्रहणमें कारणभूत परिणाम परिग्रह कहा जाता है। इन दोनों प्रकारके परिग्रहोंसे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है। यहाँ बहिरंग परिग्रहको पहिलेके समान कारण बतलाना चाहिये।

रात्रिभोजन प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ७ ॥

'भुज्यते इति भोजनम्' अर्थात् जो खाया जाता है वह भोजन है, इस निरुक्तिके अनुसार

१ अ-ताप्रत्योः 'कथंचिदत्तो', आप्रतौ 'कथंचिददत्तो' इति पाठः। २ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः 'बज्झगंधाणं', ताप्रतौ 'बज्झगंधा (था) णं' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

रादिभोयणं। तेण रादिभोयणपच्चएण णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे। (जेणेदं सुत्तं देसामासियं तेणेत्थ महु-मांस-पंचुंबर-णिंवसण-हुल्ल[1]भक्खण-सुरापान-अवेलासणादीणं पि णाणावरणपच्चयत्तं परूवेदव्वं) एवमसंजमपच्चओ परूविदो। संपहि कसायपच्चयपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

(एवं कोह-माण-माया-लोह-राग-दोस-मोह-पेम्मपच्चए ॥ ८ ॥)

हृदयदाहांगकंपाक्षिरागेन्द्रियापाटवादि[2]निमित्तजीवपरिणामः क्रोधः। विज्ञानैश्वर्य-जाति-कुल-तपो-विद्याजनितो जीवपरिणामः औद्धत्यात्मको मानः। स्वहृदयप्रच्छादानार्थमनुष्ठानं माया। बाह्यार्थेसु ममेदं बुद्धिर्लोभः। माया-लोभ-वेदत्रय-हास्य-रतयो रागः। क्रोध-मानारति-शोक-जुगुप्सा-भयानि द्वेषः। क्रोध-मान-माया-लोभ-हास्य-रत्यरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुं-नपुंसकवेद-मिथ्यात्वानां समूहो मोहः। मोहपच्चयो कोहादिसु पविसदि त्ति किण्णावणिज्जदे? ण, अवयवावयवीणं वदिरेगण्णयसरूवाणमणेगेगसंखाणं

ओदनको भोजन कहा गया है। अथवा [भुज्यते अनेनेति भोजनम्] इस निरुक्तिके अनुसार आहारग्रहणके कारणभूत परिणामको भी भोजन कहा जाता है। रात्रिमें भोजन रात्रि भोजन, इस प्रकार यहाँ तत्पुरुष समास है। उक्त रात्रिभोजन प्रत्ययसे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है। चूंकि यह सूत्र देशामर्शक है अतः उससे यहाँ मधु, मांस, पाँच उदुम्बर फल, निन्द्य भोजन और फूलोंके भक्षण, मद्यपान तथा असामयिक भोजन आदिको भी ज्ञानावरणीयका प्रत्यय बतलाना चाहिये। इस प्रकार असंयम प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई। अब कषाय प्रत्ययकी प्ररूपणाके लिये आगेका सूत्र कहा जाता है—

इसी प्रकार क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह और प्रेम प्रत्ययोंसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ८ ॥

हृदयदाह, अंगकम्प, नेत्ररक्तता और इन्द्रियोंकी अपटुता आदिके निमित्तभूत जीवके परिणामको क्रोध कहा जाता है। विज्ञान, ऐश्वर्य, जाति, कुल, तप और विद्या इनके निमित्तसे उत्पन्न उद्धतता रूप जीवका परिणाम मान कहलाता है। अपने हृदयके विचारको छुपानेकी जो चेष्टा की जाती है उसे माया कहते हैं। बाह्य पदार्थोंमें जो 'यह मेरा है' इस प्रकार अनुराग रूप बुद्धि होती है उसे लोभ कहा जाता है। माया, लोभ, तीन वेद, हास्य और रति इनका नाम राग है। क्रोध, मान, अरति, शोक, जुगुप्सा और भय, इनको द्वेष कहा जाता है। क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद और मिथ्यात्व इनके समूहका नाम मोह है।

शंका—मोहप्रत्यय चूंकि क्रोधादिकमें प्रविष्ट है अतएव उसे कम क्यों नहीं किया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि क्रमशः व्यतिरेक व अन्वय स्वरूप, अनेक व एक संख्यावाले,

१ अाप्रतौ 'कुल्ल' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'रागेंद्रियपाटवादि' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कारण-कज्जाणं एगाणेगसहावाणमेगत्तविरोहादो। प्रियत्वं प्रेम। एदेसु पादेक्कं पच्चयसद्दो जोजणीयो कोहपच्चए माणपच्चए मायपच्चए लोहपच्चए रागपच्चए दोसपच्चए मोहपच्चए पेम्मपच्चए त्ति। एदेहि पच्चएहि णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे। पेम्मपच्चयो लोभ-राग-पच्चएसु पविसदि त्ति पुणरुत्तो किण्ण जायदे? ण, तेहिंतो एदस्स कथंचि भेदुवलंभादो। तं जहा— बज्झत्थेसु ममेदं भावो लोभो। ण सो पेम्मं, ममेदं बुद्धीए अपडिग्गहिदे वि दक्खाहले परदारे वा पेम्मुवलंभादो। ण रागो पेम्मं, माया-लोह-हस्स-रदि-पेम्मसमूहस्स रागस्स अवयविणो अवयवसरूवपेम्मत्तविरोहादो।

णिदाणपच्चए ॥ ९ ॥

चक्कवट्टि-बल-णारायण-सेट्ठि-सेणावइपदादियत्थणं णिदाणं। सो पच्चओ, पमाद-मूलत्तादो मिच्छत्ताविणाभावादो वा। तेण णाणावरणीयवेयणा संपज्जदे। ण च एसो पच्चओ मिच्छत्तपच्चए पविसदि, मिच्छत्तसहचारिस्स मिच्छत्तेण एयत्तविरोहादो। ण पेम्मपच्चए पविसदि, संपयासंपयविसयम्मि पेम्मम्मि संपयविसयम्मि णिदाणस्स पवेस-विरोहादो। किमट्ठं पुधसुत्तारंभो? मिच्छत्त-कोह-माण-माया-लोभ-राग-दोस-मोह-पेम्मा-

---

कारण व कार्य रूप तथा एक व अनेक स्वभावसे संयुक्त अवयव अवयवीके एक होनेका विरोध है।

प्रियताका नाम प्रेम है। इनमेंसे प्रत्येकमें प्रत्यय शब्दको जोड़ना चाहिये— क्रोधप्रत्यय, मानप्रत्यय, मायाप्रत्यय, लोभप्रत्यय, रागप्रत्यय, द्वेषप्रत्यय, मोहप्रत्यय और प्रेमप्रत्यय इनके द्वारा ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है।

शंका— चूंकि प्रेमप्रत्यय लोभ व रागप्रत्ययोंमें प्रविष्ट है अतः वह पुनरुक्त क्यों न होगा?

समाधान— नहीं, क्योंकि उनसे इसका कथंचित् भेद पाया जाता है। वह इस प्रकारसे— बाह्य पदार्थोंमें 'यह मेरा है' इस प्रकारके भावको लोभ कहा जाता है। वह प्रेम नहीं हो सकता, क्योंकि, 'यह मेरा है' ऐसी बुद्धिके अविषयभूत भी द्राक्षाफल अथवा परस्त्रीके विषयमें प्रेम पाया जाता है। राग भी प्रेम नहीं हो सकता, क्योंकि, माया, लोभ, हास्य, रति और प्रेमके समूह रूप अवयवी कहलानेवाले रागके अवयव स्वरूप प्रेम रूप होनेका विरोध है।

निदान प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ९ ॥

चक्रवर्ती बलदेव, नारायण, श्रेष्ठी और सेनापति आदि पदोंकी प्रार्थना अर्थात् अभिलाषा करना निदान है। वह प्रमादमूलक अथवा मिथ्यात्वका अविनाभावी होनेसे प्रत्यय है। उससे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है। यह प्रत्यय मिथ्यात्व प्रत्ययमें प्रविष्ट नहीं होता, क्योंकि, वह मिथ्यात्वका सहचारी (अविनाभावी) है, अतः मिथ्यात्वके साथ उसकी एकताका विरोध है। वह प्रेम प्रत्ययमें भी प्रविष्ट नहीं होता, क्योंकि, प्रेम सम्पत्ति एवं असंपत्ति दोनोंको विषय करने-वाला है, परन्तु निदान केवल सम्पत्तिको ही विषय करता है; अत एव उसका प्रेममें प्रविष्ट होना विरुद्ध है।

शंका— निदान प्रत्ययकी प्ररूपणाके लिये पृथक् सूत्र किसलिये रचा गया है?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिमूलो अणंतसंसारकारणो णिदाणपच्चओ त्ति जाणावणट्ठं पुध सुत्तारंभो कदो।

अब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण-रइ-अरइ-उवहि-णियदि[1]-माण-माय[2]-मोस-मिच्छणाण-मिच्छदंसण-पओअपच्चए ॥१०॥

क्रोध-मान-माया-लोभादिभिः परेष्वविद्यमानदोषोद्भावनमभ्याख्यानम्। क्रोधादिवशादसि-दंडासभ्यवचनादिभिः परसन्तापजननं कलहः। परेषां क्रोधादिना दोषोद्भावनं पैशून्यम्। नप्तृ-पुत्र-कलत्रादिषु रमणं रतिः। तत्प्रतिपक्षा अरतिः। उपेत्य क्रोधादयो धीयंते अस्मिन्निति उपधिः, क्रोधाद्युत्पत्तिनिबन्धनो बाह्यार्थ उपधिः। सोऽपि ज्ञानावरणीयबन्धनिबन्धनः, तेन विना कषायाभावतो बन्धाभावात्। निकृतिर्वंचना, मणि-सुवर्ण-रूप्याभासदानतो द्रव्यान्तरादानं निकृतिरित्यर्थः। मानं प्रस्थादिः हीनाधिकभावमापन्नः। सोऽपि कूटव्यवहारहेतुत्वाद् ज्ञानावरणीयस्य प्रत्ययः। मेयो यव-गोधूमादिः। सोऽपि ज्ञानावरणीयस्य प्रत्ययः, मातुरसद्व्यवहारस्य निबन्धनत्वात्। कथं मेयस्य मायत्वम्? नैष दोषः।

समाधान—मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह और प्रेम आदिके निमित्तसे होनेवाला निदान प्रत्यय अनन्त संसारका कारण है; यह बतलनेके लिये पृथक सूत्रकी रचना की गई है।

अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, माया, मोष, मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन और प्रयोग, इन प्रत्ययोंसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ १० ॥

क्रोध, मान, माया और लोभ आदिके कारण दूसरोंमें अविद्यमान दोषोंको प्रगट करना अभ्याख्यान कहा जाता है। क्रोधादिके वश होकर तलवार, लाठी और असभ्य वचनादिके द्वारा दूसरोंको सन्ताप उत्पन्न करना कलह कहलाता है। क्रोधादिके कारण दूसरोंके दोषोंको प्रगट करना पैशून्य है। नाती, पुत्र एवं स्त्री आदिकोंमें रमण करनेका नाम रति है। इसकी प्रतिपक्षभूत अरति कही जाती है। 'उपेत्य क्रोधादयो धीयन्त अस्मिन् इति उपधिः' अर्थात् आकरके क्रोधादिक जहाँ पर पुष्ट होते हैं उसका नाम उपधि है, इस निरुक्तिके अनुसार क्रोधादि परिणामोंकी उत्पत्तिमें निमित्तभूत बाह्य पदार्थको उपधि कहा गया है। वह भी ज्ञानावरणीयके बन्धका कारण है, क्योंकि, उसके बिना कषायरूप परिणामका अभाव होनेसे बन्ध नहीं हो सकता। निकृतिका अर्थ धोखा देना है, अभिप्राय यह कि नकली मणि सुवर्ण चांदी देकर द्रव्यान्तरको प्राप्त करना निकृति कही जाती है। हीनता व अधिकताको प्राप्त प्रस्थ (एक प्रकारका माप) आदि मान कहलाते हैं। वे भी कूट अर्थात् असत्य व्यवहारके कारण होनेसे ज्ञानावरणीयके प्रत्यय हैं। मापनेके योग्य जौ और गेहूँ आदि मेय कहे जाते हैं। वे भी ज्ञानावरणीयके प्रत्यय हैं, क्योंकि, वे मापनेवालेके असत्य व्यवहारके कारण हैं।

शंका—मेयके स्थानमें माय शब्दका प्रयोग कैसे किया गया है?

१ अ-आप्रत्योः 'णयरदि' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'माया', इति पाठः।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

'एए छच्च समाणा दोण्णि य संझक्खरा सरा अट्ठ ।
अण्णोण्णस्स परोप्परमुवेंति सव्वे समावेसं'[1] ॥ २ ॥

इत्यनेन सूत्रेण प्राकृते एकारस्य आकारविधानात् । मोषस्तेयः । ण मोसो अदत्तादाणे पविस्सदि, हदपदिदपमुक्क[2] णिहिदादाणविसयम्मि अदत्तादाणम्मि एदस्स पवेस[3]-विरोहादो । बौद्ध-नैयायिक-सांख्य-मीमांसक-चार्वाक-वैशेषिकादिदर्शनरुच्यनुविद्धं ज्ञानं मिथ्याज्ञानम् । मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणि [4] मिच्छदंसणं । मण-वचि-कायजोगा[5] पओओ । एदेहि सव्वेहि णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे । कोध-माण-माया-लोभ-राग-दोस-मोह-पेम्म-णिदाण-अब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण-रदि-अरदि-उवहि-णियदि-माण-माय-मोसेहि कसायपच्चओ परूविदो । मिच्छणाण-मिच्छदंसणेहि मिच्छत्तपच्चओ णिद्दिट्ठो । पओएण जोगपच्चओ परूविदो । पमादपच्चओ एत्थ किण्ण वुत्तो ? ण, एदेहिंतो वज्झपमादाणुवलंभादो । कधमेयं कज्जमणेगेहिंतो उप्पज्जदे ? ण, एगादो कुंभारादो उप्पण्णघडस्स अण्णादो वि उप्पत्तिदंसणादो । पुरिसं पडि पुध पुध उप्पज्जमाणा कुंभोदंचण-

---

समाधान—'यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अ, आ, इ, ई, उ और ऊ, ये छह समान स्वर और ए व ओ, ये दो सन्ध्यक्षर, इस प्रकार ये सब आठ स्वर परस्पर आदेशको प्राप्त होते हैं ॥ २ ॥'

इस सूत्रसे प्राकृतमें एकारके स्थानमें आकार किया गया है ।

मोषका अर्थ चोरी है । यह मोष अदत्तादानमें प्रविष्ट नहीं होता, क्योंकि हृत, पतित, प्रमुक्त और निहित पदार्थके ग्रहणविषयक अदत्तादानमें इसके प्रवेशका विरोध है । बौद्ध, नैयायिक, सांख्य, मीमांसक, चर्वाक और वैशेषिक आदि दर्शनोंकी रुचिसे सम्बद्ध ज्ञान मिथ्याज्ञान कहलाता है । मिथ्यात्वके समान जो हैं वे भी मिथ्यात्व हैं, उन्हींको मिथ्यादर्शन कहा जाता है । मन, बचन एवं कायरूप योगोंको प्रयोग शब्दसे ग्रहण किया गया है । इन सबोंसे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है । क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, प्रेम, निदान, अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, रति, अरति उपधि, निकृति, मान ,माया और मोष, इनसे कषाय प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई है । मिथ्याज्ञान और मिथ्यादर्शनसे मिथ्यात्व प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई है । प्रयोगसे योग प्रययकी प्ररूपणा की गई है ।

शंका—यहां प्रमाद प्रत्यय क्यों नहीं बतलाया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, इन प्रत्ययोंसे बाह्य प्रमाद प्रत्यय पाया नहीं जाता ।

शंका—एक कार्य अनेक कारणोंसे कैसे उत्पन्न होता है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, एक कुम्भकारसे उत्पन्न किये जानेवाले घटकी उत्पत्ति अन्यसे भी देखी जाती है । यदि कहा जाय कि पुरुषभेदसे पृथक् पृथक् उत्पन्न होनेवाले कुम्भ, उदञ्चन

---

१ क० पा० १, पृ० ३२६, तत्र 'अण्णोण्णस्स परोप्परं' इत्येतस्य स्थाने 'अण्णोण्णस्सविरोहा' इति पाठः । २ अ-आप्रत्योः 'पम्मुक्क', ताप्रतौ 'पण्णट्ठ' इति पाठः । ३ अ-आप्रत्योः 'पदेस' इति पाठः । ४ अ-आप्रत्योः 'मिच्छत्ता मिच्छ–', ताप्रतौ 'मिच्छत्ताणि मिच्छा–' इति पाठः । ५ ताप्रतौ 'कायजोवा (गा)' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सरावादओ दीसंति त्ति चे ? ण, एत्थ वि कमभाविकोधादीहिंतो उप्पज्जमाणणाणावरणीयस्स दव्वादिभेदेण भेदुवलंभादो। णाणावरणीयसमाणत्तणेण तदेक्कं चे ? ण, बहूहिंतो समुप्पज्जमाणघडाणं पि घडभावेण एयत्तुवलंभादो। होदु णाम णाणावरणीयस्स एदे पच्चया णइगम-ववहारणएसु, ण संगहणए; तत्थ उवसंहारिदासेसकज्जकारणकलावे कारण-भेदाणुववत्तीदो ? ण, संगहम्मि पहाणीकयम्मि संगहिदासेसविसेसम्हि कज्ज-कारण-भेदुववत्तीदो।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ११ ॥

जहा णाणावरणीयस्स पच्चयपरूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं पच्चयपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो। मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगपच्चएहि परिणयजीवेण सह एगोगाहणाए ट्ठिदकम्मइयवग्गणाए पोग्गलक्खंधा एयसरूवा कधं जीवसंबंधेण अट्ठभेदमाढउकंते ? ण, मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगपच्चया[1]वट्ठंभबलेण समुप्पण्णट्ठसत्तिसंजुत्तजीवसंबंधेण कम्मइय-पोग्गलक्खंधाणं अट्ठकम्मायारेण परिणमणं पडि विरोहाभावादो।

व शराव आदि भिन्न भिन्न कार्य देखे जाते हैं तो इसके उत्तरमें कहा जा सकता है कि यहाँ भी क्रमभावी क्रोधादिकोंसे उपन्न होनेवाले ज्ञानावरणीय कर्मका द्रव्यादिकके भेदसे भेद पाया जाता है।

शंका—ज्ञानावरणीयत्वकी समानता होनेसे वह (अनेक भेद रूप होकर भी) एक ही है ?

समाधान—इसके उत्तरमें कहते हैं कि इस प्रकार यहाँ भी बहुतोंके द्वारा उत्पन्न किये जानेवाले घटोंके भी घटत्व रूपसे अभेद पाया जाता है।

शंका— नैगम और व्यवहार नयकी अपेक्षा ये भले ही ज्ञानावरणीयके प्रत्यय हों, परन्तु संग्रह नयकी अपेक्षा वे उसके प्रत्यय नहीं हो सकते; क्योंकि, उसमें समस्त कार्य-कारण समूहका उपसंहार होनेसे कारणभेद बन नहीं सकता ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, संग्रह नयको प्रधान करनेपर समस्त विशेषोंका संग्रह होते हुए भी कार्य कारणभेद बन जाता है।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ११ ॥

जैसे ज्ञानावरणीय कर्मके प्रत्ययोंकी प्ररूपणा की गई है वैसे ही शेष सात कर्मोंके भी प्रत्ययोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

शंका—मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग प्रत्ययोंसे परिणत जीवके साथ एक अवगाहनामें स्थित कार्मण वर्गणाके पौद्गलिक स्कन्ध एक स्वरूप होते हुए जीवके सम्बन्धसे कैसे आठ भेदको प्राप्त होते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगरूप प्रत्ययोंके आश्रयसे उत्पन्न हुई आठ शक्तियोंसे संयुक्त जीवके सम्बन्धसे कार्मण पुद्गल-स्कन्धोंका आठ कर्मोंके आकारसे परिणमन होनेमें कोई विरोध नहीं है

---

१ प्रतिषु 'पज्जाया-' इति पाठः।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

उज्जुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा जोगपच्चए पयडिपदेसग्गं ॥ १२ ॥

पयडिपदेसग्गं जादणाणावरणीयवेयणा जोगपच्चए जोगपच्चएण होदि, पयडि-पदेसग्गमिदि किरियाविसेसणत्तेण अब्भुवगदत्तादो। ण च जोगवड्ढि-हाणीयो मोत्तूण अण्णेहिंतो णाणावरणीयपदेसग्गस्स वड्ढिं हाणिं[1] वा पेच्छामो। तम्हा णाणावरणीयपदे-सग्गवेयणा जोगपच्चएण होदु णाम, ण पयडिवेयणाजोगपच्चएण होदि; तत्तो तिस्से वड्ढि-हाणीणमणुवलंभादो त्ति भणिदे—ण, जोगेण[2] विणा णाणावरणीयपयडीए पादुब्भावा-दंसणादो[3]। जेण विणा जं णियमेण णोवलब्भदे तं तस्स कज्जमियरं च कारणमिदि सयलणइयाइयजणप्पसिद्धं। तम्हा पदेसग्गवेयणा व[4] पयडिवेयणा वि जोगपच्चएणे त्ति सिद्धं।

कसायपच्चए ट्ठिदि-अणुभागवेयणा ॥ १३ ॥

णाणावरणीयट्ठिदिवेयणा अणुभागवेयणा च कसायपच्चएण होदि, कसायवड्ढि-हाणीहिंतो ट्ठिदि-अणुभागाणं वड्ढि-हाणिदंसणादो। ण पाणादिवाद-मुसावादादत्तादाण-मेहुण-परिग्गह-रादिभोयणपच्चए णाणावरणीयं बज्झदि, तेण विणा वि अप्पमत्तसंजदादिसु

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना योगप्रत्ययसे प्रकृति व प्रदेशाग्र-रूप होती है ॥ १२ ॥

प्रकृति व प्रदेशाग्र स्वरूपसे उत्पन्न ज्ञानावरणीयकी वेदना योगप्रत्ययके विषयमें अर्थात् योग प्रत्ययसे होती है, क्योंकि, 'पयडि-पदेसग्गं' इस पदको सूत्रमें क्रियाविशेषण रूप स्वीकार किया गया है।

शंका—चूंकि योगोंकी वृद्धि अथवा हानिको छोड़कर अन्य कारणोंसे ज्ञानावरणीयके प्रदेशाग्रकी हानि अथवा वृद्धि नहीं देखी जाती है, अतएव ज्ञानावरणीयकी प्रदेशाग्रवेदना भले ही योग प्रत्ययसे हो; परन्तु उसकी प्रकृतिवेदना योग प्रत्ययसे नहीं हो सकती, क्योंकि, उससे इसकी प्रकृति वेदनाकी वृद्धि व हानि नहीं पायी जाती है

समाधान—इस शंकाके उत्तरमें कहते हैं कि ऐसा नहीं है, क्योंकि, योगके बिना ज्ञाना-वरणीयकी प्रकृतिवेदनाका प्रादुर्भाव नहीं देखा जाता। जिसके बिना जो नियमसे नहीं पाया जाता है वह उसका कार्य व दूसरा कारण होता है, ऐसा समस्त नैयायिक जनोंमें प्रसिद्ध है। इस कारण प्रदेशाग्रवेदनाके समान प्रकृतिवेदना भी योग प्रत्ययसे होती है, यह सिद्ध है।

कषाय प्रत्ययसे स्थिति व अनुभाग वेदना होती है ॥ १३ ॥

ज्ञानावरणीयकी स्थितिवेदना और अनुभागवेदना कषायसे होती है, क्योंकि, कषायकी वृद्धि और हानिसे स्थिति व अनुभागकी वृद्धि व हानि देखी जाती है। प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह और रात्रिभोजन प्रत्ययोंसे ज्ञानावरणीयका बन्ध नहीं होता है,

---

१ प्रतिषु 'वड्ढिहाणिं' इति पाठः। २ प्रतिषु 'जोगेण वि णाणा—' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'पादुब्भावा (व)' दंसणादो' इति पाठः। ४ आप्रतौ 'पदेसग्गवेयणो वं,' ताप्रतौ 'पदेसग्गो-(ग्ग) वेयणो (णे) व' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधुवलंभादो। ण कोह-माण-माय-लोभेहि वज्झइ, कम्मोदइल्लाणं तेसिमुदयविरहिदद्धाए तब्बंधुवलंभादो। ण णिदाणब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण-रइ-अरइ-उवहि-णियदि-माण-माय-मोस-मिच्छाणाण'मिच्छदंसणेहि, तेहि विणा वि सुहुमसांपराइयसंजदेसु तब्बंधुवलंभादो। यद्यस्मिन् सत्येव भवति नासति तत्तस्य कारणमिति न्यायात्। तम्हा णाणावरणीय-वेयणा जोग-कसाएहि चेव होदि त्ति सिद्धं। वुत्तं च—

जोगा पयडि-पदेसे ट्ठिदि-अणुभागे कसायदो कुणदि[1] ॥ ४ ॥

जदि एवं तो दव्वट्ठियणएसु पुव्विल्लेसु तीसु वि पाणादिवादादीणं पच्चयत्तं कत्तो जुज्जदे? ण, तेसु संतेसु णाणावरणीयबंधुवलंभादो। नावश्यं कारणाणि कार्यवन्ति भवन्ति, कुम्भमकुर्वत्यपि[2] कुम्भकारे कुम्भकारव्यवहारोपलम्भात्। न च पर्यायभेदेन वस्तुनो भेदः, तद्व्यतिरिक्तपर्यायाभावात् सकललोकव्यवहारोच्छेदप्रसंगाच्च। न्यायश्चर्च्यते लोकव्यवहारप्रसिद्ध्यर्थम्, न तद्बहिर्भूतो न्यायः, तस्य न्यायाभासत्वात्। ततस्तत्र तेषां कारणत्वं युज्यत इति।

क्योंकि, उनके बिना भी अप्रमत्तसंयतादिकोंमें उसका बन्ध पाया जाता है। क्रोध, मान, माया व लोभसे भी उसका बन्ध नहीं होता, क्योंकि, कर्मके उदयसे होनेवाले उक्त क्रोधादिकोंके उदयसे रहित कालमें भी उसका बन्ध पाया जाता है। निदान, अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, मेय, मोष, मिथ्याज्ञान और मिथ्यादर्शन इनसे भी उसका बन्ध नहीं होता, क्योंकि, उनके बिना भी सूक्ष्मसाम्परायिक संयतोंमें उसका बन्ध पाया जाता है। जो जिसके होनेपर ही होता है और जिसके न होनेपर नहीं होता है वह उसका कारण होता है, ऐसा न्याय है। इसी कारण ज्ञानावरणीय वेदना योग और कषायसे ही होती है, यह सिद्ध होता है। कहा भी है—

'योग प्रकृति व प्रदेशको तथा कषाय स्थिति व अनुभागको करती है ॥ ४ ॥'

शंका—यदि ऐसा है तो पूर्वोक्त तीनों ही द्रव्यार्थिक नयोंकी अपेक्षा प्राणातिपातादिकोंको प्रत्यय बतलाना कैसे उचित है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उनके होनेपर ज्ञानावरणीयका बन्ध पाया जाता है। कारण कार्यवाले अवश्य हों, ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि, घटको न करनेवाले भी कुम्भकार के 'कुम्भ-कार' शब्दका व्यवहार पाया जाता है। दूसरे पर्यायके भेदसे वस्तुका भेद नहीं होता है, क्योंकि, वस्तुसे भिन्न पर्यायका अभाव है, तथा इस प्रकारसे समस्त लोक व्यवहारके नष्ट होनेका भी प्रसंग आता है। न्यायकी चर्चा लोक व्यवहारकी प्रसिद्धिके लिये ही की जाती है। लोक-व्यवहारके बहिर्गत न्याय नहीं होता है, किन्तु वह केवल न्यायाभास ही है। इसीलिये उक्त प्राणातिपातादिकोंको प्रत्यय बतलाना योग्य ही है।

१ जोगा पयडि-पदेसा ठिदि-अणुभागा कसायदो होंति। गो० क० २५७। २ प्रतिषु 'कुम्भमकुम्भ-यत्यपि' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १४ ॥

सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदि-अणुभाग-पयडि-पदेसभेदेण बंधो चउव्विहो चेव। तत्थ पयडि-पदेसा जोगादो ठिदि-अणुभागा कसायदो त्ति सत्तण्णं पि दो चेव पच्चया होंति। कधं दो चेव पच्चया अट्ठण्णं कम्माणं बत्तीसाणं पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसबंधाणं कारणत्तं पडिवज्जंते? ण, असुद्धपज्जवट्ठिए उजुसुदे अणंतसत्तिसंजुत्तेगदव्वत्थित्तं पडि विरोहाभावादो। वट्टमाणकालविसयउजुसुदवत्थुस्स दवणाभावादो[1] ण तत्थ दव्वमिदि णाणावरणीयवेयणा णत्थि त्ति वुत्ते—ण, वट्टमाणकालस्स वंजणपज्जाए पडुच्च अवट्ठियस्स सगासेसावयवाणं गदस्स दव्वत्तं पडि विरोहाभावादो। अप्पिदपज्जाएण वट्टमाणत्तमावण्णस्स[2] वत्थुस्स अणप्पिदपज्जाएसु दवणविरोहाभावादो वा अत्थि उजुसुदणयविसए दव्वमिदि।

(सद्दणयस्स अवत्तव्वं ॥ १५ ॥)

कुदो? तत्थ समासाभावादो। तं जहा—पदाणं समासो णाम किमत्थगओ पदगओ तदुभयगदो वा? ण ताव [अत्थगओ, दोण्णं पदाणमत्थाणमेयत्ताभावादो। ण

जिस प्रकार ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयके प्रत्ययोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ १४ ॥

स्थिति, अनुभाग, प्रकृति और प्रदेशके भेदसे सब कर्मोंका बन्ध चार प्रकार ही है। उनमें प्रकृति और प्रदेशबन्ध योगसे तथा स्थिति और अनुभागबन्ध कषायसे होते हैं, इस प्रकार सातों ही कर्मोंके दो ही प्रत्यय होते हैं।

शंका—उक्त दो ही प्रत्यय आठ कर्मोंके प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश रूप बत्तीस बन्धोंकी कारणताको कैसे प्राप्त हो सकते हैं?

समाधान—नहीं, क्योंकि अशुद्धपर्यायार्थिक रूप ऋजुसूत्र नयमें अनन्त शक्ति युक्त एक द्रव्यके अस्तित्वमें कोई विरोध नहीं है।

शंका—वर्तमान कालविषयक ऋजुसूत्र नयकी विषयभूत वस्तुका द्रवण नहीं होनेसे चूंकि उसका विषय द्रव्य हो नहीं सकता, अतः ज्ञानावरणीय वेदना उसका विषय नहीं है?

समाधन—ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि ऐसा नहीं है, क्योंकि, वर्तमानकाल व्यंजनपर्यायोंका आलम्बन करके अवस्थित है एवं अपने समस्त अवयवोंको प्राप्त है अतः उसके द्रव्य होनेमें कोई विरोध नहीं है। अथवा, विवक्षित पर्यायसे वर्तमानताको प्राप्त वस्तुकी अविवक्षित पर्यायोंमें द्रवणका विरोध न होनेसे ऋजुसूत्र नयके विषयमें द्रव्य सम्भव ही है।

शब्द नयकी अपेक्षा अवक्तव्य है ॥ १५ ॥

कारण यह है कि उस नयमें समासका अभाव है। वह इस प्रकारसे—पदोंका जो समास होता है वह क्या अर्थगत है, पदगत है, अथवा तदुभयगत है? अर्थगत तो हो नहीं सकता,

१ अ-आप्रत्योः 'दमणाभावादो' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः '-मावसण्णस्स' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ताव] दोण्णं पदाणमत्थाण[1]मेयत्तं, तस्स आधाराभावादो। ण ताव पुव्वपदमाधारो, उत्तरपदुच्चारणस्स विहलत्तप्पसंगादो। ण उत्तरपदं पि, पुव्वपदुच्चारणस्स णिप्फलत्तप्पसंगादो। ण दो वि पदाणि आहारो, एयस्स णिरवयवस्स दोसु अवट्ठाणविरोहादो। ण च दोसु अत्थेसु एयत्तमावण्णेसु समासो वि अत्थि, दुब्भावेण विणा समासविरोहादो। ण पदगओ वि, दोसु वि पदेसु एयत्तमावण्णेसु दोण्णं पदाणमसवण्ण[2]प्पसंगादो। ण च एवं, दोहिंतो वदिरित्ततदिएग[3]पदाणुवलंभादो। उवलंभे वा ण सो समासो, दुब्भावेण विणा समासविरोहादो। णोभयगदो वि, उभयदोसाणुसंगादो[4]। तम्हा समासो णत्थि त्ति सिद्धं। तेण जोगसद्दो जोगत्थं भणदि, पच्चयसद्दो पच्चयट्ठं भणदि त्ति दोहि वि पदेहि एगो अत्थो ण परूविज्जदे। तेण जोगपच्चए पयडि-पदेसग्गं, कसायपच्चए ट्ठिदि-अणुभाग-वेयणा इदि अवत्तव्वं।

अधवा, ण संतं कज्जमुप्पज्जदि, संतस्स उप्पत्तिविरोहादो। ण चासंतं, खरसिंगस्स वि उप्पत्तिप्पसंगादो। ण च संतमसंतं उप्पज्जदि[5], उभयदोसाणुसंगादो। तदो कज्ज-

कारण कि दो पदोंके अर्थोंमें एकता सम्भव नहीं है। दो पदोंके अर्थोंमें एकता इसलिये सम्भव नहीं है कि उसके आधारका अभाव है। यदि आधार है तो क्या उसका पूर्व पद आधार है अथवा उत्तर पद? पूर्व पद तो आधार हो नहीं सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर उत्तर पदका उच्चारण निष्फल ठहरता है। उत्तर पद भी आधार नहीं हो सकता, क्योंकि, इस प्रकारसे पूर्व पदका उच्चारण व्यर्थ ठहरता है। दोनों पद भी आधार नहीं हो सकते, क्योंकि, निरवयव एक अर्थका दोमें अवस्थान विरुद्ध है। यदि कहा जाय कि एकताको प्राप्त हुए दो अर्थोंमें समास हो सकता है, सो यह भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, द्वित्वके विना समासका विरोध है। पदगत (द्वितीय पक्ष) समास भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, दोनों पदोंके एकताको प्राप्त होनेपर दोनों पदोंके असवर्णताका प्रसंग आता है। परन्तु ऐसा हो नहीं सकता, क्योंकि, दो पदोंको छोड़कर कोई तृतीय एक पद पाया नहीं जाता। अथवा यदि पाया जाता है तो वह समास नहीं कहा जा सकता, क्योंकि, द्वित्वके विना समासका विरोध है। उभय (अर्थ व पद) गत भी समास नहीं हो सकता, क्योंकि, दोनों पक्षोंमें दिये गये दोषोंका प्रसंग आता है। इस कारण समास सम्भव नहीं है, यह सिद्ध है। अब समासका अभाव होनेसे चूंकि योग शब्द योगार्थको कहता है और प्रत्यय शब्द प्रत्ययार्थको कहता है, अतः दोनों ही पदोंके द्वारा एक अर्थकी प्ररूपणा नहीं की जा सकती है। इसी कारण शब्द नयकी अपेक्षा 'योगप्रत्ययसे प्रकृति व प्रदेशाग्ररूप तथा कषाय प्रत्ययसे स्थिति व अनुभाव रूप वेदना होती है' यह कहा नहीं जा सकता।

अथवा, सत् कार्य तो उत्पन्न होता नहीं, है, क्योंकि सत्की उत्पत्तिका विरोध है। असत् कार्य भी उत्पन्न नहीं हो सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर गधेके सींगकी भी उत्पत्तिका प्रसंग आता है। सदसत् कार्य भी उत्पन्न नहीं होता है, क्योंकि, इसमें दोनों पक्षोंमें दिये गये दोषोंका प्रसंग

१ अ-आप्रत्योः 'पदाणमद्धाण', ताप्रतौ 'पदाणमद्धा (त्था) ण–' इति पाठः।' २ अ-आप्रत्योः '–मस्सवण्ण–', ताप्रतौ '–मस्सवण–' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'तदिएण' इति पाठः। ४ अ-आप्रत्योः 'संगदो' इति पाठः। ५ आप्रतौ 'संतमसंतं च उप्पज्जदि' इति पाठः।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

कारणभावो णत्थि त्ति णाणावरणीयपयडि-पदेसग्गवेयणा जोगपच्चए, ट्ठिदि-अणुभागवेयणा कसायपच्चए त्ति अवत्तव्वं। अधवा, ण समाणकाले वट्टमाणाणं कज्ज-कारणभावो जुज्जदे, दोण्णं संताणमसंताणं संतासंताणं च कज्ज-कारणभावविरोहादो। अविरोहे वा एगसमए चेव सव्वं उप्पज्जिदूण विदियसमए कज्ज-कारणकलावस्स णिम्मूलप्पलओ होज्ज। ण च एवं, तहाणुवलंभादो। ण च भिण्णकालेसु वट्टमाणाणं कज्ज-कारणभावो, दोण्णं संताणमसंताणं च कज्जकारणभावविरोहादो। ण च संतादो असंतस्स उप्पत्ती, विंझादो[1] गयणकुसुमाणं पि उप्पत्तिप्पसंगादो। ण च असंतादो संतस्स उप्पत्ती, गद्दहसिंगादो दद्दुरूप्पत्तिप्पसंगादो। ण च असंतादो असंतस्स उप्पत्ती, गद्दहसिंगादो गयणकुसुमाणमुप्पत्तिप्पसंगा। तदो कज्ज-कारणभावो णत्थि त्ति अवत्तव्वं। अधवा, तिण्णं सद्दणयाणं णाणावरणीयपोग्गलक्खंधोदयजणिदअण्णाणं[2] वेयणा। ण सा जोग-कसाएहिंतो उप्पज्जदे, णिस्सत्तीदो सत्तिविसेसस्स उप्पत्तिविरोहादो। णोदयगदकम्मदव्वक्खंधादो उप्पज्जदि, पज्जयवदिरित्तदव्वाभावादो। तेण तिण्णं सद्दणयाणं णाणावरणीयवेयणापच्चओ अवत्तव्वो।

आता है। इस कारण कार्यकारणभाव न बन सकनेसे 'ज्ञानावरणीयकी प्रकृति व प्रदेशाग्र रूप वेदना योगप्रत्ययसे तथा स्थिति व अनुभागरूप वेदना कषायप्रत्ययसे होती है' यह उक्त नयकी अपेक्षा अवक्तव्य है।

अथवा, समानकालमें वर्तमान वस्तुओंमें कार्यकारणभाव युक्त नहीं है, क्योंकि, उन दोनोंके सत्, असत् व उभय, इन तीनों पक्षोंमें कार्य-कारणका विरोध है। और यदि विरोध न माना जाय तो एक समयमें ही समस्त कार्यके उत्पन्न हो जानेपर द्वितीय समयमें कार्य-कारण कलापका निर्मूल नाश हो जावेगा। परन्तु ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता। समानकालसे भिन्न कालोंमें भी वर्तमान उनके कार्य-कारणभाव नहीं बनता, क्योंकि, उन दोनोंके सत्, असत् व उभय, इन तीनों पक्षोंमें कार्यकारणभावका विरोध है। यदि सत्‌से असत्‌की उत्पत्ति स्वीकार की जाय तो वह सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा होनेपर विन्ध्याचलसे आकाश कुसमोंके भी उत्पन्न होनेका प्रसंग आता है। असत्‌से सत्‌की उत्पत्ति भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर असत् गर्दभसींगसे मेंढककी उत्पत्तिका प्रसंग आता है। इसी प्रकार असत्‌से असत्‌की उत्पत्ति भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा स्वीकार करनेपर गर्दभसींगसे आकाशकुसुमोंके उत्पन्न होनेका प्रसंग आता है। इस कारण चूंकि कार्य-कारणभाव बनता नहीं है, अतएव ज्ञानावरणकी वेदना अवक्तव्य है।

अथवा तीनों शब्द नयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय सम्बन्धी पौद्गलिक स्कन्धोंके उदयसे उत्पन्न अज्ञानको ज्ञानावरणीय वेदना कहा जाता है। परन्तु वह योग व कषायसे उत्पन्न नहीं हो सकती, क्योंकि जिसमें जो शक्ति नहीं है उससे शक्ति विशेषकी उत्पत्ति माननेमें विरोध है। तथा उदयगत कर्म द्रव्यस्कन्धसे भी उत्पन्न नहीं हो सकती, क्योंकि, [इन नयोंमें] पर्यायोंसे भिन्न द्रव्यका अभाव है। इस कारण तीनों शब्दनयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय वेदनाका प्रत्यय अवक्तव्य है।

१ आ-ताप्रत्योः 'विज्झादो' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'अण्णाणवेयणा' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १६ ॥

सुगमं ।

एवं वेयणपच्चयविहाणे त्ति समत्तमणिओगद्दारं ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें भी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ १६ ॥

यह सूत्र सुगम है

विशेषार्थ—यहां सात नयों की अपेक्षा कौन वेदना किस प्रत्ययसे होती है यह बतलाया गया है। नैगम, संग्रह और व्यवहार ये तीन द्रव्यार्थिक नय हैं इसलिए इनकी अपेक्षा ज्ञानावरण आदिके बन्ध प्राणातिपात आदि जितने भी कारण होते हैं अर्थात् जिनके सद्भावमें ज्ञानावरणादि कर्मोंका बन्ध होता है वे सब प्रत्यय कहे जाते हैं। ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा प्रकृति और प्रदेशबन्ध योगप्रत्यय और स्थिति व अनुभागबन्ध कषाय प्रत्यय होता है। कारण कि बन्धके ये दो ही साक्षात् प्रत्यय हैं। यद्यपि ऋजुसूत्रनय कार्य-कारणभावको ग्रहण नहीं करता परन्तु अशुद्ध द्रव्यार्थिक नयमें यह सब बन जाता है इसलिए उक्त प्रकारसे कथन किया है।

इस प्रकार वेदनप्रत्ययविधान अनुयोग द्वार समाप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयणसामित्तविहाणाणियोगद्दारं

वेयणसामित्तविहाणे त्ति ॥ १ ॥

मंदमेहावीणमंतेवासीणमहियारसंभालणट्ठमिदं सुत्तं परूविदं । जं जेण कम्मं बद्धं तस्स[1] वेयणाए सो चेव सामी होदि त्ति विणोवदेसेण णज्जदे । तम्हा वेयणसामित्तविहाणे त्ति अणिओगद्दारं णाढवेदव्वमिदि[2] ? जदि जदो उप्पण्णो तत्थेव चिट्ठेज्ज कम्मक्खंधो तो[3] सो चेव सामी होज्ज । ण च एवं, कम्माणमेगादो उप्पत्तीए अभावादो । तं जहा—ण ताव जीवादो चेव कम्माणमुप्पत्ती, कम्मविरहिदसिद्धेहिंतो वि कम्मुप्पत्तिप्पसंगा । णाजीवादो[4] चेव, जीववदिरित्तकालपोग्गलाकासेहिंतो वि तदुप्पत्तिप्पसंगादो । [5]णासमवेदजीवाजीवेहिंतो चेव समुप्पज्जदि, सिद्धजीवपोग्गलेहिंतो वि कम्मुप्पत्तिप्पसंगादो । ण च संजुत्तेहिंतो[6] चेव तदुप्पत्ती, संजुत्तजीव-पोग्गलेहिंतो कम्मुप्पत्तिप्पसंगादो ।

अब वेदनस्वामित्वविधान प्रकृत है ॥ १ ॥

मन्दबुद्धि शिष्योंको अधिकारका स्मरण करानेके लिये यह सूत्र कहा गया है ।

शंका—जिस जीवके द्वारा जो कर्म बांधा गया है वह उक्त कर्मकी वेदनाका स्वामी है, यह विना उपदेशके ही जाना जाता है । अत एव वेदनस्वामित्वविधान अनुयोगद्वारको प्रारम्भ नहीं करना चाहिये ?

समाधान—कर्मस्कन्ध जिससे उत्पन्न हुआ है वहीं ही यदि वह स्थित रहे तो वही स्वामी हो सकता है । परन्तु ऐसा है नहीं; क्योंकि, कर्मोंकी उत्पत्ति किसी एकसे नहीं है । इसीको स्पष्ट करते हैं—यदि केवल जीवसे ही कर्मोंकी उत्पत्ति स्वीकार की जाय तो वह सम्भव नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे कर्म रहित सिद्धोंसे भी कर्मोंकी उत्पत्तिका प्रसंग आ सकता है । एकमात्र अजीवसे भी कर्मोंकी उत्पत्ति नहीं हो सकती, क्योंकि, ऐसा होनेपर जीवसे भिन्न काल, पुद्गल एवं आकाशसे भी कर्मोंकी उत्पत्तिका प्रसंग अनिवार्य होगा । असमवेत (समवाय रहित) जीव व अजीव दोनोंसे भी कर्मोंकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर [समवाय रहित] सिद्ध जीव और पुद्गलसे भी कर्मोंकी उत्पत्तिका प्रसंग आता है । इस प्रसंगके निवारणार्थ यदि संयुक्त जीव व अजीवसे ही कर्मोंकी उत्पत्ति स्वीकार की जाती है तो वह भी नहीं बन सकती, क्योंकि, ऐसा स्वीकार करनेपर संयुक्त जीव और पुद्गलसे भी उनकी उत्पत्तिका प्रसंग आता है ।

---

१ आ-ताप्रत्योः तिस्से' इति पाठः । २ अ-आप्रत्योः 'णाढवेदव्वमिदि' पाठः । ३ प्रतिषु 'तदो' इति पाठः । ४ ताप्रतौ 'णो [अ] जीवादो' इति पाठः । ५ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-ताप्रतिषु 'ण समवेद' इति पाठः । ६ ताप्रतौ 'संजुतेहिंत्तो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ण समवेदजीवाजीवेहिंतो वि तदुप्पत्ती, अजोगिस्स वि कम्मबंधप्पसंगादो। तम्हा मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगजणणक्खमपोग्गलदव्वाणि जीवो च कम्मबंधस्स कारणमिदि सिद्धं। सो च जीव-पोग्गलाणं बंधो पवाहसरूवेण आदिविरहियो, अण्णहा अमुत्त-मुत्ताणं जीव-पोग्गलाणं बंधाणुववत्तीदो। बंधवत्तिं पडुच्च सादि-संतो, अण्णहा एगम्हि जीवे उप्पण्ण-देवादिपज्जायाणमविणासप्पसंगादो। तम्हा दोहिंतो[1] तीहिं चदुहि वा उप्पज्जिय जीवम्मि एगीभावेण द्विदवेयणा तत्थ एगस्स चेव होदि, अण्णस्स ण होदि त्ति ण वोत्तुं सक्किज्जदे। एवं जादसंदेहस्स अंतेवासिस्स मदि[2]वाउलविणासणट्ठं वेयणसामित्तविहाणमाढवेदव्व[3]मिदि।

णेगम-ववहाराणं णाणावरणीयवेयणा सिया जीवस्स वा ॥ २ ॥

एत्थ वा सद्दा सव्वे समुच्चयट्ठे दट्ठव्वा। सिया सद्दा दोण्णि—एक्को किरियाए वायओ, अवरो णइवादियो, तत्थ कस्सेदं गहणं? णइवादियो घेत्तव्वो, तस्स अणेयंते वुत्तिदंसणादो। सव्वहाणियमपरिहारेण सो सव्वत्थ परूवओ, पमाणाणुसारित्तादो। उत्तं च—

इस आपत्तिको टालनेके लिये यदि समवेत (समवाय प्राप्त) जीव व अजीवसे उनकी उत्पत्ति स्वीकार करते हैं तो यह भी उचित नहीं है, क्योंकि, वैसा माननेपर [कर्मसमवेत] अयोगकेवलीके भी कर्मबन्धका प्रसंग अवश्यम्भावी है। इस कारण मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगको उत्पन्न करनेमें समर्थ पुद्गल द्रव्य और जीव कर्मबन्धके कारण हैं, यह सिद्ध होता है। वह जीव और पुद्गलका बन्ध भी प्रवाह स्वरूपसे आदि विरहित अर्थात् अनादि है, क्योंकि, इसके विना क्रमशः अमूर्त और मूर्त जीव व पुद्गलका बन्ध बन नहीं सकता। बन्धविशेषकी अपेक्षा वह बन्ध सादि व सान्त है, क्योंकि इसके बिना एक जीवमें उत्पन्न देवादिक पर्यायोंके अविनश्वर होनेका प्रसंग आता है। इस कारण दो, तीन अथवा चारसे उत्पन्न होकर जीवमें एक स्वरूपसे स्थित वेदना उनमेंसे एकके ही होती है, अन्यके नहीं होती, ऐसा नहीं कहा जा सकता है। इस प्रकार सन्देहको प्राप्त शिष्यकी बुद्धिव्याकुलताको नष्ट करनेके लिये वेदनस्वामित्व विधानको प्रारम्भ करना योग्य है।

नैगम और व्यवहार नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् जीवके होती है ॥ २ ॥

यहाँ सूत्रोंमें प्रयुक्त सब वा शब्दोंको समुच्चय अर्थमें समझना चाहिये। स्यात् शब्द दो हैं—एक क्रियावाचक और दूसरा अनेकान्त वाचक। उनमें यहाँ किसका ग्रहण है? यहाँ अनेकान्त वाचक स्यात् शब्दको ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, उसकी अनेकान्तमें वृत्ति देखी जाती है। उक्त स्यात् शब्द 'सर्वथा' नियमको छोड़कर सर्वत्र अर्थकी प्ररूपणा करनेवाला है, क्योंकि, वह प्रमाणका अनुसरण करता है। कहा भी है—

---

१ ताप्रतौ 'दोहिं [तो]' इति पाठः। २ अप्रतौ 'वाउस', आप्रतौ 'वाओअ' इति पाठः। ३ अ-आ-प्रत्योः 'मदवेदव्व' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

(सर्वथा नियमत्यागी यथादृष्टमपेक्षकः[1] ।
स्याच्छब्दस्तावके न्याये नान्येषामात्मविद्विषाम्[2] ॥ १ ॥)

ततः स्याज्जीवस्य वेदना । तं जहा—अणंताणंतविस्सासुवचयसहिदकम्मपोग्गलक्खंधो सिया जीवो, जीवादो पुधभावेण तदणुवलंभादो । ण च अभेदे संते एगजोगक्खेमदा णत्थि त्ति वोत्तुं जुत्तं, अण्णत्थ तहाणुवलंभादो । एवंविहविवक्खाए सिया जीवस्स वेयणा त्ति सिद्धं ।

सिया णोजीवस्स वा ॥ ३ ॥

णोजीवो णाम अणंताणंतविस्सासुवचएहि उवचिदकम्मपोग्गलक्खंधो पाणधारणाभावादो णाण-दंसणाभावादो वा। तत्थतणजीवो वि सिया[3] णोजीवो; तत्तो पुधभूदस्स तस्स अणुवलंभादो । तदो[4] सिया णोजीवस्स वेयणा । कधमभिण्णे छट्ठीणिद्देसो ? ण, खइरस्स खंभो त्ति अभेदे वि छट्ठीणिद्देसुवलंभादो । एदाणि दो वि सुत्ताणि संगहियणेगमस्स वि जोजेदव्वाणि, बहूणं पि जीव-णोजीवाणं जादिदुवारेण एयत्तुववत्तीदो ।

सिया जीवाणं वा ॥ ४ ॥

हे अरजिन ? आपके न्यायमें 'सर्वथा' नियमको छोड़कर यथादृष्ट वस्तुकी अपेक्षा रखनेवाला 'स्यात्' शब्द पाया जाता है । वह आत्मविद्वेषी अर्थात् अपने आपका अहित करनेवाले अन्यके यहाँ नहीं पाया जाता ॥ १ ॥

इस कारण कथंचित् जीवके वेदना होती है । वह इस प्रकार—अनन्तानन्त विस्रसोपचय सहित कर्मपुद्गलस्कन्ध कथञ्चित् जीव है, क्योंकि, वह जीवसे पृथक् नहीं पाया जाता । अभेद होनेपर एक योग-क्षेमता (अभीष्ट वस्तुका लाभ व संरक्षण) नहीं रहेगी, ऐसा कहना भी उचित नहीं है; क्योंकि, अन्यत्र वैसा पाया नहीं जाता । इस प्रकारकी विवक्षासे कथंचित् जीवके वेदना होती है, यह सिद्ध है ।

कथंचित् वह नोजीवके होती है ॥ ३ ॥

अनन्तानन्त विस्रसोपचयोंसे उपचयको प्राप्त कर्म-पुद्गलस्कन्ध प्राणधारण अथवा ज्ञान-दर्शनसे रहित होनेके कारण नोजीव कहलाता है । उससे सम्बन्ध रखनेवाला जीव भी कथंचित् नोजीव है, क्योंकि, वह उससे पृथग्भूत नहीं पाया जाता है । इस कारण कथंचित् नोजीवके वेदना होती है ।

शंका—अभेदमें षष्ठी विभक्तिका निर्देश कैसे किया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'खैरका खम्भा' यहाँ अभेदमें भी षष्ठीका निर्देश पाया जाता है ।

इन दोनों सूत्रोंको संगृहीत नैगम नयके भी जोड़ना चाहिये, क्योंकि, बहुत भी जीव और नोजीवोंमें जातिकी अपेक्षा एकता पायी जाती है ।

उक्त वेदना कथंचित् बहुत जीवोंके होती है ॥ ४ ॥

---

१ प्रतिषु 'मवेक्षकः' इति पाठः । २ बृहत्स्व १०२ । ३ अ-आप्रत्योः 'सया' इति पाठः । ४ अ-ताप्रत्योः 'तदा' आप्रतौ 'तद' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

जीवा एग-दु-ति-चदु-पंचिंदियभेदेण वा छक्कायभेदेण वा देसादिभेदेण वा अणेयविहा। णिच्चेयण-मुत्तपोग्गलक्खंधसमवाएण [1]भट्ठसगसरूवस्स कधं जीवत्तं जुज्जदे ? ण, अविणट्ठणाण-दंसणाणमुवलंभेण जीवत्थित्तसिद्धीदो। ण तत्थ पोग्गलक्खंधो वि अत्थि, पहाणीकयजीवभावादो। ण च जीवे पोग्गलप्पवेसो बुद्धिकओ चेव, परमत्थेण वि तत्तो तेसिमभेदुवलंभादो। एवंविहअप्पणाए णाणावरणीयवेयणा सिया जीवाणं होदि। कधमेक्किस्से वेयणाए भूओ सामिणो ? ण, अरहंताणं पूजा इच्चत्थ बहूणं पि एक्किस्से पूजाए सामित्तुवलंभादो।

सिया णोजीवाणं वा ॥ ५ ॥

सरीरागारेण ट्ठिदकम्म-णोकम्मक्खंधाणि णोजीवा, णिच्चेयणत्तादो। तत्थ ट्ठिदजीवा वि णोजीवा, तेसिं तत्तो भेदाभावादो। ते च णोजीवा अणेगा संठाण-देस-काल वण्ण-गंधादिभेदप्पणाए। तेसिं णोजीवाणं च णाणावरणीयवेयणा होदि।

सिया जीवस्स च णोजीवस्स च ॥ ६ ॥

एक, दो, तीन, चार और पाँच इन्द्रियोंके भेदसे, अथवा छह कायोंके भेदसे, अथवा देशादिके भेदसे जीव अनेक प्रकारके हैं।

शंका – चेतना रहित मूर्त पुद्गलस्कन्धोंके साथ समवाय होनेके कारण अपने स्वरूप (चैतन्य व अमूर्तत्व) से रहित हुए जीवके जीवत्व स्वीकार करना कैसे युक्तियुक्त है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, विनाशको नहीं प्राप्त हुए ज्ञान दर्शनके पाये जानेसे उसमें जीवत्वका अस्तित्व सिद्ध है। वस्तुतः उसमें पुद्गलस्कन्ध भी नहीं है, क्योंकि, यहाँ जीवभावकी प्रधानता की गई है। दूसरे, जीवमें पुद्गलस्कन्धोंका प्रवेश बुद्धिपूर्वक नहीं किया गया है, क्योंकि, यथार्थतः भी उससे उनका अभेद पाया जाता है।

इस प्रकारकी विवक्षासे ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् बहुत जीवोंके होती है।

शंका—एक वेदनाके बहुतसे स्वामी कैसे हो सकते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'अरहन्तोंकी पूजा' यहाँ बहुतोंके भी एक पूजाका स्वामित्व पाया जाता है।

कथंचित् वह बहुत नोजीवोंके होती है ॥ ५ ॥

शरीराकारसे स्थित कर्म व नोकर्म स्वरूप स्कन्धोंको नोजीव कहा जाता है, क्योंकि, वे चैतन्य भावसे रहित हैं। उनमें स्थित जीव भी नोजीव हैं, क्योंकि, उनका उनसे भेद नहीं है। उक्त नोजीव अनेक संस्थान, देश, काल, वर्ण व गन्ध आदिके भेदकी विवक्षासे अनेक हैं। उन नोजीवोंके ज्ञानावरणीय वेदना होती है।

वह कथंचित् जीव और नोजीव दोनोंके होती है ॥ ६ ॥

---

१ अ-प्रतौ 'अट्ठ' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवस्स वि वेयणा भवदि, तेण विणा पोग्गलादो चेव तदणुवलंभादो। णोजीवस्स वि भवदि, णोकम्मपोग्गलक्खंधेहि विणा जीवादो चेव तदणुवलंभादो। एवंविहणए जीवस्स च णोजीवस्स च णाणावरणीयवेयणा होदि।

सिया जीवस्स च णोजीवाणं च ॥ ७ ॥

जीवस्स एयत्तं जदा जादिदुवारेण गहिदं तदा णोजीवबहुत्तं देस-संठाण-सरीरारंभयपोग्गलभेदेण घेत्तव्वं। जदा जादीए विणा [1]जीववत्तिगयमेगत्तमप्पियं होदि तदा कम्मइयक्खंधाणमणंताणमणेगसंठाणाण[2]मणेगदेसट्ठियाणमेगजीवविसयाणं भेदेण णोजीवबहुत्तं वत्तव्वं। एवंविहाए अप्पणाए जीवस्स च णोजीवाणं च वेयणा होदि।

सिया जीवाणं च णोजीवस्स च ॥ ८ ॥

जदा[3] जादिदुवारेण णोजीवस्स एयत्तं विवक्खियं तदा[4] काइंदिय-संठाण-देसादिभेदेण जीवाणं बहुत्तं घेत्तव्वं। जदा[5] णोजीवस्स वत्तिदुवारेण एयत्तमप्पियं तदा पदेसादिभेदेण जीवबहुत्तं घेत्तव्वं। एवंविहविवक्खाए सिया जीवाणं च णोजीवस्स च वेयणा होदि।

जीवके भी वेदना होती है, क्योंकि, जीवके विना एकमात्र पुद्गलसे ही वह नहीं पायी जाती। उक्त वेदना नोजीवके भी होती है, क्योंकि, नोकर्मरूप पुद्गलस्कन्धोंके विना एक मात्र जीवसे ही वह नहीं पायी जाती है। इस प्रकारके नयमें ज्ञानावरणीयकी वेदना जीवके भी होती है और नोजीवके भी होती है।

वह कथंचित् जीवके और नोजीवोंके होती है ॥ ७ ॥

जब जातिकी अपेक्षासे जीवकी एकता ग्रहण की गई हो तब देश, संस्थान और शरीरके आरम्भक पुद्गलस्कन्धोंके भेदसे नोजीवोंके बहुत्वको ग्रहण करना चाहिये। जब जातिके विना जीवव्यक्तिगत एकताकी प्रधानता होती है तब अनेक संस्थानसे युक्त व अनेक देशोंमें स्थित एक जीव विषयक अनन्तानन्त कार्मण स्कन्धोंके भेदसे नोजीवोंके बहुत्वको कहना चाहिये। इस प्रकारकी विवक्षासे जीवके और नोजीवोंके भी उक्त वेदना होती है।

वह कथंचित् जीवोंके और नोजीवके होती है ॥ ८ ॥

जब जाति द्वारा नोजीवकी एकता विवक्षित हो तब काय, इन्द्रिय, संस्थान और देश आदिके भेदसे जीवोंके बहुत्वको ग्रहण करना चाहिये। जब व्यक्ति द्वारा नोजीवकी एकता विवक्षित हो तब प्रदेशादिके भेदसे जीवोंके बहुत्वको ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकारकी विवक्षासे कथञ्चित् जीवोंके और नोजीवके भी वेदना होती है।

---

१ ताप्रतौ 'जीवट्ठि (त्ति) गय' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'संठाण', ताप्रतौ 'संठा [णा] ण' इति पाठः। ३ अ-आप्रत्योः 'जधा' इति पाठः। ४ अ-आप्रत्योः 'तथा' इति पाठः। ५ अ-आप्रत्योः 'जधा' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया जीवाणं च णोजीवाणं च ॥ ९ ॥

जदा जीव-णोजीवाणं च अवयवविसयमणवयवविसयं च बहुत्तं विवक्खियं तदा जीवाणं च णोजीवाणं च वेयणा।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १० ॥

जहा णाणावरणीयवेयणा परूविदा तहा सत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वा, विसेसाभावादो।

संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा जीवस्स वा ॥ ११ ॥

जो जस्स फलमणुभवदि तं तस्स होदि त्ति सयललोअप्पसिद्धो ववहारो। ण च कम्मफलं कम्माणि चेव भुंजंति, अप्पाणम्मि किरियाविरोहादो। णिच्चेयणत्तणेण णाण-दंसणविरहिदेसु पोग्गलक्खंधेसु णाणावरणीयवावारस्स वइफलप्पसंगादो च ण णोजीवस्स, किं तु जीवस्सेव। ण च जीवदव्ववदिरित्तो णोजीवो होदि, जीवेण सह एयत्तमावण्णस्स णोजीवत्तविरोहादो। एदं सुद्धसंगहणयवयणं, जीवाणं तेहि[1] सह णोजीवाणं च एयत्त-ब्भुवगमादो। एत्थ सिया सद्दो किण्ण पउत्तो? ण एस दोसो, पयारंतराभावादो। जदि सुद्धसंगहणए वेयणाए सामिस्स अण्णो वि पयारो अत्थि तो सिया सद्दो वुच्चदे।

कथंचित् वह जीवोंके और नोजीवोंके होती है ॥ ९ ॥

जब जीवों और नोजीवोंके अवयवविषयक और अनवयवविषयक बहुत्वकी विवक्षा हो तब जीवोंके और नोजीवोंके वेदना होती है।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ १० ॥

जैसे ज्ञानावरणीय कर्म सम्बन्धी वेदनाकी प्ररूपणा की गई है, उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी वेदनाकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कुछ विशेषता नहीं है।

संग्रह नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना जीवके होती है ॥ ११ ॥

जो जिसके फलका अनुभव करता है वह उसका स्वामी होता है, यह व्यवहार सकल जनोंमें प्रसिद्ध है। परन्तु कर्मके फलको कर्म ही तो भोगते नहीं हैं, क्योंकि, अपने आपमें क्रियाका विरोध है, तथा अचेतन होनेसे ज्ञान-दर्शनसे रहित पुद्गलस्कन्धोंमें ज्ञानावरणीयके व्यापारकी विफलताका प्रसंग होनेसे भी उसकी वेदना नोजीवके नहीं होती, किन्तु जीवके ही होती है। दूसरी बात यह है कि जीव द्रव्यसे भिन्न नोजीव है ही नहीं, क्योंकि, जीवके साथ एकताको प्राप्त पुद्गलस्कन्धके नोजीव होनेका विरोध है। यह कथन शुद्ध संग्रह नयकी अपेक्षा है, क्योंकि, जीवोंके और उनके साथ नोजीवोंकी एकता स्वीकार की गई है।

शंका—यहाँ सूत्रमें 'स्यात्' शब्द प्रयोग क्यों नहीं किया गया है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, यहाँ दूसरा कोई प्रकार नहीं है। यदि शुद्ध संग्रह नयकी अपेक्षा वेदनाके स्वामीका कोई दूसरा भी प्रकार होता तो 'स्यात्' शब्दका प्रयोग

---

१ ताप्रतौ 'जीवाणं ताहि' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ण च अत्थि तम्हा[1] सो ण पउत्तो त्ति । संपहि असुद्धसंगहणयविसए सामित्तपरूवणट्ठ-मुत्तरसुत्तं भणदि—

जीवाणं वा ॥ १२ ॥

[2]संगहियणोजीव-जीवबहुत्तब्भुवगमादो । [3]एदमसुद्धसंगहणयवयणं । सेसं जहा सुद्धसंगहस्स वुत्तं तहा वत्तव्वं, [4]विसेसाभावादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १३ ॥

जहा सुद्धासुद्धसंगहणए अस्सिदूण णाणावरणीयवेअणाए सामित्तपरूवणा कदा तहा सत्तण्णं कम्माणं वेयणाए पुध पुध सामित्तपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो ।

सद्दुजुसुदाणं णाणावरणीयवेयणा जीवस्स ॥ १४ ॥

किमट्ठं जीव-वेयणाणं सद्दुजुसुदा बहुवयणं णेच्छंति ? ण एस दोसो, बहुत्ता-भावादो । तं जहा—सव्वं पि वत्थु एगसंखाविसिट्ठं, अण्णहा तस्साभावप्पसंगादो । ण च एगत्तपडिग्गहिए वत्थुम्हि दुब्भावादीणं संभवो अत्थि, सीदुण्हाणं व तेसु सहाणवट्ठा-

---

करना योग्य था । परन्तु वह है नहीं, अतएव उसका प्रयोग नहीं किया गया है ।

अब अशुद्ध संग्रह नयके विषयमें स्वामित्वकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

अथवा जीवोंके होती है ॥ १२ ॥

कारण कि संग्रहकी अपेक्षा नोजीव और जीव बहुत स्वीकार किये गये हैं । यह अशुद्ध-संग्रह नयकी अपेक्षा कथन है । शेष प्ररूपणा जैसे शुद्ध संग्रह नयका आश्रय करके की गई है वैसे ही करना चाहिये, क्योंकि, इसमें उससे कोई विशेषता नहीं है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें कथन करना चाहिये ॥ १३ ॥

जिस प्रकार शुद्ध और अशुद्ध संग्रह नयोंका आश्रय करके ज्ञानावरणीयकी वेदनाके स्वामित्वकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी वेदनाके स्वामित्वकी प्ररूपणा पृथक्-पृथक् करनी चाहिये, क्योंकि उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

शब्द और ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना जीवके होती है ॥ १४ ॥

शंका—शब्द और ऋजुसूत्र ये दोनों नय जीव व वेदनाके बहुवचनको क्यों नहीं स्वीकार करते हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, यहाँ बहुत्वकी सम्भावना नहीं है । वह इस प्रकारसे—सभी वस्तु एक संख्यासे सहित है, क्योंकि, इसके विना उसके अभावका प्रसंग आता है । एकत्वको स्वीकार करनेवाली वस्तुमें द्वित्वादिकी सम्भावना भी नहीं है, क्योंकि, उनमें शीत

---

१ ताप्रतौ 'तहा' इति पाठः । २ मप्रतौ 'संगहअ–' इति पाठः । ३ अ-आप्रत्योः 'एदमसुद्धं' इति पाठः । ४ अप्रतौ 'अविसेसादो', आप्रतौ त्रुटितोऽत्र पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णलक्खणविरोहदंसणादो। ण च एगत्तविसिट्ठं वत्थु अत्थि जेण अणेगत्तस्स[1] तदाहारो होज्ज। एक्कम्हि खंभम्मि मूलग्ग-मज्झभेएण अणेयत्तं दिस्सदि त्ति भणिदे[2] तत्थ एयत्तं मोत्तूण अणेयत्तस्स अणुवलंभादो। ण ताव थंभगयमणेयत्तं, तत्थ एयत्तुवलंभादो। ण मूलगयमग्गगयं मज्झगयं वा, तत्थ वि एयत्तं मोत्तूण अणेयत्ताणुवलंभादो। ण तिण्णमेगेगवत्थूणं समूहो अणेयत्तस्स आहारो, तव्वदिरेगेण तस्समूहाणुवलंभादो। तम्हा णत्थि बहुत्तं। तेणेव कारणेण ण चेत्थ[3] बहुवयणं पि। तम्हा सद्दुजुसुदाणं णाणावरणीयवेयणा जीवस्से त्ति भणिदं।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १५ ॥

जहा णाणावरणीयस्स परूविदं तहा सत्तण्णं कम्माणं वेयणसामित्तं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो।

एवं वेयणसामित्तविहाणं समत्तमणियोगद्दारं।

व उष्णके समान सहानवस्थान रूप विरोध देखा जाता है। इसके अतिरिक्त एकत्वसे रहित वस्तु है भी नहीं जिससे कि वह अनेकत्वका आधार हो सके।

शंका- एक खम्भेमें मूल, अग्र एवं मध्यके भेदसे अनेकता देखी जाती है?

समाधान—ऐसी आशंका होनेपर उत्तर देते हैं कि 'नहीं', क्योंकि, उसमें एकत्वको छोड़कर अनेकत्व पाया नहीं जाता। कारण कि स्तम्भमें तो अनेकत्वकी सम्भावना है नहीं, क्योंकि, उसमें एकता पायी जाती है। मूलगत, अग्रगत अथवा मध्यगत अनेकता भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, उनमें भी एकत्वको छोड़कर अनेकता नहीं पायी जाती। यदि कहा जाय कि तीन एक एक वस्तुओंका समूह अनेकताका आधार है, सो यह कहना भी ठीक नहीं है; क्योंकि, उससे भिन्न उनका समूह पाया नहीं जाता। इस कारण इन नयोंकी अपेक्षा बहुत्व सम्भव नहीं है। इसीलिये यहाँ बहुवचन भी नहीं है। अतएव शब्द और ऋजुसूत्र नयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना जीवके होती है, ऐसा कहा गया है।

इसी प्रकार इन दोनों नयोंकी अपेक्षा शेष सात कर्मोंकी वेदनाके स्वामित्वका कथन करना चाहिये ॥ १५ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकी वेदनाके स्वामित्वकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी वेदनाके स्वामित्वकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

इस प्रकार वेदनस्वामित्वविधान अनुयोग द्वार समाप्त हुआ।

---

१ प्रतिषु 'अणोगंतस्स' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'भीणदे' इति पाठः। ३ अ-ताप्रत्योः 'ण च अत्थि' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

(वेयणवेयणविहाणाणियोगद्दारं)

वेयणवेयणविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं । किमट्ठमहियारो संभालिज्जदे ? ण, अण्णहा परूवणाए फलाभावप्पसंगादो । का वेयणा ? वेद्यते वेदिष्यत इति वेदनाशब्दसिद्धेः । अट्ठविहकम्म-पोग्गलक्खंधो वेयणा । णोकम्मपोग्गला वि वेदिज्जंति त्ति तेसिं वेयणासण्णा किण्ण इच्छिज्जदे ? ण, अट्ठविहकम्मपरूवणाए परूविज्जमाणाए णोकम्मपरूवणाए संभवा-भावादो । अनुभवनं वेदना, वेदनायाः वेदना वेदनावेदना, अष्टकर्मपुद्गलस्कन्धानुभव इत्यर्थः । विधीयते क्रियते प्ररूप्यत इति विधानम्, वेदनावेदनायाः विधानं वेदनावेदना-विधानम् । तत्र प्ररूपणा क्रियत इति यदुक्तं भवति ।

सव्वं पि कम्मं पयडि त्ति कट्टु णेगमणयस्स ॥ २ ॥

वेदनवेदनविधान अनुयोगद्वार अधिकार प्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है।

शंका - अधिकारका स्मरण किसलिये कराया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उसके विना प्ररूपणाके निष्फल होनेका प्रसंग आता है।

शंका—वेदना किसे कहते हैं ?

समाधान—'वेद्यते वेदिष्यत इति वेदना' अर्थात् जिसका वर्तमानमें अनुभव किया जाता है, या भविष्यमें किया जावेगा वह वेदना है, इस निरुक्तिके अनुसार आठ प्रकारके कर्म-पुद्गल-स्कन्धको वेदना कहा गया है।

शंका—नोकर्म भी तो अनुभवके विषय होते हैं, फिर उनकी वेदना संज्ञा क्यों अभीष्ट नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि; आठ प्रकारके कर्मकी प्ररूपणाका निरूपण करते समय नोकर्मप्र-रूपणाकी सम्भावना ही नहीं है।

अनुभवन करनेका नाम वेदना है। वेदनाकी वेदना वेदनावेदना है, अर्थात् आठ प्रकारके कर्मपुद्गलस्कन्धोंके अनुभव करनेका नाम वेदनावेदना है। 'विधीयते क्रियते प्ररूप्यते इति विधानम्' अर्थात् जो किया जाय या जिसकी प्ररूपणा की जाय वह विधान है, वेदनावेदनाका विधान वेदनावेदनाविधान, इस प्रकार यहाँ तत्पुरुष समास है। उसके विषयमें प्ररूपणा की जाती है, यह उसका अभिप्राय है।

नैगम नयकी अपेक्षा सभी कर्मको प्रकृति मानकर यह प्ररूपणा की जा रही है ॥ २ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदस्ति न तद्द्वयमतिलंघ्य वर्तत इति नैकगमो नैगमः[1]। तस्स णइगमणयस्स अहिप्पाएण बद्ध[2]-उदिण्णुवसंतभेदेण ट्ठिदसव्वं पि कम्मं पयडी होदि, प्रक्रियते अज्ञानादिकं फलमनया आत्मनः इति प्रकृतिशब्दव्युत्पत्तेः। फलदातृत्वेन परिणतः कर्मपुद्गलस्कन्धः उदीर्णः। मिथ्यत्वाविरति-प्रमाद-कषाय-योगैः कर्मरूपतामापाद्यमानः कार्म्मणपुद्गलस्कन्धो बध्यमानः। द्वाभ्यामाभ्यां व्यतिरिक्तः कर्मपुद्गलस्कन्धः उपशान्तः। तत्र उदीर्णस्य भवतु नाम प्रकृतिव्यपदेशः, फलदातृत्वेन परिणतत्वात्। न बध्यमानोपशान्तयोः, तत्र तदभावादिति ? न, त्रिष्वपि कालेषु प्रकृतिशब्दसिद्धेः। तेण जो कम्मक्खंधो जीवस्स वट्टमाणकाले फलं देइ जो च देइस्सदि, एदेसिं दोण्णं पि कम्मक्खंधाणं पयडित्तं सिद्धं। अथवा, जहा उदिण्णं वट्टमाणकाले फलं देदि, एवं बज्झमाणुवसंताणि वि वट्टमाणकाले वि देंति फलं, तेहि विणा कम्मोदयस्स अभावादो। उक्कस्सट्ठिदिसंते उक्कस्साणुभागे च संते बज्झमाणे च सम्मत्त-संजम-संजमासंजमाणं गहणाभावादो। भूद-भविस्सपज्जायाणं वट्टमाणत्तब्भुवगमादो वा णेगमणयम्मि एसा वुप्पत्ती घडदे। तेण णेगमणयस्स तिविहं पि कम्मं पयडि त्ति कट्टु इमा परूवणा कीरदे।

जो सत् है वह भेद व अभेद दोनों का उल्लंघन करके नहीं रहता, इस प्रकार जो एकको विषय नहीं करता है, अर्थात् गौण व मुख्यताकी अपेक्षा दोनोंको ही विषय करता है इसे नैगमनय कहते हैं। उस नैगम नयके अभिप्रायसे बद्ध, उदीर्ण और उपशान्तके भेदसे स्थित सभी कर्म प्रकृतिरूप हैं, क्योंकि, 'प्रक्रियते अज्ञानादिकं फलमनया आत्मनः इति प्रकृतिः' अर्थात् जिसके द्वारा आत्माको अज्ञानादिरूप फल किया जाता है वह प्रकृति है, यह प्रकृति शब्दकी व्युत्पत्ति है।

शंका— फलदान स्वरूपसे परिणत हुआ कर्म-पुद्गल स्कन्ध उदीर्ण कहा जाता है। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योगके द्वारा कर्म स्वरूपको प्राप्त होनेवाला कार्मण पुद्गलस्कन्ध बध्यमान कहा जाता है। इन दोनोंसे भिन्न कर्म-पुद्गलस्कन्धको उपशान्त कहते हैं। उनमें उदीर्ण कर्म-पुद्गलस्कन्धको प्रकृति संज्ञा भले ही हो, क्योंकि, वह फलदान स्वरूपसे परिणत है। बध्यमान और उपशान्त कर्म-पुद्गल स्कन्धोंकी यह संज्ञा नहीं बन सकती, क्योंकि, उनमें फलदान स्वरूपका अभाव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, तीनों ही कालोंमें प्रकृति शब्दकी सिद्धि की गई है। इस कारण जो कर्म-स्कन्ध वर्तमान कालमें फल देता है और जो भविष्यमें फल देगा, इन दोनों ही कर्म-स्कन्धोंकी प्रकृति संज्ञा सिद्ध है। अथवा, जिस प्रकार उदयप्राप्त कर्म वर्तमान कालमें फल देता है उसी प्रकार बध्यमान और उपशम भावको प्राप्त कर्म भी वर्तमान कालमें भी फल देते हैं, क्योंकि, उनके बिना कर्मोदय का अभाव है। उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व और उत्कृष्ट अनुभाग सत्त्वके होनेपर तथा उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभागके बँधनेपर सम्यक्त्व, संयम एवं संयमासंयमका ग्रहण सम्भव नहीं है। अथवा, भूत व भविष्य पर्यायोंको वर्तमान रूप स्वीकार कर लेनेसे नैगमनयमें यह व्युत्पत्ति बैठ जाती है। इसलिए नैगमनयकी अपेक्षा उक्त तीन प्रकारके कर्मको प्रकृति मानकर

---

१ क० पा० १, पृ० २२१। २ प्रतिषु 'बंध-' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णेगमणओ बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणं तिण्णं पि कम्माणं वेयणववएसमिच्छदि त्ति भणिदं होदि ।

णाणावरणीयवेयणा सिया बज्झमाणिया वेयणा ॥ ३ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—एत्थ सियासद्दो अणेगेसु अत्थेसु जदि वि वट्टदे तो वि एत्थ अणेयंते घेत्तव्वो । प्रशंसास्तित्वानेकान्त-विधि-विचारणाद्यर्थेषु वर्तमानोऽपि स्याच्छब्दः अमुष्मिन्नेवार्थे गृह्यत इति कथमवगम्यते ? प्रकरणात् । जा णाणारणीयस्स वेयणा सा परूविज्जदे । किमट्ठं णाणावरणीयवेयणा त्ति णिद्दिस्सदे । परूविज्जमाणपयडिसंभालणट्ठं । सिया बज्झमाणिया वेयणा होदि, तत्तो अण्णाणादि-फलुप्पत्तिदंसणादो । बज्झमाणस्स कम्मस्स फलमकुणंतस्स कधं वेयणाववएसो ? ण, उत्तरकाले फलदाइत्तण्णहाणुववत्तीदो बंधसमए वि वेदणभावसिद्धीए । एत्थ कुदो एगवयणणिद्देसो ? जीव-पयडि-समयाणं बहुत्तेण विणा एगत्तप्पणादो । एत्थ जीव-पयडीणमेगवयण-बहुवयणाणि ठविय कालस्स एगवयणं च $\begin{vmatrix}१११\\२२२\end{vmatrix}$ एदस्स सुत्तस्स आलावो वुच्चदे ।

यह प्ररूपणा की जा रही है । अभिप्राय यह है कि नैगम नय बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त इन तीनों ही कर्मोंकी वेदना संज्ञा स्वीकार करता है ।

ज्ञानावरणीय वेदना कथंचित् बध्यमान वेदना है ॥ ३ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है—यद्यपि 'स्यात्' शब्द अनेक अर्थोंमें वर्तमान है तो भी यहाँ उसे अनेकान्त अर्थमें ग्रहण करना चाहिये ।

शंका—प्रशंसा, अस्तित्व, अनेकान्त, विधि और विचारणा आदि अर्थोंमें वर्तमान भी 'स्यात्' शब्द अमुक अर्थमें ही ग्रहण किया जाता है, यह कैसे ज्ञात होता है ।

समाधान—वह प्रकरणसे ज्ञात हो जाता है ।

जो ज्ञानावरणीयकी वेदना है उसकी प्ररूपणा की जाती है ।

शंका—सूत्रमें 'ज्ञानावरणीयवेदना' यह निर्देश किस लिये किया गया है ?

समाधान—उसका निर्देश प्ररूपित की जानेवाली प्रकृतिका स्मरण करनेके लिये किया गया है ।

कथञ्चित् बध्यमान वेदना होती है, क्योंकि, उससे अज्ञानादि रूप फलकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

शंका—चूंकि बाँधा जानेवाला कर्म उस समय फलको करता नहीं है, अतः उसकी वेदना संज्ञा कैसे हो सकती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, इसके बिना वह उत्तरकालमें फलदाता बन नहीं सकता, अतएव बन्ध समयमें भी उसे वेदनात्व सिद्ध है ।

शंका—यहां एकवचनका निर्देश क्यों किया गया है ?

समाधान—जीव, प्रकृति और समय, इनके बहुत्वकी अपेक्षा न कर एकत्वकी मुख्यतासे एकवचनका निर्देश किया गया है ।

यहाँ जीव व प्रकृतिके एकवचन व बहुवचनको तथा कालके एकवचनको स्थापितकर इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं जहा—एयजीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया बज्झमाणिया वेयणा। सुत्तेण अणुवइट्ठाणं जीव-पयडि-समयाणं कधमेत्थ णिद्देसो कीरदे? पयडी ताव सुत्तुद्दिट्ठा चेव, णाणावरणीयवेयणा इदि सुत्ते भणिदत्तादो। समओ वि सुत्तणिद्दिट्ठो चेव, बज्झमाणिया इदि वट्टमाणणिद्देसादो। तहा जीवो वि सुत्तुद्दिट्ठो, मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगपच्चयपरिणदजीवेण विणा बंधो णत्थि त्ति पच्चयविहाणे परूविदत्तादो। तदो जीव-पयडि-समया सुत्तणिबद्धा चेवे त्ति दट्ठव्वा। कालस्स बहुवयणमेत्थ किण्ण इच्छिज्जदे? ण, बंधस्स विदियसमए उवसंतभावमावज्जमाणस्स एगसमयं मोत्तूण बहूणं समयाणमणुवलंभादो। एत्थ जीव-पयडि-समय-एगवयण-बहुवयणाणमेसो पत्थारो

१	१	२	२
१	२	१	२
१	१	१	१

। एत्थ एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया त्ति एदं पढमपत्थारालावमस्सिदूण सुत्तमिदमवट्ठिदं।

सिया उदिण्णा वेयणा ॥ ४ ॥

सूत्रका आलाप कहते हैं। वह इस प्रकार है—एक समयमें बाँधी गई एक जीवकी एक प्रकृति कथञ्चित् बध्यमान वेदना है।

शंका—सूत्रमें अनिर्दिष्ट जीव, प्रकृति और समय, इनका निर्देश यहाँ कैसे किया जारहा है?

समाधान—प्रकृतिका निर्देश सूत्रमें किया ही गया है, क्योंकि, 'ज्ञानावरणीय वेदना' ऐसा सूत्रमें कहा गया है। समय भी सूत्रनिर्दिष्ट ही है, क्योंकि, 'बध्यमान' इस प्रकारसे वर्तमान कालका निर्देश किया गया है। जीव भी सूत्रोद्दिष्ट ही है, क्योंकि, मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग प्रत्ययसे परिणत जीवके बिना बन्ध नहीं हो सकता, ऐसी प्रत्ययविधानमें प्ररूपणा की जा चुकी है। इसलिये जीव, प्रकृति और समय, ये सूत्रनिबद्ध ही हैं, ऐसा समझना चाहिये।

शंका—यहाँ कालको बहुवचन क्यों नहीं स्वीकार करते?

समाधान—नहीं, क्योंकि, बन्धके द्वितीय समयमें उपशमभावको प्राप्त होनेवाले कर्मबन्धके एक समयको छोड़कर बहुत समय पाये नहीं जाते।

यहाँ जीव, प्रकृति और समयके एकवचन व बहुवचनका यह प्रस्तार है—

जीव	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	अनेक	एक	अनेक
समय	एक	एक	एक	एक

यहाँ एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान है, इस प्रकार इस प्रथम प्रस्तारके आलापका आश्रय करके यह सूत्र अवस्थित है।

ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् उदीर्ण वेदना है ॥ ४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'णाणावरणीयवेयणा' इदि सव्वत्थ अणुवट्टदे । बंधसुत्ताणंतरं उदिण्णसुत्तं किमट्ठं वुच्चदे ? ण, बज्झमाणुदिण्णवदिरित्तो सव्वो कम्मपोग्गलक्खंधो उवसंतसण्णिदो त्ति जाणावणट्ठं तदुत्तीदो । एत्थ जीव-पयडि-समयाणं एगवयण-बहुवयणाणि ठविय

१	१	१
२	२	२

पुणो एत्थ अक्खपरावत्तं करिय उप्पाइदउदिण्णसंदिट्ठी एसा जीव-पयडि-समय-पडिबद्धा

१	१	१	१	२	२	२	२
१	१	२	२	१	१	२	२
१	२	१	२	१	२	१	२

। एत्थ उवरिमपंती जीवाणं, मज्झिमपंती पयडीणं, हेट्ठिमपंती समयाणं । एत्थ एयस्स जीवस्स एयपयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा । एदेण पढमालावेण एदं सुत्तं परूविदं होदि । एत्थ उदिण्णे परूविज्जमाणे कधं कालस्स बहुत्तं लब्भदे ? ण, अणेगेसु समएसु बद्धाणमेगसमए उदओवलंभादो ।

सिया उवसंता वेयणा ॥ ५ ॥

पुणो एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेग-बहुवयणाणि

'ज्ञानावरणीयवेदना' इसकी सब सूत्रोंमें अनुवृत्ति ली जाती है ।

शंका—बन्धसूत्रके पश्चात् उदीर्णसूत्र किसलिये कहा जा रहा है ।

समाधान—नहीं, क्योंकि, बध्यमान और उदीर्णसे भिन्न सब कर्म-पुद्गलस्कन्धकी उपशान्त संज्ञा है, यह बतलानेके लिये बन्धसूत्रके पश्चात् उदीर्णसूत्र कहा गया है ।

यहाँ जीव, प्रकृति और समयके एकवचन व बहुवचनको स्थापित कर·········पश्चात् अक्षपरावर्तन करके उत्पन्न की गई उदीर्ण कर्मपुद्गलस्कन्धकी जीव, प्रकृति एवं समयसे सबद्ध यह संदृष्टि है—

जीव	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

यहाँ ऊपरकी पंक्ति जीवोंकी है, मध्यकी पंक्ति प्रकृतियोंकी है, और अधस्तन पंक्ति समयोंकी है । यहाँ एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथञ्चित् उदीर्ण वेदना है । इस प्रथम आलापसे इस सूत्रकी प्ररूपणा हो जाती है ।

शंका—यहाँ उदीर्णकी प्ररूपणा करते समय कालका बहुत्व कैसे पाया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अनेक समयोंमें बाँधी गई प्रकृतियोंका एक समयमें उदय पाया जाता है ।

ज्ञानावरणीयवेदना कथंचित् उपशान्त वेदना है ॥ ५ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति और समय, इनके एकवचन व बहु-

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

ठविय |१११ / २२२| अक्खपरावत्तिं कादूण पत्थारो उप्पादेदव्वो । एदस्स संदिट्ठी जीव-पयडि-समयपडिबद्धा एसा |११११२२२२ / ११२२११२२ / १२१२१२१२| । एत्थ उवरिमपंती जीवाणं, मज्झिमपंती पयडीणं, हेट्ठिमपंती समयाणं । एत्थ एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा त्ति एदेण पढमालावेण एदं सुत्तं परूविदं होदि । अणेगसमयपबद्धाणं संतसरूवेण उवलंभादो एत्थ कालबहुत्तमुवलब्भदे । सेसं सुगमं । एवं बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताण-मेगसंजोगस्स एगवयणसुत्तालावो समत्तो ।

सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ ॥ ६ ॥

एदस्स एगसंजोग-बहुवयणपढमसुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाणियाए जीव-पयडीणमेय-बहुवयणाणि समयस्स एगवयणं च ठविय तेसिं तिसंजोगेण जादपत्थारं च ठवेदूण एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणा कीरदे । तं जहा—समयगयं ताव बहुत्तं णत्थि, बज्झमाणस्स कम्मस्स तदसंभवादो । जीवेसु पयडीसु च[1] तत्थ बहुत्तं लब्भइ । तत्थ बज्झमाणियाए वेयणाए बहुत्तमिच्छिज्जदि णेगमणओ । तेणेदस्स पढमु-

वचनको स्थापित कर |१ १ १ / २ २ २| अक्षपरावर्तन करके प्रस्तारको उत्पन्न कराना चाहिये । इसकी जीव, प्रकृति और समयसे सम्बन्धित संदृष्टि यह है—

जीव	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

इसमें ऊपरकी पंक्ति जीवोंकी, मध्य पंक्ति प्रकृतियोंकी, और अधस्तन पंक्ति समयोंकी है । यहाँ एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथञ्चित् उपशान्त वेदना है, इस प्रकार इस प्रथम आलापसे इस सूत्रकी प्ररूपणा हो जाती है । चूँकि अनेक समयोंमें बाँधी गई प्रकृतियाँ सत् स्वरूपसे पायी जाती हैं, अतः यहाँ कालबहुत्व उपलब्ध है । शेष कथन सुगम है । इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त, इनके एक संयोगजनित एकवचन सूत्रका आलाप समाप्त हुआ ।

कथंचित् बध्यमान वेदनायें हैं ॥ ६ ॥

बध्यमान वेदनाके बहुवचनसे सम्बन्धित इस प्रथम सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव और प्रकृतिके एक व बहुवचनोंको तथा समयके एकवचनको स्थापित कर उनके त्रिसंयोगसे उत्पन्न प्रस्तारको भी स्थापित करके इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा की जाती है । वह इस प्रकार है—यहाँ समयगत बहुत्व नहीं है, क्योंकि, बध्यमान कर्मके उसकी सम्भावना नहीं है । जीवों और

१ अप्रतौ 'जीवेसु पयडीसु जीवपयडीसु च' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चारणं मोत्तूण सेसाओ तिण्णि उच्चारणाओ होंति। ताओ भणिस्सामो—एगस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ। एत्थ एगा[1] उच्चारणसलागा लब्भदि [१]। अणेगेहि जीवेहि एया पयडी एगसमयपबद्धा सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ। एवं वेउच्चारणसलागा [२]। कधं जीवबहुत्तेण वेयणाबहुत्तं ? ण, एक्किस्से वेयणाए जीवभेदेण भेदमुवगयाए बहुत्तविरोहाभावादो। अथवा, अणेयाणं जीवाणं अणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ। एवं तिण्णि उच्चारणसलागाओ [३]। एवं बज्झमाणियाए बहुवयणसुत्तालावो समत्तो।

सिया उदिण्णाओ वेयणाओ ॥ ७ ॥

एदस्स उदिण्णबहुवयणसुत्तस्स आलावे[2] भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणं एग-बहुवयणाणि ठविय तेसिमक्खसंचारजणिदपत्थारं च ठविय तत्थ एगवयणालावं पुव्वं परूविदं मोत्तूण सेससत्तालावे भणिस्सामो। तं जहा—एगस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उदिण्णाओ वेयणाओ। एत्थ जदि वि एगेण जीवेण एया चेव पयडी उदए छुद्धा तो वि तिस्से बहुत्तं होदि, अणेगेसु समएसु पबद्धत्तादो। एत्थ

प्रकृतियोंमें वहाँ बहुत्व पाया जाता है। नैगम नय बध्यमान वेदनाके बहुत्वको स्वीकार करता है। इसलिये इसके प्रथम उच्चारणको छोड़कर शेष तीन उच्चारणायें होती हैं। उनको कहते हैं—एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं कथञ्चित् बध्यमान वेदनायें हैं। यहाँ एक उच्चारण शलाका पायी जाती है (१)। अनेक जीवोंके द्वारा एक समयमें बाँधी गई एक प्रकृति कथञ्चित् बध्यमान वेदनायें हैं। इस प्रकार दो उच्चारणशलाकायें हुईं (२)।

शंका—जीवोंके बहुत्वसे वेदनाका बहुत्व कैसे सम्भव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, जीवोंके भेदसे भेदको प्राप्त हुई एक वेदनाके बहुत होनेमें कोई विरोध नहीं है।

अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं कथञ्चित् बध्यमान वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन उच्चारण शलाकायें हुईं (३)। इस प्रकार बध्यमानके बहुवचन सम्बन्धी सूत्रका आलाप समाप्त हुआ।

कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं ॥ ७ ॥

इस उदीर्ण वेदनाओं सम्बन्धी बहुवचन सूत्रके अलापोंकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति एवं समयके एक व बहुवचनोंको स्थापित कर तथा उनके अक्षसञ्चारसे उत्पन्न प्रस्तारको भी स्थापित करके उनमेंसे पूर्वमें कहे गये एकवचन आलापको छोड़कर शेष सात आलापोंको कहते हैं। यथा—एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई कथञ्चित् उदीर्ण वेदनायें हैं। यद्यपि यहाँ एक जीवके द्वारा एक ही प्रकृति उदयमें निक्षिप्त की गई है तो भी वह बहुत होती है, क्योंकि,

---

१ ताप्रतौ 'एगा' इत्येतत्पदं नास्ति। २ अप्रतौ 'अभावे' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगा उच्चारणसलागा [१] । अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ सिया उदिण्णाओ । एवं बेउच्चारणाओ [२] । अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एवं तिण्णि उच्चारणाओ [३] । अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धाओ सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एत्थ जीवबहुत्तं पेक्खिय उदिण्णबहुत्तं गहियं । एवं चत्तारि उच्चारणाओ [४]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एवं पंच उच्चारणाओ [५] । अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एवं छ उच्चारणाओ [६] । अथवा, अणेयाणं जीवाणं अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एवं सत्त उच्चारणाओ [७] । एवं उदिण्णस्स बहुवयणसुत्तपरूवणा गदा ।

सिया उवसंताओ वेयणाओ ॥ ८ ॥

एदस्स उवसंतबहुवयणसुत्तस्स आलावे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेय-बहुवयणाणि ठविय तेसिमक्खसंचारजणिदपत्थारं च ठवेदूण तत्थ एगवयणपढमालावं मोत्तूण सेससत्तहि वियप्पेहि एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणा कायव्वा । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उवसंताओ वेयणाओ । एवमेगुच्चारणा [१] । एसा

वह अनेक समयोंमें बाँधी गई है । यहाँ एक उच्चारणशलाका हुई (१) । अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं कथञ्चित् उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार दो उच्चारणशलाकायें हुईं (२) । अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं कथञ्चित् उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार तीन उच्चारणायें हुईं (३) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथञ्चित् उदीर्ण वेदनायें हैं । यहाँ जीवोंके बहुत्वकी अपेक्षा उदीर्ण वेदनाका बहुत्व ग्रहण किया गया है । इस प्रकार चार उच्चारणायें हुईं (४) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयों में बाँधी गई कथञ्चित् उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार पाँच उच्चारणायें हुईं (५) । अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं कथञ्चित् उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार छह उच्चारणायें हुईं (६) । अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं कथञ्चित् उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार सात उच्चारणायें हुईं (७) । इस प्रकार उदीर्ण वेदनाके बहुवचन सम्बन्धी सूत्रकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

कथंचित् उपशान्त वेदनायें हैं ॥ ८ ॥

इस उपशान्त वेदनाके बहुवचन सम्बन्धी सूत्रके आलापोंका कथन करते समय जीव, प्रकृति और समय इनके एक व बहुवचनोंको तथा उनके अक्षसञ्चारसे उत्पन्न प्रस्तारको भी स्थापित करके उनमें एकवचन रूप प्रथम आलापको छोड़कर शेष सात विकल्पों द्वारा इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करनी चाहिये । वह इस प्रकारसे—एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई कथञ्चित् उपशान्त वेदनाओं स्वरूप है । इस प्रकार एक उच्चारणा हुई (१) । यद्यपि यह एक

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

जदि वि एक्कस्स जीवस्स एगा चेव पयडी होदि, तो वि अणेगेसु समएसु बद्धत्तादो उवसंतवेयणाए बहुत्तं जुज्जदे। अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ सिया उवसंताओ वेयणाओ। एवं बेउच्चारणाओ [२]। अथवा, एयस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ सिया उवसंताओ वेयणाओ। एवं तिण्णि उच्चारणाओ [३]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंताओ वेयणाओ। एवं चत्तारि उच्चारणाओ [४]। एत्थ जीवबहुत्तं पेक्खिदूण उवसंतवेयणाए एगसमयपबद्धएयपयडीए बहुत्तं गहिदं। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उवसंताओ वेयणाओ। एवं पंच उच्चारणाओ [५]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ सिया उवसंताओ वेयणाओ। एवं छ उच्चारणाओ [६]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ सिया उवसंताओ वेयणाओ। एवं सत्त उच्चारणा [७]। एवं उवसंतवेयणाए सत्त-बहुवयणभंगा परूविदा। एवं बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणमेग-बहुवयणपडिबद्धसुत्तछक्कं परूविय दुसंजोगभंगपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च ॥ ९ ॥

वेयणा इदि अणुवट्टदे। तेण वेयणासद्दो एदस्स सुत्तस्स अवयवभावेण दट्ठव्वो। एदस्स

जीवकी एक ही प्रकृति है, तो भी अनेक समयोंमें बांधे जानेके कारण यहाँ उपशान्त वेदनाका बहुत्व युक्तियुक्त है। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं कथञ्चित् उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दो उच्चारणायें हुईं (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं कथञ्चित् उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन उच्चारणायें हुईं (३)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथञ्चित् उपशान्त वेदनाओं स्वरूप है। इस प्रकार चार उच्चारणायें हुईं (४)। यहाँ जीव बहुत्वकी अपेक्षा करके उपशान्त वेदनारूप एक समयमें बाँधी गई एक प्रकृतिके बहुत्वको ग्रहण किया गया है। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई कथञ्चित् उपशान्त वेदनाओंरूप है। इस प्रकार पाँच उच्चारणायें हुईं (५)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं कथञ्चित् उपशान्त वेदनायें है। इस प्रकार छह उच्चारणायें हुईं (६)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं कथञ्चित् उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सात उच्चारणायें हुईं (७)। इस प्रकार उपशान्त वेदना सम्बन्धी सात बहुवचन भंगोंकी प्ररूपणा की गई है। इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनाके एक व बहुवचनोंसे सम्बद्ध छह सूत्रोंकी प्ररूपणा करके द्विसंयोगजनित भंगोंकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है ॥ ९ ॥

यहाँ वेदना शब्दकी अनुवृत्ति ली गई है। इसलिये वेदना शब्दको इस सूत्रके अवयवरूप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाण-उदिण्णाणं दुसंजोगसुत्तपत्थारं ठविय

११२२
१२१२

पुणो बज्झमाणवेयणाए जीव-पयडि-समयपत्थारं

११२२
१२१२
११११

पुणो उदिण्णाए जीव-पयडि-समयाणं एग-बहुवयणपत्थारं च ठविय

११११२२२२
११२२११२२
१२१२१२१२

पुणो पच्छा वुच्चदे। तं जहा— एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया तस्सेव जीवस्स एयपयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा। एवं दुसंजोगपढमसुत्तस्स एगा चेव उच्चारणा।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च ॥ १० ॥

....

समझना चाहिये। इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान और उदीर्ण वेदनाके द्विसंयोग-सूत्रप्रस्तारको

बध्यमान	एक	एक	अनेक	अनेक
उदीर्ण	एक	अनेक	एक	एक

स्थापित करके पश्चात् बध्यमान वेदना सम्बन्धी जीव, प्रकृति व समय इनके प्रस्तारको,

जीव	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	अनेक	एक	अनेक
समय	एक	एक	एक	एक

तथा उदीर्ण वेदना सम्बन्धी जीव, प्रकृति और समय इनके एक व बहुवचनोंके प्रस्तारको भी स्थापित

जीव	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

करके पुनः पश्चात् प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान और उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, यह कथञ्चित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार द्विसंयोगरूप प्रथम सूत्रकी एक ही उच्चारणा है।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उदीर्ण (अनेक) वेदनायें हैं ॥ १० ॥

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

एत्थ वेयणा त्ति अणुवट्टदे । तेण वेयणासद्दो असंतो वि अज्झाहारेयव्वो सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणा त्ति । संपहि एदस्स अत्थपरूवणा कीरदे । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणाओ । एवं दुसंजोगविदियसुत्तस्स पढमुच्चारणा [१] । अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणा । दो भंगा [२] । अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणा । एवं तिण्णि भंगा [३] । पुणो उदिण्णाए विदियसुत्तस्स सेसबहुवयणभंगा ण लब्भंति । कुदो ? बज्झमाण-उदिण्णाणमाधारभूदएगजीवभावादो ।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च ॥ ११ ॥

वेयणा त्ति अणुवट्टदे । एदस्स सुत्तस्स भंगा वुच्चंति । तं जहा—एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणिओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च वेयणाओ । एवं तदियसुत्तस्स एगो चेव भंगो [१] । पुणो बज्झमाण-उदिण्णाणं दुसंजोगतदियसुत्तस्स सेसभंगा

यहाँ 'वेदना' की अनुवृत्ति ली जाती है । इसलिये वेदना शब्दके न होते हुए भी उसका अध्याहार करना चाहिये—कथञ्चित बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं । अब इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा की जाती है । वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण; इस प्रकार कथञ्चित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार द्विसंयोगरूप द्वितीय सूत्रकी प्रथम उच्चारणा हुई (१) । अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, कथञ्चित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं । ये दो भंग हुए (२) । अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, कथञ्चित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार तीन भंग हुए (३) । पुनः उदीर्ण वेदना सम्बन्धी द्वितीय सूत्रके शेष बहुवचन भंग नहीं पाये जाते, क्योंकि, बध्यमान और उदीर्ण वेदनाके आधारभूत एक जीवका अभाव है ।

कथंचित् बध्यमान वेदनायें और उदीर्ण वेदना है ॥ ११ ॥

'वेदना' इसकी अनुवृत्ति है । इस सूत्रके भंग कहते हैं । यथा—एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान वेदनायें और उदीर्ण वेदना है । इस प्रकार तृतीय सूत्रका एक ही भंग होता है (१) पुनः बध्यमान और उदीर्ण सम्बन्धी द्विसंयोगवाले तृतीय सूत्रके शेष भंग नहीं पाये जाते, क्योंकि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ण लब्भंति, जीवेहि वियहियरणत्तप्पसंगादो ।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च ॥ १२ ॥

वेयणा त्ति अणुवट्टदे । एदस्स बज्झमाण-उदिण्णाणं दुसंजोगचउत्थसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ । एवं चउत्थसुत्तस्स पढमभंगो [१] । अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एसो विदियभंगो [२]। अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणे ाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स तिण्णि भंगा [३] । संपहि बज्झमाणउदिण्णाणं एयजीवमस्सिदूण तिण्णि चेव भंगा होंति, अहिया ण उप्पज्जंति, बज्झमाण-उदिण्णाणं विवहिअरणावत्तीदो । संपहि एदस्सेव दुसंजोगचउत्थसुत्तस्स बज्झमाण[1]-उदिण्णाणं णाणाजीवे अस्सिदूण सेसभंगे वत्तइस्सामो । तं जहा—अणेयाणं जीवाणं एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च

जीवोंके साथ व्यभिचारका प्रसंग आता है ।

कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं ॥ १२ ॥

'वेदना' इसकी अनुवृत्ति है। अब बध्यमान और उदीर्ण सम्बन्धी द्विसंयोगवाले इस चतुर्थ सूत्र का अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है—एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं । इस प्रकार चतुर्थ सूत्रका प्रथम भंग हुआ (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान वेदनायें, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण वेदनायें, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं । यह द्वितीय भंग हुआ (२) । अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान वेदनायें, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण वेदनायें कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनाएं हैं । इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके तीन भंग होते हैं (३)। अब बध्यमान और उदीर्ण वेदनाओंके एक जीवका आश्रय करके तीन ही भंग होते हैं, अधिक नहीं उत्पन्न होते हैं; क्योंकि, बध्यमान और उदीर्णके व्यभिचारकी आपत्ति आती है ।

अब इस द्विसंयोगवाले चतुर्थ सूत्रकी बध्यमान और उदीर्ण वेदनाओंके नाना जीवोंका आश्रय करके शेष भंगोंको कहते हैं । यथा—अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण

१ अ-आप्रत्योः 'सुत्तबज्झमाण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स चत्तारि भंगा [४]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स पंच भंगा [५]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा च[1] बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ[2] पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा [६]। अधवा, अणेयाणं जीवाणं एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं सत्त भंगा [७]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा[3] उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवमट्ठ भंगा [८]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं णव भंगा [९]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयपयडीओ एगसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं दस भंगा [१०]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पय-

वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके चार भङ्ग हुए (४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके पाँच भङ्ग हुए (५)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भङ्ग हुए (६)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भङ्ग हुए (७)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भङ्ग हुए (८)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार नौ भङ्ग हुए (९)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार दस भङ्ग हुए (१०)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक

१ ताप्रतौ 'च' इत्येतत्पदं नोपलभ्यते। २ अ-आप्रत्योः 'जीवाणमेयाओ' इति पाठः। ३ अ-आप्रत्योः 'पबद्धाओ', ताप्रतौ 'पबद्धा [ओ]' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डीओ एगसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेय-समयपबद्धाओ उदिण्णाओ सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स एक्कारस भंगा [११]। एवं बज्झमाणउदिण्णाणं दुसंजोगसुत्ताणमत्थपरूवणा कदा। संपहि बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगजणिदवेयणाभंगपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

सिया बज्झमाणिया उवसंता च ॥ १३ ॥

वेयणा त्ति अणुवट्टदे। एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाणाणुदिण्णाण व तिण्णि पत्थारे ठविय वत्तव्वं। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा। एवं पढमसुत्तस्स एगो चेव भंगो [१]।

सिया बज्झमाणिया[1] च उवसंताओ च ॥ १४ ॥

एदस्स विदियसुत्तस्स भंगपरूवणा कीरदे। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ[2] सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च वेयणा। एवं विदियसुत्तस्स पढमभंगो [१]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ

प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके ग्यारह भंग हुए (११)। इस प्रकार बध्यमान और उदीर्ण वेदनाओंके द्विसंयोग सम्बन्धी सूत्रोंके अर्थकी प्ररूपणा की गई है। अब बध्यमान और उपशान्त वेदनाओंके द्विसंयोगसे उत्पन्न वेदनाभङ्गोंके प्ररूपणार्थ आगेका सूत्र कहते हैं—

कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है ॥ १३ ॥

'वेदना' इसकी अनुवृत्ति है। इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान और उदीर्ण वेदनाके समान तीन प्रस्तारोंको स्थापित करके कथन करना चाहिये। वह इस प्रकारसे—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार प्रथम सूत्रका एक ही भङ्ग होता है (१)।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ १४ ॥

इस द्वितीय सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार द्वितीय सूत्रका प्रथम भङ्ग हुआ (१)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक

१ अ-आप्रत्योः 'बज्झमाणियाओ', ताप्रतौ 'बज्झमाणिया [ओ]' इति पाठः। २ प्रतिषु 'उवसंता' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च वेयणाओ एवं दो भंगा [२]। अधवा एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा [३]। एवं विदियसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा लब्भंति, ण सेसा; णिरुद्धेगजीवत्तादो।

सिया बज्झमाणियाओ च उवसंता च ॥ १५ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स भंगपरूवणा कीरदे। तं जहा—एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स एयपयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंता च वेयणा। एवं तदियसुत्तस्स एगो चेव भंगो [१]। सेसभंगा ण लब्भंति। कुदो? णिरुद्धेगजीवत्तादो।

सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च ॥ १६ ॥

एदस्स चउत्थसुत्तस्स भंगपरूवणा कीरदे। तं जहा—एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेय-समयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एसो चउत्थसुत्तस्स पढमभंगो [१]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमय-पबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स

समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भङ्ग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भङ्ग हुए (३)। इस प्रकार द्वितीय सूत्रके तीन ही भङ्ग पाये जाते हैं; शेष नहीं पाये जाते; क्योंकि, यहाँ एक जीवकी विवक्षा है।

कथंचित् बध्यमान (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥ १५ ॥

इस तृतीय सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है—एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार तृतीय सूत्रका एक ही भङ्ग है (१), शेष भङ्ग नहीं पाये जाते हैं, क्योंकि, एक जीवकी विवक्षा है।

कथंचित् बध्यमान (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ १६ ॥

इस चतुर्थ सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है—एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। यह चतुर्थ सूत्रका प्रथम भङ्ग है (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेभंगा [२]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ [1]बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा होंति [३], वड्ढिमा ण होंति; बज्झमाण-उवसंतेसु णिरुद्धेगजीवत्तादो।

संपहि बज्झमाण-उवसंतेसु णाणाजीवे अस्सिदूण चउत्थसुत्तस्स सेसभंगे वत्तइस्सामो। तं जहा—अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स चत्तारि भंगा [४]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पंच भंगा [५]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ [एयसमयपबद्धाओ च[2]] उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा [६]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्त भंगा [७]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमय-

---

सूत्रके दो भङ्ग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके तीन ही भङ्ग होते हैं (३), अधिक नहीं होते; क्योंकि बध्यमान और उपशान्त वेदनाओंमें एक जीवकी विवक्षा है।

अब बध्यमान और उपशान्त वेदनाओंमें नाना जीवोंका आश्रय लेकर चतुर्थ सूत्रके शेष भङ्गोंको कहते हैं। यथा—अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके चार भङ्ग हुए (४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पाँच भङ्ग हुए (५)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भङ्ग हुए (६)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भङ्ग हुए (७)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक

---

१ ताप्रतौ '–पबद्धाओ च बज्झ–' इति पाठः। २ ताप्रतौ नोपलभ्यते पदमिदम्।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

पवद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपवद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठ भंगा [८]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपवद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं णव भंगा [९]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपवद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपवद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं दस भंगा [१०]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपवद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपवद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च[1] उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स एक्कारस भंगा [११]। एवं बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगसुत्तपरूवणा समत्ता। संपहि उदिण्ण-उवसंताणं दुसंजोगजणिद-वेयणावियप्पपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि--

सिया उदिण्णा च उवसंता च ॥ १७ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणाए[2] कीरमाणाए पुव्वं ताव उदिण्ण-उवसंताणं दुसंजोग-सुत्तपत्थारं ठविय

१	१	२	२
१	२	१	२

पुणो उदिण्णस्स जीव-पयडि--समयाणमेग-बहुवयणाणं[3] पत्थारं

प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भङ्ग हुए (८)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार नौ भङ्ग हुए (९)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दस भङ्ग हुए (१०)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके ग्यारह भङ्ग हुए (११)। इस प्रकार बध्यमान और उपशान्त वेदनासम्बन्धी द्विसंयोगवाले सूत्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई। अब उदीर्ण और उपशान्त प्रकृतियोंके द्विसंयोगसे उत्पन्न वेदनाविकल्पोंकी प्ररूपणा करनेके लिये अगला सूत्र कहते हैं—

कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ १७ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय पहिले उदीर्ण उपशान्त वेदनाके द्विसंयोग सूत्रके प्रस्तारको स्थापित

उदीर्ण	एक	एक	अनेक	अनेक
उपशांत	एक	अनेक	एक	अनेक

करके फिर उदीर्ण वेदनासम्बन्धी जीव,

१ अ-आप्रत्योः 'चेव' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'परूवणा' इति पाठः। ३ अ-आप्रत्योः '—मेगवयणाणं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदिण्ण-उवसंत जीव-पयडि-समयपत्थारं

१	१	१	१	२	२	२	२
१	१	२	२	१	१	२	२
१	२	१	२	१	२	१	२

च परिवाडीए—

'भंगायामपमाणं लहुओ गरुओ त्ति अक्खणिक्खेवो।
तत्तो य दुगुण-दुगुणा पत्थारो विण्णसेयव्वो[1] ॥ १ ॥'

एदीए गाहाए ठविय

१	१	१	१	२	२	२	२
१	१	२	२	१	१	२	२
१	२	१	२	१	२	१	२

अत्थपरूवणा कायव्वा। अथवा, १११ । १११ । १११ ।
२२० । २२२ । २२२ । बज्झमाण-उदिण्ण[2]-उवसंतेसु जीव-पयडि-समयाणमेग-बहुवयणाणि ठविय

'पढमक्खो अंतगओ आदिगए संकमेदि बिदियक्खो।
दोण्णि वि गंतूणंतं आदिगदे संकमेदि तदियक्खो[3] ॥ २ ॥'

प्रकृति और समय, इनके एक व बहुवचनोंके प्रस्तारको

जीव	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

तथा [उदीर्ण] एवं उपशांत वेदनाके विषयमें जीव, प्रकृति और समयके प्रस्तारको भी परिपाटीसे—

'भंगोंके आयाम प्रमाण अर्थात् प्रथम पंक्तिगत भङ्गोंका जितना प्रमाण हो उतने बार लघु और गुरु इस प्रकारसे अक्षनिक्षेप किया जाता है। तथा आगे द्वितीयादि पंक्तियोंमें दुगुणे दुगुणे प्रस्तारका विन्यास करना चाहिये ॥ १ ॥'

इस गाथाके अनुसार स्थापित करके (संदृष्टि पहिलेके ही समान) अर्थकी प्ररूपणा करनी चाहिये। अथवा, बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनाके सम्बन्धमें जीव, प्रकृति और समय, इनके

एक व बहुवचनोंको स्थापित

बध्यमान			उदीर्ण			उपशान्त		
जीव	प्रकृति	समय	जीव	प्रकृति	समय	जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक
अनेक	अनेक	०	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक

करके

'प्रथम अक्ष अन्तको प्राप्त होकर जब पुनः आदिको प्राप्त होता है तब द्वितीय अक्ष बदलता है। जब प्रथम और द्वितीय दोनों ही अक्ष अन्तको प्राप्त होकर पुनः आदिको प्राप्त होते हैं तब तृतीय अक्ष बदलता है ॥ २ ॥'

---

१ क० पा० २, पृ० ३०८। २ प्रतिषु 'उदिण्णा' इति पाठः। ३ गा० जी० ४०, मूला० ११-२३,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एदीए गाहाए[1] पत्थारो आणिय ठवेयव्वो। पुणो पच्छा सुत्तपरूवणा कायव्वा। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी [2]एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवं पढमसुत्तस्स एक्को चेव भंगो ॥ १ ॥

सिया उदिण्णा च उवसंताओ च ॥ १८ ॥

एदस्स[3] विदियसुत्तस्स भंगपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णा च उवसंताओ वेयणाओ। एवं विदियसुत्तस्स एसो पढमभंगो [१]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बेभंगा [२]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णा[4] च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं विदियसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा, णिरुद्धेगजीवत्तादो।

सिया उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ १९ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स भंगपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया

इस गाथाके अनुसार प्रस्तारको लाकर स्थापित करना चाहिये। पुनः पश्चात् सूत्रकी प्ररूपणा करनी चाहिये। यथा—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार प्रथम सूत्रका एक ही भङ्ग है (१)।

कथंचित् उदीर्ण (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ १८ ॥

इस द्वितीय सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार द्वितीय सूत्रका यह प्रथम भङ्ग है (१)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भङ्ग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार द्वितीय सूत्रके तीन ही भङ्ग हैं; क्योंकि, एक जीवकी विवक्षा है।

कथंचित् उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदनायें हैं ॥ १९ ॥

इस तृतीय सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति

१ अ-आप्रत्योः 'गाह' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'एया' इति पाठः। ३ प्रतिषु 'एयस्स' इति पाठः। ४ अप्रतौ 'उदिण्णाओ', आप्रतौ 'ओदिण्णा' ताप्रतौ उदिण्णा [ओ]' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एसो तदियसुत्तस्स पढमभंगो [१]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एवं बे भंगा [२]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेय-समयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा [३]। सेसा जीवबहुवयणभंगा उदिण्णगया एत्थ ण उच्चारिज्जंति। कुदो? उवसंतवेयणाए एयजीवम्मि अवट्ठाणादो उदिण्ण-उवसंताणं जीवं पडि वइयहियरणत्तप्पसंगादो। तेण तदियसुत्तस्स तिण्णि[1] चेव भंगा [३]।

सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च ॥ २० ॥

एदस्स चउत्थसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणा कीरदे। तं जहा—एयजीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ[2] च उवसंताओ च वेयणाओ। एसो चउत्थसुत्तस्स पढम-भंगो [१]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बे भंगा [२]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी

अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। यह तृतीय सूत्रका प्रथम भङ्ग है (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भङ्ग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भङ्ग हैं (३)। उदीर्णगत शेष जीव बहुवचन भङ्गोंका यहाँ उच्चारण नहीं किया जाता है, क्योंकि, उपशान्त वेदनाका अवस्थान एक जीवमें होनेसे जीवके प्रति उदीर्ण और उपशान्त वेदनाओंकी व्यधिकरणताका प्रसङ्ग आता है। इस कारण तृतीय सूत्रके तीन ही भङ्ग हैं (३)।

कथंचित् उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ २० ॥

इस चतुर्थ सूत्रके भङ्ग प्रमाणकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त, कथञ्चित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। यह चतुर्थ सूत्रका प्रथम भङ्ग है (१)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भङ्ग हुए (२)। अथवा एक जीवकी एक प्रकृति

---

१ अ-ताप्रत्योः 'तिण्णेव' इति पाठः। २ ताप्रतौ '-पबद्धा [उवसंताओ सिया] उदिण्णाओ' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा [३]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चत्तारि भंगा [४]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव[1] जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ[2]। एवं पंच भंगा [५]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा [६]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ[3]। एवं सत्त भंगा [७]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठ भंगा [८]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेय-

---

अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भङ्ग हुए (३)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चार भंग हुए (४)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पाँच भङ्ग हुए (५)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भङ्ग हुए (६)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भङ्ग हुए (७)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशांत वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भङ्ग हुए (८)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गइ उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और

---

१ आ-ताप्रत्योः 'तस्स चेव' इति पाठः। २ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आप्रत्योः 'उदिण्णाओ च वेयणाओ' ताप्रतौ 'उदिण्णाओ च [उवसंताओ च] वेयणाओ' इति पाठः। ३ अ-आप्रत्योः 'सिया उदिण्णाओ च वेयणाओ' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं णव भंगा। एवमेयजीवमस्सिदूण चउत्थसुत्तस्स णव चेव भंगा होंति।

संपहि णाणाजीवे अस्सिदूण तस्सेव चउत्थसुत्तस्स सेसभंगे वत्तइस्सामो। तं जहा— अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ[1] च वेयणाओ। एवं दस भंगा [१०]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कारस भंगा [११]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बारह भंगा [१२]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेरस भंगा [१३]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चोद्दस भंगा [१४]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा[2] उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी

उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार नौ भंग हुए (९)। इस प्रकार एक जीवका आश्रय करके चतुर्थ सूत्रके नौ ही भंग होते हैं।

अब नाना जीवोंका आश्रय करके उसी चतुर्थ सूत्रके शेष भंगोंको कहते हैं। यथा—अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दस भंग हुए (१०)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार ग्यारह भंग हुए (११)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त, कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार बारह भंग हुए (१२)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तेरह भंग हुए (१३)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चौदह भंग हुए (१४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति

---

१ ताप्रतौ 'उदिण्णा [ओ च] उवसंताओ' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः 'पबद्धाओ' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पण्णारस भंगा [१५]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सोलह भंगा [१६]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्तरह भंगा [१७]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं अट्ठारह भंगा [१८]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेकोणवीस भंगा [१९]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं वीस भंगा [२०]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेकवीस भंगा [२१]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ

अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पन्द्रह भंग हुए (१५)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सोलह भंग हुए (१६)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सत्तरह भंग हुए (१७)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार अठारह भंग हुए (१८)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार उन्नीस भंग हुए (१९)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार बीस भंग हुए (२०)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशांत; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार इक्कीस भंग हुए (२१)। अथवा, अनेक

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बावीस भंगा [२२]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेवीस भंगा [२३]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउवीस भंगा [२४]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पणुवीस भंगा [२५]।

अधवा, एदे पणुवीस भंगा एवं वा उप्पादेदव्वा। तं जहा—एक्किस्से एगजीव-उदिण्णुच्चारणाए जदि तिण्णिएगजीव उवसंतुच्चारणाओ लब्भंति तो तिण्णमेगजीवउदिण्णुच्चारणाणं केत्तियाओ उवसंतुच्चारणाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए लब्भंति णव भंगा [९]। पुणो एक्किस्से णाणाजीवउदिण्णुच्चारणाए जदि चत्तारि णाणाजीवउवसंतुच्चारणाओ लब्भंति तो चदुण्णं णाणाजीवउदिण्णुच्चारणाणं केत्तियाओ उवसंतुच्चारणाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए सोलसुच्चारणाओ

जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त; वेदनायें हैं। इस प्रकार बाईस भंग हुए (२२)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तेईस भंग हुए (२३)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वदनायें हैं। इस प्रकार चौबीस भंग हुए (२४)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त, कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पच्चीस भंग हुए (२५)।

अथवा, इन पच्चीस भंगोंको इस प्रकारसे उत्पन्न कराना चाहिये। यथा—एक जीवसम्बन्धी उदीर्ण वेदनाकी एक उच्चारणामें यदि तीन एक जीव सम्बन्धी उपशान्त उच्चारणायें पायी जाती हैं तो एक जीव सम्बन्धी तीन उदीर्ण-उच्चारणाओंमें कितनी उपशान्त-उच्चारणायें प्राप्त होंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर नौ भंग प्राप्त होते हैं (९)। पुनः नाना जीवों सम्बन्धी एक उदीर्ण-उच्चारणामें यदि चार नाना जीवों सम्बन्धी उपशान्त-उच्चारणायें पायी जाती हैं तो नाना जीवों सम्बन्धी चार उदीर्ण-उच्चारणाओंमें कितनी उपशान्त-उच्चारणायें प्राप्त होंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर सोलह उच्चारणायें पायी जाती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लब्भंति [१६]। पुणो एदाओ सोलस पुव्विल्लयाओ णव एगट्ठकदासु उदिण्णउवसंताणं दुसंजोगचउत्थसुत्तस्स पणुवीस भंगा हवंति। एवं बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणमेग-दुसंजोगम्मि णिबद्धसुत्तपरूवणा समत्ता।

संपहि बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणं तिसंजोगमस्सिदूण वेयणावियप्पपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च ॥ २१ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाण-उदिण्ण–उवसंताणमेग-बहुवयणसदिट्ठिं ठविय

१	१	१
२	२	२

पुणो एत्थ अक्खसंचारेण उप्पाइदतिसंजोगसुत्तपत्थारं ठविय

१११११	२२२२
११२२	११२२
१२१२	१२१२

पुणो बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंतजीव-पयडि-समयाणमेय-बहुवयणसंदिट्ठीओ

हैं (१६)। अब सोलह ये और पूर्वकी नौ, इनको इकट्ठा करनेपर उदीर्ण व उपशान्त सम्बन्धी द्विसंयोग रूप चतुर्थ सूत्रके पचीस भंग होते हैं। इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त सम्बन्धी एक व दोके संयोगमें निबद्ध सूत्रकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

अब बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त, इन तीनके संयोगका आश्रय करके वेदना-विकल्पोंकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ २१ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान उदीर्ण और उपशान्त, इनके एक व बहुवचनोंकी संदृष्टिको स्थापित करके

बध्य	उदीर्ण	उपशान्त
एक	एक	एक
अनेक	कनेअ	अनेक

पश्चात् यहाँ अक्षसंचारसे उत्पन्न कराये गये त्रिसंयोग रूप सूत्रके प्रस्तारको स्थापित कर

बध्य.	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक
उदीर्ण	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
उपशा.	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

पुनः बध्यमान, उदीर्ण, उपशान्त, जीव, प्रकृति व समय, इनके एक व बहुवचनकी संदृष्टियोंको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ १ १	१ १ १	१ १ १
२ २ ०	२ २ २	२ २ ०

परिवाडीए ठविय एदेहिंतो अक्खसंचारेणुप्पाइदतिण्णि वि पत्थारे च ठविय

१ १ २ २	१ १ १ १ २ २ २ २	१ १ १ १ २ २ २ २
१ २ १ २	१ १ २ २ १ १ २ २	१ १ २ २ १ १ २ २
१ १ १ १	१ २ १ २ १ २ १ २	१ २ १ २ १ २ १ २

एत्थ उवरिमपंती बज्झमाणिया मज्झिमपंती उदिण्णा हेट्ठिमपंती उवसंता परूवणा कीरदे। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, [¹तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा] तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवं पढमसुत्तस्स एक्को चेव भंगो [१]।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च ॥ २२ ॥

एदस्स तिसंजोगविदियसुत्तस्स भंगपरूवणा कीरदे। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया

बध्यमान			उदीर्ण			उपशान्त		
एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक
अनेक	अनेक	०	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	०

परिपाटीसे स्थापित करके इनसे अक्षसंचारके द्वारा उत्पन्न कराये गये तीनों ही प्रस्तारोंको स्थापित करके

उपशा.	एक	एक	एक	एक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक
उदीर्ण	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
बध्य.	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक	एक	एक	एक	एक	अनेक	अनेक	अनेक	अनेक

यहाँ ऊपरकी पंक्ति बध्यमान, मध्यम पंक्ति उदीर्ण व अधस्तन पंक्ति उपशान्तको प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, [उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण], उसी जीवकी एकप्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार प्रथम सूत्रका एक ही भंग है (१)।

कथंचित् बध्यमान, (एक), उदीर्ण (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ २२ ॥

तीनोंके संयोगरूप इस द्वितीय सूत्रके भंगोंकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथञ्चित्

१ कोष्ठकस्थोऽयं पाठः प्रतिषु नोपलभ्यते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं विदियसुत्तस्स पढमभंगो [१] । अथवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी [1]एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एकसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं बे भंगा [२] । अथवा, एयजीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं विदियसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा [३] । कुदो ? बज्झमाण-उदिण्णेसु एयवयणणिरोधादो ।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ २३ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ । एवं तिसंजोगतदियसुत्तस्स पढमो भंगो [१] । अथवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च

बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार द्वितीय सूत्रका प्रथम भंग है । अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथञ्चित् बध्यमान, उदीर्ण, और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार दो भंग हुए (२) । अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथञ्चित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार द्वितीय सूत्रके तीन ही भंग होते हैं (३), क्योंकि, बध्यमान और उदीर्णमें एक वचनकी विवक्षा है ।

कथंचित् बध्यमान (एक), उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥ २३ ॥

इस तृतीय सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त, कथञ्चित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार तीनोंके संयोग रूप तृतीय सूत्रका यह प्रथम भंग है (१) अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त;

१ अ-आप्रत्योः 'एया' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयणाओ। एवं बे भंगा [२]। अथवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया[1] च उदिण्णाओ च उवसंताओ[2] च वेयणाओ। एवं तदियसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा [३]। कारणं जाणिदूण वत्तव्वं।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च ॥ २४ ॥

एदस्स तिसंजोगचउत्थसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं वत्तइस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स पढमभंगो [१]। अथवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बे भंगा [२]। अथवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एय-

कथञ्चित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनाऐं हैं। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथञ्चित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनाऐं हैं। इस प्रकार तृतीय सूत्रके तीन ही भंग हैं (३)। इसके कारणका जानकर कथन करना चाहिये।

कथंचित् बध्यमान (एक), उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनाऐं हैं ॥ २४ ॥

त्रिसंयोग रूप इस चतुर्थ सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है— एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथञ्चित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रका यह प्रथम भंग है (१)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। अथवा,

१ ताप्रतौ 'बज्झमाणिया [ओ]' इति पाठः। २ अप्रतौ 'उवसंताओ', ताप्रतौ 'उवसंता [ओ]' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा [३]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चत्तारि भंगा [४]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पंच भंगा [५]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ [एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ] अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा [६]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्त भंगा [७]। अधवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया,

---

एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भंग हुए (३)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चार भंग हुए (४)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पाँच भंग हुए (५)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण और उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भंग हुए (६)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण और उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भंग हुए (७)। अथवा, एक जीवकी एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठ भंगा [८]। अथवा, एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउत्थसुत्तस्स णव भंगा [९]।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंता च ॥ २५ ॥

एदस्स पंचमसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं वत्तइस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंता च वेयणाओ। एवं पंचमसुत्तस्स एक्को चेव भंगो।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च ॥ २६ ॥

एदस्स तिसंजोगछट्ठसुत्तस्स भंगपमाणं वुच्चदे। तं जहा—एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ;

प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भंग हुए (८)। अथवा, एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चतुर्थ सूत्रके नौ भंग हैं (९)।

कथंचित् बध्यमान (अनेक), उदीर्ण (एक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥ २५ ॥

इस पाँचवें सूत्रकी भंगप्ररूपणाको कहते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार पाँचवें सूत्रका एक ही भंग है।

कथञ्चित् बध्यमान (अनेक), उदीर्ण (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनाएं हैं॥२६॥

इस त्रिसंयोगी छठवें सूत्रके भङ्गों का प्रमाण कहते हैं। यथा - एक जीव की अनेक प्रकृतियाँ एक समय में बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समय में बांधी गई उदीर्ण,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेसो पढमभंगो [१]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसममपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बे भंगा [२]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छट्ठसुत्तस्स तिण्णि चेव भंगा [३]। कारणं सुगमं।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ २७ ॥

एदस्स सत्तमसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंता[१] च वेयणाओ। एवं पढमभंगो [१]। अधवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया

उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार यह प्रथम भंग हुआ (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार छठे सूत्रके तीन ही भंग हैं (३)। इसका कारण सुगम है।

कथंचित् बध्यमान (अनेक), उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥ २७ ॥

इस सातवें सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार प्रथम भंग हुआ (१)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं

१ अ-आप्रत्योः 'उवसंताओ', ताप्रतौ 'उवसंता [ओ]' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ । एवं बे भंगा [२] । अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्सेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ । एवं सत्तमसुत्तस्स वि तिण्णेव भंगा [३] । कारणं सुगमं ।

सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च[1] ॥२८॥

एदस्स अट्ठमसुत्तस्स भंगपमाणं वत्तइस्सामो । तं जहा—एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ [एयसमयपबद्धाओ] बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंता;[2] सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवमेगो भंगो [१] । अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ[3], तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं बे भंगा [२] । अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी

उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार दो भंग हुए (२) । अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार सातवें सूत्रके तीन ही भंग हैं (३) । इसका कारण सुगम है ।

कथंचित् बध्यमान (अनेक) उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ २८ ॥

इस आठवें सूत्रके भंगप्रमाणको कहते हैं । यथा—एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ [एक समयमें बाँधी गईं] बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान; उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार दो भंग हुए (२) । अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी

१ अ-आप्रत्योः 'वा' इति पाठः । २ अ-आप्रत्योः 'उवसंता', ताप्रतौ 'उवसंता [ओ]' इति पाठः ।
३ ताप्रतौ बज्झमाणियाओ [उदिण्णा] इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तिण्णि भंगा [३]। अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चत्तारि भंगा [४]। अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ [[1]उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ] उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पंच भंगा [५]। अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छ भंगा [६]। अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्त भंगा [७]। अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ

अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तीन भंग हुए (३)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चार भंग हुए (४)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं [उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं] उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पाँच भंग हुए (५)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान; उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार छह भंग हुए (६)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सात भंग हुए (७)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी

१ कोष्ठकस्थोऽयं पाठः प्रतिषु नोपलभ्यते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठ भंगा [८]। अथवा, एयस्स जीवस्स अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेयजीवमस्सिदूण अट्ठमसुत्तस्स णव चेव भंगा होंति [९]।

संपहि तस्सेव अट्ठमसुत्तस्स णाणाजीवे अस्सिदूण बहुवयणभंगे वत्तइस्सामो। तं जहा—अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ; तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं दस भंगा [१०]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कारस भंगा [११]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बारह भंगा [१२]।

जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार आठ भंग हुए (८)। अथवा, एक जीवकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उसी जीवकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार एक जीवका आश्रय करके आठवें सूत्रके नौ ही भंग होते हैं (९)।

अब नाना जीवोंका आश्रय करके उसी आठवें सूत्रके बहुवचन भंगोंको कहते हैं। यथा—अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण, और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार दस भंग हुए (१०)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार ग्यारह भंग हुए (११)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उप-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेरह भंगा [१३]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चोद्दस भंगा [१४]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पण्णारह भंगा [१५]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सोलह भंगा [१६]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्तरह भंगा [१७]। अथवा,

---

शान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार बारह भंग हुए (१२)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तेरह भंग हुए (१३)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चौदह भंग हुए (१४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पन्द्रह भंग हुए (१५)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सोलह भंग हुए (१६)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सत्तरह भंग हुए (१७)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा[1] उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं अट्ठारह भंगा [१८]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कोणवीस भंगा [१९]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं वीस भंगा [२०]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कवीस भंगा [२१]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च

एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार अठारह भंग हुए (१८)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार उन्नीस भंग हुए (१९)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण; उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनाएं हैं। इस प्रकार बीस भंग हुए (२०)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार इक्कीस भंग हुए (२१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें

---

१ अ-ताप्रत्योः '-पबद्धाओ' इति पाठः।

छ. १२-४३।

वेयणाओ। एवं बावीस भंगा [२२]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेवीस भंगा [२३]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ [उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ] उवसंताओ[१], सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चउवीस भंगा [२४]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पणुवीस भंगा [२५]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं छव्वीस भंगा [२६]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमय-

हैं। इस प्रकार बाईस भंग हुए (२२)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनाएँ हैं। इस प्रकार तेईस भंग हुए (२३)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण; उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चौबीस भंग हुए (२४)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पच्चीस भंग हुए (२५)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण; उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार छब्बीस भंग हुए (२६)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक

१ ताप्रतौ 'बज्झमाणिया [ओ तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ] तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

पबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्तावीस भंगा [२७]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठवीस भंगा [२८]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कोणतीस भंगा [२९]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तीस भंगा [३०]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा[1] उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कतीस भंगा [३१]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झ-

समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सत्ताईस भंग हुए (२७)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार अट्ठाईस भंग हुए (२८)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार उनतीस भंग हुए (२९)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तीस भंग हुए (३०)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार इकतीस भंग हुए (३१)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं

१ अ-ताप्रत्योः 'समयपबद्धाओ', आप्रतौ 'समयप०' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बत्तीस भंगा [३२]। अथवा, अणेयाणं जीवाणं अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं तेत्तीस भंगा [३३]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ[1], सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चोत्तीस भंगा [३४]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं पंचतीस भंगा [३५]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणं अणेयाओ पयडीओ एगसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ।

जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार बत्तीस भंग हुए (३२)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार तेतीस भंग हुए (३३)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चौंतीस भंग हुए (३४)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार पैंतीस भंग हुए (३५)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार

१ अ-आप्रत्योः '-मेया प० ओ च स० उवसं०', ताप्रतौ तेसिं० मेया उवसं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं छत्तीस भंगा [३६]। अधवा, अणेयाणं जीवाणं अणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणं अणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं सत्ततीस भंगा [३७]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंताओ[1], सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमट्ठतीस भंगा [३८]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेक्कोणचालीस भंगा [३९]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ उवसंताओ; सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं चालीस भंगा [४०]। अधवा अणेयाणं जीवाणमणेयाओ पयडीओ एयसमयपबद्धाओ बज्झमाणियाओ, तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उदिण्णाओ,

छत्तीस भंग हुए (३६)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार सेंतीस भंग हुए (३७)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार अड़तीस भंग हुए (३८)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार उनतालीस भंग हुए (३९)। अथवा अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं उपशान्त, कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार चालीस भंग हुए (४०)। अथवा, अनेक जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ एक समयमें बाँधी गईं बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गईं उदीर्ण,

१ प्रतिषु 'मेया० समय० उव०' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेसिं चेव जीवाणमणेयाओ पयडीओ अणेयसमयपबद्धाओ उवसंताओ, सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवमिगिदालीस भंगा [४१] ।

अधवा, एक्कतालीस भंगा एवं वा उप्पादेदव्वा । तं जहा—एगजीवमस्सिदूण एक्किस्से उदिण्णुच्चारणाए जदि तिण्णि उवसंतउच्चारणाओ लब्भंति तो तिण्णमुदिण्णुच्चारणाणं केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए[1] णव भंगा लब्भंति [९] । पुणो णाणाजीवे अस्सिदूण जदि एक्किस्से उदिण्णुच्चारणाए चत्तारि उवसंतुच्चारणाओ लब्भंति तो चदुण्णमुदिण्णुच्चारणाणं केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए सोलस भंगा लब्भंति [१६] । पुणो एक्कस्स णाणाजीवबज्झमाणभंगस्स जदि सोलस भंगा लब्भंति तो दोण्णं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए बत्तीस भंगा उप्पज्जंति [३२] । एत्थ पुव्विल्लणवभंगेसु पक्खित्तेसु बज्झमाणउदिण्ण-उवसंताण तिसंजोगम्मि अट्ठमसुत्तस्स इगिदालीसभंगा होंति [४१] । एवं णेगमणयम्मि बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणमेगसंजोग-दुसंजोग-तिसंजोगेहि णाणावरणीयपरूवणा कदा ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ २९ ॥

जहा णाणावरणीयस्स वेयणवेयणविहाणं णेगमणयस्स अहिप्पाएण परूविदं तहा

उन्हीं जीवोंकी अनेक प्रकृतियाँ अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार इकतालीस भंग हुए (४१) ।

अथवा, इकतालीस भंगोंको इस प्रकारसे उत्पन्न कराना चाहिये । यथा—एक जीवका आश्रय करके यदि एक उदीर्ण-उच्चारणामें तीन उपशान्त-उच्चारणायें पायी जाती हैं तो तीन उदीर्ण-उच्चारणाओंमें वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर नौ उपशान्त उच्चारणायें पायी जाती हैं (९) । पुनः नाना जीवोंका आश्रय करके यदि एक उदीर्ण उच्चारणामें चार उपशान्त-उच्चारणायें पायी जाती हैं तो चार उदीर्ण-उच्चारणाओंमें वे कितनी पायी जावेंगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करने पर सोलह भंग पाये जाते हैं (१६) । पुनः नाना जीवों सम्बन्धी एक बध्यमान भंगमें यदि सोलह भंग पाये जाते हैं तो दो बध्यमान भंगोंमें कितने भंग पाये जावेंगे, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करने पर बत्तीस भंग उत्पन्न होते हैं (३२) । इनमें पूर्वोक्त नौ भंगोंको मिलाने पर बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त, इन तीनोंके संयोगसे आठवें सूत्रके इकतालीस भंग होते हैं (४१) । इस प्रकार नैगम नयकी अपेक्षा बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त; इनके एक, दो व तीनोंके संयोगसे ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणा की गई है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके वेदनावेदनविधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥२९॥

नैगम नयके अभिप्रायसे जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके वेदनावेदनविधानकी प्ररूपणा की गई है

१ अ-आप्रत्योः 'ओवट्टिदाए ण लब्भंति' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

सत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो । संपहि ववहारणयमस्सिदूण वेयणवेयण-विहाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि —

ववहारणयस्स णाणावरणीयवेयणा सिया बज्झमाणिया वेयणा ॥ ३० ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे तत्थ जीव-पयडि-समयाणमेगवयणाणि जीवाणं बहुवयणं च ठुवेदव्वं

१	१	१
२	०	०

। किमट्ठं समयबहुवयणमवणिदं ? णाणावरणीयस्स बज्झमाणत्तमेगम्हि चेव समए होदि त्ति जाणावणट्ठं । अदीदाणागदसमया एत्थ किण्ण गहिदा ? ण, अदीदे काले बद्धकम्मक्खंधाणमुवसंतभावेण बज्झमाणत्ताभावादो । णाणागदाणं पि कम्मक्खंधाणं बज्झमाणत्तं, तेसिं संपहिजीवे अभावादो । तम्हा कालस्स एयत्तं चेव, ण बहुत्तमिदि सिद्धं । पयडीए बहुत्तं किमट्ठमोसारिदं ? णाणावरणभावं मोत्तूण तत्थ अण्णभावाणुवलंभादो । आवरणिज्जस्स भेदे आवरणपयडिभेदो होदि ।

उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके वेदनावेदनविधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है । अब व्यवहार नयका आश्रय करके वेदनावेदनविधानकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं —

व्यवहार नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् बध्यमान वेदना है ॥ ३० ॥

इस सूत्रके अर्थका कथन करते समय पहिले जीव, प्रकृति और समय, इनके एकवचन तथा जीवोंके बहुवचन स्थापित करने चाहिये

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	अनेक
अनेक	०	०

।

शंका — समयके बहुवचनको क्यों कम कर दिया गया है ?

समाधान — ज्ञानावरणीयका 'बध्यमान' स्वरूप एक समयमें ही होता है, यह प्रगट करनेके लिये समयके बहुवचनको कम किया गया है ।

शंका — अतीत और अनागत समयोंको यहाँ क्यों नहीं ग्रहण किया गया है ?

समाधान — नहीं, क्योंकि, अतीत कालमें बाँधे गये कर्मस्कन्धोंके उपशमभावसे परिणत होनेके कारण उनके उस समय बध्यमान स्वरूपका अभाव है । अनागत भी कर्मस्कन्ध बध्यमान नहीं हो सकते, क्योंकि, इस समय जीवमें उनका अभाव है । इस कारण कालका एकवचन ही है, बहुवचन सम्भव नहीं है; यह सिद्ध है ।

शंका — प्रकृतिके बहुवचनको क्यों अलग किया गया है ?

समाधान — चूंकि उसमें ज्ञानावरण स्वरूपको छोड़कर और कोई दूसरा स्वरूप नहीं पाया जाता है, अतः उसके बहुवचनको अलग किया गया है । आवरणीय (आवरणके योग्य) का भेद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ण चावरणिज्जस्स केवलणाणस्स भेदो अत्थि जेण पयडिभेदो होज्ज । तम्हा सिद्धमेयत्तं पयडीए । जीवस्स बहुत्तमत्थि । ण च जीवबहुत्तेण पयडिभेदो होज्ज, पयडीए एगसरूवत्तदंसणादो । तम्हा[1] जीव-पयडि-समयाणमेयत्तं जीवबहुत्तं च बज्झमाणकम्मक्खंधस्स संभवदि त्ति सिद्धं ।

एत्थ अक्खपरावत्ते कदे बज्झमाणियाए वेयणाए जीव-पयडि-समयपत्थारो उप्पज्जदि । तस्ससंदिट्ठी एसा

१	२
१	१
१	१

। एवं ठविय पुणो एदस्स पढमसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया बज्झमाणिया वेयणा । एवमेगो भंगो [१] । अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया बज्झमाणिया वेयणा[2] । एवं बे भंगा [२] । जीवबहुत्तेण पयडिबहुत्तं णत्थि, किंतु कालबहुत्तेण चेव पयडिबहुत्तं होदि । तत्थ वि उवसंताए उदय-ओकड्डण-उक्कड्डण-परपयडिसंकमणादीहि पयडिभेदो णत्थि, किंतु बज्झमाणसमयबहुत्तेण चेव पयडिभेदो, तहा[3] लोए संववहारदंसणादो । एवं बज्झमाणियाए वेयणाए चेव भंगा पढमसुत्तम्मि ।

होनेपर ही आवरण प्रकृतिका भेद होता है। परन्तु आवरण करनेके योग्य केवलज्ञानका कोई भेद है ही नहीं, जिससे कि प्रकृतिका भेद हो सके। इस कारण प्रकृतिका अभेद (एकता) सिद्ध ही है।

जीवोंका बहुत्व सम्भव है। यदि कहा जाय कि जीवोंके बहुत्वसे प्रकृतिका बहुत्व भी सम्भव है, तो यह भी ठीक नहीं है; क्योंकि प्रकृतिमें एक स्वरूपता देखी जाती है। इस कारण बध्यमान कर्मस्कन्धके सम्बन्धमें जीव, प्रकृति और समय; इनके एकवचन और जीवोंके बहुचनकी सम्भावना है, यह सिद्ध है।

यहाँ अक्षपरावर्तन करनेपर बध्यमान वेदना सम्बन्धी जीव, प्रकृति व समयका प्रस्तार उत्पन्न होता है। उसकी संदृष्टि यह है—

जीव	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक
समय	एक	एक

। इस प्रकार स्थापित करके इस प्रथम सूत्रका अर्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् बध्यमान वेदना है। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् बध्यमान वेदना है। इस प्रकार दो भंग हुए (२)। जीवोंके बहुत्वसे प्रकृतिका बहुत्व नहीं होता है, किन्तु कालके बहुत्वसे ही प्रकृतिका बहुत्व होता है। कालबहुत्वमें भी उपशान्तमें उदय, अपकर्षण, उत्कर्षण और परप्रकृति संक्रमण आदिके द्वारा प्रकृतिभेद नहीं होता; किन्तु बध्यमान समयोंके बहुत्वसे ही प्रकृतिभेद होता है, क्योंकि, लोकमें वैसा संव्यवहार देखा जाता है। इस प्रकार प्रथम सूत्रमें बध्यमान वेदनाके ही भंग हैं।

१ प्रतिषु 'तं जहा' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'वेयणा [ए]' इति पाठः ।
मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-काप्रतिषु 'तदा', ताप्रतौ 'तदा (था)' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया उदिण्णा वेयणा ॥ ३१ ॥

संपहि एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेगवयणं जीव-समयाणं बहुवयणं च ठविय

१	१	१
२	०	२

एत्थ अक्खपरावत्ते कदे उदिण्णवेयणाए जीव-पयडि-समयाणं पत्थारो उप्पज्जदि

१	१	२	२
१	१	१	१
१	२	१	२

। एत्थ उदिण्णाए णत्थि पयडिबहुवयणं, एक्किस्से णाणावरणीयपयडीए बहुत्ताभावादो । जीवबहुवयणमत्थि । ण तत्तो उदिण्णबहुत्तं, समयबहुत्तादो चेव उदिण्णाए बहुत्तववहारुवलंभादो । ण च लोगववहारबाहिरं किं पि अत्थि, अव्ववहारणिज्जस्स अत्थित्तविरोहादो । संपहि एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा । एवमेगो भंगो [१] । अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा । एवमुदिण्णएगवयणसुत्तस्स बे भंगा [२] ।

सिया उवसंता वेयणा ॥ ३२ ॥

कथंचित् उदीर्ण वेदना है ॥ ३१ ॥

अब इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति और समय, इनके एकवचन तथा जीव व समयके बहुवचनको भी स्थापित करके

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	०	अनेक

यहाँ अक्षपरावर्तन करनेपर उदीर्ण वेदना सम्बन्धी जीव, प्रकृति व समयका प्रस्तार उत्पन्न होता है—

जीव	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक

यहाँ उदीर्ण वेदनामें प्रकृतिका बहुवचन सम्भव नहीं है, क्योंकि, एक ज्ञानावरणीय प्रकृतिका बहुत होना असम्भव है । जीवबहुवचन सम्भव है । परन्तु उससे उदीर्ण प्रकृतिका बहुत्व सम्भव नहीं है, क्योंकि, समयबहुत्वसे ही उदीर्ण प्रकृतिके बहुत्वका व्यवहार पाया जाता है । और लोकव्यवहारके बाहिर कुछ भी नहीं है, क्योंकि, अव्यवहरणीय पदार्थके अस्तित्वका विरोध है । अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदना है । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदना है । इस प्रकार उदीर्ण वेदना सम्बन्धी एकवचन सूत्रके दो भंग होते हैं (२) ।

कथंचित् उपशान्त वेदना है ॥ ३२ ॥

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

(एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणाए कीरमाणाए जीव-पयडि-समयाणमेगवयणं जीव-समयाणं बहुवयणं च ठविय

१	१	१
२	०	२

अक्खपरावत्ते कदे उवसंतवेयणाए जीव-पयडि-समय-पत्थारो होदि

१	१	२	२
१	१	१	१
१	२	१	२

(संपहि एदस्स सुत्तस्स भंगुच्चारणं कस्सामो। तं जहा— एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा। एवमेगो भंगो [१]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा। एवमेदस्स वि सुत्तस्स बे चेव भंगा [२]। एवं बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणमेयवयण-परूवणा कदा।)

सिया उदिण्णाओ वेयणाओ ॥ ३३ ॥

बज्झमाणियाए वेयणाए किण्ण बहुत्तं परूविदं? ण, ववहारणयम्मि तिस्से बहुत्ता-भावादो। ण ताव जीवबहुत्तेण बज्झमाणियाए बहुत्तं, जीवभेदेण तिस्से भेदववहाराणु-

---

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति व समय; इनके एकवचन तथा जीव व समयके बहुवचनको स्थापित

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	०	अनेक

कर अक्षपरावर्तन करनेपर उपशान्त वेदना सम्बन्धी जीव, प्रकृति व समयका प्रस्तार होता है—

जीव	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक

। अब इस सूत्रके भंगोंका उच्चारण करते हैं। यथा—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई कथंचित् उपशान्त वेदना है। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उपशान्त वेदना है। इस प्रकार इस सूत्रके भी दो ही भंग हैं (२)। इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनाके एकवचनकी प्ररूपणा की गई है।

कथंचित् उदीर्ण वेदनायें हैं ॥ ३३ ॥

शंका—बध्यमान वेदनाके बहुत्वकी प्ररूपणा क्यों नहीं की गई है?

समाधान—नहीं क्योंकि, व्यवहारनयकी अपेक्षा उसके बहुत्वकी सम्भावना नहीं है। कारण कि जीवोंके बहुत्वसे तो बध्यमान वेदनाके बहुत्वकी सम्भावना है नहीं, क्योंकि, जीवोंके भेदसे उसके भेदका व्यवहार नहीं पाया जाता। प्रकृतिभेदसे भी उसका भेद सम्भव नहीं है, क्योंकि, एक ज्ञाना-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वलंभादो । ण पयडिभेदेण भेदो, एक्किस्से णाणावरणीयपयडीए भेदववहारादंसणादो । ण समयभेदेण भेदो, बज्झमाणियाए वट्टमाणविसयाए कालबहुत्ताभावादो । तम्हा बज्झमाणियाए वेयणाए णत्थि बहुवयणमिदि घेत्तव्वं ।

संपहि उदिण्णाए वि ण जीवबहुत्तेण बहुत्तं, तहाविहववहाराभावादो । ण पयडिबहुत्तेण उदिण्णवेयणाए बहुत्तं, णिरुद्धेयपयडित्तादो । कालबहुत्तं चेव अस्सिदूण बहुवयणसुत्तभंगपरूवणा कीरदे । तं जहा—एयस्स जीवस्स एयपयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एवमेगो भंगो [१] । अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उदिण्णाओ वेयणाओ । एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा [२] ।

सिया उवसंताओ वेयणाओ ॥ ३४ ॥

एदस्स सुत्तस्स भंगपरूवणं कस्सामो । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ वेयणाओ । एवमेगो भंगो [१] । अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा सिया उवसंताओ । एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा [२] । संपहि दुसंजोगपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

सिया बज्झमाणिया उदिण्णा च ॥ ३५ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे ताव बज्झमाण-उदिण्णाणं $\left[\begin{smallmatrix}१ & १\\ ० & २\end{smallmatrix}\right]$ दुसंजोगसुत्तप-

---

वरणीय प्रकृतिके भेदका व्यवहार देखा नहीं जाता । समयभेदसे भी उसका भेद नहीं हो सकता, क्योंकि, वर्तमान कालको विषय करनेवाली बध्यमान वेदनामें कालके बहुत्वकी सम्भावना ही नहीं है । इस कारण बध्यमान वेदनाके बहुवचन नहीं है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

जीवबहुत्वसे उदीर्ण वेदनाका भी बहुत्व सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा व्यवहार नहीं पाया जाता । प्रकृतिबहुत्वसे भी उदीर्ण वेदनाका बहुत्व असम्भव है, क्योंकि, एक ही प्रकृतिकी विवक्षा है । अतएव एक मात्र कालबहुत्वका आश्रय करके बहुवचनसूत्रके भंगोंकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदनाएं हैं । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदनाएं हैं । इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भंग हुए (२) ।

कथंचित् उपशान्त वेदनायें हैं ॥ ३४ ॥

इस सूत्रके भंगोंकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त वेदनाएं हैं । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई कथंचित् उपशान्त वेदनाएं हैं । इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भंग हैं (२) । अब दोके संयोगकी प्ररूपणाके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है ॥ ३५ ॥

इस सूत्रके अर्थका कथन करते समय पहिले बध्यमान और उदीर्ण दोनोंके संयोगरूप सूत्रके

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

स्थारं

१	१
१	२

तेसिं जीव-पयडि-समयपत्थारे च ट्ठविय

१	२	१	१	२	२
१	१	१	१	१	१
१	१	१	२	१	२

पच्छा एदस्स सुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा[1]। एवमेगो भंगो [१]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा। एवमेदस्स दुसंजोगपढमसुत्तस्स बे चेव भंगा [२]।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च ॥ ३६ ॥

एदस्स दुसंजोगविदियसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च वेयणाओ। एव-

प्रस्तारको

ब०	उ०
एक	एक
एक	अनेक

तथा उनके जीव, प्रकृति व समय सम्बन्धी प्रस्तारको भी स्थापित करके

	बध्यमान		उदीर्ण			
जीव	एक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	अनेक	एक	अनेक

पश्चात् इस सूत्रके भंगोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार दोके संयोग रूप इस सूत्रके दो ही भंग हैं। (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उदीर्ण (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ३६ ॥

दोके संयोग रूप इस द्वितीय सूत्रके भंगप्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमे बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा,

१ ताप्रतौ 'च वेयणा [ए]' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेगो भंगो [१]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, सिया बज्झमाणिया च[1] उदिण्णाओ च वेयणाओ [२]। एवं दुसंजोगविदियसुत्तस्स दो चेव भंगा।

सिया बज्झमाणिया च उवसंता च ॥ ३७ ॥

एदस्स बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगपढमसुत्तस्सत्थे भण्णमाणे ताव बज्झमाणाणं उवसंताणं दुसंजोगसुत्तपत्थारं

१	१
१	२

पुणो बज्झमाण-उवसंतजीव-पयडि-समयपत्थारं च दुविय

१	२	१	१	२	२
१	१	१	१	१	१
१	१	१	२	१	२

पच्छा एदस्स सुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—

एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा। एवमेगो भंगो [१]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं

अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बांधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदनायें हैं। इस प्रकार दोके संयोग रूप द्वितीय सूत्रके दो ही भंग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥ ३७ ॥

बध्यमान और उपशान्त इन दोके संयोग रूप प्रथम सूत्रके अर्थका कथन करते समय पहिले बध्यमान और उपशान्त इन दोके संयोग रूप सूत्रके प्रस्तार

ब०	उप०
एक	एक
एक	अनेक

को तथा बध्यमान, उपशान्त, जीव, प्रकृति और समय, इनके प्रस्तारको भी

	बध्यमान		उपशान्त			
जीव	एक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	अनेक	एक	अनेक

स्थापित करके पश्चात् इस सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा,

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'बज्झमाणियाओ', ताप्रतौ 'बज्झमाणिया [ओ]' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा । एवमेत्थ दो चेव भंगा[1] [२] ।

सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च ॥ ३८ ॥

संपहि एदस्स विदियसुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च वेयणाओ । एवमेगो भंगो [१] । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च वेयणाओ । एवं बे भंगा [२] । एवं बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगपरूवणा कदा । संपहि उदिण्ण-उवसंताणं दुसंजोगजणिदवेयणापरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

सिया उदिण्णा च उवसंता च ॥ ३९ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे ताव उदिण्ण-उवसंतएग-बहुवयण $\begin{vmatrix} १ & १ \\ २ & २ \end{vmatrix}$ जणिदसुत्तपत्थारं $\begin{vmatrix} १ & १ & २ & २ \\ १ & २ & १ & २ \end{vmatrix}$ ठविय पुणो उदिण्ण[2]-उवसंताणं जीव-पयडि-समयएगवयणेहि

अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है । इस प्रकार यहाँ दो ही भंग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ३८ ॥

अब इस द्वितीय सूत्रके भंगोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार दो भंग हुए (२) । इस प्रकार बध्यमान और उपशान्त इन दोके संयोगकी प्ररूपणा की गई है । अब उदीर्ण और उपशान्त इन दोके संयोगसे उत्पन्न वेदनाकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ ३९ ॥

इस सूत्रके अर्थका कथन करते समय पहिले उदीर्ण और उपशान्तके एक व बहुवचनसे

उदीर्ण	उपशांत
एक	एक
अनेक	अनेक

उत्पन्न सूत्रके प्रस्तारको स्थापित

उदीर्ण	एक	एक	अनेक	अनेक
उप०	एक	अनेक	एक	अनेक

करके फिर उदीर्ण व

१ अ-आ-काप्रतिषु 'भंगो' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'उदिण्णा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवसमयाणं बहुवयणेहि य उप्पण्णपत्थारं च ठवेदूण

१	१	२	२	१	१	२	२
१	१	१	१	१	१	१	१
१	२	१	२	१	२	१	२

पच्छा भंगुप्पत्तिं वत्तइस्सामो) तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवमेगो भंगो [१]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणं एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवं बे भंगा [२] उदिण्णुवसंताणं दुसंजोगपढमसुत्तस्स।

सिया उदिण्णा च उवसंताओ च ॥ ४० ॥

एदस्स विदियसुत्तस्स भंगे वत्तइस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्सेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया उदिण्णाओ[1] च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेगो भंगो [१]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसयमपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ, सिया उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं बे भंगा [२] एदस्स सुत्तस्स।

उपशान्त सम्बन्धी जीव, प्रकृति और समयके एकवचन तथा जीव व समयके बहुवचनसे उत्पन्न प्रस्तार

को भी

	उदीर्ण				उपशान्त			
जीव	एक	एक	अनेक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक	एक
समय	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक

स्थापित करके पश्चात् भंगोंकी उत्पत्तिको कहते हैं। यथा—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार उदीर्ण और उपशान्त इन दोके संयोग रूप प्रथम सूत्रके दो भंग हैं (२)।

कथंचित् उदीर्ण (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ४० ॥

इस द्वितीय सूत्रके भंगोंको कहते हैं। यथा—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार इस सूत्रके दो भङ्ग हैं (२)।

१ अ आ-काप्रतिषु 'उदिण्णाओ', ताप्रतौ 'उदिण्णा [ओ]' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

सिया उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ ४१ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स[1] भंगे वत्तइस्सामो । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णाओ च उवसंता[2] च वेयणाओ । एवमेगो भंगो [१] । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एय-समयपबद्धा उवसंता, सिया उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ । एवं बे भंगा [२] एदस्स सुत्तस्स ।

सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च ॥ ४२ ॥

एदस्स चउत्थसुत्तस्स भंगे वत्तइस्सामो । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा[3] उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ । एवमेगो भंगो [१] । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाण-मेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेय-णाओ । एवं बे चेव भंगा [२] । उदिण्ण[4]-उवसंताणं दुसंजोगचउत्थसुत्तस्स । संपहि तिसंजोगजणिदवेयणविहाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

कथंचित् उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदनायें हैं ॥ ४१ ॥

इस तृतीय सूत्रके भङ्गोंको कहते हैं । यथा—एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार इस सूत्रके दो भङ्ग हैं (२) ।

कथंचित् उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ४२ ॥

इस चतुर्थ सूत्रके भङ्गोंको कहते हैं । यथा—एक जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार एक भंग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण; उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं । इस प्रकार उदीर्ण और उपशान्त इन दोके संयोग रूप चतुर्थ सूत्रके दो ही भंग हैं (२) । अब तीनोंके संयोगसे उत्पन्न वेदनाके विधानकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

---

१ ताप्रतौ 'एदस्स सुत्तस्स' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'उवसंता [ओ]' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'समय पबद्धाओ' इति पाठः । ४ प्रतिषु 'उदिण्णा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया बज्झमाणया च उदिण्णा च उवसंता च ॥ ४३ ॥

एदस्स तिसंजोगपढमसुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणमेगवयणेहि उदिण्ण-उवसंताणं बहुवयणेहि

१	१	१
०	२	२

जणिदतिसंजोगसुत्तस्स पत्थारं

१	१	१	१
१	१	२	२
१	२	१	२

बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणं जीव-पयडि-समयपत्थारे च ठविय

१२	११२२	११२२
११	११११	११११
११	१२१२	१२१२

पच्छा भंगुप्पत्तिं भणिस्सामो । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्सेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च वेय-

---

कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ ४३ ॥

तीनोंके संयोग रूप इस प्रथम सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त, इनके एकवचन तथा उदीर्ण और उपशान्त, इनके बहुवचन

बध्य०	उदीर्ण	उप०
एक	एक	एक
०	अनेक	अनेक

से उत्पन्न तीनोंके संयोग रूप सूत्रके प्रस्तार

बध्य०	एक	एक	एक	एक
उदीर्ण	एक	एक	अनेक	अनेक
उपश।	एक	अनेक	एक	अनेक

तथा बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त सम्बन्धी जीव प्रकृति व समयके प्रस्तारों

जीव	बध्यमान		उदीर्ण			
	एक	अनेक	एक	एक	अनेक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	अनेक	एक	अनेक

को भी स्थापित करके पश्चात् भंगोंकी उत्पत्तिको कहते हैं । यथा—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

णाओ। एवमेगो भंगो [१]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया[1] पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा [२]।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च ॥ ४४ ॥

एदस्स तिसंजोगविदियसुत्तस्स अत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेगो भंगो [१]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा[2] उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेदस्स बे चेव भंगा [२]।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च ॥ ४५ ॥

एदस्स तदियसुत्तस्स आलावे भणिस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया

इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनाएं हैं। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भंग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक), उदीर्ण (एक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ४४ ॥

तीनोंके संयोग रूप इस द्वितीय सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनाएं हैं। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भंग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक), उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (एक) वेदना है ॥४५॥

इस तृतीय सूत्रके आलापोंको कहते हैं। वे इस प्रकार हैं—एक जीवकी एक प्रकृति एक

---

१ ताप्रतौ 'अणेयाणं [पयडीणं] जीवाणमेय' इति पाठः। २ प्रतिषु '-पबद्धाओ' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एवमेगो भंगो [१]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी[1] अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च वेयणाओ। एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा [२]।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च ॥ ४६ ॥

एवमेदस्स चउत्थसुत्तस्स भंगपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी अणेयसमयपबद्धा[2] उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवमेगो भंगो [१]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उदिण्णाओ, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धा उवसंताओ; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च वेयणाओ। एवं

समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समय में बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भङ्ग हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान (एक), उदीर्ण (अनेक) और उपशान्त (अनेक) वेदनायें हैं ॥ ४६ ॥

इस प्रकार इस चतुर्थ सूत्रके भङ्गोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान; उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं। इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति अनेक समयोंमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदनायें हैं।

---

१ ताप्रतावतोऽग्रे 'एयसमयपबद्धा उदिण्णा तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी अणेयसमयपबद्धो उवसंताओ सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च वेयणाओ, एवमेदस्स वे चेव भंगा २ इति पाठः।
२ प्रतिषु '-पबद्धाओ' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिसंजोगचउत्थसुत्तस्स बे चेव भंगा [२]। ए बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणं एग-दु-[-ति] संजोगेहि ववहारणयमस्सिदूण णाणावरणीयवेयणविहाणं परूविदं ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ४७ ॥

जहा णाणावरणीयस्स ववहारणयमस्सिदूण वेयणवेयणविहाणं परूविदं तहा सेस-सत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं; विसेसाभावादो ।

संगहणयस्स णाणावरणीयवेदणा सिया बज्झमाणिया वेयणा ॥४८॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेगवयणं जीवबहुवयणं च ठविय

१	१	१
२	०	०

पुणो एत्थ अक्खपरावत्तं[1] करिय जणिद पत्थारं च ठवेदूण

१	२
१	१
१	१

अत्थ-परूवणं कस्सामो । तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया बज्झ-

---

इस प्रकार तीनोंके संयोग रूप चतुर्थ सूत्रके दो ही भङ्ग हैं (२)। इस प्रकार व्यवहार नयका आश्रय करके बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त, इनके एक, दो [और तीनोंके] संयोगसे ज्ञानावरणीयकी वेदनाके विधानकी प्ररूपणा की गई है।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके वेदनाविधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ४७ ॥

जिस प्रकार व्यवहारनयका आश्रय करके ज्ञानावरणीय कर्मकी वेदनाके विधानकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी वेदनाके विधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

संग्रह नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् बध्यमान वेदना है ॥४८॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति और समय इनके एक वचन तथा जीवके बहुवचन

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	एक	एक

को स्थापित करके फिर यहाँ अक्षपरावर्तन करके उत्पन्न हुए प्रस्तार

जीव	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक
समय	एक	एक

को स्थापित करके अर्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—

एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् बध्यमान वेदना है। इस प्रकार एक भङ्ग

---

१ ताप्रतौ 'परावत्तिं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माणिया वेयणा । एवमेगो भंगो [१] । अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया बज्झमाणिया वेयणा । एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा [२] ।

सिया उदिण्णा वेयणा ॥ ४९ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेगवयणेहि जीवबहुवयणेण च

१	१	१
२	०	०

उप्पाइदपत्थारो ठवेदव्वो

१	२
१	१
१	१

[1] । एसो संगहणओ तिण्णि वि काले कालसामण्णेण संगहिदूण गेण्हदि त्ति कालस्स बहुवयणं णेच्छदि । जीवेसु वि जीवसामण्णेण संगहिदेसु[2] बहुत्तं णत्थि त्ति जीवबहुवयणं किण्णावणिज्जदे ? ण[3], संगहणयस्स सुद्धस्स विसए अप्पिदे जीवबहुत्ताभावो होदि चेव, किंतु असुद्धसंगहणओ अप्पिदो त्ति कट्टु ण जीवबहुत्तं विरुज्झदे । संपहि एवं ठविय एदस्स अत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा--

हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् बध्यमान वेदना है । इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भङ्ग हैं (२) ।

कथंचित् उदीर्ण वेदना है ॥ ४९ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति और समय, इनके एकवचन और जीवके बहुवचन

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	०	०

से उत्पन्न कराये गये प्रस्तारको स्थापित करना चाहिये--

जीव	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक
समय	एक	एक

चूँकि यह संग्रह नय तीनों ही कालोंको काल सामान्यसे संगृहीत करके ग्रहण करता है, अतएव वह कालके बहुवचनको स्वीकार नहीं करता ।

शंका--जीव सामान्यसे जीवोंके भी संगृहीत होनेपर चूँकि उनका भी बहुवचन सम्भव नहीं है, अतएव जीवोंके बहुवचनको कम क्यों नहीं किया जाता है ?

समाधान--नहीं, क्योंकि, यद्यपि शुद्ध संग्रहनयके विषयकी प्रधानता होनेपर जीवबहुत्वका अभाव होता ही है; किन्तु यहाँ चूँकि अशुद्ध संग्रहनय प्रधान है, अतः जीवबहुत्व विरुद्ध नहीं है ।

१ प्रतिषु

१	२
१	२
१	२

एवंविधोऽत्र प्रस्तारो लभ्यते । २ अ-आ-काप्रतिषु 'संगहिदेस' इति पाठः । ३ ताप्रतौ 'ण' इत्येतस्य स्थाने 'एवं' इत्येतत्पदमुपलभ्यते ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा । एवमेगो भंगो [१] । अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उदिण्णा वेयणा । एवं बे भंगा [२] उदिण्णेगवयणसुत्तस्स ।

सिया उवसंता वेयणा ॥ ५० ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जीव-पयडि-समयाणमेगवयणेहि जीववहुवयणेण च

१	१	१
२	०	०

जणिदपत्थारं

१	२
१	१
१	१

ठविय एदस्स सुत्तस्स भंगपमाणपरूवणं कस्सामो ।

तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा । एवमेगो भंगो । अथवा अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा सिया उवसंता वेयणा । एवमेदस्स सुत्तस्स बे चेव भंगा [२] ।

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च ॥ ५१ ॥

एदस्स दुसंजोगपढमसुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाण-उदिण्णाणं दुसंजोग-

---

अब इस प्रकारसे [प्रस्तारको] स्थापित करके इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदना है । इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उदीर्ण वेदना है । इस प्रकार उदीर्ण वेदना सम्बन्धी एकवचन सूत्रके दो भङ्ग हैं (२) ।

कथंचित् उपशान्त वेदना है ॥ ५० ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय जीव, प्रकृति व समय, इनके एकवचन तथा जीवके बहुवचन

जीव	प्रकृति	समय
एक	एक	एक
अनेक	०	०

से उत्पन्न हुए प्रस्तार

जीव	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक
समय	एक	एक

को स्थापित करके इस सूत्रके भङ्गोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उपशान्त वेदना है । इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१) । अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई कथंचित् उपशान्त वेदना है । इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भङ्ग हैं (२) ।

कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है ॥ ५१ ॥

दोके संयोग रूप इस प्रथम सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान व उदीर्ण इन दोके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्थारं

१
१

तेसिं चेव जीव-पयडि-समयपत्थारं च ठविय

१२	१२
११	११
११	११

पच्छा परूवणा कीरदे। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा। एवमेगो भंगो [१]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च वेयणा। एवमेदस्स सुत्तस्स दो चेव भंगा होंति [२]।

सिया बज्झमाणिया च उवसंता च ॥ ५२ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे बज्झमाण-उवसंताणं दुसंजोगपत्थारं

१
१

तेसिं[१]

संयोगसे उत्पन्न प्रस्तार

बध्य०	एक
उदीर्ण	एक

को तथा उनसे ही सम्बन्ध रखनेवाले जीव, प्रकृति और समय; इनके प्रस्तार—

	बध्यमान		उदीर्ण	
जीव	एक	अनेक	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	एक

को भी स्थापित करके पश्चात् यह प्ररूपणा की जाती है। यथा—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार एक भङ्ग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण; कथंचित् बध्यमान और उदीर्ण वेदना है। इस प्रकार इस सूत्रके दो ही भङ्ग होते हैं (२)।

कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है ॥ ५२ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय बध्यमान और उपशान्त इन दोके संयोग रूप प्रस्तार

बं०	१
उप०	१

को तथा उन्हींसे सम्बन्ध रखनेवाले जीव, प्रकृति व समय इनके प्रस्तारको भी स्थापित

---

१ आ-काप्रत्योः

१
२

, ताप्रतौ

२
१

एवंविधोऽत्र प्रस्तारः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

चेव [जीव-] पयडि-समयपत्थारं च ठविय

१२	१२
११	११
११	११

पच्छा सुत्तालावो वुच्चदे।

तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा। एवमेगा उच्चारणा [१]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता, सिया बज्झमाणिया च उवसंता च वेयणा। एवमेदस्स सुत्तस्स दो चेव उच्चारणाओ [२]।

सिया उदिण्णा च उवसंता च ॥ ५३ ॥

एत्थ पुव्वं व उदिण्णुवसंतदुसंजोगपत्थारं

१
१

तेसिं चेव जीव-पयडि-समय-पत्थारं च ठविय

१२	१२
११	११
११	११

अत्थो वुच्चदे। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी

	बध्यमान		उपशान्त	
जीव	एक	अनेक	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	एक

करके पश्चात् सूत्रके आलापको कहते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार एक उच्चारणा हुई (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार इस सूत्रकी दो ही उच्चारणायें हैं (२)।

कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ ५३ ॥

यहाँ पहिलेके समान उदीर्ण और उपशान्त, इन दोके संयोग रूप प्रस्तार

उ०	१
उप०	१

को तथा उन्हींसे सम्बन्ध रखनेवाले जीव, प्रकृति और समय, इनके प्रस्तार

	उदीर्ण		उपशान्त	
जीव	एक	अनेक	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	एक

को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवमेया उच्चारणा [१]। अथवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवमेत्थ बे चेव उच्चारणाओ [२]। संपहि तिसंजोगजणिदवेयणवेयणाविहाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च ॥ ५४ ॥

एदस्स अत्थे भण्णमाणे तिसंजोगसुत्तपत्थारं

१
१
१

तेसिं चेव [जीव-] पयडि-समयपत्थारे च ठविय

१२	१२	१२
११	११	११
११	११	११

अत्थो वुच्चदे। तं जहा—एयस्स जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तस्स चेव जीवस्स एया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झ-

भी स्थापित करके अर्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार एक उच्चारणा हुई (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त, कथंचित् उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार यहाँ दो ही उच्चारणायें हैं (२)। अब तीनोंके संयोगसे उत्पन्न वेदनाके विधानकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है ॥ ५४ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय तीनोंके संयोग रूप सूत्रके प्रस्तार

ब०	१
उ०	१
उप.	१

को तथा उन्हींसे सम्बद्ध [जीव,] प्रकृति और समयके प्रस्तार

जीव	बध्यमान		उदीर्ण		उपशान्त	
	एक	अनेक	एक	अनेक	एक	अनेक
प्रकृति	एक	एक	एक	एक	एक	एक
समय	एक	एक	एक	एक	एक	एक

को भी स्थापित करके अर्थकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उसी जीवकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माणिया च उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवमेगो भंगो [१]। अधवा, अणेयाणं जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा बज्झमाणिया, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उदिण्णा, तेसिं चेव जीवाणमेया पयडी एयसमयपबद्धा उवसंता; सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च वेयणा। एवं बज्झमाण-उदिण्ण-उवसंताणं तिसंजोगम्मि दो चेव भंगा [२]।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ५५ ॥

जहा संगहणयमस्सिदूण णाणावरणवेयणावेयणाविहाणं परूविदं तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो।

उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा उदिण्णा[1] फलपत्तविवागा वेयणा ॥५६॥

उदीर्णस्य फलं उदीर्णफलम्, तत्प्राप्तो विपाको यस्यां सा उदीर्णफलप्राप्तविपाका वेदना भवति; नापरा[2]। जो कम्मक्खंधो जम्हि समए अण्णाणमुप्पाएदि सो तम्हि चेव समए णाणावरणीयवेयणा होदि, ण उत्तरखणे; विणट्ठकम्मपज्जायत्तादो। ण पुव्वखणे वि, तस्स अण्णाणजणणसत्तीए अभावादो। ण च वेयणाए अकारणं वेयणा होदि, अव्ववत्थापसंगादो। तम्हा बज्झमाण-उवसंतकम्माणि वेयणा ण होंति, उदिण्णं चेव वेयणा होदि त्ति भणिदं होदि।

इस प्रकार एक भंग हुआ (१)। अथवा, अनेक जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई बध्यमान, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उदीर्ण, उन्हीं जीवोंकी एक प्रकृति एक समयमें बाँधी गई उपशान्त; कथंचित् बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त वेदना है। इस प्रकार बध्यमान, उदीर्ण और उपशान्त इन तीनोंके संयोगमें दो ही भंग होते हैं (२)।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें कथन करना चाहिये ॥ ५५ ॥

जिस प्रकार संग्रह नयका आश्रय करके ज्ञानावरणीय कर्मके वेदनावेदनाविधानकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके वेदनावेदनाविधानकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय कर्मकी वेदना उदीर्ण फलको प्राप्तविपाकवाली वेदना है ॥ ५६ ॥

उदीर्णका फल उदीर्णफल, उसको प्राप्त है विपाक जिसमें वह उदीर्णफलविपाक वेदना है; इतर नहीं है। अर्थात् जो कर्मस्कन्ध जिस समयमें अज्ञानको उत्पन्न कराता है उसी समयमें ही वह ज्ञानावरणीयकी वेदना रूप होता है, न कि उत्तर क्षणमें; क्योंकि, उत्तर क्षणमें उसकी कर्म रूप पर्याय नष्ट होजाती है। पूर्व क्षणमें भी उक्त कर्मस्कन्ध ज्ञानावरणीयकी वेदना रूप नहीं होता, क्योंकि, उस समय उसमें अज्ञानको उत्पन्न करनेकी शक्तिका अभाव है। और जो वेदनाका कारण ही नहीं है वह वेदना नहीं होता है, क्योंकि, वैसा होनेपर अव्यवस्थाका प्रसंग आता है। इस कारण बध्यमान व उपशान्त कर्म वेदना नहीं होते हैं, किन्तु उदीर्ण कर्म ही वेदना होता है; यह सूत्रका अभिप्राय है।

१ प्रतिषु 'उदिण्णा-' इति पाठः। २ ताम्रतौ '-प्राप्तविपाकवेदना परा' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ५७ ॥

जहा णाणावरणीयस्स परूविदं तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवेदव्वं ।

सद्दणयस्स अवत्तव्वं ॥ ५८ ॥

कुदो ? तस्स विसए दव्वाभावादो । णाणावरणीय-वेयणासद्दाणं भिण्णत्थाणं भिण्णसरूवाणं समासाभावादो वा पुधभूदेसु अपुधभूदेसु च तस्सेदमिदि संबंधाभावादो वा तिण्णं सद्दणयाणमवत्तव्वं ।

एवं वेयणवेयणविहाणे त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ ५७ ॥

जिस प्रकार ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षासे ज्ञानावरणीयके सम्बन्धमें प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें भी प्ररूपणा करना चाहिये ।

शब्द नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अवक्तव्य है ॥ ५८ ॥

इसका कारण यह है कि शब्द नयके विषयमें द्रव्यका अभाव है । अथवा, ज्ञानावरणीय और वेदना इन भिन्न अर्थ व स्वरूपवाले दोनों शब्दोंका समास न हो सकनेसे, अथवा पृथग्भूत और अपृग्भूत उनमें 'यह उसका है' इस प्रकारका सम्बन्ध न बन सकनेसे भी तीनों शब्द नयोंकी अपेक्षासे वह अवक्तव्य है ।

इस प्रकार वेदनावेदनाविधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयणगदिविहाणाणियोगद्दारं

वेयणगदिविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं । वेदनायाः गतिर्गमनं विधीयते प्ररूप्यते अनेनेति वेदनागतिविधानम् । कधं कम्माणं जीवपदेसेसु समवेदाणं गमणं जुज्जदे ? ण एस दोसो, जीवपदेसेसु जोगवसेण संचरमाणेसु तदपुधभूदाणं कम्मक्खंधाणं पि संचरणं पडि विरोहाभावादो । किमट्ठं वेदणागइविहाणं वुच्चदे ? जदि कम्मपदेसा ट्ठिदा चेव होंति तो जीवेण देसंतरगदेण सिद्धसमाणेण होदव्वं । कुदो ? सयलकम्माभावादो । ण ताव पुव्वसंचिदकम्माणि अत्थि, तेसिं पुव्वपदेसे थिरसरूवेण अवट्ठिदाणमेत्थ आगमणाभावादो । ण वट्टमाणकाले वि कम्मसंचओ अत्थि, मिच्छत्तादिपच्चयाणं कम्मेहि सह ट्ठिदाणमेत्थ संभवाभावादो त्ति । ण कम्मक्खंधाणमणवट्ठाणं पि जुज्जदे, सव्वजीवाणं मुत्तिप्पसंगादो । तं जहा—ण ताव अप्पिदविदियसमए कम्माणि अत्थि, अवट्ठाणाभावेण णिम्मूलदो विणट्ठत्तादो । ण उप्पण्णपढमसमए वि फलं देंति, बज्झमाणसमए कम्माणं विवागाभावादो । भावे वा कम्म-कम्मफलाणमेगसमए चेव संभवो होदूण विदियसमएसु

वेदनागतिविधान अनुयोगद्वार अधिकार प्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण करानेवाला है । वेदनाकी गति अर्थात् गमनकी इसके द्वारा प्ररूपणा की जाती है अतएव वह वेदनागतिविधान कहलाता है ।

शंका—जीवप्रदेशोंमें समवायको प्राप्त हुए कर्मोंका गमन कैसे सम्भव है ।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, योगके कारण जीवप्रदेशोंका संचरण होनेपर उनसे अपृथग्भूत कर्मस्कन्धोंके भी संचारमें कोई विरोध नहीं आता ।

शंका—वेदनागतिविधान अनुयोगद्वार किसलिये कहा जा रहा है ?

समाधान—यदि कर्मप्रदेश स्थित ही हों तो देशान्तरको प्राप्त हुए जीवको सिद्ध जीवके समान हो जाना चाहिए, क्योंकि उस समय उसके समस्त कर्मोंका अभाव है । यह कहना कि उसके पूर्वसंचित कर्म विद्यमान हैं, ठीक नहीं है; क्योंकि, वे पूर्व स्थानमें ही स्थिर रूपसे अवस्थित हैं, उनका यहाँ देशान्तरमें आना असम्भव है । वर्तमान कालमें भी उसके कर्मोंका संचय नहीं है, क्योंकि, कर्मोंके साथ स्थित मिथ्यात्वादिक प्रत्ययोंकी यहाँ सम्भावना नहीं है । कर्मस्कन्धोंका अनवस्थान स्वीकार करना भी योग्य नहीं है, क्योंकि, वैसा माननेपर सब जीवोंकी मुक्तिका प्रसंग आता है । यथा—विवक्षित द्वितीय समयमें कर्मोंका अस्तित्व नहीं है, क्योंकि, अवस्थानके न होनेसे उनका निर्मूल नाश हो गया है । उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें वे फल नहीं देते हैं, क्योंकि, बन्ध होनेके समयमें कर्मोंका फल देना असम्भव है । अथवा, यदि बन्ध समयमें फलका देना स्वीकार किया जाय तो फिर कर्म और कर्मफल इन दोनोंकी एक समयमें ही सम्भावना होकर द्वितीय समयमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधसंताभावो होज्ज, तत्थ बंधकारणमिच्छत्तादि कम्मफलाणमभावादो। एवं च संते तत्थ णिव्वुइए सव्वजीवविसयाए होदव्वं। ण च एवं, तहाणुवलंभादो। ण चोद्दय— पक्खो वि, उभयदोसाणुसंगादो त्ति पज्जवट्ठियस्स सिस्सस्स[1] जीव-कम्माणं पारतंतिय-लक्खणसंबंधजाणावणट्ठं जीवपदेसपरिफंदहेदू चेव जोगो त्ति जाणावणट्ठं च वेयणगइ-विहाणं परूविज्जदे।

णेगम-ववहार-संगहाणं णाणावरणीयवेयणा सिया अवट्ठिदा ॥२॥

राग-दोस-कसाएहि वेयणाहि वा भएण अद्धाणजणिदपरिस्समेण वा जीवपदेसेसु ट्ठिदअद्दजलं[2] व संचरंतेसु तत्थ समवेदकम्मपदेसाणं पि संचरणुवलंभादो। जीवपदेसेसु पुणो कम्मपदेसा ट्ठिदा चेव, पुव्विल्लदेसं मोत्तूण देसंतरे ट्ठिदजीवपदेसेसु समवेदकम्म-क्खंधुवलंभादो। कुदो एदमुवलब्भदे? सियासद्दुच्चारणण्णहाणुववत्तीदो, देसे इव जीव-पदेसेसु वि अट्ठिदत्ते अब्भुवगम्ममाणे पुव्वुत्तदोसप्पसंगादो च। अट्ठण्णं मज्झिमजीव-पदेसाणं संकोचो विकोचो वा णत्थि त्ति तत्थ ट्ठिदकम्मपदेसाणं पि अट्ठिदत्तं णत्थि

बन्ध और सत्त्वका अभाव हो जाना चाहिये, क्योंकि, दूसरे समयमें बन्धके कारण मिथ्यात्वादिका तथा कर्मफलका अभाव है। और ऐसा होनेपर उस समय सब जीवोंकी मुक्ति हो जानी चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि वैसा पाया नहीं जाता। यदि उभय पक्षको स्वीकार किया जाय तो वह भी ठीक नहीं है, क्योंकि, वैसा स्वीकार करनेपर उभय पक्षोंमें दिये गये दोषोंका प्रसंग आता है। इस प्रकारसे पर्यायदृष्टिवाले शिष्यके लिये जीव व कर्मके पारतन्त्र्य स्वरूप सम्बन्धको बतलानेके लिये तथा जीवप्रदेशोंके परिस्पन्दका हेतु योग ही है इस बातको भी बतलानेके लिये 'वेदनागति-विधान' की प्ररूपणा की जा रही है।

नैगम, व्यवहार और संग्रह नयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् अवस्थित है ॥ २ ॥

राग, द्वेष और कषायसे; अथवा वेदनाओंसे, भयसे अथवा अध्वानसे उत्पन्न परिश्रमसे मेघोंमें स्थित जलके समान जीवप्रदेशोंका संचार होनेपर उनमें समवायको प्राप्त कर्मप्रदेशोंका भी संचार पाया जाता है। परन्तु जीवप्रदेशोंमें कर्मप्रदेश स्थित ही रहते हैं, क्योंकि, जीवप्रदेशोंके पूर्वके देशको छोड़कर देशान्तरमें जाकर स्थित होनेपर उनमें समवायको प्राप्त कर्मस्कन्ध पाये जाते हैं।

शंका—यह अर्थ किस प्रमाणसे उपलब्ध होता है?

समाधान—एक तो ऐसा अर्थ ग्रहण किये बिना 'स्यात्' शब्दका उच्चारण घटित नहीं होता। दूसरे देशके समान जीवप्रदेशोंमें भी कर्मप्रदेशोंको अस्थित स्वीकार करनेपर पूर्वोक्त दोषका प्रसंग आता है। इससे जाना जाता है कि जीव प्रदेशोंके देशान्तरको प्राप्त होनेपर उनमें कर्म प्रदेश स्थित ही रहते हैं।

शंका—यतः जीवके आठ मध्य प्रदेशोंका संकोच अथवा विस्तार नहीं होता अतः उनमें

१ अ-आ-का प्रतिषु 'सिस्सस्स' इत्येतत्पदं नोपलभ्यते। २ प्रतिषु 'अद्दट्ठिद' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

त्ति। तदो सव्वे जीवपदेसा कम्हि वि काले अट्ठिदा होंति त्ति सुत्तवयणं ण घडदे ? ण एस दोसो, ते अट्ठमज्झिमजीवपदेसे मोत्तूण सेसजीवपदेसे अस्सिदूण एदस्स सुत्तस्स पवुत्तीदो। कधं पुण एसो अत्थविसेसो उवलब्भदे ? सियासद्दप्पओआदो।

सिया ट्ठिदाट्ठिदा ॥ ३ ॥

वाहि-वेयणा-सज्झसादिकिलेसविरहियस्स छदुमत्थस्स जीवपदेसाणं केसिं पि चलणाभावादो तत्थ ट्ठिदकम्मक्खंधा वि ट्ठिदा चेव होंति, तत्थेव केसिं जीवपदेसाणं संचालुवलंभादो तत्थ ट्ठिदकम्मक्खंधा वि संचलंति, तेण ते अट्ठिदा त्ति भण्णंति। तेसिं दोण्णं समुदायो वेदणा त्ति एया होदि। तेण ठिदाट्ठिदा त्ति दुस्सहावा भण्णदे। एत्थ जे अट्ठिदा[1] तेसिं कम्मबंधो होदु णाम, सजोगत्तादो। जे पुण ट्ठिदा तेसिं जीवपदेसाणं णत्थि कम्मबंधो, जोगाभावादो। सो वि कुदो णव्वदे ? जीवपदेसाणं परिप्फंदाभावादो। ण च परिप्फंदविरहियजीवपदेसेसु जोगो अत्थि, सिद्धाणं पि सजोगत्तावत्तीदो[2] त्ति ?

स्थित कर्मप्रदेशोंका भी अस्थितपना नहीं बनता और इसलिए सब जीवप्रदेश किसी भी समय अस्थित होते हैं, यह सूत्रवचन घटित नहीं होता ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं हैं, क्योंकि, जीवके उन आठ मध्य प्रदेशोंको छोड़कर शेष जीवप्रदेशोंका आश्रय करके इस सूत्रकी प्रवृत्ति हुई है।

शंका—इस अर्थविशेषकी उपलब्धि किस प्रकारसे होती है ?

समाधान—उसकी उपलब्धि 'स्यात्' शब्दके प्रयोगसे होती है।

उक्त वेदना कथंचित् स्थित-अस्थित है ॥ ३ ॥

व्याधि, वेदना एवं भय आदिक क्लेशोंसे रहित छद्मस्थके किन्हीं जीवप्रदेशोंका चूँकि संचार नहीं होता अतएव उनमें स्थित कर्मप्रदेश भी स्थित ही होते हैं। तथा उसी छद्मस्थके किन्हीं जीव-प्रदेशोंका चूँकि संचार पाया जाता है, अतएव उनमें स्थित कर्मप्रदेश भी संचारको प्राप्त होते हैं, इसलिये वे अस्थित कहे जाते हैं। यतः उन दोनोंके समुदाय स्वरूप वेदना एक है अतः वह स्थित-अस्थित इन दो स्वभाववाली कही जाती है।

शंका—इनमें जो जीवप्रदेश अस्थित हैं उनके कर्मबन्ध भले ही हो, क्योंकि, वे योग सहित हैं। किन्तु जो जीवप्रदेश स्थित हैं उनके कर्मबन्धका होना सम्भव नहीं है, क्योंकि, वे योगसे रहित हैं।

प्रतिशंका—वह भी किस प्रामणसे जाना जाता है ?

प्रतिशंकाका समाधान—जीवप्रदेशोंका परिस्पन्द न होनेसे ही जाना जाता है कि वे योगसे रहित हैं। और परिस्पन्दसे रहित जीवप्रदेशोंमें योगकी सम्भावना नहीं है, क्योंकि, वैसा होनेपर सिद्ध जीवोंके भी सयोग होनेकी आपत्ति आती है।

१ अ-आ-काप्रतिषु 'अट्ठिदा', ताप्रतौ 'अट्ठि (ट्ठि) दा', मप्रतौ 'लद्धिदा' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'सजोगत्ता [दो] वत्तीदो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एत्थ परिहारो वुच्चदे —मण-वयण-कायकिरियासमुप्पत्तीए जीवस्स उवजोगो जोगो णाम[1]। सो च कम्मबंधस्स कारणं। ण च सो थोवेसु जीवपदेसेसु होदि, एगजीवपयत्तस्स थोवावयवेसु चेव वुत्तिविरोहादो एकम्हि जीवे खंडखंडेण पयत्तविरोहादो वा। तम्हा ट्ठिदेसु जीवपदेसेसु कम्मबंधो अत्थि त्ति णव्वदे। ण जोगादो णियमेण जीवपदेसपरिप्फंदो होदि, तस्स तत्तो अणियमेण समुप्पत्तीदो। ण च एकांतेण णियमो णत्थि चेव, जदि उप्पज्जदि तो तत्तो चेव उप्पज्जदि त्ति णियमुवलंभादो। तदो ट्ठिदाणं पि जोगो अत्थि त्ति कम्मबंधभूयमिच्छियव्वं।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ ४ ॥

जहा णाणावरणीयस्स दुविहा गदिविहाणपरूवणा कदा तहा एदेसिं तिण्णं पि कम्माणं कायव्वं, छदुमत्थेसु चेव वट्टमाणत्तणेण भेदाभावादो।

वेयणीयवेयणा सिया ट्ठिदा ॥ ५ ॥

कुदो ? अजोगिकेवलिम्मि णट्ठासेसजोगम्मि जीवपदेसाणं संकोचविकोचाभावेण अवट्ठाणुवलंभादो।

सिया अट्ठिदा ॥ ६ ॥

शंकाका समाधान—यहाँ उपर्युक्त शंकाका परिहार कहते हैं। मन, वचन एवं काय सम्बन्धी क्रियाकी उत्पत्तिमें जो जीवका उपयोग होता है वह योग और वह कर्मबन्धका कारण है। परन्तु वह थोड़ेसे जीवप्रदेशोंमें नहीं हो सकता, क्योंकि, एक जीवमें प्रवृत्त हुए उक्त योगकी थोड़ेसे ही अवयवोंमें प्रवृत्ति माननेमें विरोध आता है, अथवा एक जीवमें उसके खण्ड-खण्ड रूपसे प्रवृत्त होनेमें विरोध आता है। इसलिये स्थित जीवप्रदेशोंमें कर्मबन्ध होता है, यह जाना जाता है। दूसरे योगसे जीवप्रदेशोंमें नियमसे परिस्पन्द होता है, ऐसा नहीं है; क्योंकि योगसे अनियमसे उसकी उत्पत्ति होती है। तथा एकान्ततः नियम नहीं है, ऐसी भी बात नहीं है; क्योंकि, यदि जीवप्रदेशोंमें परिस्पन्द उत्पन्न होता है तो वह योगसे ही उत्पन्न होता है, ऐसा नियम पाया जाता है। इस कारण स्थित जीवप्रदेशोंमें भी योगके होनेसे कर्मबन्धको स्वीकार करना चाहिये।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मोंके विषयमें जानना चाहिये ॥ ४ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्मके गतिविधानकी दो प्रकारकी प्ररूपणा की गइ है उसी प्रकार इन तीन कर्मोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, ये कर्म छद्मस्थोंके ही विद्यमान रहते हैं इसलिए इनकी प्ररूपणामें ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणासे कोई भेद नहीं है।

वेदनीय कर्मकी वेदना कथंचित् स्थित है ॥ ५ ॥

इसका कारण यह है कि अयोगकेवली जिनमें समस्त योगोंके नष्ट हो जानेसे जीवप्रदेशोंका संकोच व विस्तार नहीं होता है, अतएव वे वहाँ अवस्थित पाये जाते हैं।

कथंचित् वह अस्थित है ॥ ६ ॥

---

१ ताप्रतौ 'उवजोगो णाम' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगममेदं; णाणावरणीयपरूवणाए चेव अवगदसरूवत्तादो ।

सिया ट्ठिदाट्ठिदा ॥ ७ ॥

एदस्स वि णाणावरणीयभंगो ।

एवमाउव-णामा-गोदाणं ॥ ८ ॥

जहा वेयणीयस्स परूविदं तहा एदेसिं तिण्णं कम्माणं वत्तव्वं; भेदाभावादो ।

उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा सिया ट्ठिदा ॥ ९ ॥

छदुमत्थेसु सजोगेसु कधं सव्वेसिं जीवपदेसाणं ट्ठिदत्तं होदि उजुसुदणए ? को एवं भणदि[1] उजुसुदणओ सव्वेसिं जीवपदेसाणं कम्हि वि काले ट्ठिदत्तं चेव इच्छदि त्ति । किंतु जे ट्ठिदा ते ट्ठिदा चेव, ण अट्ठिदा; ठिदेसु अट्ठिदत्तविरोहादो । एस उजुसुदणयाहिप्पाओ ।

सिया अट्ठिदा ॥ १० ॥

जे अट्ठिदजीवपदेसा ते अट्ठिदा चेव ण तत्थ ट्ठिदभूआ[2], ट्ठिदाट्ठिदाणमेगत्थ एगसमए अवट्ठाणाभावादो । तेण कारणेण उजुसुदणए दुसंजोगभंगो णत्थि त्ति अवणिदो ।

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, ज्ञानावरणीय कर्मकी प्ररूपणासे ही उसके स्वरूपका ज्ञान हो जाता है ।

कथंचित् वह स्थित-अस्थित है ॥ ७ ॥

इसकी भी प्ररूपणा ज्ञानावरणीयके ही समान है ।

इसी प्रकार आयु; नाम और गोत्र कर्मके सम्बन्धमें जानना चाहिये ॥ ८ ॥

जिस प्रकार वेदनीय कर्मके गतिविधानकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार इन तीन कर्मोंके गतिविधानकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है ।

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना कथंचित् स्थित है ॥ ९ ॥

शंका—योगसहित छद्मस्थ जीवोंमें ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा सभी जीवप्रदेश स्थित कैसे हो सकते हैं ?

समाधान—ऐसा कौन कहता है कि ऋजुसूत्र नय सब जीवप्रदेशोंको किसी भी कालमें स्थित ही स्वीकार करता है ? किन्तु जो जीवप्रदेश स्थित हैं वे स्थित ही रहते हैं, उस कालमें वे अस्थित नहीं हो सकते । क्योंकि, स्थित जीवप्रदेशोंके अस्थित होनेका विरोध है । यह ऋजुसूत्र नयका अभिप्राय है ।

कथंचित् वह अस्थित है ॥ १० ॥

जो जीवप्रदेश अस्थित हैं वे अस्थित ही रहते हैं, न कि स्थित; क्योंकि, इस नयकी अपेक्षा स्थित-अस्थित जीवप्रदेशोंका एक जगह एक समयमें अवस्थान नहीं हो सकता । इस कारण ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा द्विसंयोग भंग नहीं है, अतः वह परिगणित नहीं किया गया है । पर इससे

१ अ-आ-काप्रतिषु 'भण्णदि' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'ट्ठिदभूअ', ताप्रतौ 'ट्ठिदभूअ (अं)' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

ण पुव्विल्लणए अस्सिदूण जा परूवणा कदा तिस्से असच्चत्तं, सियासद्देण तिस्से वि सच्चत्तपरूवणादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ११ ॥

उजुसुदणयमस्सिदूण जहा णाणावरणीयस्स परूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवणा कायव्वा, ठिदभावेण[1] अट्ठिदभावेण च विसेसाभावादो ।

सद्दणयस्स अवत्तव्वं ॥ १२ ॥

कुदो ? तस्स विसए दव्वाभावादो तस्स विसये [2]ट्ठिदाट्ठिदाणमभावादो वा । तं जहा—ण ताव ट्ठिदमत्थि, सव्वपयत्थाणमणिच्चत्तब्भुवगमादो । ण अट्ठिदभूयं पि, असंते[3] पडिसेहाणुववत्तीदो त्ति ।

एवं वेयणगदिविहाणे त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

पूर्वोक्त नयोंका आश्रय करके जो प्ररूपणा की गई है वह असत्य नहीं ठहरती, क्योंकि, 'स्यात्' शब्दके द्वारा उसकी भी सत्यता प्ररूपित की गई है ।

इसी प्रकार सात कर्मोंके विषयमें जानना चाहिये ॥ ११ ॥

ऋजुसूत्र नयका आश्रय करके जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, स्थित रूप व अस्थितरूपसे इसमें उससे कोई विशेषता नहीं है ।

शब्द नयकी अपेक्षा वह अवक्तव्य है ॥ १२ ॥

क्योंकि द्रव्य शब्द नयका विषय नहीं है, अथवा स्थित व अस्थित शब्दनयके विषय नहीं हैं । स्पष्टीकरण इस प्रकार है—उक्त नयका विषय स्थित तो बनता नहीं है, क्योंकि, इस नयमें समस्त पदों व उनके अर्थोंको अनित्य स्वीकार किया गया है । अस्थित स्वरूप भी नहीं बनता क्योंकि, असत्‌का प्रतिषेध बन नहीं सकता ।

इस प्रकार वेदनागतिविधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'ठिदाभावेण' इति पाठः । २ अ-आ-का-ताप्रतिषु 'तस्स वि ट्ठिदाट्ठिदाण' इति पाठः । ३ अ-आ-काप्रतिषु 'असंत्ते' इतिपाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

वेयणअणंतरविहाणाणियोगद्दारं

वेयणअणंतरविहाणे त्ति ॥ १ ॥

अहियारसंभालणसुत्तमेदं। किमट्ठमेसो अहियारो वुच्चदे? पुव्वं वेयणवेयणविहाणे बज्झमाणं पि कम्मं वेयणा, उदिण्णं पि उवसंतं पि वेयणा त्ति परूविदं। तत्थ जं तं बज्झमाणकम्मं तं किं बज्झमाणसमए चेव विपच्चिदूण फलं देदि आहो विदियादिसमएसु फलं देदि त्ति पुच्छिदे एवं फलं देदि त्ति जाणावणट्ठं वेयणअणंतरविहाणमागदं। तत्थ बंधो दुविहो—अणंतरबंधो परंपरबंधो चेदि। को अणंतरबंधो णाम? कम्मइयवग्गणाए ट्ठिदपोग्गलक्खंधा[1] मिच्छत्तादिपच्चएहि कम्मभावेण परिणदपढमसमए अणंतरबंधा[2]। कधमेदेसिमणंतरबंधत्तं? कम्मइयवग्गणपज्जयपरिच्चत्ताणंतरसमए चेव कम्मपज्जएण परिणयत्तादो। को परंपरबंधो णाम? बंधविदियसमयप्पहुडि कम्मपोग्गलक्खंधाणं जीवपदेसाणं च जो बंधो सो परंपरबंधो णाम। कधं बंधस्स परंपरा? पढमसमए बंधो जादो,

---

वेदना अनन्तरविधान अनुयोगद्वार अधिकार प्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है।

शंका—इस अधिकारकी प्ररूपणा किसलिये की जा रही है?

समाधान—पहिले वेदनावेदनाविधान अनुयोगद्वारमें बध्यमान कर्म भी वेदना है, उदीर्ण और उपशान्त कर्म भी वेदना है' यह प्ररूपणा की जा चुकी है। उनमें जो बध्यमान कर्म है वह क्या बँधनेके समयमें ही परिपाकको प्राप्त होकर फल देता है, अथवा द्वितीयादिक समयोंमें फल देता है; ऐसा पूछे जानेपर 'वह इस प्रकारसे फल देता है' यह ज्ञात करानेके लिये वेदनाअनन्तर-विधान अनुयोगद्वारका अवतार हुआ है।

बन्ध दो प्रकारका है—अनन्तरबन्ध और परम्पराबन्ध।

शंका—अनन्तरबन्ध किसे कहते हैं?

समाधान—कार्मण वर्गणा स्वरूपसे स्थित पुद्गलस्कन्धोंका मिथ्यात्वादिक प्रत्ययोंके द्वारा कर्म स्वरूपसे परिणत होनेके प्रथम समयमें जो बन्ध होता है उसे अनन्तरबन्ध कहते हैं।

शंका—इन पुद्गलस्कन्धोंकी अनन्तरबन्ध संज्ञा कैसे है?

समाधान—चूँकि वे कार्मण वर्गणा रूप पर्यायको छोड़नेके अनन्तर समयमें ही कर्म रूप पर्यायसे परिणत हुए हैं, अतः उनकी अनन्तरबन्ध संज्ञा है।

शंका—परम्पराबन्ध किसे कहते हैं?

समाधान—बन्ध होनेके द्वितीय समयसे लेकर कर्मरूप पुद्गलस्कन्धों और जीवप्रदेशोंका जो बन्ध होता है उसे परम्पराबन्ध कहते हैं।

---

१ ताप्रतौ 'पोग्गलक्खंधा [णं]' इति पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'समए अणंतरबंधो', ताप्रतौ समए [बंधो] अणंतरबंधो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विदियसमए वि तेसिं पोग्गलाणं बंधो चेव, तदियसमये वि बंधो चेव, एवं बंधस्स णिरंतरभावो बंधपरंपरा णाम । ताए बंधा परम्परबंधा त्ति दट्ठव्वा ।

णेगम-ववहाराणं णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा[1] ॥ २ ॥

कुदो ? बंधपढमसमए चेव जीवस्स परतंतभावुप्पायणेण वेयणभावुवलंभादो उदिण्णदव्वादो बज्झमाणदव्वस्स भेदाभावादो वा[2] बज्झमाणदव्वस्स णाणावरणीयवेयणभावो जुज्जदे । ण च अवत्थाभेदेण दव्वभेदो अत्थि, दव्वादो पुधभदअवत्थाणुवलंभादो ।

परंपरबंधा ॥ ३ ॥

परंपरबंधा वि णाणावरणीयवेयणा होदि । कुदो ? [3]बंधविदियादिसमएसु ट्ठिदकम्मक्खंधाणं उदिण्णकम्मक्खंधेहिंतो दव्वदुवारेण एयत्तुवलंभादो ।

तदुभयबंधा ॥ ४ ॥

णाणावरणीयवेयणा तदुभयबंधा वि होदि, जीवदुवारेण दोण्णं पि[4] णाणावरणीयबंधाणमेगत्तुवलंभादो । बंधोदय-संताणं वेयणाविहाणं वेयणावेयणविहाणे चेव परूविदं

शंका—बन्धकी परम्परा कैसे सम्भव है ?

समाधान—प्रथम समयमें बन्ध हुआ, द्वितीय समयमें भी उन पुद्गलोंका बन्ध ही है, तृतीय समयमें भी बन्ध ही है, इस प्रकारसे बन्धकी निरन्तरताका नाम बन्धपरम्परा है । उस परम्परासे होनेवाले बन्धोंको परम्पराबन्ध समझना चाहिये ।

नैगम और व्यवहार नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अनन्तरबन्ध है ॥ २ ॥

कारण कि बन्धके प्रथम समयमें ही जीवकी परतन्त्रता उत्पन्न करानेके कारण उसमें वेदनात्व पाया जाता है । अथवा, उदीर्ण द्रव्यकी अपेक्षा बध्यमान द्रव्यमें चूँकि कोई भेद नहीं है, इसलिये इन दोनों नयोंकी अपेक्षा बध्यमान द्रव्यको ज्ञानावरणीयके वेदनास्वरूप मानना समुचित है । यदि कहा जाय कि अवस्थाभेदसे द्रव्यका भी भेद सम्भव है, तो यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, [इन नयोंकी दृष्टिमें] द्रव्यसे पृथग्भूत अवस्था नहीं पायी जाती है ।

वह परम्पराबन्ध भी है ॥ ३ ॥

ज्ञानावरणीयवेदना परम्पराबन्ध भी है, क्योंकि, बन्धके द्वितीयादिक समयोंमें स्थित कर्मस्कन्धोंकी उदीर्ण कर्मस्कन्धों के साथ द्रव्यके द्वारा एकता पायी जाती है ।

वह तदुभयबन्ध भी है ॥ ४ ॥

ज्ञानावरणीयवेदना तदुभयबन्ध भी है, क्योंकि, जीवके द्वारा दोनों ही ज्ञानावरणीय बन्धों के एकता पायी जाती है । बन्ध, उदय और सत्त्वके वेदनाविधानकी प्ररूपणा चूँकि वेदनावेदनविधानमें ही की जा चुकी है, अतएव इन सूत्रोंका यह अर्थ नहीं है; इसलिये इनके अर्थकी

---

१ ताप्रतौ 'बद्धा' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'वा' इत्येतत्पदं नोपलभ्यते । ३ ताप्रतौ 'बद्ध' इति पाठः । ४ अ-आ-काप्रतिषु 'वि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ति एदेसिं[1] सुत्ताणं ण एसो अत्थो[2] त्ति एवमेदेसिमत्थपरूवणा कायव्वा । तं जहा— णाणावरणीयकम्मक्खंधा अणंताणंता णिरंतरमण्णोण्णेहि संबद्धा[3] होदूण जे ट्ठिदा ते अणंतरबंधा णाम । एदेण एगादिपरमाणूणं संबंधविरहियाणं णाणावरणभावो पडिसिद्धो दट्ठव्वो । अणंतरबंधाणं चेव णाणावरणीयभावे संपत्ते परंपरबंधा वि णाणावरणीयवेयणा होदि त्ति जाणावणट्ठं विदियसुत्तं परूविदं । अणंताणंता कम्मपोग्गलक्खंधा अण्णोण्णसंबद्धा होदूण सेसकम्मक्खंधेहिं असंबद्धा जीवदुवारेण इदरेहि संबंधमुवगया परंपरबंधा णाम । एदे वि णाणावरणीयवेयणा होंति त्ति भणिदं होदि । एदेण सव्वे णाणावरणीयकम्म-पोग्गलखंधा एगजीवाहारा अण्णोण्णं समवेदा चेव होदूण णाणावरणीयवेयणा होंति ति एसो एयंतो णिरागरियो त्ति दट्ठव्वो । सेसं सुगमं ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ५ ॥

जहा णाणावरणीयस्स दोहि पयारेहि परंपराणंतर-तदुभयबंधाणं परूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवणा कायव्वा ।

संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा ॥ ६ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थ भण्णमाणे पुव्वं व दोहि पयारेहि अत्थो वत्तव्वो ।

प्ररूपणा इस प्रकारसे करनी चाहिये । यथा—जो अनन्तानन्त ज्ञानावरणीय कर्म रूप स्कन्ध निरन्तर परस्परमें संबद्ध होकर स्थित हैं वे अनन्तरबन्ध हैं । इससे सम्बन्ध रहित एक आदि परमाणुओंको ज्ञानावरणीयत्वका प्रतिषेध किया गया समझना चाहिये । अनन्तरबन्ध स्कन्धोंको ही ज्ञानावरणीयत्व प्राप्त होनेपर परम्पराबन्ध भी ज्ञानावरणीयवेदना होती है, यह जतलानेके लिये द्वितीय सूत्र की प्ररूपणा की गई है । जो अनन्तानन्त कर्म-पुद्गलस्कन्ध परस्परमें सम्बद्ध होकर शेष कर्मस्कन्धोंसे असम्बद्ध होते हुए जीवके द्वारा इतर स्कन्धोंसे सम्बन्धको प्राप्त होते हैं वे परम्पराबन्ध कहे जाते हैं । ये भी ज्ञानावरणीयवेदना स्वरूप होते हैं, यह उसका अभिप्राय है । इससे एक जीवके आश्रित सब ज्ञानावरणीय कर्म रूप पुद्गलस्कन्ध परस्पर समवेत होकर ज्ञानावरणीयवेदना स्वरूप होते हैं, इस एकान्तका निराकरण किया गया समझना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें जानना चाहिये ॥ ५ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्मके परम्पराबन्ध, अनन्तरबन्ध और तदुभयबन्धकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके उन बन्धोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

संग्रह नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अनन्तरबन्ध है ॥ ६ ॥

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय पहिलके ही समान दो प्रकारसे अर्थका कथन करना चाहिये ।

---

१ ताप्रतौ 'ति । एदेसि' इति पाठः । २ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-का-ताप्रतिषु 'अस्थि' इति पाठः । ३ अ-आ-ताप्रतिषु 'संबंधं' काप्रतौ 'संबंधा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परंपरबंधा ॥ ७ ॥

एत्थ वि पुव्वं व दोहि पयारेहि अत्थपरूवणा कायव्वा। तदुभयबंधा णत्थि। कुदो? एदासु चेव तिस्से अंतब्भावादो।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ८ ॥

जहा णाणावरणीयस्स संगहणयमस्सिदूण दोहि पयारेहि अत्थपरूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवणा कायव्वा।

उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा परंपरबंधा ॥ ९ ॥

अणंतरबंधा णत्थि णाणावरणीयवेयणा, परंपरबंधा चेव। कुदो? उदयमागदकम्मक्खंधादो चेव अण्णाणभावुवलंभादो। विदियत्थे अवलंबिज्जमाणे कधमेत्थ परूवणा कीरदे? वुच्चदे—एत्थ वि णाणावरणीयवेयणा परंपरबंधा चेव जीवदुवारेणेव सव्वेसिं कम्मक्खंधाणं बंधुवलंभादो। जीवदुवारेण विणा कम्मक्खंधाणमण्णोण्णेहि बंधो उवलंभदि त्ति चे? ण, तस्स वि अण्णोण्णबंधस्स जीवादो चेव समुप्पत्तिदंसणादो। कम्मइयवग्गणावत्थाए वि एसो अण्णोण्णबंधो उवलब्भदि त्ति चे? ण, एदस्स विसिट्ठस्स बंधस्स अणंताणंतेहि कम्मइयवग्गणक्खंधेहि णिप्फण्णस्स जीवादो चेव समुप्पत्तिदंसणादो। ण च

वह परम्पराबन्ध भी है ॥ ७ ॥

यहाँ भी पहिलेके ही समान दो प्रकार से अर्थकी प्ररूपणा करनी चाहिये। वह तदुभयबन्ध नहीं है, क्योंकि, इन दोनोंमें ही उसका अन्तर्भाव हो जाता है।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ८ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरण कर्मकी संग्रहनयकी अपेक्षा दो प्रकारसे प्ररूपणा की है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिए।

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना परम्पराबन्ध है ॥ ९ ॥

[इस नयकी अपेक्षा] ज्ञानावरणीयवेदना अनन्तरबन्ध नहीं है, परम्पराबन्ध ही है; क्योंकि, उदयमें आये हुए कर्मस्कन्धों से ही अज्ञानभाव पाया जाता है।

शंका—द्वितीय अर्थका अवलम्बन करनेपर यहाँ कैसे प्ररूपणा की जाती है?

समाधान—इस शंकाका उत्तर कहते हैं, द्वितीय अर्थका अवलम्बन करने पर भी ज्ञानावरणीयवेदना परम्पराबन्ध ही है,क्योंकि, जीवके द्वारा ही सब कर्मस्कन्धोंका बन्ध पाया जाता है।

शंका—जीवका आलम्बन लिये बिना भी कर्मस्कन्धोंका परस्पर बन्ध पाया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उस परस्परबन्धकी भी उत्पत्ति जीवसे ही देखी जाती है।

शंका—यह परस्परबन्ध कार्मण वर्गणाकी अवस्थामें भी पाया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अनन्तानन्त कार्मण वर्गणा रूप स्कन्धोंसे उत्पन्न इस विशिष्ट बन्धकी उत्पत्ति जीवसे ही देखी जाती है। अनन्तरबन्ध वेदना उदीर्ण होकर फलको प्राप्त हुए

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'वेयणादो', ताप्रतौ 'वेयणा [दो]' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अणंतरबंधा उदिण्णफलपत्तविवागा, परंपरबद्धाए उदिण्णफलपत्तविवागत्तुवलंभादो । ण च समुदयकज्जमेक्कस्स होदि, विरोहादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ १० ॥

सुगममेदं ।

सद्दणयस्स अवत्तव्वं ॥ ११ ॥

तिण्णं सद्दणयाणं विसए दव्वाभावादो, अणंतरबंधा-परंपरबंधा-तदुभयबंधा सद्दाणं पुधभूदअत्थपरूवयाणं[1] ण सद्दो अत्थदो य समासाभावादो वा ।

एवं वेयणअणंतरविहाणे त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

विपाकवाली नहीं है, क्योंकि, परम्पराबद्ध वेदनामें ही उदीर्णफलप्राप्तविपाक पाया जाता है । और समुदायके द्वारा किया गया कार्य एकका नहीं हो सकता, क्योंकि, उसमें विरोध है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ १० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

शब्द नयकी अपेक्षा वह अवक्तव्य है ॥ ११ ॥

कारण कि एक तो तीनों शब्द नयोंका विषय द्रव्य नहीं है । दूसरे अनन्तरबन्ध, परम्पराबन्ध और तदुभयबन्ध ये शब्द पृथक् पृथक् अर्थके वाचक होनेसे इनका शब्द और अर्थकी अपेक्षा समास नहीं हो सकता इसलिए वह इस नयकी अपेक्षा अवक्तव्य है

इस प्रकार वेदनाअनन्तरविधान अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

१ अ-आ-काप्रतिषु 'अत्थपरूवाणं', ताप्रतौ 'परूवणं ण (याणं)' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयणसण्णियासविहाणाणियोगद्दारं

वेयणसण्णियासविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं, अण्णहा अणुत्ततुल्लत्तपसंगादो।

जो सो वेयणसण्णियासो सो दुविहो—सत्थाणवेयणसण्णियासो चेव परत्थाणवेयणसण्णियासो चेव ॥ २ ॥

एदस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—अप्पिदेगकम्मस्स दव्व-खेत्त-काल-भावविसओ सत्थाणसण्णियासो णाम।[1] अट्ठकम्मविसओ परत्थाणसण्णियासो णाम। सण्णियासो णाम किं? 'दव्व-खेत्त-काल-भावेसु जहण्णुक्कस्सभेदभिण्णेसु एक्कम्हि णिरुद्धे[2] सेसाणि किमुक्कस्साणि किमणुक्कस्साणि किं जहण्णाणि किमजहण्णाणि वा पदाणि होंति त्ति जा परिक्खा सो सण्णियासो णाम। एवं सण्णियासो दुविहो चेव। सत्थाण-परत्थाणसंजोगेण

वेदनासंनिकर्षविधान अनुयोगद्वार अधिकारप्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है, क्योंकि इसके बिना अनुक्तके समान होनेका प्रसंग आता है।

जो वह वेदनासंनिकर्ष है वह दो प्रकार का है—स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष और परस्थानवेदनासंनिकर्ष ॥ २ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं, वह इस प्रकार है—किसी विवक्षित एक कर्मका जो द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव विषयक संनिकर्ष होता है वह स्वस्थानसंनिकर्ष कहा जाता है और आठों कर्मों विषयक संनिकर्ष परस्थानसंनिकर्ष कहलाता है।

शंका—संनिकर्ष किसे कहते हैं ?

समाधान—जघन्य व उत्कृष्ट भेदरूप द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भावोंमेंसे किसी एकको विवक्षित करके उसमें शेष पद क्या उत्कृष्ट हैं, क्या अनुत्कृष्ट हैं, क्या जघन्य हैं और क्या अजघन्य हैं, इस प्रकारकी जो परीक्षा की जाती है उसे संनिकर्ष कहते हैं। इस प्रकारसे संनिकर्ष दो प्रकारका ही है।

शंका—स्वस्थान और परस्थानके संयोग रूप भेद के साथ तीन प्रकारका संनिकर्ष क्यों नहीं होता ?

---

१ अप्रतौ 'परत्थाण णाम सण्णियासो णाम किं दव्व-', आप्रतौ 'परत्थाण णाम सण्णियासो णाम कि अत्थो वुच्चदे दव्व-', काप्रतौ परत्थाणसण्णियासो णाम किं दव्व- ताप्रतौ 'परत्थाणसण्णियासो णाम। किं दव्व-' इति पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'विरुद्धे', ताप्रतौ 'वि (णि) रुद्धे' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सह तिविहो सण्णियासो किण्ण जायदे ? ण एस दोसो, दुसंजोगस्स पादेक्कंतब्भावेण[1] तस्स पुधअणुवलंभादो ।

जो सो सत्थाणवेयणसण्णियासो सो दुविहो—जहण्णओ सत्थाणवेयणसण्णियासो चेव उक्कस्सओ सत्थाणवेयणसण्णियासो चेव ॥३॥

एवं सत्थाणवेयणसण्णियासो दुविहो चेव, जहण्णुक्कस्सेहि विणा तदियवियप्पाभावादो।

जो सो जहण्णओ सत्थाणवेयणसण्णियासो सो थप्पो ॥ ४ ॥

किमट्ठं थप्पो कीरदे ? दोण्णमक्कमेण परूवणोवायाभावादो । उक्कस्सो किण्ण थप्पो कीरदे ? ण एस दोसो, उक्कस्ससण्णियासे अवगदे[2] तत्तो तदुप्पत्तीए जहण्णसण्णियासो सुहेणावगम्मदि त्ति मणेणावहारिय तस्स थप्पभावाकरणादो । पच्छाणुपुव्वी णिरुद्धा त्ति वा सो थप्पो ण कीरदे ।

जो सो उक्कस्सओ सत्थाणवेयणसण्णियासो सो चउव्विहो—दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ॥ ५ ॥

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, दोनोंके संयोगका प्रत्येकमें अन्तर्भाव होनेसे वह पृथक् नहीं पाया जाता है ।

जो वह स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष है वह दो प्रकारका है—जघन्य स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष और उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष ॥ ३ ॥

इस प्रकारसे स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष दो प्रकारका ही है, क्योंकि, जघन्य और उत्कृष्टके सिवा तीसरा कोई भेद नहीं है ।

जो वह जघन्य स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष है उसे स्थगित किया जाता है ॥ ४ ॥

शंका—उसे स्थगित क्यों किया जा रहा है ?

समाधान—चूंकि दोनोंकी प्ररूपणा एक साथ नहीं की जा सकती है, अतः उसे स्थगित किया जा रहा है ।

शंका—उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्षको स्थगित क्यों नहीं किया जाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उत्कृष्ट संनिकर्षके परिज्ञात हो जानेपर उससे उत्पन्न होनेके कारण जघन्य संनिकर्षका ज्ञान सुखपूर्वक हो सकता है, ऐसा मनमें निश्चित करके उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्षको स्थगित नहीं किया गया है । अथवा, पश्चादानुपूर्वीकी विवक्षा होनेसे उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्षको स्थगित नहीं किया जाता है ।

जो वह उत्कृष्ट स्वस्थानवेदनासंनिकर्ष है वह चार प्रकारका है—द्रव्यसे, क्षेत्रसे, कालसे और भावसे ॥ ५ ॥

---

१ ताप्रतौ 'पादेक्कं तब्भावेण' इति पाठः । २ अ-आ-प्रत्योः 'सण्णियासो अवगदे', काप्रतौ 'सण्णियासो अवगम्मदे' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं चउव्विहो चेव उक्कस्ससण्णियासो, दव्व-खेत्त-काल-भावेहिंतो पुधभूदउक्कस्सस्स एत्थ वेयणाए अणुवलंभादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स[1] खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ६ ॥

जस्स णाणावरणीयदव्ववेयणा उक्कस्सा होदि तस्स जीवस्स णाणावरणीयखेत्तवेयणा किमुक्कस्सा चेव होदि आहो किमणुक्कस्सा चेव होदि त्ति एदं[2] पुच्छासुत्तं । एवं पुच्छिदे तस्स पुच्छंतस्स संदेहविणासणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ७ ॥

कुदो ? सत्तमाए पुढवीए चरिमसमयणेरइयम्मि पंचधणुस्सयउस्सेहम्मि उक्कस्सदव्वुवलंभादो । उक्कस्सदव्वसामियस्स खेत्तं संखेज्जाणि पमाणघणंगुलाणि । कुदो ? पंचधणुस्सदुस्सेहट्ठमभागविक्खंभखेत्ते समीकरणे कदे संखेज्जपमाणघणंगुलुवलंभादो । समुग्घादगदमहामच्छउक्कस्सक्खेत्तं पुण असंखेज्जाओ सेडीओ । कुदो ? अद्धट्ठमरज्जुआयामेण संखेज्जपदरंगुलेसु गुणिदेसु असंखेज्जसेडिमेत्तखेत्तुवलंभादो । एवं महामच्छउक्कस्सखेत्तं पेक्खिदूण णेरइयस्स उक्कस्सदव्वसामियस्स[3] उक्कस्सखेत्तमूणमिदि कट्टु णियमा खेत्तवेयणा अणुक्कस्सा त्ति भणिदं । होंता वि तत्तो असंखेज्जगुणहीणा, उक्कस्सदव्वसामि-

इस प्रकार उत्कृष्ट संनिकर्ष चार प्रकारका ही है, क्योंकि द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावसे पृथग्भूत उत्कृष्ट संनिकर्ष यहाँ वेदनामें नहीं पाया जाता ।

जिसके ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है, उसके वह क्षेत्रकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ६ ॥

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी द्रव्यवेदना उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरणीयकी क्षेत्रवेदना क्या उत्कृष्ट ही होती है अथवा अनुत्कृष्ट ही, इस प्रकार यह पृच्छासूत्र है । इस प्रकार पूछनेपर उस पूछनेवाले शिष्यका सन्देह नष्ट करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ७ ॥

क्योंकि, सातवीं पृथिवीमें पांचसौ धनुष ऊँचे अन्तिम समयवर्ती नारकीके उत्कृष्ट द्रव्य पाया जाता है । उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामीका क्षेत्र संख्यात प्रमाणघनांगुल मात्र होता है, क्योंकि, पांच सौ धनुष ऊंचे और उसके आठवें भागमात्र विष्कम्भवाले क्षेत्रका समीकरण करनेपर संख्यात प्रमाण घनांगुल उत्पन्न होते हैं । परन्तु समुद्घातको प्राप्त हुए महामत्स्यका उत्कृष्ट क्षेत्र असंख्यात जगश्रेणि प्रमाण है, क्योंकि, साढ़े सात राजु आयामसे संख्यात प्रतरांगुलोंको गुणित करनेपर असंख्यात जगश्रेणि प्रमाण क्षेत्र उपलब्ध होता है । इस प्रकार महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी नारकीका उत्कृष्ट क्षेत्र चूँकि हीन है, अतएव 'क्षेत्र वेदना नियमसे अनुत्कृष्ट होती है' ऐसा कहा है । ऐसी होती हुई भी वह उससे असंख्यातगुणी हीन है, क्योंकि, उत्कृष्ट

१ प्रतिषु 'तत्थ' इति पाठः । २ प्रतिषु 'एवं' इति पाठः । ३ अ-आ-काप्रतिषु 'सामित्तस्स', ताप्रतौ 'सामिस्स' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यस्स[1] उक्कस्सखेत्तेण महामच्छुक्कस्सखेत्ते भागे हिदे सेडीए असंखेज्जदिभागुवलंभादो। सत्तमपुढविचरिमसमयणेरइयस्स उक्कस्सदव्वसामियस्स[2] मुक्कमारणंतियस्स उक्कस्सखेत्ते गहिदे संखेज्जगुणहीणा किण्ण लब्भदे ? ण, मुक्कमारणंतियस्स उक्कस्ससंकिलेसाभावेण उक्कस्सजोगाभावेण य उक्कस्सदव्वसामित्तविरोहादो। मुक्कमारणंतियस्स उक्कस्ससंकिलेसो ण होदि त्ति कुदो णव्वदे ? एदम्हादो 'असंखेज्जगुणहीणा' त्ति सुत्तादो।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८ ॥

सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ९ ॥

जदि णेरइयचरिमसमए उक्कस्सट्ठिदिसंकिलेसो होज्ज तो कालदो वि णाणावरणीयवेयणा उक्कस्सा होज्ज, उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सट्ठिदिं मोत्तूण अण्णट्ठिदीणं बंधाभावादो। जदि चरिमसमए उक्कस्सट्ठिदिसंकिलेसो ण होदि तो णाणावरणीयवेयणा कालदो णियमा अणुक्कस्सत्तं पडिवज्जदे, चरिमसमए उक्कस्सट्ठिदिबंधाभावादो। उक्कस्सादो अणुक्कस्सं किं विसेसहीणं संखेज्जगुणहीणं ति पुच्छिदे तण्णिण्णयट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

द्रव्य सम्बन्धी स्वामीके उत्कृष्ट क्षेत्रका महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रमें भाग देनेपर जगश्रेणिका असंख्यातवां भाग उपलब्ध होता है।

शंका—जो सप्तम पृथिवीस्थ अन्तिम समयवर्ती नारकी उत्कृष्ट द्रव्यका स्वामी है और जो मारणन्तिक समुद्घातको कर चुका है उसके उत्कृष्ट क्षेत्रको ग्रहण करनेपर वह (क्षेत्रवेदना) संख्यातगुणी हीन क्यों नहीं पायी जाती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, मुक्त मारणान्तिक जीवके न तो उत्कृष्ट संक्लेश होता है और न उत्कृष्ट योग ही होता है; अतएव वह उत्कृष्ट द्रव्यका स्वामी नहीं हो सकता।

शंका—मुक्त मारणान्तिक जीवके उत्कृष्ट संक्लेश नहीं होता है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह 'असंख्यातगुणी हीन है इसी सूत्रसे जाना जाता है।

कालकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट ॥ ८ ॥

यह पृच्छासूत्र सुगम है।

उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ९ ॥

यदि उक्त नारक जीवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्लेश होता है तो कालकी अपेक्षा भी ज्ञानावरणीयवेदना उत्कृष्ट होती है, क्योंकि, उत्कृष्ट संक्लेशसे उत्कृष्ट स्थितिको छोड़कर अन्य स्थितियोंका बन्ध नहीं होता है और यदि अन्तिम समयमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्लेश नहीं होता है तो ज्ञानावरणीयवेदना कालकी अपेक्षा नियमतः अनुत्कृष्टताको प्राप्त होती है, क्योंकि, अन्तिम समयमें उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अभाव है। उत्कृष्टकी अपेक्षा वह अनुत्कृष्ट क्या विशेष हीन होती है या संख्यातगुणी हीन होती है, ऐसा पूछनेपर उसके निर्णयके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

१ काप्रतौ 'सामित्तयस्स' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'सामिस्स', आप्रतौ 'सामित्तस्स' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणा ॥ १० ॥

दुसमऊणादिवियप्पा किण्ण लब्भंते ? ण, णेरइयदुचरिमसमयम्मि उक्कस्सदव्वमिच्छिय उक्कस्ससंकिलेसे णियमिदम्मि उक्कस्सट्ठिदिं मोत्तूण अण्णट्ठिदीणं बंधाभावादो । ण च दुचरिमसमए उक्कस्सट्ठिदीए बंधीए[1] संतीए चरिमसमए समऊणत्तं मोत्तूण दुसमऊणत्तादिवियप्पो संभवदि, अधट्ठिदीए[2] दुवादिट्ठिदीणमक्कमेण गलणाभावादो ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ११ ॥

सुगममेदं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ १२ ॥

जदि दुचरिमसमयणेरइयो उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सविसेसपच्चएण उक्कस्साणुभागं बंधदि तो भाववेयणा उक्कस्सा होदि । अध णत्थि उक्कस्सविसेसपच्चओ तो णियमा अणुक्कस्सा त्ति भणिदं होदि । उक्कस्सं पेक्खिदूण अणुक्कस्सभावो छव्विहासु हाणीसु कत्थ होदि त्ति पुच्छिदे तण्णिण्णयत्थमुत्तरसुत्तं भणदि—

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा ॥ १३ ॥

उक्कस्सं पेक्खिदूण अणुक्कस्सभावो अणंतभागहीण-असंखेज्जभागहीण-संखेज्जभाग-

---

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय हीन होती है ॥ १० ॥

शंका—यहां दो समय हीन आदि विकल्प क्यों नहीं पाये जाते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, नारक भवके द्विचरम समयमें उत्कृष्ट द्रव्यका बन्ध हुआ ऐसा मान लेनेपर उत्कृष्ट संक्लेशके नियमित होनेपर वहां उत्कृष्ट स्थितिको छोड़कर अन्य स्थितियोंका बन्ध नहीं होता । और जब द्विचरम समयमें उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध हुआ तो चरम समयमें एक समय हीन विकल्पको छोड़कर दो समय हीन आदि विकल्पोंकी सम्भावना ही नहीं है, क्योंकि, अधःस्थिति गलनाके द्वारा एक साथ दो आदिक स्थितियोंका गलन नहीं हो सकता ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट ॥ ११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उत्कृष्ट भी होती है अनुत्कृष्ट भी ॥ १२ ॥

यदि द्विचरम समयवर्ती नारकी जीव उत्कृष्ट संक्लेशके द्वारा और उत्कृष्ट विशेष प्रत्ययके द्वारा उत्कृष्ट अनुभागको बाँधता है तो उसके भाव वेदना उत्कृष्ट होती है । यदि उसके उत्कृष्ट विशेष प्रत्यय नहीं है तो नियमसे अनुत्कृष्ट वेदना होती है, यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है । उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट भाव छह प्रकारकी हानियोंमेंसे किस हानिमें होता है, ऐसा पूछनेपर उसका निर्णय करने के लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट वेदना षट्स्थानपतित होती है ॥ १३ ॥

उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट भाव अनन्तभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातभाग-

---

१ काप्रतौ 'बंतीए' इति पाठः । २ अ-आ-ताप्रतिषु 'अवट्ठिदीए' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हीण-संखेज्जगुणहीण-असंखेज्जगुणहीण-अणंतगुणहीणसरूवेण[1] अवट्ठिदछट्ठाणेसु पदिदो होदि । कधमेक्कसंकिलेसादो असंखेज्जलोगमेत्तअणुभागछट्ठाणाणं बंधो जुज्जदे ? ण एस दोसो, एक्कसंकिलेसादो असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणसहिदअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणसहकारिकारणाणं भेदेण सहकारिकारणमेत्तअणुभागट्ठाणाणं बंधाविरोहादो । तेसिं छट्ठाणाणं णामणिद्देसट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

अणंतभागहीणा वा असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा अणंतगुणहीणा वा ॥ १४ ॥

णेरइयदुचरिमसमए उक्कस्ससंकिलेसेण अणंतभागहीणउक्कस्सविसेसपच्चएण अणंतभागहीणउक्कस्सअणुभागं बंधिय णेरइयचरिमसमए वट्टमाणस्स अणुभागो उक्कस्साणुभागादो अणंतभागहीणो । दुचरिमसमए उक्कस्ससंकिलेसेण चरिम-दुचरिमपक्खेवेहि ऊणमणुभागं बंधिय चरिमसमए वट्टमाणस्स सगुक्कस्साणुभागादो अणंतभागहाणी चेव । एवमंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तअणंतभागवड्ढिपक्खेवे जाव परिवाडीए हाइदूण बंधदि ताव अणंतभागहाणी चेव । पुणो पुव्विल्लअणंतभागवड्ढिपक्खेवेहि सह असंखेज्जभागवड्ढिपक्खेवे

हीन; संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन और अनन्तगुणहीन स्वरूपसे अवस्थित छह स्थानपतित होता है ।

शंका—एक संक्लेशसे असंख्यात लोक प्रमाण अनुभाग सम्बन्धी छह स्थानोंका बन्ध कैसे बन सकता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, एक संक्लेशसे, असंख्यात लोक प्रमाण छह स्थानोंसे सहित अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंके सहकारी कारणोंके भेदसे सहकारी कारणोंके बराबर अनुभागस्थानोंके बन्धमें कोई विरोध नहीं आता ।

उन छह स्थानोंके नामोंका निर्देश करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

वह अनन्तभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन या अनन्तगुणहीन होती है ॥ १४ ॥

नारक भवके द्विचरम समयमें अनन्तभागहीन उत्कृष्ट विशेष प्रत्यय संयुक्त उत्कृष्ट संक्लेशसे अनन्तभागहीन उत्कृष्ट अनुभागको बाँधकर नारक भवके चरम समयमें वर्तमान उक्त नारकीका अनुभाग उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा हीन होता है । द्विचरम समयमें उत्कृष्ट संक्लेशसे चरम और द्विचरम प्रक्षेपोंसे हीन अनुभागको बाँधकर चरम समयमें वर्तमान नारकी जीवके अपने उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अनन्तभागहानि ही होती है । इस प्रकार जब तक वह अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्तभागवृद्धि प्रक्षेपोंको परिपाटीक्रमसे हीन करके अनुभागको बाँधता है तब तक अनन्तभागहानि ही चालू रहती है । तत्पश्चात् पूर्वोक्त अनन्तभागवृद्धि प्रक्षेपोंके साथ असंख्यातभागवृद्धि प्रक्षेपोंको हीन करके अनुभागके

१ अप्रतौ -'हीणकमेण सरूवेण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हाइदूण बंधे उक्कस्साणुभागादो एसो अणुभागो असंखेज्जभागहीणो । पुणो तत्तो हेट्ठिमपक्खेवे परिहाइदूण बद्धे त्ति असंखेज्जभागहाणी चेव । एवमसंखेज्जभागहाणीए[1] कदंयाहियकंदयमेत्तट्ठाणाणि ओसरिदूण जाव बंधदि ताव णिरंतरमसंखेज्जभागहाणी चेव होदि । तत्तो हेट्ठा संखेज्जभागहाणी चेव जाव पढमदुगुणहाणिं ण पावेदि । तम्हि पत्ते[2] य संखेज्जगुणहाणी होदि । एवमेदेण विहाणेण ओदारेदव्वं जाव उक्कस्ससंखेज्जगुणहीणट्ठाणं पत्तं त्ति । तदो समयाविरोहेण हेट्ठा ओदरिदूण[3] पढमसंखेज्जगुणहीणट्ठाणं होदि । एवमसंखेज्जगुणहीणकमेण ताव ओदारेदव्वं जाव चरिमअसंखेज्जगुणहीणट्ठाणं पत्तं त्ति । पुणो हेट्ठिमउव्वंके बद्धे अणंतगुणहीणट्ठाणं होदि । एवमेत्तो प्पहुडि अणंतगुणहीणं होदूण ताव गच्छदि जाव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि ओसरिदूण बद्धाणि त्ति ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ १५ ॥

सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

णियमा अणुक्कस्सा ॥ १६ ॥

उक्कस्सा ण होदि, महामच्छम्मि उक्कस्सओगाहणम्मि अद्धट्ठमरज्जुआयामेण सत्तमपुढविं पडि मुक्कमारणंतियम्मि गुणिदुक्कस्ससंकिलेसाभावेण दव्वस्स उक्कस्सत्तविरोहादो ।

बाँधनेपर उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा यह अनुभाग असंख्यातभागहीन होता है । पश्चात् उससे नीचेके प्रक्षेपोंको हीन करके बाँधनेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है । इस प्रकार जब तक वह असंख्यातभागहानिसे एक काण्डकसे अधिक काण्डक प्रमाण स्थान नीचे उतरकर अनुभाग बाँधता है तब तक निरन्तर असंख्यातभागहानि ही होती है । किन्तु उसके नीचे प्रथम दुगुणहानिके प्राप्त होने तक संख्यातभागहानि ही होती है और दुगुणहानिके प्राप्त होनेपर संख्यातगुणहानि होती है । इस प्रकार इस विधिसे उत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थानके प्राप्त होने तक उतारना चाहिये । तत्पश्चात् समयाविरोधसे नीचे उतरकर प्रथम असंख्यातगुणहीन स्थान होता है । इस प्रकार असंख्यातगुणहीन क्रमसे तब तक उतारना चाहिये जब तक कि अन्तिम असंख्यातगुणहीन स्थान प्राप्त नहीं होता है । पश्चात् अधस्तन ऊर्वंकका बन्ध होनेपर अनन्तगुणहीन स्थान होता है । इस प्रकार यहां से लेकर अनन्तगुण हीन होकर तब तक जाता है जब तक कि असंख्यात लोक प्रमाण छह स्थान नीचे उतर कर स्थान बँधते हैं ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके वह द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट ॥ १५ ॥

यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट होती है ॥ १६ ॥

वह उत्कृष्ट नहीं होती है, क्योंकि, उत्कृष्ट अवगाहनावाले महामत्स्यके साढ़ेसात राजु प्रमाण आयामसे सातवीं पृथिवीके प्रति मारणान्तिक समुद्घातके करनेपर वहाँ गुणित उत्कृष्ट

१ ताप्रतौ 'बद्धे वि असंखेजभागहाणीए' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'पत्तेयासंखेज्ज' इति पाठः । ३ अप्रतौ 'ओदारिय', काप्रतौ त्रुटितोऽत्र जातः पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ण च सत्तमपुढविणेरइयचरिमसमयम्मि उक्कस्सजोगसंकिलेसेण गुणिदभावणिबंधणेण जादउक्कस्सदव्वं महामच्छम्मि होदि, विरोहादो। ण च कारणेण विणा कज्जमुप्पज्जदि, अइप्पसंगादो। तम्हा दव्ववेयणा अणुक्कस्से त्ति भणिदं।

चउट्ठाणपदिदा—असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ १७ ॥

उक्कस्सखेत्तसामिदव्ववेयणा णियमेण अणुक्कस्सभावमुवगया सगओघुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण कधं होदि त्ति पुच्छिदे चउट्ठाणपदिदा त्ति णिद्दिट्ठं। काणि ताणि चउट्ठाणाणि त्ति भणिदे तेसिं णामणिद्देसो कदो अणंतभागहीण-अणंतगुणहीणपडिसेहट्ठं। एत्थ ताव चदुण्णं हाणीणं परूवणा कीरदे। तं जहा—एगो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढविणेरइओ तेत्तीसाउट्ठिदीओ[1] सगभवट्ठिदीए चरिमसमए दव्वमुक्कस्सं करिय कालं कादूण तसकाइयेसु एइंदिएसु च अंतोमुहुत्तमच्छिय महामच्छो जादो, पज्जत्तयदो होदूण अंतोमुहुत्तेण अद्धट्ठमरज्जुआयामपमाणं मारणंतियं कादूण उक्कस्सखेत्तसामी जादो। तक्काले तस्स दव्वमोघुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण असंखेज्जभागहीणं होदि। पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागं विरलेदूण ओघुक्कस्सदव्वं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स णट्ठदव्व-

संक्लेशका अभाव होनेसे उत्कृष्ट द्रव्यका सद्भाव माननेमें विरोध है। और सातवीं पृथिवीमें स्थित नारकीके चरम समयमें गुणित भावके कारणभूत उत्कृष्ट योग व संक्लेशसे जो उत्कृष्ट द्रव्य होता है वह महामत्स्यके सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा होनेमें विरोध आता है। कारणके बिना कहीं भी कार्यकी उत्पत्ति नहीं होती है, क्योंकि, वैसा होनेपर अतिप्रसंग दोष आता है। इसी कारण द्रव्यवेदना अनुत्कृष्ट होती है ऐसा कहा गया है।

वह अनुत्कृष्ट द्रव्यवेदना असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन अथवा असंख्यातगुणहीन इन चार स्थानोंमें पतित है ॥ १७ ॥

उत्कृष्ट क्षेत्रके स्वामीकी द्रव्यवेदना नियमसे अनुत्कृष्ट भावको प्राप्त होकर अपने सामान्य उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा कैसी होती है, ऐसा पूछनेपर 'वह चतुःस्थानपतित होती है' ऐसा सूत्रमें निर्देश किया गया है। वे चतुःस्थान कौनसे हैं, ऐसा पूछनेपर अनन्तभागहीन और अनन्तगुणहीन इन दो स्थानोंका प्रतिषेध करनेके लिये उन चार स्थानोंके नामोंका निर्देश किया गया है। यहाँ पहिले चार हानियोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—एक गुणितकर्मांशिक तेतीस सागरोपम प्रमाण आयुःस्थितिवाला सातवीं पृथिवीका नारकी अपनी भवस्थितिके अन्तिम समयमें द्रव्यको उत्कृष्ट करके मरणको प्राप्त हो त्रसकायिक और एकेन्द्रियोंमें अन्तर्मुहूर्त तक रहकर महामत्स्य हुआ। वह अन्तर्मुहूर्तमें पर्याप्त होकर साढ़ेसात राजु आयाम प्रमाण मारणान्तिक समुद्घातकोकरके उत्कृष्ट क्षेत्रका स्वामी हुआ। उस समय उसका द्रव्य सामान्य उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातवेंभागहीन होता है, क्योंकि पल्योपमके असंख्यातवें भागको विरलितकर ओघ उत्कृष्ट द्रव्यको

१ प्रतिषु णेरइयतेत्तिसाउट्ठिदीओ इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पमाणं पावदि । तत्थ एगखंडं णट्ठं । सेसबहुखंडाणि उक्कस्सखेत्तं कादूणच्छिद[1]महामच्छस्स उक्कस्सदव्वं होदि । पुणो एदम्हादो दव्वादो एग-दोपरमाणुआदिं कादूण ऊणियअसंखेज्जभागहाणिपरूवणा तात्र परूवेयव्वा जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जेण उक्कस्सदव्वे खंडिदे तत्थ एगखंडं परिहीणे त्ति । पुणो वि एगादिपरमाणुहाणिं कादूण ताव णेयव्वं जाव ओघुक्कस्सदव्वमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदूण तत्थ एगखंडं णट्ठं ति । ताधे असंखेज्जभागहाणीए अंतं[2] [होदूण]संखेज्जभागहाणीए च आदी जादा । एत्तो प्पहुडि संखेज्जभागहाणी चेवहोदूण गच्छदि जाव रूवाहियमुक्कस्सदव्वस्स अद्धं चेट्ठिदं ति । पुणो तत्तो एगपरमाणुहाणीए जादाए दुगुणहाणी होदि । संपहि संखेज्जगुणहाणीए आदी जादा । पुणो उक्कस्सदव्वं तिण्णि खंडाणि कादूण तत्थ एगखंडेण सह उक्कस्सखेत्ते कदे दव्वं संखेज्जगुणहीणं होदि । पुणो उक्कस्सदव्वं चत्तारि खंडाणि कादूण तत्थ एगखंडेण सह उक्कस्सखेत्ते कदे दव्वं संखेज्जगुणहीणमेव होदि । एवं णेयव्वं जाव उक्कस्सदव्वं उक्कस्ससंखेज्जमेत्तखंडाणि कादूण तत्थ एगखंडेण सह उक्कस्सखेत्तं कादूण ट्ठिदो त्ति । पुणो वि उवरि एवं जाणिदूण णेयव्वं जाव उक्कस्सदव्वं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडिदूण तत्थ एगखंडं रूवाहियं चेट्ठिदं ति । पुणो तमेगपरमाणुणा ऊणं करिय उक्कस्सखेत्ते कदे असंखे-

---

समखण्ड करके देनेपर एक एक अंकके प्रति नष्ट द्रव्यका प्रमाण प्राप्त होता है । उसमेंसे वहाँ एक खण्ड नष्ट हुआ है, शेष बहुखण्ड प्रमाण उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित महामत्स्यका उत्कृष्ट द्रव्य होता है । पुनः इस द्रव्यमेंसे एक दो परमाणुओं लेकर हीन करते हुए असंख्यातभागहानिकी प्ररूपणा तब तक करनी चाहिये जब तक कि उत्कृष्ट द्रव्यको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खण्ड हीन नहीं हो जाता है । फिर भी एक आदिक परमाणुओंकी हानिको करके तब तक ले जाना चाहिये जब तक कि ओघ उत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करने पर उसमेंसे एक खण्ड प्रमाण नष्ट नहीं हो जाता है । उस समय असंख्यातभागहानिका अन्त होकर संख्यातभागहानिका प्रारम्भ होता है ।

यहांसे लेकर संख्यातभागहानि ही होकर जाती है जब तक कि उत्कृष्ट द्रव्यका एक अधिक आधा भाग स्थित रहता है । फिर उसमेंसे एक परमाणुकी हानि होनेपर दुगुणहानि होती है । अब संख्यातगुणहानिका प्रारम्भ हो जाता है । पुनः उत्कृष्ट द्रव्यके तीन खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डके साथ उत्कृष्ट क्षेत्रके करनेपर द्रव्य संख्यातगुणा हीन होता है । पुनः उत्कृष्ट द्रव्यके चार खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डके साथ उत्कृष्ट क्षेत्रके करनेपर द्रव्य संख्यातगुणा हीन ही होता है । इस प्रकारसे उत्कृष्ट द्रव्यके उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डके साथ उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित होने तक ले जाना चाहिये । फिर भी आगे इसी प्रकारसे जानकर उत्कृष्ट द्रव्यको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक अधिक एक खण्डके स्थित होने तक ले जाना चाहिये । तत्पश्चात् उसे एक परमाणुसे हीन करके उत्कृष्ट क्षेत्रके करनेपर असंख्यातगुणहानि होती है ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'अच्छिदं' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'अणंतं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्जगुणहाणी होदि । एत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहीणं होदूण दव्वं गच्छदि जाव तप्पाओग्गपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण ओघुक्कस्सदव्वं खंडिय तत्थ एगखंडेण सह उक्कस्सखेत्तं कादूण ट्ठिदो त्ति । एदं जहण्णदव्वं केण लक्खणेण आगदस्स होदि त्ति भणिदे एगो जीवो खविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण विवरीयगमणपाओग्गणिव्वियप्पकालावसेसे विवरीदं गंतूण महामच्छेसु उप्पज्जिय उक्कस्सखेत्तं कादूण अच्छिदो तस्स होदि । एत्तो हेट्ठा एदं दव्वं ण हायदि, उक्कस्सदव्वादो णिव्वयप्पमसंखेज्जगुणहीणत्तमुवणमिय ट्ठिदत्तादो । जम्हि जम्हि सुत्ते दव्वं चउट्ठाणपदिदमिदि भणिदं तम्हि तम्हि एसो एत्थ उत्तकमो अवहारिय परूवेदव्वो ।

तस्स कालदो किं उक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ १८ ॥

एदं पुच्छासुत्तं सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ १९ ॥

जदि उक्कस्सखेत्तं कादूण ट्ठिदमहामच्छो उक्कस्ससंकिलेसं गच्छदि तो णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सिया चेव होदि, चरिमट्ठिदिपाओग्गपरिणामेसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिदेसु तत्थ चरिमखंडपरिणामेहि उक्कस्सट्ठिदिं मोत्तूण अण्णट्ठिदीणं बंधाभावादो । अह चरिमखंडपरिणामे मोत्तूण जदि अण्णेहि परिणामेहि ट्ठिदिं बंधदि

यहांसे लेकर तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे ओघ उत्कृष्ट द्रव्यको खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डके साथ उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित होने तक द्रव्य असंख्यातगुणा हीन होकर जाता है ।

शंका—यह जघन्य द्रव्य किस स्वरूपसे आगत जीवके होता है ?

समाधान—ऐसा पूछे जानेपर उत्तरमें कहते हैं कि जो एक जीव क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके विपरीत गमनके योग्य निर्विकल्प कालके शेष रहनेपर विपरीत गमन करके महामत्स्योंमें उत्पन्न होकर उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित है उसके उक्त जघन्य द्रव्य होता है ।

इसके नीचे यह द्रव्य हीन नहीं होता है, क्योंकि, वह उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा निर्विकल्प असंख्यातगुणी हीनताको प्राप्त होकर स्थित है । जिस जिस सूत्रमें 'द्रव्य चतुःस्थानपतित है' ऐसा कहा गया है उस उस सूत्रमें यहाँ कहे गये इस क्रमका निश्चय करके प्ररूपणा करनी चाहिये ।

उसके उक्त वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥१८॥

यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ १९ ॥

यदि उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित महामत्स्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होता है तो ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट ही होती है, क्योंकि, अन्तिम स्थितिके योग्य परिणामोंको पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर उनमें अन्तिम खण्ड सम्बन्धी परिणामोंके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिको छोड़कर अन्य स्थितियोंका बन्ध नहीं होता और यदि वह अन्तिम खण्ड सम्बन्धी परिणामोंको छोड़कर अन्य परिणामोंके द्वारा स्थितिको बाँधता है तो उक्त वेदना कालकी

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तो अणुक्कस्सा होदि, तेहि उक्कस्सट्ठिदी चेव बज्झदि त्ति णियमाभावादो।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा—असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ॥ २० ॥

किमट्ठं तिण्णं हाणीणं णामणिद्देसो कीरदे? अणंतभागहाणि-असंखेज्जगुणहाणि-अणंतगुणहाणीयो कालम्मि णत्थि त्ति जाणावणट्ठं। तत्थ ताव तासिं हाणीणं सरूवपरूवणं कस्सामो। तं जहा—उक्कस्सखेत्तं कादूण अच्छिदमहामच्छेण तीसं सागरोवमकोडाकोडीसु समऊणासु पबद्धासु णाणावरणीयकालवेयणा अणुक्कस्सा होदि, ओघुक्कस्सट्ठिदिं पेक्खिदूण समऊणत्तादो। एदिस्से हाणीए को भागहारो होदि? उक्कस्सट्ठिदी चेव। कुदो? उक्कस्सट्ठिदिं विरलेदूण तं चेव समखंडं कादूण दिण्णे रूवं पडि एगेगरूवुवलंभादो। पुणो उक्कस्सखेत्तं कादूणच्छिदमहामच्छेण दुसमऊणुकस्साए ट्ठिदीए[1] पबद्धाए असंखेज्जभागहाणी होदि। पुणो तेणेव तिसमऊणुकस्सट्ठिदीए पबद्धाए असंखेज्जभागहाणी चेव होदि। एवमसंखेज्जभागहाणी होदूण ताव गच्छदि जाव उक्कस्सखेत्तं[2] कादूणच्छिदमहामच्छेण तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ जहण्णपरित्तासंखेज्जेण

अपेक्षा अनुत्कृष्ट होती है, क्योंकि, उन परिणामोंके द्वारा उत्कृष्ट स्थिति ही बँधती है; ऐसा नियम नहीं है।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन या संख्यातगुणहीन, इन तीन स्थानोंमें पतित है ॥ २० ॥

शंका—तीन हानियों के नामोंका निर्देश किसलिये किया जारहा है?

समाधान—कालमें अनन्तभागहानि, असंख्यातगुणहानि और अनन्तगुणहानि; ये तीन हानियाँ नहीं है, इसके ज्ञापनार्थ उन तीन हानियोंका नाम निर्देश किया गया है।

अब सर्व प्रथम उन हानियोंके स्वरूपकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकारसे—उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित महामत्स्यके द्वारा एक समय कम तीस कोड़ीकोड़ी सागरोपम प्रमाण स्थितियोंके बांधे जानेपर ज्ञानावरणीयकी कालवेदना अनुत्कृष्ट होती है, क्योंकि, ओघ उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा वह एक समय कम है।

शंका—इस हानिका भागहार क्या है?

समाधान—उसका भागहार उत्कृष्ट स्थिति ही, है, क्योंकि, उत्कृष्ट स्थितिका विरलन करके उसी को समखण्ड करके देनेपर प्रत्येक अंकके प्रति एक एक अंक पाया जाता है।

पुनः उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित हुए महामत्स्यके द्वारा दो समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर असंख्यातभागहानि होती है। फिर उसी महामत्स्यके द्वारा तीन समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जाने पर असंख्यातभागहानि ही होती है। इस प्रकार असंख्यातभागहानि होकर तब तक जाती है जब तक कि उत्कृष्ट क्षेत्रको करके स्थित हुए महामत्स्यके द्वारा तीस कोड़ाकोड़ि

१ अ-आ-काप्रतिषु '-णुकस्साट्ठिदीए', ताप्रतौ '-णुकस्सट्ठिदीए' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'उक्कस्सेण खेत्तं' इति पाठः।

खंडेदूण तत्थ एगखंडेण ऊणउक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए वि असंखेज्जभागहाणी चेव होदि । तत्तो प्पहुडि एगेगसमयपरिहाणीए बंधाविज्जमाणे[1] वि असंखेज्जभागहाणी[2] चेव होदि। पुणो एवं गंतूण उक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडेण परिहीणउक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए संखेज्जभागपरिहाणी होदि । एत्तो प्पहुडि संखेज्जभागपरिहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव एगसमयाहियमद्धं चेट्ठिदं ति । पुणो तत्तो एगसमयपरिहीणट्ठिदीए पबद्धाए दुगुणहाणी होदि । एत्तो प्पहुडि संखेज्जगुणहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव सत्तमपुढविपाओग्गअंतोकोडाकोडि त्ति । णवरि खेत्तं उक्कस्समेवे त्ति सव्वत्थ वत्तव्वं ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २१ ॥

सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ २२ ॥

तदुक्कस्सखेत्तमहामच्छेण उक्कस्ससंकिलिसेण उक्कस्सविसेसपच्चएण[3] जदि उक्कस्साणुभागो बद्धो तो खेत्तेण सह भावो वि उक्कस्सो होज्ज। एदम्हादो अण्णस्स उक्कस्सखेत्तसामिजीवस्स भावो अणुक्कस्सो चेव, उक्कस्सविसेसपच्चयाभावादो ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा ॥ २३ ॥

सागरोपमोंको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित करनेपर उनमें एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट स्थिति बांधी जाती है तब तक असंख्यातभागहानि ही होती है। वहां से लेकर एक एक समयकी हानि युक्त स्थितिके बांधनेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है। पश्चात् इसी प्रकारसे जाकर [उत्कृष्ट स्थितिको] उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके उसमें एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेपर संख्यातभागहानि होती है। यहांसे लेकर संख्यातभागहानि ही होकर जाती है जब तक उसका एक समय अधिक अर्ध भाग स्थित रहता है। तत्पश्चात् उसमेंसे एक समय हीन स्थितिके बांधे जानेपर दुगुणी हानि होती है। यहांसे लेकर सातवीं पृथिवीके योग्य अन्तःकोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण स्थिति बन्धके प्राप्त होने तक संख्यातगुणहानि ही होकर जाती है। विशेष इतना है कि क्षेत्र उत्कृष्ट ही रहता है, ऐसा सर्वत्र कहना चाहिये ।

उसके उक्त वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २१ ॥

यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ २२ ॥

उक्त उत्कृष्ट क्षेत्रके स्वामी महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट विशेष प्रत्यय रूप उत्कृष्ट संक्लेशसे यदि उत्कृष्ट अनुभाग बाँधा गया है तो क्षेत्रके साथ भाव भी उत्कृष्ट हो सकता है। इससे भिन्न उत्कृष्ट क्षेत्रके स्वामी जीवका भाव अनुत्कृष्ट ही होता है, क्योंकि, उसके उत्कृष्ट विशेष प्रत्ययका अभाव है।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट छह स्थानोंमें पतित है ॥ २३ ॥

---

१ अ-आप्रत्योः 'बद्धाविज्जमाणे', का-ताप्रत्योः 'वड्डाविज्जमाणे' इति पाठः । २ अ-का-ताप्रतिषु 'असंखेजहाणी', आप्रतौ 'असंखे०हाणी' इति पाठः । ३ अ-आ-काप्रतिषु 'विसेसणपच्चएण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एत्थ उक्कस्सदव्वे णिरुद्धे जहा भावस्स छट्ठाणपदिदत्तं परूविदं तहा एत्थ वि णिस्सेसं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २४ ॥

एत्थ उक्कस्सपदआदिट्ठिदकिंसद्दो अणुक्कस्सपदे वि जोजेयव्वो । सेसं सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ २५ ॥

गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागदचरिमसमयणेरइएण कयउक्कस्सदव्वेण उक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए उक्कस्सकालवेयणाए सह दव्वं पि उक्कस्सं होदि । उक्कस्सकालेण सह एगादिपरमाणुपरिहीणउक्कस्सदव्वे कदे दव्ववेयणा अणुक्कस्सा होदि ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा ॥ २६ ॥

तं जहा—उक्कस्सकालसामिणो[1] एगपदेसूणउक्कस्सदव्वे कदे दव्वमणंतभागहीणं होदि । तेणेव दुपदेसूणुक्कस्सदव्वसंचए कदे दव्वमणंतभागहीणं चेव होदि । तिपदेसूणुक्कस्सदव्वसंचए कदे वि अणंतभागहीणं चेव होदि । एवं ताव उक्कस्सकालसामिदव्वमणंतभागहाणीए गच्छदि जाव जहण्णपरित्ताणंतेण उक्कस्सदव्वं खंडेदूण तत्थ एगखंडेण

यहाँ उत्कृष्ट द्रव्यकी विवक्षा होनेपर जिस प्रकार भावके छह स्थानोंमें पतित होनेकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार यहाँपर भी उसकी पूर्ण रूपसे प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके वह द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २४ ॥

यहाँ उत्कृष्ट पदके आदिमें स्थित 'किं' शब्दको अनुत्कृष्ट पदमें भी जोड़ना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ २५ ॥

जो गुणितकर्मांशिक स्वरूपसे आया है और जिसने द्रव्यको उत्कृष्ट किया है उस अन्तिम समयवर्ती नारक जीवके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर उत्कृष्ट काल वेदनाके साथ द्रव्य भी उत्कृष्ट होता है । तथा उत्कृष्ट कालके साथ एक आदिक परमाणुसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यके करनेपर द्रव्य वेदना अनुत्कृष्ट होती है ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट वेदना पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ २६ ॥

वह इस प्रकारसे – उत्कृष्ट कालवेदनाके स्वामी द्वारा एक प्रदेश कम उत्कृष्ट द्रव्यके करनेपर यह द्रव्य अनन्तवें भागसे हीन होता है । उक्त जीवके द्वारा ही दो प्रदेश कम उत्कृष्ट द्रव्यका संचय करनेपर द्रव्य अनन्तभागहीन ही होता है । तीन प्रदेश कम उत्कृष्ट द्रव्यका संचय करनेपर भी द्रव्य अनन्तभागहीन ही होता है । इस प्रकार उत्कृष्ट कालवेदनाके स्वामीका द्रव्य तब तक अनन्तभागहानिरूप होकर जाता है जब तक कि वह उत्कृष्ट द्रव्यको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित

१ अ-आ-का-ताप्रतिषु 'सामिओ' इति पाठः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

परिहीणं ति। पुणो हेट्ठा वि अणंतभागहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सअसंखेज्जेण उक्कस्सदव्वं खंडेदूण तत्थ एगखंडेण परिहीणउक्कस्सदव्वं ति। तत्तो प्पहुडि असंखेज्जभागहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सदव्वं उक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थेगखंडेण परिहीणुक्कस्सदव्वे त्ति। तत्तो प्पहुडि संखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सदव्वस्स[1] अद्धं चेट्ठिदं ति। तत्तो प्पहुडि संखेज्जगुणहाणीए णेदव्वं जाव उक्कस्सदव्वं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडेदूण एगखडं चेट्ठिदं ति। तत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सदव्वस्स तप्पाओग्गो[2] पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो भागहारो जादो त्ति। णवरि सव्वत्थ[3] कालो उक्कस्सो चेवे त्ति वत्तव्वं।

संपहि[4] सव्वजहण्णदव्वपरूवणं कस्सामो। तं जहा— खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि सम्मत्तकंदयाणि अणंताणुबंधिविसंजोयण[5]-कंदयाणि च कादूण पुव्वकोडाउअमणुस्सेसु उववण्णो। गब्भादिअट्ठवस्सिओ संजमं पडिवण्णो। तदो देसूणपुव्वकोडिं [6]संजमगुणसेडिणिज्जरं करेमाणो अंतोमुहुत्तावसेसे संसारे मिच्छत्तं गंतूण णाणावरणीयस्स उक्कस्सओ ट्ठिदिबंधो जादो। तस्स कालवेयणा

करके उसमेंसे एक खण्डसे हीन नहीं हो जाता है। फिर नीचे भी अनन्तभागहानि ही होकर उत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यके होने तक जाती है। वहांसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यके होने तक असंख्यातभागहानि ही होकर जाती है। यहांसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यका अर्ध भाग स्थित होने तक संख्यातभागहानि होकर जाती है। पश्चात् वहांसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डके स्थित होने तक संख्यातगुणहानिसे ले जाना चाहिये। यहांसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यका तत्प्रायोग्य पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग भागहार होने तक असंख्यातगुणहानि ही होकर जाती है। विशेषता यह है कि सर्वत्र काल उत्कृष्ट ही रहता है, ऐसा कहना चाहिये।

अब सर्वजघन्य द्रव्यकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है— क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण सम्यक्त्वकाण्डकों व संयमासंयमकाण्डकोंको, आठ संयमकाण्डकों व अनन्तानुबन्धिविसंयोजन काण्डकोंको करके पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ गर्भसे से लेकर आठ वर्षका होकर संयमको प्राप्त हुआ। पश्चात् कुछ कम पूर्वकोटि काल तक संयमगुणश्रेणिनिर्जराको करते हुए उसके संसारके अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर मिथ्यात्वको प्राप्त होकर ज्ञानावरणीयका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध हुआ। उसके कालवेदना उत्कृष्ट होती है। परन्तु द्रव्यवेदना

१ ताप्रतौ 'दव्वं' इति पाठः। २ का-ता प्रत्योः 'पाओग्ग-' इति पाठः। ३ अ-आ-काप्रतिषु 'सव्वत्थो' इति पाठः। ४ अ-आ-का-ताप्रतिषु 'संपहि' इत्येतत्पदं नोपलभ्यते, मप्रतौ तूपलभ्यते तत्। ५ अ-आ-काप्रतिषु 'संजोयण' इति पाठः। ६ अ-आ-ताप्रतिषु 'देसूणपुव्वकोडिसंजम-', काप्रतौ 'देसूणपुव्वकोडाउअमणुस्सेसु उववण्णो संजम-' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

उक्कस्सा[1] । दव्ववेयणा पुण णिव्वियप्पअसंखेज्जगुणहीणा । णवरि सम्मत्त–संजमासंजम-कंदयाणि केत्तिएण वि ऊणा त्ति वत्तव्वं, अण्णहा मिच्छत्तगमणाणुववत्तीदो । दव्ववेयणा अणंतगुणहीणा किण्ण जायदे ? ण, अणंतगुणहीणजोगाभावादो ।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २७ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ २८ ॥

उक्कस्सखेत्तसामिणा[2] महामच्छेण उक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए कालेण सह खेत्तं पि उक्कस्सं होदि । उक्कस्सखेत्तमकादूण उक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए खेत्तवेयणा अणुक्कस्सा होदि ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ २९ ॥

तं जहा—महामच्छेण एगपदेसूणउक्कस्सोगाहणाए सत्तमपुढविं पडि मुक्कमारणंतिएण उक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए असंखेज्जभागहीणं खेत्तं[3] । एवं मुहपदेसम्मि दो-तिण्णि-पदेसप्पहुडि जाव उक्कस्सेण संखेज्जपदरंगुलमेत्तपदेसा झीणा त्ति । तदो एगागास-पदेसूणअद्धट्ठमरज्जूणं मारणंतियं मेल्लाविय उक्कस्सट्ठिदिं बंधाविय णेयव्वं जाव

विकल्परहित असंख्यातगुणी हीन होती है । विशेष इतना है कि सम्यक्त्वकाण्डक और संयमासंयमकाण्डक कुछ कम होते हैं, ऐसा कहना चाहिए क्योंकि, इसके बिना मिथ्यात्वको प्राप्त होना सम्भव नहीं है ।

शंका—द्रव्यवेदना अनन्तगुणी हीन क्यों नहीं होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अनन्तगुणे हीन योगका अभाव है ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥२७॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ २८ ॥

उत्कृष्ट क्षेत्रके स्वामी महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर कालके साथ क्षेत्र भी उत्कृष्ट है । उत्कृष्ट क्षेत्रको न करके उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर क्षेत्रवेदना अनुत्कृष्ट होती है ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट वेदना चार स्थानोंमें पतित है ॥२९॥

वह इस प्रकारसे—एक प्रदेशसे हीन उत्कृष्ट अवगाहनाके साथ सातवीं पृथिवीके प्रति मारणान्तिक समुद्घातको करनेवाले महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिके बांधे जानेपर उसका क्षेत्र असंख्यातवें भागसे हीन होता है । इस प्रकार मुखस्थानमें दो तीन प्रदेशोंसे लेकर उत्कृष्टरूपसे संख्यात प्रतरांगुल प्रदेशोंके हीन होने तक [उसका क्षेत्र असंख्यातवें भागसे हीन रहता है], तत्पश्चात् एक आकाश प्रदेशसे हीन साढ़े सात राजु मात्र मारणान्तिक समुद्घातको कराकर व

---

१ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-काप्रतिषु 'उक्कस्स-', ताप्रतौ 'उक्कस्स-' इति पाठः । २ अ-आ-का-ताप्रतिषु 'सामिणो' इति पाठः । ३ अ-आप्रत्योः 'हीणक्खेत्तं', काप्रतौ 'हीणखेत्तं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्कस्सखेत्तमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडेण परिहीणउक्कस्सक्खेत्तं ट्ठिदं ति। तत्तो प्पहुडि हेट्ठा संखेज्जभागहाणीए गच्छदि जाव उक्कस्सखेत्तस्स दोरूवभागहारो जादो त्ति। तदो प्पहुडि हेट्ठा संखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सखेत्तं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडेदूण एक्कखंडं ट्ठिदं ति। तदो प्पहुडि असंखेज्जगुणहीणं होदूण गच्छदि जाव सत्थाणमहामच्छउक्कस्सओगाहणा त्ति। पुणो वि महामच्छोगाहणमेगेगपदेसेहि ऊणं करिय असंखेज्जगुणहाणीए णेदव्वं जाव सित्थमच्छस्स सव्वजहण्णसत्थाणोगाहणो[1] त्ति। पुणो सव्वपच्छिमवियप्पो वुच्चदे। तं जहा — सित्थमच्छेण सव्वजहण्णोगाहणाए वट्टमाणेण णाणावरणुक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए कालवेयणा उक्कस्सा जादा। खेत्तवेयणा पुण णिव्वियप्पअसंखेज्जगुणहीणत्तमुवगया।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ३० ॥

सुगमं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ३१ ॥

जदि उक्कस्सट्ठिदीए सह उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सविसेसपच्चएण उक्कस्साणुभागो पबद्धो तो कालवेयणाए सह भावो वि उक्कस्सो होदि। उक्कस्सविसेसपच्चयाभावे अणुक्कस्सो चेव।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा ॥ ३२ ॥

उत्कृष्ट स्थितिको बाँधाकर उत्कृष्ट क्षेत्रको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके उसमें एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट क्षेत्रके स्थित होने तक ले जाना चाहिये। वहाँसे लेकर नीचे उत्कृष्ट क्षेत्रका दो अङ्क भागहार होने तक संख्यातभागहानिसे जाता है। फिर वहांसे लेकर नीचे उत्कृष्ट क्षेत्रको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित कर उसमें एक खण्डके स्थित होने तक संख्यातगुणहानि होकर जाती है। फिर वहाँसे लेकर महामत्स्यकी उत्कृष्ट स्वस्थान अवगाहना तक असंख्यातगुणा हीन होकर जाता है। फिर भी महामत्स्यकी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक एक प्रदेशोंसे हीन करके सिक्थ मत्स्यकी सर्वजघन्य स्वस्थान अवगाहना तक असंख्यात गुणहानिसे ले जाना चाहिये। अब सर्वपश्चिम विकल्पको कहते हैं। यथा — सर्वजघन्य अवगाहनामें विद्यमान सिक्थ मत्स्यके द्वारा ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिके बाँधे जानेपर कालवेदना उत्कृष्ट हो जाती है। परन्तु क्षेत्रवेदना विकल्प रहित असंख्यातगुणी हीनताको प्राप्त है।

उसके उक्त वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ३० ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ३१ ॥

यदि उत्कृष्ट स्थितिके साथ उत्कृष्ट विशेष प्रत्ययरूप उत्कृष्ट संक्लेशके द्वारा उत्कृष्ट अनुभाग बांधा गया है तो कालवेदनाके साथ भाव भी उत्कृष्ट होता है और उत्कृष्ट विशेष प्रत्ययके अभावमें भाव अनुत्कृष्ट ही होता है।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट छह स्थानोंमें पतित है ॥ ३२ ॥

१ अ-आ-काप्रतिषु 'सत्थाणोगाहणो' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

एत्थ जहा उक्कस्सदव्वे णिरुद्धे भावस्स छट्ठाणपदिदत्तं परूविदं तहा एत्थ वि परूवेदव्वं, विसेसाभावादो।

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ३३ ॥

सुगममेदं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ३४ ॥

दुचरिम-तिचरिमसमयप्पहुडि हेट्ठा जाव अंतोमुहुत्तं ताव पुव्वमेव जदि उक्कस्साणुभागं बंधिदूण णेरइयचरिमसमए दव्वमुक्कस्सं कदं तो भावेण सह दव्वं पि उक्कस्सं होदि। अध[1] भावे उक्कस्से जादे वि जदि दव्वमुक्कस्सभावं ण वणउदि[2] तो दव्ववेयणा अणुक्कस्सा होदि त्ति घेत्तव्वं।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा ॥ ३५ ॥

काणि पंच ट्ठाणाणि ? अणंतभागहीण-असंखेज्जभागहीण-संखेज्जभागहीण-संखेज्जगुणहीण-असंखेज्जगुणहीणाणि त्ति पंचट्ठाणाणि। एदेसिं पंचट्ठाणाणं जहा उक्कस्सकाले णिरुद्धे दव्वस्स पंचविहा ट्ठाणपरूवणा कदा तधा एत्थ वि कायव्वा, अविसेसादो।

यहाँ जिस प्रकारसे उत्कृष्ट द्रव्यकी विवक्षामें भावके छह स्थानोंमें पतित होनेकी प्ररूपणा की गई है, उसी प्रकारसे यहाँ भी उसकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ३३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ३४ ॥

द्विचरम और त्रिचरम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक यदि पूर्वमें ही उत्कृष्ट अनुभागको बाँधकर नारक भवके अन्तिम समयमें द्रव्यको उत्कृष्ट कर चुका है तो भावके साथ द्रव्य भी उत्कृष्ट होता है। और यदि भावके उत्कृष्ट होनेपर भी द्रव्य उत्कृष्टताको प्राप्त नहीं होता है तो द्रव्यवेदना अनुत्कृष्ट ही होती है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ ३५ ॥

वे पाँच स्थान कौनसे हैं ? अनन्तभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन और असंख्यातगुणहीन ये वे पाँच स्थान हैं। उत्कृष्ट कालकी विवक्षामें जिस प्रकार इन पाँच स्थानोंसे सम्बन्धित द्रव्यकी पाँच प्रकार स्थानप्ररूपणा की गई है उसी प्रकार यहाँ भी करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'अत्थ', ताप्रतौ 'अत्थ (थ)' इति पाठः। २ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-काप्रत्योः 'ण वणमदि', आप्रतौ 'ण वणवदि', ताप्रतौ 'णवणमदि' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ३६ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ३७ ॥

जदि उक्कस्साणुभागं बंधिय महामच्छेणुक्कस्सखेत्तं कदं तो भावेण सह खेत्तं पि उक्कस्सं होदि । अथवा, उक्कस्समणुभागं बंधिय जदि खेत्तमुक्कस्सं ण करेदि तो उक्कस्सभावे णिरुद्धे खेत्तमणुक्कस्सं होदि त्ति घेत्तव्वं ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ ३८ ॥

काणि चत्तारि ट्ठाणाणि ? असंखेज्जभागहाणि--संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणि त्ति चत्तारि ट्ठाणाणि । एदेसिं चदुण्णं ट्ठाणाणं जधा उक्कस्सकाले णिरुद्धे परूवणा कदा तधा परूवणा कायव्वा । णवरि चरिमवियप्पे भण्णमाणे सव्वजहण्णोगाहणएइंदिएसु[1] उक्कस्साणुभागसंतकम्मिएसु चरिमा असंखेज्जगुणहाणी घेत्तव्वा । एइंदिएसु कधमुक्कस्सभावोवलद्धी ? ण एस दोसो, सण्णिपंचिंदियपज्जत्तएसु उक्कस्साणुभागं बंधिय तग्घादेण विणा एइंदियभावमुवगएसु जहण्णखेत्तेण सह उक्कस्सभावोवलंभादो ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥३६॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ३७ ॥

यदि उत्कृष्ट अनुभागको बाँधकर महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट क्षेत्र किया गया है तो भावके साथ क्षेत्र भी उत्कृष्ट होता है । अथवा, यदि उत्कृष्ट अनुभागको बाँधकर क्षेत्रको उत्कृष्ट नहीं करता है तो उत्कृष्ट भावके विवक्षित होने पर क्षेत्र अनुत्कृष्ट होता है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित है ॥ ३८ ॥

वे चार स्थान ये हैं—असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि । उत्कृष्ट कालकी विवक्षामें जिस प्रकार इन चार स्थानोंकी प्ररूपणा की जा चुकी है, उसी प्रकार यहाँ भी प्ररूपणा करनी चाहिये । विशेष इतना है कि अन्तिम विकल्पका कथन करते समय उत्कृष्ट अनुभागके सत्त्वसे संयुक्त सर्वजघन्य अवगाहनवाले एकेन्द्रिय जीवोंमें अन्तिम असंख्यातगुणहानिको ग्रहण करना चाहिये ।

शंका—एकेन्द्रियोंमें उत्कृष्ट भावका पाया जाना कैसे सम्भव है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जो संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक उत्कृष्ट अनुभागको बाँधकर उसके घातके बिना एकेन्द्रिय पर्यायको प्राप्त होते हैं उनके जघन्य क्षेत्रके साथ उत्कृष्ट भाव पाया जाता है ।

---

१ ताप्रतौ 'जहण्णोगाहणा एइंदियेसु' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ३९ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ४० ॥

जदि उक्कस्साणुभागसंतेण सह उक्कस्सा ट्ठिदी पबद्धा तो भावेण सह कालो वि उक्कस्सो होदि । अध उक्कस्साणुभागे संते वि उक्कस्सियं ट्ठिदिं ण बंधदि तो उक्कस्सभावे णिरुद्धे कालो अणुक्कस्सो होदि । उक्कस्साणुभागं बंधमाणो णिच्छएण उक्कस्सियं चेव ट्ठिदिं बंधदि, उक्कस्ससंकिलेसेण विणा उक्कस्साणुभागबंधाभावादो । एवं संते कधमुक्कस्साणुभागे णिरुद्धे अणुक्कस्सट्ठिदीए संभवो त्ति ? ण एस दोसो, उक्कस्साणुभागेण सह उक्कस्सट्ठिदिं बंधिय पडिभग्गस्स अधट्ठिदिगलणाए उक्कस्सट्ठिदीदो समऊणादिवियप्पुवलंभादो । ण च अणुभागस्स अधट्ठिदिगलणाए घादो अत्थि, सरिसधणियपरमाणूणं तत्थुवलंभादो । ण च उक्कस्साणुभागबंधस्स बद्धविदियसमए चेव घादो अत्थि, पडिभग्गपढमसमयप्पहुडि जाव अंतोमुहुत्तकालो ण गदो ताव अणुभागखंडयघादाभावादो ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा—असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ॥ ४१ ॥

उसके कालकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ३९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ४० ॥

यदि उत्कृष्ट अनुभागसत्त्व के साथ उत्कृष्ट स्थिति बाँधी गई है तो भावके साथ काल भी उत्कृष्ट होता है । परन्तु यदि उत्कृष्ट अनुभागके होनेपर भी उत्कृष्ट स्थितिको नहीं बाँधता है तो उत्कृष्ट भावके विवक्षित होनेपर काल अनुत्कृष्ट होता है ।

शंका—चूंकि उत्कृष्ट अनुभागको बाँधनेवाला जीव निश्चयसे उत्कृष्ट स्थितिको ही बाँधता है, क्योंकि, उत्कृष्ट संक्लेशके बिना उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता; अतएव ऐसी स्थितिमें उत्कृष्ट अनुभागकी विवक्षामें अनुत्कृष्ट स्थितिकी सम्भावना कैसे हो सकती है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उत्कृष्ट अनुभागके साथ उत्कृष्ट स्थितिको बाँधकर प्रतिभग्न हुए जीवके अधःस्थितिके गलनेसे उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा एक समय हीन आदि स्थिति विकल्प पाये जाते हैं । और अधःस्थितिके गलनेसे अनुभागका घात कुछ होता नहीं है, क्योंकि, समान धनवाले परमाणु वहाँ पाये जाते हैं । यदि कहा जाय कि उत्कृष्ट अनुभागबन्धका बन्ध होनेके द्वितीय समयमें ही घात हो जाता है, तो यह भी कहना ठीक नहीं है; क्योंकि, प्रतिभग्न होनेके प्रथम समयसे लेकर जब तक अन्तर्मुहुर्त काल नहीं बीत जाता है तब तक अनुभागकाण्डकघात सम्भव नहीं है ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन और संख्यातगुणहीन इन तीन स्थानोंमें पतित है ॥ ४१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्कस्साणुभागेण सह उक्कस्सट्ठिदिं बंधिय पडिभग्गपढमसमए वट्टमाणस्स भावे उक्कस्से संते कालो असंखेज्जभागहीणो होदि, अधट्ठिदीए गलिदेगसमयत्तादो। पडिभग्गविदियसमए वि असंखेज्जभागहाणी चेव होदि, अधट्ठिदीए गलिददुसमयत्तादो। एवं ताव ट्ठिदीए असंखेज्जभागहाणी होदि जाव ट्ठिदिखंडयपढमसमओ त्ति। पुणो ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धाए पढमसमए गलिदे वि असंखेज्जभागहाणी चेव। उक्कीरणद्धाए विदियसमए गलिदे वि असंखेज्जभागहाणी चेव। एवं ताव असंखेज्जभागहाणी होदि जाव ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धाए दुचरिमसमओ गलिदो त्ति। अणुभागो पुण उक्कस्सो चेव, तस्स घादाभावादो। एत्थुवउज्जंतीओ गाहाओ—

(ट्ठिदिघादे हंमंते अणुभागा आऊआण सव्वेसिं।
अणुभागेण विणा[1] वि हु आउववज्जाण ट्ठिदिघादो ॥ १ ॥
अणुभागे हंमंते ट्ठिदिघादो आउआण सव्वेसिं।
ठिदिघादेण विणा[1] वि हु आउववज्जाणमणुभागो ॥ २ ॥)

एवं गंतूण पढमट्ठिदिखंडयचरिमफालीए उक्कीरणद्धाए चरिमसमएण सह पदिदाए वि असंखेज्जभागहाणी चेव होदि, पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसव्वजहण्णट्ठिदिखंडयपमाणेण घादिदत्तादो।

संपहि एदेणेव उक्कीरणकालेण पुव्विल्लट्ठिदिखंडयादो समउत्तरट्ठिदिखंडए घादिदे

उत्कृष्ट अनुभागके साथ उत्कृष्ट स्थितिको बाँधकर प्रतिभग्न होनेके प्रथम समयमें वर्तमान जीवके भावके उत्कृष्ट होनेपर काल असंख्यातवें भागसे हीन होता है, क्योंकि, अधःस्थितिके द्वारा एक समय गल चुका है। प्रतिभग्न होनेके द्वितीय समयमें भी असंख्यातभागहानि ही होती है, क्योंकि, अधःस्थितिमें दो समय गल चुके हैं। इस प्रकारसे स्थितिकाण्डकके प्रथम समयके प्राप्त होने तक स्थितिमें असंख्यातभागहानि होती है। तत्पश्चात् स्थितिकाण्डक उत्कीरणकालके प्रथम समयके गलनेपर भी असंख्तभागहानि ही होती है। उत्कीरणकालके द्वितीय समयके गलनेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है। इस प्रकारसे तब तक असंख्यातभागहानि होती है जब तक स्थितिकाण्डक-उत्कीरणकालका द्विचरम समय गलता है। परन्तु अनुभाग उत्कृष्ट ही रहता है, क्योंकि, उसके घातकी सम्भावना नहीं है। यहाँ उपयुक्त गाथायें—

स्थितिघातके होनेपर सब आयुओंके अनुभागोंका नाश होता है। आयुको छोड़कर शेष कर्मोंका अनुभागके बिना भी स्थितिघात होता है ॥ १ ॥

अनुभागका घात होनेपर सब आयुओंका स्थितिघात होता है। स्थितिघातके बिना भी आयुको छोड़कर शेष कर्मोंके अनुभागका घात होता है ॥ २ ॥

इस प्रकार जाकर प्रथम स्थितिकाण्डक सम्बन्धी अन्तिम फालीके उत्कीर्णकाल सम्बन्धी अन्तिम समयके साथ पतित होनेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है, क्योंकि, सबसे जघन्य पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितिकाण्डक प्रमाण स्थितियोंका घात हुआ है!

अब इसी उत्कीरणकालसे पहिले स्थितिकाण्डककी अपेक्षा एक समय अधिक स्थितिकाण्डकका

१ ताप्रतौ 'विण' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अण्णो असंखेज्जभागहाणिवियप्पो होदि। दुसमउत्तरट्ठिदिखंडए घादिदे अण्णो असंखेज्जभागहाणिवियप्पो होदि। एवं णेयव्वं जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जेण उक्कस्सट्ठिदिं खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तो ट्ठिदिखंडओ पदिदो त्ति। तो वि असंखेज्जभागहाणी चेव। एवं गंतूण उक्कस्ससंखेज्जेण उक्कस्सट्ठिदिं खंडिय तत्थ एगखंडमेत्ते ट्ठिदिखंडए ताए चेव[1] उक्कीरणद्धाए घादिदे संखेज्जभागहाणी होदि। अणुभागो पुणो उक्कस्सो चेव, तस्स घादाभावादो। एत्तो प्पहुडि समउत्तरकमेण ट्ठिदिखंडओ वड्ढाविय घादेदव्वो जाव संखेज्जभागहाणीए चरिमवियप्पो त्ति। पुणो तेणेव उक्कीरणकालेण उक्कस्सट्ठिदीए अद्धे घादिदे संखेज्जगुणहाणीए आदी होदि, दुगुणहीणत्तादो। तत्तो प्पहुडि समउत्तरादिकमेण ट्ठिदिखंडे घादिज्जमाणे संखेज्जगुणहाणी चेव होदि। एवं णेयव्वं जाव उक्कस्साणुभागाविरोधिअंतोकोडाकोडि त्ति।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ ४२ ॥

जहा णाणावरणीयस्स दव्व-खेत्त-काल-भावेसु एगणिरुंभणं कादूण सेसपरूवणा[2] कदा तहा एदेसिं पि तिण्हं घादिकम्माणं परूवणा कायव्वा, दव्व-खेत्त-काल-भावसामित्तेण विसेसाभावादो।

घात होनेपर असंख्यातभागहानिका अन्य विकल्प होता है। दो समय अधिक स्थितिकाण्डकका घात होनेपर असंख्यातभागहानिका अन्य विकल्प होता है। इस प्रकार जघन्य परीतासंख्यातसे उत्कृष्ट स्थितिको खण्डित कर उसमें एक खण्ड मात्र स्थितिकाण्डकके पतित होने तक ले जाना चाहिये। तो भी असंख्यात भागहानि ही रहती है। इस प्रकार जाकर उत्कृष्ट संख्यातसे उत्कृष्ट स्थितिको खण्डितकर उसमें एक खण्ड मात्र स्थितिकाण्डकका उसी उत्कीरण कालके द्वारा घात होनेपर संख्यातभागहानि होती है। परन्तु अनुभाग उत्कृष्ट ही रहता है, क्योंकि, उसका घात नहीं हुआ है। यहाँसे लेकर एक समय अधिकके क्रमसे स्थितिकाण्डकको बढ़ाकर संख्यातभागहानिके अन्तिम विकल्प के प्राप्त होने तक उसका घात करना चाहिये। फिर उसी उत्कीरणकालसे उत्कृष्ट स्थितिके अर्धभागका घात होनेपर संख्यागुणहानि प्रारम्भ होती है, क्योंकि, उक्त स्थितिमें दुगुणी हानि हो चुकती है। उससे लेकर एक समय अधिक आदिके क्रमसे स्थितिकाण्डकका घात होनेपर संख्यात-गुणहानि ही होती है। इस प्रकारसे उत्कृष्ट अनुभागके अविरोधी अन्तःकोड़ाकोड़ि तक जाना चाहिये।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मोंके विषयमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ४२ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावमेंसे किसी एकको विवक्षित करके शेषोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार इन तीन घातिया कर्मोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, द्रव्य, क्षेत्र, काल व भावके स्वामित्वसे उसमें कोई विशेषता नहीं है।

१ आप्रतौ '-मेत्ते ट्ठिदिखंडमेत्ताए चेव' इति पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'परूवणं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ४३ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ४४ ॥

कुदो ? सत्तमपुढविणेरइयस्स पंचधणुसदुस्सेहस्स उक्कस्सदव्वस्स मा विणासो होहदि त्ति उक्कस्स जोगविरोहिमारणंतियमणुवगयस्स[१] उक्कस्सोगाहणाए संखेज्जघणंगुलपमाणाए लोगपूरणउक्कस्सखेत्तादो असंखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ४५ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ४६ ॥

णेरइयचरिमसमए वट्टमाणेण गुणिदकम्मंसिएण कयउक्कस्सदव्वसंचएण जदि उक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तो दव्वेण सह कालो वि उक्कस्सो होदि । अध तत्थ जदि उक्कस्सट्ठिदिं ण बंधदि तो अणुक्कस्सा त्ति घेत्तव्वं ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणा ॥ ४७ ॥

जिस जीवके वेदनीय कर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ४३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ४४ ॥

कारण कि पाँच सौ धनुष प्रमाण उत्सेधसे संयुक्त जो सातवीं पृथिवीका नारकी, उत्कृष्ट द्रव्यका विनाश न हो, इसलिये उत्कृष्ट योगके विरोधी मरणान्तिक समुद्घातको नहीं प्राप्त हुआ है; उसकी संख्यात घनांगुल प्रमाण उत्कृष्ट अवगाहना लोकपूरण उत्कृष्ट क्षेत्रकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हीन पायी जाती है ।

उसके कालकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ४५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ४६ ॥

जिसने उत्कृष्ट द्रव्यके संचयको किया है ऐसे नारक भवके अन्तिम समयमें वर्तमान गुणितकर्मांशिकके द्वारा यदि उत्कृष्ट स्थिति बाँधी गई है तो द्रव्यके साथ काल भी उत्कृष्ट होता है । परन्तु यदि वह उक्त अवस्थामें उत्कृष्ट स्थितिको नहीं बाँधता है तो उसके कालवेदना अनुत्कृष्ट होती है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

वह उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय कम है ॥ ४७ ॥

---

१ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-काप्रतिषु '-मणुसगयस्स', ताप्रतौ '-मणु [स] गयस्स' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

कुदो ? णेरइयदुचरिमसमयम्मि उक्कस्ससंकिलेसाविणाभाविम्हि बद्धउक्कस्सट्ठिदीए चरिमसमयम्मि अधट्ठिदिगलणेण एगसमयपरिहाणिदंसणादो ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ४८ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ४९ ॥

सुहुमसांपराइयखवगचरिमाणुभागबंधं पेक्खिदूण णेरइयचरिमसमयाणुभागस्स अणंतगुणहीणत्तुवलंभादो । कुदो ? सादावेदणीयस्स सुहस्स संकिलेसेण अणुभागहाणिदंसणादो ।

जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५० ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ ५१ ॥

उक्कस्सा किण्ण जायदे ? ण, णेरइयचरिमसमयगुणिदकम्मंसियम्मि उक्कस्सभावेण अवट्ठिदवेयणीयदव्ववेयणाए लोगपूरणाए वट्टमाणसजोगिकेवलिम्हि संभवविरोहादो । संपहि दव्वस्स चउट्ठाणपदिदत्तं कधं णव्वदे ? सुत्ताणुसारिवक्खाणादो । तं

कारण कि उत्कृष्ट संक्लेशके अविनाभावी नारक भवके द्विचरम समयमें बाँधी गई उत्कृष्ट स्थितिमेंसे चरम समयमें अधःस्थितिके गलनेसे एक समयकी हानि देखी जाती है ।

उसके भावकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ४८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमतः अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ ४९ ॥

कारण यह कि सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके अन्तिम समय सम्बन्धी अनुभागकी अपेक्षा नारक जीवका अन्तिम समय सम्बन्धी अनुभाग अनन्तगुणा हीना पाया जाता है, क्योंकि, साता वेदनीयके शुभ प्रकृति होनेसे संक्लेशके द्वारा उसके अनुभागमें हानि देखी जाती है ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ५० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ ५१ ॥

शंका—वह उत्कृष्ट क्यों नहीं होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, नारक भवके अन्तिम समयमें वर्तमान गुणितकर्मांशिक जीवमें उत्कृष्ट स्वरूपसे अवस्थित वेदनीय कर्मकी द्रव्य वेदनाके लोकपूरण अवस्थामें रहनेवाले सयोगकेवलीमें होनेका विरोध है ।

शंका—यह अनुत्कृष्ट द्रव्य वेदना चार स्थानोंमें पतित है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह सूत्रका अनुसरण करनेवाले व्याख्यानसे जाना जाता है । यथा—एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहा—गुणिदकम्मंसियो सत्तमपुढवीदो आगंतूण पंचिंदियतिरिक्खेसु अंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो बादरपुढविकाइएसु अंतोमुहुत्ताउअं बंधिय तत्थ उप्पज्जिय पच्छा मणुसेसु वासपुधत्ताउअं बंधिदूण कालं कादूणुप्पज्जिय संजमं घेत्तूण खवगसेडिमारुहिय केवलणाणं उप्पाइय लोगपूरणं गदस्स खेत्तमुक्कस्सं जादं । तस्समए दव्वमसंखेज्जभागहीणं, उक्कस्सदव्वं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थ एगखंडेण परिहीणउक्कस्सदव्वधारणादो । एवं संखेज्जभागहीण-संखेज्जगुणहीण-असंखेज्जगुणहीणदव्वाणं पि जाणिदूण परूवणा कायव्वा ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५२ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ५३ ॥

कुदो ? लोगपूरणाए वट्टमाणअंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदीए [1]तीसंकोडाकोडिसागरोवमेट्ठिदो असंखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५४ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा भाववेयणा ॥ ५५ ॥

गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीसे आकरके पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें अन्तर्मुहूर्त रहकर फिर बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें अन्तर्मुहूर्त प्रमाण आयुको बन्धकर उनमें उत्पन्न हुआ। पश्चात् जब वह मनुष्योंमें वर्ष पृथक्त्व आयुको बाँधकर मरणको प्राप्त हो उनमें उत्पन्न होकर संयमको ग्रहण करके क्षपकश्रेणिपर चढ़कर केवलज्ञानको उत्पन्न करके लोकपूरण अवस्थाको प्राप्त होता है तब उसका क्षेत्र उत्कृष्ट होता है। उस समयमें द्रव्य असंख्यातवें भागसे हीन होता है, क्योंकि, उत्कृष्ट द्रव्यको पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डितकर उसमेंसे वह एक खण्डसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यको धारण करता है। इसी प्रकारसे संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन और असंख्यातगुणहीन द्रव्योंकी भी प्ररूपणा जान करके करनी चाहिये।

उसके कालकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ५२ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ५३ ॥

कारण कि लोकपूरण अवस्थामें रहनेवाली अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपमोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हीन पायी जाती है।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ५४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उसके भाव वेदना उत्कृष्ट होती है ॥ ५५ ॥

१ अ-आ-काप्रतिषु 'तीसं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोगपूरणगदकेवलिम्हि अणुक्कस्सा किण्ण जायदे ? ण, चरिमसमयसुहुमसांपराइयाणं विसरिसपरिणामाभावादो । ण च विसेसपच्चयभेदो वि[1] अत्थि, सव्वेसु एगुक्कस्सपच्चयस्सेव संभवुवलंभादो। ण च जोगभेदेण अणुभागस्स णाणत्तं जुज्जदे, जोगवड्ढि-हाणीहिंतो अणुभागवड्ढि-हाणीणमभावादो। सुहुमसांपराइयचरिमसमए पबद्धउक्कस्साणुभागट्ठिदी जेण बारसमुहुत्तमेत्ता तेण बारसण्हं[2] मुहुत्ताणमब्भंतरे केवलणाणमुप्पाइय सव्वलोगमाऊरिय ट्ठिदाणं भावो उक्कस्सो होदि। बहुएण कालेण कयलोगपूरणाणमुक्कस्सो ण होदि, बारसेहि मुहुत्तेहि उक्कस्साणुभागपरमाणूणं णिस्सेसक्खयदंसणादो। तम्हा लोगपूरणे भाववेयणा उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा होदि त्ति वत्तव्वमिदि ? एत्थ परिहारो उच्चदे। तं जहा-–लोगपूरणे भाववेयणा उक्कस्सा चेव, अण्णहा सुत्तस्स अप्पमाणत्तप्पसंगादो। ण च सुत्तमप्पमाणं होदि, तब्भावे तस्स सुत्तत्तविरोहादो[3]। उत्तं च—

अर्थस्य सूचनात्सम्यक्सूतेर्वार्थस्य[4] सूरिणा।
सूत्रमुक्तमनल्पार्थं सूत्रकारेण तत्त्वतः[5] ॥ ३ ॥

ण च जुत्तिविरुद्धत्तादो ण सुत्तमेदमिदि वोत्तुं सक्किज्जदे, सुत्तविरुद्धाए जुत्ति-

---

शंका—लोकपूरण अवस्थाको प्राप्त हुए केवलीमें वह अनुत्कृष्ट क्यों नहीं होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक जीवोंके विसदृश परिणामोंका अभाव है। इसके अतिरिक्त विशेष प्रत्ययभेद भी यहाँ नहीं है; क्योंकि, उक्त सभी जीवोंमें एक उत्कृष्ट प्रत्ययकी ही सम्भावना पायी जाती है। यदि कहा जाय कि योगके भेदसे अनुभागका भी भेद होना चाहिये, तो यह भी उचित नहीं है, क्योंकि, योगकी वृद्धि व हानिसे अनुभागकी वृद्धि व हानि सम्भव नहीं है।

शंका—चूंकि सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें बाँधी गई उत्कृष्ट-अनुभाग-स्थिति बारह मुहूर्त प्रमाण होती है, अतएव बारह मुहूर्तोंके भीतर केवलज्ञानको उत्पन्नकर सब लोकको पूर्ण करके स्थित जीवोंका भाव उत्कृष्ट होता है। परन्तु बहुत कालमें लोकपूरण समुद्घातको करनेवाले जीवोंका भाव उत्कृष्ट नहीं होता है, क्योंकि, बारह मुहूर्तोंमें उत्कृष्ट अनुभागके परमाणुओंका निःशेष क्षय देखा जाता है। इसीलिये लोकपूरण अवस्थामें भाववेदना उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ऐसा कहना चाहिये ?

समाधान—यहाँ उक्त शंकाका परिहार कहते हैं। वह इस प्रकार है—लोकपूरण अवस्थामें भाववेदना उत्कृष्ट ही होती है, क्योंकि, ऐसा माननेके विना सूत्रके अप्रमाण ठहरनेका प्रसंग आता है। परन्तु सूत्र अप्रमाण होता नहीं है, क्योंकि, अप्रमाण होनेपर उसके सूत्र होनेका विरोध है। कहा भी है—

भली भाँत अर्थका सूचक होनेसे अथवा अर्थका जनक होनेसे बहुत अर्थका बोधक वाक्य सूत्रकार आचार्य के द्वारा यथार्थमें सूत्र कहा गया है ॥ ३ ॥

यदि कहा जाय कि युक्तिविरुद्ध होनेसे यह सूत्र ही नहीं है, तो ऐसा कहना शक्य नहीं है;

---

१ आ-का-ताप्रतिषु 'वि' इत्येतत् पदं नोपलभ्यते। २ आप्रतौ 'बारसमुहुत्तेण मेत्तेण बारसण्हं', बारमुहुत्तमेत्ता तेण बारसण्हं इति पाठः। ३ प्रतिषु 'सुत्तस्सविरोहादो' इति पाठः। ४ ताप्रतौ 'सूत्रैर्वार्थस्य' इति पाठः। ५ उद्धृतमेतज्जयधवलायाम् (१, पृ० १७१०)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ताभावादो । ण च अप्पमाणेण पमाणं बाहिज्जदे, विरोहादो । का सा पुण एत्थ णिरवज्ज-[1] सुत्ताणुकूला तंतजुत्ती ? वुच्चदे— वेयणीयउक्कस्साणुभागबंधस्स ट्ठिदी बारसमुहुत्त-मेत्ता । तत्थ सादावेदणीयचिराणट्ठिदीए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताए ट्ठिद-कम्मपोग्गला उक्कड्डिज्जंति अणुभागेण । कुदो ? 'बंधे उक्कड्डदि' त्ति वयणादो । होदु णाम अणुभागस्स उक्कड्डणा, ण ट्ठिदीए[2] । कुदो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्त-ट्ठिदिदीहत्तणं णस्सिदूण बारसमुहुत्तट्ठिदिसरूवेण परिणदत्तादो त्ति ।

होदु णाम केसिं पि परमाणूणं ट्ठिदीए ओकड्डणा[3], अण्णहा तत्थ गुणसेडीए अणु-ववत्तीदो । किंतु ण सव्वेसिं कम्मपरमाणूणं ठिदीणं ओकड्डणा, केसिं पि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीए अधट्ठिदिगलिदसेसियाए अवट्ठाणुवलंभादो । ण च अणु-भागुक्कड्डणा वि सव्वेसिं कम्मपरमाणूणं होदि, थोवाणं चेव बज्झमाणाणुभागसरूवेण परिणामदंसणादो । तदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीए ट्ठिदकम्मक्खंधा उक्क-स्साणुभागसरूवेण उक्कड्डिदा बारसमुहुत्ते मोत्तूण पुव्वकोडिकालेण वि ण गलंति त्ति सिद्धं । तेण कारणेण लोगमावूरिदकेवलिम्हि वेयणीयभावो उक्कस्सो चेव, णाणुक्कस्सो ।

क्योंकि, जो युक्ति सूत्रके विरुद्ध हो वह वास्तवमें युक्ति ही सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त अप्रमाणके द्वारा प्रमाणको बाधा भी नहीं पहुँचायी जा सकती है, क्योंकि, वैसा होनेमें विरोध है।

शंका—तो फिर यहाँ सूत्रके अनुकूल वह निर्दोष तंत्रयुक्ति कौनसी है ?

समाधान—इस शंकाके उत्तरमें कहते हैं कि वेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागबन्धकी स्थिति बारह मुहूर्त मात्र है । उसमें पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण सातावेदनीयकी चिरकालीन स्थितिमें स्थित कर्मपुद्गल अनुभाग स्वरूपसे उत्कर्ष को प्राप्त होते हैं, क्योंकि, 'बन्धमें उत्कर्षण होता है' ऐसा सूत्रवचन है ।

शंका—अनुभागका उत्कर्षण भले ही हो, किन्तु स्थितिका उत्कर्षण सम्भव नहीं है; क्योंकि, पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितिकी दीर्घता नष्ट हो करके बारह मुहूर्त प्रमाण स्थितिके स्वरूपसे परिणत हो जाती है ?

समाधान—किन्हीं परमाणुओंकी स्थितिका अपकर्षण भले ही हो, क्योंकि, इसके विना उसमें गुणश्रेणिनिर्जरा नहीं बन सकती। किन्तु सभी कर्मपरमाणुओंकी स्थितियोंका अपकर्षण सम्भव नहीं है, क्योंकि, किन्हीं कर्मपरमाणुओंकी अधःस्थितिके गलनेसे शेष रही पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितिका अवस्थान पाया जाता है। इसके अतिरिक्त अनुभागका उत्कर्षण भी सभी परमाणुओंका नहीं होता, क्योंकि, थोड़े ही कर्मपरमाणुओंका बाँधे जानेवाले अनुभागके स्वरूपसे परिणमन देखा जाता है । इस कारण पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितिमें स्थित कर्मस्कन्ध उत्कृष्ट अनुभाग स्वरूपसे उत्कर्षणको प्राप्त होकर बारह मुहुर्तोंको छोड़कर पूर्वकोटि प्रमाण कालमें भी नहीं गलते हैं, यह सिद्ध है । इसीलिये लोकपूरण अवस्थाको प्राप्त केवलीमें वेदनीयका भाव उत्कृष्ट ही होता है, अनुत्कृष्ट नहीं होता ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'णिरवज-' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'उक्कड्डणा ए (ण) ट्ठिदीए' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'ओकड्डणाए' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जस्स वेयणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५६ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ५७ ॥

जदि णेरइयचरिमसमए गुणिदकम्मंसिए कयउक्कस्सदव्वे वेयणीयस्स उक्कस्सओ ट्ठिदिबंधो दीसदि तो कालेण सह दव्वं पि उक्कस्सं होदि अध तत्तो हेट्ठा उवरिं वा जदि उक्कस्सट्ठिदी बज्झदि तो उक्कस्सियाए कालवेयणाए उक्कस्सिया दव्ववेयणा ण लब्भदि त्ति अणुक्कस्सा त्ति[1] भणिदं ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा ॥ ५८ ॥

काणि पंचट्ठाणाणि ? अणंतभागहाणि-असंखेज्जभागहाणि-संखेज्जभागहाणि-संखेज्ज गुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणि त्ति पंचट्ठाणाणि । एदेसिं ठाणाणं परूवणा जहा णाणावरणीयस्स परूविदा तहा परूवेदव्वा ।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ५९ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ६० ॥

जिसके वेदनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ५६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ५७ ॥

यदि नारक भवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट द्रव्यका संचय करनेवाले गुणितकर्मांशिकके वेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध दिखता है तो कालके साथ द्रव्य भी उत्कृष्ट होता है । परन्तु यदि उत्कृष्ट स्थिति उससे नीचे या ऊपर बंधती है तो उत्कृष्ट कालवेदनाके साथ उत्कृष्ट द्रव्यवेदना नहीं पायी जाती है, अतएव सूत्रमें 'अनुत्कृष्ट' ऐसा कहा है ।

उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट पांच स्थानोंमें पतित है ॥ ५८ ॥

वे पाँच स्थान कौनसे हैं ? अनन्तभागहानि, असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि ये वे पाँच स्थान हैं । इन स्थानोंकी प्ररूपणा जैसे ज्ञानावरणीयके विषयमें की गई है वैसे ही यहाँ भी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ५९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ६० ॥

१ ताप्रतौ 'लब्भदि त्ति भणिदं' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

कुदो ? अद्धट्ठमरज्जूणमुक्कमारणंतिएण महामच्छेण उक्कस्सट्ठिदीए[1] पबद्धाए संतीए तक्खेत्तस्स वि लोगपूरणगदकेवलिखेत्तादो असंखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ६१ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ६२ ॥

कुदो ? उक्कस्सट्ठिदीए सह असादावेदणीयउक्कस्साणुभागे बद्धे वि तस्स अणुभागस्स सुहुमसांपराइयस्स चरिमसमए पबद्धाणुभागादो अणंतगुणहीणत्तुवलंभादो । एदं कुदो उवलब्भदे ? चउसट्ठिवदियअप्पाबहुगादो ।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ६३ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ ६४ ॥

कुदो ? णेरइयचरिमसमए जादवेयणीयउक्कस्सदव्वस्स सुहुमसांपराइयचरिमसमए उक्कस्सभावेण सह वुत्तिविरोहादो । तम्हा णियमा अणुक्कस्सत्तं सिद्धं । णियमा अणु-

---

कारण कि साढ़ेसात राजु प्रमाण मारणान्तिक समुद्घातको करनेवाले महामत्स्यके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिके बाँधनेपर उसका क्षेत्र भी लोकपूरण समुद्घातको प्राप्त केवलीके क्षेत्रसे असंख्यातगुणा हीन पाया जाता है ।

उसके भावकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ६१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ ६२ ॥

कारण यह कि उत्कृष्ट स्थितिके साथ असाता वेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागको बाँधनेपर भी उसका अनुभाग सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें बाँधे गये अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा हीन पाया जाता है ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह चौंसठ पदवाले अल्पबहुत्वसे जाना जाता है ।

जिसके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ६३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ ६४ ॥

कारण कि नारक भवके अन्तिम समयमें उत्पन्न वेदनीयके उत्कृष्ट द्रव्यका सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट भावके साथ रहना विरुद्ध है । इस कारण वह नियमसे अनुत्कृष्ट होती है, यह सिद्ध है । नियमसे अनुत्कृष्ट भी होकर वह चार स्थानोंमें पतित है । यथा—एक

---

१ अ-आ-काप्रतिषु '-ठ्ठिदीए' इति पाठः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

क्कस्सा वि होदूण चउट्ठाणपदिदा । तं जहा—एगो गुणिदकम्मंसियो णेरइयचरिमसमए उक्कस्सं दव्वं काऊण णिग्गंतूण पंचिंदियतिरिक्खेसु उप्पज्जिय दो-तिण्णिभवग्गहणाणि एइंदिएसु गमिय पुणो पच्छा मणुस्सेसुप्पज्जिय गब्भादिअट्ठवस्सियो संजमं पडिवण्णो। पुणो सव्वलहुएण कालेण खवगसेडिमारुहिय चरिमसमयसुहुमसांपराइयो होदूण उक्कस्साणुभागो पबद्धो, तस्स दव्ववेयणा असंखेज्जभागहीणा, गुणसेडिणिज्जराए गलिदासंखेज्जसमयपबद्धत्तादो। एत्तो प्पहुडि एगेगपरमाणुहाणिकमेण असंखेज्जभागहाणि-संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीयो जाणिदूण दव्वस्स परूवेदव्वाओ जाव खविदकम्मंसियसव्वजहण्णदव्वं[1] ट्ठिदं ति ।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ६५ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ॥ ६६ ॥

जदि लोगपूरणे सजोगिकेवली वट्टदि तो भावेण सह खेत्तं पि उक्कस्सं होदि । अध ण वट्टदि भावो चेव उक्कस्सो, ण खेत्तं; लोगपूरणं मोत्तूण तस्स अण्णत्थ उक्कस्सत्ताभावादो ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ ६७ ॥

गुणितकर्मांशिक जीव नारक भवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट द्रव्यको करके वहाँ से निकलकर पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें उत्पन्न हो एकेन्द्रिय जीवोंमें दो तीन भवग्रहणोंको बिताकर फिर पीछे मनुष्योंमें उत्पन्न होकर गर्भसे लेकर आठ वर्षका हो संयमको प्राप्त हुआ। पश्चात् सर्वलघु कालमें क्षपक श्रेणिपर चढ़कर अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक होकर उत्कृष्ट अनुभागबन्धको प्राप्त हुआ। उसके द्रव्यवेदना असंख्यातभागहीन होती है, क्योंकि, उसके गुणश्रेणिनिर्जरा द्वारा असंख्यात समयप्रबद्ध गल चुके हैं। यहाँ से लेकर एक एक परमाणुकी हानिके क्रमसे क्षपितकर्मांशिकके सर्वजघन्य द्रव्यके स्थित होने तक द्रव्यके विषयमें असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिकी जानकर प्ररूपणा करनी चाहिये ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ६५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी ॥ ६६ ॥

यदि सयोगकेवली लोकपूरण समुद्घातमें प्रवर्तमान हैं तो भावके साथ क्षेत्र भी उत्कृष्ट होता है। और यदि उसमें प्रवर्तमान नहीं हैं तो भाव ही उत्कृष्ट होता है, क्षेत्र उत्कृष्ट नहीं होता, क्योंकि, लोकपूरण समुद्घातको छोड़कर अन्यत्र उसकी उत्कृष्टताका अभाव है ।

उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट असंख्यातभागहीन और असंख्यातगुणहीन इन दो स्थानोंमें पतित है ॥ ६७ ॥

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'सव्वलहुएण दव्वं' इति पाठः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

उक्कस्सभावेण[1] सह मंथे[2] वट्टमाणस्स खेत्तं लोगपूरणखेत्तादो असंखेज्जभागहीणं, वादवलयावरुद्धखेत्तमेत्तेण परिहीणत्तादो । सत्थाण-दंड-कवाडगदकेवलिखेत्ताणि उक्कस्साणुभागसहचडिदाणि पुण असंखेज्जगुणहीणाणि, एदेहि तीहि वि खेत्तेहि पुध पुध घणलोगे भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो । तेण दुट्ठाणपदिदा चेव अणुक्कस्सवेयणा त्ति सिद्धं ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ६८ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणा[3] ॥ ६९ ॥

जत्थ वेयणीयभाववेयणा उक्कस्सा तत्थ तस्स कालवेयणा अणुक्कस्सा चेव, सुहुमसांपराइयप्पहुडि उवरि सव्वत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीए अंतोमुहुत्तमेत्ताए वा उवलंभादो[4] । होंता वि असंखेज्जगुणहीणा चेव, पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण तीसंकोडाकोडिसागरोवमेसु ओवट्टिदेसु असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

एवं णामा-गोदाणं ॥ ७० ॥

जहा वेयणीयस्स उक्कस्ससण्णियासो कदो तहा णामा-गोदाणं पि कायव्वो,

---

उत्कृष्ट भावके साथ मंथ समुद्घातमें वर्तमान केवलीका क्षेत्र लोकपूरण समुद्घातमें वर्तमान केवलीके क्षेत्रसे असंख्यातभागहीन होता है, क्योंकि, वह वातवलयसे रोके गये क्षेत्रके प्रमाणसे हीन है । उत्कृष्ट अनुभागके साथ आये हुए स्वस्थान, दण्डसमुद्घात और कपाटसमुद्घातको प्राप्त केवलीके क्षेत्र उससे असंख्यातगुणे हीन होते हैं, क्योंकि, इन तीनों ही क्षेत्रोंका पृथक् पृथक् घनलोकमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं । इस कारण अनुत्कृष्ट वेदना दो स्थानोंमें पतित है, यह सिद्ध है ।

उसके कालकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ६८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ६९ ॥

जहाँ वेदनीयकी भाववेदना उत्कृष्ट होती है, वहाँ उसकी कालवेदना अनुत्कृष्ट ही होती है, क्योंकि, सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानसे लेकर आगे सब जगह पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थिति अथवा अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति पायी जाती है । उतनी मात्र होकर भी वह असंख्यातगुणी हीन ही होती है, क्योंकि, पल्योपमके असंख्यातवें भागका तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपमोंमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

इसी प्रकार नाम और गोत्र कर्मोंके विषयमें भी उक्त प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ७० ॥

जिस प्रकार वेदनीय कर्मके विषयमें उत्कृष्ट संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकार नाम और

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'उक्कस्सब्भावेण' इति पाठ । २ आ-काप्रत्योः 'मंथेवट्टमाणस्स', ताप्रतौ 'मंथे (मच्छे) वट्टमाणस्स' इति पाठः । ३ अप्रतौ 'संखेज्जगुणा' इति पाठः । ४ अ-आप्रत्यो 'अंतोमुहुत्तमेत्ताणं उवलंभादो' काप्रतौ 'अंतोमुहुत्तमेत्ताणि उवलंभादो' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

दव्व-खेत्त-काल-भावुक्कस्ससामित्तएहि विसेसाभावादो ।

जस्स आउअवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७१ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ७२ ॥

कुदो णियमेण खेत्तस्स अणुक्कस्सत्तं ? लोगपूरणगदसजोगिकेवलिम्हि जादुक्कस्सखेत्तस्स उक्कस्सदव्वसामिजलचरम्मि अणुवलंभादो । असंखेज्जगुणहीणत्तं कत्तो णव्वदे ? उक्कस्सदव्वसामिजलचरखेत्तेण संखेज्जघणंगुलमेत्तेण घणंगुलस्स संखेज्जदिभागमेत्तेण वा घणलोगे भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७३ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ७४ ॥

जलचरेसु उक्कस्सदव्वसामिएसु उक्कस्सट्ठिदिबंधो किण्ण जायदे ? ण, आउअस्स पुव्वकोडितिभागमाबाहं काऊण तेत्तीससागरोवमेसु बज्झमाणेसु चेव उक्कस्स-

---

गोत्र कर्मके विषयमें भी करना चाहिये, क्योंकि द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव सम्बन्धी उत्कृष्ट स्वामित्वसे उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके आयु कर्मकी वेदना द्रव्यसे उत्कृष्ट होती है उसके वह क्या क्षेत्रसे उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ७१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ७२ ॥

शंका—क्षेत्रकी नियमित अनुत्कृष्टता कैसे सम्भव है ?

समाधान—इसका कारण यह है कि लोकपूरण समुद्घातको प्राप्त सयोगकेवलीके जो उत्कृष्ट क्षेत्र होता है वह उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी जलचर जीवमें नहीं पाया जाता ।

शंका—उसकी असंख्यातगुणहीनता किस प्रमाण से जानी जाती है ?

समाधान—उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी जलचर जीवका जो संख्यात घनांगुल प्रमाण अथवा घनांगुलके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र होता है उसका घनलोकमें भाग देनेपर चूंकि असंख्यात रूप पाये जाते हैं, अतः इससे उसकी असंख्यातगुणी हीनता सिद्ध है ।

उसके उक्त वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ७३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ७४ ॥

शंका—जो जलचर जीव उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी हैं उनमें उत्कृष्ट द्रव्यका बन्ध क्यों नहीं होता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, पूर्वकोटिके त्रिभाग प्रमाण आयुकी आबाधाको करके तेतीस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठिदित्तुवलंभादो। ण च तेत्तीससागरोवमाणमेत्थ बंधो संभवदि, अइसंकिलेसेण भुंजमाणाउअकम्मक्खंधाणं बहूणं गलणप्पसंगादो। तम्हा जलचरेसु उक्कस्सदव्वसामिएसु आउवबंधो अणुक्कस्सो चेव। होंतो वि पुव्वकोडिमेत्तो चेव, हेट्ठिमआउअवियप्पेसु वज्झमाणेसु आउअबंधगद्धाए थोवत्तप्पसंगादो। असंखेज्जगुणहीणत्तं कत्तो णव्वदे? सादिरेयपुव्वकोडीए तेत्तीससागरोवमेसु पुव्वकोडितिभागाहिएसु ओवट्टिदेसु असंखेज्जरूवोवलंभादो।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७५ ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ७६ ॥

किमट्ठमुक्कस्सा भाववेयणा एत्थ ण होदि? ण, अप्पमत्तसंजदेण बद्धदेवाउअम्मि जादुक्कस्साणुभागस्स तिरिक्खाउअम्मि वुत्तिविरोहादो। जलचराउअभावस्स उक्कस्सभावादो[1] अणंतगुणत्तं कत्तो णव्वदे? तिरिक्खाउअअणुभागादो देवाउअअणुभागो अणंतगुणो त्ति भणिदचउसट्ठिवदियअप्पाबहुगादो णव्वदे।

सागरोपम प्रमाण आयुको बाँधनेवाले जीवोंमें ही उत्कृष्ट स्थिति बन्ध पाया जाता है। परन्तु यहाँ तेतीस सागरोपमोंका बन्ध सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा होनेपर अत्यन्त संक्लेशसे भुज्यमान आयु कर्मके बहुतसे स्कन्धोंके गलनेका प्रसंग आता है। इस कारण उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामी जलचर जीवोंमें आयुका बन्ध अनुत्कृष्ट ही होता है। अनुत्कृष्ट होकर भी वह पूर्वकोटि मात्र ही होता है, क्योंकि, नीचेके आयुविकल्पोंके बाँधनेपर आयुबन्धक कालके स्तोक होनेका प्रसंग आता है।

शंका—उसकी असंख्यातगुणी हीनता किस प्रमाणसे जानी जाती है?

समाधान—साधिक पूर्वकोटिका पूर्वकोटित्रिभागसे अधिक तेतीस सागरोपमोंमें भाग देनेपर चूंकि असंख्यात रूप पाये जाते हैं, अतः इसीसे उसकी असंख्यातगुणहीनता सिद्ध है।

उसके उक्त वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥७५॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ७६ ॥

शंका—यहाँ उत्कृष्ट भाववेदना क्यों नहीं होती है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अप्रमत्तसंयतके द्वारा बाँधी गई देवायुमें उत्पन्न उत्कृष्ट अनुभागके तिर्यंच आयुमें रहनेका विरोध है।

शंका—उत्कृष्ट भावकी अपेक्षा जलचर सम्बन्धी आयुका भाव अनन्तगुणा हीन है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—यह "तिर्यंच आयुके अनुभागसे देवायुका अनुभाग अनन्तगुणा है" इस चौंसठ पदवाले अल्पबहुत्वसे जाना जाता है।

---

१ ताप्रतौ 'उक्कस्सदव्वादो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जस्स आउअवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७७ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ ७८ ॥

दव्ववेयणा उक्कस्सा किण्ण जायदे ? ण, दोहि आउअबंधगद्धाहि उक्कस्सजोगविसिट्ठाहि जलचरेसु संचिदुक्कस्सदव्वस्स केवलिम्हि तिहुवणं पसरिय ट्ठिदम्मि संभवविरोहादो । कधं संखेज्जगुणहीणत्तं ? ण, उक्कस्सजोगेण उक्कस्सबंधगद्धाए मणुसाउअं बंधिय मणुसेसु उप्पज्जिय गब्भादिअट्ठवस्सेहि संजमं घेत्तूण सव्वलहुमंतोमुहुत्तेण कालेण केवलणाणमुप्पाइय लोगमावूरिय ट्ठिदम्मि जं दव्वं तस्स संखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो । दोहि बंधगद्धाहि संचिदुक्कस्सदव्वादो एदमेगबंधगद्धासंचिददव्वं किंचूणद्धमेत्तं होदूण मणुस्सेसु गलिदबहुसंखेज्जदिभागत्तादो संखेज्जगुणहीणं होदि त्ति भणिदं होदि । जहण्णबंधगद्धाए बद्धे वि उक्कस्सदव्वादो तिहुवणगयजिणाउवदव्वं[1] संखेज्ज-

जिस जीवके आयुकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके वह द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ७७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन व असंख्यातगुणहीन इन दो स्थानोंमें पतित होती है ॥ ७८ ॥

शंका—द्रव्यवेदना उत्कृष्ट क्यों नहीं होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उत्कृष्ट योगसे विशेषताको प्राप्त हुए दो आयुबन्धक कालोंके द्वारा जो उत्कृष्ट द्रव्य जलचर जीवोंमें संचयको प्राप्त है उसकी तीन लोकोंमें फैलकर स्थित हुए केवलीमें सम्भावना नहीं है ।

शंका—वह संख्यातगुणा हीन कैसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उत्कृष्ट योगके द्वारा उत्कृष्ट बन्धककालमें मनुष्यायुको बाँधकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो गर्भसे लेकर आठ वर्षोंमें संयमको ग्रहणकर सर्वलघु अन्तर्मुहूर्त कालमें केवलज्ञानको उत्पन्नकर लोकको पूर्ण करके स्थित हुए केवलीमें जो द्रव्य होता है वह संख्यातगुणा हीन पाया जाता है । दो बन्धककालों द्वारा संचयको प्राप्त हुए उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा यह एक बन्धककाल द्वारा संचित द्रव्य कुछ कम अर्ध भाग प्रमाण होकर मनुष्योंमें संख्यात बहुभागके गल जानेसे संख्यातगुणा हीन होता है, यह उसका अभिप्राय है ।

शंका—जघन्य बन्धक कालके द्वारा बाँधनेपर भी उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा लोक पूरणसमुद्घातमें वर्तमान केवलीका आयु द्रव्य चूंकि संख्यातगुणा हीन ही होता है, अतः उसकी असंख्यातगुणहीनता कैसे सम्भव है ?

१ अ-आ-ताप्रतिषु 'जिणाउवदव्वं' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

गुणहीणं चेव होदि त्ति कधमसंखेज्जगुणहीणत्तं ? ण, असंखेज्जगुणहीणजोगेण मणुस्सा-उअं बंधिय मणुस्सेसु उप्पज्जिय केवलणाणमुप्पाइय सव्वलोगं गयकेवलिस्स असंखेज्ज-गुणहीणत्तुवलंभादो ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ७९ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ८० ॥

लोगे आवुण्णे[1] जेण आउअट्ठिदी अंतोमुहुत्तमेत्ता चेव तेण कालवेयणा उक्कस्स-ट्ठिदीदो असंखेज्जगुणहीणा त्ति सिद्धं ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८१ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ८२ ॥

कुदो ? मणुस्साउअउक्कस्साणुभागादो अप्पमत्तसंजदेण बद्धदेवाउअउक्कस्साणुभा-गस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८३ ॥

समाधान—नहीं, क्योंकि, असंख्यातगुणहीन योगके द्वारा मनुष्यायुको बाँधकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो केवलज्ञानको उत्पन्न करके सर्वलोकको प्राप्त केवलीका द्रव्य असंख्यातगुणा हीन पाया जाता है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ७९ ॥

यह सूत्र सुगम है ?

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ८० ॥

चूंकि लोकपूरण समुद्घातमें आयुकी स्थिति अन्तर्मुहूर्त मात्र होती है, अतएव कालवेदना उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हीन है; यह सिद्ध है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥८१॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ ८२ ॥

कारण यह कि मनुष्यायुके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अप्रमत्तसंयतके द्वारा बाँधी गई देवायुका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा हीन पाया जाता है ।

जिसके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ८३ ॥

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'आउवुण्णे' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ ८४ ॥

तं जहा—उक्कस्सजोगेण उक्कस्सबंधगद्धाए मणुस्साउअं बंधिय मणुस्सेसु उप्पज्जिय संजमं घेत्तूण पुव्वकोडितिभागपढमसमए देवाउए पबद्धे[1] आउअस्स उक्कस्सट्ठिदी होदि, पुव्वकोडितिभागाहियतेत्तीससागरोवमपमाणत्तादो । उवरि किण्ण उक्कस्सट्ठिदी जायदे ? ण, अधट्ठिदिगलणाए समयं पडि गलमाणियाए उवरि उक्कस्सत्तविरोहादो । एत्थ जं दव्वं तमुक्कस्सदव्वस्स संखेज्जदिभागो । कुदो ? सादिरेयछब्भागत्तादो । एवमुक्कस्सबंधगद्धाए दुभागेण आउवे बंधाविदे वि संखेज्जगुणहीणं[2] होदि, सादिरेयबारसभागत्तादो । एवं [3]बंधगद्धमस्सिदूण एदं दव्वमुक्कस्सदव्वस्स संखेज्जदिभागो[4] चेव होदि । जोगमस्सिदूण पुण संखेज्जगुणहीणमसंखेज्जगुणहीणं च संलब्भदि[5], संखेज्ज गुणहीण-असंखेज्जगुणहीणजोगाणं संभवादो । तम्हा आउअदव्ववेयणा सगुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण उक्कस्सकालाविणाभाविणी विट्ठाणपदिदा चेव होदि त्ति सिद्धं ।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन व असंख्यातगुणहीन इन दो स्थानोंमें पतित होती है ॥ ८४ ॥

वह इस प्रकारसे—उत्कृष्ट योगके द्वारा उत्कृष्ट बन्धककालमें मनुष्यायुको बाँधकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो संयमको ग्रहणकर पूर्वकोटित्रिभागके प्रथम समयमें देवायुके बाँधनेपर आयुकी उत्कृष्ट स्थिति होती है, क्योंकि, वह पूर्वकोटित्रिभागसे अधिक तेतीस सागरोपम प्रमाण होती है ।

शंका—ऊपर उत्कृष्ट स्थिति क्यों नहीं होती ?

समाधान—नहीं, क्योंकि ऊपर अधःस्थितिके गलनेसे प्रत्येक समयमें गलनेवाली उसके उत्कृष्ट होनेका विरोध है ।

यहाँ जो द्रव्य है वह उत्कृष्ट द्रव्यके संख्यातवें भाग प्रमाण है, क्योंकि, वह साधिक छठे भाग प्रमाण है । इस प्रकार उत्कृष्ट बन्धक कालके द्वितीय भागसे आयुके बँधानेपर भी द्रव्य संख्यातगुणा हीन ही होता है, क्योंकि, वह साधिक बारहवें भाग प्रमाण होता है । इस प्रकार बन्धककालका आश्रय करके यह द्रव्य उत्कृष्ट द्रव्यके संख्यातवें भाग ही होता है । परन्तु योगका आश्रय करके वह संख्यातगुणा हीन और असंख्यातगुणा हीन पाया जाता है, क्योंकि, संख्यातगुण हीन और असंख्यातगुण हीन योगों की सम्भावना है । इस कारण आयु कर्मकी द्रव्य वेदना अपने उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा करके उत्कृष्ट कालके साथ अविनाभाविनी होकर उक्त दो स्थानोंमें ही पतित होती है, यह सिद्ध है ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'पबद्धो' इति पाठः । २ अ-आ काप्रतिषु 'असंखेजगुणहीणं' इति पाठः । ३ अ-आ-काप्रतिषु पबंधा-' इति पाठः । ४ अ-आप्रत्योः 'संखेजदिभागे' इति पाठः । ५ ताप्रतौ 'लब्भदि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८५ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ८६ ॥

कुदो ? अद्धुट्ठरयणिमादिं कादूण जाव पंचधणुस्सद-पणवीसुत्तरदीहत्तुवलक्खियाणं उक्कस्सकालसामित्तम्हि संभवंतक्खेत्ताणं घणलोगस्स असंखेज्जदिभागत्तुवलंभादो । अद्धट्ठमरज्जूणं मुक्कमारणंतियमहामच्छखेत्तं कालसामिस्स उक्कस्समिदि किण्ण घेप्पदे ? ण एस दोसो, अबद्धाउआण वज्झमाणाउआणं च जीवाणं मारणंतियाभावादो ।

तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८७ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ ८८ ॥

कुदो ? आउअस्स उक्कस्सकालवेयणा आउअबंधपढमसमए वट्टमाणपमत्तसंजदम्मि होदि । उक्कस्सभाववेयणा पुण आउअबंधगद्धाए चरिमसमए वट्टमाणस्स अप्पमत्तसंजदम्मि पमत्तविसोहीदो अणंतगुणविसोहिपरिणामस्स[1] होदि । तेण कारणेण

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ८५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणीहीन होती है ॥ ८६ ॥

कारण कि साढ़े तीन रत्निसे लेकर पाँच सौ पच्चीस धनुष प्रमाण दीर्घतासे उपलक्षित जिन क्षेत्रोंकी उत्कृष्ट काल स्वामित्वमें सम्भावना है वे घनलोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण पाये जाते हैं ।

शंका—साढ़े सात राजु मारणान्तिक समुद्घातको करनेवाले महामत्स्यका क्षेत्र काल स्वामीका उत्कृष्ट क्षेत्र है, ऐसा ग्रहण क्यों नहीं करते ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अबद्धायुष्क और वर्तमानमें आयुको बांधनेवाले जीवोंके मारणान्तिक समुद्घात नहीं होता ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ८७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणो हीन होती है ॥ ८८ ॥

कारण यह कि आयुकी उत्कृष्ट कालवेदना आयुबन्धके प्रथम समयमें वर्तमान प्रमत्तसंयत जीवके होती है। परन्तु उसकी उत्कृष्ट भाववेदना आयुबन्धक कालके अन्तिम समयमें वर्तमान व प्रमत्तसंयतकी विशुद्धिसे अनन्तगुणे विशुद्धिपरिणामवाले अप्रमत्तसंयत जीवके होती है । इसी कारणसे

१ आप्रतौ '-विसोहीए परिणामस्स' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणंतगुणविसोहिपरिणामेण बद्धाउअउक्कस्साणुभागादो अणंतगुणहीणविसोहिपरिणामेण बद्धअणुभागो [1]उक्कस्सकालाविणाभावी अणंतगुणहीणो त्ति[2] ।

जस्स आउअवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ८९ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्ज-गुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ ९० ॥

तं जहा— उक्कस्सबंधगद्धाए उक्कस्सजोगेण य जदि मणुस्साउअं बंधिऊण मणुस्सेसु उप्पज्जिय संजमं घेत्तूण उक्कस्साणुभागं बंधदि तो भावुक्कस्सम्मि दव्ववेयणा सगुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण संखेज्जभागहीणा होदि । कुदो ? भुंजमाणाउअस्स सादिरेय-बेतिभागमेत्तदव्वे गलिदे संते भावस्स उक्कस्सत्तुप्पत्तीदो । मणुस्साउए उक्कस्सबंधग-द्धाए दुभागेण बंधाविदे छब्भागाहि चदुब्भागमेत्ता होदि । एवं गंतूण भावसामिस्स दो वि आउआणि उक्कस्सबंधगद्धाए दुभागेण बंधाविय भावे उक्कस्से कदे संखेज्जगुण-हाणी होदि, ओघुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण भावसामिदव्वस्स तिभागत्तुवलंभादो । एवं

अनन्तगुणे विशुद्धि परिणामके द्वारा बाँधी गई आयुके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन विशुद्धिपरिणामके द्वारा बांधा गया अनुभाग उत्कृष्ट कालका अविनाभावी व अनन्तगुणा हीन है ।

जिस जीवके आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ८९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन व असंख्यात-गुणहीन इन तीन स्थानोंमें पतित होती है ॥ ९० ॥

वह इस प्रकारसे—उत्कृष्ट बन्धककाल और उत्कृष्ट योगके द्वारा यदि मनुष्यायुको बाँधकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो संयमको ग्रहण करके उत्कृष्ट अनुभागको बाँधता है तो भावकी उत्कृष्टतामें द्रव्यवेदना अपने उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा संख्यातभाग हीन होती है, क्योंकि, भुज्यमान आयु सम्बन्धी साधिक दो त्रिभाग प्रमाण द्रव्यके गल जानेपर भावकी उत्कृष्टता उत्पन्न होती है । उत्कृष्ट बन्धककालके द्वितीय भागसे मनुष्यायुको बँधानेपर उक्त वेदना छह भागोंमें चार भाग प्रमाण होती है । इस प्रकार जाकर भावस्वामीके दोनों ही आयुओंको उत्कृष्ट बन्धक कालके द्वितीय भागसे बंधाकर भावके उत्कृष्ट करनेपर संख्यातगुणहानि होती है, क्योंकि, ओघ उत्कृष्ट द्रव्य की अपेक्षा भाव स्वामीका द्रव्य तृतीय भाग प्रमाण पाया जाता है । इस प्रकार बन्धक कालकी हानिसे संख्यात-

१ आप्रतौ 'विसोहिपरिणामेणाणुभागो बद्धउक्कस्स-' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'हीणा त्ति' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधगद्धापरिहाणीदो संखेज्जगुणहाणी परूवेदव्वा । दो वि बंधगद्धाओ उक्कस्साओ[1] करिय असंखेज्जगुणहीणजोगेण बंधाविय भावे उक्कस्से कदे असंखेज्जगुणहाणी होदि । तम्हा उक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण भावसामिदव्वं तिट्ठाणपदिदं ति घेत्तव्वं ।

तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ९१ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ९२ ॥

कुदो ? भावसामिउक्कस्सखेत्तस्स वि घणलोगस्स असंखेज्जदिभागत्तुवलंभादो । ण च आउअस्स उक्कस्सभावो लोगपूरणे संभवदि, बद्धाउआणं खवगसेडिमारुहणाभावादो ।

तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ ९३ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥९४॥

ठिदिबंधे उक्कस्से जादे पुणो पच्छा अंतोमुहुत्तट्ठिदीए गलिदाए चेव उक्कस्स-भावबंधो होदि त्ति भावसामिकालवेयणा असंखेज्जभागहीणा । एवमसंखेज्जभागहीणा

गुणहानिकी प्ररूपणा करनी चाहिये । दोनों बन्धककालोंको उत्कृष्ट करके असंख्यातगुणहीन योगसे बंधाकर भावके उत्कृष्ट करनेपर असंख्यातगुणहानि होती है । इस कारण उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा करके भावस्वामीका द्रव्य तीन स्थानोंमें पतित है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा उक्त वेदना क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ९१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ ९२ ॥

कारणकी भावस्वामीका उत्कृष्ट क्षेत्र भी घनलोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण पाया जाता है । यदि कहा जाय कि आयुका उत्कृष्ट भाव लोकपूरण समुद्घातमें सम्भव है, तो यह ठीक नहीं है; क्योंकि, बद्धायुष्क जीवोंके क्षपक श्रेणिपर आरोहण करना सम्भव नहीं है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ ९३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातभागहीन संख्यातभागहीन, संख्यातगुण-हीन व असंख्यातगुणहीन इन चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ ९४ ॥

स्थितिबन्धके उत्कृष्ट होनेपर फिर पश्चात् अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थितिके गल जानेपर ही चूँकि उत्कृष्ट भावबन्ध होता है, अतएव भावस्वामीकी कालवेदना असंख्यात भागहीन होती है । इस

१ ताप्रतौ 'उक्कस्साउअं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होदूण ताव गच्छदि जाव उक्कस्साउअमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदूण तत्थ एगखंडमेत्तं मणुस्सेसु देवेसु च ण गलिदं ति। तम्हि संपुण्णे गलिदे संखेज्जभागहाणी होदि। तत्तो प्पहुडि उवरि संखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जावुक्कस्सट्ठिदीए अद्धं गलिदं ति। तत्तो प्पहुडि उवरि संखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जावुक्कस्सट्ठिदिं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं ट्ठिदं ति। तत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जाव बद्धाउअदेवचरिमसमओ त्ति। सव्वत्थ भावो उक्कस्सो चेव, सरिसधणियपरमाणुहाणीए भावहाणीए अभावादो। अंतोमुहुत्तचरिमसमयस्स कधमुक्कस्साणुभागसंभवो? ण, तस्स अणुभागखंडयघादाभावादो। तम्हा चउट्ठाणपदिदा कालवेयणा त्ति सद्दहेयव्वं। चउट्ठाणपदिदा त्ति ण वत्तव्वं, असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा इच्चेदेणेव सिद्धत्तादो? ण एस दोसो, दव्वट्ठियणयाणुग्गहट्ठं तदुत्तीदो। ण च एक्कस्सेव[1] वयणस्स जिणा अणुग्गहं कुणंति, समाणत्ताभावेण जिणत्तस्सेव[2] अभावप्पसंगादो। एवमुक्कस्सओ सत्थाणवेयणासण्णियासो समत्तो।

जो सो थप्पो जहण्णओ सत्थाणवेयणसण्णियासो सो चउव्विहो— दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ॥ ९५ ॥

प्रकार असंख्यातभागहीन होकर तब तक जाती है जब तक कि उत्कृष्ट आयुको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड प्रमाण मनुष्यों और देवोंमें नहीं गलित हो जाता है। उसके सम्पूर्ण गल जानेपर संख्यातभागहानि होती है। वहाँसे लेकर आगे उत्कृष्ट स्थितिका अर्ध भाग गलित होने तक संख्यातभागहानि होकर जाती है। उससे लेकर आगे उत्कृष्ट स्थितिको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित कर उनमें एक खण्डके स्थित होने तक संख्यातगुणहानि होकर जाती है। उससे आगे बद्धायुष्क देवके अन्तिम समय तक असंख्यातगुणहानि होकर जाती है। भाव सर्वत्र उत्कृष्ट ही रहता है, क्योंकि समान धनवाले परमाणुओंकी हानिसे भावहानिका अभाव है।

शंका—अन्तर्मुहूर्तके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट अनुभागकी सम्भावना कैसे है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उसके अनुभागकाण्डकघातका अभाव है। इसलिये कालवेदना उक्त चार स्थानोंमें पतित है, ऐसा श्रद्धान करना चाहिये।

शंका—वह 'चार स्थानोंमें पतित है' यह नहीं कहना चाहिये, क्योंकि "असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन और असंख्यातगुणहीन" इस सूत्रांशसे ही वह सिद्ध है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, द्रव्यार्थिक नयके अनुग्रहार्थ 'यह चार स्थानोंमें पतित है' यह कहा गया है। जिन भगवान् किसी एक ही वचनका अनुग्रह नहीं करते हैं, क्योंकि, ऐसा मानने पर [दोनों वचनोंमें] समानताका अभाव होनेसे जिनत्वके ही अभावका प्रसंग आता है।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वस्थान वेदना संनिकर्ष समाप्त हुआ।

जिस जघन्य स्वस्थान वेदनासंनिकर्षको स्थगित किया था वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके भेदसे चार प्रकारका है ॥ ९५ ॥

१ आप्रतौ 'एक्किस्सेव' इति पाठः। २ अप्रतौ 'सगाणत्ताभावादो ण जिणत्तस्सेव', आप्रतौ 'समाणत्ताभावोण जिणा तस्सेव', काप्रतौ 'समाणत्ताभावा ण जिणा तस्सेव' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सण्णियासो चउव्विहो चेव होदि, दव्व-खेत्त-काल-भावेहिंतो वदिरित्तस्स अण्णस्स पंचमस्स अभावादो।

जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ९६ ॥

किमट्ठं पण्हपुरस्सरा चेव अत्थपरूवणा कीरदे? सोदुमिच्छंताणं चेव अत्थपरूपणा कीरदे, ण अण्णेसिमिदि जाणावणट्ठं; अण्णहा परूवणाए विहलत्तप्पसंगादो। उक्तं च—

बुद्धिविहीने श्रोतरि वक्तृत्वमनर्थकं भवति पुंसाम्।
नेत्रविहीने भर्तरि विलास-लावण्यवत्स्त्रीणाम् ॥ ४ ॥

धारण-गहणसमत्थाणं चेव संजदाणं [1]विणयालंकाराणं वक्खाणं कादव्वमिदि भणिदं होदि।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ ९७ ॥

कुदो? सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स तिसमयआहार-तिसमयतब्भवत्थस्स [2]जहण्णजोगिस्स जहण्णोगाहणादो घणंगुलस्स असंखेज्जदिभागपमाणादो [3]णाणावरणजहण्ण-

---

संनिकर्ष चार प्रकारका ही है, क्योंकि द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावसे भिन्न अन्य पाँचवें संनिकर्षका अभाव है।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ९६ ॥

शंका—प्रश्नपूर्वक ही अर्थकी प्ररूपणा किसलिये की जाती है?

समाधान—सुननेकी इच्छा रखनेवाले जीवोंके लिये ही अर्थकी प्ररूपणा की जाती है, अन्यके लिये नहीं; यह जतलानेके लिये प्रश्नपूर्वक अर्थप्ररूपणा की जाती है, क्योंकि, इसके बिना प्ररूपणाके निष्फल होनेका प्रसंग आता है। कहा भी है—

जिस प्रकार पतिके अन्धे होनेपर स्त्रियोंका विलास व सुन्दरता व्यर्थ (निष्फल) है, इसी प्रकार श्रोताके मूर्ख होनेपर पुरुषोंका वक्तापन भी व्यर्थ है ॥ ४ ॥

धारण व अर्थग्रहणमें समर्थ तथा विनयसे अलंकृत ही संयमी जनोंके लिये व्याख्यान करना चाहिये, यह उसका अभिप्राय है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ ९७ ॥

कारण यह कि त्रिसमयवर्ती आहारक व तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान जघन्य योगवाले सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तककी घनांगुलके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य अवगाहनाकी

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'विणाया-' इति पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'तब्भवत्थजहण्ण-' इति पाठः।
३ ताप्रतौ '-पमाणत्तादो। णाणावरण' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दव्वसामिचरिसमयखीणकसायस्स अद्धुट्ठरयणिउस्सेहस्स जहण्णोगाहणाए वि घणंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताए असंखेज्जगुणत्तवलंभादो ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ९८ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ ९९ ॥

कुदो ? खीणकसायचरिमसमए वट्टमाणणाणावरणीयजहण्णदव्वस्स एगसमयट्ठिदिदंसणादो, अण्णहा दव्वस्स जहण्णत्ताणुववत्तीदो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १०० ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ १०१ ॥

कुदो ? अपुव्वकरण-अणियट्टिकरण सुहुमसांपराइय-खीणकसाएहि अणुभागखंडयघादेण अणुसमओवट्टणाए च छिज्जिदूण जहण्णदव्वम्मि ट्ठिदअणुभागस्स जहण्णभावुवलंभादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १०२ ॥

अपेक्षा ज्ञानावरणीय कर्मके जघन्य द्रव्यके स्वामी व साढ़े तीन रत्नि प्रमाण शरीरोत्सेधसंयुक्त अन्तिम समयवर्ती क्षीणकषाय जीवकी घनांगुलके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य अवगाहना भी असंख्यातगुणी पायी जाती है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ९८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य होती है ॥ ९९ ॥

कारण यह कि क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें वर्तमान जीवके ज्ञानावरणीय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यकी एक समय स्थिति देखी जाती है, क्योंकि, इसके विना द्रव्यकी जघन्यता बन नहीं सकती ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य होती है ॥ १०१ ॥

कारण कि अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्परायिक और क्षीणकषाय जीवोंके द्वारा किये गये अनुभागकाण्डक घात और अनुसमयापवर्तनासे छिदकर जघन्य द्रव्यमें स्थित अनुभागके जघन्यपना पाया जाता है ।

जिसके ज्ञानावरणीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०२ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागब्भहिया[1] वा संखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जगुणब्भहिया वा असंखेज्जगुणब्भहिया वा ॥ १०३ ॥

तं जहा— खविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण विपरीयं गंतूण सुहुमणिगोद-अपज्जत्तएसु जहण्णजोगेसु उप्पज्जिय तिसमयतब्भवत्थस्स जहण्णिया खेत्तवेयणा जादा। तत्थ जं दव्वं तं पुण खीणकसायचरिमसमयओघजहण्णदव्वं पेक्खिदूण असंखेज्जभाग-ब्भहियं होदि । को पडिभागो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । किमट्ठमसंखेज्जदि-भागब्भहियं ? खविदकम्मंसियकालब्भंतरे खविज्जमाणदव्वस्स असंखेज्जेसु भागेसु णट्ठेसु असंखेज्जदिभागमेत्तदव्वस्स अविणासुवलंभादो । पुणो एदस्स दव्वस्सुवरि एगेगपरमाणुं वड्ढिदे वि दव्वस्स असंखेज्जभागवड्ढी चेव । एवमसंखेज्जभागब्भहियसरूवेण णेयव्वं जाव जहण्णदव्वमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्तं जहण्णदव्वस्सुवरि वड्ढिदं ति । तदो संखेज्जभागवड्ढीए आदी होदि । एत्तो प्पहुडि परमाणुत्तरकमेण संखेज्जभाग-

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातभाग अधिक, संख्यातभाग अधिक, संख्यातगुण अधिक और असंख्यातगुण अधिक इन चार स्थानोंमें पतित होती है ॥१०३।

वह इस प्रकारसे— क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके विपरीत स्वरूपको प्राप्त हो जघन्य योगवाले सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंमें उत्पन्न होकर तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान जीवके क्षेत्रवेदना जघन्य होती है । परन्तु उसके जो द्रव्य होता है वह क्षीणकषायके अन्तिम समय सम्बधी ओघ जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक होता है । उसका प्रतिभाग पल्योपमका असंख्यावाँ भाग है ।

शंका— असंख्यातवें भागसे अधिक किसलिये है ?

समाधान— इसका कारण यह है कि क्षपितकर्मांशिककालके भीतर क्षयको प्राप्त कराये जाने-वाले द्रव्यके असंख्यात बहुभागोंके नष्ट हो जानेपर असंख्यातवें भाग मात्र द्रव्यका अविनाश पाया जाता है ।

फिर इस द्रव्यके ऊपर एक एक परमाणुकी वृद्धिके होनेपर भी द्रव्यके असंख्यातभागवृद्धि ही होती है । इस प्रकार असंख्यातवें भाग अधिक स्वरूपसे जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक खण्ड मात्रकी जघन्य द्रव्यके ऊपर वृद्धि हो जाने तक ले जाना चाहिये । पश्चात् संख्यातभागवृद्धिका प्रारम्भ होता है । यहाँसे लेकर परमाणु अधिक क्रमसे संख्यातभागवृद्धि तब

१ अ-आ-काप्रतिषु 'भागव्वड्ढिया' इति पाठः, प्रतिष्विमास्वग्रे सर्वत्र 'अब्भहिय' इत्येतस्य स्थाने प्रायः 'अव्वहिय' एव पाठः उपलभ्यते ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वड्ढी ताव गच्छदि जाव जहण्णदव्वस्सुवरि [1]अण्णेगजहण्णदव्वमेत्तं वड्ढिदं ति। ताधे संखेज्जगुणवड्ढीए आदी होदि। एत्तो उवरि परमाणुत्तरकमेण वड्ढमाणे संखेज्जगुणवड्ढी चेव होदि जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जेण गुणिदं ति। तत्तो पहुडि उवरिमसंखेज्जगुणवड्ढी चेव होदूण गच्छदि जाव जहण्णक्खेत्तसहचारिउक्कस्सदव्वं ति। केण लक्खणेणागदस्स उक्कस्सदव्वं जायदे? गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सत्तमपुढविणेरइयचरिमसमए दव्वमुक्कस्सं करिय पंचिंदियतिरिक्खेसु उप्पज्जिय पुणो तिसमयआहार-तिसमयतब्भवत्थ-जहण्णजोगसुहुमणिगोदअपज्जत्तएसु उप्पण्णस्स उक्कस्सं जायदे। एदेण कारणेण दव्वं चउट्ठाणपदिदं चेवे त्ति घेत्तव्वं।

तस्स कालदो किं जहण्णा [अजहण्णा] ॥ १०४ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १०५ ॥

कुदो? खीणकसायचरिमसमयजहण्णदव्वकालेण एगसमयपमाणेण जहण्णखेत्त-सहचारिणाणावरणीयकाले सागरोवमस्स तिण्णिसत्तभागमेत्ते पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागेण परिहीणे भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १०६ ॥

तक जाती है जब तक जघन्य द्रव्यके ऊपर अन्य एक जघन्य द्रव्य प्रमाण वृद्धि होती है। तब संख्यातगुणवृद्धिका प्रारम्भ होता है। इससे आगे परमाणु अधिक क्रमसे वृद्धिके चालू रहनेपर जघन्य परीतासंख्यातसे गुणित मात्र होने तक संख्यातगुणवृद्धि ही होती है उससे लेकर आगे जघन्य क्षेत्रके साथ रहनेवाले उत्कृष्ट द्रव्य तक असंख्यातगुणवृद्धि ही होकर जाती है।

शंका—किस स्वरूपसे आये हुए जीवके उत्कृष्ट द्रव्य होता है?

समाधान—गुणितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके सप्तम पृथिवीस्थ नारकीके अन्तिम समयमें द्रव्यको उत्कृष्ट करके पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हो। पुनः त्रिसमयवर्ती आहारक और तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान जघन्य योगवाले सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंमें उत्पन्न हुए जीवके उत्कृष्ट द्रव्य होता है। इसी कारणसे द्रव्य चार स्थानोंमें ही पतित है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १०५ ॥

कारण कि क्षीणकषायके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यके एक समय प्रमाण कालका जघन्य क्षेत्र के साथ रहनेवाले पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे तीन भाग प्रमाण ज्ञानावरणीय कालमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०६ ॥

१ प्रतिषु 'अणेग' इति पाठः।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १०७ ॥

कुदो ? जहण्णक्खेत्तसहचारिणाणावरणीयअणुभागस्स अपुव्वकरण-अणियट्टिकरण-सुहुमसांपराइय-खीणकसायपरिणामेहि खंडयसरूवेण अणुसमओवट्टणाए च जहण्णाणुभागस्सेव घादाभावादो । सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स अणुभागो वि घादं पत्तो तो वि जहण्णाणुभागादो अणंतगुणत्तं मोत्तूण ण सेसपंचअवत्थाविसेसे पडिवज्जदे, अक्खवगविसोहीहि घादिज्जमाण–[1]अणुभागस्स खवगेहि घादिज्जमाण–अणुभागं पेक्खिदूण अणंतगुणत्तुवलंभादो[2] । एत्थ उवउज्जंती गाहा—

(सुहुमणुभागादुवरि अंतरमकादुं ति [3]घादिकम्माणं ।
केवलिणो वि य उवरिं भवओगह[4]अप्पसत्थाणं ॥५॥)

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १०८ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जगुणब्भहिया वा असंखेज्जगुणब्भहिया वा ॥ १०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १०७ ॥

कारण कि जघन्य क्षेत्रके साथ रहनेवाले ज्ञानावरणीयके अनुभागका अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्परायिक और क्षीणकषाय परिणामों द्वारा काण्डक स्वरूपसे और अनुसमयापवर्तनासे जघन्य अनुभागके समान घात नहीं होता है। यद्यपि सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकका अनुभाग भी घातको प्राप्त हो चुका है तो भी वह जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणत्वको छोड़कर शेष पाँच अवस्थाविशेषोंमें प्राप्त नहीं होता है, क्योंकि, अक्षपकके विशुद्ध परिणामों द्वारा घाता जानेवाला अनुभाग क्षपकों द्वारा घाते जानेवाले अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा पाया जाता है। यहाँ उपयोगी गाथा—

.... ॥ ५ ॥

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके वह द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १०८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी। जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य अनन्तभाग अधिक, असंख्यातभाग अधिक, संख्यातभाग अधिक, संख्यातगुण अधिक और असंख्यातगुण अधिक, इन पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ १०९ ॥

---

१ अ-आ-काप्रतिषु - ज्जमाण अणुभागं इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'अणंतगुणहीणत्तुवलभादो' इति पाठः । ३ ताप्रतौ '-मकदं तिघादि-' इति पाठः । ४ मप्रतौ 'चवओगह' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण खीणकसायचरिमसमए ट्ठिदस्स कालेण सह दव्वं पि जहण्णं, खविज्जमाणकम्मपदेसाणं सव्वेसिं पि खविदत्तादो। एदस्स जहण्ण-दव्वस्सुवरि एग-दोआदिकम्मपोग्गलेसु वड्ढिदेसु दव्ववेयणा अजहण्णत्तं पडिवज्जदे। सा वि¹ पंचट्ठाणपदिदा होदि, ण छट्ठाणपदिदा होदि, एत्थ छट्ठाणस्स संभवाभावादो। काणि ताणि पंचट्ठाणाणि त्ति तण्णिण्णयत्थमुत्तरसुत्तावयवो भणिदो। एदेसिं पंचण्णं पि ट्ठाणाणं परूवणा कीरदे। तं जहा—जहण्णट्ठाणस्सुवरि एगपरमाणुम्हि वड्ढिदे अणंत-भागब्भहियं ट्ठाणं होदि। एदमादिं कादूण ताव अणंतभागवड्ढी होदूण गच्छदि जाव जहण्णदव्वे उक्कस्सअसंखेज्जेण खंडिदे तत्थ एगखंडेण जहण्णदव्वं वड्ढिदं ति। तदो प्पहुडि परमाणुत्तरादिकमेण असंखेज्जभागवड्ढी होदूण ताव गच्छदि जाव जहण्णदव्व-मुक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तं पविट्ठं ति। एत्तो प्पहुडि उवरिं संखेज्जभाग-वड्ढी। एवं जाणिदूण णेयव्वं जाव असंखेज्जगुणवड्ढि त्ति। एत्थ चरिमवियप्पो गुणिद-कम्मंसियमस्सिदूण वत्तव्वो। सेसं सुगमं।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११० ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १११ ॥

क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें स्थित हुए जीवके कालके साथ द्रव्य भी जघन्य होता है, क्योंकि, यहाँ क्षयको प्राप्त कराये जानेवाले सभी कर्मप्रदेशोंका क्षय हो चुकता है। इस अजघन्य द्रव्यके ऊपर एक दो आदि कर्मपुद्गलोंकी वृद्धिके होनेपर द्रव्यवेदना अजघन्य अवस्थाको प्राप्त होती है। वह भी पाँच स्थानोंमें पतित होती है, छह स्थानोंमें पतित नहीं होती; क्योंकि, यहाँ छठे स्थानकी सम्भावना नहीं है। वे पाँच स्थान कौनसे हैं, इसका निर्णय करनेके लिये आगेका सूत्रांश कहा गया है। इन पाँचों स्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—जघन्य स्थान के ऊपर एक परमाणुकी वृद्धि होनेपर अनन्तभाग अधिक स्थान होता है। इससे लेकर तब तक अनन्तभागवृद्धि होकर जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित करनेपर उसमें एक खण्डसे जघन्य द्रव्य वृद्धिको प्राप्त होता है। उससे लेकर एक परमाणु अधिक इत्यादि क्रमसे असंख्यातभागवृद्धि होकर तब तक जाती है जब तक कि जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्ड मात्र द्रव्य प्रविष्ट होता है। यहाँसे लेकर आगे संख्यातभागवृद्धि होती है। इस प्रकार जान करके असंख्यातगुणवृद्धि तक ले जाना चाहिये। यहाँ अन्तिम विकल्पका गुणितकर्मांशिकको आश्रित कर कथन करना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ११० ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १११ ॥

---

१ मप्रतौ 'ण वि' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुदो ? जहण्णकालसहचारिअद्धुट्ठरयणिउव्विद्धखीणकसायजहण्णक्खेत्तस्स वि अंगुलस्स संखेज्जदिभागस्स अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसुहुमणिगोदजहण्णक्खेत्तं पेक्खिदूण असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११२ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ ११३ ॥

कुदो ? खीणकसायचरिमसमए जहण्णकालोवलक्खिदकम्मक्खंधस्स जहण्णाणुभागं मोत्तूण अण्णाणुभागवियप्पाभावादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११४ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा ॥ ११५ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जहा जहण्णकाले णिरुद्धे दव्वस्स पंचट्ठाणपदिदत्तं परूविदं तहा एत्थ वि परूवेदव्वं, विसेसाभावादो ।

कारण कि जघन्य कालके साथ रहनेवाला अंगुलके संख्यातवें भाग मात्र क्षीणकषायका साढ़े तीन रत्नि प्रमाण ऊंचा जघन्य क्षेत्र भी अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र सूक्ष्म निगोद जीवके जघन्य क्षेत्रकी अपेक्षा असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ११२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसके उक्त वेदना जघन्य होती है ॥ ११३ ॥

कारण कि क्षीणकषायके अन्तिम समयमें जघन्य कालसे उपलक्षित कर्मस्कन्धके जघन्य अनुभागको छोड़कर अन्य अनुभागविकल्पोंका अभाव है ।

जिसके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ११४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उसके जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ ११५ ॥

इस सूत्रके अर्थका कथन करते समय जिस प्रकारसे जघन्य कालको विवक्षित करके द्रव्यके पाँच स्थानोंमें पतित होनेकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार यहाँ भी उसकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११६ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ ११७ ॥

कुदो ? खीणकसायचरिमसमयजहण्णाणुभागसहचारिजहण्णखेत्तस्स वि सुहुमणिगोदापज्जत्तजहण्णखेत्तमंगुलस्स असंखेज्जदिभागं पेक्खिदूण असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ११८ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ ११९ ॥

कुदो ? खीणकसायचरिमसमयम्मि जहण्णभावेण विसिट्ठकम्मपरमाणूणं जहण्णकालं मोत्तूण कालंतराभावादो ।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ १२० ॥

जहा णाणावरणीयस्स दव्वादीणं सण्णियासो कदो तहा एदेसिं पि तिण्णं घादिकम्माणं कायव्वो ।

जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १२१ ॥

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ११६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ ११७ ॥

कारण यह कि क्षीणकषायके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य अनुभागके साथ रहनेवाला जघन्य क्षेत्र भी सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तकके अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण जघन्य क्षेत्रकी अपेक्षा असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ११८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उसके जघन्य होती है ॥ ११९ ॥

कारण कि क्षीणकषायके अन्तिम समयमें जघन्य भावके साथ विशिष्ट कर्मपरमाणुओंके जघन्य कालको छोड़कर अन्य कालका अभाव है ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मोंके जघन्य वेदनासंनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ १२० ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके द्रव्यादिकोंका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकार इन तीनों घातिया कर्मोंके संनिकर्षको भी करना चाहिये ।

जिसके वेदनीय कर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके वह क्या क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १२१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १२२ ॥

कुदो ? अद्धुट्ठरयणिउस्सेहमणुस्सेहिंतो हेट्ठिमउस्सेहमणुस्साणं अजोगिचरिमसमए अवट्ठाणाभावादो । ण च आहुट्ठुस्सेहओगाहणाए घणंगुलस्स संखेज्जदिभागं मोत्तूण तदसंखेज्जदिभागत्तं, अणुवलंभादो । ण च जहण्णखेत्तमंगुलस्स संखेज्जदिभागो, तदसंखेज्ज-दिभागत्तेण साहियत्तादो । तम्हा तत्तो एदस्स सिद्धमसंखेज्जगुणत्तं ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १२३ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ १२४ ॥

अजोगिचरिमसमयजहण्णदव्वम्हि जहण्णकालं[1] मोत्तूण कालंतराभावादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १२५ ॥

सुगमं ।

जहण्णा [वा] अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा अणंत-गुणब्भहिया ॥ १२६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १२२ ॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें साढ़े तीन रत्नि उत्सेधवाले मनुष्योंकी अपेक्षा नीचेके उत्सेध युक्त मनुष्योंका रहना सम्भव नहीं है । और साढ़े तीन रत्नि उत्सेध रूप अवगाहना घनांगुलके संख्यातवें भागको छोड़कर उसके असंख्यातवें भाग हो नहीं सकती, क्योंकि, वह पायी नहीं जाती है । इसके अतिरिक्त जघन्य क्षेत्र घनांगुलके संख्यातवें भाग प्रमाण हो, ऐसा भी नहीं है, क्योंकि, वह उसके असंख्यातवें भाग स्वरूपसे सिद्ध किया जाचुका है । इस कारण उसकी अपेक्षा इसका असंख्यातगुणत्व सिद्ध ही है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १२३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसके वह जघन्य होती है ॥ १२४ ॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यमें जघन्य कालको छोड़कर अन्य कालका अभाव है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १२५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य अनन्त-गुणी अधिक होती है ॥ १२६ ॥

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्णाकालं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जदि असादोदयेण णिव्वुओ होदि तो दव्वेण सह भावो वि जहण्णओ होदि, अजोगिदुचरिमसमए गलिदसादावेदणीयत्तादो खवगपरिणामेहि घादिय अणंतिमभागे[1] ट्ठविदअसादाणुभागत्तादो च। अध सादोदएण जइ सिज्झइ तो अणंतगुणब्भहिया, अजोगिदुचरिमसमए उदयाभावेण विणट्ठअसादत्तादो सुहुमसांपराइयचरिमसमए बद्धसादुक्कस्साणुभागस्स घादाभावादो असादुक्कस्साणुभागादो सादुक्कस्साणुभागस्स[2] अणंतगुणत्तुवलंभादो।

जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १२७ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा[3] चउट्ठाणपदिदा ॥ १२८ ॥

चउट्ठाणपदिदा त्ति वुत्ते असंखेज्जभागब्भहिय-संखेज्जभागब्भहिय-संखेज्जगुणब्भहिय-असंखेज्जगुणब्भहिया त्ति घेत्तव्वं। एदेसिं चदुट्ठाणाणं परूवणा जहा णाणावरणीयजहण्णखेत्ते णिरुद्धे तद्दव्वस्स कदा तधा कायव्वा।

तस्स कालदो किं जहण्णा [अजहण्णा] ॥ १२९ ॥

यदि जीव असाता वेदनीयके उदयके साथ मुक्त होता है तो द्रव्यके साथ भाव भी जघन्य होता है, क्योंकि, अयोगकेवलीके द्विचरम समयमें साता वेदनीय गल चुका है तथा असाताके अनुभागको क्षपक परिणामोंसे घात करके अनन्तवें भागमें स्थापित किया जाचुका है, परन्तु यदि साता वेदनीयके उदयके साथ सिद्ध होता है तो वह अनन्तगुणी अधिक होती है, क्योंकि, अयोगकेवलीके द्विचरम समयमें उदय न रहनेके कारण असाता वेदनीयके नष्ट हो जानेसे तथा सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें बांधे गये साता वेदनीयके अनुभागका घात न हो सकनेसे असाता वेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा साताका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है।

जिसके वेदनीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १२७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ १२८ ॥

'चार स्थानोंमें पतित होती है' ऐसा कहनेपर असंख्यात भाग अधिक, संख्यातभाग अधिक, संख्यातगुण अधिक और असंख्यातगुण अधिक, ऐसा ग्रहण करना चाहिये। ज्ञानावरणीयके जघन्य क्षेत्रको विवक्षितकर जैसे उसके द्रव्य सम्बन्धी इन चार स्थानोंकी प्ररूपणा की गई है वैसे ही यहाँ उनकी प्ररूपणा करना चाहिये।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १२९ ॥

---

१ का-ताप्रत्योः 'अणंतिमभावो' इति पाठः। २ का-ताप्रत्योः 'भागादो वि सादुक्कस्साणु-' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'जहण्णा' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १३० ॥

कुदो ? अजोगिचरिमसमयकम्माणं जहण्णकालमेगसमयं पेक्खिदूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणसागरोवमतिण्णिसत्तभागमेत्तट्ठिदीए जहण्णखेत्तसहचारिणीए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३१ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १३२ ॥

कुदो ? खवगपरिणामेहि पत्तघादअसादावेदणीयभावस्स अजोगिचरिमसमए जहण्णत्तब्भुवगमादो । जहण्णखेत्तवेयणीयभावस्स खवगपरिणामेहि घादाभावादो इमो भावो तत्तो अणंतगुणो त्ति दट्ठव्वो ।

जस्स वेयणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३३ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपाददा ॥ १३४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १३० ॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समय सम्बन्धी कर्मोंके एक समय रूप जघन्य कालकी अपेक्षा पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे तीन भाग मात्र जघन्य क्षेत्रके साथ रहनेवाली स्थिति असंख्यातगुणी पायी जाती है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १३१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १३२ ॥

कारण कि क्षपक परिणामोंके द्वारा घातको प्राप्त हुआ असातावेदनीयका भाव अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें जघन्य स्वीकार किया गया है । अतएव जघन्य क्षेत्रके साथ रहनेवाले वेदनीयके भावका क्षपक परिणामोंके द्वारा घात न होनेसे यह भाव उससे अनन्तगुणा है, ऐसा समझना चाहिये ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके वह क्या द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १३३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ १३४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जदि खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण अजोगिचरिमसमए जहण्णकालेण परिणदो होज्ज तो कालेण सह दव्वं पि जहण्णत्तमल्लियइ। अध खविद-गुणिद-घोलमाणा वा गुणिदकम्मंसिया वा अजोगिचरिमसमए जहण्णकालेण जदि परिणमंति तो पंचट्ठाण-पदिदा अजहण्णा दव्ववेयणा होज्ज। जहा णाणावरणीयजहण्णकाले णिरुद्धे तद्दव्वस्स पंचट्ठाणपरूवणा कदा तधा एत्थ वि कायव्वा, विसेसाभावादो।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३५ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १३६ ॥

कुदो? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागं सुहुमणिगोदजहण्णोगाहणं पेक्खिदूण अजोगि-जहण्णोगाहणाए अंगुलस्स संखेज्जदिभागमेत्ताए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३७ ॥

सुगमं।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया ॥ १३८ ॥

असादोदएण खवगसेडिं चढिय अजोगिचरिमसमए वट्टमाणस्स भाववेयणा

यदि क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके जीव अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें जघन्य कालसे परिणत होता है तो कालके साथ द्रव्य भी जघन्यताको प्राप्त होता है। परन्तु यदि क्षपित-गुणित-घोलमान अथवा गुणितकर्मांशिक जीव अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें जघन्य कालसे परिणत होते हैं तो वह द्रव्यवेदना पाँच स्थानोंमें पतित होकर अजघन्य होती है। जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके जघन्य कालकी विवक्षामें उसके द्रव्यके सम्बन्धमें पाँच स्थानोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे यहाँ भी करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १३५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १३६ ॥

कारण यह कि सूक्ष्म निगोद जीवकी अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य अवगाहनाकी अपेक्षा अंगुलके संख्यातवें भाग मात्र अयोगकेवलीकी जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी पायी जाती है।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १३७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी। जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १३८ ॥

असातावेदनीयके उदयके साथ क्षपकश्रेणि पर चढ़कर अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णा, तस्स दुचरिमसमए विणट्ठसादावेदणीयत्तादो। अध सादोदएण जदि खवगसेडिमारुहिय अजोगिचरिमसमए ट्ठिदो होदि तो भाववेयणा अजहण्णा। कुदो? असादावेदणीयभावस्सेव सादावेदणीयभावस्स सुहत्तणेण घादाभावादो। अजहण्णा होंता वि जहण्णादो अणंतगुणा, संसारावत्थाए सादाणुभागादो अणंतगुणहीणअसादाणुभागे खवगसेडीए बहूहि अणुभागखंडयघादेहि अणंतगुणहाणीए[1] घादिदे संते अजोगिचरिमसमए जो सेसो भावो सो जहण्णो जादो तेण तत्तो एसो सादाणुभागो अणंतगुणो, घादाभावेण उक्कस्सत्तादो।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १३९ ॥

सुगमं।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा ॥ १४० ॥

जदि सुद्धणयविसयखविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण चरिमसमयअजोगी जादो तो भावेण सह दव्वं पि जहण्णं चेव, विसरिसत्तस्स कारणाभावादो। अह असुद्धणयविसयखविदकम्मंसियो खविदघोलमाणो गुणिदघोलमाणो गुणिदकम्मंसियो वा खवग-

वर्तमान जीवके भाववेदना जघन्य होती है, क्योंकि, उसके द्विचरम समयमें साता वेदनीयका उदय नष्ट हो चुका है। परन्तु यदि साता वेदनीयके उदयके साथ क्षपकश्रेणिपर चढ़कर अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें स्थित होता है तो भाववेदना अजघन्य होती है; क्योंकि, असाता वेदनीयके भावके समान शुभ होनेसे साता वेदनीयके भावका घात सम्भव नहीं है। अजघन्य होकर भी वह जघन्यकी अपेक्षा अनन्तगुणी होती है, क्योंकि, संसारावस्थामें साता वेदनीयके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन असातावेदनीयके अनुभागका क्षपकश्रेणिमें बहुतसे अनुभाग काण्डकघातोंसे अनन्तगुणहानि द्वारा घात किये जानेपर अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें जो भाव शेष रहा है वह जघन्य हो चुका है। इसलिये उससे यह साताका अनुभाग अनन्तगुणा है, क्योंकि, वह घात रहित होनेसे उत्कृष्ट है।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १३९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी। जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित होती है ॥ १४० ॥

यदि शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके अन्तिम समयवर्ती अयोगी हुआ है तो भावके साथ द्रव्य भी जघन्य ही होता है, क्योंकि, उसके विसदृश होनेका कोई कारण नहीं है। परन्तु अशुद्ध नयका विषयभूत क्षपितकर्मांशिक, क्षपितघोलमान, गुणित-

१ ताप्रतौ 'अणंतगुणहाणीहि' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेडिमारुहिय जदि चरिमसमयअजोगी जादो तो भावो जहण्णो चेव, दव्वं होदि पुण अजहण्णं, जहण्णकारणाभावादो। होंतं पि जहण्णदव्वं पेक्खिदूण अणंतभागब्भहियं असंखेज्जभागब्भहियं संखेज्जभागब्भहियं संखेज्जगुणब्भहियं असंखेज्जगुणब्भहियं च होदि। कुदो? जहण्णदव्वस्सुवरि परमाणुत्तरकमेण दव्वविहाणे परूविदपंचवुड्ढित्तादो।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १४१ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १४२ ॥

कुदो? सुहुमणिगोदअपज्जत्तजहण्णोगाहणाए अजोगिजहण्णोगाहणाए ओवट्टिदाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १४३ ॥

सुगमं।

जहण्णा ॥ १४४ ॥

कुदो? जहण्णभावम्मि ट्ठिददव्वस्स एगसमयट्ठिदिदंसणादो।

जस्स आउअवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १४५ ॥

घोलमान अथवा गुणितकर्मांशिक जीव क्षपक श्रेणिपर चढ़कर यदि अन्तिम समयवर्ती अयोगी हुआ है तो भाव जघन्य ही होता है, परन्तु द्रव्य अजघन्य होता है; क्योंकि, उसके जघन्य होनेका कोई कारण नहीं है। अजघन्य हो करके भी वह जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे अधिक, असंख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातगुणा अधिक और असंख्यातगुणा अधिक होता है, क्योंकि, जघन्य द्रव्यके ऊपर परमाणु अधिक क्रमसे द्रव्यविधानमें कही गई पाँच वृद्धियाँ होती हैं।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १४१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १४२ ॥

कारण कि सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तककी जघन्य अवगाहनासे अयोगकेवलीकी जघन्य अवगाहनाको अपवर्तित करनेपर पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १४३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य होती है ॥ १४४ ॥

कारण कि जघन्य भावमें स्थित द्रव्यकी एक समय स्थिति देखी जाती है।

जिस जीवके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १४५ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १४६ ॥

कुदो ? आउअजहण्णखेत्तेण सुहुमणिगोदअपज्जत्तएसु लद्धेण[1] अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण जहण्णदव्वसामिओगाहणाए पंचधणुस्सदउस्सेहादो णिप्पण्णाए ओवट्टिदाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तरूवोवलंभादो ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १४७ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १४८ ॥

कुदो ? एगसमयपमाणेण जहण्णकालेण अंतोमुहुत्तमेत्तदीवसिहाए ओवट्टिदाए अंतोमुहुत्तमेत्तगुणगारुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १४९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १५० ॥

कुदो ? आउअस्स जहण्णभावो अपज्जत्तसंजुत्ततिरिक्खाउअजहण्णबंधम्मि जादो, जहण्णदव्वसामिभावो पुण सण्णिपंचिंदियपज्जत्तसंजुत्तबद्धआउअजहण्णदव्वसंबंधी ।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १४६ ॥

कारण कि सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकोंमें प्राप्त अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण आयु कर्मके जघन्य क्षेत्रसे पाँच सौ धनुष उत्सेधसे उत्पन्न जघन्य द्रव्यके स्वामीकी अवगाहनाको अपवर्तित करनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र रूप पाये जाते हैं ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १४७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १४८ ॥

कारण कि एक समय प्रमाण जघन्य कालसे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण दीपशिखाको अपवर्तित करनेपर अन्तर्मुहूर्त मात्र गुणकार पाया जाता है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १४९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १५० ॥

कारण यह कि आयु कर्मका जघन्य भाव अपर्याप्तके साथ तिर्यंच आयुके जघन्य बन्धमें होता है । परन्तु जघन्य द्रव्यके स्वामीका भाव संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तके साथ बाँधी गई आयुके

---

१ प्रतिषु 'अद्धेण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेण आउअजहण्णभावादो दीवसिहाजहण्णदव्वभावो अणंतगुणो त्ति सिद्धं ।

जस्स आउअवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो[1] किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १५१ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १५२ ॥

तं जहा—जहण्णखेत्तट्ठियआउअदव्वं जदि वि जहण्णजोगेण जहण्णबंधगद्धाए च बद्धं[2] होदि तो वि दीवसिहादव्वादो पंचिंदियजहण्णजोगेण एइंदियउक्कस्सजोगादो असंखेज्जगुणेण बद्धादो[3] असंखेज्जगुणं । कुदो ? दीवसिहादव्वम्मि व भवस्स[4] तदियसमयट्ठिदसुहुमेइंदियअपज्जत्तयम्मि असंखेज्जगुणहाणिमेत्तणिसेगाणं गलणाभावादो दीवसिहादव्वेण जहण्णखेत्तट्ठियदव्वे भागे हिदे अंगुलस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो वा ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १५३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १५४ ॥

जघन्य द्रव्यसे सम्बन्ध रखनेवाला है । इस कारण आयुके जघन्य भावकी अपेक्षा दीपशिखा रूप जघन्य द्रव्यका भाव अनन्तगुणा है, यह सिद्ध है ।

जिस जीवके आयुकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १५१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १५२ ॥

वह इस प्रकारसे—यद्यपि जघन्य क्षेत्रमें स्थित आयु कर्मका द्रव्य जघन्य योग और जघन्य बन्धक कालके द्वारा बांधा गया है तो भी वह एकेन्द्रिय जीवके उत्कृष्ट योगसे असंख्यातगुणे ऐसे पंचेन्द्रिय जीवके जघन्य योगके द्वारा बाँधे गये दीपशिखाद्रव्यसे असंख्यातगुणा है, क्योंकि, दीपशिखाद्रव्यके समान भवके तृतीय समयमें स्थित सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तके [द्रव्यमेंसे] असंख्यात गुणहानि प्रमाण निषेकोंके गलनेका अभाव है, अथवा दीपशिखा द्रव्यका जघन्य क्षेत्रस्थित द्रव्यमें भाग देनेपर अंगुलका असंख्यातवां भाग पाया जाता है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १५४ ॥

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'दव्व' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'बंधं' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'बंधादो' इति पाठः । ४ आप्रतौ 'दव्वम्मि व भयस्स', ताप्रतौ 'दव्वमिव भावस्स' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

कुदो ? जहण्णकालमेगसमयमेत्तं पेक्खिदूण जहण्णखेत्ताउअट्ठिदीए अंतोमुहुत्तमेत्ताए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १५५ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ॥ १५६ ॥

विहासा—जदि आउअं मज्झिमपरिणामेण बंधिय जहण्णक्खेत्तं करेदि तो खेत्तेण सह भावो वि जहण्णो[1] । अण्णहा पुण अजहण्णा, होंता वि छट्ठाणपदिदा; भावम्मि छहि पयारेहि वड्ढिदंसणादो ।

जस्स आउअवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १५७ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १५८ ॥

कुदो ? जहण्णदव्वेण एगसमयपबद्धं अंगुलस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिदे तत्थ

कारण कि एक समय प्रमाण जघन्य कालकी अपेक्षा जघन्य क्षेत्रस्थित आयु कर्मकी अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति असंख्यातगुणी पायी जाती है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १५५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती हैं और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित है ॥ १५६ ॥

उसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—यदि आयुको मध्यम परिणामसे बाँधकर जघन्य क्षेत्र करता है तो क्षेत्रके साथ भाव भी जघन्य होता है । परन्तु इससे विपरीत अवस्थामें भाव वेदना अजघन्य होती है । अजघन्य होकर भी वह छह स्थानोंमें पतित होती है, क्योंकि, भावमें छह प्रकारोंसे वृद्धि देखी जाती है ।

जिस जीवके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १५७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उसके नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १५८ ॥

कारण कि एक समयप्रबद्धको अंगुलके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक

---

१ प्रतिषु 'जहण्णा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगखंडमेत्तेण जहण्णकालदव्वे एगसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभागमेत्ते भागे हिदे असंखेज्ज-रूवोवलंभादो।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १५९ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा[1] असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १६० ॥

कुदो ? आउअजहण्णखेत्तेण अंगुलस्स संखेज्जदिभागमेत्तजहण्णकालजहण्णखेत्ते[2] भागे हिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६१ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १६२ ॥

कधमजोगिचरिमसमयजहण्णदव्वभावो जहण्णभावादो अणंतगुणो ? ण एस दोसो, सहावदो चेव तिरिक्खाउआणुभागादो मणुसाउअभावस्स अणंतगुणत्ता। खवगसेडीए पत्तघादस्स भावस्स कधमणंतगुणत्तं ? ण, आउअस्स खवगसेडीए पदेसस्स गुणसेडि-णिज्जराभावो व ट्ठिदि-अणुभागाणं[3] घादाभावादो।

खण्ड मात्र जघन्य द्रव्यका एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भाग मात्र जघन्य कालके साथ रहनेवाले द्रव्यमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १५९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १६० ॥

कारण कि आयुके जघन्य क्षेत्रका अंगुलके संख्यातवें भाग प्रमाण जघन्यकाल सम्बन्धी जघन्य क्षेत्रमें भाग देनेपर पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १६१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १६२ ॥

शंका—अयोगकेवलीके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यका भाव जघन्य भावकी अपेक्षा अनन्तगुणा कैसे है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, स्वभावसे ही तिर्यंच आयुके अनुभागसे मनुष्यायुका भाव अनन्तगुणा है।

शंका—क्षपकश्रेणिमें घातको प्राप्त हुआ अनुभाग अनन्तगुणा कैसे हो सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, क्षपकश्रेणिमें आयुकर्मके प्रदेशकी गुणश्रेणिनिर्जराके अभावके समान स्थिति और अनुभागके घातका अभाव है।

---

१ ताप्रतौ 'जहण्णा' इति पाठः। २ अ-आप्रत्योः '-मेत्तजहण्णखेत्ते इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः '-णिजराभावो-वट्ठिदिअणुभागाणं', आप्रतौ 'णिजराभावो व ट्ठिदअणुभागाणं', ताप्रतौ 'णिजराभावोवट्ठिदअणुभागाणं' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १६४ ॥

कुदो ? जहण्णदव्वेण एगसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागेण जहण्णभावआउअदव्वे भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो । कुदो असंखेज्जरूवोवलद्धी ? जहण्णभावाउअ-दव्वम्मि बंधगद्धासंखेज्जदिभागमेत्तसमयपबद्धाणमुवलंभादो ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६५ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा चउट्ठाण-पदिदा ॥ १६६ ॥

जदि मज्झिमपरिणामेहि तिरिक्खाउअं बंधिय जहण्णक्खेत्तं करेदि तो भावेण सह खेत्तं पि जहण्णं चेव । अध[1] मज्झिमपरिणामेहि आउअं बंधिय जहण्णक्खेत्तं ण

जिस जीवके आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १६३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १६४ ॥

कारण कि एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य द्रव्यका जघन्य भाव युक्त आयुके द्रव्यमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

शंका—असंख्यात रूप कैसे प्राप्त होते हैं ।

समाधान—क्योंकि जघन्य भाव युक्त आयुके द्रव्यमें बन्धक कालके असंख्यातवें भाग मात्र समयप्रबद्ध पाये जाते हैं, अतएव असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १६५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य चार स्थानोंमें पतित है ॥ १६६ ॥

यदि मध्यम परिणामोंके द्वारा तिर्यंच आयुको बाँधकर जघन्य क्षेत्रको करता है तो भावके साथ क्षेत्र भी जघन्य ही होता है । परन्तु यदि मध्यम परिणामोंके द्वारा आयुको बाँधकर जघन्य

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'अयं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करेदि तो भावो जहण्णो होदूण खेत्तवेयणा अजहण्णा होदि। होंता वि चउट्ठाणपदिदा, खेत्तम्हि असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढीओ मोत्तूण अण्णवड्ढीणमभावादो।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६७ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १६८ ॥

कुदो? जहण्णकालेण जहण्णभावकाले भागे हिदे अंतोमुहुत्तमेत्तगुणगारुवलंभादो।

जस्स णामवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १६९ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १७० ॥

कुदो? णामजहण्णखेत्तेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण अजोगिचरिमसमय-जहण्णदव्वजहण्णखेत्ते संखेज्जंगुलमेत्ते भागे हिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७१ ॥

सुगमं।

क्षेत्रको नहीं करता है तो उसके भावके जघन्य होते हुए भी क्षेत्र वेदना अजघन्य होती है। अजघन्य होकर भी वह चार स्थानोंमें पतित है, क्योंकि क्षेत्रमें असंख्यात भागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धिको छोड़कर अन्य वृद्धियोंका अभाव है।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १६७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १६८ ॥

कारण कि जघन्य कालका जघन्य भाव सम्बन्धी कालमें भाग देनेपर अन्तर्मुहूर्त मात्र गुणकार पाया जाता है।

जिस जीवके नामकर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १६९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १७० ॥

कारण कि नामकर्म सम्बन्धी अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य क्षेत्रका अयोग केवलीके अन्तिम समय सम्बन्धी जघन्य द्रव्यके संख्यात अंगुल प्रमाण जघन्य क्षेत्रमें भाग देनेपर पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १७१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णा ॥ १७२ ॥

तत्थ जहण्णदव्वम्मि एगसमयट्ठिदिं मोत्तूण [1]अण्णट्ठिदीणमभावादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १७४ ॥

कुदो ? सव्वविसुद्धेण सुहुमणिगोदेण हदसमुप्पत्तियं कादूण उप्पाइदणामजहण्णाणुभागं पेक्खिदूय सुहुमसांपराइएण सव्वविसुद्धेण बद्धजसकित्तिउक्कस्साणुभागस्स सुहत्तादो घादवज्जियस्स[2] अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स णामवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ १७६ ॥

तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण जदि तिचरिमभवे सुहुमेइंदिएसु उप्पज्जिय जहण्णखेत्तं कदं होदि तो दव्वमसंखेज्जभागब्भहियं, एक्कम्हि मणुस्सभवे संजम-

वह जघन्य होती है ॥ १७२ ॥

कारण कि वहाँ जघन्य द्रव्यमें एक समय मात्र स्थितिको छोड़कर अन्य स्थितियोंका अभाव है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १७३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १७४ ॥

कारण यह कि सर्वविशुद्ध सूक्ष्म निगोद जीवके द्वारा हतसमुत्पत्ति करके उत्पन्न कराये गये नाम कर्मके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा सर्वविशुद्ध सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके द्वारा बाँधे गये यशःकीर्तिके उत्कृष्ट अनुभागके शुभ होनेसे चूंकि उसका घात होता नहीं है, अत एव वह उससे अनन्तगुणा पाया जाता है ।

जिसके नाम कर्मकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १७५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ १७६ ॥

वह इस प्रकारसे—क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकरके यदि त्रिचरम भवमें सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर जघन्य क्षेत्र किया गया है तो द्रव्य असंख्यातवें भागसे अधिक होता है,

१ अ-काप्रत्योः 'अण्णे' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'वट्टीयस्स', ताप्रतौ वड्डियस्स' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणसेडीए विणासिज्जमाणअसंखेज्जसमयपबद्धाणमेत्थुवलंभादो। पुणो एदस्स दव्वस्सुवरि परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव जहण्णदव्वमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं वड्ढिदे त्ति। ताधे दव्वं संखेज्जभागब्भहियं होदि। एवं संखेज्जगुणब्भहिय-असंखेज्जगुणब्भहियत्तं च जाणिदूण परूवेदव्वं।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७७ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १७८ ॥

कुदो? ओघजहण्णकालमेगसमयं पेक्खिदूण खेत्त-दव्व-कालस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणसागरोवमबेसत्तभागस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १७९ ॥

सुगमं।

जहण्णा वा अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ॥ १८० ॥

जदि जहण्णोगाहणाए ट्ठिदजीवेण मज्झिमपरिणामेहि णामभावो बद्धो[1] तो खेत्तेण

क्योंकि, यहाँ एक मनुष्य भवमें संयम गुणश्रेणि द्वारा नष्ट किये जानेवाले असंख्यात समयप्रबद्ध पाये जाते हैं। फिर इस द्रव्यके ऊपर परमाणु अधिकके क्रमसे जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके उसमें एक खण्ड मात्रकी वृद्धि हो जाने तक बढ़ाना चाहिये। उस समय द्रव्य संख्यातवें भागसे अधिक होता है। इसी प्रकारसे संख्यातगुणी अधिकता और असंख्यातगुणी अधिकताकी भी जानकर प्ररूपणा करनी चाहिये।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १७७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ १७८ ॥

कारण कि एक समय प्रमाण ओघ जघन्य कालकी अपेक्षा क्षेत्र व द्रव्य सम्बन्धी जो काल पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे दो भाग प्रमाण है वह असंख्यातगुणा पाया जाता है।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १७९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी। जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित होती है ॥ १८० ॥

यदि जघन्य अवगाहनामें स्थित जीवके द्वारा मध्यम परिणामोंसे नामकर्मका अनुभाग

१ अ-आ-काप्रतिषु 'बंधो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सह भावो वि जहण्णो होदि । [अह] अजहण्णो बद्धो तो तस्स भाववेयणा अजहण्णा[1] सा च अणंतभागब्भहिय-असंखेज्जभागब्भहिय-संखेज्जभागब्भहिय-संखेज्जगुणब्भहिय-असंखेज्जगुणब्भहिय-अणंतगुणब्भहियत्तेण छट्ठाणपदिदा ।

जस्स णामवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १८१ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा ॥ १८२ ॥

खविदकम्मंसियलक्खणेण सुद्धणयविसएण परिणदेण जीवेण अजोगिचरिमसमए जदि पदेसो जहण्णो कदो तो कालेण सह दव्वं पि जहण्णं होदि । अह अण्णहा तो दव्वमजहण्णं; जहण्णकारणाभावादो[2] । होंतं पि पंचट्ठाणपदिदं, परमाणुत्तरादिकमेण णिरंतरं असंखेज्जगुणवड्ढीए दव्वस्स पज्जवसाणुवलंभादो ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १८३ ॥

सुगमं ।

बाँधा गया है तो क्षेत्रके साथ भाव भी जघन्य होता है । [परन्तु यदि उक्त जीवके द्वारा नाम कर्मका अनुभाग] अजघन्य बाँधा गया है तो भाववेदना अजघन्य होती है । उक्त अजघन्य भाव वेदना अनन्तभाग अधिक, असंख्यातभाग अधिक, संख्यातभाग अधिक, संख्यातगुण अधिक, असंख्यातगुण अधिक और अनन्तगुण अधिक स्वरूपसे छह स्थानोंमें पतित है ।

जिस जीवके नाम कर्मकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १८१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ १८२ ॥

शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे परिणत जीवके द्वारा यदि अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें प्रदेश जघन्य कर दिया गया है तो कालके साथ द्रव्य भी जघन्य होता है । परन्तु यदि ऐसा नहीं किया गया है तो द्रव्य अजघन्य होता है, क्योंकि, उक्त अवस्थामें उसके जघन्य होनेका कोई कारण नहीं है । अजघन्य होकर भी वह पाँच स्थानोंमें पतित होता है, क्योंकि, उत्तरोत्तर परमाणु अधिक आदिके क्रमसे निरन्तर जाकर असंख्यातगुणवृद्धिमें द्रव्यका अन्त पाया जाता है ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥१८३॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

१ ताप्रतौ 'भाववेयणा जहण्णा इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'कारणभावादो' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १८४ ॥

कुदो ? जहण्णखेत्तेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागपमाणेण अजोगिजहण्णखेत्ते संखेज्जघणंगुलमेत्ते भागे हिदे असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १८५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १८६ ॥

कुदो ? मज्झिमपरिणामेहि कदणामजहण्णभावं पेक्खिदूण सुहुमसांपराइएण सव्वविसुद्धेण बद्धजसगित्तिउक्कस्साणुभागस्स सुहभावेण घादवज्जियस्स अजोगिचरिमसमए अवट्ठिदस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥ १८७ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ १८८ ॥

खविदकम्मंसियलक्खणेणागदेण तिचरिमभवे जदि भावो मज्झिमपरिणामेण बंधिय हदसमुप्पत्तियं कादूण जहण्णो कदो [तो] तत्थ दव्वमसंखेज्जभागब्भहियं होदि,

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥१८४॥

कारण कि अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण जघन्य क्षेत्रका संख्यात घनांगुल प्रमाण अयोगकेवलीके जघन्य क्षेत्रमें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १८५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ १८६ ॥

कारण कि मध्यम परिणामोंके द्वारा किये गये नामकर्मके जघन्य भावकी अपेक्षा सर्वविशुद्ध सूक्ष्मसाम्परायिक संयतके द्वारा बाँधा गया यशःकीर्तिका उत्कृष्ट अनुभाग शुभ होनेके कारण घातसे रहित होकर अयोगिकेवलीके अन्तिम समयमें स्थित अनन्तगुणा पाया जाता है ।

जिस जीवके नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १८७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ १८८ ॥

कारण यह कि क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आये हुए जीवके द्वारा त्रिचरम भवमें मध्यम परिणामसे बाँध कर हतसमुत्पत्ति करके यदि भाव जघन्य किया गया है तो वहाँपर द्रव्य असंख्यातवें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगलिदासंखेज्जसमयपबद्धत्तादो। उवरि परमाणुत्तरादिकमेण चत्तारि वि वड्डीओ परूवेदव्वाओ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १८९ ॥

सुगमं।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा चदुट्ठाणपदिदा ॥ १९० ॥

जदि जहण्णभावसहिदजीवेण जहण्णभावद्धाए चेव अच्छिदूण खेत्तं पि जहण्णं कदं होदि तो भावेण सह खेत्तवेयणा वि जहण्णा। अह ण जहण्णं कदं तो[1] अजहण्णा च चदुट्ठाणपदिदा, तत्थ पदेसुत्तरादिकमेण खेत्तस्स चत्तारिवड्डिसंभवादो। उप्पण्णतदियसमयखेत्तं पदेसुत्तरादिकमेण तप्पाओग्गअसंखेज्जगुणवड्डिमुवगयचउत्थसमयजहण्णखेत्तेण सरिसं होदि। कुदो? चउत्थादिसु समएसु ओगाहणाए एयंताणुवड्डिजोगवसेण असंखेज्जगुणवड्डिदंसणादो। एवं खेत्तवड्डी कायव्वा जाव जहण्णभावेण अविरुद्धउक्कस्सखेत्तं जादं ति।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १९१ ॥

सुगमं।

भागसे अधिक होता है, क्योंकि, वहाँ असंख्यात समयप्रबद्ध अगलित हैं। आगे परमाणु अधिक आदिके क्रमसे चारों ही वृद्धियोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १८९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी। जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ १९० ॥

यदि जघन्य भाव सहित जीवके द्वारा जघन्य भावके कालमें ही रह करके क्षेत्रको भी जघन्य कर लिया गया है तो भावके साथ क्षेत्रवेदना भी जघन्य होती है। परन्तु यदि क्षेत्रको जघन्य नहीं किया गया है तो वह अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है, क्योंकि, वहाँ उत्तरोत्तर प्रदेश अधिक आदिके क्रमसे क्षेत्रके चार वृद्धियाँ सम्भव हैं। उत्पन्न होनेके तृतीय समयका क्षेत्र प्रदेश अधिक आदिके क्रमसे उसके योग्य असंख्यातगुणवृद्धिको प्राप्त हुए चतुर्थ समय सम्बन्धी जघन्य क्षेत्रके सदृश होता है, क्योंकि, चतुर्थादिक समयोंमें एकान्तानुवृद्धियोगके वशसे अवगाहनामें असंख्यातगुणवृद्धि देखी जाती है। इस प्रकार जघन्य भावसे अविरुद्ध उत्कृष्ट क्षेत्रके होने तक क्षेत्रकी वृद्धि करनी चाहिये।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १९१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्णा जहण्णकदं तो', ताप्रतौ 'जहण्णा जहण्णकदंतो' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १९२ ॥

कुदो ? ओघजहण्णकालेण एगसमएण जहण्णभावकाले भागे हिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणसागरोवमबेसत्तभागुवलंभादो ।

जस्स गोदवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १९३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ १९४ ॥

कुदो ? ओघजहण्णखेत्तेण[1] अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण संखेज्जंगुलमेत्त-अजोगिकेवलिजहण्णोगाहणाए ओवट्टिदाए असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १९५ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥ १९६ ॥

कुदो ? जहण्णदव्वस्स एगसमयावट्ठाणदंसणादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १९७ ॥

सुगमं ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥१९२॥

कारण कि एक समय रूप ओघ जघन्य कालका जघन्य भावकालमें भाग देनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे दो भाग पाये जाते हैं ।

जिस जीवके गोत्रकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १९३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

नियमसे वह अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥१९४॥

कारण कि अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण ओघजघन्य क्षेत्रका संख्यात घनांगुल प्रमाण अयोगकेवलीकी जघन्य अवगाहनामें भाग देनेपर असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥१९५॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य होती है ॥ १९६ ॥

क्योंकि, जघन्य द्रव्यका एक समय अवस्थान देखा जाता है ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ १९७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'कुदो अजहण्णाखेत्तेण', ताप्रतौ 'अजहण्णा ? खेत्तेण' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ १९८ ॥

कुदो ? सव्वुक्कस्सविसोहीए हदसमुप्पत्तियं कादूण उप्पाइदजहण्णाणुभागं पेक्खिदूण सुहुमसांपराइएण सव्वविसुद्धेण बद्धुच्चागोदुक्कस्साणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो । गोदजहण्णाणुभागे वि उच्चागोदाणुभागो अत्थि[1] त्ति णासंकणिज्जं, बादरतेउक्काइएसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालेण उव्वेल्लिदउच्चागोदेसु अइविसोहीए घादिदणीचागोदेसु गोदस्स जहण्णाणुभागब्भुवगमादो ।

जस्स गोदवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ १९९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ २०० ॥

एत्थ जहा णामदव्वस्स चउट्ठाणपदिदत्तं परूविदं तहा परूवेदव्वं, विसेसाभावादो ।

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०१ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २०२ ॥

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥१९८॥

कारण कि सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा हतसमुत्पत्तिको करके उत्पन्न कराये गये जघन्य अनुभागकी अपेक्षा सर्वविशुद्ध सूक्ष्मसाम्परायिक संयतके द्वारा बाँधा गया उच्च गोत्रका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

शङ्का—गोत्रके जघन्य अनुभागमें भी उच्चगोत्रका जघन्य अनुभाग होता है ?

समाधान—ऐसी आशङ्का नहीं करनी चाहिये, क्योंकि, जिन्होंने पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र कालके द्वारा उच्चगोत्रका उद्वेलन किया है व जिन्होंने अतिशय विशुद्धिके द्वारा नीचगोत्रका घात कर लिया है उन बादर तेजस्काइक जीवोंमें गोत्रका जघन्य अनुभाग स्वीकार किया गया है । अतएव गोत्रके जघन्य अनुभागमें उच्चगोत्रका अनुभाग सम्भव नहीं है ।

जिस जीवके क्षेत्रकी अपेक्षा गोत्रकी वेदना जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥१९९॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ २००॥

यहाँ जिस प्रकारसे नामकर्मसम्बन्धी द्रव्यके चार स्थानोंमें पतित होनेकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे गोत्रके विषयमें भी उक्त प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २०१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २०२ ॥

---

१ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-का-ताप्रतिषु 'गोदजहण्णाणुभागो अत्थि' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुदो ? ओघजहण्णकालेण एगसमएण जहण्णखेत्तकाले भागे हिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणसागरोवमबेसत्तभागुवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ २०४ ॥

बादरतेउ-वाउकाइएसु उक्कस्सविसोहीए घादिदणीचागोदाणुभागेसु गोदाणुभागं जहण्णं करिय तेण जहण्णाणुभागेण सह उजुगदीए सुहुमणिगोदेसु उप्पज्जिय तिसमयाहार-तिसमयतब्भवत्थस्स खेत्तेण सह भावो जहण्णओ किण्ण जायदे ? ण, बादरतेउ-वाउकाइयपज्जत्तएसु जादजहण्णाणुभागेण सह अण्णत्थ उप्पत्तीए अभावादो । जदि अण्णत्थ उप्पज्जदि तो णियमा अणंतगुणवड्ढीए वड्ढिदो चेव[1] उप्पज्जदि ण अण्णहा । कधमेदं णव्वदे ? जहण्णखेत्त[2]वेयणाए भाववेयणा णियमा अणंतगुणा त्ति सुत्तवयणादो ।

जस्स गोदवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०५ ॥

क्योंकि, एक समय रूप ओघ जघन्य कालका जघन्य क्षेत्रके कालमें भाग देनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे दो भाग पाये जाते हैं ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥२०३॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥२०४॥

शङ्का—जिन्होंने उत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा नीचगोत्रके अनुभागका घात कर लिया है उन बादर तेजकायिक व वायुकायिक जीवोंमें गोत्रके अनुभागको जघन्य करके उस जघन्य अनुभागके साथ ऋजुगतिके द्वारा सूक्ष्म निगोद जीवोंमें उत्पन्न होकर त्रिसमयवर्ती आहारक और तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान उसके क्षेत्रके साथ भाव जघन्य क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, बादर तेजकायिक व वायुकायिक पर्याप्तक जीवोंमें उत्पन्न जघन्य अनुभागके साथ अन्य जीवोंमें उत्पन्न होना सम्भव नहीं है । यदि वह अन्य जीवोंमें उत्पन्न होता है तो नियमसे वह अनन्तगुणवृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होकर ही उत्पन्न होता है, अन्य प्रकारसे नहीं ।

शङ्का—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह "जघन्य क्षेत्रवेदनाके साथ भाववेदना नियमसे अनन्तगुणी होती है" इस सूत्रवचनसे जाना जाता है ।

जिस जीवके गोत्रकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके वह क्या द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २०५ ॥

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'वड्ढिदो ण चेव'; ताप्रतौ 'वड्ढिदो [ण] चेव' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्णक्खेत्त' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा ॥ २०६ ॥

जदि खविदकम्मंसियलक्खणेणागदेण[1] अजोगिचरिमसमए कालो[2] जहण्णो कदो तो कालेण सह दव्वं पि जहण्णं होदि । अह जइ अण्णहा आगदो तो पंचट्ठाणपदिदा, परमाणुत्तरकमेण चत्तारिपुरिसे अस्सिदूण तत्थ पंचवड्ढिदंसणादो । तासिं परूवणा जाणिय कायव्वा ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०७ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २०८ ॥

कुदो ? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तजहण्णोगाहणाए संखेज्जंगुलमेत्तअजोगिजहण्णखेत्ते भागे हिदे वि असंखेज्जरूवोवलंभादो ।

तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २०९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ २१० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । जघन्य की अपेक्षा अजघन्य पाँच स्थानोंमें पतित है ॥ २०६ ॥

यदि क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आये हुए जीवके द्वारा आयोगकेवलीके अन्तिम समयमें काल जघन्य किया गया है तो कालके साथ द्रव्य भी जघन्य होता है परन्तु यदि वह अन्य स्वरूपसे आया है तो उक्त वेदना पाँच स्थानोंमें पतित होती है, क्योंकि, चार पुरुषोंका आश्रय करके वहाँ परमाणु अधिकताके क्रमसे पाँच वृद्धियाँ देखी जाती हैं । उन वृद्धियों की प्ररूपणा जानकर करनी चाहिये

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २०७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियम से अजघन्य असंख्यातगुणी होती है ॥ २०८ ॥

कारण कि अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य अवगाहनाका संख्यात घनांगुल प्रमाण अयोगकेवलीके जघन्य क्षेत्रमें भाग देनेपर भी असंख्यात रूप पाये जाते हैं ।

उसके भावकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ २१० ॥

१ अ-आ-काप्रतिषु '-लक्खणेणगदेण' इति पाठः । २ अ-आ काप्रतिषु 'कालदो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुदो ? बादरतेउ-वाउक्काइयपज्जत्तजहण्णाणुभागं पेक्खिदूण सव्वविसुद्धेण सुहुमसांपराइएण बद्धुच्चागोदुक्कस्साणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २११ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ २१२ ॥

तप्पाओग्ग[1]खविदकम्मंसियजहण्णदव्वमादिं कादूण चत्तारिपुरिसे अस्सिदूण दव्वस्स चउट्ठाणपदिदत्तं परूवेदव्वं ।

तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २१३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २१४ ॥

कुदो ? तिसमयआहार-तिसमयतब्भत्थसुहुमणिगोदजहण्णोगाहणं पेक्खिदूण जहण्णभावसामिबादरतेउ-वाउपज्जत्तओगाहणाए असंखेज्जगुणत्तदंसणादो । ण च सुहुमोगाहणाए बादरोगाहणा सरिसा ऊणा वा होदि किं तु असंखेज्जगुणा चेव होदि । कुदो एदं णव्वदे ? ओगाहणादंडयसुत्तादो ।

कारण यह कि बादर तेजकायिक व बादर वायुकायिक पर्याप्तकोंमें हुए जघन्य अनुभागकी अपेक्षा सर्वविशुद्ध सूक्ष्मसाम्परायिक संयत के द्वारा बाँधा गया उच्च गोत्रका उत्कृष्ट अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

जिस जीवके गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके द्रव्यकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥ २१२ ॥

तत्प्रायोग्य क्षपितकर्मांशिक जीवके जघन्य द्रव्यसे लेकर चार पुरुषोंका आश्रय करके द्रव्यके चारस्थानों में पतित होनेकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

उसके क्षेत्रकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २१३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २१४ ॥

कारण कि त्रिसमयवर्ती आहारक और तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान सूक्ष्म निगोद जीवकी जघन्य अवगाहनाकी अपेक्षा जघन्य भावके स्वामिभूत बादर तेजकायिक व बादर वायुकायिक पर्याप्तकी अवगाहना असंख्यातगुणी देखी जाती है । बादर जीवकी अवगाहना सूक्ष्म जीवकी अवगाहनाके बराबर या उससे हीन नहीं होती है, किन्तु वह उससे असंख्यातगुणी ही होती है ।

[1] अ-आ-काप्रतिषु 'तप्पाओग्गा-' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २१५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २१६ ॥

एदं पि सुगमं । एवं जहण्णए सत्थाणवेयणासण्णियासे समत्ते सत्थाणवेयणसण्णियासो परिसमत्तो ।

जो सो परत्थाणवेयणसण्णियासो सो दुविहो—जहण्णओ परत्थाणवेयणसण्णियासो चेव उक्कस्सओ परत्थाणवेयणसण्णियासो चेव ॥२१७॥

एवं परत्थाणवेयणसण्णियासो दुविहो चेव होदि, अण्णस्स असंभवादो । जहण्णुक्कस्ससंजोगेण तिविहो किण्ण जायदे ? ण, दोहिंतो वदिरित्तसंजोगाभावादो । [ण] अणुभयपक्खो वि, तस्स ससर्सिंगसमाणत्तादो ।

जो सो जहण्णओ[1] परत्थाणवेयणसण्णियासो सो थप्पो ॥२१८॥

अहियथअणाणुपुव्वित्तादो । [2]सा किमट्ठमेत्थ विवक्खिज्जदे ? तम्हि अवगदे सुहेण जहण्णओ परत्थाणवेयणसण्णियासो अवगम्मदि त्ति ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह अल्पबहुत्वदण्डक सूत्र से जाना जाता है ।

उसके कालकी अपेक्षा वह क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २१५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २१६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है । इस प्रकार जघन्य स्वस्थान वेदना संनिकर्ष समाप्त होनेपर स्वथान वेदना संनिकर्ष समाप्त हुआ ।

जो वह परस्थान वेदनासंनिकर्ष है वह दो प्रकारका है—जघन्य परस्थान वेदना संनिकर्ष और उत्कृष्ट परस्थान वेदना संनिकर्ष ॥ २१७ ॥

इस प्रकारसे परस्थान वेदना संनिकर्ष दो प्रकारका ही है, क्योंकि, और अन्यकी सम्भावना नहीं है।

शंका—जघन्य और उत्कृष्टके संयोगसे वह तीन प्रकारका क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, दोनोंसे भिन्न संयोगका अभाव है । अनुभय पक्ष भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, वह खरगोशके सींगोंके समान असम्भव है ।

जो वह जघन्य परस्थान वेदनासंनिकर्ष है वह अभी स्थगित रखा जाता है॥२१८॥

कारण कि यहाँ आनुपूर्वीका अधिकार नहीं है ।

शंका—उसकी यहाँ विवक्षा किसलिये की जा रही है ?

समाधान—उत्कृष्ट परस्थानवेदना संनिकर्षका ज्ञान हो जानेपर चूंकि जघन्य परस्थानवेदना संनिकर्ष सुखपूर्वक जाना जा सकता है, अतएव यहाँ उसकी विवक्षा की गई है ।

---

१ अ-काप्रत्योः 'जहण्णाओ' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'सो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो सो उक्कस्सओ परत्थाणवेयणसण्णियासो सो चउव्विहो— दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ॥ २१९ ॥

एवं चउव्विहो चेव, अण्णस्स अणुवलंभादो। एगसंजोग-दुसंजोग-तिसंजोग-चदु-संजोगेहि पण्णारसविहो किण्ण जायदे ? ण, संजोगस्स जच्चंतरीभूदस्स अणुवलंभादो। ण सव्वप्पणा[1] संजोगो, दोण्णमेगदरस्स अभावेण संजोगाभावप्पसंगादो। ण एगदेसेण, संजोगो, संजुत्तभावस्स अभावप्पसंगादो इयरत्थ वि संजोगाभावप्पसंगादो। तदो एदेण अहिप्पाएण चउव्विहो चेव उक्कस्सवेयणासण्णियासो त्ति सिद्धं।

जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स छण्णं कम्माण-माउववज्जाणं दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २२० ॥

सुगमं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा विट्ठाण-पदिदा ॥ २२१ ॥

जो वह उत्कृष्ट परस्थानवेदनासंनिकर्ष है वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा चार प्रकारका है ॥ २१९ ॥

इस प्रकारसे वह चार प्रकारका ही है, क्योंकि, उनसे भिन्न और कोई भेद नहीं पाया जाता है।

शंका—एकसंयोग, द्विसंयोग, त्रिसंयोग और चतुःसंयोगसे वह पन्द्रह प्रकारका क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उनसे भिन्न जात्यन्तरीभूत संयोग पाया नहीं जाता। [यदि वह पाया जाता है तो क्या सर्वात्मक स्वरूपसे अथवा एकदेश स्वरूपसे ?] वह संयोग सर्वात्मक स्वरूपसे तो सम्भव है नहीं, क्योंकि, इस प्रकारसे दोनोंमेंसे एकका अभाव हो जानेके कारण संयोगके ही अभावका प्रसंग आता है। एकदेश रूपसे भी वह सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर संयुक्तताके अभावका प्रसंग आता है, अथवा अन्यत्र भी संयोगके अभावका प्रसंग होना चाहिये। अतएव इस अभिप्रायसे चार प्रकारका ही उत्कृष्ट वेदनासंनिकर्ष है यह सिद्ध होता है।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके आयुको छोड़कर शेष छह कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २२० ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट दो स्थानोंमें पतित है ॥ २२१ ॥

---

१ अ-काप्रत्योः 'सव्वंपिणा', आप्रतौ 'सव्वंपियग' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुद्धणयविसयगुणिदकम्मंसियलक्खणेण[1] आगंतूण णेरइयचरिमसमए ट्ठिदस्स दव्वं[2] णाणावरणीयदव्वेण सह छण्णं कम्माणं दव्वं उक्कस्सयं होदि। अह णाणावरणीय-दव्वस्स सुद्धणयविसयगुणिदकम्मंसियो होदूण जदि सेसकम्माणमसुद्धणयविसयगुणिद-कम्मंसियो होदि तो तेसिं दव्ववेयणा अणुक्कस्सा। सा वि बिट्ठाणपदिदा, अण्णस्सासंभ-वादो। एदं दव्वट्ठियणयसुत्तं। संपहि पज्जवट्ठियणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

अणंतभागहीणा वा असंखेज्जभागहीणा वा ॥ २२२ ॥

णाणावरणीयदव्वस्स उक्कस्ससंचयं कादूण जदि सेसं छकम्माणमेगपदेसूणुक्कस्स-संचयं करेदि तो तेसिं दव्ववेयणा अणुक्कस्सा होदूण अणंतभागहीणा। को पडिभागो? उक्कस्सदव्वं। दुपदेसूणस्स उक्कस्सदव्वस्स संचए कदे वि अणंतभागहीणा। को पडिभागो? उक्कस्सदव्वदुभागो। एवमेदेण कमेण अणंतभागहाणी होदूण ताव गच्छदि जाव उक्कस्स-दव्वमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमुक्कस्सदव्वादो परिहीणं ति। तत्तो पहुडि असंखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सदव्वं तप्पाओग्गेण पलिदोवमस्स असं-असंखेज्जदिभागेण खंडिदे तत्थ एगखंडेण परिहीणं ति। अहियं किण्ण झिज्जदे? ण, गुणिदकम्मंसियम्मि उक्कस्सेण जदि खओ होदि तो एगसमयपबद्धो चेव झिज्जदि त्ति

शुद्धनयके विषयभूत गुणितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर नारक भवके अन्तिम समयमें स्थित जीवके ज्ञानावरणीयके द्रव्यके साथ छह कर्मोंका द्रव्य उत्कृष्ट होता है। परन्तु ज्ञाना-वरणीय द्रव्यका शुद्धनयका विषयभूत गुणितकर्मांशिक होकर यदि शेष कर्मोंका अशुद्धनयका विषयभूत गुणितकर्मांशिक होता है तो उनकी द्रव्यवेदना अनुत्कृष्ट होती है। वह भी द्विस्थानपतित है, क्योंकि, यहाँ अन्य स्थानकी सम्भावना नहीं है। यह द्रव्यार्थिकनयका आश्रय करनेवाला सूत्र है। अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं—

अनन्तभागहीन अथवा असंख्यातभागहीन होती है ॥ २२२ ॥

ज्ञानावरणीय द्रव्यका उत्कृष्ट संचय करके यदि शेष छह कर्मोंका एक प्रदेशहीन उत्कृष्ट सञ्चय करता है तो उनकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट होकर अनन्तभागहीन होती है। प्रतिभाग क्या है? उत्कृष्ट द्रव्य प्रतिभाग है। दो प्रदेशोंसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यका सञ्चय करनेपर भी अनन्तभाग हीन होती है। प्रतिभाग क्या है? उत्कृष्ट द्रव्यका द्वितीय भाग प्रतिभाग है। इस प्रकार इस क्रमसे अनन्तभागहानि होकर तब तक जाती है जब तक कि उत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड उत्कृष्ट द्रव्यमेंसे हीन होता है। वहाँसे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यको तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर उसमें एक खण्डसे हीन होने तक असंख्यातभागहानि होकर जाती है।

शंका—अधिक हीन क्यों नहीं होता?

समाधान—नहीं, क्योंकि, गुणितकर्मांशिक जीवमें उत्कृष्टरूपसे यदि क्षय होता है तो एक

१ अ-आ-काप्रतिषु 'लक्खणे', ताप्रतौ 'लक्खणे [ण]' इति पाठः। २ ताप्रतौ [दव्वं] इत्येवंविधोऽत्र पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुरूवदेसादो। तम्हा दो चेव हाणीयो गुणिदकम्मंसिए होंति त्ति सिद्धं।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २२३ ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ ॥ २२४ ॥

कुदो? गुणिदकम्मंसियचरिमसमयणेरइयआउअदव्वं एगसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागो, दिवड्ढगुणहाणिगुणिदअण्णोण्णब्भत्थरासिणा बंधगद्धामेत्तसमयपबद्धेसु ओवट्टिदेसु एगसमयपबद्धस्स असंखेज्जभागुवलंभादो[1]। आउअस्स उक्कस्सदव्वं पुण [2]बेउक्कस्सबंधगद्धामेत्तसमयपबद्धा। तेण सगउक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण गुणिदकम्मंसियआउअदव्ववेयणा असंखेज्जगुणहीणा। जदि वि आउअदव्वम्मि परभवियम्मि असंखेज्जाओ गुणहाणीयो ण गलंति तो वि णाणावरणीयादिसत्तकम्मं गुणिदकम्मंसिए आउअदव्वस्स असंखेज्जगुणहीणमेव, जदा जदा आउअं बंधदि तदा तदा तप्पाओग्गेण जहण्णएण जोगेण बंधदि त्ति सुत्तवयणादो।

एवं छण्णं कम्माणमाउववज्जाणं ॥ २२५ ॥

जहा णाणावरणीयस्स परूवणा कदा तहा छण्णं कम्माणं कायव्वा, विसेसाभावादो।

समयप्रबद्धका ही क्षय होता है; ऐसा गुरुका उपदेश है। इस कारण गुणितकर्मांशिक जीवमें दो ही हानियाँ होती हैं, यह सिद्ध होता है।

उसके आयु कर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २२३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणी हीन होती है ॥ २२४ ॥

कारण यह कि गुणितकर्मांशिक चरम समयवर्ती नारकीका आयुद्रव्य एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भाग प्रमाण होता है, क्योंकि, डेढ़ गुणहानियोंसे गुणित अन्योन्याभ्यस्त राशि द्वारा बन्धककाल प्रमाण समयप्रबद्धोंके अपवर्तित करनेपर एक समयप्रबद्धका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है। परन्तु आयु कर्मका उत्कृष्ट द्रव्य दो उत्कृष्ट बन्धककाल प्रमाण समयप्रबद्धोंके बराबर है। इसलिये अपने उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा गुणितकर्मांशिक जीवके आयु द्रव्यकी वेदना असंख्यातगुणी हीन होती है। यद्यपि परभव सम्बन्धी आयु कर्म के द्रव्यमें से असंख्यात गुणहानियाँ नहीं गलती हैं तो भी ज्ञानावरणादिक सात कर्म युक्त गुणितकर्मांशिक जीवमें आयुका द्रव्य असंख्यातगुणा हीन ही होता है, क्योंकि, जब जब आयु कर्मको बाँधता है तब तब तत्प्रायोग्य जघन्य योगसे बाँधता है, ऐसा सूत्र वचन है।

इसी प्रकारसे आयुको छोड़ कर शेष छह कर्मोंकी प्ररूपणा है ॥ २२५ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार छह कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'असंखेज्जआउवलंभादो', ताप्रतौ 'असंखेज्जआ (भाग) उवलंभादो' इति पाठः।

२ अ-आ-काप्रतिषु 'पुण चेव उक्कस्स' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

जस्स आउअवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २२६ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ २२७ ॥

तं जहा—गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीदो आगंतूण एग-दो-तिण्णिभवगहणाणि पंचिंदियतिरिक्खेसु भमिय पच्छा एइंदिएसु उववण्णो । एग-दो-तिण्णिभवग्गहणाणि त्ति किमट्ठं तिण्णं पि णिद्देसो कीरदे ? आइरियोवदेसबहुत्तजाणावणट्ठं । पुणो पुव्वकोडाउअ-तिरिक्खेसु मणुस्सेसु वा आउअं बंधिय पुव्वकोडितिभागम्मि ठाइदूण पुणरवि जलचरेसु पुव्वकोडाउअं बंधिय तत्थुप्पज्जिय कदलीघादेण भुंजमाणाउअं घादिय उक्कस्सबंधगद्धाए उक्कस्सजोगेण च पुव्वकोडाउए पबद्धे आउअदव्वमुक्कस्सं होदि । सेससत्तकम्मदव्वं पुण उक्कस्सदव्वं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडेदूण तत्थ एगखंडेण हीणं होदि । तदो प्पहुडि असंखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्ससंखेज्जमुक्कस्सदव्वस्स हाणिआगमणट्ठं भागहारो जादो त्ति । तत्तो प्पहुडि उवरि संखेज्जभागहाणी होदि जाव उक्कस्सदव्वस्स हाणिआगमणट्ठं दोरूवाणि भागहारो जादाणि त्ति । तदो प्पहुडि संखेज्जगुणहाणी होदि जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जेण उक्कस्सदव्वे खंडिदे तत्थ एगखंडमवसेसं ति । एत्तो प्पहुडि

जिस जीवके आयु कर्मकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २२६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित है ॥ २२७ ॥

यथा—गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीसे आकर एक दो तीन भवग्रहण प्रमाण पंचेन्द्रिय जीवोंमें परिभ्रमण करके पीछे एकेन्द्रिय जीवोंमें उत्पन्न हुआ ।

शंका—'एक दो तीन भवग्रहण प्रमाण' इस प्रकार तीनका भी निर्देश किसलिये किया जा रहा है ?

समाधान—उक्त निर्देश आचार्योपदेशके बहुत्वका ज्ञापन करानेके लिये किया गया है ।

पश्चात् पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाले तिर्यंचों या मनुष्योंमें आयुको बाँधकर पूर्वकोटिके त्रिभागमें स्थित होकर फिरसे भी जलचर जीवोंमें पूर्वकोटि प्रमाण आयुको बाँधकर उनमें उत्पन्न हो कदलीघातसे भुज्यमान आयुको घातकर उत्कृष्ट बन्धककालमें उत्कृष्ट योगके द्वारा पूर्वकोटि मात्र आयुके बाँधनेपर आयुका द्रव्य उत्कृष्ट होता है । परन्तु शेष सात कर्मोंका द्रव्य उत्कृष्ट द्रव्यको पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमें एक खण्डसे हीन होता है । उससे लेकर उत्कृष्ट द्रव्यकी हानिको लानेके लिए उत्कृष्ट संख्यातके भागहार होने तक असंख्यातभागहानि होकर जाती है । वहाँसे लेकर आगे उत्कृष्ट द्रव्यकी हानिको लानेके लिये दो अंक भागहार होनेतक संख्यातभागहानि होती है । यहाँसे लेकर जघन्य परीतासंख्यातसे उत्कृष्ट द्रव्यको खण्डित करनेपर उसमें एक खण्डके शेष रहने तक संख्यात-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जाव आउअउक्कस्सदव्वाविरोहिखविदकम्मंसियजहण्ण-दव्वं ति। एवमाउए उक्कस्से जादे सेसकम्माणं चउट्ठाणपदिदत्तं सिद्धं। संपहि पज्जवट्ठियणयाणुग्गहट्ठं उत्तरसुत्तं भणदि—

असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ॥ २२८ ॥

सुगमं।

जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २२९ ॥

सुगमं।

उक्कस्सा ॥ २३० ॥

णाणावरणेणेव सेसघादिकम्मेहि वि अद्धुट्ठमरज्जुआयदं संखेज्जसूचीअंगुलवित्थार-बाहल्लं सव्वं पि खेत्तं फोसिदं, सव्वकम्माणं पि जीवदुवारेण भेदाभावादो। तेण एक्केक्कस्स घादिकम्मस्स उक्कस्सखेत्ते जादे सेसकम्माणं पि खेत्तमुक्कस्समेवे त्ति सिद्धं।

तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २३१ ॥

गुणहानि होती है। यहाँसे लेकर आयुकर्मके उत्कृष्ट द्रव्यके अविरोधी क्षपितकर्मांशिकके जघन्य द्रव्य तक असंख्यातगुणहानि होकर जाती है। इस प्रकार आयुके उत्कृष्ट होनेपर शेष कर्म द्रव्य चार स्थानोंमें पतित है, यह सिद्ध होती है। अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं

वह असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन अथवा असंख्यातगुण-हीन होती है ॥ २२८ ॥

यह सूत्र सुगम है।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट ॥ २२९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उत्कृष्ट होती है ॥ २३० ॥

ज्ञानावरणके समान ही शेष घाति कर्मोंके द्वारा भी साढ़े तीन राजु आयत व संख्यात सूच्यंगुल विस्तार एवं बाहल्यवाला सभी क्षेत्र स्पर्श किया गया है, क्योंकि, सभी कर्मोंके जीव द्वारा कोई भेद नहीं है। इसीलिये एक एक घाति कर्मका उत्कृष्ट क्षेत्र होनेपर शेष कर्मोंका भी क्षेत्र उत्कृष्ट ही होता है, यह सिद्ध है।

उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २३१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा ॥ २३२ ॥

कुदो ? महामच्छुक्कस्सखेत्तेण घणलोगे भागे हिदे पदरस्स असंखेज्जदिभागमेत्त-गुणगारुवलंभादो ।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ २३३ ॥

जहा णाणावरणीयस्स परूवणा कदा तहा सेसतिण्णं घादिकम्माणं परूवणा कायव्वा, अविसेसादो ।

जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सिया णत्थि ॥२३४॥

कुदो ? घादिचउक्कस्स लोगपूरणकाले अभावादो । किमट्ठं पुव्वमेव तदभावो[1] ? ण, साभावियादो । ण च सहावो परपज्जणियोगारिहो, विरोहादो ।

तस्स आउव-णामा-गोदवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा॥२३५॥

सुगमं ।

यह सूत्र सुग

वह नियमसे अनुत्कृष्ट असंख्यातगुणीहीन होती है ॥ २३२ ॥

कारण यह कि महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रका घनलोकमें भाग देनेपर प्रतरका असंख्यातवाँ भाग मात्र गुणकार पाया जाता है ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २३३ ॥

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीयकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे शेष तीन घाति कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उनमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट नहीं होती ॥ २३४ ॥

कारण कि लोकपूरणकालमें चारों घातिकर्मोंका अभाव है ।

शंका—उनका अभाव पहिले ही किसलिये हो जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ऐसा स्वभावसे होता है, और स्वभाव दूसरोंके प्रश्नके योग्य नहीं होता है; क्योंकि, उसमें विरोध है ।

उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २३५ ॥

यह, सूत्र सुगम है ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'तदाभावो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्कस्सा ॥ २३६ ॥

कुदो ? लोगे आवूरिदे जीवादो अभिण्णाणमेदेसिं कम्माणं वेयणीयस्सेव [1]सव्वलोगावट्ठाणुवलंभादो ।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ॥ २३७ ॥

जहा वेयणीए णिरुद्धे सेसकम्माणं परूवणा कदा तहा एदेसु वि तिसु कम्मेसु णिरुद्धेसु परूवणा कायव्वा ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स छण्णं कम्माणमाउअवज्जाणं वेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २३८ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा असंखेज्जभागहीणा ॥ २३९ ॥

णाणावरणीएण सह जदि सेसछकम्मेहि उक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तो णाणावरणीएण सह सेसछकम्माणि वि ट्ठिदिं पडुच्च उक्कस्साणि चेव होंति । जदि पुण विसेसपच्चएहि सेसकम्माणि विगलाणि होंति तो णाणावरणट्ठिदीए उक्कस्सीए संतीए सेसकम्मट्ठिदी

उत्कृष्ट होती है ॥ २३६ ॥

कारण कि लोकके पूर्ण होनेपर अर्थात् लोकपूरणसमुद्घातमें जीवसे अभिन्न इन कर्मोंका वेदनीयके ही समान सब लोकमें अवस्थान पाया जाता है ।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्रकी विवक्षामें भी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २३७ ॥

जिस प्रकारसे वेदनीय कर्मकी विवक्षामें शेष कर्मोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे इन तीन कर्मोंकी विवक्षामें प्ररूपणा करनी चाहिये ।

जिसके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालको अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके आयुको छोड़ शेष छह कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २३८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी । उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट असंख्यातभाग हीन होती है ॥२३९ ॥

ज्ञानावरणीयके साथ यदि शेष छह कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधी गई है तो ज्ञानावरणीयके साथ शेष छह कर्म भी स्थितिकी अपेक्षा उत्कृष्ट ही होते हैं । परन्तु यदि विशेष प्रत्ययोंसे शेष कर्म विकल होते हैं तो ज्ञानावरणीयकी स्थितिके उत्कृष्ट होनेपर शेष कर्मोंकी स्थिति अनुत्कृष्ट होती है,

१ अ-आ-काप्रतिषु 'सव्वा-' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुक्कस्सा होदि, विसेसपच्चयविगलत्तणेण एगसमयमादिं कादूण जाव पक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीणं परिहाणिदंसणादो। परिहीणट्ठिदीणं को पडिभागो ? सादिरेयउक्कस्साबाहा। कुदो ? उक्कस्साबाहाए उक्कस्सट्ठिदीए खंडिदाए तत्थ एगखंडस्स रूवूणमेत्तस्स परिहाणिदंसणादो। उक्कस्सेण एत्तिया चेव हाणी होदि, अण्णहा आबाहाहाणीए णाणावरणीयस्स वि उक्कस्सट्ठिदीए अभावप्पसंगादो।

तस्स आउववेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २४० ॥

सुगमं।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ॥ २४१ ॥

णाणावरणीयट्ठिदीए वक्कम्मियाए बज्झमाणियाए जदि आउअस्स वि पुव्वकोडितिभागपढमसमए उक्कस्सबंधो होदि तो णाणावरणीयट्ठिदीए सह आउट्ठिदी वि उक्कस्सा होदि। अण्णहा अणुक्कस्सा होदूण चउट्ठाणपदिदा होदि। तं जहा—णाणावरणीयस्स उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणेण समऊणदुसमऊणादिकमेण पुव्वकोडितिभागाहियतेत्तीससागरोवमाणि उक्कस्ससंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं जाव परिहाइदूण आउए पबद्धे असंखेज्जभागहाणी होदि। तत्तो

क्योंकि, विशेष प्रत्ययोंसे विकल होनेके कारण एक समयसे लेकर उत्कृष्ट रूपसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितियोंकी हानि देखी जाती है।

शंका—हीन स्थितियोंका प्रतिभाग क्या है ?

समाधान—उनका प्रतिभाग साधिक उत्कृष्ट आबाधा है, क्योंकि, उत्कृष्ट आबाधासे उत्कृष्ट स्थितिको खण्डित करनेपर उसमें एक कम एक खण्ड मात्रकी हानि देखी जाती है।

उत्कृष्टसे इतनी मात्र ही हानि होती है, क्योंकि, अन्यथा आबाधाकी हानि होनेपर ज्ञानावरणीयकी भी उत्कृष्ट स्थितिके अभावका प्रसंग आता है।

उसके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २४० ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित है ॥ २४१ ॥

ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बाँधते समय यदि आयुकर्मका भी पूर्वकोटिके त्रिभागके प्रथम समयमें उत्कृष्ट बन्ध होता है तो ज्ञानावरणीयकी स्थितिके साथ आयुकी स्थिति भी उत्कृष्ट होती है। इसके विपरीत वह अनुत्कृष्ट होकर चार स्थानोंमें पतित होती है। यथा—ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके द्वारा एक समय कम दो समय कम इत्यादि क्रमसे पूर्वकोटिके त्रिभागसे अधिक तेतीस सागरोपमोंको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उनमें एक खण्ड मात्र तक हीन होकर आयुके बाँधनेपर असंख्यातभागहानि होती है। वहांसे लेकर आयुकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्पहुडि आउअस्स संखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सट्ठिदीए दुभागबंधो त्ति। तत्तो प्पहुडि संखेज्जगुणहाणी होदि जाव णाणावरणीयउक्कस्सट्ठिदीए सह आउअस्स उक्कस्सट्ठिदिं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तआउट्ठिदी[1] पबद्धा त्ति। तत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जाव तप्पाओग्गअंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदि त्ति। कधं णाणावरणीयउक्कस्सट्ठिदिपाओग्गपरिणामेहि आउअस्स चउट्ठाणपदिदो बंधो जायदे? ण एस दोसो, णाणावरणीयउक्कस्सट्ठिदिबंधपाओग्गपरिणामेसु वि अंतोमुहुत्तमेत्तआउट्ठिदिबंधपाओग्गपरिणामाणं संभवादो। कधमेगो परिणामो भिण्णकज्जकारओ? ण, सहकारिकारणसंबंधभेएण तस्स तदविरोहादो।

एवं छण्णं कम्माणं आउववज्जाणं ॥ २४२ ॥

जहा णाणावरणीए णिरुद्धे सेसकम्माणं सण्णियासो कओ तहा सेसछकम्माणमाउअवज्जाणं कायव्वं, विसेसाभावादो।

जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २४३ ॥

सुगमं।

संख्यातभाग हानि होकर उत्कृष्ट स्थितिके द्वितीय भागका बन्ध होने तक जाती है। वहाँ से लेकर ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ आयुकी उत्कृष्ट स्थितिको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड प्रमाण आयुकी स्थितिके बाँधने तक संख्यातगुणहानि होती है। वहाँ से लेकर तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति तक असंख्यातगुणहानि होकर जाती है।

शंका—ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थिति योग्य परिणामोंके द्वारा आयु कर्मका चतुःस्थान पतित बन्ध कैसे होता है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्ध योग्य परिणामोंमें भी अन्तर्मुहूर्त मात्र आयुःस्थितिके बन्ध योग्य परिणाम सम्भव है।

शंका—एक परिणाम भिन्न कार्योंको करनेवाला कैसे होता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सहकारी कारणोंके सम्बन्धभेदसे उसके भिन्न कार्योंके करनेमें कोई विरोध नहीं है।

इसी प्रकार शेष छह कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २४२ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकी विवक्षामें शेष कर्मोंके संनिकर्षकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार आयुको छोड़कर शेष छह कर्मोंके संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि उसमें कोई विशेषता नहीं है।

जिस जीवके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २४३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

१ अ-ताप्रत्योः 'आउट्ठिदीए' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा ॥ २४४ ॥

पुव्वकोडितिभागे उक्कस्साउट्ठिदिं बंधमाणेण जदि णाणावरणीयादिसत्तण्णं कम्माणमुक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तो आउएण सह सेससत्तण्णं कम्माणं पि उक्कस्सट्ठिदी होदि। अण्णहा अणुक्कस्सा होदूण तिट्ठाणपदिदा होदि। पज्जवणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ॥ २४५ ॥

तं जहा—पुव्वकोडितिभागम्मि उक्कस्साउअट्ठिदिं बंधमाणेण सत्तण्णं कम्माणं समऊणुक्कस्सट्ठिदीए बद्धाए असंखेज्जभागहाणी होदि। दुसमऊणाए पबद्धाए वि असंखेज्जभागहाणी चेव होदि। एवमसंखेज्जभागहाणी होदूण ताव गच्छदि जाव सत्तण्णं कम्माणं सग-सगुक्कस्सट्ठिदीओ उक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडेण[1] परिहाइदूण [बंधदि।] तदो प्पहुडि हेट्ठिमट्ठिदीसु आउअस्स उक्कस्सट्ठिदीए सह बंधमाणासु[2] संखेज्जभागहाणी होदि जाव उक्कस्सट्ठिदीए अद्धमेत्तं बद्धं ति। तदो प्पहुडि हेट्ठिमट्ठिदीओ आउअस्स उक्कस्सट्ठिदीए सह बंधमाणस्स[3] संखेज्जगुणहाणी होदि जाव तप्पाओग्गअंतोकोडाकोडिट्ठिदि त्ति।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट तीन स्थानोंमें पतित है ॥ २४४ ॥

पूर्वकोटिके त्रिभागमें आयुकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके द्वारा यदि ज्ञानावरणीयादिक आठ कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधी गई तो आयुके साथ शेष सात कर्मोंकी भी उत्कृष्ट स्थिति होती है। इसके विपरीत वह अनुत्कृष्ट होकर तीन स्थानोंमें पतित होती है। अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं—

उक्त वेदना असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन अथवा संख्यातगुणहीन होती है ॥ २४५ ॥

वह इस प्रकारसे—पूर्वकोटिके त्रिभागमें आयु की उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके द्वारा सात कर्मोंकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बाँधे जानेपर असंख्यातभागहानि होती है। दो समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बाँधे जानेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है। इस प्रकार असंख्यातभागहानि होकर तब तक जाती है जब तक सात कर्मोंकी अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितियोंको उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उनमें एक खण्डसे हीन होकर बाँधी जाती हैं। यहाँसे लेकर आयुकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ अधस्तन स्थितियोंको बाँधनेपर उत्कृष्ट स्थितिके अर्ध भागको बाँधने तक संख्यातभागहानि होती है। यहाँसे लेकर अधस्तन स्थितियोंको आयुकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ बाँधनेवाले जीवके तत्प्रायोग्य अन्तःकोड़ाकोड़ि प्रमाण स्थिति तक संख्यातगुणहानि होती है।

१ प्रतिषु 'एगखंडे' इति पाठः। २ प्रतिषु 'बद्धमाणासु' इति पाठः। ३ प्रतिषु 'बद्धमाणस्स' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥२४६ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाण-पदिदा ॥ २४७ ॥

णाणावरणीयभावमुक्कस्सं बंधमाणेण जदि सेसघादिकम्माणमुक्कस्सभावो पबद्धो तो उक्कस्सा भाववेयणा होदि । अह ण[1] बद्धो अणुक्कस्सा होदूण अणंतभागहीण-असंखेज्जभागहीण–संखेज्जभागहीण–संखेज्जगुणहीण – असंखेज्जगुणहीण–अणंतगुणहीणसरूवेण छट्ठाणपदिदा होदि । कधमेक्केण परिणामेण बज्झमाणाणं भावाणं भेयो ? ण, विसेसपच्चयभेएण तेसिं पि भेदुप्पत्तीदो ।

तस्स वेयणीय-आउव-णामा-गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥२४८॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ २४९ ॥

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २४६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी । उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट छह स्थानोंमें पतित है ॥ २४७ ॥

ज्ञानावरणीयके उत्कृष्ट भावको बाँधनेवाले जीवके द्वारा यदि शेष घातिकर्मोंका उत्कृष्ट भाव बाँधा गया है तो उनकी उत्कृष्ट भाववेदना होती है । परन्तु यदि उनका उत्कृष्ट भाव नहीं बाँधा गया है तो वह अनुत्कृष्ट होकर अनन्तभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन और अनन्तगुणहीन स्वरूपसे छह स्थानोंमें पतित होती है ।

शङ्का—एक परिणामसे बाँधे जानेवाले भावोंके भेदकी सम्भावना कैसे हो सकती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, विशेष प्रत्ययोंके भेदसे उनके भी भेदकी उत्पत्ति सम्भव है ।

उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २४८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ २४९ ॥

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्ण' इति पाठः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

तं जहा-सण्णिपंचिंदियपज्जत्तसव्वसंकिलिट्ठमिच्छाइट्ठीसु णाणावरणीयभावो उक्कस्सो होदि। आउअभावो पुण पमत्तापमत्तसंजदप्पहुडि जाव उवसंतकसाओ त्ति ताव उक्कस्सो होदि वेमाणियदेवेसु च। सेसअघादिकम्माणं सुहुमसांपराइयसुद्धि[1]संजदप्पहुडि उवरि उक्कस्सभावो होदि। ण च मिच्छाइट्ठीसु अघादिकम्माणमुक्कस्सभावो अत्थि, सम्माइट्ठीसु णियमिदउक्कस्साणुभागस्स मिच्छाइट्ठीसु संभवविरोहादो। तेण अघादिकम्माणमणुभागो अणंतगुणहीणो।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ २५० ॥

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो कदो तहा सेसतिण्णं घादिकम्माणं कायव्वो, अविसेसादो।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो सिया अत्थि सिया णत्थि ॥ २५१ ॥

सुहुमसांपराइय-खीणकसाएसु अत्थि, तत्थ तदाधारपोग्गलुवलंभादो। उवरि णत्थि, तेसु संतेसु केवलित्तविरोहादो।

जदि अत्थि भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २५२ ॥

वह इस प्रकारसे—संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व सर्वसंक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीवोंमें ज्ञानावरणीयका भाव उत्कृष्ट होता है। परन्तु आयु कर्मका भाव प्रमत्त व अप्रमत्तसंयतसे लेकर उपशान्तकषाय तक उत्कृष्ट होता है, तथा वैमानिक देवोंमें भी वह उत्कृष्ट होता है। शेष तीन अघाति कर्मोंका उत्कृष्ट भाव सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयतसे लेकर आगे होता है। मिथ्यादृष्टि जीवोंमें अघाति कर्मोंका उत्कृष्ट भाव सम्भव नहीं है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीवोंमें नियमसे पाये जानेवाले अघाति कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागके मिथ्यादृष्टि जीवोंमें होनेका विरोध है। इस कारण अघाति कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायके संनिकर्षकी प्ररूपणा करना चाहिये ॥ २५० ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकार शेष तीन घाति कर्मोंका संनिकर्ष करना चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना भावकी अपेक्षा कथञ्चित् होती है व कथंचित् नहीं होती है ॥ २५१ ॥

उक्त तीन घाति कर्मोंकी वेदना सूक्ष्मसाम्परायिक और क्षीणकषाय गुणस्थानोंमें है, क्योंकि, वहाँ उनके आधारभूत पुद्गल पाये जाते हैं। आगे उनकी वेदना नहीं है, क्योंकि, उक्त तीन कर्मोंके होनेपर केवली होनेका विरोध है।

यदि है तो वह भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट है या अनुत्कृष्ट ॥२५२॥

१ ताप्रतौ 'होदि। वेमाणियदेवेसु च सेस-' इति पाठः। ताप्रतौ 'सांपराइसुद्धि-' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ २५३ ॥

अणुक्कस्सत्तमणेयविहमिदि[1] अणप्पिदाणुक्कस्सपडिसेहट्ठमणंतगुणहीणमिदि भणिदं । किमट्ठमणंतगुणहीणत्तं ? खवगपरिणामेहि पत्तघादत्तादो ।

तस्स मोहणीयवेयणा भावदो णत्थि ॥ २५४ ॥

सुहुमसांपराइयचरिमसमए वेयणीयस्स उक्कस्साणुभागबंधो जादो । ण च सुहुमसांपराइए मोहणीयभावो णत्थि, भावेण विणा दव्वकम्मस्स अत्थित्तविरोहादो सुहुमसांपराइयसण्णाणुववत्तीदो वा । तम्हा मोहणीयवेयणा भावविसया णत्थि त्ति ण जुज्जदे ? एत्थ परिहारो उच्चदे । तं जहा—विणासविसए दोण्णि णया होंति उप्पादाणुच्छेदो अणुप्पादाणुच्छेदो चेदि । तत्थ उप्पादाणुच्छेदो णाम दव्वट्ठियो । तेण संतावत्थाए चेव विणासमिच्छदि, असंते बुद्धिविसयं चाइक्कंतभावेण [2]वयणगोयराइक्कंते अभाववबहाराणुववत्तीदो । ण च अभावो णाम अत्थि, तप्परिच्छिंदंतपमाणाभावादो, [3]संतविसयाणं

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ २५३ ॥

अनुत्कृष्टता चूँकि अनेक प्रकार की है, अतएव अविवक्षित अनुत्कृष्टताका प्रतिषेध करनेके लिये 'अनन्तगुणी हीन' ऐसा कहा है ।

शङ्का—अनन्तगुणहीनता किसलिये कही है ?

समाधान—क्षपक परिणामों द्वारा घातको प्राप्त होनेके कारण वह अनन्तगुणी हीन होती है ऐसा कहा है ।

उक्त जीवके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा नहीं होती है ॥ २५४ ॥

शङ्का—सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें वेदनीयका अनुभागबन्ध उत्कृष्ट हो जाता है । परन्तु उस सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें मोहनीयका भाव नहीं हो, ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि, भावके बिना द्रव्य कर्मके रहनेका विरोध है, अथवा वहाँ भावके माननेपर 'सूक्ष्मसाम्परायिक' यह संज्ञा ही नहीं बनती है । इस कारण मोहनीयकी भावविषयक वेदना नहीं है, यह कहना उचित नहीं है ?

समाधान—यहाँ इस शङ्काका परिहार कहते हैं । वह इस प्रकार है—विनाशके विषयमें दो नय हैं उत्पादानुच्छेद और अनुत्पादानुच्छेद । उत्पादानुच्छेदका अर्थ द्रव्यार्थिक नय है । इसलिये वह सद्भावकी अवस्थामें ही विनाशको स्वीकार करता है, क्योंकि, असत् और बुद्धिविषयतासे अतिक्रान्त होनेके कारण वचनके अविषयभूत पदार्थमें अभावका व्यवहार नहीं बन सकता । दूसरी बात यह है कि अभाव नामका कोई स्वतन्त्र पदार्थ नहीं है, क्योंकि, उसके ग्राहक प्रमाणका अभाव है । कारण कि सत्को विषय करनेवाले प्रमाणोंके असत् में प्रवृत्त होनेका विरोध है ।

१ अ-आ-काप्रतिषु '-मणेणविह' इति पाठः । २ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आ-का-ता प्रतिषु 'णयण' इति पाठः । ३ अ-आ-काप्रतिषु 'सत्त' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पमाणाणमसंते वावारविरोहादो। अविरोहे वा गद्दहसिंगं पि पमाणविसयं होज्ज। ण च एवं, अणुवलंभादो। तम्हा भावो चेव अभावो त्ति सिद्धं।

अणुप्पादाणुच्छेदो णाम पज्जवट्ठिओ णयो। तेण असंतावत्थाए अभाववव‌एसमिच्छदि, भावे उवलब्भमाणे अभावत्तविरोहादो। ण च पडिसेहविसओ भावो भावत्तमल्लियइ, पडिसेहस्स फलाभावप्पसंगादो। ण च विणासो णत्थि, [1]घडियादीणं [2]सव्वद्धमवट्ठाणाणुवलंभादो। ण च भावो अभावो होदि, भावाभावाणमण्णोण्णविरुद्धाणमेयत्तविरोहादो। एत्थ जेण दव्वट्ठियणयो उप्पादाणुच्छेदो अवलंबिदो तेण मोहणीयभाववेयणा णत्थि त्ति भणिदं। पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे मोहणीयभाववेयणा अणंतगुणहीणा होदूण अत्थि त्ति वत्तव्वं।

तस्स आउअवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २५५ ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ २५६ ॥

जेण आउअस्स उक्कस्सभाववेयणा अप्पमत्तसंजदेण बद्धदेवाउअम्मि होदि। ण च

अथवा, असत्‌के विषयमें उनकी प्रवृत्तिका विरोध न माननेपर गधेका सींग भी प्रमाणका विषय होना चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वह पाया नहीं जाता। इस कारण भाव स्वरूप ही अभाव है, यह सिद्ध होता है।

अनुत्पादानुच्छेदका अर्थ पर्यायार्थिक नय है। इसी कारण वह असत् अवस्थामें अभाव संज्ञाको स्वीकार करता है, क्योंकि, इस नयकी दृष्टिमें भावकी उपलब्धि होनेपर अभावरूपताका विरोध है। और प्रतिषेधका विषयभूत भाव भावस्वरूपताको प्राप्त नहीं हो सकता, क्योंकि, ऐसा होनेपर प्रतिषेधके निष्फल होनेका प्रसङ्ग आता है। विनाश नहीं है, यह भी नहीं कहा जा सकता क्योंकि, घटिका (छोटा घड़ा) आदिकोंका सर्वकाल अवस्थान नहीं पाया जाता। यदि कहा जाय कि भाव ही अभाव है (भावको छोड़कर तुच्छ अभाव नहीं है) तो यह भी कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, भाव और अभाव ये दोनों परस्पर विरुद्ध हैं, अतएव उनके एक होनेका विरोध है। यहाँ चूँकि द्रव्यार्थिक नय स्वरूप उत्पादानुच्छेदका अवलम्बन किया गया है, अतएव 'मोहनीय कर्मकी भाववेदना यहाँ नहीं है' ऐसा कहा गया है। परन्तु यदि पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन किया जाय तो मोहनीयकी भाववेदना अनन्तगुणी हीन होकर यहाँ विद्यमान है ऐसा कहना चाहिये।

उसके आयु कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २५५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट होकर अनन्तगुणी हीन होती है ॥ २५६ ॥

इसका कारण यह है कि आयुकी उत्कृष्ट भाववेदना अप्रमत्तसंयतके द्वारा बाँधी गई देवायु में

---

१ प्रतिषु 'घादियादीणं' इति पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'सव्वत्थमव-' ताप्रतौ 'सव्वत्थ अव-' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खवगसेडिम्मि देवाउअमत्थि, बद्धाउआणं खवगसेडिसमारोहाभावादो। अत्थि च मणुस्साउअं, ण तस्साणुभागो उक्कस्सो होदि; असंजदसम्मादिट्ठिणा मिच्छादिट्ठिणा वा बद्धस्स देवाउअं पेक्खिदूण अप्पसत्थस्स उक्कस्सत्तविरोहादो। तेण अणंतगुणहीणा।

तस्स णामा-गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥२५७॥

सुगमं।

उक्कस्सा ॥ २५८ ॥

सुहुमसांपराइयम्मि सव्वुक्कस्सविसोहीहि तिण्णं पि उक्कस्सबंधुवलंभादो।

एवं णामा-गोदाणं ॥ २५९ ॥

जहा वेयणीयस्स सण्णियासो कदो तहा णामा-गोदाणं पि कायव्वो, विसेसाभावादो।

जस्स आउअवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ॥ २६० ॥

सुगमं।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ २६१ ॥

होती है। परन्तु क्षपकश्रेणिमें देवायु है नहीं, क्योंकि, बद्धायुष्क जीवोंका क्षपकश्रेणिपर चढ़ना सम्भव नहीं है। क्षपकश्रेणिमें मनुष्यायु अवश्य है, परन्तु उसका अनुभाग उत्कृष्ट नहीं होता, क्योंकि, असंयत सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टिके द्वारा बाँधी गई मनुष्यायु चूँकि देवायुकी अपेक्षा अप्रशस्त है, अतएव उसके उत्कृष्ट होनेका विरोध है। इसी कारण वह अनन्तगुणी हीन है।

उसके नाम व गोत्र कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २५७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उत्कृष्ट होती है ॥ २५८ ॥

कारण की सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा तीनों ही कर्मोंका उत्कृष्ट बन्ध पाया जाता है।

इसी प्रकार नाम और गोत्र कर्मकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥२५९॥

जिस प्रकारसे वेदनीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे नाम व गोत्र कर्मके भी संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

जिस जीवके आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ॥ २६० ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ २६१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुदो ? अप्पमत्तसंजदप्पहुडि उवरिमसंजदेसु पमत्तसंजदेसु वेमाणियदेवेसु च आउअस्स उक्कस्सभावुवलंभादो। ण च एदेसु घादिकम्माणमुक्कस्साणुभागो अत्थि, विसोहीए घादं पाविदूण अणंतगुणहीणत्तमुवगयाणमुक्कस्सत्तविरोहादो। ण च तिण्णमघादिकम्माणमुक्कस्सओ अणुभागो अत्थि, तस्स खीणकसायादिसु चेव संभवादो। ण च खीणकसायादिसु आउअस्स उक्कस्सभावो अत्थि, खवगसेडिम्मि देवाउअस्स संताभावादो[1]। तम्हा अणंतगुणहीणत्तं सिद्धं। एवमुक्कस्सओ परत्थाणवेयणासण्णियासो समत्तो।

जो सो थप्पो जहण्णओ परत्थाणवेयणासण्णियासो सो चउव्विहो—दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ॥ २६२ ॥

जहण्णवेयणसण्णियासो चउव्विहो चेव, दव्वट्ठियणयावलंबणादो। पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे पण्णारसविहो होदि। सो जाणिय वत्तव्वो।

जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २६३ ॥

सुगमं।

कारण यह कि अप्रमत्तसंयतसे लेकर आगेके संयत जीवोंमें, प्रमत्तसंयतोंमें और वैमानिक देवोंमें आयुका उत्कृष्ट अनुभाग पाया जाता है। परन्तु इन जीवोंमें घाति कर्मोंका उत्कृष्ट अनुभाग नहीं है, क्योंकि, विशुद्धि द्वारा घातको प्राप्त होकर अनन्तगुणी हीनताको प्राप्त हुए उनके उत्कृष्ट होनेका विरोध है। तीन अघाति कर्मोंका भी उनमें उत्कृष्ट अनुभाग सम्भव नहीं है, क्योंकि, वह क्षीणकषाय आदि जीवोंमें ही सम्भव है। परन्तु क्षीणकषाय आदि जीवोंमें आयुका उत्कृष्ट भाव सम्भव नहीं है, क्योंकि, क्षपकश्रेणिमें देवायुके सत्त्वका अभाव है। इस कारण उक्त सात कर्मोंकी भाववेदनाकी अनन्तगुणहीनता सिद्ध है। इस प्रकार उत्कृष्ट परस्थान वेदनासंनिकर्ष समाप्त हुआ।

जो जघन्य परस्थान वेदनासंनिकर्ष स्थगित किया गया था वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षासे चार प्रकारका है ॥ २६२ ॥

जघन्य वेदनासन्निकर्ष चार प्रकारका ही है, क्योंकि द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है। परन्तु पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर वह पन्द्रह प्रकारका है (प्रत्येक भङ्ग ४, द्वि०सं०६, त्रि० सं०४, च० सं० १; ४+६+४+१=१५)। उसकी जानकार प्ररूपणा करनी चाहिये।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २६३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

१ अ-आ-काप्रतिषु 'संतभावादो', ताप्रतौ 'संत (ता) भावादो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा विट्ठाण-पदिदा ॥ २६४ ॥

सुद्धणयविसयखविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण खीणकसायचरिमसमए ट्ठिदस्स णाणावरणीयवेयणाए सह दंसणावरणीय-अंतराइयाणं च दव्ववेयणा जहण्णा होदि । अध अण्णहा जइ आगदो होज्ज तो अजहण्णा होदूण दुट्ठाणपदिदा । संपहि पज्जवट्ठियणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

अणंतभागब्भहिया वा असंखेजभागब्भहिया वा ॥ २६५ ॥

णाणावरणीयस्स जहण्णदव्वे संते जदि एगो परमाणू दंसणावरणीय–अंतराइयाणं दव्वेसु अहियो होज्ज तो अणंतभागब्भहियं दव्वं होदि । एदमादिं कादूण परमाणुत्तरादिकमेण ताव अणंतभागवड्ढी गच्छदि जाव जहण्णदव्वमुक्कस्सअसंखेज्जेण खंडिदूण तत्थ एगखंडमेत्तं वड्ढिदं ति । तदो प्पहुडि परमाणुत्तरादिकमेण असंखेज्जभागवड्ढी होदूण गच्छदि जाव जहण्णदव्वं तप्पाओग्गेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं वड्ढिदं ति । उवरिमवड्ढीओ एत्थ किण्ण भण्णंति[1] ? ण, खविदकम्मंसिए जदि सुट्ठु बहुगी दव्ववड्ढी होदि तो एगसमयपबद्धमेत्ता चेव होदि त्ति गुरूवएसादो ।

वह जघन्य होती है और अजघन्य होती है, जघन्यसे अजघन्य दो स्थानों में पतित है ॥ २६४ ॥

शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर क्षीणकषायके अन्तिम समयमें स्थित हुए जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदनाके साथ दर्शनावरणीय और अन्तरायकी द्रव्यवेदना जघन्य होती है । अथवा यदि अन्य स्वरूपसे आया है तो उक्त दोनों कर्मोंकी द्रव्यवेदना अजघन्य होकर दो स्थानोंमें पतित होती है । अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं—

वह अजघन्य वेदना अनन्तभाग अधिक और असंख्यातभाग अधिक होती है ॥२६५॥

ज्ञानावरणीयके द्रव्यके जघन्य होनेपर यदि एक परमाणु दर्शनावरणीय और अन्तरायके द्रव्योंमें अधिक होता है तो अनन्तभाग अधिक द्रव्य होता है। इससे लेकर एक एक परमाणु आदिके क्रमसे तब तक अनन्तभागवृद्धि जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड मात्र वृद्धिको प्राप्त होता है । पश्चात् इससे लेकर एक एक परमाणु आदिके क्रमसे जघन्य द्रव्यको तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड मात्र वृद्धिके होने तक असंख्यातभागवृद्धि होकर जाती है ।

शङ्का—आगेकी वृद्धियाँ यहाँ क्यों नहीं कही गई हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, क्षपितकर्मांशिकके यदि बहुत अधिक द्रव्यकी वृद्धि होती है तो वह एक समयप्रबद्ध प्रमाण ही होती है, ऐसा गुरुका उपदेश है ।

---

१ प्रतिषु 'भणंति' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खविदघोलमाणमस्सिदूण किमिदि ण वड्ढाविज्जदे ? ण एस दोसो, णाणावरणीयस्स जहण्णदव्वाभावेण पयदपरूवणाए विरोहप्पसंगादो ।

तस्स वेदणीय-णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा ॥ २६६ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जभागब्भहिया ॥ २६७ ॥

सजोगिकेवलिणा पुव्वकोडिकालेण असंखेज्जगुणाए सेडीए विणासिज्जमाण-दव्वस्स अविणासादो । तस्स अहियदव्वस्स खीणकसायचरिमसमए वट्टमाणस्स को भागहारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

तस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णिया णत्थि ॥ २६८ ॥

कुदो ? सुहुमसांपराइयचरिमसमए पुव्वं चेव विणट्ठत्तादो ।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २६९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २७० ॥

णेरइयम्मि तेतीससागरोवमब्भंतर-असंखेज्जगुणहाणीयो गालिय दीवसिहागारेण

शङ्का—क्षपितघोलमान जीवका आश्रय करके वृद्धि क्यों नहीं करायी जाती है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उसके ज्ञानावरणीयके जघन्य द्रव्यका अभाव होनेसे प्रकृत प्ररूपणाके विरुद्ध होनेका प्रसङ्ग आता है ।

उसके वेदनीय, नाम और गोत्रकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २६६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातवें भाग अधिक होती है ॥२६७॥

कारण कि सयोगिकेवलीके द्वारा [कुछ कम] पूर्वकोटि मात्र कालमें असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे निर्जीर्ण किये जानेवाले द्रव्यका पूर्णतया विनाश नहीं हुआ है ।

शङ्का—क्षीणकषायके अन्तिम समयमें वर्तमान उक्त अधिक द्रव्यका भागहार क्या है ?

समाधान—उसका भागहार पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है ।

उसके मोहनीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ २६८ ॥

कारण कि वह पहिले ही सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें नष्ट हो चुका है ।

उसके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥२६९॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ?॥ २७० ॥

नारकी जीवके तेतीस सागरोपम कालके भीतर असंख्यातगुणहानियोंको गलाकर दीप-

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

ट्ठिददव्वमेगसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागो[1] जहण्णदव्ववेयणा[2]। एत्थ पुण पुव्वकोडि-कालब्भंतरे एगा वि गुणहाणी णत्थि, गुणहाणीए[3] असंखेज्जभागत्तादो। तेण आउअ-जहण्णदव्वादो खीणकसायचरिमसमयदव्वमसंखेज्जगुणं ति सिद्धं।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ॥ २७१ ॥

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो कदो तधा एदेसिं पि दोण्णं पयडीणं कायव्वो, विसेसाभावादो।

जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं वेयणा दव्वदो जहण्णिया णत्थि ॥ २७२ ॥

कुदो? छदुमत्थावत्थाए[4] चेव तिस्से विणट्ठत्तादो।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २७३ ॥

सुगमं।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २७४ ॥

शिखाके आकारसे जो द्रव्य स्थित है वह एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य वेदना स्वरूप है। परन्तु यहाँ पूर्वकोटिकालके भीतर एक भी गुणहानि नहीं है, क्योंकि, वहाँ गुणहानिका असंख्यातवाँ भाग ही है। इसलिये आयुके जघन्य द्रव्यसे क्षीणकषायका अन्तिम समयसम्बन्धी द्रव्य असंख्यात- गुणा है, यह सिद्ध है।

इसी प्रकारसे दर्शनावरणीय और अन्तरायकी प्ररूपणा करना चाहिये ॥ २७१ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयका सन्निकर्ष किया गया है उसी प्रकार इन दोनों कर्मोंके सन्निकर्षका कथन करना चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ २७२ ॥

कारण कि उक्त कर्मोंकी वह वेदना छद्मस्थ अवस्थामें ही नष्ट हो चुकी है।

उसके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥२७३॥

यह सूत्र सुगम है।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २७४ ॥

---

१ ताप्रतौ 'असंखेज्जभागो' इति पाठः। २ आप्रतौ 'जहण्णदव्वट्ठिया' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'गुणहाणी अत्थि ण गुणहाणीए' इति पाठः। ४ अ-का-ताप्रतिषु 'छदुमत्थाए', आप्रतौ 'छदुमत्थत्थाए' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एदमजोगिचरिमसमयदव्वं उक्कस्सजोगेण बद्धएगसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभाग-मेत्तं[1]। कुदो णव्वदे ? जदा जदा आउअं बंधदि तदा तदा तप्पाओग्गेण उक्कस्सएण जोगेण बंधदि त्ति वयणादो णव्वदे। दीवसिहादव्वं पुण जहण्णजोगेण बद्धएगसमय-पबद्धस्स असंखेज्जदिभागमेत्तं होदि। तेण जहण्णाउअवेयणादो इमा असंखेज्जगुणा।

तस्स णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥२७५॥

सुगमं।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा[2] विट्ठाण-पदिदा ॥ २७६ ॥

जदि सुद्धणयविसयखविदकम्मंसियलक्खणेणागदो तो वेयणीयदव्ववेयणाए सह णामा-गोदाणं दव्ववेयणा वि जहण्णा होदि। अह णागदो[3] तो अजहण्णा होदूण विट्ठाण-पदिदा होदि। पज्जवट्ठियणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा ॥ २७७ ॥

यह अयोगकेवलीका अन्तिम समय सम्बन्धी द्रव्य उत्कृष्ट योगसे बाँधे गये एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भाग मात्र है।

शङ्का—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह "जब जब आयुको बाँधता है तब तब तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगसे बाँधता है" इस वचनसे जाना जाता है।

परन्तु दीपशिखा द्रव्य जघन्य योगसे बाँधे गये एक समयप्रबद्धके असंख्मातवें भाग मात्र होता है। इस कारण आयुकी जघन्य वेदनासे यह वेदना असंख्यातगुणी है।

उसके नाम और गोत्रकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अज-घन्य ॥ २७५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यसे अजघन्य दो स्थानोंमें पतित होती है ॥ २७६ ॥

यदि शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आया है तो वेदनीयकी वेदनाके साथ नाम व गोत्रकी द्रव्यवेदना भी जघन्य होती है। परन्तु यदि उक्त स्वरूपसे नहीं आया है तो वह अजन्य होकर दो स्थानोंमें पतित है। अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं—

वह अनन्तभाग अधिक भी होती है और असंख्यात भाग अधिक भी होती है ॥२७७॥

---

१ ताप्रतौ 'संखेजभागमेत्तं' इति पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'अजहण्णादो', ताप्रतौ 'अजहण्णा [दो]' इति पाठः। ३ अ-आप्रत्योः 'जहण्णागदो', काप्रतौ जहण्णागदो ताप्रतौ 'अहण्णागदो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णदव्वस्सुवरि एगपरमाणुम्मि वड्ढिदे अणंतभागवड्ढी होदि । एवं परमाणुत्तरादिकमेण ताव अणंतभागवड्ढी गच्छदि जाव जहण्णदव्वमुक्कस्सअसंखेज्जेण खंडिदूण तत्थेगखंडमेत्तं वड्ढिदं ति । तदो प्पहुडि परमाणुत्तरादिकमेण असंखेज्जभागवड्ढी ताव गच्छदि जाव जहण्णदव्वं तप्पाओग्गेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं जहण्णदव्वस्सुवरि वड्ढिदं ति ।

एवं णामा-गोदाणं ॥ २७८ ॥

जहा वेयणीयस्स सण्णियासो कओ तहा णामा-गोदाणं पि सण्णियासो कायव्वो, विसेसाभावादो ।

जस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणमाउअवज्जाणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २७९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जभागब्भहिया ॥ २८० ॥

कुदो ? उवरि विणासिज्जमाणदव्वेण अहियत्तादो । तस्स अहियदव्वस्स को पडिभागो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥२८१॥

जघन्य द्रव्यवेदनाके ऊपर एक परमाणुकी वृद्धि होनेपर अनन्तभागवृद्धि होती है । इस प्रकार एक एक परमाणु आदिके क्रमसे तब तक अनन्तभागवृद्धि जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड मात्र वृद्धि होती है । तत्पश्चात् उससे लेकर एक एक परमाणु आदिके क्रमसे असंख्यातभागवृद्धि तब तक जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड मात्र वृद्धि जघन्य द्रव्यके ऊपर होती है ।

इसी प्रकार नाम और गोत्रकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥२७८॥

जिस प्रकार वेदनीयका सन्निकर्ष किया गया है उसी प्रकार नाम और गोत्रके सन्निकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिसके मोहनीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुको छोड़कर छह कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥२७९॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातवें भाग अधिक होती है ॥ २८० ॥

कारण कि वह आगे नष्ट किये जानेवाले द्रव्यसे अधिक है । उस अधिक द्रव्यका प्रतिभाग क्या है ? उसका प्रतिभाग पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है ।

उसके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥२८१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २८२ ॥

एदं पि सुगमं, बहुसो अवगमिदत्थत्तादो ।

जस्स आउअवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २८३ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ॥ २८४ ॥

णेरइयो जेण पंचिंदियो सण्णिपज्जत्तो तेण एइंदियजोगादो एदस्स जोगो असंखेज्जगुणो । तेणेव कारणेण एइंदियएगसमयपबद्धदव्वादो एदस्स[1] एगसमयपबद्धदव्वमसंखेज्जगुणं । तेण दीवसिहापढमसमयदव्वेण सत्तण्णं पि कम्माणं दिवड्ढगुणहाणिपमाण[2]-पंचिंदियसमयपबद्धमेत्तेण होदव्वं । तदो सग-सगजहण्णदव्वं पेक्खिदूण एत्थतणदव्वेण असंखेज्जगुणेणेव होदव्वं । तेण चउट्ठाणपदिदा त्ति ण घडदे ? एत्थ परिहारो वुच्चदे । तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण विवरीदं गंतूण[3] जहण्णजोगेण जहण्णबंधगद्धाए च णिरयाउअं बंधिय सत्तमपुढविणेरइएसु उववज्जिय छहि पज्जत्तीहि पज्ज-

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २८२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है, क्योंकि, इसके अर्थका परिज्ञान बहुत बार कराया जा चुका है ।

जिस जीवके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥२८३॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ॥२८४॥

शङ्का—चूँकि नारक जीव पंचेन्द्रिय, संज्ञी व पर्याप्त है, अतएव एकेन्द्रिय जीवके योगकी अपेक्षा इसका योग असंख्यातगुणा है । और इसी कारणसे एकेन्द्रिय जीवके एक समयप्रबद्धके द्रव्यकी अपेक्षा इसके एक समयप्रबद्धका द्रव्य असंख्यातगुणा है । इसलिये दीपशिखाके प्रथम समयके द्रव्यसे सातों ही कर्मोंका द्रव्य डेढ़ गुणहानिमात्र पंचेन्द्रियके समयप्रबद्ध प्रमाण होना चाहिये । अतएव अपने अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा यहाँका द्रव्य असंख्यातगुणा ही होगा । ऐसी अवस्थामें सूत्रमें 'चतुःस्थान पतित बतलाना घटित नहीं होता ?

समाधान—यहाँ इस शङ्काका परिहार कहते हैं । वह इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर विपरीत स्वरूपको प्राप्त हो जघन्य योगसे और जघन्य बन्धककालसे नारकायुको बाँधकर सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हो छह पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको

१ अ-आप्रत्योः 'एगसमयपबद्धत्तादो दव्वादो एगस्स' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'पमाणं' इति पाठः । ३ ताप्रतौ नोपलभ्यते पदमेतत् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्तयदो होदूण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं घेत्तूण दिवड्ढमेत्तएइंदियसमयपबद्धे[1] ओकड्डुक्कड्डण-भागहारेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तदव्वमोकड्डदि। एवमोकड्डिदूण उदयावलियबाहिरट्ठिदीए वट्टमाणकाले बज्झमाणएगसमयपबद्धस्स पढमणिसेगादो असंखेज्जगुणं णिसिंचदि। तत्तो प्पहुडि उवरि विसेसहीणं णिसिंचदि जाव ओकड्डिदसमयपबद्धा णिट्ठिदा त्ति। एवं समयं पडि ओकड्डिदूण णिसेगरचणाए कीरमाणाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण कालेण उदयगदगोवुच्छा असंखेज्जभागहीणएगपंचिंदियसमयपबद्धमेत्ता होदि, सव्वत्थ भुजगारकालपमाणस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो। तेण समयं पडि वयादो आयो[2] असंखेज्जभागब्भहियो। एदेण कमेण तेत्तीससागरोवमेसु संचयं करिय दीवसिहापढमसमए ट्ठिदस्स सत्तकम्मदव्वं सगजहण्णदव्वादो असंखेज्जभागब्भहियं होदि। ण च ओकड्डिददव्वस्स पढमणिसेयो बज्झमाणसमयपबद्धस्स पढमणिसेगेण सरिसो, तत्तो असंखेज्जगुणस्सेव संभवुवलंभादो। तं जहा—ओकड्डणाए णिसिंचमाणदव्वस्स पढमणिसेगो एगमेइंदियसमयपबद्धमोकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडिदमेत्तो होदि। एसो वि [3]बद्धपढमणिसेगादो असंखेज्जगुणो त्ति। तेण एगगुणहाणीए असंखेज्जदिभागे चेव अदिक्कंते उदयगदगोपुच्छा एगपंचिंदियसमयपबद्धमेत्ता होदि। जदि एगपंचिंदियसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभागेण उदयगदगोवुच्छा ओकड्डुक्कड्डणवसेण ऊणा

ग्रहण करके डेढ़ गुणहानि प्रमाण एकेन्द्रियके समयप्रबद्धोंको अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड मात्र द्रव्यका अपकर्षण करता है। इस प्रकार अपकर्षित करके उदयावलिके बाहिर स्थितिमें वर्तमानकालमें बाँधे जानेवाले एक समयप्रबद्धके प्रथम निषेकसे असंख्यातगुणा देता है। उससे लेकर आगे अपकर्षित समयप्रबद्धोंके समाप्त होने तक विशेषहीन देता है। इस प्रकार प्रत्येक समयमें अपकर्षित कर निषेकरचना करनेपर पल्योपमके असंख्यातवें कालमें उदयप्राप्त गोपुच्छ असंख्यातवें भागसे हीन एक पचेन्द्रियके समयप्रबद्धके बराबर होती है, क्योंकि, सर्वत्र भुजाकारबन्धके कालका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भाग पाया जाता है। इसलिये प्रत्येक समयमें व्ययकी अपेक्षा आय असंख्यातवें भागसे अधिक है। इस क्रमसे तेतीस सागरोपमोंमें संचय करके दीपशिखाके प्रथम समयमें स्थित जीवके सात कर्मोंका द्रव्य अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक होता है। अपकर्षित द्रव्यका प्रथम निषेक बाँधे जानेवाले समयप्रबद्धके प्रथम निषेकके सदृश भी नहीं होता, क्योंकि, उसके उससे असंख्यातगुणे होनेकी ही सम्भावना पायी जाती है। वह इस प्रकारसे—अपकर्षण द्वारा दिये जानेवाले द्रव्यका प्रथम निषेक एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे खण्डित करनेपर जो लब्ध हो उतना होता है। यह भी बाँधे गये प्रथम निषेकसे असंख्यातगुणा है। इस कारण एक गुणहानिके असंख्यातवें भागके ही बीतनेपर उदयगत गोपुच्छा पंचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धके बराबर होती है। यदि उदयगत गोपुच्छा अपकर्षण-उत्कर्षण द्वारा पंचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भागसे हीन होकर सर्वत्र नष्ट होती है तो दीपशिखा

१ ताप्रतौ 'उकड्डुक्कड्डण' इति पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'आदि', ताप्रतौ 'आदी' इति पाठः। ३ प्रतिषु 'बंध' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होदूण सव्वत्थ गलदि तो दीवसिहादव्वं सगजहण्णदव्वादो संखेज्जभागब्भहियं होदि। अध एगपंचिंदियसमयपबद्धस्स संखेज्जभागमेत्तमुदयगदगोवुच्छपमाणं सव्वत्थ जदि होदि तो सगजहण्णदव्वादो दीवसिहादव्वं संखेज्जगुणं होदि। अध एगपंचिंदियसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागमेत्तमोकड्डुक्कड्डणवसेण सव्वत्थ उदयगदगोवुच्छदव्वं होदि तो सगजहण्णदव्वादो असंखेज्जगुणं होदि। ण च सम्मादिट्ठिम्मि चेव एसो कमो, विसोहिबहुलेसु मिच्छाइट्ठीसु वि एवं चेव संजादे विरोहाभावादो। ओकड्डणाए एवंविहा णिज्जरा होदि त्ति कधं णव्वदे ? चउट्ठाणपदिदसुत्तणिद्देसस्स अण्णहा अणुववत्तीदो। भुजगारप्पदरद्धासु[1] सुकंधारपक्खा इव सव्वजीवेसु वट्टमाणासु जेसिं जीवाणमप्पदरद्धादो भुजगारद्धा कमेण असंखेज्जभागब्भहिया संखेज्जभागब्भहिया संखेज्जगुणब्भहिया असंखेज्जगुणब्भहिया तेसिं दव्वं असंखेज्जभागब्भहियं संखेज्जभागब्भहियं संखेज्जगुणब्भहियं असंखेज्जगुणब्भहियं च कमेण होदि त्ति वुत्तं होदि।

जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २८५ ॥

सुगमं।

द्रव्य अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा संख्यातवें भागसे अधिक होता है। यदि उदयगत गोपुच्छाका प्रमाण सर्वत्र पंचेन्द्रिय सम्बन्धी एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भाग मात्र होता है तो दीपशिखाका द्रव्य अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा संख्यातगुणा होता है। यदि उदयगत गोपुच्छाका द्रव्य सर्वत्र अपकर्षण-उत्कर्षणके वश पंचेन्द्रिय सम्बन्धी एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भाग मात्र होता है तो वह अपने जघन्य द्रव्यसे असंख्यातगुणा होता है। यह क्रम केवल सम्यग्दृष्टि जीवके ही नहीं होता है, क्योंकि, अतिशय विशुद्धि युक्त मिथ्यादृष्टियोंमें भी ऐसा होनेमें कोई विरोध नहीं है।

शङ्का—अपकर्षण द्वारा इस प्रकारकी निर्जरा होती है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—चूँकि इसके बिना चतुःस्थान पतित सूत्रका निर्देश घटित नहीं होता, अतः इसीसे उक्त निर्जरा परिज्ञात होती है।

सब जीवोंमें शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्षके समान भुजाकारकाल और अल्पतरकालके रहनेपर जिन जीवोंके अल्पतरकालकी अपेक्षा भुजाकारकाल क्रमसे असंख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातगुणा अधिक और असंख्यातगुणा अधिक होता है उनका द्रव्य क्रमसे असंख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातगुणा अधिक और असंख्यातगुणा अधिक होता है, यह उसका अभिप्राय है।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २८५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'भुजगारप्पदरत्थासु', ताप्रतौ 'भुजगारप्पदरत्था [सु]' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णा ॥ २८६ ॥

जहण्णोगाहणाए ट्ठिदणाणावरणीयखंधेहिंतो जीवदुवारेण सत्तण्णं कम्मक्खंधाणं भेदाभावादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ २८७ ॥

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो परूविदो तहा सेसकम्माणं परूवेदव्वो, अविसेसादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥२८८॥ ।

सुगमं ।

जहण्णा ॥ २८९ ॥

णाणावरणीयजहण्णदव्वक्खंधाणं च एदासिं जहण्णदव्वक्खंधाणं पि एगसमयट्ठिदिदंसणादो ।

तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २९० ॥

सुगमं ।

वह जघन्य होती है ॥ २८६ ॥

कारण यह कि जघन्य अवगाहना में स्थित ज्ञानावरणीयके स्कन्धोंसे जीव द्वारा सात कर्मोंके स्कन्धोंमें कोई भेद नहीं है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २८७ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके संनिकर्षकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष कर्मोंके संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २८८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य होती है ॥ २८९ ॥

कारण यह कि ज्ञानावरणीयके जघन्य द्रव्य के स्कन्धोंकी तथा इन दो कर्मोंके जघन्य द्रव्यके स्कन्धों की भी एक समय स्थिति देखी जाती है ।

उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २९० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २६१ ॥

कुदो ? तिण्णमघादिकम्माणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदिसंतकम्मसेसत्तादो, आउअस्स अंतोमुहुत्तप्पहुडिट्ठिदिसंतकम्मसेसत्तादो।

तस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ॥ २६२ ॥

सुहुमसांपराइयचरिमसमये णट्ठाए खीणकसायचरिमसमए संताभावादो।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ॥ २६३ ॥

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो कदो तहा एदेसिं दोण्णं कम्माणं कायव्वो।

जस्स वेयणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय–मोहणीय–अंतराइयाणं वेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ॥ २६४ ॥

कुदो ? छदुमत्थद्धाए विणट्ठत्तादो।

तस्स आउअ-णामा-गोदवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २६५ ॥

सुगमं।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २६१ ॥

कारण कि उसके तीन अघाति कर्मोंका स्थितिसत्त्व पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र तथा आयुका स्थितिसत्त्व अन्तर्मुहूर्त आदि मात्र शेष रहता है।

उसके मोहनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ २९२ ॥

कारण कि वह सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें नष्ट हो चुकी है, अतः उसका क्षीणकषायके अन्तिम समयमें सत्त्व सम्भव नहीं है।

इसी प्रकार दर्शनावरण और अन्तरायकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २६३ ॥

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे इन दो कर्मोंका संनिकर्ष करना चाहिये।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ २६४ ॥

कारण कि उनकी वेदना छद्मस्थ कालमें नष्ट हो चुकी है।

उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २६५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णा ॥ २९६ ॥

अजोगिचरिमसमए तिण्णं वेयणाणमेगट्ठिदिदंसणादो ।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ॥ २९७ ॥

जहा वेयणीयस्स सण्णियासो कओ तहा एदेसिं पि तिण्णं कम्माणं कायव्वो ।

जस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ २९८ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ॥ २९९ ॥

कुदो ? एगसमयं पेक्खिदूण घादिकम्माणं अंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदीए अघादीणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीए च अंतोमुहुत्तप्पहुडि ट्ठिदिसंतस्स च असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३०० ॥

सुगमं ।

वह जघन्य होती है ॥ २९६ ॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें उक्त तीन वेदनाओंकी एक [समय] स्थिति देखी जाती है ।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्र कर्मकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २९७ ॥

जिस प्रकारसे वेदनीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे इन तीनों भी कर्मोंका करना चाहिये ।

जिस जीवके मोहनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ २९८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ॥ २९९ ॥

कारण कि एक समयकी अपेक्षा घाति कर्मोंकी अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति और अघाति कर्मोंकी पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थिति ये दोनों स्थितियाँ तथा अन्तर्मुहूर्त आदि रूप स्थितिसत्त्व भी असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीय की वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ३०० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णा ॥ ३०१ ॥

कुदो ? खवगपरिणामेहि सव्वुकस्सं घादं पाविदूण खीणकसायचरिमसमए ट्ठिदत्तादो ।

तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३०२

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३०३ ॥

कुदो ? परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धअपज्जत्तसंजुत्ततिरिक्खाउआणुभागं, भवसिद्धियचरिमसमयअसादावेदणीयजहण्णाणुभागं, सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएण हद-समुप्पत्तियकम्मेण परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धणामजहण्णाणुभागं, उच्चागोदमुव्वेल्लिय बादरतेउ-वाउजीवेण सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण सव्वविसुद्धेण बद्धणीचागोदजहण्णा-णुभागं च पेक्खिदूण एदस्स खीणकसायस्स चरिमसमए वट्टमाणस्स एदेसिं कम्माणं अणुभागस्स अणंतगुणत्तं होदि, वेयणीय-णामा-गोदाणुभागाणं पसत्थभावेण उक्कस्सत्तुव लंभादो । मणुसाउअभावस्स घादवज्जियस्स तिरिक्खाउआदो पसत्थस्स जहण्णादो अणंत-गुणत्तं होदि, । [कुदो णव्वदे ?] चउसट्ठिवदियअप्पाबहुगवयणादो ।

वह जघन्य होती है ॥ ३०१ ॥

कारण कि वह क्षपक परिणामोंके द्वारा सर्वोत्कृष्ट घातको प्राप्त होकर क्षीणकषाय गुण-स्थानके अन्तिम समयमें स्थित है ।

उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकी वेदना भाव की अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ३०२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३०३ ॥

इसका कारण यह है कि परिवर्तमान मध्यम परिणामके द्वारा बाँधे गई अपर्याप्त सहित तिर्यंच आयुके अनुभागकी अपेक्षा, भव्यसिद्धिक अवस्थाके अन्तिम समयमें असाता वेदनीयके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा, हतसमुत्पत्तिककर्मा सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके द्वारा परिवर्तमान मध्यम परिणामके द्वारा बाँधे गये नाम कर्मके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा, तथा उच्च गोत्रकी उद्वेलना करके सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुए सर्व विशुद्ध बादर तेजकायिक व वायुकायिक जीवके द्वारा बाँधे गये नीच गोत्रके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा क्षीणकषायके अन्तिम समयमें वर्तमान इस जीवके इन कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा होता है; क्योंकि प्रशस्त होनेके कारण वेदनीय, नाम और गोत्रके अनुभागमें उत्कृष्टता पायी जाती है। तिर्यंच आयुकी अपेक्षा प्रशस्त व घातसे रहित मनुष्यायुका अनुभाग जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा होता है ।

[शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—वह] चौंसठ पद रूप अल्पबहुत्वके वचनसे जाना जाता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया णत्थि ॥ ३०४ ॥

तिस्से तत्थ [1]पदेससत्ताभावादो ।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ॥ ३०५ ॥

जहा णाणावरणीयसण्णियासो कदो तहा एदासिं पि पयडीणं कायव्वो ।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया णत्थि ॥३०६॥

कुदो ? अजोगिचरिमसमए एदेसिं [2]पदेससत्ताभावादो ।

तस्स आउअ-णामा-गोदवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३०७ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३०८ ॥

कुदो ? जसकित्ति-उच्चागोदाणं चरिमसमयसुहुमसांपराइएण बद्धउक्कस्साणुभागस्स सग-सगजहण्णाणुभागादो अणंतगुणस्स अजोगिचरिमसमए उवलंभादो, तिरिक्खअपज्जत्तसंजुत्तआउअभावादो वि मणुसाउअभावस्स पसत्थत्तणेण घादाभावेण च अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

उसके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥ ३०४ ॥

कारण कि वहाँ उसके प्रदेशोंके सत्त्वका अभाव है ।

इसी प्रकारसे दर्शनावरणीय और अन्तरायकी अपेक्षा प्ररूपणा करनी चाहिये ॥३०५॥

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीय कर्मका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे इन दो प्रकृतियोंके भी संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

जिस जीवके वेदनीय कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ॥३०६॥

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें इन कर्मोंके प्रदेशोंके सत्त्वका अभाव है ।

उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ३०७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३०८ ॥

कारण यह कि यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके द्वारा बाँधा गया उत्कृष्ट अनुभाग अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें अपने अपने जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा पाया जाता है, तथा अपर्याप्त सहित तिर्यञ्च आयुके अनुभागकी अपेक्षा प्रशस्त व घातसे सहित होनेके कारण मनुष्यायुका भी अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

---

१ प्रतिषु 'पदेससत्ता भावादो' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'पदेससत्ताभावादो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३०९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३१० ॥

कुदो ? तिण्णं घादिकम्माणं खीणकसाएण घादिज्जमाणअणुभागस्स एत्थ संतसरूवेण उवलंभादो, वेयणीय-णामा-गोदाणं साद-जसगित्ति-उच्चागोदाणुभागस्स बंधेण उक्कस्सभावोवलंभादो, मणुसाउअभावस्स वि पसत्थत्तणेण अणंतगुणत्तवलंभादो ।

जस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३११ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३१२ ॥

कुदो ? वेयणीय-घादिकम्माणं खवगपरिणामेहि एत्थ घादाभावादो मणुस्सेसु पंचिंदियतिरिक्खेसु च मज्झिमपरिणामेण बद्धतिरिक्खअपज्जत्त-[संजुत्त-]आउअजहण्ण[१]-भावेसु अणुव्वेल्लिदउच्चागोदेसु सव्वविसुद्धबादरतेउवाउपज्जत्तएसु च अघादिदणीचागोदाणुभागेसु सगजहण्णादो गोदाणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जिस जीवके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ३०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३१० ॥

कारण एक तो तीन घाति कर्मोंका क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती जीवके द्वारा घाता जानेवाला अनुभाग यहाँ सत्त्व रूपसे पाया जाता है; दूसरे वेदनीय कर्मकी साता वेदनीय प्रकृतिके, नामकी यशःकीर्ति प्रकृतिके और गोत्रकी उच्चगोत्र प्रकृतिके अनुभागमें यहाँ बन्धसे उत्कृष्टता पायी जाती है; तीसरे मनुष्यायुका अनुभाग भी प्रशस्त होनेके कारण यहाँ अनन्तगुणा पाया जाता है ।

जिस जीवके आयुकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके नामकर्मको छोड़कर शेष छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ३११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३१२ ॥

कारण कि क्षपक परिणामोंके द्वारा यहाँ घात सम्भव न होनेसे वेदनीय और घातिया कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है । तथा मध्यम परिणामके द्वारा जिन्होंने तिर्यंच अपर्याप्त सम्बन्धी आयुके जघन्य अनुभागको बांधा है ऐसे मनुष्यों एवं पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें और उच्च गोत्रकी उद्वेलना न करनेवाले तथा नीच गोत्रके अनुभागको न घातनेवाले सर्वविशुद्ध बादर तेजकायिक एवं वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें गोत्रका अनुभाग अपने जघन्यकी अपेक्षा अनन्तगुणा पाया जाता है ।

१ अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्णा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्स णामवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३१३ ॥

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाण-पदिदा ॥ ३१४ ॥

जहण्णमाउअभावं बंधिय सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तेसु उप्पज्जिय हदसमुप्पत्तियं काऊण जदि णामस्स जहण्णाणुभागो कदो तो आउअभावेण सह णामभावो जहण्णो होदि । अण्णहा अजहण्णो होदूण छट्ठाणपदिदो जायदे ।

जस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणमाउअ-वज्जाण वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३१५ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३१६ ॥

सुगमं ।

तस्स आउअवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३१७ ॥

सुगमं ।

उसके नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ३१३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी होती है, जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित होती है ॥ ३१४ ॥

आयुके जघन्य अनुभागको बाँधकर सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त जीवोंमें उत्पन्न होकर हतसमुत्पत्ति करके यदि नामकर्मका अनुभाग जघन्य कर लिया है तो आयुके अनुभागके साथ नाम कर्मका अनुभाग जघन्य होता है । इससे विपरीत अवस्थामें वह अजघन्य होकर छह स्थान पतित होता है ।

जिस जीवके नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुको छोड़कर शेष छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ३१५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३१६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसके आयुकी वेदना क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ३१७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाण-पदिदा ॥ ३१८ ॥

सुगमं ।

जस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ॥ ३१९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३२० ॥

कुदो ? सव्वविसुद्धबादरतेउ-वाउकाइयपज्जत्तएसु उव्वेलिदउच्चागोदेसु णीचा-गोदस्स कयजहण्णभावेसु सेससव्वकम्माणमणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

एवं जहण्णए परत्थाणवेयणसण्णियासे समत्ते वेयण-सण्णियासविहाणे त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी होती है । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित होती है ॥ ३१८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जिस जीवके गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ॥ ३१९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३२० ॥

इसका कारण यह है कि जिन्होंने उच्च गोत्रकी उद्वेलना की है तथा नीच गोत्रके अनुभागको जघन्य किया है ऐसे सर्वविशुद्ध बादर तेजकायिक एवं वायुकायिक जीवोंमें शेष सब कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

इस प्रकार जघन्य परस्थान वेदनाके संनिकर्षके समाप्त होनेपर वेदनासंनिकर्षविधान नामक अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयणपरिमाणविहाणाणियोगद्दारं

वेयणपरिमाणविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं। किमट्ठमेदं वुच्चदे? ण, अण्णहा परूवणाए णिप्फलत्तप्पसंगादो। ण ताव एदेण पयडिवेयणापरिमाणं वुच्चदे, णाणावरणादी अट्ठ चेव पयडीयो होंति त्ति पुव्वं परूविदत्तादो। ण ट्ठिदिवेयणाए पमाणपरूवणा एदेण कीरदे, कालविहाणे सप्पवंचेण परूविदट्ठिदिपमाणत्तादो। ण भाववेयणाए पमाणपरूवणा एदेण कीरदे, भावविहाणे परूविदस्स परूवणाए फलाभावादो। ण पदेसपमाणपरूवणा एदेण कीरदे, अणुक्कस्सदव्वविहाणे परूविदस्स पुणो परूवणाए फलाभावादो। ण च खेत्तवेयणाए पमाणपरूवणा एदेण कीरदे, खेत्तविहाणे परूविदत्तादो। अणहिगयपमेयाहिगमो[1] एदम्हादो णत्थि त्ति [2]णाढवेदव्वमेदमणियोगद्दारं? एत्थ परिहारो वुच्चदे—पुव्वं दव्वट्ठियणयमस्सिदूण अट्ठ चेव पयडीयो होंति त्ति वुत्तं। तासिमट्ठण्णं चेव पयडीणं दव्व-खेत्त-काल-भावपमाणादिपरूवणा च कदा। संपहि पज्जवट्ठियणयमस्सिदूण पयडिपमाणपरूवणट्ठ-

अब वेदनापरिमाणविधान अनुयोगद्वारका अधिकार है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है।

शंका—इसे किसलिये कहा जा रहा है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, इसके विना प्ररूपणाके निष्फल होनेका प्रसंग आता है।

शंका—यह अधिकार प्रकृतिवेदनाके प्रमाण को तो बतलाता नहीं है, क्योंकि, ज्ञानावरण आदि आठ ही प्रकृतियाँ हैं, यह पहिले ही प्ररूपणा की जा चुकी है। स्थितिवेदनाके प्रमाणकी प्ररूपणा भी नहीं करता है, क्योंकि, कालविधानमें विस्तारपूर्वक स्थितिका प्रमाण बतलाया जा चुका है। यह भाववेदनाके प्रमाणकी भी प्ररूपणा नहीं करता, क्योंकि, भावविधानमें प्ररूपित उसकी फिरसे प्ररूपणा करना निष्फल होगी। प्रदेशप्रमाणकी प्ररूपणा भी इसके द्वारा नहीं की जाती है, क्योंकि, अनुत्कृष्ट द्रव्य विधानमें उसकी प्ररूपणा की जा चुकी है; अतएव उसकी यहाँ फिरसे प्ररूपणा करनेका कोई प्रयोजन नहीं है। क्षेत्रवेदनाके प्रमाणकी प्ररूपणा भी इसके द्वारा नहीं की जाती है, क्योंकि, उसकी प्ररूपणा क्षेत्रविधानमें की जा चुकी है। इस प्रकार चूंकि प्रकृति अधिकारसे अनधिगत पदार्थका अधिगम होता नहीं है, अतएव इस अधिकारको प्रारम्भ नहीं करना चाहिये?

समाधान—इस शंकाका परिहार कहते हैं—पहले द्रव्यार्थिक नयका आश्रय करके आठ ही प्रकृतियाँ होती हैं, ऐसा कहा गया है। तथा उन आठों प्रकृतियोंके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव आदिके प्रमाणकी भी प्ररूपणा की गई है। अब यहाँ पर्यायार्थिक नयका आश्रय करके प्रकृतियोंके

१ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ काप्रतिषु 'अणहिगमेयमेयाहिगमो', ताप्रतौ 'अणहिगमे पमेयाहिगमो' इति पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'णादवेदव्व-' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भेदमणियोगद्दारमागदं । पज्जवट्ठियणयमवलंबिदूण परूविज्जमाणपयडीणं दव्व-खेत्त-काल-भावादिपरूवणा किण्ण कीरदे ? ण, ताए परूविज्जमाणाए पुव्विल्लपरूवणादो भेदाभावेण तदणुत्तीदो ।

तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि–पगदिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासए त्ति ॥ २ ॥

पयडी सीलं सहावो इच्चेयट्ठो । अट्ठो पयोजणं तस्स भावो अट्ठदा । पयडीए अट्ठदा पयडिअट्ठदा[1] । सा एगो अहियारो । समये प्रबध्यत इति समयप्रबद्धः । अर्यते परिच्छिद्यते इत्यर्थः । स चासावर्थश्च समयप्रबद्धार्थः तस्य भावः समयप्रबद्धार्थता । एसो विदियो अहियारो । क्षेत्रं प्रत्याश्रयो यस्याः सा क्षेत्रप्रत्याश्रया अधिकृतिः । एवं तिविहा वेयणपरिमाणपरूवणा होदि । पयडिभेएण कम्मभेदपरूवणा एगो अहियारो । समयप्रबद्धभेदेण पयडिभेदपरूवओ विदियो अहियारो । खेत्तभेएण पयडिभेदपरूवओ तदियो अहियारो त्ति वुत्तं होदि ।

पगदिअट्ठदाए णाणावरणीय-दंसणावरणीयकम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ३ ॥

प्रमाणकी प्ररूपणा करनेके लिये यह अनुयोगद्वार प्राप्त हुआ है ।

शंका—पर्यायार्थिक नयका आश्रय करके कही जानेवाली प्रकृतियोंके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव आदिकी प्ररूपणा क्यों नहीं की जा रही है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उक्त प्ररूपणाके करनेमें पूर्वोक्त प्ररूपणासे कोई विशेषता नहीं रहती । अतएव वह यहाँ नहीं की गई है ।

उसमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—प्रकृत्यर्थता समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यास ॥२॥

प्रकृति, शील और स्वभाव ये समानार्थक शब्द हैं; अर्थ शब्दका वाच्यार्थ प्रयोजन है और उसका भाव अर्थता है । प्रकृतिकी अर्थता प्रकृत्यर्थता, यह षष्ठी तत्पुरुष समास है । वह प्रथम अधिकार है । एक समयमें जो बाँधा जाता है वह समयप्रबद्ध है । जो अर्यते अर्थात् निश्चय किया जाता है वह अर्थ है । समयप्रबद्ध रूप अर्थ समयप्रबद्धार्थ इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है; समयप्रबद्धार्थके भावको समयप्रबद्धार्थता कहा गया है । यह द्वितीय अधिकार है । क्षेत्र है प्रत्याश्रय जिसका वह क्षेत्रप्रत्याश्रय अधिकार है । इस प्रकार वेदनापरिमाणकी प्ररूपणा तीन प्रकार की है । प्रकृतिभेदसे कर्मभेदकी प्ररूपणा यह एक अधिकार, समयप्रबद्धोंके भेदसे प्रकृतिभेदका प्ररूपक दूसरा अधिकार और क्षेत्रके भेदसे प्रकृतिभेदका प्ररूपक तीसरा अधिकार है, यह उसका अभिप्राय है ।

प्रकृति-अर्थता अधिकारकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ? ॥ ३ ॥

---

१ 'पयडीए अट्ठदा पयडिअट्ठदा' इत्येतावानयं पाठस्ताप्रतौ नोपलभ्यते ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

एदं पुच्छासुत्तं तिविहं संखेज्जं णवविहमसंखेज्जं अणंतं च अस्सिदूण वक्खाणेयव्वं।

णाणावरणीय-दंसणावरणीयकम्मस्स असंखेज्जलोगपयडीओ ॥४॥

णाणावरणीयस्स[1] दंसणावरणीयस्स च कम्मस्स पयडीयो सहावा सत्तीयो असंखेज्जलोगमेत्ता। कुदो एत्तियाओ होंति त्ति णव्वदे? आवरणिज्जणाण-दंसणाणमसंखेज्जलोगमेत्तभेदुवलंभादो। तं जहा—सुहुमणिगोदस्स जहण्णलद्धिअक्खरं तमेगं णाणं[2]। तण्णिरावरणं, अक्खरस्स अणंतभागो णिच्चुग्घाडियओ[3] इदि वयणादो[4] जीवाभावप्पसंगादो वा। पुणो लद्धिअक्खरे सव्वजीवेहि खंडिदे लद्धे तत्थेव पक्खित्ते विदियं णाणं होदि। पुणो विदियणाणे सव्वजीवेहि खंडिदे लद्धे तत्थेव पक्खित्ते तदियं णाणं होदि। एवं छवड्ढिकमेण णेयव्वं जाव असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि गंतूण अक्खरणाणं समुप्पण्णे त्ति। अक्खरणाणादो उवरि एगेगक्खरुत्तरवड्ढीए गच्छमाणणाणाणं अक्खरसमासो त्ति सण्णा। एत्थ अक्खरणाणादो उवरि छव्विहा वड्ढी णत्थि, दुगुण-तिगुणादिकमेण अक्खर-

इस सूत्रका व्याख्यान तीन प्रकारके संख्यात और नौ प्रकारके असंख्यात व नौ प्रकारके अनन्तका आश्रय करके करना चाहिये।

ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी असंख्यात प्रकृतियाँ हैं ॥ ४ ॥

ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ अर्थात् स्वभाव या शक्तियाँ असंख्यात लोक प्रमाण हैं।

शंका—उनकी प्रकृतियाँ इतनी हैं, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—चूँकि आवरणके योग्य ज्ञान व दर्शनके असंख्यात लोक मात्र भेद पाये जाते हैं अतएव उनके आवारक उक्त कर्मोंकी प्रकृतियाँ भी उतनी ही होनी चाहिये। यथा—सूक्ष्म निगोद जीवका जो जघन्य लब्ध्यक्षर रूप एक ज्ञान है वह निरावरण है, क्योंकि, अक्षरके अनन्तवें भाग मात्र ज्ञान सदा प्रगट रहता है, ऐसा आगमवचन है। अथवा, ज्ञानके अभावमें चूँकि जीवके अभावका भी प्रसंग आता है, अतएव अक्षरके अनन्तवें भाग मात्र ज्ञान सदा प्रगट रहता है, यह स्वीकार करना चाहिये।

अब लब्ध्यक्षरको सब जीवोंसे खण्डित करनेपर जो लब्ध हो उसे उसीमें मिलानेपर द्वितीय ज्ञान होता है। फिर द्वितीय ज्ञानको सब जीवोंसे खण्डित करनेपर जो लब्ध हो उसको उसी में मिलानेपर तीसरा ज्ञान होता है। इस प्रकार छह वृद्धियोंके क्रमसे असंख्यात लोक मात्र छह स्थान जाकर अक्षरज्ञानके पूर्ण होने तक ले जाना चाहिये। अक्षरज्ञानके आगे उत्तरोत्तर एक एक अक्षरकी वृद्धिसे जानेवाले ज्ञानोंकी अक्षरसमास संज्ञा है। यहाँ अक्षरज्ञानसे आगे छह वृद्धियाँ नहीं हैं, किन्तु दुगुणे तिगुणे इत्यादि क्रमसे अक्षरवृद्धि ही होती है; ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं। परन्तु

१ अ-आ-काप्रतिषु 'णाणावरणीय-' इति पाठः। २ सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्हि। फासिंदियमदिपुव्वं सुदणाणं लद्धिअक्खरयं ॥ गो जी. ३२१.। ३ अ-आ-काप्रतिषु 'णिच्चुग्घादियओ' इति पाठः। ४ सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्मि। हवदि हु सव्वजहण्णं णिच्चुग्घाडं-णिरावरणं ॥ गो जी. ३१९.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वड्ढी चेव होदि त्ति के वि आइरिया भणंति। के वि पुण अक्खरणाणप्पहुडि उवरि सव्वत्थ खओवसमस्स छव्विहा वड्ढी होदि त्ति भणंति। एवं दोहि उवदेसेहि पद-पदसमास-संघाद-संघादसमास-पडिवत्ति-पडिवत्तिसमास-अणियोग-अणियोगसमास-पाहुडपाहुड-पाहुडपाहुडसमास-पाहुड-पाहुडसमास-वत्थु-वत्थुसमास-पुव्व-पुव्वसमासणाणाणं[1] परूवणा कायव्वा। एवमसंखेज्जलोगमेत्ताणि सुदणाणाणि। मदिणाणाणि वि एत्तियाणि चेव, सुदणाणस्स मदिणाणपुरंगमत्तादो कज्जभेदेण कारणभेदुवलंभादो वा। ओहिमणपज्जवणाणाणं जहा मंगलदंडए भेदपरूवणा कदा तहा कायव्वा। केवलणाणमेयविधं, कम्मक्खएण उप्पज्जमाणत्तादो। जत्तिया[2] णाणवियप्पा तत्तियाओ चेव कम्मस्स आवरणसत्तीयो। कत्तो एदं णव्वदे? अण्णहा असंखेज्जलोगमेत्तणाणाणुववत्तीदो। एवं दंसणस्स वि परूवणा कायव्वा, सव्वणाणाणं दंसणपुरंगमत्तादो। जत्तियाणि दंसणाणि तत्तियाणि चेव दंसणावरणीयस्स आवरणसत्तीयो। एवं णाणावरणीय-दंसणावरणीयाणमसंखेज्जलोगमेत्तपयडीयो त्ति सिद्धं।

एवदियाओ पयडीओ ॥ ५ ॥

एत्थ पयडीयो त्ति वुत्ते कम्माणं गहणं, सहावभेदेण सहावीणं पि भेदुवलंभादो। जत्तिया कम्माणं सहावा तत्तियाणि चेव कम्माणि त्ति भणिदं होदि।

कितने ही आचार्य अक्षरज्ञानसे लेकर आगे सब जगह क्षयोपशम ज्ञानके छह प्रकारकी वृद्धि होती है, ऐसा कहते हैं। इस प्रकार दो उपदेशोंसे पद, पदसमास, संघात, संघातसमास, प्रतिपत्ति, प्रतिपत्तिसमास, अनुयोग, अनुयोगसमास, प्राभृतप्राभृत, प्राभृतप्राभृतसमास, प्राभृत, प्राभृतसमास, वस्तु, वस्तुसमास, पूर्व और पूर्वसमास ज्ञानोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये। इस प्रकार श्रुतज्ञान असंख्यात लोक प्रमाण है। मतिज्ञान भी इतने ही हैं, क्योंकि, श्रुतज्ञान मतिज्ञानपूर्वक ही होता है, अथवा कारणके भेदसे चूँकि कार्यका भेद पाया जाता है अतएव वे भी असंख्यात लोक प्रमाण ही हैं। अवधि और मनःपर्ययज्ञानोंके भेदोंकी प्ररूपणा जैसे मंगलदण्डकमें की गई है वैसे करनी चाहिये। केवलज्ञान एक प्रकारका है, क्योंकि, वह कर्मक्षयसे उत्पन्न होनेवाला है। जितने ज्ञानके भेद हैं उतनी ही कर्मकी आवरण शक्तियाँ हैं।

शंका—यह किस प्रमाण से जाना जाता है?

समाधान—कारण कि उसके बिना असंख्यात लोक प्रमाण ज्ञान बन नहीं सकते।

इसी प्रकार दर्शनकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, सब ज्ञान दर्शनपूर्वक ही होते हैं। जितने दर्शन हैं उतनी ही दर्शनावरणकी आवरण शक्तियाँ हैं। इस प्रकारसे ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी प्रकृतियाँ असंख्यात लोक प्रमाण हैं, यह सिद्ध है।

इतनी मात्र प्रकृतियाँ हैं ॥ ५ ॥

यहाँ सूत्रमें 'प्रकृतियाँ' ऐसा कहनेपर कर्मोंका ग्रहण होता है, क्योंकि, स्वभावके भेदसे स्वभाववालोंका भी भेद पाया जाता है। अभिप्राय यह है कि जितने कर्मोंके स्वभाव हैं उतने ही कर्म हैं।

---

१ गो. जी. ३१६-३१७. । २ अ-आ-का प्रतिषु 'जेत्तिया' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेदणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ६ ॥

सुगमं ।

वेयणीयस्स कम्मस्स दुवे पयडीओ ॥ ७ ॥

सादावेदणीयमसादावेदणीयमिदि दो चेव सहावा, सुह-दुक्खवेयणाहिंतो पुध-भूदाए अण्णिस्से वेयणाए अणुवलंभादो । सुहभेदेण दुहभेदेण च अणंतवियप्पेण वेयणीय-कम्मस्स अणंताओ सत्तीओ किण्ण पदिदाओ[1] ? सचमेदं जदि पज्जवट्ठियणओ अवलंबिदो । किं तु एत्थ दव्वट्ठियणओ अवलंबिदो त्ति वेयणीयस्स ण त्तियमेत्तसत्तीओ, दुवे चेव । पज्जवट्ठियणओ एत्थ किण्णावलंबिदो ? ण, तदवलंबणे पओजणाभावादो । णाण-दंसणा-वरणेसु किमट्ठमवलंबिदो ? जीवसहावावगमणट्ठं ।

एवदियाओ पयडीओ ॥ ८ ॥

जत्तिया सहावा अत्थि तत्तिया चेव पयडीओ होंति ।

मोहणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ९ ॥

वेदनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वेदनीय कर्मकी दो प्रकृतियाँ हैं ॥ ७ ॥

सातावेदनीय और असातावेदनीय इस प्रकार वेदनीयके दो ही स्वभाव हैं, क्योंकि, सुख व दुख रूप वेदनाओंसे भिन्न अन्य कोई वेदना पायी नहीं जाती ।

शंका—अनन्त विकल्प रूप सुखके भेदसे और दुखके भेदसे वेदनीय कर्मकी अनन्त शक्तियाँ क्यों नहीं कही गई हैं ?

समाधान—यदि पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन किया गया होता तो यह कहना सत्य था, परन्तु चूँकि यहाँ द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन किया गया है अतएव वेदनीय की उतनी मात्र शक्तियाँ सम्भव नहीं हैं, किन्तु दो ही शक्तियाँ सम्भव हैं ।

शंका—यहाँ पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन क्यों नहीं किया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उसके अवलम्बनका कोई प्रयोजन नहीं था ।

शंका—ज्ञानावरण और दर्शनावरणकी प्ररूपणामें उसका अवलम्बन किसलिये किया गया है ?

समाधान—जीवस्वभावका ज्ञान करानेके लिये यहाँ उसका अवलम्बन किया गया है ।

उसकी इतनी ही प्रकृतियाँ हैं ॥ ८ ॥

कारण कि जितने स्वभाव होते हैं उतनी ही प्रकृतियाँ होती हैं ।

मोहनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ९ ॥

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'पदिदाओ', ताप्रतौ 'पदि (ठि) दाओ' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं ।

मोहणीयस्स कम्मस्स अट्ठावीसं पयडीओ ॥ १० ॥

तं जहा—मिच्छत्त-[1]सम्मामिच्छत्त-सम्मत्त-अणंताणुबंधि-अपच्चक्खाणावरणीय-पच्चक्खाणावरणीय-संजुलण—कोह-माण-माया-लोह-हस्स–रइ-अरइ–सोग-भय दुगुंछित्थि-पुरिस-णवुंसयभेएण मोहणीयस्स कम्मस्स अट्ठावीस सत्तीयो । एसा वि परूवणा असुद्धदव्वट्ठियणयमवलंबिऊण कदा । पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे मोहणीयस्स असंखेज्जलोगमेत्तीयो होंति, असंखेज्जलोगमेत्तउदयट्ठाणण्णहाणुववत्तीदो । एत्थ पुण पज्जवट्ठियणओ किण्णावलंबिदो ? गंथबहुत्तभएण अत्थावत्तीए तदवगमादो वा णावलंबिदो ।

एवदियाओ पयडीओ ॥ ११ ॥

जेण मोहणीयस्स अट्ठावीस सत्तीओ तेण पयडीओ वि अट्ठावीसं होंति, एदाहिंतो पुधभूदभिण्णजादिसत्तीए अणुवलंभादो ।

आउअस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ १२ ॥

सुगमं ।

यह सूत्र सुगम है ।

मोहनीय कर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियाँ हैं ॥ १० ॥

यथा—मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानावरणीय क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यानावरणीय क्रोध, मान, माया, लोभ; संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदके भेदसे मोहनीय कर्मकी अट्ठाईस शक्तियाँ हैं । यह भी प्ररूपणा अशुद्ध द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन करके की गई है । पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर तो मोहनीय कर्मकी असंख्यात लोक मात्र शक्तियाँ हैं, क्योंकि, अन्यथा उसके असंख्यात लोक मात्र उदयस्थान बन नहीं सकते ।

शंका—तो फिर यहाँ पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन क्यों नहीं लिया गया है ?

समाधान—ग्रन्थबहुत्वके भयसे अथवा अर्थापत्तिसे उनका परिज्ञान हो जानेसे उसका अवलम्बन नहीं लिया गया है ।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ११ ॥

चूँकि मोहनीयकी शक्तियाँ अट्ठाईस हैं अतः उसकी प्रकृतियाँ भी अट्ठाईस ही हैं, क्योंकि, इनसे पृथग्भूत भिन्नजातीय शक्ति नहीं पायी जाती ।

आयुकर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ १२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'मिच्छत्तसम्मामिच्छत्त', ताप्रतौ 'मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-[सम्मत्त]' इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

आउअस्स कम्मस्स चत्तारि पयडीओ ॥ १३ ॥

कुदो ? देव-मणुस्स-तिरिक्ख-णेरइयभवधारणसरूवाणं सत्तीणं चदुण्णमुवलंभादो। एसा वि परूवणा असुद्धदव्वट्ठियणयविसया। पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे आउअ-पयडी वि असंखेज्जलोगमेत्ता भवदि, कम्मोदयवियप्पाणमसंखेज्जलोगमेत्ताणमुवलंभादो। एत्थ वि गंथबहुत्तभएण अत्थावत्तीए तदवगमादो वा पज्जवट्ठियणओ णावलंबिदो।

एवडियाओ पयडीओ ॥ १४ ॥

जेण आउअस्स चत्तारि चेव सहावा तेण चत्तारि चेव पयडीओ होंति।

णामस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ १५ ॥

सुगमं।

णामस्स कम्मस्स असंखेज्जलोगमेत्तपयडीओ ॥ १६ ॥

एत्थ किमट्ठं पज्जवट्ठियणओ अवलंबिदो ? आणुपुव्वीवियप्पपदुप्पायणट्ठं। तत्थ णिरयगइपाओग्गाणुपुव्विणामाए अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तबाहल्ले तिरियपदरे सेडीए असंखेज्जभागमेत्तेहि ओगाहणावियप्पेहि गुणिदे जो रासी उप्पज्जदि तेत्तियमेत्तीओ सत्तीओ होंति। तिरिक्खगदिपाओग्गाणुपुव्विणामाए लोगे सेडीए असंखेज्जभागमेत्तेहि ओगाहणवियप्पेहि गुणिदे जा संखा उप्पज्जदि तत्तियमेत्ताओ सत्तीओ। मणुसगदि-

---

आयुकर्मकी चार प्रकृतियाँ हैं ॥ १३ ॥

इसका कारण यह है कि देव, मनुष्य, तिर्यंच और नारक पर्यायको धारण कराने रूप शक्तियाँ चार पायी जाती हैं। यह प्ररूपणा भी अशुद्ध द्रव्यार्थिक नयको विषय करनेवाली है। पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर तो आयुकी प्रकृतियाँ भी असंख्यात लोकमात्र हैं, क्योंकि, कर्मके उदयरूप विकल्प असंख्यात लोक मात्र पाये जाते हैं। यहाँ भी ग्रन्थबहुत्वके भयसे अथवा अर्थापत्तिसे उनका परिज्ञान हो जानेके कारण पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन नहीं लिया गया है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ १४ ॥

चूँकि आयुके चार ही स्वभाव हैं अतएव उसकी चार ही प्रकृतियाँ होती हैं।

नामकर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ १५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

नामकर्मकी असंख्यात लोकमात्र प्रकृतियाँ हैं ॥ १६ ॥

शंका—यहाँ पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन किसलिये लिया गया है ?

समाधान—आनुपूर्वीके भेदोंको बतलानेके लिये यहाँ पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन लिया गया है। उनमेंसे अंगुलके असंख्यातवें भागमात्र बाहल्यरूप तिर्यक्प्रतरको श्रेणिके असंख्यातवें भागमात्र अवगाहनाभेदोंसे गुणित करनेपर जो राशि उत्पन्न होती है उतनी मात्र नरकगति-प्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मकी शक्तियाँ होती हैं। श्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र अवगाहनाभेदोंसे लोकको गुणित करनेपर जो संख्या उत्पन्न होती है उतनी मात्र तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाओग्गाणुपुव्विणामाए पणदालीसजोयणसदसहस्सबाहल्लाणि तिरियपदराणि उड्ढकवाड-छेदणयणिप्पण्णाणि सेडियसंखेज्जभागमेत्तेहि ओगाहणवियप्पेहि गुणिदे जा संखा उप्पज्जदि तत्तियमेत्तीओ पयडीओ। देवगइपाओग्गाणुपुव्विणामाए णवजोयणसयबाहल्ले तिरियपदरे सेडीए असंखेज्जभागमेत्तेहि ओगाहणवियप्पेहि गुणिदे जा संखा उप्पज्जदि तत्तियमेत्तीओ पयडीओ। गदि-जादि-सरीरादीणं पयडीणं पि जाणिय भेदपरूवणा कायव्वा।

एवदियाओ पयडीओ ॥ १७ ॥

जत्तियाओ णामकम्मस्स सत्तीओ पुव्वं परूविदाओ तत्तियमेत्ताओ चेव तस्स पयडीओ होंति त्ति घेत्तव्वं।

गोदस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ १८ ॥

सुगमं।

गोदस्स कम्मस्स दुवे पयडीओ ॥ १९ ॥

[1]उच्चागोदणिव्वत्तणप्पिया णीचागोदणिव्वत्तणप्पिया चेदि गोदस्स दुवे पयडीओ[2]। अवांतरभेदेण जदि वि बहुआवो अत्थि तो वि ताओ ण उत्ताओ गंथबहुत्तभएण अत्थावत्तीए तदवगमादो वा।

शक्तियाँ होती हैं। ऊर्ध्वकपाटके अर्धच्छेदोंसे उत्पन्न पैंतालीस लाख योजनबाहल्य रूप तिर्यक्प्रतरोंको श्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र अवगाहनाभेदोंसे गुणित करनेपर जो संख्या उत्पन्न होती है उतनी मात्र मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मकी प्रकृतियाँ होती हैं। नौ सौ योजन बाहल्यरूप तिर्यक्प्रतरको श्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र अवगाहनाभेदोंसे गुणित करनेपर जो संख्या उत्पन्न होती है उतनी मात्र देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मकी प्रकृतियाँ होती हैं। गति, जाति व शरीर आदिक प्रकृतियोंके भी भेदोंकी प्ररूपणा जानकर करनी चाहिये।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ १७ ॥

नामकर्मकी जितनी शक्तियाँ पूर्वमें कही जा चुकी हैं उतनी ही उसकी प्रकृतियाँ हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

गोत्र कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ १८ ॥

यह सूत्र सुगम है।

गोत्रकर्मकी दो प्रकृतियाँ हैं ॥ १९ ॥

उच्चगोत्रको उत्पन्न करनेवाली और नीचगोत्रको उत्पन्न करनेवाली, इस प्रकार गोत्रकी दो प्रकृतियाँ हैं। अवान्तर भेदसे यद्यपि वे बहुत हैं तो भी ग्रन्थके बढ़ जानेसे अथवा अर्थापत्तिसे उनका ज्ञान हो जानेके कारण उनको यहाँ नहीं कहा है।

१ ताप्रतावतः प्राक् 'सुगमं' इत्यधिकः पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'दोयपयडीओ' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

एवडियाओ पयडीओ ॥ २० ॥

जेण दुवे चेव गोदकम्मस्स सत्तीयो तेण तस्स दो चेव पयडीओ ।

अंतराइयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ २१ ॥

सुगमं ।

अंतराइयस्स कम्मस्स पंच पयडीओ ॥ २२ ॥

सुगमं ।

एवदियाओ पयडीओ ॥ २३ ॥

कुदो ? पंचण्णं विसेसणाणं भेदेण तव्विसेसिदकम्मक्खंधाणं पि भेदस्स णाओवगयस्स अणब्भुवगमे [1]पमाणाणणुसारित्तप्पसंगादो । एवं पयडिअट्ठदा समत्ता ।

समयपबद्धट्ठदाए ॥ २४ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं सुगमं ।

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयस्स केवडियाओ पयडीओ ॥२५॥

एदं सुत्तं तिविहसंखेज्जे णवविहअसंखेज्जे णवविहअणंते च ढोइय एदस्स सुत्तस्स अत्थो वत्तव्वो ।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ २० ॥

चूँकि गोत्रकर्मकी दो ही शक्तियाँ हैं अतएव उसकी दो ही प्रकृतियाँ हैं ।

अन्तराय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ २१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अन्तराय कर्मकी पाँच प्रकृतियाँ हैं ॥ २२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ २३ ॥

कारण यह कि पाँच विशेषणोंके भेदसे विशेषताको प्राप्त हुए उस कर्मके स्कन्धोंका भी भेद न्याय प्राप्त है । उसके न माननेपर प्रमाणकी अननुसारिताका प्रसंग आता है । इस प्रकार प्रकृत्यर्थता समाप्त हुई ।

अब समयप्रबद्धार्थताका अधिकार है ॥ २४ ॥

यह अधिकारका स्मरण करानेवाला सूत्र सुगम है ।

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥२५॥

तीन प्रकारके संख्यात, नौ प्रकारके असंख्यात और नौ प्रकारके अनन्तको लेकर इस सूत्रका अर्थ कहना चाहिये ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'पमाणाणुसाहित्त', ताप्रतौ 'पमाणाणुसारित्त [त्ता]', मप्रतौ 'पमाणाणुसारित्त' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी तासं तीसं सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥ २६ ॥

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइएसु एक्केक्का पयडी। तिस्से कम्मट्ठिदिसमयभेदेण भेदो वुच्चदे। तं जहा—तीसंसागरोवमकोडाकोडीओ एदेसिं कम्माणं कम्मट्ठिदी। तिस्से चरिमसमए कम्मट्ठिदिमेत्ता समयपबद्धा अत्थि। कुदो? कम्मट्ठिदिपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमसमओ त्ति एत्थ बद्धसमयपबद्धाणं एगपरमाणुमादिं कादूण जाव अणंतपरमाणूणं कम्मट्ठिदिचरिमसमए पाहुडणिल्लेवणट्ठाणसुत्तबलेण[1] उवलंभादो। कम्मट्ठिदिआदिसमए पबद्धपरमाणूण कम्मट्ठिदिचरिमसमए एगा चेव ट्ठिदी होदि। एसा एगा पयडी। विदियसमए पबद्धकम्मपरमाणूण[2] कमट्ठिदिचरिमसमए वट्टमाणा विदिया पयडी, एदेसिं दुसमयट्ठिदिदंसणादो। ण च एगसमयादो दोण्णं समयाणमेयत्तं, विरोहादो। तदो तब्भेदेण पयडिभेदेण वि होदव्वमण्णहा सव्वसंकरप्पसंगादो। एवं तदियसमयपबद्धाणमण्णा पयडी, चउत्थसमयपबद्धाणमण्णा पयडि त्ति णेदव्वं जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमयपबद्धो त्ति। पुणो एदे समयपबद्धे कालभेदेण पयडिभेदमुवगए संकलिज्जमाणे एगसमयपबद्धसलागाणं ठविय तीसकोडाकोडीहि गुणिदे एत्तियमेत्ताओ कालणिबंधणपयडीओ णाण-दंसणावरण-अंतराइयाणमेक्केक्किस्से पयडीए होंति।

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय कर्मकी एक एक प्रकृति तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंको समय प्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी है ॥ २६ ॥

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय इनमेंसे जो एक एक प्रकृति है उसका कर्मस्थितिके समयोंके भेदसे भेद कहते हैं। यथा—इन कर्मोंकी कर्मस्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण है। उसके अन्तिम समयमें कर्मस्थिति प्रमाण समयप्रबद्ध होते हैं, क्योंकि, कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर उसके अन्तिम समय तक यहाँ बांधे गये समयप्रबद्धोंके एक परमाणुसे लेकर अनन्त परमाणु तक कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें कसायपाहुडके निर्लेपनस्थान सूत्रके बलसे पाये जाते हैं। कर्मस्थितिके प्रथम समयमें तो बँधे हुए परमाणुओंकी कर्मस्थिति के अन्तिम समयमें एक ही स्थिति होती है। यह एक प्रकृति है। द्वितीय समयमें बांधे गये कर्मपरमाणुओंकी कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें वर्तमान द्वितीय प्रकृति है, क्योंकि, इनकी दो समय स्थिति देखी जाती है। एक समयका दो समयोंके साथ अभेद नहीं हो सकता, क्योंकि, उसमें विरोध है। इस कारण समयभेदसे प्रकृतिभेद भी होना ही चाहिये, अन्यथा सर्वशंकर दोषका प्रसंग आता है। इसी प्रकार तृतीय समयमें बांधे गये परमाणुओंकी अन्य प्रकृति, चतुर्थ समयमें बांधे गये परमाणुओंकी अन्य प्रकृति, इस प्रकार कमस्थितिके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिये। अब कालके भेदसे प्रकृतिभेदको प्राप्त हुए इन समयप्रबद्धोंका संकलन करनेपर एक समयप्रबद्धकी शलाकाओंको स्थापितकर तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर इतनी मात्र ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायमेंसे एक एक कर्मकी प्रकृतियाँ होती हैं।

१ अ-आप्रत्योः '-णिलेवण' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'परमाणू' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवदियाओ पयडीओ ॥ २७ ॥

जत्तियाओ कालणिबंधणपयडीओ णाणावरणादीणमेक्केक्का पयडी तत्तियमेत्ता होदि त्ति भणिदं होदि। णवरि मदिणाणावरणीय-सुदणाणावरणीय-ओहिणाणावरणीय-चक्खु-अचक्खु-ओहिदंसणावरणीयाणं च तीसंसागरोवमकोडाकोडिगुणिदाए एगसमय-पबद्धट्ठदाए असंखेज्जलोगेहि गुणिदाए एदासिं[1] सव्वपयडिपमाणं होदि। अधवा, कम्म-ट्ठिदिपढमसमए बद्धकम्मक्खंधो एगसमयपबद्धट्ठदा, विदियसमयपबद्धो विदियसमयपबद्ध-ट्ठदा। एवं णेयव्वं जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमओ त्ति। पुणो एगसमयपबद्धट्ठदं ठविय तीसंसागरोवमकोडाकोडीहि गुणिदे एक्केक्कस्स कम्मस्स एवदियाओ पयडीओ होंति। एसा परूवणा एत्थ पहाणा, ण पुव्विल्ला एग-दोआदिसमयट्ठिदिदव्वमस्सिदूण परूविदा।

वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ २८ ॥

सुगमं।

वेदणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी तीसं-पण्णारससागरोवम-कोडाकोडीओ समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥ २९ ॥

असादावेदणीयस्स कम्मट्ठिदिपढमसमए जो बद्धो कम्मक्खंधो सा[2] एगा समय-

उनमेंसे प्रत्येककी इतनी प्रकृतियाँ होती हैं ॥ २७ ॥

जितनी कालनिबन्धन प्रकृतियाँ हैं, ज्ञानावरणादिकोंमेंसे प्रत्येककी एक एक प्रकृति उतनी मात्र होती है, यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है। विशेष इतना है कि मतिज्ञानावरणीय, श्रुतज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय, चक्षुदर्शनावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और अवधिदर्शनावरणीयकी तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपमोंसे गुणित एक समयप्रबद्धार्थताको असंख्यात लोकोंसे गुणित करनेपर इनकी समस्त प्रकृतियोंका प्रमाण होता है।

अथवा, कर्मस्थितिके प्रथम समयमें बांधे गये कर्मस्कन्धका नाम एक समयप्रबद्धार्थता है; द्वितीय समयमें बांधे गये कर्मस्कन्धका नाम द्वितीय समयप्रबद्धार्थता है, इस प्रकार कर्मस्थितिके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिये। फिर एक समयप्रबद्धार्थताको स्थापितकर तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर एक एक कर्मकी इतनी प्रकृतियाँ होती हैं। यह प्ररूपणा यहाँ प्रधान है, न कि एक दो आदि समयमात्र स्थितिके द्रव्यका आश्रय करके की गई पूर्वोक्त प्ररूपणा।

वेदनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ २८ ॥

यह सूत्र सुगम है।

तीस और पन्द्रह कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी मात्र वेदनीयकर्मकी एक एक प्रकृति है ॥ २९ ॥

असाता वेदनीयकी कर्मस्थितिके प्रथम समयमें जो कर्मस्कन्ध बाँधा गया है वह एक समय-

---

१ अ-काप्रत्योः 'एदेसिं' इति पाठः, आप्रतौ त्रुटितोऽत्र पाठः। २ ताप्रतौ 'सो' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पबद्धट्ठदा, बिदियसमए पबद्धो बिदिया समयपबद्धट्ठदा, तदियसमए पबद्धो तदिया समयपबद्धट्ठदा; एवं णेयव्वं जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमओ त्ति । एत्थ एगसमयपबद्धट्ठदं ठविय तीसंसागरोवमकोडाकोडीहि गुणिदे असादावेदणीयस्स एवदियाओ कालणिबंधणपयडीओ होंति । असादावेदणीयस्स सांतरबंधिस्स[1] समयपबद्धट्ठदाए तीसंसागरोवमकोडाकोडीओ गुणगारो ण होंति, सादबंधणद्धाए असादस्स बंधाभावादो ? एत्थ परिहारो वुच्चदे । तं जहा—सगकम्मट्ठिदिअब्भंतरे एदम्हि उद्देसे असादस्स बंधो णत्थि चेवे त्ति ण णियमो अत्थि, णाणाजीवे अस्सिदूण कम्मट्ठिदीए सव्वसमएसु असादबंधुवलंभादो । एगजीवमस्सिदूण कम्मट्ठिदिअब्भंतरे असादस्स ण णिरंतरो बंधो लब्भदि त्ति भणिदे ण, तत्थ वि [2]णाणाकम्मट्ठिदीयो अस्सिदूण णिरंतरबंधुवलंभादो । ण च एगजीवेण एत्थ अहियारो, कम्मट्ठिदिमस्सिदूण समयपबद्धट्ठदाए परूविदुमाढत्तादो । तम्हा असादवेदणीयस्स अद्धुवबंधिस्स वि तीसंसागरोवमकोडाकोडीयो गुणगारो होंति त्ति सिद्धं ।

असादबंधवोच्छिण्णकाले बद्धं सादमसादत्ताए संकंतं घेत्तूण तीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्ता समयपबद्धट्ठदा त्ति किण्ण भण्णदे ? ण, सादसरूवेण बद्धाणं कम्मक्खंधाणं

प्रबद्धार्थता है, द्वितीय समयमें बाँधा गया कर्मस्कन्ध द्वितीय समयप्रबद्धार्थता है, तृतीय समयमें बाँधा गया कर्मस्कन्ध तृतीय समयप्रबद्धार्थता है; इस प्रकार कर्मस्थितिके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिये। यहाँ एक समयप्रबद्धार्थताको स्थापितकर तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर इतनी मात्र आसाता वेदनीयकी कालनिबन्धन प्रकृतियाँ होती हैं।

शंका—आसाता वेदनीय चूंकि सान्तरबन्धी प्रकृति है, अतएव उसकी समयप्रबद्धार्थताका गुणकार तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम नहीं हो सकता, क्योंकि, साता वेदनीयके बन्धकालमें असाता वेदनीयका बन्ध सम्भव नहीं है ?

समाधान—यहाँ इस शंकाका परिहार कहते हैं। वह इस प्रकार है—अपनी कर्मस्थितिके भीतर इस उद्देश्यमें असाता वेननीयका बन्ध है ही नहीं, ऐसा नियम नहीं है; क्योंकि, नाना जीवोंका आश्रय करके कर्मस्थितिके सब समयोंमें असाताका बन्ध पाया जाता है।

शंका—एक जीवका आश्रय करके तो कर्मस्थितिके भीतर असाता वेदनीयका निरन्तर बन्ध नहीं पाया जाता है ?

समाधान—ऐसा कहनेपर उत्तरमें कहते हैं कि 'नहीं'; क्योंकि, वहाँपर भी नाना कर्मस्थितियोंका आश्रय करके निरन्तर बन्ध पाया जाता है। और यहाँ एक जीवका अधिकार भी नहीं है, क्योंकि कर्मस्थितिका आश्रय करके समयप्रबद्धार्थताकी प्ररूपणा प्रारम्भ की गई है। इस कारण अध्रुवबन्धी असाता वेदनीयका गुणकार तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम है, यह सिद्ध है।

शंका—असाता वेदनीयके बन्धव्युच्छित्तिकालमें बांधे गये व असाता वेदनीय स्वरूपसे परिणत हुए साता वेदनीयको ग्रहणकर तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धार्थता क्यों नहीं कहते ?

---

१ प्रतिषु 'सांतरबंधिसमय' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'ण ण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संकमेण असादत्ताए परिणदाणं असादसमयपबद्धत्तविरोहादो। अकम्मसरूवेण ट्ठिदा पोग्गला असादकम्मसरूवेण परिणदा जदि होंति ते असादसमयपबद्धा णाम। तम्हा संकमेणागदाणं ण समयपबद्धववएसो त्ति सिद्धं। एवं घेप्पमाणे सादवेदणीयस्स वि आवलिऊणतीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदापसंगादो। कुदो? बंधावलिया-दीदअसादट्ठिदीए सादसरूवेण संकंताए[1] सादसरूवेण चेव बंधावलिऊणकम्मट्ठिदिमेत्त-कालमवट्ठाणदंसणादो। ण च सादस्स एत्तियमेत्ता समयपबद्धट्ठदा अत्थि, सुत्ते पण्णारस-सागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदुवदेसादो[2]। ण च असादस्स सादत्ताए संकंतस्स पण्णारससागरोवमकोडाकोडिमेत्ता चेव ट्ठिदी, खंडयघादेण विणा कम्मट्ठिदीए घादा-भावादो। एवं सादावेदणीयस्स वि वत्तव्वं, विसेसाभावादो।

एवदियाओ पयडीओ ॥ ३० ॥

जत्तियाओ सादासादवेदणीयाणं कालगदसत्तीयो तत्तियाओ चेव तासिं पयडीओ त्ति घेत्तव्वं।

समाधान—क्योंकि, साता वेदनीयके स्वरूपसे बांधे गये परन्तु संक्रमण वश असाता वेदनीयके स्वरूपसे परिणत हुए कर्मस्कन्धोंके असाता वेदनीय के समयप्रबद्ध होनेका विरोध है। कारण कि अकर्मस्वरूपसे स्थित पुद्गल यदि असाता वेदनीय कर्मके स्वरूपसे परिणत होते हैं तो वे असाता वेदनीयके समयप्रबद्ध कहे जाते हैं। इसलिये संक्रमण वश आये हुए कर्मपुद्गल स्कन्धोंकी समयप्रबद्ध संज्ञा नहीं हो सकती, यह सिद्ध है।

वैसा ग्रहण करनेपर साता वेदनीयके भी एक आवलीसे रहित तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धार्थताका प्रसंग आता है, क्योंकि, बंधावलीसे रहित असाता वेदनीयकी स्थितिका साता वेदनीयके स्वरूपसे परिणत होकर साता वेदनीयके स्वरूपसे ही बन्धावलीसे हीन कर्मस्थिति मात्र काल तक अवस्थान देखा जाता है। परन्तु साता वेदनीयके इतने समयप्रबद्ध नहीं हैं, क्योंकि सूत्रमें उसके पन्द्रह कोड़ाकोड़ी सागरोपम मात्र समयप्रबद्धोंका उपदेश है। यदि कहा जाय कि असाता वेदनीय साता वेदनीयके स्वरूपसे संक्रमणको प्राप्त होता है अतः उस कर्मकी पन्द्रह कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण स्थिति हो सकती है, तो यह कहना भी ठीक नहीं है; क्योंकि, काण्डकघातके बिना कर्मस्थितिका घात सम्भव नहीं है।

इसी प्रकार साता वेदनीयके सम्बन्धमें भी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३० ॥

साता व असाता वेदनीयकी जितनी कालगत शक्तियाँ हैं उतनी ही उनकी प्रकृतियाँ हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

---

१ अ-का-ताप्रतिषु 'सादसरूवेण संकंताए' इत्येतावानयं पाठो नोपलभ्यते। २ अप्रतौ 'त्रुटितोऽत्र पाठः, ताप्रतौ '-पबद्धट्ठतदुवदेसादो' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

मोहणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ३१ ॥

सुगमं ।

मोहणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी सत्तरि-चत्तालीसं-वीसं-पण्णारस-दस-सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए[1] ॥ ३२ ॥

मिच्छत्तस्स सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीयो, सोलसण्णं कसायाणं चत्तालीसं सागरोवमकोडाकोडीओ, अरदि-सोग-भय-दुगुंछा-णवुंसयवेदाणं वीसं सागरोवमकोडाकोडीयो, इत्थिवेदस्स पण्णारस सागरोवमकोडाकोडीओ, हस्स-रदि-पुरिसवेदाणं दस सागरोवमकोडाकोडीयो ट्ठिदी होदि । एदाहि कम्मट्ठिदीहि समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए एक्केक्का पयडी एत्तियमेत्ता होदि, समयभेदेण बद्धक्खंधाणं पि भेदादो । एत्थ वि सांतरबंधीणं पयडीणमसादावेदणीयकमो[2] वत्तव्वो । सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणं समयपबद्धट्ठदा कधं सत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्ता ? ण, मिच्छत्तकम्मट्ठिदिमेत्तसमयपबद्धाणं समत्त-सम्मामिच्छत्तेसु संकंताणं सेचीयभावेण[3] सव्वेसिमुवलंभादो । तासिमबंधपयडीणं कधं समयपबद्धट्ठदा ? ण, मिच्छत्तसरूवेण बद्धाणं कम्मक्खंधाणं लद्धसमयपबद्धववएसाणं

मोहनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सत्तर, चालीस, बीस, पन्द्रह और दस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी मोहनीय कर्मकी एक एक प्रकृति है ।।३२।।

मिथ्यात्वकी स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम, सोलह कषायोंकी चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम; अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और नपुंसकवेदकी बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम; स्त्रीवेदकी पन्द्रह कोड़ाकोड़ी सागरोपम तथा हास्य, रति और पुरुष वेदकी दस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण स्थिति है । इन कर्मस्थितियोंके द्वारा समयप्रबद्धार्थताको गुणित करनेपर जो प्राप्त हो इतनी मात्र एक एक प्रकृति है, क्योंकि, कालके भेदसे बांधे गये स्कन्धोंका भी भेद होता है । यहाँपर भी सान्तरबन्धी प्रकृतियोंके क्रमको असाता वेदनीयके समान कहना चाहिये ।

शंका—सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्यात्वकी समयप्रबद्धार्थता सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण कैसे सम्भव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्यात्वके रूपमें संक्रमणको प्राप्त हुए मिथ्यात्व कर्मकी स्थितिप्रमाण समयप्रबद्ध निषेक स्वरूपसे वहाँ सभी पाये जाते हैं ।

शंका—उन अबन्ध प्रकृतियोंके समयप्रबद्धार्थता कैसे सम्भव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्व स्वरूपसे बांधे गये व समयप्रबद्ध संज्ञाको प्राप्त हुए

---

१ प्रतिषु 'गुणिदाओ' इति पाठः । २ ताप्रतौ -'वेदणीयस्स' इति पाठः । ३ अप्रतौ 'सेचीयाभावेण' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसरूवेण संकंताणं पि दव्वट्ठियणयेण तव्ववएसं पडि विरोहा-भावादो। एस कमो अबंधपयडीणं चेव, ण बंधपयडीणं; पुरिसवेदस्स वि चालीस-सागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदापसंगादो। ण च एवं, तहाविहसुत्ताणुवलंभादो।

एवदियाओ पयडीओ ॥ ३३ ॥

जत्तिया समयपबद्धा तत्तियमेत्ताओ पयडीओ एक्केका पयडी होदि, कालभेदेण भेदुवलंभादो।

आउअस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ३४ ॥

सुगमं।

आउअस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी अंतोमुहुत्तमंतोमुहुत्तं समय-पबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥ ३५ ॥

अंतोमुहुत्तमंतोमुहुत्तमिदि विच्छाणिद्देसो। तेण चदुण्णमाउआणं अंतोमुहुत्तमेत्ता चेव ट्ठिदिबंधगद्धा होदि त्ति सिद्धं। एदीए बंधगद्धाए एगसमयपबद्धे गुणिदे चदुण्ण-माउआणं पुध पुध समयपबद्धट्ठदापमाणं होदि। आउअस्स संखेवद्धाए ऊणपुव्वकोडि-तिभागमेत्ता समयपबद्धट्ठदा किण्ण परूविदा, कदलीघादमस्सिदूण अंतोमुहुत्तूणपुव्व[1]-

कर्मस्कन्धोंके सम्यक्त्व एवं सम्यग्मिथ्यात्व स्वरूपसे संक्रान्त होनेपर भी उनको द्रव्यार्थिक नयसे समयप्रबद्ध कहनेमें कोई विरोध नहीं है। यह क्रम अबन्ध प्रकृतियोंके ही सम्भव है, बन्ध प्रकृतियोंके नहीं; क्योंकि, वैसा होनेपर पुरुषवेदके भी चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धार्थताका प्रसङ्ग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, उस प्रकारका कोई सूत्र नहीं है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३३ ॥

जितने समयप्रबद्ध हों उतनी मात्र प्रकृतियों स्वरूप एक एक प्रकृति होती है, क्योंकि, कालके भेदसे प्रकृतिभेद पाया जाता है।

आयु कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्तको समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी आयु कर्मकी एक एक प्रकृति है ॥ ३५ ॥

'अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त' यह वीप्सानिर्देश है। इसलिए चारों आयुओंका स्थितिबन्धक काल अन्तर्मुहूर्त मात्र ही है, यह सिद्ध है। इस बन्धककालसे एक समयप्रबद्धको गुणित करनेपर पृथक् पृथक् चारों आयुओंकी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण होता है।

शंका—आयुके संक्षेपाद्धासे हीन पूर्वकोटिके त्रिभाग प्रमाण अथवा कदलीघातका आश्रय करके अन्तर्मुहूर्तसे हीन पूर्वकोटि प्रमाण समयप्रबद्धार्थता क्यों नहीं कही गई है?

१ प्रतिषु 'अंतोमुहुत्तेणपुव्व-' इति पाठः।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

कोडिमेत्ता वा ? ण एस दोसो, जहा सादादीणं एगसमयअबंधगो[1] होदूण विदियसमए चेव बंधगो होदि, एवं ण आउअस्स; किं तु सेसाउअस्स बेत्तिभागं गंतूण चेव बंधगो होदि त्ति जाणावणट्ठं अंतोमुहुत्तग्गहणं कदं ।

एवदियाओ पयडीओ ॥ ३६ ॥

सुगमं ।

णामस्स कम्मस्स[2] केवडियाओ पयडीओ ॥ ३७ ॥

सुगमं ।

णामस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी वीसं-अट्ठारस-सोलस-पण्णारस-चोद्दस्स–बारस–दससागरोवम[3] कोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥ ३८ ॥

णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वि-तिरिक्खगइ-तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वि-एइंदिय-पंचिंदियजादि-[ओरालिय-वेउव्विय–] तेजा-कम्मइयसरीर वण्ण-गंध-रस-फास-ओरालिय-वेउव्वियसरीरअंगोवंग–हुंडसंठाण–असंपत्तसेवट्टसंघडण–अगुरुवलहुग–उवघाद–परघाद–उस्सास–आदावुज्जोव–अप्पसत्थविहायगदि–थावर–तस–बादर-पज्जत्त–पत्तेयसरीर-अथिर-असुह-अणादेज्ज–दुभग-दुस्सर–अजसकित्ति–णिमिणणामाणं वीसं सागरोवमकोडाकोडीयो

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जिस प्रकार साता वेदनीय आदि कर्मोंका एक समय अबन्धक होकर द्वितीय समयमें ही बन्धक हो जाता है, इस प्रकार आयुकर्मका बन्धक नहीं होता; किन्तु शेष आयुके दो त्रिभाग बिताकर ही बन्धक होता है, यह बतलानेके लिए अन्तर्मुहूर्तका ग्रहण किया है ।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

नाम कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ३७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

बीस, अठारह, सोलह, पन्द्रह, चौदह, बारह और दस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थता से गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी नामकर्मकी एक एक प्रकृति है ॥ ३८ ॥

नरकगति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, तिर्यग्गति, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, एकेन्द्रिय जाति व पंचेन्द्रिय जाति, [औदारिक, वैक्रियिक,] तैजस व कार्मण शरीर, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, औदारिक व वैक्रियिक शरीरांगोपांग, हुण्डसंस्थान, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, स्थावर, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, अस्थिर, अशुभ, अनादेय, दुर्भग, दुस्वर, अयशःकीर्ति और निर्माण इन नामकर्मकी प्रकृतियोंका

१ ताप्रतौ 'एगसमयपबंधगो' इति पाठः । २ आ-का-ताप्रतिषु 'णामकस्स' इति पाठः । ३ ताप्रतौ 'वारससागरोवम' इति पाठः ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

उक्कस्सट्ठिदिबंधो। बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदिय-सुहुम-साधारण-अपज्जत्त-पंचमसंठाण-पंचमसंघडणाणमट्ठारससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। चउत्थसंठाण-चउत्थ-संघडणाणं सोलससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वीणं पण्णारससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो होदि। तदियसंठाण-तदियसंघडणाणं चोद्दससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। विदियसंठाण-विदिय-संघडणाणं बारससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो। देवगइ-देवगइपाओग्गाणुपुव्वि-समचउरससंठाण-वज्जरिसहवइरणारायणसंघडण-पसत्थविहायगदि-थिर-सुभ-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज-जसगित्तीणं दससागरोवमकोडाकोडीयो उक्कस्सट्ठिदिबंधो[1]। एदाहि ट्ठिदीहि पुध पुध समयपबद्धे गुणिदे सग-सगसमयपबद्धट्ठदा होदि।

संपहि आहारदुगस्स समयपबद्धट्ठदा संखेज्जंतोमुहुत्तमेत्ता। तं जहा—अट्ठवस्संतोमुहुत्तस्सुवरि संजदो अंतोमुहुत्तकालमाहारदुगं बंधिय णियमा थक्कदि, पमत्तद्धाए आहारदुगस्स बंधाभावादो। एवमंतोमुहुत्तमबंधगो होदूण[2] पुणो अंतोमुहुत्तं बंधगो होदि, पडिवण्णअप्पमत्तभावत्तादो। एवमप्पमत्त-पमत्तद्धासु[3] बंधगो अबंधगो च होदूण ताव गच्छदि जाव [4]पुव्वकोडिचरिमसमओ त्ति। एदे अंतोमुहुत्ते रुव्विणिदूण गहिदे संखेज्जं-

उत्कृष्ट स्थितिबन्ध बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण होता है। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, सूक्ष्म, साधारण, अपर्याप्त, पांचवां संस्थान और पांचवां संहनन इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध अठारह कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण होता है। चौथे संस्थान और चौथे संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सोलह कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगतिप्रयोग्यानुपूर्वीका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पन्द्रह कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण होता है। तृतीय संस्थान और तृतीय संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध चौदह कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण होता है। द्वितीय संस्थान और द्वितीय संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध बारह कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण होता है। देवगति, देवगतिप्रयोग्यानुपूर्वी, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभवज्रनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय और यशःकीर्ति इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध दस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण होता है। इन स्थितियोंके द्वारा पृथक् पृथक् समयप्रबद्धको गुणित करनेपर अपनी अपनी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण होता है।

अब आहारकद्विककी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण संख्यात अन्तर्मुहूर्त मात्र है। यथा—आठ वर्ष व अन्तर्मुहूर्तके ऊपर संयत होकर अन्तर्मुहूर्त काल तक आहारकद्विकको बाँधकर नियमसे थक जाता है, कारण कि प्रमत्तसंयतकालमें आहारकद्विकका बन्ध नहीं होता है। इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्त काल तक अबन्धक होकर फिरसे अन्तर्मुहूर्त काल तक बन्धक होता है, क्योंकि, तब उसने अप्रमत्तभावको प्राप्त कर लिया है। इस प्रकार अप्रमत्त व प्रमत्त कालोंमें क्रमसे बन्धक व अबन्धक होकर तब तक जाता है जब तक पूर्वकोटिका अन्तिम समय प्राप्त होता है। इन अन्तर्मुहूर्तोंको समुच्चय

१ ष. खं. १, भा. ९, पु. ६, चू. ६, सू. ७, १६, १९, ३०, ३६, ३९, ४२, गो. क. १२८-१३२।
२ ताप्रतौ '-मबंधगो होदूण [पुणो अंतोमुहुत्तमबंधगो होदूण] इति पाठः। ३ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-आ-का-ताप्रतिषु 'एवमप्पमत्तद्धासु' इति पाठः। ४ अ-आकाप्रतिषु 'पुधकोडि' इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तोमुहुत्तमेत्ता चेव समयपबद्धट्ठदा लब्भदि ।

तित्थयरस्स पुण सादिरेयतेत्तीससागरोवममेत्ता समयपबद्धट्ठदा लब्भंति । तं जहा— एगो देवो वा णेरइयो वा सम्मादिट्ठी पुव्वकोडाउअमणुस्सेसु उववण्णो, गब्भादिअट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि तित्थयरणामकम्मबंधमाढवेदूण तदो प्पहुडि उवरि णिरंतरं बज्झदि जाव अवसेसपुव्वकोडिसमहियतेत्तीससागरोवमाणि त्ति, तित्थयरं बंधमाणसंजदस्स बद्धतेत्तीससागरोवममेत्तदेवाउअस्स देवेसुप्पण्णस्स तेत्तीससागरोवममेत्तकालं णिरंतरं बंधुवलंभादो । पुणो तत्तो चुदो समाणो पुणो वि तित्थयरणामकम्मं बंधदि जाव पुव्वकोडाउअमणुस्सेसु उप्पज्जिय वासपुधत्तावसेसे अपुव्वकरणो होदूण चरिमसत्तमभागस्स पढमसमयअपुव्वकरणो त्ति । उवरि बंधो णत्थि, चरिमसत्तमभागस्स पढमसमए अणुप्पादाणुच्छेदेण बंधो वोच्छिज्जदि त्ति ससुत्ताइरियवयणुवलंभादो । वासपुधत्तं किमिदि उव्वराविदं ? ण एस दोसो, तित्थविहारस्स जहण्णेण वासपुधत्तमेत्तकालुवलंभादो । एवमादिमंतिमदोहि[1] वासपुधत्तेहि ऊणदोपुव्वकोडीहि सादिरेयतेत्तीससागरोवममेत्ता तित्थयरस्स समयपबद्धट्ठदा होदि त्ति के वि आइरिया भणंति । तण्ण घडदे । कुदो ? आहारदुगस्स संखेज्जवासमेत्ता तित्थयरस्स सादिरेयतेत्तीससागरोवममेत्ता[2] समयपबद्धट्ठदा होंति त्ति सुत्ताभावादो । ण च सुत्तपडिकूलं वक्खाणं होदि, वक्खाणाभासत्तादो ।

रूपसे ग्रहण करनेपर संख्यात अन्तर्मुहूर्त प्रमाण ही समयप्रबद्धार्थता पायी जाती है ।

परन्तु तीर्थंकर प्रकृतिकी समयप्रबद्धार्थता साधिक तेतीस सागरोपम प्रमाण पायी जाती है । यथा—एक देव अथवा नारकी सम्यग्दृष्टि पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । उसके गर्भसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षोंके पश्चात् तीर्थंकर नामकर्म बन्धको प्राप्त हुआ । उससे आगे वह शेष पूर्वकोटिसे अधिक तेतीस सागरोपम प्रमाण काल तक निरन्तर बँधता है, क्योंकि, जो संयत तेतीस सागरोपम प्रमाण देवायुको बाँधकर देवोंमें उत्पन्न हो तीर्थंकर प्रकृतिको बाँधता है उसके तेतीस सागरोपम प्रमाण काल तक उसका निरन्तर बन्ध पाया जाता है । फिर वहाँ से च्युत होकर फिरसे भी वह पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर वर्ष पृथक्त्वके शेष रहनेपर अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती होकर अन्तिम सप्तम भागके प्रथम समयवर्ती अपूर्वकरण तक तीर्थंकर नामकर्मको बाँधता है । इसके आगे उसका बन्ध नहीं होता है, क्योंकि, "अन्तिम सप्तम भागके प्रथम समयमें अनुत्पादानुच्छेदसे उसका बन्ध व्युच्छिन्न हो जाता है" ऐसा ससूत्राचार्यका वचन पाया जाता है ।

शङ्का—वर्षपृथक्त्वको अवशेष क्यों रखाया गया है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, तीर्थविहारका काल जघन्य स्वरूपसे वर्षपृथक्त्व मात्र पाया जाता है ।

इस प्रकार आदि और अन्तके दो वर्षपृथक्त्वोंसे रहित तथा दो पूर्वकोटि अधिक तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तेतीस सागरोपम मात्र समयप्रबद्धार्थता होती है, ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं, परन्तु वह घटित नहीं होता, क्योंकि, आहारकद्विककी संख्यात वर्ष मात्र और तीर्थंकर प्रकृतिकी साधिक तेतीस सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धार्थता है, ऐसा कोई सूत्र नहीं है । और सूत्रके प्रतिकूल व्याख्यान होता नहीं है, क्योंकि,

१ ताप्रतौ 'एवमादिमंतरियदोहि' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'मेत्तो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ण च जुत्तीए सुत्तस्स बाहा संभवदि, सयलबाहादीदस्स सुत्तत्तुवलंभादो। जदि एवं तो एदेसिं कम्माणं तिण्णं केवडिया समयपबद्धट्ठदा? वीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्ता। एदेसिं तिण्णं कम्माणमुक्कस्सट्ठिदिबंधो अंतोकोडाकोडिमेत्तो चेव। ण च तेत्तियं कालमेदेसिं बंधो वि संभवदि, कमेण संखेज्जवस्ससादिरेयतेत्तीससागरोवममेत्तकालबंधुवलंभादो। जेसिमंतोकोडाकोडिमेत्ता वि समयपबद्धट्ठदा ण संभवदि कधं तेसिं वीससागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धाणं संभवो त्ति? ण एस दोसो, एदेसु तिसु कम्मेसु बज्झमाणेसु वीसंसागरोवमकोडाकोडीसु संचिदणामकम्मसमयपबद्धेसु एदेसु संकममाणेसु वीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदाए उवलंभादो। एदाओ तिण्णि वि बंधपगदीओ। ण च बंधपयडीणं संकमेण समयपबद्धट्ठदा वोत्तुं सक्किज्जदे, सादस्स वि तीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसमयपबद्धट्ठदापसंगादो त्ति? एत्थ परिहारो उच्चदे। तं जहा— जासिं पयडीणं ट्ठिदिसंतादो उवरि कम्हि वि काले ट्ठिदिबंधो संभवदि ताओ बंधपयडीओ णाम। जासिं पुण पयडीणं बंधो चेव णत्थि, बंधे संते वि जासिं पयडीणं ट्ठिदिसंतादो उवरि सव्वकालं बंधो ण संभवदि; ताओ संतपयडीओ, संतपहाणत्तादो। ण च आहारदुग-तित्थयराणं ट्ठिदिसंतादो उवरि बंधो अत्थि, समाइट्ठीसु तदणुवलंभादो

वह व्याख्यानाभास कहा जाता है। यदि कहा जाय कि युक्तिसे सूत्रको बाधा पहुँचाई जा सकती है, सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, जो समस्त बाधाओंसे रहित होता है उसकी सूत्र संज्ञा है।

शङ्का—यदि ऐसा है तो फिर इन तीन कर्मोंकी समयप्रबद्धार्थता कितनी है?

समाधान—उनकी समयप्रबद्धार्थता बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण है।

शङ्का—इन तीन कर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण ही होता है। परन्तु इतने काल तक उनका बन्ध भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, वह क्रमसे संख्यात वर्ष और साधिक तेतीस सागरोपम काल तक ही पाया जाता है। इसलिए जिनकी अन्तःकोड़ाकोड़ी मात्र भी समय प्रबद्धार्थता सम्भव नहीं है उनके बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धोंकी सम्भावना कैसे की जा सकती है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, बँधते समय इन तीनों कर्मोंमें बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंमें संचयको प्राप्त हुए नामकर्मके समयप्रबद्धोंका संक्रमण होनेपर इनकी बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण समयप्रबद्धार्थता पायी जाती है।

शङ्का—ये तीनों ही बन्धप्रकृतियाँ हैं, और बन्धप्रकृतियोंकी संक्रमणसे समयप्रबद्धार्थता कहना शक्य नहीं है, क्योंकि, ऐसा होनेपर साता वेदनीयकी भी समयप्रबद्धार्थता तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण प्राप्त होती है?

समाधान—यहाँ उक्त शङ्काका परिहार कहते हैं। वह इस प्रकार है—जिन प्रकृतियोंका स्थितिसत्त्वसे अधिक किसी भी कालमें बन्ध सम्भव है वे बन्धप्रकृतियाँ कही जाती हैं। परन्तु जिन प्रकृतियोंका बन्ध ही नहीं होता है और बन्धके होनेपर भी जिन प्रकृतियोंका स्थितिसत्त्वसे अधिक सदा काल बन्ध सम्भव नहीं है वे सत्त्वप्रकृतियाँ हैं, क्योंकि, सत्त्वकी प्रधानता है। आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका स्थिति सत्त्वसे अधिक बन्ध सम्भव नहीं है, क्योंकि, वह सम्यग्दृष्टियोंमें नहीं पाया जाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तम्हा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं व एदाणि तिण्णि वि संतकम्माणि । तदो जहा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं समयपबद्धट्ठदा संकमेण परूविदा तहा एदासिं पि संकमेणेव परूवेदव्वा, संतकम्मत्तं पडि भेदाभावादो । जदि वि संकमेण समयपबद्धट्ठदा वुच्चदे तो वि उक्कस्सट्ठिदिमेत्ता समयपबद्धट्ठदा णोवलब्भदे, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु कम्मट्ठिदिपढमसमयप्पहुडि अंतरमेत्तकालम्हि बद्धसमयपबद्धाणं संकमाभावादो आहार-तित्थयरेसु उदयावलियमेत्तसमयपबद्धाणं संकमाभावादो त्ति ? ण एस दोसो, णाणाकालेसु णाणाजीवे अस्सिदूण परूविज्जमाणे सव्वेसिं समयपबद्धाणं संकमुवलंभादो । ण च कम्मट्ठिदीए आदीए चेव एत्थ होदि त्ति णियमो अत्थि, अणादिसंसारे बुद्धिबलसिद्धआदिदंसणादो । एत्थ जं गंथबहुत्तभएण ण वुत्तं[1] तं चिंतिय वत्तव्वं ।

एवदियाओ पयडीओ ।। ३९ ।।

जत्तिया समयपबद्धा पुव्वं परूविदा एक्केक्किस्से पयडीए तत्तियमेत्ताओ पयडीओ होंति त्ति घेत्तव्वं ।

गोदस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।। ४० ।।

सुगमं ।

है । इस कारण सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्वके समान ये तीनों ही सत्त्वप्रकृतियाँ हैं । अतएव जिस प्रकार सम्यक्त्व व सम्यङ्मिथ्यात्व प्रकृतियोंकी समयप्रबद्धार्थताकी संक्रमण द्वारा प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार इनकी भी समयप्रबद्धार्थताकी प्ररूपणा संक्रमण द्वारा करनी चाहिये, क्योंकि, सत्कर्मताके प्रति उनमें कोई विशेषता नहीं है ।

शङ्का—यद्यपि संक्रमणसे इनकी समयप्रबद्धार्थता बतलाई जा रही है तो भी इनकी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण समयप्रबद्धार्थता नहीं पायी जाती है, क्योंकि, सम्यक्त्व और सम्यङ्मिथ्यात्व प्रकृतियोंमें कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर अन्तर प्रमाण कालमें बाँधे गये समयप्रबद्धोंके संक्रमणका अभाव है, तथा आहारद्विक और तीर्थंकर प्रकृतियोंमें उदयावली प्रमाण समयप्रबद्धोंके संक्रमणका अभाव है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि नाना कालोंमें नाना जीवोंका आश्रय करके प्ररूपणा करनेपर सब समयप्रबद्धोंका संक्रमण पाया जाता है । दूसरे, यहाँ कर्मस्थितिके आदिमें ही होता है, ऐसा नियम भी नहीं है, क्योंकि, अनादि संसारमें बुद्धिबलसे सिद्ध आदि देखी जाती है ।

यहाँ ग्रन्थकी अधिकताके भयसे जो नहीं कहा गया है उसको विचार कर कहना चाहिये ।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ।। ३९ ।।

एक एक प्रकृतिके जितने समयप्रबद्ध पहिले कहे गये हैं उतनी मात्र प्रकृतियाँ होती हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

गोत्र कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ? ।। ४० ।।

यह सूत्र सुगम है ।

१ अ-आ-काप्रतिषु 'भएण वुत्तं' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोदस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी बीसं–दससागरोवमकोडाकोडीओ समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ॥ ४१ ॥

वीसंसागरोवमकोडाकोडीहि एगसमयपबद्धे गुणिदे णीचागोदस्स समयपबद्धट्ठदापमाणं होदि। दससागरोवमकोडाकोडीहि गुणिदे उच्चागोदस्स समयपबद्धट्ठदापमाणं होदि। एत्थ सादासादाणं परूविदविहाणं संचिंतिय वत्तव्वं।

एवदियाओ पयडीओ ॥ ४२ ॥

सुगमं।

एवं समयपबद्धट्ठदा त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

खेत्तपच्चासे त्ति ॥ ४३ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं। प्रत्यास्यते अस्मिन्निति प्रत्यासः, क्षेत्रं तत्प्रत्यासश्च क्षेत्रप्रत्यासः। जीवेण ओट्ठद्धखेत्तस्स खेत्तपच्चासे त्ति सण्णा।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ४४ ॥

सुगमं।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स जो मच्छो जोयणसहस्सओ सयंभुरमणसमुद्दस्स बाहिरल्लए तडे अच्छिदो, वेयणसमुग्घादेण समुहदो,

---

बीस और दस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थता से गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी गोत्र कर्मकी एक एक प्रकृति है ॥ ४१ ॥

एक समयप्रबद्धको बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर नीच गोत्रकी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण होता है। तथा दस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंसे गुणित करनेपर उच्चगोत्रकी समयप्रबद्धार्थताका प्रमाण होता है। साता व असाता वेदनीयके सम्बन्धमें जो विधि प्ररूपित की गई है उसको भले प्रकार विचार कर यहाँ भी कहनी चाहिये।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ४२ ॥

यह सूत्र सुगम है।

इस प्रकार समयप्रबद्धार्थता यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

क्षेत्रप्रत्यास अनुयोगद्वारका अधिकार है ॥ ४३ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है।

जहाँ समीपमें रहा जाता है वह प्रत्यास कहा जाता है, क्षेत्र रूप प्रत्यास क्षेत्रप्रत्यास, इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है। जीवके द्वारा अवष्टब्ध (अवलम्बित) क्षेत्रकी क्षेत्रप्रत्यास संज्ञा है।

ज्ञानावरणीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ? ॥ ४४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

जो मत्स्य एक हजार योजन प्रमाण है, स्वयम्भूरमण समुद्रके बाह्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काउलेस्सियाए लग्गो, पुणरवि मारणंतियसमुग्घादेण समुहदो, तिण्णि विग्गहगदिकंदयाणि काऊण से काले अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जिहदि त्ति ॥ ४५ ॥

एदेण सव्वेण वि सुत्तेण णाणावरणीयस्स उक्कस्सखेत्तपच्चासो परूविदो। एदस्स सुत्तस्स अत्थो वि सुगमो, खेत्तविहाणे परूविदत्तादो।

खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ ॥ ४६ ॥

पुवुत्तेण खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ समयपबद्धट्ठदापयडीओ एत्थतणपयडिपमाणं होंति।

एवदियाओ पयडीओ ॥ ४७ ॥

पयडिअट्ठदाए जाओ पयडीओ णाणावरणीयस्स परूविदाओ ताओ अप्पप्पणो समयपबद्धट्ठदाए गुणेदव्वाओ। एवं गुणिदे समयपबद्धट्ठदापयडीओ होंति। पुणो तासु खेत्तपच्चासेण जगपदरस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण गुणिदासु एत्थतणपयडीओ होंति। एत्थ तेरासियकमेण पयडिपमाणमाणेदव्वं।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ ४८ ॥

तटपर स्थित है, वेदनासमुद्घातको प्राप्त हुआ है, कापोतलेश्यासे संलग्न है, इसके बाद मारणांतिक समुद्घातको प्राप्त हुआ है, विग्रहगतिके तीन काण्डकोंको करके अनन्तर समयमें नीचे सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न होगा, उसके ज्ञानावरण कर्मकी जो एक एक प्रकृति होती है ॥ ४५ ॥

इस सब ही सूत्र के द्वारा ज्ञानावरणीय कर्मके उत्कृष्ट क्षेत्र प्रत्यासकी प्ररूपणा की गई है। इस सूत्रका अर्थ भी सुगम है, क्योंकि, क्षेत्रविधानमें उसकी प्ररूपणा की जा चुकी है।

उन्हें क्षेत्रप्रत्याससे गुणित करनेपर ज्ञानावरणकी क्षेत्रप्रत्यास प्रकृतियोंका प्रमाण होता है ॥ ४६ ॥

पूर्वोक्त क्षेत्र प्रत्याससे समय प्रबद्धार्थता प्रकृतियोंको गुणित करनेपर यहाँकी प्रकृतियोंका प्रमाण होता है।

उसकी इतनी प्रकृतियां हैं ॥ ४७ ॥

प्रकृत्यर्थतामें ज्ञानावरणकी जिन प्रकृतियोंकी प्ररूपणा की गई है उनको अपनी अपनी समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करना चाहिये। इस प्रकार गुणित करनेपर समयप्रबद्धार्थता प्रकृतियाँ होती हैं। फिर उनको जगप्रतरके असंख्यातवें भाग मात्र क्षेत्रप्रत्याससे गुणित करनेपर यहाँकी प्रकृतियाँ होती हैं। यहाँ त्रैराशिक क्रमसे प्रकृतियोंका प्रमाण लाना चाहिये।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मोंके सम्बन्धमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ४८ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहा णाणावरणीयस्स समयपबद्धट्ठदापयडीओ खेत्तपच्चासेण गुणिय आणिदाओ तहा एदेसिं वि तिण्णं कम्माणं खेत्तपच्चासपयडिपमाणमाणेदव्वं ।

वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ॥ ४९ ॥

सुगमं ।

वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी अण्णदरस्स केवलिस्स केवलिसमुग्घादेण समुग्घादस्स सव्वलोगं गदस्स ॥ ५० ॥

एदेण सुत्तेण खेत्तपच्चासपमाणं परूविदं संभालिदं वा, खेत्तविहाणे परूविदत्तादो ।

खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ ॥ ५१ ॥

वेयणीयस्स एक्केक्का पयडी खेत्तपच्चासेण गुणिदा संती असंखेज्जाओ पयडीओ होंति । एक्का समयपबद्धट्ठदापयडी[1] जदि घणलोगमेत्ता होदि तो सव्वासिं किं लभामो त्ति खेत्तपच्चासगुणगारो साहेयव्वो । 'वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी सव्वलोगं गदस्स केवलिस्स, खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ' त्ति कधमेत्थ भिण्णाहियरणाणं संबंधो ? ण,

---

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्मकी समयप्रबद्धार्थता प्रकृतियोंको क्षेत्रप्रत्याससे गुणित करके लाया गया है उसी प्रकार इन तीनों ही कर्मोंके क्षेत्रप्रत्यासरूप प्रकृतियोंके प्रमाणको लाना चाहिये ।

वेदनीय कर्मकी कितनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ४९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

केवलिसमुद्घातसे समुद्घातको प्राप्त होकर सर्व लोकको प्राप्त हुए अन्यतर केवलीके जो वेदनीय कर्मकी एक एक प्रकृति होती है ॥ ५० ॥

इस सूत्रके द्वारा क्षेत्रप्रत्यासके प्रमाण की प्ररूपणा की गई है । अथवा, उसका स्मरण कराया गया है, क्योंकि उसकी प्ररूपणा क्षेत्रविधानमें की जा चुकी है ।

उन्हें क्षेत्र प्रत्याससे गुणित करनेपर वेदनीय कर्मकी क्षेत्रप्रत्यास प्रकृतियोंका प्रमाण होता है ॥ ५१ ॥

वेदनीय कर्मकी एक एक प्रकृति क्षेत्रप्रत्याससे गुणित होकर असंख्यात प्रकृतियाँ होती हैं । यदि एक समय प्रबद्धार्थता प्रकृति घनलोक प्रमाण है तो सब प्रकृतियाँ कितनी होंगीं, इस प्रकार क्षेत्रप्रत्यासके गुणकारको सिद्ध करना चाहिये ।

शंका—'वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी सव्वलोगं गदस्स केवलिस्स खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ' यहाँ चूंकि 'पयडी' पद एकवचन और 'गुणिदाओ' पद बहुवचन है, अतएव यहाँ इन भिन्न अधिकरणवालोंका संबंध किस प्रकार हो सकता है ?

---

१ अप्रतौ '-पबद्धट्ठदा वयदा पयडी', काप्रतौ 'पबद्धट्ठदा पयदपयडी', ताप्रतौ 'पबद्धट्ठदा पयदा पयडी' इति पाठः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

एक्केका इदि [1]विच्छाणिद्देसेण सगंतोक्खित्तबहुत्तेण समाणाहियरणत्तं पडि विरोहाभावादो।

एवदियाओ पयडीओ ॥ ५२ ॥

सुगमं।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ॥ ५३ ॥

सुगमं।

एवं खेत्तपच्चासे त्ति अणियोगद्दारे समत्ते वेयणपरिमाणविहाणे[2] त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

समाधान—नहीं, क्योंकि 'एक्केक्का' इस प्रकार अपने भीतर बहुत्वको रखनेवाले वीप्सा-निर्देशसे उनका समानाधिकरण होनेमें कोई विरोध नहीं आता है।

उसकी इतनी प्रकृतियाँ हैं ॥ ५२ ॥

यह सूत्र सुगम है।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्र कर्मोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ ५३ ॥

यह सूत्र सुगम है।

इस प्रकार क्षेत्र प्रत्यास अनुयोगद्वारके समाप्त होनेपर वेदनापरिमाण विधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

१ आप्रतौ 'मिच्छा', ताप्रतौ 'मि [ ] च्छा' इति पाठः। २ अ-आ-काप्रतिषु 'परिणामविहाणे' इति पाठः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

वेयणभागाभागविहाणाणियोगद्दारं

वेयणभागाभागविहाणे त्ति ॥ १ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं सुगमं ।

तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि—पयडिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासे त्ति ॥ २ ॥

एवमेदाणि एत्थ तिण्ण चेव अणियोगद्दाराणि होंति, अण्णेसिमसंभवादो ।

पयडिअट्ठदाए णाणावरणीय-दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ सव्वपयडीणं केवडियो भागो ॥ ३ ॥

किं संखेज्जदिभागो किमसंखेज्जदिभागो किमणंतिमभागो त्ति भणिदं होदि ।

दुभागो देसूणो ॥ ४ ॥

तं जहा—ओहिणाणावरणीयपयडीओ ओहिदंसणावरणीयपयडीओ च पुध पुध असंखेज्जलोगमेत्ता होदूण अण्णोण्णं पेक्खिदूण समाणाओ, सव्वोहिणाणवियप्पाणं ओहिदंसणपुरंगमत्तुवलंभादो । मदिणाणावरणीयपयडीओ चक्खु-अचक्खुदंसणावरणीयपय-

---

अब वेदनाभागाभागविधान अनुयोगद्वार का अधिकार है ॥ १ ॥

यह अधिकारका स्मरण करानेवाला सूत्र सुगम है ।

उसमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—प्रकृत्यर्थता, समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यास ॥ २ ॥

इस प्रकार यहाँ ये तीन ही अनुयोग द्वार हैं, क्योंकि, इनसे अन्य अनुयोगद्वार यहाँ सम्भव नहीं है ।

प्रकृत्यर्थतासे ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ॥ ३ ॥

वे क्या संख्यातवें भाग प्रमाण हैं, क्या असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं या क्या अनन्तवें भाग प्रमाण हैं, यह इस सूत्र का अभिप्राय है ।

वे सब प्रकृतियोंके कुछ कम द्वितीय भाग प्रमाण हैं ॥ ४ ॥

यथा—अवधिज्ञानावरणकी प्रकृतियाँ और अवधिदर्शनावरणकी प्रकृतियाँ पृथक् पृथक् असंख्यात लोक प्रमाण होकर परस्परकी अपेक्षा समान हैं, क्योंकि, अवधिज्ञानके सब भेद अवधिदर्शनपूर्वक पाये जाते हैं । मतिज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ और चक्षु व अचक्षु दर्शनावरणीयकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डीओ च पुध पुध असंखेज्जलोगमेत्ताओ[1] होदूण अण्णोण्णं पेक्खिदूण समाणाओ, सव्वस्स मदिणाणस्स दंसणपुरंगमत्तब्भुवगमादो । सुदणाणावरणीयपयडीयो असंखेज्ज-लोगमेत्ताओ । मणपज्जवणाणावरणीयपयडीओ असंखेज्जकप्पमेत्ताओ[2] । एदासिं सुद-मणपज्जवणाणावरणीयपयडीणं ण दंसणमत्थि, मदिणाणपुरंगमत्तादो । तेण दंसणावर-णीयपयडीहिंतो णाणावरणीयपयडीओ विसेसाहियाओ । केत्तियमेत्तो विसेसो ? असंखे-ज्जदिभागमेत्तो । किंतु मदिणाणे सुदणाणं पविसदि त्ति एत्थ पुध ण घेत्तव्वं, अण्णहा देसूणदुभागत्ताणुववत्तीदो । अधवा, सुद-मणपज्जवणाणाणं[3] पि दंसणमत्थि, तदवगमत्थ-संवेयणाए तत्थ वि उवलंभादो । ण पुव्वब्भुवगमेण विरोहो[4], तक्कारणीभूददंसणस्स तत्थ पडिसेहविणासादो । केवलदंसणस्स एक्का पयडी अत्थि । केवलणाणावरणीयस्स वि एक्का चेव । तेण ताओ सरिसाओ । णिद्दाणिद्दा पयलपयला थीणगिद्धी णिद्दा य पयला य एदाओ पंच पयडीओ दंसणावरणीए अत्थि । किं तु एदाओ अप्पहाणाओ, मणपज्ज-वणाणावरणीयपयडीणमसंखेज्जदिभागत्तादो । तदो सिद्धं दंसणावरणीयपयडीहिंतो णाणावरणीयपयडीओ बहुगाओ त्ति ।

असादावेदणीयादिसेसपयडीओ दंसणावरणीयपयडीणं असंखेज्जदिभागमेत्ताओ होदूण मणपज्जवणाणावरणीयपयडीहिंतो असंखेज्जगुणाओ । कधमसंखेज्जगुणत्तं

प्रकृतियाँ पृथक् पृथक् असंख्यात लोक मात्र होकर अन्योन्यकी अपेक्षा समान हैं, क्योंकि, समस्त मतिज्ञानको दर्शनपूर्वक स्वीकार किया गया है। श्रुतज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ असंख्यात लोक मात्र हैं। मनःपर्ययज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ असंख्यात कल्प मात्र हैं। इन श्रुतज्ञानावरणीय और मनःपर्ययज्ञानावरणीय प्रकृतियोंका दर्शन नहीं होता, क्योंकि, ये ज्ञान मतिज्ञानपूर्वक होते हैं। इसलिए दर्शनावरणीयकी प्रकृतियोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ विशेष अधिक हैं। विशेषका प्रमाण कितना है ? वह असंख्यातवें भाग मात्र है। किन्तु मतिज्ञानमें चूंकि श्रुतज्ञान प्रविष्ट है अतएव यहाँ पृथक् ग्रहण नहीं करना चाहिये, अन्यथा ज्ञानावरण और दर्शनावरणकी प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कुछ कम द्वितीय भाग प्रमाण नहीं बन सकतीं।

अथवा, श्रुतज्ञान और मनःपर्ययज्ञानोंके भी दर्शन है, क्योंकि, उन ज्ञानोंरूप अर्थका संवेदन वहाँ भी पाया जाता है। ऐसा स्वीकार करनेपर पूर्व मान्यताके साथ विरोध होगा, सो भी नहीं है; क्योंकि उनके कारणीभूत दर्शनके प्रतिषेधका वहाँ पर अभाव है।

केवलदर्शनावरणीयकी एक प्रकृति है। केवलज्ञानावरणीयकी भी एक ही प्रकृति है। इस लिये वे दोनों समान है। निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, निद्रा और प्रचला, ये पाँच प्रकृतियाँ दर्शनावरणीयकी हैं। किन्तु ये अप्रधान हैं, क्योंकि, वे मनःपर्ययज्ञानावरणीय प्रकृतियोंके असंख्यातवें भाग मात्र हैं। इससे सिद्ध है कि दर्शनावरणीयकी प्रकृतियोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ बहुत हैं।

असातावेदनीय आदि शेष कर्मोंकी प्रकृतियाँ दर्शनावरणकी प्रकृतियों के असंख्यातवें भाग

१ अ-आ-काप्रतिषु 'लोगमेत्ता' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'असंखेज्जकम्ममेत्ताओ' इति पाठः । ३ अ-आ-काप्रतिषु 'मणपज्जवाणं' इति पाठः । ४ अ-आ-काप्रतिषु 'विरोहा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ण्वदे ? णाणावरणीय-दंसणावरणीयपयडीओ सव्वपयडीणं दुभागो देसूणो त्ति सुत्तण्णहाणुववत्तीदो ।

संपहि णाणावरणीयसव्वपयडीहि अट्ठकम्मपयडिपुंजे भागे हिदे सादिरेयदो रूवाणि लब्भंति । सादिरेगपमाणमेगरूवस्स असंखेज्जदिभागो । तं जहा—णाणावरणीयपयडीसु अट्ठकम्माणं सव्वपयडिपुंजादो अवणिदासु एगा अवहारसलागा लब्भदि [१] । संपहि अवसेसादो[1] दंसणावरणीयादिसत्तकम्मपयडीओ अत्थि । पुणो तत्थ असादावेदणीयादिसेसपयडीसु पंचरूवूणमणपज्जवणाणावरणीयपयडीओ घेत्तूण दंसणावरणीयपयडीसु पक्खित्ते पक्खित्तपयडीहि सह दंसणावरणीयपयडीओ णाणावरणीयपयडीहि सरिसा होंति । अवणिदे विदिया अवहारकालसलागा लब्भदि [२] । पुणो गहिदावसेसासु[2] पयडीसु णाणावरणीयपयडिपमाणेण कीरमाणासु एगरूवस्स असंखेज्जदिभागो अवहारो उवलब्भदे, णाणावरणीयस्स पयडीसु जदि एगा अवहारकालसलागा लब्भदि तो गहिदसेसपयडीसु किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो । एदेहि सादिरेगदोरूवेहि सव्वपयडीसु ओवट्टिदासु णाणावर-

---

मात्र होकरके मनःपर्ययज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंसे असंख्यातगुणी हैं ।

शंका—वे उनसे असंख्यातगुणी हैं, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—'ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी प्रकृतियां सब प्रकृतियोंके द्वितीय भागसे कुछ कम है' इस सूत्रकी अन्यथानुपपत्तिसे वह जाना जाता है ।

अब ज्ञानावरणीयकी सब प्रकृतियोंका आठ कर्मोंके प्रकृतिपुंजमें भाग देनेपर साधिक दो रूप पाये जाते हैं । साधिकताका प्रमाण एक अङ्क का असंख्यातवाँ भाग है । वह इस प्रकारसे—आठ कर्मोंकी सब प्रकृतियोंके समूहमेंसे ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंको कम कर देनेपर एक अवहारशलाका पायी जाती है (१) । अवशेष रूपसे दर्शनावरणीय आदि शेष कर्मोंकी प्रकृतियाँ रहती हैं । फिर उन असातावेदनीय आदि शेष कर्मोंकी प्रकृतियोंमेंसे पाँच अङ्कोंसे कम मनःपर्ययज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंको ग्रहणकर दर्शनावरणीयकी प्रकृतियोंमें मिला देनेपर मिलायी हुई प्रकृतियोंके साथ दर्शनावरणीयकी प्रकृतियाँ ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंके सदृश होती हैं । [इन दर्शनावरणीयकी प्रकृतियोंके उक्त कर्म प्रकृतियोंमेंसे] कम कर देनेपर द्वितीय अवहारशलाका पायी जाती है (२) । फिर ग्रहणकी गई प्रकृतियोंसे अवशिष्ट रहीं प्रकृतियोंको ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंके प्रमाणसे करनेपर एक अंकका असंख्यातवाँ भाग मात्र अवहार पाया जाता है, क्योंकि, ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंमें यदि एक अवहारशलाका पायी जाती है तो ग्रहण की गई प्रकृतियोंसे शेष रही प्रकृतियोंमें कितनी अवहारशलका पायी जायगी, इस प्रकार प्रमाणसे फलगुणित इच्छाको अपवर्तित करनेपर एक अङ्कका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है । इन साधिक दो अङ्कोंसे सब प्रकृतियोंको अपवर्तित करनेपर ज्ञानावरणीयकी

---

१ ताप्रतौ 'अ(व)सेसादो (ओ)' इति पाठः । २ अ आ-काप्रतिषु 'गहिदावसेसाओ' ताप्रतौ 'गहिदावसेसाओ (सु)' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णीयपयडिपमाणं लब्भदि। एवं दंसणावरणीयस्स वि सादिरेगदोरूवमेत्तो भागहारो साहेयव्वो।

वेयणीय-मोहणीय-आउअ-णामा-गोद-अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ सव्वपयडीणं केवडियो भागो ॥ ५ ॥

सुगमं।

असंखेज्जदिभागो ॥ ६ ॥

सग-सगपयडीहि सव्वपयडिसमूहे भागे हिदे असंखेज्जलोगमेत्तरूवोवलंभादो। एवं पयडिअट्ठदा समत्ता।

समयपबद्धट्ठदाए ॥ ७ ॥

एदमहियारसंभालणसुत्तं सुगमं।

णाणावरणीय-दंसणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी तीसं तीसं सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ॥ ८ ॥

एत्थ एवं सुत्तसंबंधो कायव्वो। तं जहा—तीसं तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए णाणावरणीय-दंसणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी

प्रकृतियोंका प्रमाण उपलब्ध होता है। इसी प्रकार दर्शनावरणीयके भी साधिक दो अङ्क मात्र भागहारको साध लेना चाहिये।

वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय कर्मकी प्रकृतियां सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ॥ ५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

वे उनके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ ६ ॥

अपनी अपनी प्रकृतियोंका सब प्रकृतियोंके समूहमें भाग देनेपर असंख्यात लोक मात्र अङ्क पाये जाते हैं। इस प्रकार प्रकृत्यर्थता समाप्त हुई।

समयप्रबद्धार्थका अधिकार है ॥ ७ ॥

यह अधिकारका स्मरण करानेवाला सूत्र सुगम है।

तीस तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंको समयप्रबद्धार्थता से गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी मात्र ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी एक एक प्रकृति सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ॥ ८ ॥

यहाँ इस प्रकारसे सूत्रका सम्बन्ध करना चाहिये। यथा—तीस तीस सागरोपम कोड़ाकोड़ियोंको समयप्रबद्धार्थतासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो इतनी मात्र ज्ञानावरणीय और दर्शना-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवदिया होदि । एवंविहाओ णाणावरणीय-दंसणावरणीयकम्मपयडीओ सव्वपयडीणं केवडिओ भागो त्ति संबंधो कायव्वो । सेसं सुगमं ।

दुभागो देसूणो ॥ ९ ॥

एत्थ सादिरेयदोरूवमेत्तभागहारो पुव्वं व साहेयव्वो, गुणगारकयभेदेण सह सादिरेयदोरूवभागहारस्स विरोहाभावादो ।

एवं वेयणीय-मोहणीय-आउअ-णामा-गोद-अंतराइयाणं च णेयव्वं ॥ १० ॥

जहा णाणावरणीय-दंसणावरणीयाणं समयपबद्धट्ठदं सग-सगउक्कस्सट्ठिदीहि गुणेदूण पयडीणं पमाणपरूवणा कदा तहा एदेसिं कम्माणं सग-सगुक्कस्सबंधट्ठिदीहि बंधयद्धाहि य समयपबद्धट्ठदं गुणिय पयडिपमाणपरूवणा कायव्वा मंदमेहाविसिस्सबोहणट्ठं ।

णवरि विसेसो सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ॥११॥

इदि पुच्छिदे ।

असंखेज्जदिभागो ॥ १२ ॥

त्ति भाणिदव्वं[1] । एदाहि समयपबद्धट्ठदापयडीहि सव्वपयडिसमूहे भागे हिदे

वरणीय कर्मकी एक एक प्रकृति होती है । इस प्रकारकी ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं, ऐसा सम्बन्ध करना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

वे उनके साधिक द्वितीय भाग प्रमाण हैं ॥ ९ ॥

यहाँ साधिक दो अंक मात्र भागहारको पहिलेके समान सिद्ध करना चाहिये, क्योंकि, गुणकारकृत भेदके साथ साधिक दो अंक मात्र भागहारका कोई विरोध नहीं है ।

इसी प्रकार वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तरायके सम्बन्धमें जानना चाहिये ॥ १० ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीयकी समयप्रबद्धार्थताको अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितियोंसे गुणित कर प्रकृतियोंके प्रमाणकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे इन कर्मोंकी अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितियों और बन्धककालोंसे समयप्रबद्धार्थताको गुणित करके प्रकृतियोंके प्रमाणकी प्ररूपणा मन्दबुद्धि शिष्योंके प्रबोधनार्थ करनी चाहिये ।

विशेष इतना है कि वे सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ॥ ११ ॥

ऐसा पूछने पर ।

वे उनके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ १२ ॥

इस प्रकार कहलाना चाहिये, क्योंकि, इन समयप्रबद्धार्थता प्रकृतियोंका सब समूहमें भाग

---

१ प्रतिषु 'त्ति भाणिदव्वं' सूत्रे सम्मिलितम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जरूवोवलंभादो । एवं समयपबद्धट्ठदा समत्ता ।

खेत्तपच्चासे त्ति ॥ १३ ॥

एदमहियारसंभालणवयणं ।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी जो मच्छो जोयणसहस्सियो सयंभुरमणसमुद्दस्स बाहिरिल्लए तडे अच्छिदो, वेयणसमुग्घादेण समुहदो, काउलेस्सियाए लग्गो, पुणरवि मारणंतियसमुग्घादेण समुहदो, तिण्णि विग्गहकंडयाणि काऊण से काले अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जिहदि त्ति खेत्तपच्चासएण[1] गुणिदाओ सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ॥ १४ ॥

जो मच्छो उववज्जिहदि त्ति एदेण खेत्तपच्चासो परूविदो । एदेण खेत्तपच्चासएण गुणिदाओ समयपबद्धट्ठदाओ पयडीओ णाणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी एत्तिया होदि । पुणो एवंविहाओ णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ सव्वपयडीणं केवडिओ भागो त्ति सुत्तसंबंधो कायव्वो । सेसं सुगमं ।

दुभागो देसूणो[2] ॥ १५ ॥

देनेपर असंख्यात अंक पाये जाते हैं । इस प्रकार समप्रबद्धार्थता समाप्त हुई ।

क्षेत्रप्रत्यास अनुयोगद्वारका अधिकार है ॥ १३ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण करानेवाला है ।

ज्ञानावरण कर्मकी एक एक प्रकृति—जो मत्स्य एक हजार योजन प्रमाण अवगाहनासे युक्त होता हुआ स्वम्भूरमण समुद्रके बाहिरी तटपर स्थित है, वेदनासमुद्घातको प्राप्त है, काकलेश्यासे संलग्न है, फिरसे मारणान्तिकसमुद्घातसे समुद्घातको प्राप्त है, तीन विग्रहकाण्डकोंको करके अनन्तर समयमें नारकियोंमें उत्पन्न होगा, इस क्षेत्रप्रत्याससे समयप्रबद्धार्थताप्रकृतियोंको गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी होती है । ये प्रकृतियां सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ॥ १४ ॥

'जो मच्छो' यहाँसे लेकर 'उववज्जिहदि' तक इस सूत्रद्वारा क्षेत्रप्रत्यासकी प्ररूपणा की गई है । इस क्षेत्रप्रत्याससे गुणित समयप्रबद्धार्थता प्रकृतियाँ जितनी होती हैं इतनी मात्र ज्ञानावरणीय कर्मकी एक एक प्रकृति होती है । इस प्रकारकी ज्ञानावरणीय प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं, ऐसा सूत्रका सम्बन्ध करना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

वे कुछ कम उनके द्वितीय भाग प्रमाण हैं ॥ १५ ॥

---

१ अप्रतौ 'पच्चासेएगुण', आ-का-मप्रतिषु 'पच्चासेएण', ताप्रतौ 'पच्चासेण' इति पाठः ।
२ अ-आ काप्रतिषु 'देसूणा' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुदो ? एत्थतणगुणगारे सव्वपयडीणं संते वि सव्वपयडीओ णाणावरणीयपयडिपमाणेण अवहिरिज्जमाणाओ सादिरेयदोरूवमेत्त[1]अवहारसलागुवलंभणिमित्ताओ होंति त्ति।

एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ॥ १६ ॥

एदेसिं कम्माणं जहा णाणावरणीयस्स खेत्तपच्चासपयडिपरूवणा कदा तहा भागाभागो च कायव्वो।

णवरि मोहणीय-अंतराइयस्स सव्वपयडीणं केवडियो भागो ॥ १७ ॥

इदि पुच्छिदे—

असंखेज्जदिभागो ॥ १८ ॥

कारणं सुगमं। वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ[2]—

वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केक्का पयडी अण्णदरस्स केवलिस्स केवलसमुग्घादेण समुहदस्स सव्वलोगं गयस्स खेत्तपच्चासएण गुणिदाओ सव्वपयडीणं केवडिओ भागो ॥ १९ ॥

कारण कि सब प्रकृतियोंको ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियोंके प्रमाणसे अपहृत करनेपर वे साधिक दो अङ्क प्रमाण अवहारशलाकाओंकी उपलब्धिमें निमित्त होती हैं।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ १६ ॥

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीय कर्मकी क्षेत्रप्रत्यासप्रकृतियोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे इन तीन कर्मोंके भागाभागकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये।

विशेष इतना है—मोहनीय और अन्तरायकी प्रकृत प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ॥ १७ ॥

ऐसा पूछनेपर—

वे उनके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ १८ ॥

इसका कारण सुगम है। अब वेदनीय कर्मकी प्रकृतियाँ बतलाते हैं—

केवलिसमुद्घातसे समुद्घातको प्राप्त होकर सर्व लोकको प्राप्त हुए अन्यतर केवलीके इस क्षेत्र प्रत्याससे समयप्रबद्धार्थकता प्रकृतियोंको गुणित करनेपर जो प्राप्त हो उतनी मात्र वेदनीय कर्मकी एक एक प्रकृति होती है। ये प्रकृतियाँ सब प्रकृतियोंके कितने भाग प्रमाण हैं ॥ १९ ॥

---

१ अप्रतौ-रूवमेत्तो इति पाठः। २ प्रतिषु 'वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ' इति पाठः अनन्तरसूत्रे सम्मिलितम्।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सुगमं ।

असंखेज्जदिभागो ॥ २० ॥

सुगमं ।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ॥ २१ ॥

जहा वेयणीयस्स भागाभागो परूविदो तहा एदेसिं तिण्णं कम्माणं परूवेदव्वो । एवं खेत्तपच्चासए त्ति अणिओगद्दारे समत्ते वेयणाभागाभागविहाणे त्ति समत्त-मणियोगद्दारं ।

यह सूत्र सुगम है ।

वे उनके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ २० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्र कर्मके सम्बन्धमें कहना चाहिये ॥ २१ ॥

जिस प्रकार वेदनीय कर्मके भागाभागकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार इन तीन कर्मोंके भागाभागकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

इस प्रकार क्षेत्रप्रत्यास अनुयोगद्वारके समाप्त होनेपर वेदनाभागाभागविधान यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयणअप्पाबहुगाणियोगद्दारं

वेयणअप्पाबहुए त्ति ॥ १ ॥

सुगमं ।

तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति— पयडिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासए त्ति ॥ २ ॥

एवं तिण्णि चेव एत्थ अणियोगद्दाराणि होंति, अण्णेसिमसंभवादो ।

पयडिअट्ठदाए सव्वत्थोवा गोदस्स कम्मस्स पयडीओ ॥ ३ ॥

कुदो ? दोपरिमाणत्तादो[1] ।

वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ तत्तियाओ[2] चेव ॥ ४ ॥

सादासादभेएण दुब्भावुवलंभादो ।

आउअस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ॥ ५ ॥

को गुणगारो ? दो रूवाणि ।

अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥ ६ ॥

केत्तियमेत्तेण ? सगचदुब्भागमेत्तेण ।

मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ॥ ७ ॥

को गुणगारो ? बे-पंचभागूणछरूवाणि ।

वेदनाअल्पबहुत्वका अधिकार है ॥ १ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उसमें ये तीन अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं—प्रकृत्यर्थता, समयप्रबद्धार्थता और क्षेत्रप्रत्यास ॥ २ ॥

इस प्रकार यहाँ तीन ही अनुयोगद्वार हैं, क्योंकि, इनसे अन्य अनुयोगद्वारोंकी यहाँ सम्भावना नहीं है ।

प्रकृत्यर्थताकी अपेक्षा गोत्र कर्मकी प्रकृतियाँ सबसे स्तोक हैं ॥ ३ ॥

क्योंकि, वे दो अङ्क प्रमाण हैं ।

वेदनीय कर्मकी भी उतनी ही प्रकृतियाँ हैं ॥ ४ ॥

क्योंकि, साता व असाताके भेदसे उनकी भी दो संख्या पायी जाती है ।

आयु कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी हैं ॥ ५ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार दो का अङ्क है ।

अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ ६ ॥

कितने मात्रसे वे अधिक हैं ? वे अपने चतुर्थ भाग मात्रसे अधिक हैं ।

मोहनीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी हैं ॥ ७ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार दो बटे पाँच (२/५) भागसे कम छह अङ्क है (५ × ५ ३/५ = २८) ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'कुदो परिमाणत्तादो' इति पाठः । २ अ-आ-काप्रतिषु 'तत्तियो' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णामस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ ८ ॥

एत्थ गुणगारो असंखेज्जा लोगा ।

दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ ९ ॥

एत्थ वि गुणगारो असंखेज्जा लोगा ।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥ १० ॥

केत्तियमेत्तो विसेसो ? असंखेज्जा कप्पा । एवं पगदिअट्ठदा समत्ता ।

समयपबद्धट्ठदाए सव्वत्थोवा आउअस्स कम्मस्स पयडीओ ॥ ११ ॥

कुदो ? अंतोमुहुत्तपमाणत्तादो ।

गोदस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ १२ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥ १३ ॥

केत्तियमेत्तो विसेसो ? पण्णारससागरोवमकोडाकोडिमेत्तो ।

अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीयो संखेज्जगुणाओ ॥ १४ ॥

को गुणगारो ? सादिरेयतिण्णिरूवाणि ।

मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ ॥ १५ ॥

एत्थ गुणगारो संखेज्जा समया ।

नामकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ ८ ॥

यहाँ गुणकारका प्रमाण असंख्यात लोक है ।

दर्शनावरणीयकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ ९ ॥

यहाँ भी गुणकार असंख्यात लोक प्रमाण है ।

ज्ञानावरणीयकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ १० ॥

विशेष कितना है ? वह असंख्यात कल्प प्रमाण है । इस प्रकार प्रकृत्यर्थता समाप्त हुई ।

समयप्रबद्धार्थताकी अपेक्षा आयुकर्मकी प्रकृतियाँ सबसे स्तोक हैं ॥ ११ ॥

क्योंकि, वे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण हैं ।

गोत्रकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ ॥ १२ ॥

गुणकार क्या है ? वह पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है ।

वेदनीयकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ १३ ॥

विशेषका प्रमाण कितना है ? उसका प्रमाण पन्द्रह कोड़ाकोड़ी सागरोपम है ।

अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी है ॥ १४ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार साधिक तीन अङ्क है ।

मोहनीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी हैं ॥ १५ ॥

यहाँ गुणकार संख्यात समय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णामस्स कम्मस्स पयडीयो असंखेज्जगुणाओ[1] ॥ १६ ॥

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा ।

दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ १७ ॥

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा ।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥ १८ ॥

केत्तियमेत्तो विसेसो ? असंखेज्जा कप्पा । एवं समयपबद्धट्ठदा त्ति समत्ता ।

खेत्तपच्चासए त्ति सव्वत्थोवा अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीयो ॥ १९ ॥

कुदो ? पंचगुणतीससागरोवमकोडाकोडिगुणिदमहामच्छुक्कस्सखेत्तपमाणत्तादो ।

मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीयो संखेज्जगुणाओ ॥ २० ॥

कुदो ? णवसयपंचाणउदिसागरोवमकोडाकोडीहि गुणिदमहामच्छुक्कस्सखेत्तमेत्त-पयडित्तादो । को गुणगारो ? सादिरेयरूवाणि ।

आउअस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ २१ ॥

कुदो ? अंतोमुहुत्तगुणिदघणलोगपमाणत्तादो । को गुणगारो ? जगपदरस्स असंखेज्जदिभागो ।

नामकर्मकी प्रकृतियां उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ १६ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है ।

दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ १७ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है ।

ज्ञानावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ १८ ॥

विशेष कितना है ? वह असंख्यात कल्पों प्रमाण है । इस प्रकार समयप्रबद्धार्थता समाप्त हुई ।

क्षेत्रप्रत्यासकी अपेक्षा अन्तराय कर्मकी प्रकृतियाँ सबसे स्तोक हैं ॥ १९ ॥

क्योंकि, वे पाँचगुणे तीस (३० × ५) कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंसे गुणित महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रके बराबर हैं ।

मोहनीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे संख्यातगुणी हैं ॥ २० ॥

कारण कि वे प्रकृतियाँ नौ सौ पंचानवे कोड़ाकोड़ी सागरोपमोंसे गुणित महामत्स्यके उत्कृष्ट क्षेत्रके बराबर हैं । गुणकार क्या है ? गुणकार साधिक [छह] अंक हैं ।

आयुकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ २१ ॥

क्योंकि, वे अन्तर्मुहूर्तसे गुणित घनलोक प्रमाण हैं । गुणकार क्या है ? वह जगप्रतरका असंख्यातवाँ भाग है ।

---

१ अ-आ-काप्रतिषु 'संखेज्ज', ताप्रतौ '(अ) संखेज्ज' इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोदस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ २२ ॥

को गुणगारो ? अंतोमुहुत्तोवट्टिदतीससागरोवमकोडाकोडीओ ।

वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥ २३ ॥

केत्तियमेत्तो विसेसो ? असंखेज्जलोगमेत्तो ।

णामस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ २४ ॥

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा ।

दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ ॥ २५ ॥

को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा ।

णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ ॥ २६ ॥

केत्तियमेत्तो विसेसो ? पदरस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो । एवं खेत्तपच्चासो समत्तो ।

एवं वेयणअप्पाबहुगाणिओगद्दारे समत्ते वेयणाखंडो समत्तो[1] ।

गोत्रकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ २२ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार अन्तर्मुहूर्तसे अपवर्तित तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम है ।

वेदनीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ २३ ॥

विशेष कितना है ? वह असंख्यात लोक प्रमाण है ।

नामकर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ २४ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है ।

दर्शनावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं ॥ २५ ॥

गुणकार क्या है ? गुणकार असंख्यात लोक है ।

ज्ञानावरणीय कर्मकी प्रकृतियाँ उनसे विशेष अधिक हैं ॥ २६ ॥

विशेष कितना है ? वह प्रतरके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । इस प्रकार क्षेत्रप्रत्यास समाप्त हुआ ।

इस प्रकार वेदनाअल्पबहुत्व अनुयोगद्वारके समाप्त होनेपर
वेदनाखण्ड समाप्त हुआ ।

---

१ प्रतिषु 'वेयणाखंड समत्ता' इति पाठः । ततश्च निम्नपाठः उपलभ्यते—''णमो णाणाराहणाए, णमो दंसणाराहणाए, णमो चरित्ताराहणाए, णमो तवाराहणाए, णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं, णमो भयवदो महदिमहावीरवड्ढमाणबुद्धरिसिस्स, णमो भयवदो गोदमसामिस्स, नमः सकलविमलकेवलज्ञानावभासिने, नमो वीतरागाय महात्मने, नमो वर्द्धमानभट्टारकाय । वेदनाखण्डं समाप्तम् । अबोधे बोधं यो जनयति सदा शिष्यकुमुदे, प्रभूय प्रह्लादी दुरितपरितापोपशमनः । तपोवृत्तिर्यस्य स्फुरति जगदानन्दजननी, जिनध्यानासक्तो जयति कुलचन्द्रो मुनिरयम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयणाभावविहाणसुत्ताणि

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१	वेयणाभावविहाणे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति।	१
२	पदमीमांसा सामित्तमप्पाबहुए त्ति	३
३	पदमीमांसाए णाणावरणीयवेयणा भावदो किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा किं जहण्णा किमजहण्णा।	४
४	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा जहण्णा वा अजहण्णा वा।	,,
५	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	१२
६	सामित्तं दुविहं जहण्णपदे उक्कस्सपदे।	,,
७	सामित्तेण उक्कस्सपदे णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स ?	१३
८	अण्णदरेण पंचिंदिएण सण्णिमिच्छाइट्ठिणा सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तगदेण सागारुवजोगेण जागारेण णियमा उक्कस्ससंकिलिट्ठेण बंधल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि।	१३
९	तं एइंदियस्स वा बीइंदियस्स वा तीइंदियस्स वा चउरिंदियस्स वा पंचिंदियस्स वा सण्णिस्स वा असण्णिस्स वा बादरस्स वा सुहुमस्स वा पज्जत्तस्स वा अपज्जत्तस्स वा अण्णदरस्स जीवस्स अण्णदवियाए गदीए वट्टमाणयस्स तस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा।	१४
१०	तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा।	१५
११	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं।	१६
१२	समित्तेण उक्कस्सपदे वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स।	,,
१३	अण्णदरेण खवगेण सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेण चरिमसमयबद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि।	,,
१४	तं खीणकसायवीदरागछदुमत्थस्स वा सजोगिकेवलिस्स वा तस्स वेयणा भावदो उक्कस्सा।	१७
१५	तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा।	१८
१६	एवं णामा-गोदाणं।	,,
१७	सामित्तेण उक्कस्सपदे आउववेयणा भावदो उक्कस्सिया कस्स।	१९
१८	अण्णदरेण अप्पमत्तसंजदेण सागारजागारतप्पाओग्गविसुद्धेण बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि।	,,
१९	तं संजदस्स वा अणुत्तरविमाणवासिदेवस्स वा तस्स आउववेयणा भावदो उक्कस्सा।	२०
२०	तव्वदिरित्तमणुक्कस्सा।	२१
२१	सामित्तेण जहण्णपदे णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स।	२२
२२	अण्णदरस्स खवगस्स चरिमसमयछदुमत्थस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा।	२२
२३	तव्वदिरित्तमजहण्णा।	२३
२४	एवं दंसणावरणीय–अंतराइयाणं।	,,
२५	सामित्तेण जहण्णपदे वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स।	,,
२६	अण्णदरखवगस्स चरिमसमयभवसिद्धियस्स असादावेयणीयस्स वेदयमाणस्स तस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा।	,,
२७	तव्वदिरित्तमजहण्णा।	२६
२८	सामित्तेण जहण्णपदे मोहणीयवयणा भावदो जहण्णिया कस्स	,,
२९	अण्णदरस्स खवगस्स चरिमसमयसकसाइस्स तस्स मोहणीयवयणा भावदो जहण्णा।	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
३०	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	२६
३१	सामित्तेण जहण्णपदे आउववेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ।	,,
३२	अण्णदरेण मणुस्सेण पंचिंदियतिरिक्खजोणिएण वा परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण अपज्जत्ततिरिक्खाउअं बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्मं अत्थि तस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा ।	२७
३३	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	२८
३४	सामित्तेण जहण्णपदे णामवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ।	२८
३५	अण्णदरेण सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएण हदसमुप्पत्तियकम्मेण परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि तस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा ।	,,
३६	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	२९
३७	सामित्तेण जहण्णपदे गोदवेयणा भावदो जहण्णिया कस्स ।	,,
३८	अण्णदरेण बादरतेउ-वाउजीवेण सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण सागार-जागार-सव्वविसुद्धेण हदसमुप्पत्तियकम्मेण उच्चागोदमुव्वेल्लिदूण णीचागोदं बद्धल्लयं जस्स तं संतकम्ममत्थि तस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा ।	३०
३९	तव्वदिरित्तमजहण्णा ।	,,
४०	अप्पाबहुए त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि—जहण्णपदे उक्कस्सपदे जहण्णुक्कस्सपदे ।	३१
४१	सव्वत्थोवा मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया ।	,,
४२	अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३२
४३	णाणावरणीय-दंसणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ।	३३
४४	आउववेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३४
४५	गोदवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	,,
४६	णामवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३५
४७	वेदणीयवेदणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	,,
४८	उक्कस्सपदेण सव्वत्थोवा आउववेयणा भावदो उक्कस्सिया ।	३६
४९	णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो उक्कस्सियाओ तिण्णि वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ।	३७
५०	मोहणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	,,
५१	णामा—गोदवेयणाओ भावदो उक्कस्सियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ।	,,
५२	वेदणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	३८
५३	जहण्णुक्कस्सपदेण सव्वत्थोवा मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया ।	,,
५४	अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	,,
५५	णाणावरणीय-दंसणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ।	३८
५६	आउअवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	,,
५७	णामवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	३९
५८	गोदवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	,,
५९	वेदणीयवेयणा भावदो जहण्णिया अणंतगुणा ।	,,
६०	आउअवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
६१	णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइय-वेयणा भावदो उक्कस्सिया तिण्णि वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ।	३९
६२	मोहणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	,,
६३	णामा-गोदवेयणाओ भावदो उक्कस्सियाओ दो वि तुल्लाओ अणंतगुणाओ ।	,,
६४	वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सिया अणंतगुणा ।	४०
६५	एत्तो उक्कस्सओ चउसट्ठिपदियो महादंडओ कायव्वो भवदि ।	४४
६६	सव्वतिव्वाणुभागं सादावेदणीयं ।	४५
६७	जसगित्ती उच्चागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	,,
६८	देवगदी अणंतगुणहीणा ।	४६
६९	कम्मइयसरीरमणंतगुणहीणं ।	,,
७०	तेयासरीरमणंतगुणहीणं ।	,,
७१	आहारसरीरमणंतगुणहीणं ।	४७
७२	वेउव्वियसरीरमणंतगुणहीणं ।	,,
७३	मणुसगदी अणंतगुणहीणा ।	४८
७४	ओरालियसरीरमणंतगुणहीणं ।	,,
७५	मिच्छत्तमणंतगुणहीणं ।	,,
७६	केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं असादवेदणीयं वीरियंतराइयं च चत्तारि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	४९
७७	अणंताणुबंधिलोभो अणंतगुणहीणो ।	५०
७८	माया विसेसहीणा ।	५०
७९	कोधो विसेसहीणो ।	५०
८०	माणो विसेसहीणो ।	,,
८१	संजलणाए लोभो अणंतगुणहीणो ।	,,
८२	माया विसेसहीणा ।	५१
८३	कोधो विसेसहीणो ।	,,
८४	माणो विसेसहीणो ।	,,
८५	पच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंतगुणहीणो ।	,,
८६	माया विसेसहीणा ।	५२
८७	कोधो विसेसहीणो ।	,,
८८	माणो विसेसहीणो ।	५२
८९	अपच्चक्खाणावरणीयलोभो अणंतगुणहीणो ।	५२
९०	माया विसेसहीणा ।	५३
९१	कोधो विसेसहीणो ।	,,
९२	माणो विसेसहीणो ।	,,
९३	आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	,,
९४	चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणहीणं ।	५४
९५	सुदणाणावरणीयमचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च तिण्णि [वि तुल्लाणि] अणंतगुणहीणाणि ।	५४
९६	ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाहंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	५६
९७	मणपज्जवणाणावरणीयं थीणगिद्धी दाणंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	,,
९८	णवुंसयवेदो अणंतगुणहीणो ।	,,
९९	अरदी अणंतगुणहीणा ।	,,
१००	सोगो अणंतगुणहीणो ।	५७
१०१	भयमणंतगुणहीणं ।	,,
१०२	दुगुंछा अणंतगुणहीणा ।	,,
१०३	णिद्दाणिद्दा अणंतगुणहीणा ।	,,
१०४	पयलापयला अणंतगुणहीणा ।	,,
१०५	णिद्दा अणंतगुणहीणा ।	,,
१०६	पयला अणंतगुणहीणा ।	५८
१०७	अजसकित्ती णीचागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणहीणाणि ।	,,
१०८	णिरयगई अणंतगुणहीणा ।	,,
१०९	तिरिक्खगई अणंतगुणहीणा ।	,,
११०	इत्थिवेदो अणंतगुणहीणो ।	,,
१११	पुरिसवेदो अणंतगुणहीणो ।	,,
११२	रदी अणंतगुणहीणा ।	५९
११३	हस्समणंतगुणहीणं ।	,,
११४	देवाउअमणंतगुणहीणं ।	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
११५	णिरयाउअमणंतगुणहीणं।	५६
११६	मणुसाउअमणंतगुणहीणं।	,,
११७	तिरिक्खाउअमणंतगुणहीणं।	,,
११८	एत्तो जहण्णओ चउसट्ठिपदिओ महादंडओ कायव्वो भवदि।	६५
११९	सव्वमंदाणुभागं लोभसंजलणं।	६५
१२०	मायासंजलणमणंतगुणं।	,,
१२१	माणसंजलणमणंतगुणं।	६६
१२२	कोधसंजलणमणंतगुणं।	,,
१२३	मणपज्जवणाणावरणीयं दाणंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि।	,,
१२४	ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाभंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि।	,,
१२५	सुदणाणावरणीयं अचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च तिण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि।	६७
१२६	चक्खुदंसणावरणीयमणंतगुणं।	,,
१२७	आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि।	,,
१२८	विरियंतराइयमणंतगुणं।	,,
१२९	पुरिसवेदो अणंतगुणो।	,,
१३०	हस्समणंतगुणं।	६८
१३१	रदी अणंतगुणा।	,,
१३२	दुगुंछा अणंतगुणा।	,,
१३३	भयमणंतगुणं।	,,
१३४	सोगो अणंतगुणो।	,,
१३५	अरदी अणंतगुणा।	,,
१३६	इत्थिवेदो अणंतगुणो।	६९
१३७	णवुंसयवेदो अणंतगुणो।	,,
१३८	केवलणाणावरणीयं केवलदंसणावरणीयं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि।	,,
१३९	पयला अणंतगुणा।	
१४०	णिद्दा अणंतगुणा।	७०
१४१	पच्चक्खाणावरणीयमाणो अणंतगुणो।	,,
१४२	कोधो विसेसाहियो।	,,

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१४३	माया विसेसाहिया।	७०
१४४	लोभो विसेसाहिओ।	,,
१४५	अपच्चक्खाणावरणीयमाणो अणंतगुणो।	,,
१४६	कोधो विसेसाहिओ।	,,
१४७	माया विसेसाहिया।	७१
१४८	लोभो विसेसाहिओ।	,,
१४९	णिद्दाणिद्दा अणंतगुणा।	,,
१५०	थीणगिद्धी अणंतगुणा।	,,
१५१	पयलापयला अणंतगुणा।	,,
१५२	अणंताणुबंधिमाणो अणंतगुणो।	,,
१५३	कोधो विसेसाहिओ।	७२
१५४	माया विसेसाहिया।	,,
१५५	लोभो विसेसाहिओ।	,,
१५६	मिच्छत्तमणंतगुणं।	,,
१५७	ओरालियसरीरमणंतगुणं	,,
१५८	वेउव्वियसरीरमणंतगुणं।	७३
१५९	तिरिक्खाउअमणंतगुणं।	,,
१६०	मणुसाउअमणंतगुणं।	,,
१६१	तेजइयसरीरमणंतगुणं।	,,
१६२	कम्मइयसरीरमणंतगुणं।	,,
१६३	तिरिक्खगदी अणंतगुणा।	,,
१६४	णिरयगदी अणंतगुणा।	,,
१६५	मणुसगदी अणंतगुणा।	७४
१६६	देवगदी अणंतगुणा।	,,
१६७	णीचागोदमणंतगुणं।	,,
१६८	अजसकित्ती अणंतगुणा।	,,
१६९	असादावेदणीयमणंतगुणं।	,,
१७०	जसकित्ती उच्चागोदं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि।	७५
१७१	सादावेदणीयमणंतगुणं।	,,
१७२	णिरयाउअमणंतगुणं।	,,
१७३	देवाउअमणंतगुणं।	,,
१७४	आहारसरीरमणंतगुणं।	,,

पढमा चूलिया

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१७५	सव्वत्थोवो दंसणमोहउवसामयस्स गुणसेडिगुणो।	८०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१७६	संजदासंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८०
१७७	अधापवत्तसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८१
१७८	अणंताणुबंधी विसंजोएंतस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८२
१७९	दंसणमोहक्खवगस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८३
१८०	कसायउवसामगस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	,,
१८१	उवसंतकसायवीयरायछदुमत्थस्स-गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८४
१८२	कसायखवगस्स गुणसेडगुणो असंखेज्जगुणो ।	,,
१८३	खीणकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	,,
१८४	अधापवत्तकेवलिसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	,,
१८५	जोगणिरोधकेवलिसंजदस्स गुणसेडिगुणो असंखेज्जगुणो ।	८५
१८६	सव्वत्थोवो जोगणिरोधकेवलिसंजदस्स गुणसेडिकालो ।	,,
१८७	अधापवत्तकेवलिसंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१८८	खीणकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१८९	कसायखवगस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	८६
१९०	उवसंतकसायवीयरायछदुमत्थस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	८६
१९१	कसायउवसामयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१९२	दंसणमोहक्खवयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१९३	अणंताणुबंधिविसंजोएंतस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१९४	अधापवत्तसंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	८६
१९५	संजदासंजदस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,
१९६	दंसणमोहउवसामयस्स गुणसेडिकालो संखेज्जगुणो ।	,,

विदिया चूलिया

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१९७	एत्तो अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणपरूवणदाए तत्थ इमाणि बारस अणियोगद्दाराणि ।	८७
१९८	अविभागपडिच्छेदपरूवणा ट्ठाणपरूवणा अंतरपरूवणा कंदयपरूवणा ओजजुम्मपरूवणा छट्ठाणपरूवणा हेट्ठाट्ठाणपरूवणा समयपरूवणा वड्ढिपरूवणा जवमज्झपरूवणा पज्जवसाणपरूवणा अप्पाबहुए त्ति ।	८८
१९९	अविभागपडिच्छेदपरूवणदाए एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि केवडिया अविभागपडिच्छेदा ? अणंता अविभागपडिच्छेदा सव्वजीवेहि अणंतगुणा । एवदिया अविभागपडिच्छेदा ।	९१
२००	ठाणपरूवणदाए केवडियाणि ट्ठाणाणि ? असंखेज्जलोगट्ठाणाणि । एवदियाणि ट्ठाणाणि ।	१११
२०१	अंतरपरूवणदाए एक्केक्कस्स ट्ठाणस्स केवडियमंतरं ? सव्वजीवेहि अणंतगुणं । एवडियमंतरं ।	११४
२०२	कंदयपरूवणदाए अत्थि अणंतभागपरिवड्ढिकंदयं असंखेज्जभागपरिवड्ढिकंदयं संखेज्जभागपरिवड्ढिकंदयं संखेज्जगुणपरिवड्ढिकंदयं असंखेज्जगुणपरिवड्ढिकंदयं अणंतगुणपरिवड्ढिकंदयं ।	१२८
२०३	ओजजुम्मपरूवणदाए अविभागपडिच्छेदाणि कदजुम्माणि, ट्ठाणाणि कदजुम्माणि, कंदयाणि कदजुम्माणि ।	१३४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२०४	छट्ठाणपरूवणदाए अणंतभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए [वड्ढिदा ?] सव्वजीवेहि अणंतभागपरिवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	१३५
२०५	असंखेज्जभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए।	१५१
२०६	असंखेज्जलोगभागपरिवड्ढीए । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२०७	संखेज्जभागपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए।	१५४
२०८	जहण्णयस्स असंखेज्जयस्स रूवूणयस्स संखेज्जभागपरिवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२०९	संखेज्जगुणपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए।	१५५
२१०	जहण्णयस्स असंखेज्जयस्स रूवूणयस्स संखेज्जगुणपरिवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२११	असंखेज्जगुणपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए।	१५६
२१२	असंखेज्जलोगगुणपरिवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२१३	अणंतगुणपरिवड्ढी काए परिवड्ढीए ।	१५७
२१४	सव्वजीवेहि अणंतगुणपरिवड्ढी । एवदिया परिवड्ढी ।	,,
२१५	हेट्ठाट्ठाणपरूवणदाए अणंतभागब्भहियं कंदयं गंतूण असंखेज्जभागब्भहियं ट्ठाणं ।	१६३
२१६	असंखेज्जभागब्भहियं कंदयं गंतूण संखेज्जभागब्भहियं ट्ठाणं ।	१६४
२१७	संखेज्जभागब्भहियं कंडयं गंतूण संखेज्जगुणब्भहियं ट्ठाणं ।	१६५
२१८	संखेज्जगुणब्भहियं कंदयं गंतूण असंखेज्जगुणब्भहियं ट्ठाणं ।	,,
२१९	असंखेज्जगुणब्भहियं कंडयं गंतूण अणंतगुणब्भहियं ट्ठाणं ।	,,
२२०	अणंतभागब्भहियाणं कंडयवग्गं कंडयं च गंतूण संखेज्जभागब्भहियट्ठाणं ।	१६६
२२१	असंखेज्जभागब्भहियाणं कंदयवग्गं कंदयं च गंतूण संखेज्जगुणब्भहियट्ठाणं ।	१६७
२२२	संखेज्जभागब्भहियाणं कंदयवग्गं कंदयं च गंतूण असंखेज्जगुणब्भहियट्ठाणं ।	१६७
२२३	संखेज्जगुणब्भहियाणं कंदयवग्गं कंदयं च गंतूण अणंतगुणब्भहियं ट्ठाणं ।	१६८
२२४	संखेज्जगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंदयघणो बेकंदयवग्गा कंदयं च ।	,,
२२५	असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो असंखेज्जभागब्भहियाणं कंदयघणो बेकंदयवग्गा कंदयं च ।	१६९
२२६	अणंतगुणस्स हेट्ठदो संखेज्जभागब्भहियाणं कंदयघणो बेकंदयवग्गा कंदयं च ।	,,
२२७	असंखेज्जगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंदयवग्गावग्गो तिण्णिकंदयघणा तिण्णिकंदयवग्गा कंदयं च ।	२००
२२८	अणंतगुणस्स हेट्ठदो असंखेज्जभागब्भहियाणं कंदयवग्गावग्गो तिण्णि कंदयघणा तिण्णि कंदयवग्गा कंदयं च ।	२०१
२२९	अणंतगुणस्स हेट्ठदो अणंतभागब्भहियाणं कंदयो पंचहदो चत्तारि कंदयवग्गावग्गा छकंदयघणा चत्तारि कंदयवग्गा कंदयं च ।	,,
२३०	समयपरूवणदाए चदुसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।	२०२
२३१	पंचसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।	२०३
२३२	एवं छसमइयाणि सत्तसमइयाणि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।	,,
२३३	पुणरवि सत्तसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा ।	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२३४	एवं छसमइयाणि पंचसमइयाणि चदुसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा।	२०४
२३५	उवरि तिसमइयाणि बिसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जा लोगा।	२०५
२३६	एत्थ अप्पाबहुअं।	,,
२३७	सव्वत्थोवाणि अट्ठसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि।	,,
२३८	दोसु वि पासेसु सत्तसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि दो वि तुल्लाणि असंखेज्जगुणाणि।	,,
२३९	एवं छसमइयाणि पंचसमइयाणि चदुसमइयाणि।	२०६
२४०	उवरि तिसमइयाणि।	,,
२४१	बिसमइयाणि अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	२०७
२४२	सुहुमतेउक्काइया पवेसणेण असंखेज्जा लोगा।	२०८
२४३	अगणिकाइया असंखेज्जगुणा।	,,
२४४	कायट्ठिदी असंखेज्जगुणा।	,,
२४५	अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	,,
२४६	वड्ढिपरूवणदाए अत्थि अणंतभागवड्ढि-हाणी असंखेज्जभागवड्ढिहाणी संखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणी अणंतगुणवड्ढि-हाणी।	२०९
२४७	पंचवड्ढि-पंचहाणीओ केवचिरं कालादो होंति ?	,,
२४८	जहण्णेण एगसमओ	२१०
२४९	उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो।	,,
२५०	अणंतगुणवड्ढि-हाणीयो केवचिरं कालादो होंति।	,,
२५१	जहण्णेण एगसमओ।	,,
२५२	उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।	२११
२५३	जवमज्झपरूवणदाए अणंतगुणवड्ढी अणंतगुणहाणी च जवमज्झं।	२१२
२५४	पज्जवसाणपरूवणदाए अणंतगुणस्स उवरि अणंतगुणं भविस्सदि त्ति पज्जवसाणं।	२१३
२५५	अप्पाबहुए त्ति तत्थ इमाणि दुवे अणियोगद्दाराणि अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा।	२१४
२५६	तत्थ अणंतरोवणिधाए सव्वत्थोवाणि अणंतगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि	,,
२५७	असंखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	,,
२५८	संखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	,,
२५९	संखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	२१५
२६०	असंखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	२१६
२६१	अणंतभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	,,
२६२	परंपरोवणिधाए सव्वत्थोवाणि अणंतभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि।	२१७
२६३	असंखेज्जभागब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	,,
२६४	संखेज्जभागब्भहियट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि।	,,
२६५	संखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि।	२१८
२६६	असंखेज्जगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	,,
२६७	अणंतगुणब्भहियाणि ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।	,,

तदिया चूलिया

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२६८	जीवसमुदाहारे त्ति तत्थ इमाणि अट्ठ अणियोगद्दाराणि—एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमो णिरंतरट्ठाणजीव-	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
	पमाणाणुगमो सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमो णाणाजीवकालपमाणाणुगमो वड्ढिपरूवणा जवमज्झपरूपणा फोसणपरूवणा अप्पाबहुए त्ति ।	२४१
२६९	एयट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्हि जीवा जदि होंति एक्को वा दो वा तिण्णि वा जाव उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।	२४२
२७०	णिरंतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण जीवेहि अविरहिदट्ठाणाणि एक्को वा दो वा तिण्णि वा उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।	२४४
२७१	सांतरट्ठाणजीवपमाणाणुगमेण जीवेहि विरहिदाणि ट्ठाणाणि एक्को वा दो वा तिण्णि वा उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ।	२४५
२७२	णाणाजीवकालपमाणाणुगमेण एक्केक्कम्हि ट्ठाणम्मि णाणाजीवा केवचिरं कालादो होंति ।	,,
२७३	जहण्णेण एगसमओ ।	२४६
२७४	उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।	,,
२७५	वड्ढिपरूवणदाए तत्थ इमाणि दुवे अणियोगद्दाराणि अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा ।	,,
२७६	अणंतरोवणिधाए जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे थोवा जीवा	२४७
२७७	विदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा विसेसाहिया ।	२४८
२७८	तदिए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा विसेसाहिया ।	२४९
२७९	एवं विसेसाहिया विसेसाहिया जाव जवमज्झं ।	२५०
२८०	तेण परं विसेसहीणा ।	२५५
२८१	एवं विसेसहीणा विसेसहीणा जाव उक्कस्सअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति ।	,,
२८२	परंपरोवणिधाए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणजीवेहिंतो तत्तो असंखेज्जलोगं गंतूण दुगुणवड्ढिदा ।	२६३
२८३	एवं दुगुणवड्ढिदा जाव जवमज्झं ।	२६४
२८४	तेण परमसंखेज्जलोगं गंतूण दुगुणहीणा	,,
२८५	एवं दुगुणहीणा जाव उक्कस्सियअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे त्ति	,,
२८६	एगजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढिहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जा लोगा ।	,,
२८७	णाणाजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि—[हाणि-] ट्ठाणंतराणि आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।	२६५
२८८	णाणाजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि–हाणिट्ठाणंतराणि थोवाणि ।	,,
२८९	एयजीवअणुभागबंधज्झवसाणदुगुणवड्ढि-हाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं ।	,,
२९०	जवमज्झपरूवणाए ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं ।	२६६
२९१	जवमज्झस्स हेट्ठदो ट्ठाणाणि थोवाणि ।	२६७
२९२	उवरिमसंखेज्जगुणाणि ।	,,
२९३	फोसणपरूवणदाए तीदे काले एयजीवस्स उक्कस्सए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे फोसणकालो थोवो ।	,,
२९४	जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे फोसणकालो असंखेज्जगुणो ।	२६८
२९५	कंदयस्स फोसणकालो तत्तियो चेव ।	२६९
२९६	जवमज्झफोसणकालो असंखेज्जगुणो ।	,,
२९७	कंदयस्स उवरि फोसणकालो असंखेज्जगुणो ।	,,
२९८	जवमज्झस्स उवरि कंदयस्स हेट्ठदो फोसणकालो असंखेज्जगुणो ।	२७०
२९९	कंदयस्स उवरि जवमज्झस्स हेट्ठदो फोसणकालो तत्तियो चेव ।	,,
३००	जवमज्झस्स उवरि फोसणकालो विसेसाहिओ ।	२७०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
३०१	कंदयस्स हेट्ठदो फोसणकालो विसेसाहिओ।	२७१
३०२	कंदयस्स उवरिं फोसणकालो विसेसाहिओ।	,,
३०३	सव्वेसु ट्ठाणेसु फोसणकालो विसेसाहिओ।	,,
३०४	अप्पाबहुए त्ति उक्कस्सए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा थोवा।	२७२
३०५	जहण्णए अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणे जीवा असंखेज्जगुणा।	,,
३०६	कंदयस्स जीवा तत्तिया चेव।	२७३
३०७	जवमज्झस्स जीवा असंखेज्जगुणा।	,,
३०८	कंदयस्स उवरिं जीवा असंखेज्जगुणा।	,,
३०९	जवमज्झस्स उवरि कंदयस्स हेट्ठिमदो जीवा असंखेज्जगुणा।	,,
३१०	कंदयस्स उवरि जवमज्झस्स हेट्ठिमदो जीवा तत्तिया चेव।	,,
३११	जवमज्झस्स उवरिं जीवा विसेसाहिया।	,,
३१२	कंदयस्स हेट्ठदो जीवा विसेसाहिया।	२७४
३१३	कंदयस्स उवरिं जीवा विसेसाहिया।	,,
३१४	सव्वेसु ट्ठाणेसु जीवा विसेसाहिया।	,,

८ वेदणापच्चयविहाणसुत्ताणि

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१	वेयणपच्चयविहाणे त्ति।	२७५
२	णेगम-ववहार-संगहाणं णाणावरणीयवेयणा पाणादिवादपच्चए।	,,
३	मुसावादपच्चए।	२७६
४	अदत्तादाणपच्चए।	२८१
५	मेहुणपच्चए।	२८२
६	परिग्गहपच्चए।	,,
७	रादिभोयणपच्चए।	,,
८	एवं कोह-माण-माया-लोह-राग-दोस-मोह-पेम्मपच्चए।	२८३
९	णिदाणपच्चए।	२८४
१०	अब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण-रइ-अरइ-उवहि-णियदि-माण-माय-मोस-मिच्छणाण-मिच्छदंसण-पओअपच्चए।	२८५
११	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	२८७
१२	उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा जोगपच्चए पयडिपदेसग्गं।	२८८
१३	कसायपच्चए ट्ठिदि-अणुभागवेयणा।	,,
१४	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	२९०
१५	सद्दणयस्स अवत्तव्वं।	,,
१६	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	२९३

९ वेयणासामित्तविहाणसुत्ताणि

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१	वेयणासामित्तविहाणे त्ति।	२९४
२	णेगम-ववहाराणं णाणावरणीयवेयणा सिया जीवस्स वा।	२९५
३	सिया णोजीवस्स वा।	२९६
४	सिया जीवाणं वा।	,,
५	सिया णोजीवाणं वा।	२९७
६	सिया जीवस्स च णोजीवस्स च।	,,
७	सिया जीवस्स च णोजीवाणं च	२९८
८	सिया जीवाणं च णोजीवस्स च।	२९८
९	सिया जीवाणं च णोजीवाणं च।	२९९
१०	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	,,
११	संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा जीवस्स वा।	,,
१२	जीवाणं वा।	३००
१३	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	,,
१४	सद्दुजुसुदाणं णाणावरणीयवेयणा जीवस्स।	,,
१५	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	३०१

१० वेयणवेयणविहाणसुत्ताणि

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१	वेयणवेयणविहाणे त्ति।	३०२
२	सव्वं पि कम्मं पयडि त्ति कट्टु णेगमणयस्स।	,,
३	णाणावरणीयवेयणा सिया बज्झमाणिया वेयणा।	३०४
४	सिया उदिण्णा वेयणा।	३०५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
५	सिया उवसंता वेयणा।	३०६
६	सिया बज्झमाणियाओ वेयणाओ।	३०७
७	सिया उदिण्णाओ वेयणाओ।	३०८
८	सिया उवसंताओ वेयणाओ।	३०९
९	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च।	३१०
१०	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च।	३११
११	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च।	३१२
१२	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च।	३१३
१३	सिया बज्झमाणिया [च] उवसंता च।	३१५
१४	सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च।	,,
१५	सिया बज्झमाणियाओ च उवसंता च।	३१६
१६	सिया बज्झमाणियाओ च उवसंताओ च।	,,
१७	सिया उदिण्णा च उवसंता च।	३१८
१८	सिया उदिण्णा च उवसंताओ च।	३२०
१९	सिया उदिण्णाओ च उवसंता च।	,,
२०	सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च।	३२१
२१	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च।	३२६
२२	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च।	३२७
२३	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च।	३२८
२४	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च।	३२९
२५	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंता च।	३३१
२६	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णा च उवसंताओ च।	,,
२७	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंता च।	३३२
२८	सिया बज्झमाणियाओ च उदिण्णाओ च उवसंताओ च।	३३३
२९	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	३४२
३०	ववहारणयस्स णाणावरणीयवेयणा सिया बज्झमाणिया वेयणा।	३४३

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
३१	सिया उदिण्णा वेयणा।	३४५
३२	सिया उवसंता वेयणा।	,,
३३	सिया उदिण्णाओ वेयणाओ।	३४६
३४	सिया उवसंताओ वेयणाओ।	३४७
३५	सिया बज्झमाणिया [च] उदिण्णा च।	,,
३६	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च।	३४८
३७	सिया बज्झमाणिया च उवसंता च।	३४९
३८	सिया बज्झमाणिया च उवसंताओ च।	३५०
३९	सिया उदिण्णा च उवसंता च।	,,
४०	सिया उदिण्णा च उवसंताओ च।	३५१
४१	सिया उदिण्णाओ च उवसंता च।	३५२
४२	सिया उदिण्णाओ च उवसंताओ च।	,,
४३	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च।	३५३
४४	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंताओ च।	३५४
४५	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंता च।	,,
४६	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णाओ च उवसंताओ च।	३५५
४७	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	३५६
४८	संगहणयस्स णाणावरणीयवेदणा सिया बज्झमाणिया वेयणा।	३५६
४९	सिया उदिण्णा वेयणा।	३५७
५०	सिया उवसंता वेयणा।	३५८
५१	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च।	,,
५२	सिया बज्झमाणिया च उवसंता च।	३५९
५३	सिया उदिण्णा च उवसंता च।	३६०
५४	सिया बज्झमाणिया च उदिण्णा च उवसंता च।	३६१
५५	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	३६२
५६	उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा उदिण्णफलपत्तविवागा वेयणा।	,,
५७	एवं सत्तण्णं कम्माणं।	३६३
५८	सद्दणयस्स अवत्तव्वं।	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
	११ वेयणगदिविहाणसुत्ताणि	
१	वेयणगदिविहाणे त्ति ।	३६४
२	णेगम-ववहार-संगहाणं णाणावरणीयवेयणा सिया अवट्ठिदा ।	३६५
३	सिया ट्ठिदाट्ठिदा ।	३६६
४	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं ।	३६७
५	वेयणीयवेयणा सिया ट्ठिदा ।	,,
६	सिया अट्ठिदा ।	,,
७	सिया ट्ठिदाट्ठिदा ।	३६८
८	एवमाउव-णामा-गोदाणं ।	,,
९	उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा सिया ट्ठिदा ।	,,
१०	सिया अट्ठिदा ।	,,
११	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	३६९
१२	सद्दणयस्स अवत्तव्वं ।	,,
	१२ वेयणअणंतरविहाणसुत्ताणि	
१	वेयणअणंतरविहाणे त्ति ।	३७०
२	णेगम-ववहाराणं णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा ।	३७१
३	परंपरबंधा ।	,,
४	तदुभयबंधा ।	,,
५	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	३७२
६	संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा ।	,,
७	परंपरबंधा ।	३७३
८	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	,,
९	उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा परंपरबंधा ।	,,
१०	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	३७४
११	सद्दणयस्स अवत्तव्वं ।	,,
	१३ वेयणसण्णियासविहाणसुत्ताणि	
१	वेयणसण्णियासविहाणे त्ति ।	३७५
२	जो सो वेयणसण्णियासो सो दुविहो-सत्थाणवेयणसण्णियासो चेव परत्थाण-वेयणसण्णियासो चेव ।	,,
३	जो सो सत्थाणवेयणसण्णियासो सो दुविहो—जहण्णओ सत्थाणवेयण-सण्णियासो चेव उक्कस्सओ सत्थाण-वेयणसण्णियासो चेव ।	३७६
४	जो सो जहण्णओ सत्थाणवेयण-सण्णियासो सो थप्पो ।	,,
५	जो सो उक्कस्सओ सत्थाणवेयण-सण्णियासो सो चउव्विहो—दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ।	३७६
६	जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३७७
७	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्ज-गुणहीणा ।	,,
८	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३७८
९	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
१०	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणा ।	३७९
११	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	,,
१२	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
१३	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा,	,,
१४	अणंतभागहीणा वा असंखेज्जभाग-हीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा अणंतगुणहीणा वा ।	३८०
१५	जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ।	३८१
१६	णियमा अणुक्कस्सा ।	,,
१७	चउट्ठाणपदिदा, असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुण-हीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा ।	३८२
१८	तस्स कालदो किं उक्कस्सा अणुक्कस्सा	३८४
१९	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।	,,
२०	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदि-दा, असंखेज्जभागहीणा वा संखे-ज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ।	३८५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२१	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३८६
२२	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
२३	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा।	,,
२४	जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३८७
२५	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
२६	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा।	,,
२७	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३८९
२८	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
२९	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा।	,,
३०	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३९०
३१	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
३२	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा।	,,
३३	जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३९१
३४	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
३५	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा।	,,
३६	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३९२
३७	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
३८	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा।	,,
३९	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३९३
४०	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
४१	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा।	,,
४२	एवं दंसणावणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं।	३९५
४३	जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३९६
४४	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	३९६
४५	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
४६	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
४७	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणा।	,,
४८	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३९७
४९	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
५०	जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
५१	णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा।	,,
५२	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	३९८
५३	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	,,
५४	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
५५	उक्कस्सा।	,,
५६	जस्स वेयणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कसा अणुक्कस्सा।	४०१
५७	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
५८	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पंचट्ठाणपदिदा।	,,
५९	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४०१
६०	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	,,
६१	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४०२
६२	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
६३	जस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
६४	णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा।	,,
६५	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४०३
६६	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।	,,
६७	उक्कस्सादो अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा, असंखेज्जभागहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा।	,,
६८	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४०४
६९	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणा।	,,
७०	एवं णामा-गोदाणं।	,,
७१	जस्स आउअवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४०५
७२	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	,,
७३	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
७४	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	,,
७५	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४०६
७६	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
७७	जस्स आउअवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४०७
७८	णियमा अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा।	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
७९	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४०८
८०	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	,,
८१	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
८२	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
८३	जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
८४	णियमा अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा।	४०९
८५	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४१०
८६	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	४१०
८७	तस्स भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
८८	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
८९	जस्स आउअवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४११
९०	णियमा अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा।	,,
९१	तस्स खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४१२
९२	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्जगुणहीणा।	,,
९३	तस्स कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
९४	णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा।	,,
९५	जो सो थप्पो जहण्णओ सत्थाणवेयणसण्णियासो सो चउव्विहो-दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि।	४१३
९६	जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४१४
९७	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
९८	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४१५
९९	जहण्णा।	,,
१००	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१०१	जहण्णा।	,,
१०२	जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१०३	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा असंखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जगुणब्भहिया वा असंखेज्जगुणब्भहिया वा।	४१६
१०४	तस्स कालदो किं जहण्णा [अजहण्णा]	४१७
१०५	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
१०६	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१०७	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	४१८
१०८	जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१०९	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जभागब्भहिया वा संखेज्जगुणब्भहिया वा असंखेज्जगुणब्भहिया वा।	४१८
११०	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४१९
१११	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
११२	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२०
११३	जहण्णा।	,,
११४	जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
११५	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा।	,,
११६	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२१
११७	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
११८	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
११९	जहण्णा।	,,
१२०	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं।	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१२१	जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१२२	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	४२२
१२३	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१२४	जहण्णा।	,,
१२५	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१२६	जहण्णा [वा] अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१२७	जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजण्णा।	४२३
१२८	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
१२९	तस्स कालदो किं जहण्णा [अजहण्णा]	,,
१३०	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	४२४
१३१	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१३२	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१३३	जस्स वेयणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१३४	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा।	,,
१३५	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२५
१३६	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	,,
१३७	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१३८	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१३९	जस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२६
१४०	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाण-पदिदा।	,,
१४१	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२७
१४२	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज गुणब्भहिया।	४२७
१४३	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१४४	जहण्णा।	,,
१४५	जस्स आउअवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१४६	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	४२८
१४७	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१४८	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	,,
१४९	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२८
१५०	णियमा अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया।	,,
१५१	जस्स आउअवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४२९
१५२	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज गुणब्भहिया।	,,
१५३	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१५४	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	,,
१५५	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३०
१५६	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा।	,,
१५७	जस्स आउअवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा	,,
१५८	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	,,
१५९	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३१
१६०	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१६१	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३१
१६२	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	४३१
१६३	जस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३२
१६४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
१६५	तस्स खेत्तादो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१६६	जहण्णा वा अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
१६७	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३३
१६८	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
१६९	जस्स णामवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१७०	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
१७१	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१७२	जहण्णा।	४३४
१७३	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१७४	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१७५	जस्स णामवेयणा खेत्तादो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३४
१७६	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
१७७	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३५
१७८	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
१७९	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१८०	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा।	,,
१८१	जस्स णामवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३६
१८२	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा।	,,
१८३	तस्स खेत्तादो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१८४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	४३७
१८५	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१८६	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
१८७	जस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१८८	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	४३७
१८९	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४३८
१९०	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
१९१	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१९२	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	४३९
१९३	जस्स गोदवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१९४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
१९५	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१९६	जहण्णा।	,,
१९७	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
१९८	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	४४०
१९९	जस्स गोदवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२००	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
२०१	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२०२	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
२०३	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४४१
२०४	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
२०५	जस्स गोदवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२०६	जहण्णा वा अजहण्णा वा जहण्णादो अजहण्णा पंचट्ठाणपदिदा।	४४२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२०७	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२०८	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया।	,,
२०९	तस्स भावदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२१०	णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया।	,,
२११	जस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४४३
२१२	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा।	,,
२१३	तस्स खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२१४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
२१५	तस्स कालदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४४४
२१६	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया।	,,
२१७	जो सो परत्थाणवेयणसण्णियासो सो दुविहो—जहण्णओ परत्थाण-वेयणसण्णियासो चेव उक्कस्सओ परत्थाणवेयणसण्णियासो चेव।	,,
२१८	जो सो जहण्णओ परत्थाणवेयण-सण्णियासो सो थप्पो।	,,
२१९	जो सो उक्कस्सओ परत्थाणवेयण-सण्णियासो सो चउव्विहो—दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि।	४४५
२२०	जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स छण्णं कम्माणमाउव-वज्जाणं दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२२१	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्क-स्सादो अणुक्कस्सा विट्ठाणपदिदा।	,,
२२२	अणंतभागहीणा वा असंखेज्ज-भागहीणा वा।	४४६
२२३	तस्स आउअवेयणा दव्वदो किमु-क्कस्सा अणुक्कस्सा।	४४७
२२४	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्ज-गुणहीणा।	४४७
२२५	एवं छण्णं कम्माणमाउववज्जाणं।	,,
२२६	जस्स आउअवेयणा दव्वदो उक्कस्सा तस्स सत्ताणं कम्माणं वेयणा दव्वदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४४८
२२७	णियमा अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा।	,,
२२८	असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्ज-भागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा असंखेज्जगुणहीणा वा।	४४९
२२९	जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स दंसणावरणीय-मो-हणीय-अंतराइयवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२३०	उक्कस्सा।	,,
२३१	तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोद-वेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२३२	णियमा अणुक्कस्सा असंखेज्ज-गुणहीणा।	४५०
२३३	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं।	,,
२३४	जस्स वेयणीयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा खेत्तदो उक्कस्सिया णत्थि।	,,
२३५	तस्स आउव-णामा-गोदवेयणा खेत्तदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२३६	उक्कस्सा।	४५१
२३७	एवमाउअ-णामा-गोदाणं।	,,
२३८	जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स छण्णं कम्माणमा-उअवज्जाणं वेयणा कालदो किमु-क्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२३९	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्क-स्सादो अणुक्कस्सा असंखेज्ज-भागहीणा।	,,
२४०	तस्स आउववेयणा कालदो किमु-क्कस्सा अणुक्कस्सा।	४५२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२४१	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा।	,,
२४२	एवं छण्णं कम्माणं आउववज्जाणं।	४५३
२४३	जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२४४	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा।	४५४
२४५	असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा।	,,
२४६	जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४५५
२४७	उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदा।	,,
२४८	तस्स वेयणीय-आउव-णामा-गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२४९	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
२५०	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं।	४५६
२५१	जस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो सिया अत्थि सिया णत्थि।	,,
२५२	जदि अत्थि भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४५६
२५३	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा	४५७
२५४	तस्स मोहणीयवेयणा भावदो णत्थि।	,,
२५५	तस्स आउअवेयणा भावदो *किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।*	४५८
२५६	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
२५७	तस्स णामा-गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	४५९
२५८	उक्कस्सा।	,,
२५९	एवं णामा-गोदाणं।	,,
२६०	जस्स आउअवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा।	,,
२६१	णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा।	,,
२६२	जो सो थप्पो जहण्णओ परत्थाणवेयणासण्णियासो सो चउव्विहो— दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि।	४६०
२६३	जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४६०
२६४	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा विट्ठाणपदिदा।	४६१
२६५	अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा।	,,
२६६	तस्स वेदणीय-णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा।	४६२
२६७	णियमा अजहण्णा असंखेज्जभागब्भहिया।	,,
२६८	तस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णिया णत्थि।	,,
२६९	तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	,,
२७०	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
२७१	एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं।	४६३
२७२	जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं वेयणा दव्वदो *जहण्णिया णत्थि।*	,,
२७३	तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४६३
२७४	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया।	,,
२७५	तस्स णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा।	४६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२७६	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा विट्ठाणपदिदा ।	,,
२७७	अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्ज-भागब्भहिया वा ।	,,
२७८	एवं णामा-गोदाणं ।	४६५
२७९	जस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माण-माउअवज्जाणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	
२८०	णियमा अजहण्णा असंखेज्जभाग-ब्भहिया ।	,,
२८१	तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२८२	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया ।	४६६
२८३	जस्स आउअवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२८४	णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ।	,,
२८५	जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	४६८
२८६	जहण्णा ।	४६९
२८७	एवं सत्तण्णं कम्माणं ।	,,
२८८	जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंत-राइयवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२८९	जहण्णा ।	,,
२९०	तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवे-यणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२९१	णियमा अजहण्णा असंखेज्ज-गुणब्भहिया ।	४७०
२९२	तस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ।	,,
२९३	एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ।	,,
२९४	जस्स वेयणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं वेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ।	,,
२९५	तस्स आउअ-णामा-गोदवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	४७०
२९६	जहण्णा ।	४७१
२९७	एवमाउअ-णामा-गोदाणं ।	,,
२९८	जस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
२९९	णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुण-ब्भहिया ।	,,
३००	जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
३०१	जहण्णा ।	४७२
३०२	तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवे-यणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
३०३	णियमा अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया ।	,,
३०४	तस्स मोहणीयवेयणा भावदो जह-ण्णिया णत्थि ।	४७३
३०५	एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ।	,,
३०६	जस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया णत्थि ।	४७३
३०७	तस्स आउअ-णामा-गोदवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	,,
३०८	णियमा अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया ।	,,
३०९	जस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	४७४
३१०	णियमा अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया ।	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
३११	जस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	„
३१२	णियमा अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया ।	„
३१३	तस्स णामवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	४७५
३१४	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ।	„
३१५	जस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणमाउअवज्जाणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	„
३१६	णियमा अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया ।	„
३१७	तस्स आउअवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	„
३१८	जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ।	४७६
३१९	जस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।	„
३२०	णियमा अजहण्णा अणंतगुण-ब्भहिया ।	„

वेयणपरिमाणविहाणसुत्ताणि

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१	वेयणापरिमाणविहाणे त्ति ।	४७७
२	तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि-पगदिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासए त्ति ।	४७८
३	पगदिअट्ठदाए णाणावरणीय-दंसणावरणीयकम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	४७८
४	णाणावरणीय-दंसणावरणीयकम्मस्स असंखेज्जलोगपयडीओ ।	४७९
५	एवदियाओ पयडीओ ।	४८०
६	वेदणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	४८१
७	वेयणीयस्स कम्मस्स दुवे पयडीओ ।	„
८	एवदियाओ पयडीओ ।	„
९	मोहणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	४८१
१०	मोहणीयस्स कम्मस्स अट्ठावीसं पयडीओ ।	४८२
११	एवदियाओ पयडीओ ।	„
१२	आउअस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	„
१३	आउअस्स कम्मस्स चत्तारि पयडीओ ।	४८३
१४	एवडियाओ पयडीओ ।	„
१५	णामस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	„
१६	णामस्स कम्मस्स असंखेज्जलोग-मेत्तपयडीओ ।	„
१७	एवदियाओ पयडीओ ।	४८४
१८	गोदस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	„
१९	गोदस्स कम्मस्स दुवे पयडीओ ।	„
२०	एवडियाओ पयडीओ ।	४८५
२१	अंतराइस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	„
२२	अंतराइस्स कम्मस्स पंच पयडीओ ।	„
२३	एवदियाओ पयडीओ ।	४८५
२४	समयपबद्धट्ठदाए ।	„
२५	णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतराइयस्स केवडियाओ पयडीओ ।	„
२६	णाणावरणीय-दंसणावरणीय-अंतरायस्स कम्मस्स एक्केका पयडी तीसं तीसं सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए ।	४८६
२७	एवदियाओ पयडीओ ।	४८७
२८	वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ ।	„
२९	वेदणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी। तीसं-पण्णारससागरोवमकोडाको-	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
	डीओ समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए।	,,
३०	एवदियाओ पयडीओ।	४८९
३१	मोहणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ।	४९०
३२	मोहणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी सत्तरि-चत्तालीसं-वीसं पण्णारस-दस सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए।	,,
३३	एवदियाओ पयडीओ।	४९१
३४	आउअस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ।	,,
३५	आउअस्स कम्मस्स एक्केका पयडी अंतोमुहुत्तमंतोमुहुत्तं समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए।	४९१
३६	एवदियाओ पयडीओ।	४९२
३७	णामस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ।	,,
३८	णामस्स कम्मस्स एक्केका पयडी वीसं-अट्ठारस-सोलस-पण्णारस-चोद्दस्स-बारस-दससागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए।	,,
३९	एवदियाओ पयडीओ।	४९६
४०	गोदस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ।	,,
४१	गोदस्स कम्मस्स एक्केका पयडी वीसं-दससागरोवमकोडाकोडीओ समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए।	४९७
४२	एवदियाओ पयडीओ।	,,
४३	खेत्तपच्चासे त्ति।	,,
४४	णाणावरणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ।	,,
४५	णाणावरणीयस्स कम्मस्स जो मच्छो जोयणसहस्सओ सयंभुरमणसमुद्दस्स बाहिरिल्लए तडे अच्छिदो, वेयणसमुग्घादेण समुहदो, काउलेस्सियाए लग्गो, पुणरवि मारणंतियसमुग्घादेण समुहदो, तिण्णि विग्गहगदिकंदयाणि काऊण से काले अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जिहदि त्ति।	४९८
४६	खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ।	,,
४७	एवदियाओ पयडीओ।	,,
४८	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं।	,,
४९	वेयणीयस्स कम्मस्स केवडियाओ पयडीओ।	४९९
५०	वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी अण्णदरस्स केवलिस्स केवलिसमुग्घादेण समुग्घादस्स सव्वलोगं गदस्स।	,,
५१	खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ।	,,
५२	एवदियाओ पयडीओ	५००
५३	एवमाउअ-णामा-गोदाणं।	,,

वेयणभागाभागविहाणसुत्ताणि

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१	वेयणभागाभागविहाणे त्ति।	५०१
२	तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि-पयडिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासे त्ति।	,,
३	पयडिअट्ठदाए णाणावरणीय-दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ सव्वपयडीणं केवडियो भागो।	५०१
४	दुभागो देसूणो।	,,
५	वेयणीय-मोहणीय-आउअ-णामा-गोद-अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ सव्वपयडीणं केवडियो भागो।	५०४
६	असंखेज्जदिभागो।	,,
७	समयपबद्धट्ठदाए।	,,
८	णाणावरणीय-दंसणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी तीसं तीसं सागरोवमकोडाकोडीयो समयपबद्धट्ठदाए गुणिदाए सव्वपयडीणं केवडिओ भागो।	५०४
९	दुभागो देसूणो।	५०५
१०	एवं वेयणीय-मोहणीय-आउअ-णामा-गोद-अंतराइयाणं च णेयव्वं।	५०५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
११	णवरि विसेसो सव्वपयडीणं केवडिओ भागो।	५०५
१२	असंखेज्जदि भागो।	५०५
१३	खेत्तपच्चासे त्ति।	५०६
१४	णाणावरणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी जो महामच्छो जोयणसहस्सियो सयंभुरमणसमुद्दस्स बाहिरिल्लए तडे अच्छिद्दो, वेयणसमुग्घादेण समुहदो, काउलेस्सियाए लग्गो, पुणरवि मारणंतियसमुग्घादेण समुहदो तिण्णि विग्गहकंडयाणि काऊण से काले अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जिहदि त्ति खेत्तपच्चासेण गुणिदाओ सव्वपयडीणं केवडिओ भागो।	५०६
१५	दुभागो देसूणो।	५०६
१६	एवं दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं।	५०७
१७	णवरि मोहणीय-अंतराइयस्स सव्वपयडीणं केवडिओ भागो।	५०७
१८	असंखेज्जदिभागो।	५०७
१९	वेयणीयस्स कम्मस्स एक्केका पयडी अण्णदरस्स केवलिस्स केवलसमुग्घादेण समुहदस्स सव्वलोगं गदस्स खेत्तपच्चासएण गुणिदाओ सव्वपयडीणं केवडियो भागो।	५०७
२०	असंखेज्जदिभागो।	५०८
२१	एवमाउअ-णामा-गोदाणं।	५०८

वेयणअप्पाबहुगसुत्ताणि

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
१	वेयणअप्पाबहुए त्ति।	५०९
२	तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति-पयडिअट्ठदा समयपबद्धट्ठदा खेत्तपच्चासए त्त।	५०९
३	पयडिअट्ठदाए सव्वत्थोवा गोदस्स कम्मस्स पयडीओ।	५०९
४	वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ तत्तियाओ चेव।	५०९
५	आउअस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ।	५०९
६	अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ।	५०९
७	मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ।	५१०
८	णामस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ।	५०९
९	दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ।	५१०
१०	णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ।	५१०
११	समयपबद्धट्ठदाए सव्वत्थोवा आउअस्स कम्मस्स पयडीओ।	५१०
१२	गोदस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ।	५१०
१३	वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ।	५१०
१४	अंतराइयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ।	५१०
१५	मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ।	५१०
१६	णामस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ।	५११
१७	दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ।	५११
१८	णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ।	५११
१९	खेत्तपच्चासए त्ति।	५११
२०	सव्वत्थोव पयडीओ।	५११
२१	मोहणीयस्स कम्मस्स पयडीओ संखेज्जगुणाओ।	५११
२२	आउअस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ।	५१२
२३	गोदस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ।	५१२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२४	वेयणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ।	५१२
२५	णामस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्ज-गुणाओ।	१२
२६	दंसणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ असंखेज्जगुणाओ।	५१२
२७	णाणावरणीयस्स कम्मस्स पयडीओ विसेसाहियाओ।	५१२

गाहा-सुत्ताणि

गाथा	पृष्ठ
सादं जसुच्च-दे-कं ते-आ-वे-मणु अणंतगुणहीणा।	४०
ओ-मिच्छ-के-असादं वीरिय-अणंताणु-संजलणा ॥ १ ॥	
अट्ठाभिणि-परिभोगे चक्खू तिण्णि तिय पंचणोकसाया।	४२
णिद्दाणिद्दा पयलापयला णिद्दा य पयला य ॥ २ ॥	
अजसो णीचागोदं णिरय-तिरिक्खगइ इत्थि पुरिसो य।	४४
रदि-हस्सं देवाऊ णिरायऊ मणुय-तिरिक्खाऊ ॥ ३ ॥	
संज-मण-दाणमोही लाभं सुद-चक्खु-भोग चक्खुं च।	६२
आभिणिबोहिय परिभोग विरिय णव णोकसायाइं ॥ ४ ॥	
के-प-णि-अट्ठ-त्तिय-अण-मिच्छा-ओ-वे-तिरिक्ख-मणुसाऊ।	६३
तेया-कम्मसरीरं तिरिक्ख-णिरय-देव-मणुवगई ॥ ५ ॥	
णीचागोदं अजसो असादमुच्चं जसो तहा सादं।	६४
णिरयाऊ देवाऊ आहारसरीरणामं च ॥ ६ ॥	
सम्मत्तुप्पत्ती वि य सावय-विरदे अणंतकम्मंसे।	७८
दंसणमोहक्खवए कसायउवसामए य उवसंते ॥ ७ ॥	
खवए य खीणमोहे जिणे य णियमा भवे असंखेज्जा।	,,
तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणा य सेढीए ॥ ८ ॥	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ अवतरण-गाथा-सूची

क्रम	गाथा	पृष्ठ	अन्यत्र कहाँ
१	अणुभागे हम्मंते	३६४	
२	अर्थस्य सूचनात् सम्यक्	३६६	क. पा. १, पृ. १७१
३	आचार्यः पादमाचष्टे	१७१	
४	एए छच्च समाणा	२८६	क. प. १, पृ. ३२६
५	एकोत्तरपदवद्धो	१५२	ष. खं. पु. ५, पृ. १९३, क. पा. २, पृ. ३००
६	एयक्खेत्तोगाढं	२७७	गो. क. १८५
७	ओदइया बंधयरा	२७९	ष. खं. पु. ७, पृ. ९, क. पा. १, पृ. ६
८	जोगा पयडि-पदेसे	११७, २८९	
९	ठिदिघादे हम्मंते	३६४	
१०	पढमक्खो अंतगओ	३१९	मू. चा. ११, २३, गो. जी. ४०
११	पण्णवणिज्जा भावा	१७१	गो. जी. ३३४, विशेषा. १४१.
१२	बारस पण दस पण दस	११	ष. खं. पु. १० पृ.
१३	बुद्धिविहीने श्रोतरि	४१४	
१४	भंगायामपमाणं	३१९	क. पा. २, पृ. ३०८.
१५	सर्वथानियमत्यागी	२९६	बृहत्स्व. १०२.
१६	सुहुमणुभागादुवरिं	४१८	

३ न्यायोक्तियाँ

क्रम-संख्या	न्याय	पृष्ठ
१	एत्थतणउवरिशब्दो हेट्ठा सिंघावलोअणक्कमेण उवरिं णदीसोदक्कमेण अणुवट्टावेदव्वो।	२०५
२	एसो अणंतगुणहीणणिद्देसो उवरि वि मंडूगप्पदेण अणुवट्टदे।	४१
३	यद्यस्मिन् सत्येव भवति नासति, तत्तस्य कारणमिति न्यायात्।	२८९

४ ग्रन्थोल्लेख

१ कसायपाहुड

१	कसायपाहुडे सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागे दंसणमोहक्खवगं मोत्तूण सव्वत्थ होदि त्ति परूविदत्तादो वा णव्वदे।	११६
२	एदस्सुवरि एगपक्खेवुत्तरं कादूण बंधे अणुभागस्स जहण्णिया वड्ढी, तम्मि चेव अंतोमुहुत्तेण खंडयघादेण घादिदे जहण्णिया हाणी होदि त्ति कसायपाहुडे परूविदत्तादो।	१२९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ ण च अब्भुवगमो णिण्णिबंधणो, जहण्णुक्कस्सकालपरूवयकसायपाहुडसुत्तावट्ठंभबलेण तदुप्पत्तीदो । १३८

४ संतट्ठाणाणि अट्ठंक-उव्वंकाणं विचाले चेव होंति, चत्तारि-पंच-छ-सत्तंकाणं विचालेसु ण होंति त्ति कधं णव्वदे ? "उक्कस्सए······संतकम्मट्ठाणाणि" एदम्हादो पाहुडसुत्तादो । २२१

५ संपहि कसायपाहुडे उवजोगो णाम अत्थाहियारो । तत्थ-कसायउदयट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि । तेसु वट्टमाणकाले जत्तिया तसा संति तत्तियमेत्ताणि आवुण्णाणि त्ति कसायपाहुडसुत्तेण भणिदं ।············कसायपाहुडे पुणो जीवसहिदणिरंतरट्ठाण-पमाणपरूवणा ण कदा, किंतु······पमाणपरूवणा कदा । २४४

६ एत्थ अणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणेसु जीवसमुदाहारो परूविदो, तत्थ कसायपाहुडे कसाउदयट्ठा सु । २४५

२ कालनिर्देशसूत्र

१ अणुभागट्ठाणीए जहण्णुक्कस्सेण एगो चेव समओ त्ति कालणिद्देससुत्तादो णव्वदे । १३८

३ चूर्णिसूत्र

१ कधं सव्वमिदं णव्वदे ? उवरि भण्णमाणचुण्णिसुत्तादो । ४३

२ एयत्तं कत्थ पसिद्धं ? पाहुडचुण्णिसुत्ते सुपसिद्धं, लोगपूरणाए एया वग्गणा जोगस्से त्ति भणिदत्तादो । ६४

३ तदणणुवुत्ती वि कुदो णव्वदे ? एदस्स गाहासुत्तस्स विवरणभावेण रचिदउवरिमचुण्णिसुत्तादो । ४१

४ तेण वि अणुभागसंकमे सिस्साणुग्गहट्ठं चुण्णिसुत्तो लिहिदो । २३२

४ परिकर्म

१ परियम्मादो उक्कस्ससंखेज्जयस्स पमाणमवगदमिदि ण पच्चवट्ठाणं कादुं जुत्तं, तस्स सुत्तत्ताभावादो । १५४

५ महाबंध

१ महाबंधे आउअउक्कस्साणुभागंतरस्स उवड्ढपोग्गलमेत्तकालपरूवणण्णहाणुववत्तीदो वा । २१

२ तं कधं णव्वदे ? महाबंधसुत्तुवइट्ठत्तादो । ६५

५ पारिभाषिक शब्द-सूची

शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ
अ		अदत्तादान	२८१	अनुभागबन्धस्थान	२०४
अक्षरसमास	४७६	अनन्तरबन्ध	३७०	अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान	,,
अग्निकायिक	२०८	अनवस्था	२५७	अनुभागसत्त्वस्थान	११२
अग्निकायिककायस्थिति	,,	अनन्तरोपनिधा	२१४	अनुभागसंक्रम	२३२
अचित्तद्रव्यभाव	२	अनुत्पादानुच्छेद	४५८, ४६४	अनुयोग	४८०
अतिप्रसंग	१४२	अनुभाग	९१	अनुयोगसमास	,,
अतिस्थापनावली	८५	अनुभागकाण्डक	३२		

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शब्द	पृष्ठ
अनुसमयापवर्तना	३२
अनुसमयापवर्तनाघात	३१
अन्वय	९८
अपरिवर्तमान परिणाम	२७
अपवर्तनाघात	२१
अभ्याख्यान	२८५
अमूर्तद्रव्यभाव	२
अर्थपद	३
अर्थापत्ति	१७
अवस्थित भागहार	१०२
अविभागप्रतिच्छेद	९२
अष्टांक	१३१
असद्वचन	२०६
असातसमयप्रबद्ध	१८९
आ	
आगमद्रव्यभाव	२
आगमभावभाव	,,
आर्यमंक्षु	२३२
उ	
उत्पादानुच्छेद	४७७
उदीर्ण	३०३
उपधि	२८५
उपशान्त	३०३
औ	
औदयिक	२७९
औपशमिक	,,
क	
कर्मद्रव्यभाव	२
कलह	२८५
कला	२०६
कालयवमध्य	२१२
क्रोध	२८३
क्षपकश्रेणि	३४
क्षपितकर्मांशिक	११६-३८४, ४२६

शब्द	पृष्ठ
क्षपितघोलमान	४२६
क्षायिक	२७९
क्षेत्रप्रत्याश्रय	४७८
क्षेत्रप्रत्यास	४९७
ग	
गुणधरभट्टारक	२३२
गुणश्रेणि	८०
गुणितकर्मांशिक	११६, ३८२, ४२६
गुणितघोलमान	४२६
गौतम स्थविर	२३१
घ	
घातपरिणाम	२२०, २२५
घातस्थान	१३०, २२१, २३१
च	
चतुःषष्टिपदिक दण्डक	४४
चतुःसामयिक अनुभागस्थान	२०२
चिरन्तनअनुभाग	३६
चूर्णचूर्णि	१६२
चूर्णि	१६१
चूर्णिसूत्र	२३२
छ	
छिन्न	१६२
छिन्नाछिन्न	,,
छेदभागहार	१०२
ज	
जघन्य द्रव्यवेदना	९८
जघन्य स्थान	,,
जीवयवमध्य	२१२
जीवविपाकी	४६
त	
त्रुटित	१६२
त्रुटितात्रुटित	,,

शब्द	पृष्ठ
द	
दलित	,,
दलितदलित	,,
दारुसमान अनुभाग	११७
दीपशिखा	४२८
देशघाती	५४
द्वीपायन	२१
द्वेष	२८३
न	
नागहस्ती	२३२
नामभाव	१
निकाचित	३४
निकृति	२८५
निदान	२८४
नैगम	३०३
नोजीव	२९६, २९७
प	
पद	३, ४८०
पदमीमांसा	३
पदसमास	४८०
परम्पराबन्ध	३७०, ३७२
परम्परोपनिधा	२१४
परिग्रह	२८२
परिवर्तमान परिणाम	२७
परिवर्तमान मध्यम परिणाम	,,
पारिणामिक	२७६
पिशुल	१५८
पिशुलापिशुल	१६०
पुद्गलविपाकी	४६
पुनरुक्तदोष	२०९
पूर्व	४८०
पूर्वसमास	,,
पूर्वानुपूर्वी	२२१
प्रकृति	३०३
प्रकृत्यर्थता	४७८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शब्द	पृष्ठ
प्रतिपत्ति	४८०
प्रतिपत्तिसमास	,,
प्रयोग	२८६
प्रवेशन	२०८
प्राण	२७६
प्राणातिपात	२७५, २७६
प्राभृत	४८०
प्राभृतप्राभृत	,,
प्राभृतप्राभृतसमास	,,
प्राभृतसमास	,,
प्रेम	२८४
ब	
बध्यमान	३०३
बन्धप्रकृति	४९५
बन्धसमुत्पत्तिक	६०
बन्धसमुत्पत्तिकस्थान	२२४
बन्धस्थान	१११, ११२
बादरकृष्टि	६६
म	
मध्यदीपक	१४
मान	२८३
माया	,,
मिथ्याज्ञान	२८६
मिथ्यादर्शन	,,
मूलद्रव्यभाव	२
मृषावाद	२७९
मैथुन	२८२
मोह	२८३

शब्द	पृष्ठ
य	
यतिवृषभ भट्टारक	२३२
यथाख्यातसंयम	५१
यवमध्य	२३१
योग	३६७
र	
राग	२८३
रात्रिभोजन	,,
रूपोनभागहार	१०२
ल	
लतासमान अनुभाग	११७
लोभ	२८३, २८४
व	
वर्ग	९३
वर्गणा	,,
वर्धमानभट्टारक	२३१
वस्तु	४८०
वस्तुसमास	,,
विपुलगिरि	२३१
विसंयोजन	५०
वेदना	३०२
वेदनावेदना	,,
व्यतिरेक	९८
व्यधिकरण	३१३
व्यभिचार	२१
व्यवस्थापद	३
ष	
षट्स्थान	१२०, १२१

शब्द	पृष्ठ
स	
सचित्तद्रव्यभाव	२
सत्कर्मस्थान	२२०, २२५, २३१
सत्त्वप्रकृति	४९५
सत्त्वस्थान	२१९
समयप्रबद्धार्थता	४७८
सरागसंयम	५१
सर्वघाती	५३
सहानवस्थान	३००
संक्रमस्थान	२३१
संघात	४८०
संघातसमास	,,
संनिकर्ष	३७५
सिक्थमत्स्य	३५०
सूक्ष्मप्ररूपणा	१७४
स्थान	१११
स्थानान्तर	११४
स्थापनाभाव	१
स्थूलप्ररूपणा	१७४
स्पर्धक	९५
स्पर्धकान्तर	११८
ह	
हतहतसमुत्पत्तिक	९०
हतसमुत्पत्तिकर्म	२८, २९
हतसमुत्पत्तिकस्थान-	२१९, २२०
हतहतसमुत्पत्तिक	९१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन साहित्य उद्धारक फंड

तथा कारंजा जैन ग्रन्थमालाओं में

डा० हीरालाल जैन द्वारा आधुनिक ढङ्गसे सुसम्पादित होकर प्रकाशित

जैन साहित्यके अनुपम ग्रन्थ

प्रत्येक ग्रन्थ सुविस्तृत भूमिका, पाठभेद, टिप्पण व अनुक्रमणिकाओं आदिसे खूब सुगम और उपयोगी बनाया गया है।

१ **षट्खण्डागम**—[धवलसिद्धान्त] हिन्दी अनुवाद सहित—

पुस्तक १, जीवस्थान—सत्प्ररूपणा,	पुस्तकाकार व	शास्त्राकार (अप्राप्य)
पुस्तक २, ,,	पुस्तकाकार १०),	शास्त्राकार (अप्राप्य)
पुस्तक ३-९ (प्रत्येक भाग)	,, १०),	,, १२)
पुस्तक १०-१२ (प्रत्येक भाग)	,, १२),	,, १४)

यह भगवान महावीर स्वामीकी द्वादशांग वाणीसे सीधा सम्बन्ध रखनेवाला, अत्यन्त प्राचीन, जैन सिद्धान्तका खूब गहन और विस्तृत विवेचन करनेवाला सर्वोपरि प्रमाण ग्रन्थ है। श्रुतपञ्चमीकी पूजा इसी ग्रन्थकी रचनाके उपलक्ष्यमें प्रचलित हुई।

२ **यशोधरचरित**—पुष्पदन्तकृत अपभ्रंश काव्य.... .... ७॥)

इसमें यशोधर महाराजका अत्यन्त रोचक वर्णन सुन्दर काव्यके रूपमें किया गया है। इसका सम्पादन डा. पी. एल. वैद्य द्वारा हुआ है।

३ **नागकुमारचरित**—पुष्पदन्तकृत अपभ्रंश काव्य... ... ... ७॥)

इसमें नागकुमारके सुन्दर और शिक्षापूर्ण जीवनचरित्र द्वारा श्रुतपञ्चमी विधानकी महिमा बतलाई गई है। यह काव्य अत्यन्त उत्कृष्ट और रोचक है।

४ **करकण्डुचरित**—मुनि कनकामरकृत अपभ्रंश काव्य.... .... ७॥)

इसमें करकण्डु महाराजका चरित्र वर्णन किया गया है, जिससे जिन पूजाका माहात्म्य प्रगट होता है। इससे धाराशिवकी जैन गुफाओं तथा दक्षिणके शिलाहार राजवंशके इतिहास पर भी अच्छा प्रकाश पड़ता है।

५ **श्रावकधर्मदोहा**—हिन्दी अनुवाद सहित... ... ... ३=)

इसमें श्रावकोंके व्रतों व शीलोंका बड़ा ही सुन्दर उपदेश पाया जाता है। इसकी रचना दोहा छन्दमें हुई है। प्रत्येक दोहा काव्यकलापूर्ण और मनन करने योग्य है।

६ **पाहुडदोहा**—हिन्दी अनुवाद सहित... ... . ३=)

इसमें दोहा छंदोंद्वारा आध्यात्मरसकी अनुपम गङ्गा बहाई गई है जो अवगाहन करने योग्य है।

७ **तत्त्व-समुच्चय**—हिन्दी अनुवाद सहित.... .... ३)

इसमें जैन सिद्धान्त का सर्वांगपूर्ण परिचय कराया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org